UGC Care Listed
त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका
ISSN-2321-1504 Nagfani
RNI No. UTTHIN/2010/34408
वर्ष-12, अंक-42, जुलाई - सितम्बर 2022
भाग-2

आज़ादी का अमृत महोत्सव

नागफनी

मूल्य ₹ 150/-

अस्मिता, चेतना और स्वाभिमान जगाने वाला साहित्य

आगामी अंक की सूचना

अक्टूबर से दिसंबर 2022 के लिए 30 सितम्बर तक ही लेख स्वीकार किये जायेंगे। 30 सितम्बर के बाद मेल पर प्राप्त शोधालेखों पर आगामी अंक में प्रकाशित करने पर विचार किया जाएगा। व्यक्तिगत पंचवार्षिक सदस्यता लेने पर पांच साल तक पत्रिका मिलेगी। शोधालेख प्रकाशन की स्वीकृति/अस्वीकृति का जो भी निर्णय होगा वह आपको मेल/मोबाईल पर सूचित किया जाएगा।

"नागफनी" अस्मिता, चेतना, और स्वाभिमान जगाने वाली त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका है। इस पत्रिका को यूजीसी केयर लिस्ट मे शामिल किया गया है। पत्रिका का ISSN&2321&1504 nagfani और RNI No-UTTHIN/2010/34408 नम्बर है। साथ ही यह Peer Reviewed Referred journal है। आलेख –nagfani81@gmail-com पर भेजने का कष्ट करें। व्यक्तिगत पंचवार्षिक सदस्यता लेने पर पांच साल तक पत्रिका मिलेगी।

आलेख भेजने संबंधी निर्देश–

- शोधालेख यूनिकोड kokila फॉन्ट 14 साइज में तथा एरियल युनिकोड में टाइप करके word और PDF दोनों में भेजना है।
- कलर पासपोर्ट फोटो।
- मौलिकता और प्लेगरिज्म संबंधी प्रमाण–पत्र।
- अन्य किसी टाइप फॉन्ट को स्वीकृत नहीं किया जाएगा।
- आलेख मेल पर भेजने के बाद आलेख स्वीकृति/अस्वीकृति की सूचना मेल पर ही दी जाएगी ।

धन्यवाद!

भाग – 02

नागफनी

A Peer Reviewed Refereed Journal
(अस्मिता चेतना और स्वाभिमान जगाने वाला शोध-साहित्य)
UGC Care Listed त्रैमासिक साहित्यिक शोध पत्रिका
ISSN-2321-1504NaagfaniRNI No.UTTHIN/2010/34408

संपादक
सपना सोनकर

सह संपादक
रूपनारायण सोनकर

Co Editor(English)
Prof.Rajesh karankal
Dr.Santosh Kumar Sonkar

कार्यकारी संपादक
डॉ.एन.पी.प्रजापति
प्रोफेसर बलिराम धापसे

वर्ष-12 अंक 42,जुलाई-सितम्बर-2022 भाग –2

सलाहकार मण्डल (Peer Review Comittee)

प्रोफेसर विष्णु सरवदे, हैदराबाद (तेलंगाना)
प्रोफेसर आर. जयचंद्रन तिरुअनंतपुरम (केरल)
प्रोफेसर दिनेश कुशवाह,रीवा (मध्य प्रदेश)
डॉ.एन. एस. परमार, बड़ौदा (गुजरात)
प्रो. दिलीप कुमार मेहरा, बी.बी.नगर (गुजरात)
डॉ.उमाकांत हजारिका, शिवसागर(असम)
डॉ. आर. कनागसेल्वम, इरोड (तमिलनाडु)
प्रोफेसर संजय एल. मादार,धारवाड़ (कर्नाटक)
प्रोफेसर गोबिन्द बुरसे, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
डॉ.दादा साहेब सालुनके, महाराष्ट्र (औरंगाबाद)
प्रोफेसर अलका गड़करी, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
डॉ. साहिरा बानो बी. बोरगल, हैदराबाद (तेलंगाना)
प्रोफेसर मोहनलाल 'आर्य' मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश)
डॉ.जी.व्ही .रत्नाकर हैदराबाद(तेलंगाना)

प्रकाशन/मुद्रण

प्रकाशक रूपनारायण सोनकर की अनुमति से डॉ.एन.पी.प्रजापति एवं प्रोफेसर बलिराम धापसे द्वारा नमन प्रकाशन–423/Aअंसारी रोड दरियागंज, नई दिल्ली 11002 में प्रकाशन एवं मुद्रण कार्य।

मुख पृष्ठ– उत्कर्ष प्रजापति, सिंगरौली - मध्यप्रदेश

संपादकीय/व्यवस्थापकीय कार्यालय

दून व्यू कॉटेज स्प्रिंग रोड, मंसूरी -248179, उत्तराखण्ड, दूरभाष : 0135-6457809 मो.0941077718

शाखा कार्यालय

पी.डब्ल्यू. डी. आर. -62 ए ब्लॉक कॉलोनी बैढ़न, जिला-सिंगरौली म. प्र. पिन-486886 मो. 09752998467

सहयोग राशि -150/-रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क (संस्था के लिए)-1500/-रुपये, पंच वार्षिक सदस्यता शुल्क (व्यक्ति के लिए)-3000/-रुपये, पंच वार्षिक संस्था और पुस्तकालयों के लिए –3500/-रुपये, विदेशों में$50 आजीवन व्यक्ति-6000/-रुपये,संस्था-10,000/-रुपये।

सदस्यता शुल्क एवं सहयोग राशि-इंडिया पोस्ट पेमेंट बैंक–A/C –8367100138282 IFSC Code-IPOS0000001
Branch-sidhi, NIRPAT PRASAD PRAJAPATI

नोट:-पत्रिका की किसी भी सामग्री का उपयोग करने से पहले संपादक की अनुमति आवश्यक है। संपादक-संचालक पूर्णतया अवैतनिक एवं अध्यवसायी हैं।'**नागफनी**'में प्रकाशित शोध-पत्र एवं लेख, लेखकों के विचार उनके स्वयं के हैं। जिनमें संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं हैं।'**नागफनी**' से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल देहरादून न्यायालय के अधीन होंगे। अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है। सारे भुगतान मनीऑर्डर, बैंक/चेक/बैंक ट्रांसफर/ई-पेमेंट आदि से किए जा सकते हैं। देहरादून से बाहर के चेक में बैंक कमीशन 50/-अतिरिक्त जोड़ें दें।

लेख भेजने के लिए –Mail-ID- nagfani81@gmail.com
पत्रिका के बारे मे विस्तार से जानने के लिए देखें Website:–http:naagfani.com

नागफनी

वर्ष-12 अंक42,जुलाई -सितम्बर -2022 भाग-2

अनुक्रम **पृष्ठ क्रमांक**

संपादकीय 4

साहित्यिक विमर्श

1.हिन्दी गजल में सामाजिक सरोकारों की व्याप्ति-**विनय कुमार शुक्ल&डॉ.सुनील** 5-6
2.'नंगा सत्य' नाटक की मूल संवेदना और रंगमंचीयता-**ज्योति 'विप्लव'** 7-8
3.भोजपुरी के लोक नाट्य : एक अध्ययन-**डॉ.प्रीति प्रकाश** 9-12
4.सांस्कृतिक चेतना और मातृभाषा-**डॉ.लक्ष्मी पाण्डेय** 12-14
5.भारतेंदु और द्विवेदीयुगीन हिंदी कविता में अभिव्यक्त किसान चेतना -**ओमप्रकाश सुंडा** 14-17
6.मनोविज्ञान तथा अस्तित्ववादी चिन्तन की सशक्त अभिव्यक्ति: शेखर एक जीवनी'-**डॉ.सुरजीत कौर** 17-21
7.प्रवासी हिन्दी साहित्य:पहचान के विविध परिप्रेक्ष्य-**डॉ.रूपिका शर्मा** 22-23
8.गगनगोचरी वसुंधरा:एक परिचय-**डॉ.सुमंगला एस.मुम्मिगट्टी** 23-24
9.दया प्रकाश सिन्हा के ऐतिहासिक नाटकों के कथानक का विवेचन-**वैशाली काशिनाथ गायकवाड** 25-27
10.श्री गुरु गोबिन्द सिंह;काव्य और कृपाण के धनी-**डॉ.नीरज शर्मा** 27-28
11.आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का निबंध साहित्य-**डॉ.राम मनोहर मिश्र** 29-33
12.बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'के साहित्य में राष्ट्रीय स्वाधीनता एवं क्रान्ति का स्वर-**डॉ. रत्नेश कुमार यादव&डॉ.सुनील&कमल दीप सिंह** 34-36
13.मध्यकालीन भक्ति आंदोलन और कबीर की कविता-**डॉ.अभिलाष कुमार गोंड** 36-39
14.जनकवि नागार्जुन का प्रतिरोधी स्वर -**डॉ.मन्नू राय** 40-41
15.मणिपुर में हिन्दी भाषा के विभिन्न आयामों का संक्षिप्त मूल्यांकन-**किस्मतुन बेगम&डॉ.शिवम चतुर्वेदी** 42-44
16.मराठी संत साहित्य में सामाजिक समता के तत्वों का अध्ययन -**डॉ.संदीप मधुकर सपकाले** 45-46
17.विनोद कुमार शुक्ल के काव्य संग्रह में निहित जीवन यथार्थ-**डॉ.बीना कुमारी नायर वी.जी.** 46-48

स्त्री विमर्श

1. हिंदी उपन्यासों में चित्रित नारी अस्मिता पर विमर्श-**पवन कुमारी** 49-50
2. इस्लामिक समाज और स्त्री शिक्षा-**डॉ.मो.माजिद मियाँ** 51-52
3. स्वाधीनता आंदोलन में वीरांगनाओं की भूमिका-**डॉ.विनोद कालरा** 53-55
4. कैलाश बनवासी का उपन्यास 'लौटना नहीं है' में स्त्री जीवन-**डॉ.जेस्ना रहीम** 56-57

दलित विमर्श

1. अस्मितामूलक विमर्श:वैचारिकी और हिंदी दलित साहित्य-**डॉ.पंडित बन्ने** 58-59
2. सुशीला टाकभौरे की कहानियों में दलित अस्मिता एवं अस्तित्व का संघर्ष-**डॉ.नवनाथ गाड़ेकर** 59-61

आदिवासी विमर्श

1. जनजातीय विकास के विविध उपागम एवं संवैधानिक प्रयासों का समाजवैज्ञानिक विश्लेषण-**डॉ.प्रज्ञा &डॉ.नीरज कुमार राय** 62-64
2. 21 वी. सदी का आदिवासी समाज और हिन्दी साहित्य-**निलेश देशमुख** 65-67
3. दमन,शोषण और अपराध की अरण्य गाथा(संदर्भ : संजीव का उपन्यास 'जंगल जहाँ शुरू होता है')**धर्मेन्द्र कुमार** 67-69

विविध विमर्श

1. महत्वकांक्षाओं की उड़ान कितनी?-**सरोज राम मिश्रा 'प्रकृति'** 70-71
2. मनोविज्ञान, योग और भाषा-एक अनुशीलन -**सुश्री चंद्रकला देवाराम शाहू** 72-75
3. 21वी शताब्दी में शिक्षा का विकास:अवसर व चुनौतियाँ-**संदीप कुमार शर्मा** 75-77
4. महामारी समय में मानव अधिकारों के वैश्विक प्रश्न-**डॉ.अमित राय** 78-80
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020:समग्र अवलोकन-**डॉ.शैलेश मरजी कदम** 81-82
6. विराटेश्वर मन्दिर के मूर्ति शिल्प का प्रतिमा.शास्त्रीय विवेचन-**रमेश कुमार&डॉ.शिवा कान्त त्रिपाठी&प्रो. आलोक श्रोत्रिय** 83-84
7. कार्यबल उपकरण:गिग अर्थव्यवस्था के विकास में कौशल प्रशिक्षण-**संघमित्रा कर&संजीत कुमार&डॉ.विनोद सेन** 85-87
8. भारतीय रक्षानीति प्राचीन काल से लेकर औपनिवेशिक शासन काल तक-**डॉ.अरविन्द कुमार कुशवाहा** 88-89
9. मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 शिक्षकों के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन-**अजय कुमार & डॉ.भूपेन्द्र कौर** 90-92
10. हिंदी उपन्यास में किन्नर विमर्श - 'तीसरी ताली'के विशेष संदर्भ में-**डॉ.सुनील एम.पाटिल** 93-94

English Discourse

Canonical Literary Discourse

1. Rhetorical Fabrication of the Self: The Autobiography of Benjamin Franklin-**Gurpreet Kaur** 95-97
2. Paulo Coelho's *The Zahir*: A Thematic Study-**Dr.Kumar Gaurav** 98-100

Feminist Discourse

1.The Better Man: A Feministic View-**Dr.Ashish Gupta** 101-102

2. Longevity Paradox: Challenges for the tea garden female workers with special reference to Borsillah Tea Estate In Sivasagar district of Assam-**Pallabi Hazarika &Galo Miwu** 104-107

3.Double trauma of Kashmiri Women in Nayeema Mahjoor's Lost in Terror-**Supriya Bodo &Dr.Indu Swami** 108-111

4.Need For Recognition of The Unpaid Domestic Contribution of Women To Quantify Share in Matrimonial Property-**Neha Balyan&Dr. Rekha Verma** 111-115

5.Historical Aspects of Women's Property Rights in Inidia-**Sapna Chopra& Dr.Parag Agarwal** 116-119

6.Women and Crime: Intentions behind female criminality-**Mercy Hazarika** 119-125

7.Women's Political Participation in India **-S.K.Abdul Amanullah** 126-129

Dalit Discourse

1. There Are a Lot of Dalit Children but Little Childhood: A Study of Childhood in Selected Dalit Narratives-**Priyanka Kumari&Dr.Suresh Kurapati** 130-133
2. Socio-Economic Status of Schedule Caste in Bihar with special reference to Gaya District-**Alok Kumar Singh** 134-137

Tribal Discourse

1. A Comparison of Socio-Economic Profile of Tharu with other Tribes in Uttar Pradesh Using Census Data-**Bhanu Pratap Pandey &Dr.Anand Sugandhe** 138-142

Others

1.Key Informant Relationship with Ethnographic Fieldwork on Folk Art and Craft Clusters in Assam-**Dr.Drabita Dutta** 143-146

2.Intra District Disparities in School Infrastructure-A Case study at Jorhat District of Assam, India-**Mridul Kumar Borah&Sewali Das** 147-150

3.The life of the Bhikkhunīs in the saṅgha : An analytical study of Therīgāthā **-Monika Raj** 150-133

4.Impact of The Pandemic on Higher Education and The Effectiveness of online Education: Special Reference To Rural India-**Mrs. SHILPI** 153-157

5.Higher Education through the Medium of Indian Languages Opportunities and Challenges: Dalit and Tribal Perspective-**Dr.Suresh Kurapati** 157-160

6.Startup India:Challenges and Opportunities-**Dr.Vandana Pandey** 161-165

7.Changing Pattern of Food Processing Industry in India After Globalisation-**Ms.Anchal yadav&Dr.Dushyant Kumar** 166-169

8.Analysis of The Controversial Provisions of The Ordinance in Recent Years-**Suman &Dr.M.Imran** 169-172

9.Performance of Commerce Graduates in Job Market-**Nagendra N.&Dr. N. Nagaraja** 173-178

10.Seasonal Variation of leaf dust load of Various Plant Species of the main Campus of Kamla Nehru Institute of Physical and Social Sciences, Sultanpur, Uttar Pradesh-**Harshita Singh** 179-181

11.Value education and spirituality in education-Its relevance in the 21st century modern Education- **Jolly Anju** 182-184

12. Is Health Communication a New Soft Power of India?-**Vivek Kumar** 185-188

13. Food Security In India-**Mukesh Kumar Meena** 188-191

*14.*Role of Technology in Cyber Crimes: An Assessment-**Amita&Dr.Harishankar Rai** 192-195

15.*I*mpact of New Economic Ploicy on Food Processing Industry:A Critical Assessment-***Ms.Anchal yadav &Dr. Dushyant Kumar*** 196-199

16. Some Somatometric Profile Among The Kom Tribe of Manipur-**Dr.L.Romeo Singh&Ksh. SunitaDevi** 200-206

17. Crop Insurance and Government Programes Scheme: Does Farmers get Benefit: A Case From Tumkuru **-SRIKANTHNAIK H&GIRISHA T & JAYANTH H** 207-210

18.A Comparative Study of Job Stress and Burnout Among Male &Female Teachers in Higher Studies-**Rohini Mahur&Dr.William** 211-214

19. Cyber Crime and Remedial Measures in India Judicing A Comparative Approach **Dr.Pravin Kumar Chauhan** 214-217

20. Impact of Perception on Performance Appraisal and Job Satisfaction on Employee Performance With Reference to Pharmaceutical Companies in Banglore-**DIVYA K.&DR. K. NAGENDRABABU** 218-221

21. Prospects, Problems and Challenges of Indian Ports **-SRIKANTHNAIK H&MANASA K N** 222-225

22.A Study on the Influence of Job Insecurity on Employee Job Performance: Mediating Role of Organisational Trust-**Dr. S. N. VENKATESH&SRIKANTHNAIK H** 225-229

23.A study of the social contribution of Raghu Rai's photo journalism-**Amit Mishra** 223-233

24. Job Stress among Secondary School Teachers of Papum Pare District in Arunachal Pradesh-**Monika Sharma&Dr. Ravi Ranjan Kumar&Shriprakash Pal** 233-236

सम्पादकीय .....

शैक्षणिक,आर्थिक परिवर्तन ही सामाजिक समानता लाता है

डॉक्टर अंबेडकर ने कहा था शिक्षा ही उन्नति के सभी बंद दरवाजे खोलती है। मैं एक रूढ़िवादी गांव का रहने वाला हूं। आज से बीस तीस साल पहले छुआछूत,जातिवाद अपनी चरम सीमा पर था। दलितों और सवर्णों के लिए अलग अलग कुंये थे ,आज भी हैं।दलित सावर्णो के कुएं से पानी नहीं भर सकते हैं। उनके लिए गांव से बाहर कुएं है।शादी ब्याह में उनके साथ खाना नही खा सकते थे।अब थोड़ा परिवर्तन आया है। सवर्ण दलितों और अल्पसंख्यकों को जमीन के ऊपर अलग पंगत में बैठाकर खाना खिलाते थे। दलित सवर्णों के साथ शादी ब्याह नही कर सकते थे।

ज्यों ज्यों शिक्षा का प्रसार हुआ।सभी वर्गों के लोग शिक्षित होने लगे। गांवों से निकलकर शहरों में शिक्षित होने लगे। तकनीकि,व्यवसायिक और सामाजिक विषयों में उच्च डिग्री पाने लगे।उनके अंदर से कूपमंडुकता और अंध विश्वास धीरे धीरे समाप्त होने लगा। वैज्ञानिक सोच उनमें पनपने लगी। समाजिक कट्टरता और रूढ़िवादिता धीरे धीरे गायब होने लगी।दलित,पिछड़े ,अल्पसंख्यक और गरीब सवर्ण सरकारी नौकरियां पाने लगे।उनकी और उनके परिवार की आर्थिक स्थिति मजबूत होने लगी। गांवों की भी लड़किया कॉलेज और विश्वविद्यालयों से शिक्षित होकर छोटी बड़ी नौकरियां लड़कों की ही तरह पाने लगी। वे अंतर्जातीय विवाह करने लगी। जातिवाद धराशाई होने लगा। गाड़ी,बंगला उनको प्राप्त होने लगा। वे सभी एक अछा जीवन जीने लगे।

जिन दलितों, पिछड़ों,अल्पसंख्यकों और गरीब सवर्णों ने शिक्षा को गले नही लगाया वे मजदूर, राजमिस्त्री और और मकानों में पेंट करने वाले बनने लगे। छोटी बड़ी फैक्टरियो में दिन रात मेहनत करके रोटी रोजी कमाने लगे। जीवन भर ये गरीब रहे। किराये के मकानों पर परिवार सहित अपना जीवन यापन करते रहे। उधर लेकर अपने बच्चों की शादी करते रहे। वे जीवन भर कर्ज के भार से दबे रहे। यदि वे शिक्षित होते तो उन्हें ऐसा जीवन व्यतीत न करना पड़ता। इन लोगों ने डॉक्टर आंबेडकर के शिक्षा प्राप्त करने के विचार को नही माना। जिन दलितों, पिछड़ों गरीब सवर्णों और अल्पसंख्यकों ने उच्च शिक्षा कालेजों और विश्वविद्यालयों से प्राप्त की,वे लोग डॉक्टर,इंजीनियर, आई ए एस, पी सी एस, प्रोफेसर व एलाइड सेवाओं में चुने जाने लगे।सभी वर्गों की आर्थिक स्थिति मजबूत होने लगी। कूप मंडुकता उनके दिलों और दिमाग से गायब होने लगी। देहाती आदमी परवर्तित होने लगा। उनके अंदर आधुनिक विचार आने लगे।जिन दलितों के यहां सवर्ण कभी नहीं जाते थे।वे लोग दलितों के लड़के लड़कियों की शादी ब्याह में सम्मिलित होने लगे। मेहतर समुदाय के लोग उक्त उत्सवों में सूअर का गो स्त और मदिरा अपने मेहमानों को परोसते हैं। सवर्ण जाति के युवा मेहतर भाइयों के घर में जाकर गोस्त और मदिरा का सेवन करने लगे। गोस्त और शराब एक ऐसी चीज होती है जो जातिवाद,छुआछूत को समाप्त करती है और सामाजिक समरसता लाती है। आधुनिकता ,जातिवाद और गैर बराबरी को समाप्त करती है।फिर भी इस देश में ऑनर किलिंग कट्टर सनातनी हिन्दू विचारों के कारण होती हैं।

ऑनर किलिंग का है चारो तरफ शोर
आदम युग का मानव दिखा रहा है अपना जोर
यह कैसा समाज है
जहां जालिमों का शोर है
जो अपने को सर्वोच्च होने की
शेखी बघारता है
अपने खून की पवित्रता के लिए
निर्दोषों की जान लेता है।
अपने ही खून को
चाकुओं से काटता है
उसका हाथ नही कांपता है
यह कैसा समाज है
जहां जाहिलों का शोर है
वहां ऊंच नीच की भावनाओं का
भयंकर सैलाब है
जहां प्रेमी जोड़ा भंवर में
डूबता उतराता है
अगर वह बच गया
तो पेड़ में बांधकर
उसको मौत के घाट
उतारा जाता है
दलित की जिंदा चमड़ी
उघाड़ी जाती है
उसके जिंदा नाखूनों पर
लोहे की कील ढोकी जाती है
यह कैसा समाज है
जहां जाहिलों का शोर है
आदम युग का मानव
दिखा रहा अपना जोर है।
(उपन्यास डंक.. रूप नारायण सोनकर)

जब देश आजाद हुआ। दलित, पिछड़े,कमजोर सवर्णों को नौकरियों में आरक्षण मिला। रिटायरमेंट के बाद उनको पेंशन मिली। अब वर्तमान समय में ये सारी व्यस्थाएं धीरे धीरे समाप्त की जा रही हैं जो सभी वर्गों के लिए चिंता का विषय है। सोशलिस्ट भारत पूंजीवादी भारत बनता जा रहा है। ईस्ट इंडिया कंपनी जैसे हालात इस प्रजातांत्रिक देश में पनपते जा हैं। हमारी शिक्षा प्राइवेटाइजेशन की वजह से बहुत महंगी हो गई है।आम आदमी के बच्चे उच्च स्कूलों में शिक्षा से वंचित रह जायेंगे।सरकारी स्कूलों,कालेजों में शिक्षा बहुत ही सस्ती है।गरीब का बच्चा वहां पढ़कर अधिकारी बन जाता है।धीरे धीरे सरकारी स्कूल समाप्त किए जा रहे हैं। प्राइवेट लोगों के लिए गरीबों का बलिदान दिया जा रहा है। डॉक्टर अंबेडकर के सपनों के भारत को कुचला जा रहा है।

****

रूप नारायण सोनकर
संपादक-नागफनी

हिन्दी गजल में सामाजिक सरोकारों की व्याप्ति

डॉ.सुनील
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
हिन्दी-विभाग, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय
अमृत सर 143005 ((पंजाब)

विनय कुमार शुक्ल
सहायक आचार्य
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग,जम्मू केंद्रीय
विश्वविद्यालय, राया-सूचानी,बागला, साम्बा,जम्मू-181143

ग़ज़ल काव्य की एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण विधा है। मूलतः यह अरबी भाषा का एक शब्द है। भारतीय साहित्यिक परम्परा में गजल का आविर्भाव फारसी भाषा और साहित्य के प्रभाव के माध्यम से हुआ। गजल वस्तुतः प्रेम, सौन्दर्य और दिलो-सुखन का काव्य है जिसमें रोमानियत के साथ ही जीवन का दर्द भी समाया होता है। मशहूर शायर और गज़लगो फिराक गोरखपुरी गजलों के बारे में बयान करते हैं-''जब कोई शिकारी, जंगल में कुत्तों के साथ हिरण का पीछा करता है और हिरण भागते-भागते किसी ऐसी झाड़ी में फँस जाता है, जहाँ से वह निकल नहीं सकता, उस समय उसके कण्ठ से एक दर्दभरी आवाज निकलती है, उसे गजल कहते हैं।''[1] (फिराक गोरखपुरी, उर्दू भाषा और साहित्य, पृ. 300) गजल वस्तुतः जिंदगी की पीड़ा, सौन्दर्य और संघर्ष से उपजती है। विधा के रूप में वह केवल मनोरंजन का माध्यम भर ही नहीं है बल्कि उसमें जन-जीवन के प्रश्नों और सामाजिक सरोकारों की भी एक लम्बी शृंखला दिखाई देती है। गजल के साहित्यिक विधा के रूप में भाषाओं के दायरे को पार कर बृहत्तर भाषिक लोक में अपनी जगह बनाई है। हिन्दी साहित्य में भी गजल बहुलता से लिखी गई है। हिन्दी गजल में विविधता भी है, विशेषता भी है और विपुल समृद्धि भी है। हिन्दी गजल सरल और अत्यंत हृदयग्राही है। उसकी सम्प्रेषण शक्ति भावप्रवणता से सम्पन्न है। हिन्दी साहित्य में गजल लेखन की परम्परा 13-14 वीं शताब्दी से ही आरम्भ हो गई थी। अमीर खुसरो के लेखन से हिन्दी साहित्य में गजल के लेखन की शुरुआत मानी जा सकती है। खुसरो की गज़लों में सामाजिक सरोकारों का वर्णन भी विशेषता से मिलता है। प्रेम को एक प्रमुख व्यक्तिगत और सामाजिक प्रवृत्ति मानते हुए उन्होंने अपनी गजलों में प्रेम की अत्यंत मौलिक अभिव्यंजना की है। उनके लेखन की प्रमुख विशेषता यह है कि उनकी गजलों में हिन्दी और फारसी की मिली-जुली शब्दशक्ति हमें दिखाई देती है। प्रेम को उन्होंने एक नये सामाजिक फलक तक पहुँचा दिया है, जिसकी बानगी उनकी यह ग़ज़ल है-

'जे हाल मिसकीं मकुन तग़ाफुल दुराए नैना बनाए बतियाँ?
कि ताब-ए-हिज़रा न दारम ए जाँ! न लेहू काहें लगाय छतियाँ?
शबाने हिजराँ दराज यूँ जुल्फ बरोजे बसलत चू उम्र कोताह
सखी पिया को जो मैं न देखूँ तो कैसे काटूँ अँधेरी रतियाँ?[2]

(अमीर खुसरो: भावात्मक एकता के अग्रदूत, डॉ. अशोक कुमार भट्टाचार्य, पृ. 67)

यहाँ खुसरो ने प्रेम के एक नवीन सामाजिक पक्ष पर प्रकाश डाला है। यहाँ प्रेम आन्तरिक रागानुवर्ती तो है ही, साथ ही वह सामाजिक फलक पर समष्टिबोधक रूप में भी प्रकट होता है। वस्तुतः हिन्दी ग़ज़ल अपनी आरम्भिक अवस्था से ही सरोकारों से युक्त है।

सामाजिक सरोकारों की दृष्टि से यदि मूल्यांकित किया जाए तो हिन्दी साहित्य में कबीर का स्थान अन्यतम है। उनकी साहित्यिक भाषा को भले ही पंचमेल खिचड़ी कहा जाता है, परंतु उन्होंने अपने लेखन में रेख़्ता (तत्कालीन हिन्दोस्तानी) का अत्यन्त ही प्रभावपरक और सुंदर प्रयोग किया है। कबीर को ग़ज़ल के सैद्धान्तिक पक्ष का गहरा ज्ञान था। उनके द्वारा ग़ज़ल को एक साहित्यिक विधा के रूप में स्वीकार किया गया है। सामाजिक चिन्तन को प्रस्तुत करती यह ग़ज़ल कबीर की प्रमुख ग़ज़लों में से एक है-

हमन है इश्क मस्ताना, हमन को होशियारी क्या?
रहें आज़ार या जग से, हमन दुनिया से यारी क्या?
जो भटकते हैं पियारे से, भटकते दर-बदर फिरते,
हमारा यार है हम में हमन को इन्तज़ारी क्या?
ख़लक सब नाम अपन को, बहुत कर सिर पटकता है,
हम गुलाम सांचा है, हमन दुनिया से यारी क्या?''[3]

(हिन्दी की बेहतरीन ग़ज़लें, (सं.)-रवीन्द्र कालिया, पृ. 09

दुनियावी फंदे और गोरखधंधे से मुक्ति की राह दिखाती कबीर की यह अप्रतिम ग़ज़ल तत्वचिंतन से युक्त है। सामाजिक समरसता और समष्टिपरकता का संदेश भी प्रस्तुत ग़ज़ल में छिपा है।

होली को केवल रंगों का उत्सव या पर्व न मानकर साम्प्रदायिक और सामाजिक सद्भाव का पर्व मानकर हृदयों की एकता की बात भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपनी इस ग़ज़ल में की है जो अत्यन्त दुर्लभ प्रतीत होती है-

है रंग ज़ाफरानी रुखअबीरी कुमकुमे कुच है
बने हो खुद ही तुम होली, ए दिलदार होली में।
'रसा' गर जामे-मय गैरों को देते हो मुझको भी
नशीली आँख दिखलाकर करो शरशार होली में।''[4]

(हिन्दी की बेहतरीन ग़ज़लें, (सं.)-रवीन्द्र कालिया, पृ. 11

भारतीयों में विराजमान गरीबी, दैन्यता, पलायन, निरुत्साह और अधीरता को देखकर प्रसिद्ध साहित्यकार और सम्पादक पण्डित प्रतापनारायण मिश्र का हृदय अत्यंत दुःखी हो गया। इस सामाजिक विद्रूप को देखकर उन्होंने एक अत्यंत प्रसिद्ध ग़ज़ल लिखी-

बसो मूर्खते देवि! आर्यों के जी में।
तुम्हारे लिए हैं मकाँ कैसे-कैसे
अनुद्योग आलस्य संतोष-सेवा,
हमारे हैं अब मेहरबाँ कैसे-कैसे?[5]

(हिन्दी की बेहतरीन ग़ज़लें, (सं.)-रवीन्द्र कालिया, पृ. 13

अन्तहीन शोषण के जल में फँसे एक निरीह नागरिक की पीड़ा का वर्णन लाला भगवानदीन द्वारा रचित एक अत्यन्त ही मार्मिक ग़ज़ल में उपलब्ध है। महाजनी सभ्यता के जाल में फँसा व्यक्ति उस निरीह बुलबुल की भाँति क्रन्दन कर रहा है जो सूदखोर रूपी ब्याघ्र के चंगुल में कराह रहा है। नियति की इस विडम्बना का चिन्तन लाला जी ने अत्यंत ही कारुणिक रूप से किया है। यह आर्तनाद हिन्दी ग़ज़ल में अत्यंत ही अनूठा और विरल है-

बुलबुल जो पड़ी एक बधिक व्याघ्र के पाले,
निज हाल सुनाने को मधुर बैन निकाले।
हे व्याघ्र! मेरा हाल ज़रा गौर से सुन ले,
ले जाकर मुझे करेगा तू किसके हवाले।[6]

(गज़लिका (सं.)-रुद्र काशिकेय, पृ. 25)

हिन्दी साहित्य के अत्यंत ही समादृत लेखकों में एक राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत-भारती' के उत्तरार्द्ध में 'विनय' शीर्षक से एक रचना ग़ज़ल शैली में किया। इस रचना में उन्होंने ईश्वर से भारतभूमि के उद्धार की करुण कामना की है। ग़ज़ल का एक अंश उदाहरणस्वरूप द्रष्टव्य है-

इस देश को हे दीनबंधु! आप फिर अपनाइए,
भगवान भारतवर्ष को फिर पुण्यभूमि बनाइए।
जड़ तुल्य जीवन आज इसका, विघ्न-बाधा पूर्ण है,
हे रम्ब! अब अवलम्ब देकर विघ्नहर कहलाइए।[7]

(भारत-भारती, मैथिलीशरण गुप्त, पृ. 187)

जगदम्बा प्रसाद मिश्र 'हितैषी' की ग़ज़लों ने गुलामी के अंधकूप में फँसे भारतीयों को संघर्ष की एक नई राह दिखाई। अंग्रेजी सत्ता के जुल्मों का शिकार होने के बावजूद भी मिश्र जी बिना भयाक्रांत हुए ग़ज़लें लिखते रहे और आज़ादी के दीवानों को जगाते रहे। मानवतावादी सरोकारों से भरी इनकी ग़ज़लें जनजागरण का नूतन सामाजिक संदेश देती हैं। इनकी ग़ज़लें आज भी अत्यंत प्रासंगिक और महत्वपूर्ण हैं। इनकी एक मशहूर ग़ज़ल जो बाद में कौमी तराना बनकर उभरी, प्रस्तुत है-

इलाही वो भी दिन होगा, जब अपना राज देखेंगे,
जब अपनी ही ज़मीं होगी, जब अपना आसमाँ होगा,
शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले
वन पर मरने वालों का यही बाकी निशां होगा।[8]

(Kavitakosh.com, जगदम्बा प्रसाद मिश्र 'हितैषी')

प्रायः पाठकों को भ्रम हो जाता है कि उपर्युक्त ग़ज़ल के लेखक रामप्रसाद 'बिस्मिल' हैं, परन्तु यह ग़ज़ल उनके द्वारा नहीं लिखी गई है।

पराधीन भारत में गुलामी की मानसिकता के प्रति जिन शहीद क्रांतिकारियों ने विरोध का बीज बोया, उनमें रामप्रसाद 'बिस्मिल' का नाम अत्यंत ही सम्माननीय है। वह माँ भारती के सच्चे सपूत थे। उनमें भगत सिंह की तरह अत्यंत प्रखर प्रतिभा थी। वह एक भाषाविद, इतिहासविद तथा साहित्यकार भी थे। उनकी साम्यवादी विचारधारा में भी गहरी आस्था थी। उन्हें उर्दू भाषा और साहित्य का बेहतर ज्ञान था। वह स्वयं एक उम्दा ग़ज़लकार थे। उनकी एक यादगार ग़ज़ल इस प्रकार है-

मिट गया जब मिटने वाला, फिर सलाम आया तो क्या!
दिल की बर्बादी के बाद उनका पयाम आया तो क्या!!
मिट गई जब सब उम्मीदें, मिट गए जब सब खयाल,/ उस घड़ी गर नामावर लेकर पयाम आया तो क्या!!/ए-दिल-ए-नादान मिट जा तू भी कू ए यार में/ फिर मेरी नाकामियों के बाद काम आया तो क्या!''[9]

(मन की लहर, पृ. 198, रामप्रसाद बिस्मिल)

हिन्दी साहित्यकाश में सूर्य की भाँति चमकते महाकवि निराला की अनेक साहित्यिक विधाओं में प्रगाढ़ रुचि थी। वह रुढ़ मान्यताओं से समाज और कविता दोनों ही की मुक्ति चाहते थे। उन्होंने फारसी के छन्दशास्त्र का सुंदर निर्वाह करते हुए कुछ प्रमुख ग़ज़लें लिखीं। उनकी ग़ज़लों में सामाजिक विडम्बनाओं का एक नवीन रूप हमें दिखाई देता है। वे निरीह जनता की आवाज़ बनकर उभरते हैं और उस पूँजीपति वर्ग का प्रबल विरोध करते हैं जो असहाय और निर्बल लोगों का भयानक शोषण करता है। उनकी एक ग़ज़ल इस दृष्टिकोण से द्रष्टव्य है-

भेद कुल खुल जाए वह सूरत हमारे दिल में है,
देश को मिल जाए तो पूँजी तुम्हारे मिल में है/हार होंगे हृदय के खुलकर तभी गाने नए,/हाथों में आ जाएगा, वह राज जो महफिल में है
पेड़ टूटेंगे-हिलेंगे, जोर की आँधी चली,/ हाथ मत डालो, हटाओ पैर, बिच्छू बिल में है।[10] (बेला, सूर्यकांत त्रिपाठी, पृ. 75)

प्रस्तुत ग़ज़ल उनके काव्य-संग्रह 'बेला' में संग्रहीत है। इस ग़ज़ल में सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने मज़दूर वर्ग की शोषण के प्रति तीव्र घृणा और हिंसात्मक प्रतिरोध के स्वर को दर्शाया है। समाज का नग्न यथार्थ उनकी अन्य ग़ज़लों में भी दिखाई देता है। साहित्य का प्रमुख लक्ष्य या उत्स सामाजिक सरोकारों की पूर्णता ही है। यदि कोई साहित्य सामाजिक दायित्वों की पूर्णता के प्रति सजग या जीवंत नहीं रहता है, तो उसकी अनिवार्य मृत्यु हो जाती है। साहित्य संघर्ष और चेतना का जीवंत दर्पण। साहित्य किसी भी देशकाल या वातावरण में अपने सामाजिक दायित्वों से मुँह नहीं मोड़ सकता है। साहित्य की विधात्मक स्तर पर यह जिम्मेदारी है कि वह सामाजिक दायित्वों और सामाजिक प्रश्नों को लेखक के केन्द्र में स्थान प्रदान करे। जब से हिन्दी भाषा और साहित्य में ग़ज़ल लेखन का आरम्भ हुआ है, तभी से हिन्दी ग़ज़ल सामाजिक सरोकारों और दायित्वों के प्रति सजग या जागत है। समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों, विसंगतियों और सामाजिक-राजनीतिक, आर्थिक गुलामी की मानसिकता के प्रति हिन्दी के ग़ज़ल साहित्य ने अत्यंत ही तीव्र प्रतिरोध का रास्ता अख्तियार किया है। प्रतिरोध और सौंदर्य का मिश्रित परिपाक हिन्दी के मशहूर शायर और ग़ज़लकार बलबीर सिंह 'रंग' की ग़ज़लों में हमें दिखाई देता है। वे हिन्दी ग़ज़ल के मुक्तिबोध हैं जिन्होंने सदैव व्यवस्था की विरूपता के विरुद्ध निरंतर संघर्ष किया है। व्यवस्था की विडम्बना के प्रति तीव्र नकार से भरी उनकी यह ग़ज़ल द्रष्टव्य है-

मौत के डर से मैं खामोश रहूँ, लानत है,
जबकि जल्लाद की शमशीर से बातें की हैं।
कैस की लैला या फ़रहाद की शीरीं कह लो, /हम नहीं राँझा, मगर हीर से बातें की हैं।/'रंग' का रंग जमाने ने बहुत देखा है,/ क्या कभी आपने बलबीर से बातें की हैं।''[11] (हिन्दुस्तानी ग़ज़लें (सं.)-कमलेश्वर, पृ. 62)

मानवीय सभ्यता में असहिष्णुता की बढ़ती प्रवृत्ति, ईमान की घटती पहचान, भौतिकवादी देवत्व की अभीप्सा को खण्डित करतीं रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' की ग़ज़लें बरबस ही रुकने को बाध्य कर देती हैं और समाज के समक्ष एक यक्ष प्रश्न खड़ा करती हैं-

साँस उलटी चल रही है ग़मज़दा ईमान की,
बस मनाओ ख़ैर उस बीमार बेपहचान की।/इन खनकते छविगृहों पूजागृहों की भीड़ में,/ बस उसी ने शक्ल पाई थी ग़मे इन्सान की।/ मोल ले लें जो ख़ुदा तक को, दुकानें हैं यहाँ/ बात क्या है हम-तुम सरीखें मुफ़लिसों हैरान की।[12]

(गज़लनामा, अंचल, पीढ़ी बोल उठी (सं.)-वर्मा, राजकुमार, पृ. 15)

सामाजिक सरोकारों के दृष्टिकोण से प्रसिद्ध हिन्दी ग़ज़ल लेखक रामस्वरूप 'सिंदूर' की ग़ज़लें अपना अन्यतम स्थान रखती हैं। 'मैं सफल में हूँ' इनका अत्यन्त लोकप्रिय ग़ज़ल संग्रह है। ग़ज़ल साहित्य की वह विधा है जो तरबियत के चलते लम्बे वक्त तक लोगों के ज़हन और दिल पर अपना गहरा असर रखती है। इनकी ग़ज़लों में सामाजिक स्तर पर व्याप्त अनेक विसंगतियों जैसे-झूठ, फरेब, मक्कारी, साजिश, राजनीतिक विसंगति इत्यादि का सबल चित्रण देखने को मिलता है। इनकी एक ग़ज़ल पेश है-

अजब ये दौर है जिसमें शहादत हार जाती है,
जमानत जीत जाती है, अदालत हार जाती है।
गया वो वक़्त, अब जम्हूरियत का हाल ऐसा है,
जलालत जीत जाती है, शराफ़त हार जाती है।
न अब कुअरान बाइबिल गीता का कुछ असर होता,
जहालत जीत जाती है, हिदायत हार जाती है।
वो अक्सर ऐसा होता है, हमारी प्यारी संसद में
सहाफ़त जीत जाती है, सराफ़त हार जाती है।[13]

(मैं सफल में हूँ, रामस्वरूप सिंदूर, पृ. 34)

जब भी हिन्दी अदब और अकीदे की बात होगी, व्यवस्था में विद्रपताओं या सामाजिक सरोकारों की बात होगी। शमशेर और दुष्यंत के बिना हिन्दी ग़ज़ल की हर दास्तान अधूरी रहेगी। हिन्दी ग़ज़लकारों में शमशेर की ग़ज़लों में मानवता और जीवन के यथार्थ का हमें गहरा स्वर सुनाई देता है। उनकी बहर से युक्त एक ग़ज़ल का नमूना पेश है-

काफिले वालों कहाँ जाते हो सहरा की तरफ़,
आओ बैठो तुमसे हम दिल का अफ़साना कहें।
आज इक खामोश मातम सा हमारे दिल में है,
ख्वाब के से दिन हैं, वर्ना हम इसे जीना कहें।[14]

(अपने दिल का हाल, शमशेर बहादुर सिंह, Rekhta.org/Hindi)

दुष्यन्त की ग़ज़लों में भी सामाजिक अलमबरदारी बखूबी दिखाई देती है। उनकी ग़ज़लों में एक बेचैनी और अकुलाहट सी दिखाई देती है। ये बेचैनी भ्रष्ट तंत्र के सामने एक निरीह नागरिक के हार जाने की है जिसमें एक अत्यंत पतनशील और कारुणिक आकांक्षा दिखाई देती है। कभी-कभी तो दुष्यंत में केवल निराशा का स्वर दिखाई देता है, विद्रोह कहीं डूब जाता है। 'साए में धूप' की ये ग़ज़ल इसकी एक मजबूत बानगी है-

कहाँ तो तय था चरागाँ हरेक घर के लिए,
कहाँ चराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।[15] (साये में धूप, दुष्यंत कुमार, पृ. 19)

'नंगा सत्य' नाटक की मूल संवेदना और रंगमंचीयता

ज्योति 'विप्लव'
शोधार्थी
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय-दिल्ली

दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि का जन्म 'नकार' और 'विद्रोह' तथा दलितों की वेदना के गर्भ से हुआ है। यह नकार अथवा विद्रोह अपने ऊपर लादी गयी मानवीय व्यवस्था के विरुद्ध है, जिसे साकार करने में दलित नाटक का महत्त्वपूर्ण योगदान है। 'नंगा सत्य' (2007) दलित साहित्य में महत्त्वपूर्ण नाटक माना जाता है। इसमें 21वीं सदी में दलित, पिछड़े आदिवासी, शोषित, मजदूर, भूमिहीन, कृषक, एवं अस्पृश्यों के शोषण के चित्र के साथ, भारतीय समाज की आज़ादी के 63 वर्षों के शैक्षिक, आर्थिक उन्नति का 'नंगा सत्य' बताने का प्रयास किया है, जिसका आधार अम्बेडकर, ज्योतिबा फुले, पेरियार की वैचारिकी है। ब्राह्मणवादी और जमींदारी व्यवस्था सदियों से दलितों के साथ अमानवीय व्यवहार करती रही है। वह अभी भी दलितों को वैसे ही रखना चाहती है। लेकिन अब दलित शिक्षा पाकर डॉ. भीमराव अंबेडकर के विचारों को समझकर इस व्यवस्था का विरोध करने लगे हैं। जो इस नाटक में भी उद्धृत किया गया है:-

"उन्हीं की प्रेरणा से हमने अपना उद्देश्य बनाया है। समाज को बदल डालो, समाज व्यवस्था को बदल डालो, रूढ़ियों को तोड़ दो, बेड़ियों को तोड़ दो। (नंगा सत्य)

आरक्षण का मुद्दा उठाने का प्रयास भी नाटक में मिलता है:-
"डॉ. अंबेडकर ने देश का संविधान बनाकर इन चित्रों को ताकत दी है अब सवर्णों के हाथ कमजोर हो गए हैं।" (नंगा सत्य)इस नाटक में दलित महिला चेतना भी उजागर हुई है। महिलाएँ अपने ऊपर होने वाले अत्याचार को अब नहीं सह रही हैं। अबला से सबला नारी होने का एहसास हो चुका है। डॉ. अंबेडकर के विचारों पर अमल करने लगी हैं, उन्हें जानने और पढ़ने लगी हैं। अपने हितों को पहचानने लगी हैं। सदियों से उन पर लगाए गए बंधनों को तोड़ने लगी हैं। इस नाटक के माध्यम से दलित महिलाओं का आत्मविश्वास जगाने का प्रयत्न किया गया है:-

"दलित महिला अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों को सहती रही है। महिलाएँ शोषित पीड़ित हैं, लेकिन सामने आने के लिए तैयार नहीं होती, इसका कारण है उन पर अधिक शोषण किए जाते हैं। उन्हें बेइज्जत किया जाता है। उन्हें झूठा बदनाम किया जाता है। उन्हें जान से खत्म कर दिया जाता है। लेकिन अब महिला चेतना के कारण अपनी बेड़ियां तोड़ रही है। अपने ऊपर हो रहे अत्याचार का डटकर सामना कर रही है। अंबेडकर ने ठीक कहा है गुलाम को यदि गुलामी का एहसास करा दिया जाए तो वह फिर गुलाम नहीं रह सकता, वह अपनी बेड़ियाँ तोड़ देगा। महिलाओं को जागृत करने की जरूरत है। यह सदियों पुरानी बेड़ियाँ एक ही झटके में टूट जाएँगी आगे बढ़ना होगा एकता के साथ। गुलामी की जंजीर सत्य ना है।" (नंगा सत्य)

यह सभी बातें इस बात को इंगित करती हैं कि दलित नाटक के जन्म का एक मुख्य कारण और है। हिंदी के नाटककारों ने अगर दलित प्रश्न को लिया भी तो बहुत हल्के में। हिंदी ही क्या भारतीय रंगमंच ने दलित नायक प्रस्तुत करने की कोशिश नहीं की। अगर प्रस्तुत भी किया तो एक सशक्त वैचारिकी के रूप में नहीं। जिसके कारण दलित नाटक की रंगमंचीयता पर भी दलित साहित्य की वैचारिकी का प्रभाव दिखता है। इसीलिए दलित नाटक में रंगमंचीयता के विभिन्न पहलुओं को देखते हुए 'नंगा सत्य' की रंगमंचीयता पर दृष्टि डालना अनिवार्य हो जाता है। डॉ. आंबेडकर के विचार कई रूपों में फले-फूले हैं, जिनमें एक है 'दलित रंगमंच' ।दलित साहित्य की ही **तरह भारतीय रंगमंच की यह धारा भी मराठी क्षेत्र से** फूटी। या दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि 'भारतीय दलित रंगमंच की आधारशिला मराठी क्षेत्र से फूटी, जो पहले पहल मराठी में काम कर रहे दलित रंगमंच कर्मियों की देन था।' आज महाराष्ट्र ही नहीं बल्कि पूरे देश में डॉ. आंबेडकर के जीवन और कृतित्व से प्रेरणा प्राप्त कर दलित रंगमंच आकार ले रहा है। मराठी से शुरू हुई दलित रंगमंच की यात्रा अन्य भाषा और हिंदी तक पहुँच रही है। दलित रंगमंच की भूमिका को स्पष्ट करते हुए प्रसिद्ध दलित नाटककार **भि. शि. शिंदे** कहते हैं – ***"दलित थियेटर का मुख्य उद्देश्य समान प्रकार की चुनौतियों और समस्याओं से पीड़ित सभी लोगों को मानवता और आत्मसम्मान के एक छतरी के नीचे लाना है।"***

"इस प्रकार मानवता और आत्मसम्मान के आवाज को दलित रंगमंच बुलंद करता है। मानवमुक्ति की लड़ाई लड़ता है क्योंकि यह रंगमंच आंबेडकरी चेतना के प्रति प्रतिबद्ध है। डॉ. यशवंत मनोहर कहते हैं दलित थियेटर का ढाँचा महान आंबेडकर और जोती राव फुले के विचारों और प्रेरणा से इस आधार पर गढ़ा गया है ताकि पीड़ित लोगों को पीड़ाओं से मुक्ति मिल सकें।" **दलित रंगमंच और अम्बेडकर- सतीश पांडेय**

प्रबोधन की परंपरा बुद्ध, चार्वाक, कबीर से होकर जोतीराव फुले तक और फुले से लेकर डॉ. आंबेडकर तक पहुँचती है। आंबेडकर का दर्शन और चिंतन इसी प्रबोधन परंपरा की फलश्रुति है। **'दलित रंगमंच और अम्बेडकर में'** सतीश पांडेय लिखते हैं कि ***"दलित रंगमंच आंबेडकरी विचारधारा का 'कैलिडियोस्कोप' है जो कई रंग-रूप आकार के साथ अपना सौष्ठव बनाए रखता है। इसने शोषण के विरुद्ध विद्रोह को समग्रता दी है। साथ ही बदलते परिवेश में चुनौतियों को स्वीकार कर, अपने आप को सिद्ध कर अपनी प्रासंगिकता का विस्तार किया है।"***जैसा कि हम जानते हैं कि लोक और शास्त्र दोनों एक दूसरे के पूरक होते हुए भी एक दूसरे पर आश्रित हैं जो दलित रंगमंच में व्याप्त है और नंगा सत्य भी उस मिश्रण को दिखाता है। सर्वप्रथम भरतमुनि ने 'नाट्यशास्त्र' के माध्यम से नाटक पर पूर्ण रूप से विचार किया, जिसमें महत्वपूर्ण रंगकर्म और प्रदर्शन है। जिसमें संगीत, नृत्य, अभिनय, संवाद और सूत्रधार इत्यादि मौजूद हैं। ये सभी बातें आधुनिक नाटक में मिलती हैं और दलित नाटकों में भी मौजूद हैं।

'नंगा सत्य' में **पात्र और संवाद** के माध्यम से मंच पर दलित आंदोलन को रूपायित किया गया है। ऐसे ही कौन-सा पात्र किस वेशभूषा में और भाषा में प्रस्तुत होगा और उसकी उम्र इत्यादि जैसी विभिन्न बातों को भी शुरू में **'पात्र परिचय'** में शामिल किया गया है। सूत्रधार के रूप में कमल और नाटक का लेखक कृपाशंकर स्वयं नाटक का हिस्सा भी है। स्वयं नाटककार नाटक का हिस्सा होना लोक शैली से निर्मित है। इसलिए इस सबके बाद भी दलित नाटक के लेखन का अलगाव संस्कृत और हिंदी नाटक से है। दलित नाटक और जैसा कि नंगा सत्य लोक शैली से प्रभावित है। साथ ही वैचारिकी ही नहीं वरन यह रूढ़ियों और परंपरावादी शास्त्र का खंडन करता है। **मंगलाचरण की अवधारणा का भी खंडन करता है जो तथाकथित ईश्वरीय तत्व पर केंद्रित थी।** बल्कि लोक शैली में नट-नटी का प्रयोग जैसे होता है वैसे ही दलित नाटक में भी होता है। काव्यशास्त्र में वक्रोक्ति सिद्धांत (काकु) का साहित्य में बड़ा महत्त्व है और साहित्य की उच्चतम कोटि मानी जाती है, नंगा सत्य में इसका भरपूर प्रयोग किया गया है। परंतु दलित चेतना के संदर्भ में यह परंपरागत वक्रोक्ति सिद्धांत को अपनाकर नहीं चलता। शास्त्रों और संस्कृत के नाट्य परंपरा

में कुछ वर्गों की उपेक्षा होती रही है। वहाँ समानता का अभाव भी है, जबकि नाटक प्रदर्शन एक ऐसा महत्त्वपूर्ण अनुष्ठान है, जिसकी सिद्धि के लिए समाज के सभी वर्गों के लोगों की अपेक्षा होती है। उसमें न जीवन के किसी पक्ष की उपेक्षा की जा सकती है और न ही किसी को उसकी प्राप्ति से वंचित किया जा सकता है। उसमें जीवन के सारे सत्य समाविष्ट हो जाते हैं।

अतः दलित रंगमंच ने आंबेडकरवादी आशय, कथ्य और तथ्य को अभिव्यक्त करने के लिए परंपरागत शैली और शिल्प को भी चुनौती दी है। संस्कृत शास्त्रीय शैली के बजाय भारतीय लोकशैली को अपनाया है। परंपरागत नायकों के बजाय अपने नायक खड़े किए। अपना रंगतंत्र इजाद किया। अपनी आवाज बुलंद की और दलित रंगमंच को परिवर्तन के आंदोलनों का हथियार बनाया है।

नंगा सत्य इस परंपरा को तोड़ता नज़र आता है और दलित नाटक की चेतना को और विकसित करता दिखता है ऐसे ही इसमें पात्र और संवाद योजना ही नहीं बल्कि प्रकाश व्यवस्था, दृश्य योजना, पर्दे और नेपथ्य की अवधारणा भी व्याप्त है, जो इसके मंचन को सफल बनाता है और इसके 'नाटक' के स्वरूप को पूर्ण करता है। क्योंकि नाटक रंगमंच पर ही जाकर अपनी पूर्णता को प्राप्त करता है रंगमंचीयता के गुणों का अभाव इसे मात्र साहित्यिकता तक ही सीमित कर देगा। रंगमंच के बिना नाटक अपूर्ण है। उदाहरण के तौर पर नंगा सत्य के इस **रंगसंकेत** को देख सकते है:-

"मंच पर प्रकाश होता है। पीछे के परदे पर गाँव के घरों और खेतों का दृश्य है। मंच पर बुद्धि राम और सुखराम आते हैं। नेपथ्य से नीलिमा की चीखने की आवाज आती है। दोनों आवाज की तरफ ध्यान देते हैं।" (दृश्य-2, नंगा सत्य)

दृश्य योजना के साथ-साथ अंक विभाजन का सुंदर गठन है। वैसे तो आधुनिक युग में अंको में बड़े-छोटे होने पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाया गया है परंतु नाटक कम अंकों में ही लिखा जाना चाहिए। ताकि दर्शक इस यांत्रिक और आधुनिक युग में नाटक को देख चेतना ग्रहण करें जिस पर 'नंगा सत्य' दलित नाटक के रूप में खरा उतरता है। **'नंगा सत्य' में कुल मिलाकर 3 अंक हैं। पहले और दूसरे अंक में दो दृश्य हैं और तीसरे अंक में तीन।**

इसके अलावा संगीत का तत्त्व भी नंगा सत्य में मौजूद है:- कृपाशंकर दोनों हाथ ऊपर उठाकर ऊपर देखता है और मजाकिया लहजे में गाना गाता है *"ओ मेरे गगन गंभीर... ओ मेरे गगन गंभीर..."*

प्रयोगशील रंगमंच आधुनिक हिंदी और हिंदी दलित नाटक दोनों का प्राणतत्त्व है। यहाँ लोकनाट्य की शैलियों के अतिरेक, एब्सर्ड और संनिधीकरण जैसे नाट्य युक्तियों (technics) के साथ-साथ, सिनेमा की तरह फ्रीज़्ड और डिसॉल्व दृश्य तथा भाषा कर्म में प्रतीकात्मकता और व्यंग जैसी युक्तियों का भी विनियोग हुआ है। प्रयोग तथा लोकजागरण के लिए मुखरता नुक्कड़ नाटकों में अधिक प्रभावी होता है। नुक्कड़ नाटक की शैली का उपयोग नंगा सत्य में भी हुआ है। शेखर के इस संवाद से ये और स्पष्ट होता है:-

"(शीघ्रता से) सुनीत भैया हम नाटक देखने आए हैं। पहले उस नाटक को देखेंगे फिर इस विषय पर चर्चा करेंगे।" (नंगा सत्य, अंक-2 का दृश्य-1)

कुल मिलाकर नंगा सत्य नाटक पर गौर करें तो शास्त्रीयता, परंपरा और रूढ़ियों को यह नाटक तोड़ता नजर आता है। परंतु नाटक का आरंभ लोकनाट्य और आधुनिक दोनों शैलियों के मिले-जुले अंदाज में होता है। इसमें सुशीला टाकभौरे ने अपनी वैज्ञानिक दृष्टिकोण का भी परिचय दिया है। सूत्रधार के साथ-साथ नाट्य लेखक को पात्र के रूप में रखने की प्रयुक्ति इस संदर्भ में देखी जा सकती है। नाटक कैसे लिखा जाना चाहिए और उसमें क्या-क्या होना चाहिए ऐसी चर्चा शुरू से ही हो जाती है। आंबेडकरवादी दर्शन की केमेस्ट्री इन नाटकों में कई प्रयोगधर्मी प्रयासों के माध्यम से दिखाई देती है जिसने दलित रंगमंच की सीमाओं का भी विस्तार किया है। बाबासाहेब की प्रेरणा से उनके चिंतन को, उनके दर्शन को, उनके विद्रोही तेवर को, उनकी चेतना को दलित रंगमंच ने गंभीर प्रतिबद्धता के साथ प्रस्तुत किया और दलित रंगमंच को अपनी विशेष पहचान उपलब्ध कराई। इस रंगमंच द्वारा दलित समाज ने अपने अस्तित्व, अपनी अस्मिता, अपना आत्मसम्मान खोजने का प्रयास किया है। यह उनके संघर्ष का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम भी है। हाशिये पर स्थित दलितों के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक प्रश्नों को डॉ. आंबेडकर ने पूरे समाज के समक्ष पूरी मजबूती के साथ रखा। बुद्ध धम्म जैसा विज्ञानवादी, विवेकी, जीवनशैली, आचार शैली, विचारशैली के रूप में प्रस्तुत है।

****

सन्दर्भ ग्रंथ :-

1) टाकभौरे, सुशीला - नंगा सत्य' (नाटक),शिल्पायन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2015
2) नैमिशराय, मोहनदास, दलित साहित्य की अवधारणा में रंगमंच, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, शिमला, 2017
3) सिंह, डॉ. बच्चन, हिंदी नाटक, साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, 2008
4) भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास, डॉ. नगेन्द्र(सं), हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, नई दिल्ली, 2009

लेख :-

सतीश पांडेय- दलित रंगमंच और डॉ. अम्बेडकर
श्याम कुमार- 'दलित रंगमंच की प्रासंगिकता और नंगा सत्य' (भारतीय दलित नाट्य अकादमी, अक्टूबर 2012

भोजपुरी के लोक नाट्य : एक अध्ययन

डॉ.प्रीति प्रकाश
शक्ति नगर, हरिवाटिका चौक, बेतिया, पश्चिम चंपारण, बिहार

शोध सार- भारत में आधिकारिक रूप से भोजपुरी हिंदी की एक बोली है, लेकिन व्यावहारिक रूप से यह एक स्वतंत्र एवं समृद्ध भाषा है| (1) विश्व भर में लगभग छः करोड़ लोगों द्वारा बोली जाने वाली यह भाषा अभी भी बाजार की पहुँच से दूर अपनी संस्कृति और लोकाचार को संजोये हुए है| लोक नाट्य, लोक संस्कृति का एक अभिन्न अंग होता है| प्रस्तुत शोध आलेख में भोजपुरी क्षेत्र के लोक नाट्य पर प्रकाश डाला गया है| लोक नाट्य क्या होते हैं, भोजपुरी क्षेत्र में कौन कौन से लोक नाट्य हैं? उनकी क्या विशेषताएं हैं? उनकी कथा वस्तु क्या है? उनके प्रदर्शन की क्या विधियाँ हैं आदि प्रश्नों के जवाब तलाशने की कोशिश इस शोध आलेख में की गयी है|

बीज शब्द- भोजपुरी, लोक नाट्य, भुनेश्वर भाष्कर, विद्या सिन्हा, डोमकच, जट-जटिन, रामलीला, बहुरुपिया, चैता, नौटंकी, डॉ. श्याम परमार, जगदीश चन्द्र माथुर

शोध आलेख-

"आरे आवा छपरा आवा बलिया मोतिहारी आवा
रांची अउर पलामू आवा गोरखपुर देवरिया आवा
मिर्जापुर आजमगढ़ आवा ज ति ओ जवानपुर आवा
गाजीपुर बनारस आवा
सोने के कटोरिया में दूध भात लेले आवा
बबुआ के मुंह में गुटुर"

भोजपुरी में लिखी गयी इस लोक गीत (लोरी) की पंक्तियों में पूरे भोजपुरी प्रदेश का जिक्र है| पंक्तियों में उल्लेखित बिहार, झारखंड, उत्तरप्रदेश के इन जिलों के साथ ही नेपाल के तराई क्षेत्रों के कुछ हिस्सों में भी भोजपुरी थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ बोली जाती है| इसके साथ ही भोजपुरी सुरिनाम, गुयाना, फिजी, त्रिनिदाद और टोबैगो और उन देशों में भी एक बड़ी आबादी द्वारा बोली जाती है जहाँ भोजपुरी भाषी लोग पलायन करके जा बसे|(2)

इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि है| यहाँ की अस्सी प्रतिशत आबादी अपने जीवन की जरूरतों के लिए खेती और पशुपालन पर ही निर्भर है| बदलते समय के साथ ही यहाँ के लोगों को उनकी आर्थिक जरूरतों ने पलायन के लिए भी मजबूर किया है| गंवई संस्कृति, पलायन का दंश, जमीन से जुड़ाव, आदि ने यहाँ के लौकिक परम्परा को समृद्ध और स्मृतिधर्मी बना दिया है| बाजार अभी यहाँ उस तरह हावी नहीं है और लोक परम्पराएं अभी भी जीवन का एक अभिन्न अंग है|लोक धर्मी रूढ़ियों की अनुकरणात्मक अभिव्यक्तियों का वह नाट्य रूप जो अपने-अपने क्षेत्र के लोकमानस को आह्लादित, उल्लासित एवं अनुप्राणित करता है लोकनाट्य कहलाता है| (3)

लोकनाट्य लोकमानस को प्रिय लगने वाला व्यापार है अतः कहा जा सकता है कि लोकनाट्य की विशेषता उसके लोकधर्मी स्वरुप में निहित है| शास्त्रीय नाटकों से भिन्न लोक नाट्य की अपनी विशिष्टताएं होती हैं| जो हैं-यह लोक गीत, लोक नृत्य और लोक कथा का आनंदपूर्ण मिश्रण होता है| यह कोई एक विधा नहीं होता बल्कि कई विधाओं के मेल से ऐसा रसायन निर्मित होता है जिसका लक्ष्य आम जन को आनंद प्रदान करना होता है| इसमें कोई प्रोफेशनल कलाकार भाग नहीं लेते बल्कि गाँव जवार के ही लोग इस नाट्य में भाग लेते हैं|लोक नाट्य की कोई निश्चित कथा नहीं होती| अगर कोई मूल कथा रही भी तो समय, आवश्यकता और परिस्थिति की मांग के आधार पर फेर बदल होते रहते हैं| यहाँ कलाकार नाट्य मंचन के समय ही संवाद गढ़ लेते हैं| लोक नाट्य में स्थानीय वाद्य यंत्रो का प्रयोग किया जाता है| ढोलक न होने पर थाली बजा ली जाती हैं, तबला न होने पर बाल्टी भी उल्टी रखी जा सकती है| इसका कोई व्यवस्थित मंच नहीं होता| घर का आँगन, छत या फिर बांस की बल्लियों पर चादर तान कर बनाया गया मंच ही लोक नाट्य का मंच होता है| (4)लोक नाट्य में दर्शक और कलाकार के बीच ज्यादा फर्क नहीं होता| नाटक के मंचन के समय दर्शक भी नाटक में शामिल हो सकते हैं| यह ग्रामीण जनता की रचनात्मकता का भावनात्मक प्रतीक है| नाटक के संवाद, गीत, संगीत, नृत्य, वाद्य से लेकर वेश भूषा और मंचन के तरीके तक आम लोगों द्वारा इजाद किये जाते हैं| लोक जीवन से सम्बद्ध उत्सवों तथा मांगलिक कार्यों के समय इनका अभिनय किया जाता है|(5)

लोक नाट्य जीवन के यथार्थ से जन्म लेता है और लोकजीवन से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध होता है| भोजपुरी प्रदेश में लोकनाट्य के कई रूप प्रचलित हैं जिनमे प्रमुख हैं-

डोमकच- भोजपुरी क्षेत्र की जनता के बीच प्रचलित यह अत्यंत मनमोहक लोक नाट्य है| यह लोक नाट्य औरतों के द्वारा औरतों के बीच किया जाता है| ग्रामीण क्षेत्र में जब किसी लड़के का ब्याह होता है तब उसके गाँव से बारात उस गाँव में जाती है जहाँ कन्या और उसके परिवार वाले निवास करते हैं| चूँकि बारात में गाँव के लगभग सभी मर्द चले जाते हैं इसलिए रात में गाँव में चोरी की आशंका रहती है| इस आशंका से बचने के लिए स्त्रियाँ रात भर नाटक खेलने का प्रबंध करती हैं| इसकी पीछे दो उद्देश्य होते हैं- पहला तो यह कि नाटक के प्रदर्शन के कारण सभी लोग रात भर जगे रहते हैं जिससे चोरी या डकैती के लिए असावधानी का अवसर उपलब्ध नहीं होता| दूसरा लाभ यह होता है कि मर्दों के जाने से गाँव में जो सूनापन छा जाता है उसे दूर करने में यह प्रदर्शन बड़ी भूमिका निभाता है|इस लोकनाट्य का प्रदर्शन या तो खुली छत पर होता है या खुले आँगन में| नाटक में स्त्री पुरुष दोनों पात्र होते हैं लेकिन दोनों की भूमिकाएं औरते ही निभाती हैं|पुरुष पात्रों की भूमिका निभाने के लिए उसी घर के मर्द के रोजमर्रे में उपयोग होने वाले कपडे और उसकी चीजें जैसे छड़ी, चश्मा, हुक्का आदि का इस्तेमाल किया जाता है| मंच व्यवस्था के लिए न तो विधिवत मंच बनाया जाता है और न प्रकाश व्यवस्था के लिए माथापच्ची की जाती है| लालटेन या चौमुखा दिया के प्रकाश में यह नाटक अभिनीत हो जाता है| प्रदर्शन के समय श्रोता और दर्शक के बीच की दूरी का अनुशासन नाम मात्र का होता है| कभी भी कोई दर्शक अपने स्थान से उठ कर नट नटी की पंक्ति में शामिल हो जाता है| इस मायने में यह एक विशिष्ट नाट्य विधा है| इस प्रदर्शनी को पुरुषों के लिए निषिद्ध माना जाता है| महिलाएं उन्मुक्त भाव से, श्लील अश्लील के भेद को भूलकर इसमें अभिनय करती हैं| यहाँ एक और बात उल्लेखनीय है कि इस लोक नाट्य का न तो कोई आलेख होता है न घटनात्मक वृत्तों की जानकारी| भुवनेश्वर भास्कर अपनी पुस्तक 'लोक-संस्कृति और परम्पराएं' में लिखते हैं- "एक औरत गर्भवती होने का स्वांग करती है| वह प्रसव पीड़ा का अहसास करते हुए अभिनय रूप से प्रस्तुत करती है| ज्यादातर जो औरतें गर्भवती महिला का अभिनय करती हैं वह निजी जीवन में भी प्रसव पीड़ा झेल चुकी होती हैं| अतएव वह अच्छा अभिनय करती हैं| कराह, पीड़ा, बेचैनी, छटपटाहट के साथ ही स्वत अलिखित कुछ संवाद उसके मुख से निकलते हैं| उन्ही में से दो औरतें क्रमशः वैध और नर्स का अभिनय करते हुए उसका इलाज करती हैं|" (6)इस दौरान नाटक कथोपकथन संवाद द्वारा जारी रहता है| वैध गर्भवती महिला से पूछता है कि कहाँ दर्द है, कब से दर्द है, कौन सा महीना चल रहा है, अभी तक कहाँ थी, यह दवा खा लो, यह सुई ले लो, आदि आदि| इसके

बाद बच्चे का जन्म होता है और एक औरत चमइन बनकर उसका नार काटती है| नार काटने वाली चमइन के भी नखरे होते हैं, वह कहती है कि पहिले गुटखा खाएगी फिर नार काटेगी| फिर सभी औरतें बच्चे के जन्म पर सोहर गाती हैं और यह कार्यक्रम ऐसे ही चलता रहता है|

नौटंकी- लोक नाट्यो में यह एकमात्र ऐसी नाट्य विधा है जिसकी आकृति प्रकृति और मंच व्यवस्था आदि हर अंग में एक व्यवस्था मिलती है| नौटंकी को छोड़ जितने भी लोक नाट्य हैं वे प्रायः शास्त्रीय दृष्टि से अत्यंत अवस्थित और ढीले ढाले होते हैं| डॉ. श्याम परमार का अनुमान है- "नौटंकी का प्रारंभ मध्यकाल के आस पास हुआ होगा| (7) जयशंकर प्रसाद अपने रंगमंच निबंध में नौटंकी की चर्चा करते हैं और शायद यह मानते हैं कि नौटंकी शब्द 'नाटकी' से बना है| बाबूराम सक्सेना का मत है कि 'नौटंकी का आरंभ उर्दू कविता और लोकगीतों से हुआ है|' (8)

ऐसा कहा जाता है कि तेरहवी शताब्दी में अमीर खुसरो के प्रयत्न से नौटंकी को बढ़ावा मिला| उत्तर भारत में इसे 'स्वांग' या 'भगत' भी कहते हैं| श्री रविन्द्र भगत लोक नाट्य को धार्मिक और लौकिक दो भागों में विभाजित करते हैं| लोक नाट्य के अंतर्गत वो जिन तीन रूपों पर चर्चा करते हैं, वे हैं- भांड-भड़ैती, बिदेशिया और नौटंकी| ऐसा भी कहा जाता है कि नौटंकी के जन्मदाता मल्ल, रावत और रंगा नामक व्यक्ति थें जो ढोलक पर अभिनय किया करते थें| मल्ल जाट था, रावत राजपूत और रंगा जुलाहा था| नौटंकी की जो कथा भोजपुरी क्षेत्र में प्रसिद्ध है वो इस तरह है-

नौटंकी नाम की एक राजकुमारी थी, जो वैसे ही प्रसिद्ध थी जैसे सिंहल द्विप की पद्मिनी| उसी राज्य में फूल सिंह नाम का एक युवक रहता था| एक बार शिकार से लौटकर फूल सिंह ने अपनी भाभी से पीने का ठंडा पानी, नहाने को पानी, खाने को दाल चावल और हुक्का भर कर तैयार करने को कहा| भाभी को देवर के कहने का ढंग अच्छा नहीं लगा| उसने कह दिया कि कौन नौटंकी ब्याह कर लाये हो जो ऐसा हुक्म चलाते हो| मैं तुम्हारी तनख्वाह नहीं पाती जो तुम्हारा हुक्म बजाने को खड़ी रहूँ| भाभी की बात युवक को तीर की तरह लगी और उसने तय कर लिया कि नौटंकी से ब्याह कर लेगा तभी घर लौटेगा| जब वह घर से चला तब भाभी को अपनी भूल मालूम हुयी| फूल सिंह से उसने माफी माँगी और नौटंकी को ब्याह कर लाने में होने वाली कठिनाईयों का वास्ता देकर उसे रोकना चाहा| लेकिन फूल सिंह ने ठान लिया था सो ठान लिया था| भाई, माता पिता, मित्र आदि सबका समझाना व्यर्थ हुआ और फूल सिंह दो खजूरियों में मोहरें भर कर घोड़े पर चढ़कर नौटंकी के बाग़ में पहुँच गया| मालिन को रिश्वत देकर उसने बाग़ में जगह पायी और मालिन के बदले स्वयं ही फूलों की माला गूंथी और उसमे जवाहरात जड़ दिए| मालिन जब वो माला लेकर नौटंकी के पास गयी तो नौटंकी उसमे जवाहरात जड़े देख कर आग बबूला हो गयी| उसने मालिन को धमकाया और पूछा कि माला किसने गूंथी है| मालिन ने अपनी बहु का नाम लिया तो नौटंकी ने उसके सामने बहु को पेश करने का आदेश दे दिया| और कोई रास्ता न देखकर फूल सिंह ही स्त्री वेश में राजकुमारी नौटंकी के पास गया| स्त्री वेश में फूल सिंह बहुत ही सुन्दर लग रहा था| उसे देखकर नौटंकी मोहित हो गयी और उसने उसे अपनी सहेली बना लिया तथा अपने सेज पर सोने का अधिकारी बना दिया| रात में जब बातचीत में फूलसिंह ने नौटंकी को अब तक ब्याह न करने के बारे में पूछा तब नौटंकी ने कहा कि उसे अब तक कोई योग्य वर न मिला| साथ ही उसने इच्छा जताई कि कितना अच्छा होता अगर उन दोनों में कोई एक मर्द होता| फूल सिंह मर्द के रूप में सामने आ गया तो नौटंकी घबरा गयी| पर अब क्या हो सकता था| खबर राजा तक पहुँची| फूल सिंह को पकड़ लिया गया और उसे फांसी की सजा सुनाई गयी| जब फूल सिंह फांसी के तख्ते पर खड़ा हुआ तब नौटंकी मर्दाना वेश में वहां आ गयी| उसने जल्लादों को धक्का दिया और पिता के सामने अपने वेश में आकर उनसे कहा कि या तो उसे क्षमा करो या मरने को तैयार हो जाओ| राजा को बेटी की बात माननी पड़ी| उसने पंडित बुलाकर दोनों की शादी करा दी और फूल सिंह नौटंकी को लेकर घर आ गया| नौटंकी का मंच खुले स्थान पर बनाया जाता है| यह मंच काफी ऊँचा होता है जिसके एक कोने पर नगाड़े वाले बैठते हैं| बिहार गजेटियर के संपादक श्री एन. कुमार के अनुसार बिहार में 1940 के पहले नौटंकी का प्रसार ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत ज्यादा था|

(It was a popular form of recreation not only in rural areas but also in smaller towns of Bihar in pre 1940 era. It drew universal applause from villages. It was a cruder form of theatre and its themes centered round prowess in the battle fields and love lores in domestic life. The most prominent accompaniment to dialogues was a pair of drums (nagaras) whose beats used to add tempo to the story. Though there used to be local nautanki parties in Bihar but one from Kanpur or Lucknow usually drew much larger audience. The foreign parties differed from village Nautankis in as much as they made some attempt to throw light on contemporary social conditions with a view to reform society.' (9)

नौटंकी इसलिए भी लोक नाट्य है कि इसके रूप और प्रदर्शन में स्थान और समय के अनुसार परिवर्तन होते रहते हैं| इस एक गुण के कारण नौटंकी कई वर्षों से कई स्थानों पर खेली जा रही है|

रामलीला- रामलीला का आयोजन दशहरे के अवसरे पर भोजपुरी इलाकों में प्रमुखता से होता है| सही अर्थों में रामलीला ही ग्रामीण जनता की नाट्य प्रवृतियों का पोषक बनी हुयी है| (10)

रामलीला पौराणिक रामकथा पर आधारित होती है| इसमें अधिकांश संवाद पद्यात्मक होते हैं और दोहे चौपाईयों का प्राचुर्य होता है| रंगमंच विस्तृत खुले मैदान में होता है जहाँ सैकड़ों ग्रामीण सामने बैठ कर रात-रात भर रामलीला देखते हैं| इसमें मंच पर खड़े पात्र अभिनय करते हों तो उनके संवादों के अलावा पार्श्व से गायन मंडली कथा गायन और संगीत का सहारा देती है| वस्त्र के आधार पर राजा रानी, प्रजा आदि में विभिन्नता होती है| रामलीला का सम्पूर्ण वातावरण चरितनायक की शालीनता, गंभीरता और मर्यादा से व्याप्त रहती है| लीला के अंत में रामायण की आरती होती है जिसे पास में बैठे दर्शक भी लेते हैं| "धनुष यज्ञ के दृश्य, सीता स्वंयवर, परशुराम लक्ष्मण संवाद, राम-वनगमन, सीता हरण, लंकादहन, अंगद रावण संवाद, लक्ष्मण- मेघनाथ युद्ध, राम -कुम्भकरण-रावण युद्ध, भरत मिलाप तथा राम का राज्याभिषेक आदि इसके प्रमुख अंश हैं जिनके प्रदर्शन को जनता मन्त्रमुग्ध होकर देखती है|" (11)

रामलीला की उत्पत्ति कब और किन संदर्भो में हुई, इसकी कहानी आज भी अस्पष्टता के कुहासे में छुपी हुयी है| इस सन्दर्भ में भुनेश्वर भास्कर लिखते हैं- सर्वप्रथम रामकथा के महाकाव्य आधारित प्रस्तुतीकरण का उल्लेख हमें 'महाभारत' के खिलपर्व 'हरिवंश पुराण' में मिलता है| हरिवंश का विवरण इस प्रकार है- 'एक बार वज्रपुर में दैत्याधीश वज्रनाम की पुत्री प्रभावती हंसिनी से कृष्ण के पुत्र प्रद्युमन का सौन्दर्य वर्णन सुनकर उनसे मिलने की आकांक्षा करने लगी| तब दैत्याधीश की आज्ञा पर यादव वीरों ने नटवेश बनाकर वज्रपुर में प्रवेश किया| इन्होंने रामायण- महाकाव्य के नाटकीय प्रदर्शन में राक्षस राज के वध इच्छा से विष्णु का अवतरण दृश्य प्रस्तुत किया| राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुधन, ऋषयश्रृंग व शांता आदि का अभिनय सहजता से किया|"हरिवंश पुराण का समय चौथी शताब्दी माना जाता है| अतः कह सकते हैं कि

रामलीला का बीज हमें चौथी शताब्दी में प्राप्त होने लगता है| इसके बाद बहुत दिनों तक इतिहास में इसकी कोई चर्चा नहीं हुई है|" (12)मध्य युग में भक्ति आन्दोलन के दौरान मंदिर संगीत, नृत्य और नाटक तीनों के केंद्र बने| लेकिन रामलीला का वर्तमान के सन्दर्भ में प्रचलन का श्री गोस्वामी तुलसीदास को जाता है| तुलसीदास ने धर्म के प्रचार के लिए 'रामचरितमानस' की रचना की| इसे जन-जन तक पहुंचाने के लिए और उनके भीतर भक्ति भावना या धार्मिक भावना जगाने के लिए नाट्यकला के पीछे छुपी हुई शक्ति को पहचाना| उन्होंने 'रामचरितमानस' के आधार पर रामलीला का पुनर्गठन किया और नाटक को धर्म प्रचार का हथियार बनाया| (13) लोगों का मानना है कि वाराणसी, अयोध्या और चित्रकुट इन तीनों स्थानों की रामलीलाएं तुलसीदास ने प्रारंभ की थी| इनके प्रस्तुतिकरण की शैलियों में समानता होने के कारण ही ऐसा माना जाता है क्योंकि यदि स्रोत एक से नहीं होते तो इनकी शैलियाँ भी तत्वतः एक सी नहीं होती| धीरे- धीरे इसका विस्तार दूर दराज के क्षेत्रों में भी होने लगा| स्थान के हिसाब के रामलीला की भाषा और उसकी कथावस्तु में भी परिवर्तन आता गया|

बहुरूपिया- एक ही व्यक्ति जब अनेक रूप धारण करता है और दर्शकों को रिझाता है तो वह व्यक्ति बहुरुपिया कहलाता है| भोजपुरी क्षेत्र में बहुरुपिया एक लोक नाट्य के रूप में प्रसिद्ध है| ये कभी भगवान् शिव, कभी हनुमान, कभी डायन कभी राजा तो कभी वियोगिनी का रूप धारण कर लेते हैं| सामान्यतः पुरुष बहुरूपिये की भूमिका निभाते हैं| ये लोग एक पात्र के अनुरूप चेहरे पर लेप लगाकर एवं वस्त्र, आभूषण और हथियार धारण करके अभिनय करते हैं| गाँव का हर आँगन, हर दरवाजा और हर गली-नुक्कड़ उनका मंच होता है|

'बहुरुपिया' में एक लोक नाट्य के निम्नांकित गुण पाए जाते हैं-

ये नित नए वस्त्राभरण द्वारा किसी मूल पात्र की सूचना देता है|

उनका मेकअप, उसके शरीर के अन्य साधन तथा उसके संवाद की शैली अत्यंत नाटकीय होती है| यद्धपि बहुरुपिया के पास मंच नहीं होता, लेकिन वो दुकानों, प्रतिष्ठानों और सड़क को ही अपना मंच बना लेता है| अपने प्रदर्शन के लिए वो स्थानीय साधनों पर ही निर्भर रहता है| मध्य काल में बहुरुपिया एक पेशा के रूप में सामने आया और न केवल गाँवों में बल्कि छोटे मोटे नगरों में भी बहुरूपिये दिखाई देने लगें| कई लोक कथाओं में राजा और बहुरुपिया के बीच की बातचीत नजर आती है| वर्तमान में भी कुछ लोग बहुरुपिया के पेशे में लगे हैं| लेकिन बाजारवाद ने ऐसे लोगों की मुश्किलें बढ़ा दी है| **जट जटिन-** यह नृत्य संगीत रूपक मुख्यत भागलपुर, मुंगेर, मिथिला के इलाकों में प्रचलित है| भोजपुरी भाषी क्षेत्रों में यह लोकनाट्य उन्ही अंचलों में खेला जाता है जो भागलपुर या मिथिला के मूल निवासियों से प्रभावित हो| डॉ. श्याम परमार के अनुसार मिथिला, उत्तर बिहार था भोजपुर क्षेत्र के अनेक ग्रामों में गीतों भरा यह लघु प्रहसन प्रचलित है| (14)इस लोक नाट्य की समस्त कथा बिना किसी संवाद के गीत ही गीत में पांच अंको तक की होती है| कथानक के मोड़ अंकों का विभाजन करते हैं| चौमासा लगते ही स्त्रियाँ एकत्र होकर इस लोकनाट्य का प्रदर्शन करती हैं| स्त्रियों का दो दल बन जाता है जिसमे एक का प्रमुख जट होता है और दूसरे की जटिन| श्री गिरिजाकुमार माथुर जट-जटिन को लोकगीत और आंचलिक नाट्य के बीच की अवस्था का नमूना मानते हैं|(15)इस लोकनाट्य की कथावस्तु की चर्चा करते हुए श्रीमति इन्दुबाला देवी ने निम्नलिखित विवरण दिया- ' यह जट- जटिन के दाम्पत्य जीवन की मधुर कथा पर आधारित है| इसमें न संघर्ष है न घात प्रतिघात| इसमें निश्छल प्रेम और आदर्श चरित्र की अवतरण की गयी है| जाट का विवाह जटिन से होता है| उसे जटिन के चरित्र पर शंका होती है| किन्तु जटिन के प्रेम व्यवहार से उसका निराकरण हो जाता है| जब जाट विदेश जाने को तत्पर होता है तब वह जटिन को आभूषण का प्रलोभन देता है| पहले जटिन पर आभूषण और वस्तु का प्रभाव पड़ता है किन्तु वियोगजन्य व्यथा की कल्पना कर वह अपने प्रियतम को प्रदेश गमन से रोकती है| वह कहती है, 'तुम मेरे लिए नेकलेस लाओगे तो मैं उसे तोड़ फेकूंगी| मुझे हंसुली गले के फंदे के समान प्रतीत होगी| जटिन को डर है पूरब की जलवायु अस्वास्थ्यकर है, वहां जाकर बीमार न हो जाये| किन्तु जाट उसके अनुरोध को नहीं मानता और एक दिन चुपके-चुपके परदेश निकल पड़ता है| जटिन पति वियोग से विकल हो उठती है और उसकी खोज में निकल पड़ती है| राह में जमींदार, पुलिस, दारोगा, सुनार आदि जाट कीआशा छोड़कर अपने साथ चलने को कहते हैं और तरह तरह के प्रलोभन दिखलाते हैं किन्तु वह किसी के बहकावे में नहीं आती और अपने प्रियतम की प्रतीक्षा में आँखे बिछाए मिलन की आशा संजोये रहती है| जाट के परदेश से लौटने पर साधारण बात के लिए दोनों में वाद -विवाद होता है और जाट जटिन को मार बैठता है| इस पर जटिन रूठ कर दूर कहीं जाकर छिप जाती है| जाट उसके वियोग में राम के सामान सुदूर वन प्रांत में तो नहीं, किन्तु निकट गाँव गाँव टोले मोहल्ले में वियोगानल से दग्ध होकर जटिन को ढूंढता फिरता है| वह गाँव के 'मरर' और 'देमान' से पूछता है किन्तु उसे कोई पता नहीं चलता| तब वह कभी ग्वालिन, कभी चुडिहारण का रूप धर कर अपनी प्रियतमा के खोज करता है| आखिरकार जब जाट व्यथित होकर – 'अंगिया में दुभिया जमी गेल माई जटिन बिनु' की रागिनी अलापता है तब जटिन प्रकट होती है और वह उसे लेकर लौट आता है|' (16)यह एक ऐसा लोक नाट्य है जिसमें किसी वाद्य यंत्र की आवश्यकता नहीं होती| जितनी भी जगह उपलब्ध हो जाए वहीँ इनका मंच होता है| कथा वस्तु के आरम्भ में **जट-जटिन** प्रेमी प्रेमिका होते हैं, फिर उनका ब्याह होता है| जट धन कमाने कलकत्ता जाता है, जटिन पहले विरोध करती है फिर गहने का दिलासा पाकर मान जाती है| आभूषण न लाने पर रूठ कर मायके चली जाती है, जट उसे मना कर लाता है, यही इस लोक नाट्य की कथा वस्तु है| माता पिता, सास ससुर, सखी सहेली आदि पात्रों से यहाँ एक सुन्दर पारिवारिक माहौल निर्मित होता है| श्री जगदीशचंद्र माथुर के अनुसार 'जट-जटिन' की प्रस्तावना में सह गान एवं नृत्य सहित संवाद गीतों द्वारा उत्सव के उल्लास के लिए उद्दीपन जुटाया जाता है| उत्सव की लालसा और मृत्यु के भय के शाश्वत संयोग का मार्मिक उल्लेख भी यहाँ प्राप्त होता है| (17)

चैता- चैता बिहार का एक ऐसा लोक नाट्य है जिसमें बहुत बड़ी संख्या में कलाकार भाग लेते हैं| लगभग सभी भोजपुरी भाषी इलाकों में इसका आयोजन होता है| यह नृत्य गीत अभिनय का मिलाजुला रूप है| हाथ में झाल और करताल लेकर बीस पच्चीस लोग गोलाकार रूप में बैठते हैं| उनके बीच एक या दो ढोलक बजाने वाले के बैठने की व्यवस्था होती है| उसी मंडलाकार घेरे के भीतर वो पुरुष पति-पत्नी या नायक नायिका के वेश में खड़े रहते हैं| जब चैता आरंभ होता है और झाल ढोलक धीरे-धीरे खनकने लगे हैं एवं नायक नायिका गाए जाने वाले गीत के पूरे विषय को अपने अभिनय, नृत्य और स्वर द्वारा अभिव्यक्त देने का प्रयत्न शुरू करते हैं| चैता गाने का ढंग बिल्कुल निराला होता है| इसके आरंभ में 'रामा' और अंत में 'हो रामा' शब्दों की टेक होती है| आरंभ उच्च स्वर से किया जाता है, बीच में उतराव आता है और फिर अंत में चढ़ाव आता है| स्वरों के इस उतार चढाव के क्रम में इन गायनों की संगीत-माधुरी श्रोताओं के कानों में आनंदोल्लास प्रकट करती है| (18)चैता गायन का मुख्य विषय प्रेम, वियोग, श्रृंगार वर्णन, प्रकृति वर्णन इत्यादि है| भोजपुरी क्षेत्र के ज्यादातर पुरुष पलायन के लिए मजबूर होते हैं, ऐसे में घर पर रह जाने वाली उनकी पत्नियों को उनके बिना हर मौसम बुरा लगता है| कोयल की बोली, आम के मोजर और महुआ के फूल उसे बेगाने लगते हैं-"आईल चइत उत्पति हो रामा पिया नाहीं अइले

आधी-आधी रतिया के बोलले कोइलिया

पिया बिनु दरके मोर छतिया हो रामा
पिया नाहीं अइले
आमवा के डाली पर लागे मोजरिया
महुआ ग़इले कोचाई हो रामा
पिया नाहीं अइले
आईल चइत उत्पति हो रामा
पिया नाहीं अइले' (विरह)
रामा ननदी भौजइया दुनो पनिहारिन हो रामा
मिली- जुली सागर पानी भरे चलली हो रामा (ननद- भौजाई संबध)
रामा गोरे-गोरे बंहिया में हरी-हरी चुडिया हो रामा
लिलरा प सोभेला बिंदिया हो रामा (नारी सौन्दर्य)
रामा नदिया
किनारावा मुनगिया बोववलो हो रामा
सेहु मुंगिया फरेले घवधिया हो रामा
रामा एक छड़ी मारेला, दोसर छड़ी मारेला हो रामा
लूटी लेले हंस, परेउआ, दनो जोबनवा हो रामा (मजदूर महिला का जमींदार द्वारा शोषण)
रामा एही भोजपुरवा के कुंवर सिंह जवानावा हो रामा
डरे भागि गईले गोरे पलटानावा हो रामा (कुंवर सिंह)

चैता में विषय की विविधता है और गाँव के लोग इसका भरपूर आनंद उठाते हैं| लोग जब दिन भर खेती-मजदूरी, कटनी-पिटनी, शारीरिक मेहनत करने के बाद थके मन शाम को जब घर लौटते हैं तो चैता के आयोजन मात्र से इनके शरीर में नयी स्फूर्ति, नया अहसास एवं नयी खुशी जाग उठती है| उनकी सारी थकान मिट जाती है|

निष्कर्ष- भोजपुरी लोक नाट्य का एक समृद्ध इतिहास रहा है| वर्तमान बाजारवाद और ग्लोबलाइजेशन के दौर में भी लोक नाट्य अभी भी ग्रामीण मन और जीवन के मनोरंजन का एक महत्वपूर्ण साधन हैं| चाहे वह पुरुषों में वर्जित डोमकच हो या फिर ज्यादातर पुरुष पात्रों द्वारा अभिनीत बहुरुपिया, चाहे वह मंच पर होने वाला रामलीला हो या घर के दरवाजे पर होने वाला चैता, चाहे वह एकल अभिनय हो या बहुत साथियों द्वारा अभिनीत जट-जटिन कुल मिलाकर एक विविधता से परिपूर्ण, स्वर और साज के मेल से बने लोक नाट्य भोजपुरी प्रदेश के आम जन के जीवन को लगातार नयी उर्जा से अनुप्राणित करते हैं|

****

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. https://bh.wikipedia.org/wiki/भोजपुरी
2. https://bhojpurisahityangan.com/tag/fromreaders/
3. डॉ. महेंद्र भागवत, लोक नाट्य : परम्परा और प्रवृतियाँ, 1971, पृष्ठ संख्या- 5
4. विद्या सिन्हा, भारतीय लोक साहित्य, परम्परा और परिदृश्य, ,प्रकाशन विभाग, पृष्ठ संख्या 46
5. वही
6. भुनेश्वर भास्कर, भोजपुरी लोक संस्कृति और परम्पराएं, , प्रकाशन विभाग, पृष्ठ संख्या- 18
7. लोकधर्मी नाट्य परंपरा, डॉ. श्याम परमार, हिंदी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
8. हिन्दुस्तानी पत्रिका, त्रैमासिक, जुलाई 1937, पृष्ठ संख्या- 255
9. Bihar Information, Independence Day Special 1971, Popular recreations in Bihar by N. Kumar, State Editor, Bihar Gazetteers.p.50
10. हिंदी साहित्य कोश, प्रकाशन- ज्ञानमंडल लिमिटेड, , प्रथम संस्करण, संवत पृष्ठ संख्या- 658
11. हिंदी साहित्य कोश, प्रकाशन- ज्ञानमंडल लिमिटेड, प्रथम संस्करण, संवत 2015, पृष्ठ संख्या 658,
12. भुनेश्वर भास्कर, भोजपुरी, लोक संस्कृति और परम्पराएं, पृष्ठ संख्या – 107
13. वही
14. डॉ. श्याम परमार, लोकधर्मी नाट्य परम्परा, हिंदी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, पृष्ठ संख्या- 87
15. जगदीशचंद्र माथुर, परंपराशील नाट्य, , बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, पृष्ठ संख्या- 121
16. श्रीमती इंदुबाला देवी, जाट-जटिन, प्रकाशन कला संस्थान, पूर्णिया, प्रथम संस्करण, पृष्ठ संख्या- 9
17. जगदीशचन्द्र माथुर, परम्परा शील नाट्य, राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, पृष्ठ संख्या- 123
18. भुनेश्वर भाष्कर, भोजपुरी लोक संस्कृति और परम्पराएं, प्रकाशन विभाग, पृष्ठ संख्या -96

सांस्कृतिक चेतना और मातृभाषा

डॉ.लक्ष्मी पाण्डेय
हिन्दी विभाग,डॉ.हरीसिंह गौर केन्द्रीय
विश्वविद्यालय सागर पता-श्रीसूर्यम् कुलपति निवास के पास कोर्ट रोड सागर

आजीवन मातृभाषा मनुष्य के साथ रहती है बिना किसी अतिरिक्त प्रयास के।वह चीजों को समझने,व्याख्यायित करने में सहयोग करती है किन्तु एक अकेली वही व्यक्तित्व के समग्र विकास में सहायक नहीं हो सकती। बहुभाषी होना ज्ञानवृद्धि और आत्मविश्वास से भरे सुदृढ़ व्यक्तित्व का परिचायक है।उपरोक्त शीर्षक में तीन बिन्दुओं पर चर्चा की जानी चाहिए।संस्कृति ,साँस्कृतिक चेतना और मातृभाषा।पहले मातृभाषा पर बात करें तो इसकी परिभाषा यह होगी कि माँ से,परिवार से और अपने जन्मस्थानया जन्मभूमि पर रह रहे लोगों से ,उस समाज से सुनकर सीखकर बोली पढ़ी लिखी जाने वाली भाषा।इसे सीखने के लिए बच्चे को विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता, वह जन्म के बाद चैतन्य होते ही परिवार से सुनते-सुनते ही बोलने लगता है।धीरे-धीरे उन सब शब्दों के अर्थ भी समझने लगता है।लेकिन उस मातृभाषा में पढ़ने और लिखने के लिए उसे उस भाषा की वर्णमाला , शब्द- वाक्य लेखन और लिपि का ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य है। अगर उसकी मातृभाषा हिन्दी की ही कोई उपभाषा है तो वह हिन्दी की वर्णमाला और वाक्यरचना सीखकर देवनागरी लिपि में न केवल हिन्दी बल्कि अपनी मातृभाषा को भी लिखना पढ़ना सीख जाता है।ऐसी स्थिति में अब वह दो भाषाएँ जानने लगता है ,अपनी मातृभाषा और राजभाषा हिन्दी।हिन्दी भाषा के माध्यम से वह समृद्ध हिन्दी साहित्य से ,भारत के इतिहास ,संस्कृति ,धर्म-दर्शन ,राजनीति ,अर्थशास्त्र आदि के साथ -साथ हिन्दी में अनुवादित साहित्य के माध्यम से संसार के इतिहास ,संस्कृति ,राजनीति ,साहित्य और समाज आदि को भी पढ़कर जान पाता है।उसके ज्ञान में वृद्धि के साथ ही उसकी समझ बढ़ती है ,तर्कशक्ति बढ़ती है ,वह दूसरे देशों के साथ हर पक्ष पर अपने देश का तुलनात्मक अध्ययन करने लगता है।उसका दृष्टिकोण व्यापक होने लगता है ।वह अन्य भाषाएँ सीखने के महत्व को समझता है ताकि संसार के अन्य देशों के साहित्य ,संस्कृति ,विज्ञान, शोधों,राजनैतिक परिदृश्यों को समझ सके।उसके व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया इसी तरह उत्तरोत्तर आगे बढ़ती रहती है।अपनी मातृभाषा में वह अपनी भावनाओं को बेहतर तरीके से अभिव्यक्त तो कर सकता है लेकिन राजभाषा को सीखे बगैर उसके ज्ञान में वृद्धि नहीं हो सकती,दृष्टिकोण व्यापक नहीं हो सकताउसके व्यक्तित्व का विकास नहीं हो सकता। अगर उसकी मातृभाषा राजभाषा नहीं है तो इसका तात्पर्ययह हुआ कि वह एक सीमित क्षेत्र में बोली जाती है,उसका समृद्ध साहित्य नहीं है।भक्तिकाल में अवधी में लिखे गए रामचरितमानस और ब्रज में लिखे गए सूरसागर की बात छोड़कर हम आधुनिक काल की, स्वतंत्र भारत की भाषिक स्थिति पर बात कर रहे हैं।आज बुंदेली ,अवधी,ब्रज,बिहारी आदि बोलियाँ सीमित क्षेत्र में बोली जाती हैं।इनका साहित्य सीमित है।ये सम्बन्धित क्षेत्र की मातृभाषाएँ हैं लेकिन इन क्षेत्रों की राजभाषा हिन्दी है। शिक्षा प्राप्त करने का अर्थ है ,हम जो जानते हैं उससे आगे का ज्ञान प्राप्त करना।यानी मातृभाषा तो जन्म से ही बच्चा सुन समझ और बोल रहा है तो उसे प्राथमिक शिक्षा राजभाषा की और राजभाषा में ग्रहण करना चाहिए।तमाम चिकित्सक ,वैज्ञानिक और शिक्षाविद अनेक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर चुके हैं कि बच्चा वयस्कों से,बड़ों से कई गुना ज्यादा और शीघ्र समझता है।आत्मसात करता है ,उसकी स्मरण शक्ति ,ग्रहण करने की क्षमता बहुत अधिक होती है।यह भी सर्वमान्य कहावत है कि बच्चे कच्ची गीली मिट्टी की तरह होते हैं उन्हें हम जैसे आकार में ढालना चाहें ढाल सकते हैं।यह सब जानते और मानते हुए उन्हें मातृभाषा में ही

प्राथमिक शिक्षा देना उन्हें योग्यता के क्षेत्र में पीछे धकेलना ही होगा।प्राथमिक शाला में यानी पाँचवीं कक्षा तक पहुँचते हुए बच्चे का शब्दों के उच्चारण का तरीका और अभिव्यक्ति शैली निर्मित हो जाती है। इसलिए प्राथमिक शाला से ही उन्हें राजभाषा में शिक्षा मिलना चाहिए।केवल मातृभाषा का और उसके साहित्य का ही ज्ञान प्राप्त करना लक्ष्य बना लें तो व्यक्तित्व का विकास,ज्ञान का विकास अवरूद्ध हो जाएगा। महात्मा गाँधी मातृभाषा और राजभाषा में समन्वय और संतुलन चाहते थे। राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में उन्होंने सदा हिन्दी की पैरवी की।सूर्यकान्त नागर गाँधी जी की भाषिक दृष्टि पर चिन्तन करते हुए लिखते हैं कि-''गाँधी जी की भाषिक मान्यताओं के पीछे लोक संग्रह के संतुलन का भाव था।लोक भाव को अक्षत और अक्षुण्य रखने के लिए उन्होंने पहले जातीय संस्कारों और अपनी बोली -भाषा को जानना जरूरी बताया और फिर सामाजिक-राष्ट्रीय सम्पर्क के लिए हिन्दी को जानने समझने का सुझाव दिया।वे मातृभाषा और राष्ट्रभाषा को भारत राष्ट्र के दो नेत्रों के रूप में देखते थे।''[1]अनेक अहिन्दीभाषी मनीषियों ने अपनी मातृभाषा को पूरे सम्मान के साथ सहेजते हुए हिन्दी को राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकारते हुए अपनी विशिष्ट पहचान बनाई।गाँधी जी की मातृभाषा गुजराती थी और वे अंग्रेजी के अधीत विद्वान थे ।रवीन्द्रनाथ टैगोर की मातृभाषा बंगाली थी,किन्तु राष्ट्रभाषा सम्बन्धी उनके विचार देखें-'' आधुनिक भारत की संस्कृति एक विकसित शतदल के समान है जिसका एक-एक दल,एक-एक प्रांतीय भाषा और उसकी साहित्य संस्कृति है।किसी एक के मिटा देने से उस कमल की शोभा नष्ट हो जाएगी।हम चाहते हैं कि भारत की सब प्रान्तीय बोलियाँ जिनमें सुन्दर साहित्य की सृष्टि हुई है,अपने-अपने घर में रानी बनकर रहें और आधुनिक भाषाओं के हार के मध्य-मणि हिन्दी भारत-भारती होकर विराजती रहे।''[2]

मराठी मातृभाषा भाषी पं.केशव वामन पेठे,विष्णु सखाराम खांडेकर आदि तत्कालीन मनीषी तथा वर्तमान में भी अहिन्दी भाषा के साहित्यकार , राजनीतिज्ञ ,समाजशास्त्री, इतिहासकार आदि हिन्दी भाषा के क्षेत्र में अपनी मातृभाषा के क्षेत्र से बढ़कर प्रतिष्ठित हैं। मनीषी हैं। आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती मूलतः गुजराती थे ,वे संस्कृत में व्याख्यान देते थे,प्रवचन करते थे। बंगाल प्रवास के दौरान उन्होंने बंगला भाषी केशवचन्द्र सेन के यह कहने पर कि अगर आप हिन्दी में प्रवचन दे तो आपको ज्यादा लोग सुन और समझ सकेंगे तथा आपकी बातों से लाभ उठा सकेंगे।स्वामी जी ने हिन्दी में प्रवचन देना आरम्भ किया।उन्होंने अपनामहत्वपूर्ण ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' भी हिन्दी में लिखा। विजयदत्त श्रीधर लिखते हैं-''भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं होती। वस्तुतः वह अपने विशाल भाषिक समाज की संस्कृति का प्रतिबिम्ब और राष्ट्रीय अस्मिता की प्रतीक होती है।दैनन्दिन जीवन से लेकर वाड.मय तक उसका व्यापक फलक होता है।''[3] मातृभाषा का फलक विशाल और व्यापक नहीं होता,यह तो सर्वविदित और सर्वमान्य है। ऐसी स्थिति में केवल क्षेत्रीय संस्कृति का ज्ञान ही चेतना की सीमा रेखा बन जाएगा। जबकि भारतीय संस्कृति का फलक विशाल और व्यापक है। ज्ञान की कोई सीमा नहीं है।व्यक्तित्व का विकास बहुज्ञ और बहुपठित होने से होता है।संस्कृति की सामान्य परिभाषा किसी देश के आचार-विचार,खान-पान,वेश-भूषा ,परम्पराएँ ,मान्यताएँ,धर्म-दर्शन-अध्यात्म आदि का मिला-जुला रूप है।भारत एक लोकतांत्रिक धर्मनिरपेक्ष गणराज्य है ।इसमें अनेक जातियों ,धर्मों के लोग मिलजुल कर रहते हैं।इसलिए यह एक प्राचीन और समन्वयवादी संस्कृति है।इसमें अनेक भाषाएँ और उनका साहित्य है।इसे जानने के लिए उदार और व्यापक दृष्टिकोण वाला होना चाहिए।इसे आत्मसात् कर ही चेतना सम्पन्न हुआ जा सकता है।पं. जवाहरलाल नेहरू संस्कृति पर विचार करते हुए लिखते हैं-''संस्कृति है क्या ?शब्दकोश उलटने पर इसकी अनेक परिभाषाएँ मिलती हैं।एक बड़े लेखक का कहना है कि 'संसार भर में जो भी सर्वोत्तम बातें जानी या कही गई हैं ,उनसे अपने आपको परिचित करना संस्कृति है।एक दूसरी परिभाषा में यह कहा गया है कि''संस्कृति शारीरिक या मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण ,दृढ़िकरण या विकास अथवा उससे उत्पन्न अवस्था है।''यह मन, आचार अथवा रूचियों की परिष्कृति या शुद्धि है।''यह ''सभ्यता का भीतर से प्रकाशित हो उठना है।''इस अर्थ में ,संस्कृति कुछ ऐसी चीज का नाम हो जाता है जो बुनियादी और अन्तर्राष्ट्रीय है।फिर ,संस्कृति के कुछ राष्ट्रीय पहलू भी होते हैं।और इसमें कोई सन्देह नहीं कि अनेक राष्ट्रों ने अपना कुछ विशिष्ट व्यक्तित्व तथा अपने भीतर कुछ खास ढंग के मौलिक गुण विकसित कर लिए हैं। भारतीय संस्कृति में समन्वयन तथा नए उपकरणों को पचाकर आत्मसात् करने की अद्भुत योग्यता थी।''[4] हम कहते हैं 'थी' नहीं ,अब भी यह योग्यता विद्यमान है। भारतीय संस्कृति की जड़ें वैदिक काल में हैं। डॉ. दीक्षित कहते हैं-'भारतीय संस्कृति मंत्र-दृष्टा कवियों की देन है।कवि को ऋषि और मनीषी मानने की परम्परा प्राचीन है।वैदिक काल में, इसीलिए,दर्शन-धर्म और काव्य की एकात्मता थी।वेदों में न केवल उक्ति-चारूता, रचना नैपुण्य और हृदय की सहज अभिव्यक्ति के साथ ही,गंभीर दार्शनिक विचारों,विविध आख्यानों और नैतिक आचारों के उदात्त विधान हैं,वरन वाणी की शक्ति और महिमा के आकलन तथा मूल्यांकन के प्रयत्न भी किए गए हैं।''[5] संस्कृति के इस महान स्वरूप को जानना और उसकी रक्षा करने का उत्तरदायित्व अनुभव करना ,इस उत्तरदायित्व का निर्वाह करने के लिए कटिबद्ध रहना हर भारतीय का कर्तव्य है।यह अनुभूति और कर्तव्यनिष्ठा ही उसकी चेतना का प्रमाण है।अपने अधिकारों और कर्तव्यों को जानना और समझना ही चेतना का प्रतीक है।साँस्कृतिक चेतना ही हमें सच्चा नागरिक बना सकती है।पं. नेहरू की एक महत्वपूर्ण टिप्पणी है-'भारत में बसने वाली कोई भी जाति यह दावा नहीं कर सकती कि भारत के समस्त मन और विचारों पर उसी का एकाधिकार है।भारत आज जो कुछ है उसकी रचना में भारतीय जनता के प्रत्येक भाग का योगदान है।यदि हम इस बुनियादी बात को नहीं समझ पाते तो हम भारत को भी समझने में असमर्थ रहेंगे।और यदि भारत को हम नहीं समझ सके तो हमारे भाव,विचार और काम सब के सब अधूरे रह जाएँगे और हम देश की ऐसी कोई सेवा नहीं कर सकेंगे ,जो ठोस और प्रभावपूर्ण हो।''[6] साँस्कृतिक चेतना पद का अर्थ केवल संस्कृति को जानना और जागरूक होना ही नहीं है बल्कि सुसंस्कृत होकर इसके महत्व और सार्थकता को बनाए रखना भी है।सुसंस्कृत होना यानी परिष्कृत होना, उदार और करूणाशील होना, समष्टिवादी होना है।इसके लिए अपने दायरे से निकलकर संसार को जानना आवश्यक है।चाहे वह दायरा भाषा का हो ,कर्म का या भावनाओं का हो।हिन्दी का समृद्ध साहित्य हमें वेदों से अब तक की भाषा की यात्रा,धर्म-दर्शन-अध्यात्म की यात्रा,सामाजिक-राजनैतिक आर्थिक -साँस्कृतिक परिवर्तनों की यात्रा की विशद और गहन जानकारी देता है।यह हमारी साँस्कृतिक चेतना को उर्ध्वमुखी बनाता है। विकास के सोपान तय करने और कराने में मातृभाषा हिन्दी की भूमिका इसका योगदान अविस्मरणीय है। ऐसा इसलिए संभव हो सका क्योंकि अमीर खुसरो और भारतेन्द हरिश्चन्द्र द्वारा व्यवहृत खड़ी बोली हिन्दी व्याकरण द्वारा परिष्कृत और परिनिष्ठित होकर मातृभाषा हिन्दी और अब अनेक राज्यों सहित देश की भी राजभाषा हिन्दी बन गई है।हमें अपनी मातृभाषाओं के विकास पर ध्यान देना चाहिए।उन्हें लुप्त होने से बचाना चाहिए। गाँधी जी कहते हैं-''मातृभाषा का अनादर माँ के अनादर के बराबर है।जो मातृभाषा का अपमान करता है,वह स्वदेश भक्त कहलाने के लायक नहीं।बहुत से लोग ऐसा कहते सुने जाते हैं कि 'हमारी भाषा में ऐसे शब्द नहीं,जिनमें हमारे उँचे विचार प्रकट किए जा

सकें।'किन्तु यह कोई भाषा का दोष नहीं।भाषा को बनाना और बढ़ाना हमारा अपना कर्तव्य है।"[7] विकास और प्रवाह ही जीवन है।यह भी सकारात्मक होना चाहिए।इसके लिए प्रेरित करने वाली,पथ प्रदर्शन करने वाली शिक्षा ही सार्थक है।विकास अकेले का नहीं बल्कि समूह का।भारत की संस्कृति सामूहिकता की संस्कृति है।हम वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना के साथ जीते हैं।महादेवी वर्मा कहती हैं-''जीवन की तरह संस्कृति भी एक गतिशील प्रवाह है।वह विशेष देश काल और जलवायु में विकसित होकर मानव समूह की व्यक्त और अव्यक्त प्रवृत्तियों का परिष्कार करती है और उस परिष्कार में विकसित होकर मानव समूह को सुरक्षित रखती है। - यह विकास का एक रूप नहीं,विभिन्न रूपों की समन्वयात्मक समष्टि है।जिसका एकरूप स्वतः पूर्ण होकर भी अपनी सार्थकता के लिए दूसरे का सापेक्ष है।"[8] भारतीय संस्कृति के इसी रूप को जानना समझना ,उसे आत्मसात कर उसी धारा का अनुगामी बनना ही हमारी साँस्कृतिक चेतना का प्रमाण है।यह चेतना गूँगे और लँगड़े व्यक्ति में भी हो सकती है।गूँगा लिखकर अपनी परिष्कृत भाषा शैली में इसे अभिव्यक्त कर सकता है।जिसने घूम फिर कर दुनिया देखी हो ,दूसरी भाषाओं को लिखना-पढ़ना सीखा हो,अनुवादित साहित्य पढ़ा हो ,उसका शब्द भंडार उसे साँस्कृतिक तत्वों की व्याख्या करने ,परिवर्तित होते समय के साथ कुछ परम्परागत मूल्यों को हटाने और कुछ नया जोड़ने की तर्कपूर्ण पैरवी करने की योग्यता देता है। अंग्रेजी एक विदेशी भाषा के रूप में ,पाश्चात्य साहित्य ,राजनीति,अर्थनीति आदि को जानने का साधन बन सकती है किन्तु हिन्दी राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित रहे तथा मातृभाषाएँ दैनिक व्यवहार से आगे बढ़कर ,परिष्कृत होकर साहित्य का भंडार भरें ,निरन्तर विकासशील हों तो बची रहेंगी।

****

संदर्भ-

1-रवीन्द्रनाथ टैगोर-उद्धृत-हिन्दी राष्ट्र की अस्मिता-पृ.-19
2-सूर्यकान्त नागर-महात्मा गाँधी की भाषा दृष्टि और वर्तमान सन्दर्भ-वीणा पत्रिका इंदौर ,1019 वाँ अंक ,पृ.-19
3- श्री विजयदत्त श्रीधर-हिन्दी राष्ट्र की अस्मिता -पृ.-19
4-पं. जवाहरलाल नेहरू-'संस्कृति के चार अध्याय '-प्रस्तावना से
5-डॉ. भगीरथ दीक्षित-अभिनव साहित्य चिंतन -पृ.-223
6-पं. जवाहरलाल नेहरू-संस्कृति के चार अध्याय-प्रस्तावना से
7-महात्मा गाँधी-गाँधी वाड.मय से
8-महादेवी वर्मा-भारतीय संस्कृति के स्वर-पृ.-19-20

भारतेंदु और द्विवेदीयुगीन हिंदी कविता में अभिव्यक्त किसान चेतना

ओमप्रकाश सुंडा
शोधार्थी, हिंदी विभाग
राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय, अजमेर मो. 9571474175

शोध सारांश: खड़ी बोली हिंदी के शुरूआती दौर में हिंदी किसान कविता बिना किसी वाद के छिटपुट रूप में लिखी जा रही थी। 1857 ई. की क्रांति में किसान जन-जीवन की महत्वपूर्ण भूमिका होने के बावजूद भी उससे जुड़ा किसान साहित्य बहुत कम देखने को मिलता। भारतेंदु काल में काल में औपनिवेशिक लूट के परिणामस्वरूप बर्बाद हुई ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर भारतेंदु और उनके समकालीन कवियों सीमित मात्रा में लिखा है। द्विवेदी युग में अच्छा खासा किसान साहित्य दृष्टव्य है। गुप्त जी और स्नेही जी ने तो खंड काव्य ही लिख डाले। लघु पत्रिकाओं में भी किसान कविताएँ समय-समय पर छपती रही। प्रस्तुत शोध आलेख में इन्हीं दो युगों में लिखी गई किसान कविताओं का आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है।

बीज शब्द: किसान कविता, मैथिलीशरण गुप्त, किसान खंड काव्य, भारतेंदु काल, द्विवेदी काल।

मूल आलेख-हिंदी में किसान साहित्य पर अकादमिक और आलोचकीय कार्य न के बराबर है। किसान कविताओं की खोज में हम हिंदी साहित्य के इतिहासों का रुख कर सकते हैं या तत्कालीन समय के पत्र-पत्रिकाओं में किसान कविताएँ खंगाल सकते हैं। हिंदी की मुख्यधारा में भी किसान कविता काफी मिलती है लेकिन इस काल में 'किसान आंदोलन' से जुड़ी कविताएँ ही अधिक है। भारतेंदु और उनके मंडल के कवि या महावीर प्रसाद द्विवेदी से प्रेरित होकर लिखने वाले कवियों में भी किसानी जीवन को आधार बनाकर तथा तत्कालीन समय के किसान आंदोलनों को मद्देनजर रखते हुए काफी कविताएँ लिखी गई। 19 वीं सदी के मध्य की किसान कविताएँ देश के बड़े जनांदोलन 1857 के क्रान्तिकारी संघर्ष में किसानो की भूमिका को पता नहीं क्यों छोड़ देती है? या तो अभी उन कविताओं की खोज की जानी बाकि है या रामाज्ञा शशिधर की यह सम्भावना सही हो सकती है कि "कवियों की चेतना का उपनिवेशीकरण, आधुनिकता बोध का विभ्रम, राजभक्ति एवं देशभक्ति का द्वंद्व, प्रथम जनसंग्राम में लगभग एक करोड़ लोगों की शहादत, कठोर प्रेस अधिनियम"[1] इत्यादि के कारण हमें कविताओं में किसानी चेतना की कविताओं से वंचित होना पड़ता है। हिंदी भाषा में किसान साहित्य के साथ अच्छा सलूक नहीं हुआ और इसका परिणाम यह हुआ कि हिंदी में रचित किसान साहित्य पर कोई एक भी पुस्तक उपलब्ध नहीं है जो हमें किसान साहित्य पर छिटपुट जानकारी भी दे सकें। प्रेमचन्द का नाम लेकर हिंदी की मुख्यधारा केवल अपनी नाक पर बैठी साम्प्रदायिक और जातिवादी मक्खियाँ की भिनभिनाहट को अनसुनी कर सकती है। प्रेमचन्द साहित्य का समय काफी पुराना पड़ चुका है। हिंदी साहित्य के इतिहासों के मस्तकों पर उभरें आभिजात्य के घाव अभी भी हैं और हिंदी आलोचना धर्म से निकलकर लोक में विचरण करती हुई मार्क्स की खोपड़ी को वर्ग संघर्ष के कंघे से खुजलाकर फिर से धर्म में ही विलीन होती रही है। धान काटने के लिए तलवारों का प्रयोग नहीं किया जाता और न ही धान को रेगिस्तान में बोने से उसकी उपज दुगुनी हो जाती है।

19 वीं सदी के मध्य तक आते-आते खड़ी बोली हिंदी अपना साहित्यिक रूप लेने लग गई थी और अपने व्याकरणिक आधारों को सामने रखकर साहित्य सृजन करने लगी थी तथा क्षेत्रीय भाषाओं से कवियों का मोह भंग हो रहा था और वे खड़ी बोली हिंदी में भी काव्य और अन्य साहित्य रचने में रूचि लेने लगे थे, तब से ही आधुनिक

खड़ी बोली में किसान कविता की परम्परा का विकास समझना चाहिए। हिंदी साहित्य के (मुख्यधारा) शोध, इतिहास लेखन और आलोचकीय परम्परा अपने वैचारिक आग्रहों और सीमित ज्ञान उपार्जन मानसिकता के चलते हमेशा प्रश्नांकित रही है। हाशिये के समाजों ने जब साहित्य में पहचान का सवाल ढूँढना आरम्भ किया है तो हिंदी साहित्य की आलोचना पद्धति और इतिहास लेखन में भेदभावपूर्ण लेखकीय वैचारिकता और अभिजात्य संस्कारों की कई सीढ़ियाँ स्वर्ग का रास्ता नापती नजर आई। किसान कविता भी इसी मानसिकता का शिकार हुई है। सत्ता की मानसिकता हमेशा ही श्रम विरोधी रही है और हिंदी साहित्य की आलोचकीय चेतना के मूल में 'सत्ताई यथास्थितिवाद' इस कदर घुला हुआ है कि मार्क्सवादी आलोचना पद्धतियाँ भी, जिनकी मूल अवधारणा ही 'श्रम सिद्धांत' पर ही आधारित थी, पुराने 'ज्ञानतंत्रों' की ही हाँ में हाँ मिलाते दिखती है और उसी प्रक्रिया का साधन बनकर 'हाशिये' की आवाजों को भी कभी-कभी अतिवाद की संज्ञा दे देती है। ऐसा प्रतिक्रियावाद, हिंदी आलोचना में जो हर नई बात को या तो पुराने औजारों से परखेगा या फिर पश्चिम में बहुत पुरानी पड़ चुकी अवधारणाओं को ही नयेपन का पैमाना मान लेगा और उसे अंतिम विचार की तरह पेश करते रहेगा जबकि हिंदी साहित्य में ही ज्ञान उत्पादन का बहुत विस्तृत क्षेत्र खुला पड़ा है, किसान कविता पर कैसे बात कर सकता है जो अपनी वैचारिक प्रवृति में ही आभिजात्यवादी शोषण को सही ठहराने के लिए प्रत्येक घटना पर एक नई कहानी गढ़ लेता है। रामाज्ञा शशिधर का यह आरोप कही से भी गलत नजर नहीं आता कि "हिंदी आलोचना कितनी यथास्थितिवादी और प्रभुत्व समर्थक रही है इसका पता काव्य प्रवृतियों के नामकरण से ही चलता है। यहाँ व्यक्तियों के नाम पर भारतेंदुयुगीन कविता, द्विवेदी युगीन कविता है; युगीन चेतना के नाम पर मध्यकालीन, आधुनिक कालीन, छायावादी, प्रगतिवादी, नई कविता है; अकविता ही नहीं, भूखी नंगी जैसी किस्म-किस्म की कविता है; अस्मिता बोध के नाम पर स्त्री कविता, दलित कविता है; लेकिन जन प्रतिरोध की रचनात्मक अभिव्यक्ति को रूपाकार देने वाले, वर्गीय बोध के नाम पर 'किसान कविता' की कोई अवधारणा नहीं है। इस बिंदु पर मार्क्सवादी आलोचना भी जड़ीभूत सौंदर्याभिरूचि की शिकार है।"[2] हालाँकि वर्गीय बोध जैसी स्थिति का हिंदी क्षेत्र में कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है। खासकर किसान कविता के खेत में वर्गसंघर्ष का कुआँ खोद देने भर से आर्थिक समानता का पानी नहीं निकल सकता। भारत में किसानी के पहचान का सवाल मूल रूप से जातीय अस्मिता से जुड़ा हुआ है। यहाँ किसानी का पर्याय वर्ग नहीं, जाति है। इन जातियों की नीति निर्माण में शून्य भागीदारी है। उत्पादन में ये आत्मनिर्भर हैं तथा इनके पास तकनीक और शिक्षा की कोई कमी नहीं कमी नहीं है। फसल के मूल्य अपहरण का स्रोत सरकार है जिसके पास धर्म और न्याय-दंड जैसे शोषण के अनेक औजार हैं। किसानी की सभ्यतागत संरचना और व्यवस्थागत नीतियों के शोषण चक्र पर किया गया लेखन इसमें शामिल है। हिंदी मुख्यधारा की कविता का आरम्भ भारतेंदु हरिश्चन्द्र काल से माना गया। हिंदी साहित्य के इतिहास में भी उन्हीं कवियों को प्रथमिकता मिली जो भारतेंदु मंडल से जुड़े थे। भारतेंदु ने 'भारत दुर्दशा' नाटक में देश की बिगडती अर्थव्यवस्था की समीक्षा की है –

"मरी बुलाऊँ देश उजाड़ महँगा करके अन्न|
सबके ऊपर टिक्स लगाऊँ धन है तुझको धन||"[3]

भारतेंदु के यहाँ कामचलाऊ किसानी चेतना मिलती है। ऐसा लगता है कि चलते-चलते यह भी नजर आ गया क्योंकि किसान अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग है, उसके बिना बात ही नहीं की जा सकती। भारतेंदु मंडल के ही कवि प्रतापनारायण मिश्र ने 'ब्राह्मण' में 'बेगारी विलाप' नाम से खेतिहर मजदूरों पर कविता लिखी –

"बोझा धरत खैंचत लढा बीतत दिन चुहंयाम
मानुष है करनो परे हमे बैल को काम।"[4]

मिश्र जी की 'ब्रेडला स्वागत' कविता में आत्मनिर्भर ग्रामीण तन्त्र के नष्ट हो जाने से किसानों की दूभर हुई जिंदगी को बयान किया गया है। मिश्र जी की कविताओं में भूमि व्यवस्था मिल्कियत खत्म होने, सार्वजनिक तालाब व चारागाह नष्ट होने, पशुओं से होने वाली खेती की तकनीक पर पड़े साम्राज्यवाद के बुरे असर की चिंताएँ आई है। चौधरी बदरीनारायण उपाध्याय 'प्रेमघन' ने अपने 'जीर्ण जनपद' काव्य संग्रह में अंग्रेज राज आने के बाद बड़े सम्पन्न और अमीर लोगों की हालत बिगड़ने से उत्पन्न खीज को व्यक्त करते हैं। इनकी कविता में किसान जीवन का आधार कुलीनता के स्तर से नीचे गिरकर किसान बनने और किसानी के बाद के दयनीय हालतों का वर्णन आया है। अंग्रेजी साम्राज्यवाद में क्षत्रिय लोग अपने कर्म को छोड़कर खेती करने लग गए –

"रहे वीर योद्धा ते आज आज किसान बनी गये"[5]

पीड़ा केवल इतनी ही नहीं है। ब्राह्मणवादी वर्ण व्यवस्था के टूटने का भी इनको बेहद दुःख है। सब लोग कैसे समान स्तर के हो सकते हैं?

"भैड़ न कछु लखात बिप्र छत्री सूदन महं।
समहि वृति, सम वेष समहि, अधिकार सबन कहं।।
चारहूँ बरन खेतिहर बने खेत नहीं आंटत।
द्विज गन उपज्यों अन्न अधिक हरवाह बांटत।।"[6]

द्विज से किसान बन गए लेकिन अब स्थिति और भी बदतर हो गई है। कवि अपने पुराने ठसक के दिन नहीं भूल पा रहा। अब हरवाहे खुशामद करने पर भी मना कर देते हैं। स्वयं ही हल चलाना पड़ता है। शरीर में माँस भी नहीं बचा और सारा वैभव-विलास गरीबी पर आकर रुक गया –

"सैम लगान, व्यय अधिक, आय सदा कम लहत जे।
दीन हीन ताहीं सों नित प्रति बने जात ये।।
नहिं इनके तन रुध्र मास नहिं बसन समुज्ज्वल।
नहिं इनके नारिन तन भूषण हाय आजकल।।
रोगी दुर्बल नंग धड़ंगे, जिनके शिशु गन।
दीन दृश्य दिखराय हृदय पिघलावत पाहन।।"[7]

भारतेंदु काल के बाद भी जनपदीय भाषाओं में ही अधिकतर किसान कविताएँ मिलती है। "19 वीं सदी के उतरार्द्ध में किसान जीवन पर लिखी गई कविताओं का अधिकांश खड़ी बोली हिंदी में न होकर ब्रज में है। ब्रज और खड़ी बोली के संघर्ष में ब्रजभाषा किसान जीवन के यथार्थ को किसानी संवेदनशीलता और बौद्धिक दोनों स्तरों पर ज्यादा मार्मिकता से ग्रहण करती है।"[8] ब्रज भाषा में चंदा झा जैसे कवियों ने सामन्ती शोषण तंत्र के समर्थन में भी कविताएँ लिखी।नाथूराम शर्मा शंकर ने छिटपुट रूप में किसानी को आधार बनाकर अपनी कविताओं में कुछ बातें कही है। उनका कहना है कि प्रकृति भेदभाव नहीं करती। प्रकृति प्रदत्त कृषि योग्य भूमि का न्यायिक बँटवारा किया गया है। मेहनत और प्रयत्नों से सम्पूर्ण धरती हरी भरी है। दुनिया की सम्पूर्ण उर्जा और गतिविधियों के मूल में खेती है। जैसे एक बीज से अनेक बीज उत्पन्न होते है वैसे ही अन्न की उर्जा से समस्त जगत फूलता है। किसानों के शोषण और अन्याय को वे नैतिक शिक्षा से बदल देने के सुनहले स्वप्न देखते नजर आते हैं। कठोर मेहनत के बाद भी पूरा फल नहीं पाते क्योंकि सिर पर कर्जा सर्प की तरह मंडरा रहा है –

"कुछ दिन कमाए रहे हल्का हल्का फल पाए रहे
उनको कर भार भुजंग हुआ
बस भारत का रस भंग हुआ"[9]

शंकर जी के यहाँ किसानों को फसल का उचित मूल्य न मिलने की चिंता है। किसान को उसके श्रम का मूल्य नहीं मिल पा रहा जबकि उनके कार्य में कोई कमी नहीं है। क्या कारण है कि किसान बीज

डालता है, निराई गुड़ाई करता है फिर भी वह पेट पाल सकने जितना ही बचा पाता है –

"जल का कर बीज ब्याज, पोता बोता भूले न किसान भूमि जोता।।
ऊँचे खलिहाल डालते हैं, तो भी बस पेट पालते हैं।
खलिहानों पर दाय चलाना, फिर अनाज भूसा बरसाना।
पूरा तप करते हैं, तो भी उदर नहीं भरते हैं।"[10]

"बालमुकुन्द गुप्त की 'वर्षा', 'वसंत बंधु', 'मेघमनावनि', वसंतोत्सव', 'हे राम', 'राम विनय', 'पंजाब में लायल्टी' और 'सर सैय्यद का बुढ़ापा' जैसी कविताओं में किसानी की भयावहता का वर्णन मिलता है। सरस्वती पत्रिका में उस दौर में अनेक कविताएँ छपी जिनमें किसान दुर्दशा का वर्णन मिलता है – 'वर्तमान दुर्भिक्ष (महावीर प्रसाद द्विवेदी) अछूत (हीराडोम), जाड़ा और निर्धन (कैशव प्रसाद), कृषक कथा, भारतीय कृषक (मैथिलीशरण गुप्त) कविताएँ किसानी जीवन के विभिन्न पहलूओं को लेकर लिखी गई है ।"[11] मैथिलीशरण गुप्त के प्रसिद्ध काव्य भारत भारती काव्य में किसान दुर्दशा के विभिन्न पहुलओं पर चर्चा की गई है। "अनघ (गुप्त जी) में कवि ने लोकव्यवस्था के सम्बन्ध में उठी हुई आधुनिक भावनाओं और विचारों का अवस्थान-प्राचीन काल के भीतर ले जाकर किया है। उसमें वर्तमान भारतीय किसान आन्दोलन का रंग प्रधान है।"[12] गुप्त जी के साकेत महाकाव्य में भी उर्मिला के विरह के बहाने तथा अन्य प्रसंगों में श्रमजीवी जनता की चिंतना भी मिल जाती है। शुक्ल जी के अनुसार साकेत महाकाव्य में "किसानों और श्रमजीवियों से सहानुभूति झलकती है।"[13] "किसानी और उसकी दारुण दशा का चित्रण प्रेमचंद के समानांतर कविता में मैथिलीशरण गुप्त ने किया है, उसकी चर्चा हमारे आलोचक नहीं करते। 1917 में मैथिलीशरण गुप्त ने 'किसान' खंडकाव्य की रचना की। गोदान के होरी की तरह कल्लू भी जमींदार और महाजन दोनों की चक्की में पीस रहा है और भूमिहीन बनता जा रहा है। इस काव्य का नायक कल्लू भी भूमिहीन बनकर, कुली बन जाता है और मजबूरी में विदेश चला जाता है। गुप्त जी ने 1917 ई. में यह संकेत किया था कि इस व्यवस्था में किसानों का संकट बढ़ता ही जाएगा और वह गाँव छोडकर शहर की तरफ जाने को मजबूर होगा।"[14] गुप्त जी पर साम्प्रदायिक होने के आरोप हमेशा ही लगते रहे है जोकि काफी हद तक सही भी है लेकिन कुँवरपाल सिंह की यह बात कि 'हमारे आलोचक इसकी चर्चा क्यों नहीं करते' कुलीन हिंदी आलोचना द्वारा एक कवि में से केवल सवर्णवादी तत्व ढूँढकर उसी का प्रचार करते रहने जैसी राजनीति का संकेत करते रहने तथा हिंदी की अब तक की श्रमजीवी जनता के साहित्य के प्रति उपेक्षित मानसिकता को प्रमाणित करती है। दरअसल गुप्त जी के 'किसान' की चर्चा न करना सांस्कृतिक सवर्णवादी तत्वों की पैरवी से ज्यादा मेहनतकश जनता के सवालों को छुपाना है। प्रेमचंद के होरी से कल्लू की तुलना करना ठीक नहीं, यह एक जल्दबाजी पूर्ण एवं भावुकता में लिया गया निर्णय कहलाएगा। प्रेमचंद श्रमजीवी जनता की मानसिक दशाओं के साथ जीने वाले लेखक थे। उनका अधिकांश साहित्य ही किसान और मजदूरों को समर्पित था, जबकि गुप्त जी के यहाँ केवल एक कृति आई है। ऐसा लगता है कि तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों से ही 'किसान' प्रभावित है, जबकि प्रेमचन्द के साहित्य में किसानी चेतना की गहरी पकड़ और गम्भीर समझ के साथ ही बुनियादी बदलाव का चिन्तन भी समाहित है। गुप्त जी का 'किसान' सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की दहलीज पर सिर पटक कर स्तुति करने पर भी शोषण से नहीं बच पाता। ईश्वरीय नियात्तिवाद से आरम्भ होकर 'किसान' का अंत साम्राज्यवादी सेना में अपने ही भारतीय बंधुओं से लड़कर प्राण त्यागने में होता है। गुप्त जी का किसान 'राष्ट्रवादी' बनने के चक्कर में 'राजभक्त' बनकर रह गया। यहाँ गुप्त जी ने अपनी राजभक्ति छुपाई भी नहीं है। कल्लू जब फिजी से मुक्त होकर वापस लौट आता है तो ब्रिटिश राज्य के उपकारों का बदला चुकाना चाहता है-

"ब्रिटिश राज्य के उपकारों का बदला चलो, चूका दें आज,मरें न्याय के लिए समर में रक्खे मनुष्यता की लाज।"[15]प्रताप और झाला से तुलना करना काफी हास्यास्पद हो गई क्योंकि ब्रिटिश साम्राज्य बंदूक की नोक पर कल्लू जैसे राजभक्त पैदा कर रहा है, चूँकि कल्लू इसलिए सैनिक बनकर प्राण त्याग देना चाहता है क्योंकि बेगारी से मुक्त हो गया था –

"उसी देश में जन्में है हम हुए जहाँ झालापति मान
भारत का प्रताप रखने को जिन्होंने दिए रण में प्राण।
राजभक्ति सर्वत्र हमारी रही सदा से ही विख्यात,
उसे दिखने का शुभ अवसर यही मुझे होता है ज्ञात।"[16]

हालाँकि काव्य में तत्कालीन किसानी जीवन के बुनियादी सवालों को जोर-शोर से सामने रखा गया है। गरीबी की भयानकता/तीव्रता इस कदर है कि बारिश में सिर छुपाने को छत भी नहीं है –

"वर्षा का सलिल खुले सिर पर है झड़ता,
विकट शीत से अस्थिजाल आप अकड़ता।
है बैलों के साथ बैल भी बनना पड़ता,
जलता तो भी उदर, अहो! जीवन की जड़ता।"[17]

विवाह, प्रेम, वीरता, महामारी, जमींदार-महाजन शोषण इत्यादि विषय काव्य की मूल आत्मा है। भगवान की करुणा के भरोसे बैठा कल्लू विद्रोही चेतना से सम्पन्न है, जो बाप के नियतिवाद को झुठलाने की कोशिश तो करता है लेकिन गोदान के गोबर की भाँति विद्रोह कार्यरूप में परिणित नहीं हो पाता है। कभी पिता तो कभी स्त्री उसे फिर से नियति के जाल में फँसाएँ ही रखती है।पत्नी का कथन –

"अविश्वास क्यों, बड़े लोग होंगे क्या बेईमान ?"
मैंने कहा कि-"वे क्यों, हम हैं, साक्षी है भगवान।"
पर यह मेरी गुस्ताखी थी मिली डांट भरपूर,
कुशल यही थी कि मैं बैठा था पिता से कुछ दूर।"[18]

पिता का कथन –

"बड़े कष्ट से फिर वह बोली –"नादानी रहने दो,
मेरा ही शोणित नृशंस के आस-पास बहने दो।
डूब जाएगा वह उसमें ही, तैर न पावेगा,
सती गर्भिणी अबला का वध वृथा नहीं जाएगा।"[19]

द्विवेदी युगीन कवि लोचन प्रसाद पांडे जैसे कवियों की यह आदर्शवादी कविताएँ भी उस समय लिखी जा रही थी –

"भोले भाले कृषक देश के अद्भुत बल हैं,
राजमुकुट के रत्न कृषक के श्रम के फल हैं
कृषक देश के प्राण कृषक खेती की कल हैं,
राजदंड से अधिक मान के भाजन के हल हैं।"[20]

सोहनलाल द्विवेदी की 'हलधर से' कविता राजनीतिक चेतना की कविता है जो किसानों को शोषण के खिलाफ उठने की प्रेरणा देती है। 'तुम्हें क्या ज्ञात नहीं तुम्हारे बल से चलते हैं सिंहासन' जैसी पंक्तियाँ तत्कालीन राजनीतिक स्वतंत्रता की चेतना का प्रतिनिधित्व करती है। जिसमें किसान, मजदूर और अन्य सभी से राजनीतिक स्वतंत्रता की लड़ाई के लिए ही बलिदान माँगा जा रहा था। हल को इस चेतना का प्रतिनिधि अस्त्र सोहनलाल द्विवेदी ने बताया।

निष्कर्षत: दोनों युग जिनको हिंदी साहित्य के इतिहास में पुनर्जागरण और जागरण सुधार काल कहा जाता है, में किसान कविता किसी भी अन्य प्रवृति की कविताओं की तुलना में कम नहीं थी लेकिन हिंदी आलोचना की साम्प्रदायिक दृष्टि के कारण उस पर समुचित विचार नहीं हो सका। राष्ट्रवाद इस समय की किसान कविता का मूल स्वर नहीं था लेकिन किसान कविताओं में किसान गुप्त जी जैसे रचनाकारों ने किसान समस्याओं को राष्ट्र चिंतना में शामिल करने के लिए खंड काव्य की रचना की| सरस्वती पत्रिका में हीराडोम की कविता अछूत

की शिकायत किसान परिवेश की समझ से उपजी रचना ही है| किसान रचनाकर अपने परिवेश से जुड़े किसानी मुद्दों को प्राथमिकता देता हुआ नजर आता है क्योंकि उस समय हिंदी कविता का क्षेत्र इतना व्यापक नहीं था| लोक से जुड़ाव इस दौर की किसान कविता की आत्मा है|

****

संदर्भ सूची :-

1. रामाज्ञा शशिधर, किसान आन्दोलन की साहित्यिक जमीन, अंतिका प्रकाशन गाजियाबाद, 2012, पृ. 56
2. वही, पृ. 48
3. भारतेंदु हरिश्चन्द्र, भारत दुर्दशा, पृ. 9
4. रामाज्ञा शशिधर, किसान आन्दोलन की साहित्यिक जमीन, अंतिका प्रकाशन गाजियाबाद, 2012, पृ.59
5. बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', प्रेमघन सर्वस्व, हिंदी साहित्य सम्मलेन प्रयाग,1939, पृ. 47
6. वही, पृ.47
7. वही, पृ.48
8. रामाज्ञा शशिधर, किसान आन्दोलन की साहित्यिक जमीन, अंतिका प्रकाशन गाजियाबाद, पृ.-60
9. नाथूराम शर्मा 'शंकर' शंकर सर्वस्व, संपादक-हरिशंकर शर्मा, गयाप्रसाद एंड संस आगरा, 1951,पृ. 90
10. वही, पृ. 90
11. रामाज्ञा शशिधर, किसान आन्दोलन की साहित्यिक जमीन, अंतिका प्रकाशन गाजियाबाद, 2012 पृ. 64
12. रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, मलिक एंड कंपनी, जयपुर, संस्करण 2018, पृ. 433
13. रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, मलिक एंड कंपनी, जयपुर, संस्करण 2018, पृ. 432
14. कुँवरपाल, हिंदी कविता के सौ बरस, स.- लीलाधर मंडलोई, मेधा पब्लिशिंग हाउस, 2013, पृ. 61
15. किसान, गुप्त रचनावली, पृष्ठ 103
16. वही, पृष्ठ 103
17. वही, पृष्ठ, 69
18. वही, पृष्ठ 79
19. वही, पृष्ठ 97
20. हिंदी साहित्य में किसान : सपने संघर्ष और चुनौतियाँ 21 वीं सदी, स. डॉ राम किंकर पांडे, अनंग प्रकाशन, दिल्ली, 102

मनोविज्ञान तथा अस्तित्ववादी चिन्तन की सशक्त अभिव्यक्ति: शेखर एक जीवनी'

डॉ.सुनील
अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय,
अमृतसर (पंजाब)

डॉ.सुरजीत कौर
अध्यक्ष हिन्दी-विभाग
ख़ालसा कॉलेज, अमृतसर

पूर्ववर्ती उपन्यास परम्परा को सूक्ष्मतर अभिव्यक्तियों की ओर उन्मुख करने वाले उपन्यासकारों में अज्ञेय प्रमुख हैं। हिन्दी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का आरम्भ अज्ञेय के 'शेखर एक जीवनी' से ही होता है। मनुष्य का समुचित व्यवहार उसकी मानसिक शक्ति पर निर्भर करता है। मनोविश्लेषणवाद इसी मानसिक शक्ति के उद्गम और वितरण का अध्ययन करता है। मनोविज्ञान का जन्म ही मानसिक विकारों की चिकित्सा करते समय प्राप्त ज्ञान से हुआ है। डाक्टर गिरिधर प्रसाद शर्मा के अनुसार, ''मनोविश्लेषणवाद एक विशेष युक्ति है जिसके द्वारा अज्ञात मन के अन्दर स्थित द्वन्द्व एवं भावना ग्रन्थियों की जानकारी प्राप्त की जाती है।'' यह एक मानसिक उपचार विधि है। अपनी इन्हीं धारणाओं एवं मान्यताओं के कारण इसे एक स्वतन्त्र विज्ञान माना जाता है।

मैक्डूगल के अनुसार, ''मनोविज्ञान मन सम्बन्धी विशिष्ट ज्ञान का प्रस्तोता है।'' मनोविश्लेषणवादियों के प्राणी के चेतन, अचेतन दोनों प्रकार की अनुभूतियों का अध्ययन किया है। मानव मन की एक-एक परत का वैज्ञानिक अध्ययन करने वाले मनोविश्लेषकों में मुख्यतः फ्रायड, एडगर, युंग, मैक्डूगल आदि के सिद्वान्तों ने हिन्दी उपन्यासों को प्रभावित किया। अज्ञेय के 'शेखर एक जीवनी' में चित्रित मनोविज्ञान का अध्ययन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत कर सकते हैं-अहम् भावना- अहम् का भाव मनोवैज्ञानिकों के अनुसार किशोरावस्था से पहले अधिक होता है। उपन्यास का नायक शेखर जब अपनी इच्छा के विरुद्ध डाकिये द्वारा लैटर बाक्स से उतरने को मज़बूर किया जाता है तो उसका अहम् आहत होता है। डाकिये को बूट मारकर वह इस अहम् की पुष्टि करता है। शेखर द्वारा दो बार स्कूल छोड़ने में भी यही अहम् भाव दिखाई देता है। मुर्गा बना शेखर गिरने का ढोंग करके मास्टर को चोट करता है। मानो अपने अपमान का बदला लेता है। अंग्रेजों, अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी वस्तुओं के प्रति घृणा में भी उसका अहम् प्रमुख है। उसमें अहम् वृत्ति इतनी अधिक है कि वह घर भी नहीं बसा पाता। पिता के समझाने पर फूट पड़ता है, ''इसमें समझाने की क्या बात है। ऐसा कौन है जो सिक्योर होना नहीं चाहता।''

भय की वृत्ति - जन्म से ही मनुष्य में भय की मूलवृत्ति विद्यमान रहती है। बालक शेखर में भी अज्ञेय ने यही वृत्ति दिखाई है। एक बार शेखर अज़ायब घर गया वह अकेला अज़ायब घर में घूम रहा था कि एकाएक उसे लगा कि उसके सामने एक भीमकाय बाघ प्रकट हो गया है, वह उसके भंयकर दाँत, जीभ, आरक्त आँखें देखकर भय से विकल हो उठता है। उसे नहीं मालूम कि उस चर्म के अन्दर फूस भरा हुआ है। दिनों तक शेखर को रात में भंयकर सपने आते हैं। यह भय उसके मन से तभी निकलता है जब वह ऐसे ही एक बाघ को अपने घर में देख लेता है। निर्जीव पाकर उस पर झपट पड़ता है और घासफूस को बाहर निकाल फेंकता है।

इडिपस कम्पलैक्स (मातृ-रति) - प्राय बालक अपनी माँ के प्रति आकृष्ट होते हैं। माँ को ही वे रति केन्द्र के रूप में देखते हैं, किन्तु शेखर माँ के प्रति आकृष्ट नहीं हैं। मनोविज्ञान यह भी मानता है कि यह आवश्यक नहीं कि बालक अपनी माँ के प्रति ही आकृष्ट हों। माँ के स्थान पर कोई बहन भी हो सकती है। शेखर के परिवार में अनेक भाइयों के बीच बहन के प्रेम को पाने को लेकर होड़ लगी रहती है। बालक शेखर का बड़ी बहन सरस्वती के प्रति अति प्रेम और लगाव है।

माँ उस पर अविश्वास करती है इसीलिए वह उसके लिए अवांछित, अप्रिय और कठोर है। सरस्वती के प्रति शेखर के लगाव का चित्रण उपन्यास के प्रथम भाग में मिलता है। पिता उसकी हंसी उड़ाते हैं, भाई उसे 'बहनजी की दुम' कहकर चिढ़ाते हैं किन्तु सरस्वती कभी कोई विरोध नहीं करती। इसीलिए यह लगाव बढ़ता जाता है। सरस्वती उसकी जिज्ञासाओं को भी शांत करती है। सरस्वती की शादी की सूचना पर ही शेखर उमड़ पड़ता है, उसका मन अशान्त हो जाता है। बहन की शादी के समय उसको 103 बुखार है। किन्तु उसके दिमाग में एक ही पंक्ति गूंजती है। शादी के बाद रमा अपने घर चली गई और सरस्वती भी चली जाएगी। कहता है, ''मेरी बहन की शादी है और मैं नहीं देखूँगा।'' शादी की रात ही शेखर को निमोनिया हो जाता है।उपन्यास के दूसरे भाग में इंडिपस ग्रन्थि शशि के संदर्भ में चित्रित है। शेखर अब वयः संन्धि की अन्तः प्रेरणाओं से मुक्त है। जब उसके जीवन में सरस्वती अथवा मां जैसी कोई नारी नहीं होती तभी शशि का आगमन होता है। शशि की शान्त चित्रता, दृढ़ता और सहजता में निहित गइराई को शेखर आदर के साथ देखता है। उसकी शादी के अवसर पर कुछ न कर सकने के कारण ग्लानि का अनुभव करता है। ज़ेल से रिहा होकर बाहर आते समय उसे एक ही जगह नज़र आती है और वह है शशि का घर। शेखर के सपने अन्त में शशि में आकर ही घुल मिल जाते हैं। माँ की मृत्यु के पश्चात् पिता शेखर के पास आते हैं तो शशि से कहते है, ''तुम क्यों नहीं समझाती इसे? सुना है तुम्हारी बहुत मानता है। शशि पूछती हैं-किससे सुना?'' और वह उत्तर देते हैं कि किसी से सुना है। क्यों बात ठीक नहीं है अर्थात् सभी मानते हैं कि शेखर के जीवन पर शशि का ही प्रभाव है। इस मातृ-रति को शब्द देता हुआ एक स्थल पर शेखर कहता है, ''शशि मैं निरन्तर संघर्ष करता आया हूँ, तुमसे भी लड़ता आया हूँ पर अब स्वीकार करता हूँ कि मैंने तुमसे प्यार किया।''

समलैंगिकता की सोडम प्रवृत्ति -उपन्यास में दो एक प्रसंग समलैंगिकता के भी मिलते हैं। एक दिन टहलते-टहलते दोनों समुंद्र तट पर पहुँच जाते हैं। दोनों चुप है। शेखर धीरे-धीरे कुमार के लम्बे बालों में उंगलियां फेरकर उन्हें उलझाने लगता है और कुमार से कहता है, ''कुमार यदि मेरे अतिरिक्त तुम किसी और के हुए तो मैं तुम्हारा गला घोंट दूंगा।'' कुमार द्वारा इसका प्रतिवाद न होने पर वह (शेखर) उसका चुम्बन भी ले लेता है।कॉलेज के दिनों में वेश्याओं के मुहल्ले में घूमता शेखर दो छोटे-छोटे अधनंगे लड़कों को वीभत्स मुद्रा में सटकर बैठे परस्पर गले में बाहें डाले, एक-दूसरे को चूमते देखता है जो प्रत्येक चेष्टा के बाद सामने की खिड़की को देखकर एक अर्थ भरी हंसी हंसते थे।

आत्मपीड़न अथवा स्वआक्रमण प्रेरणा वेग की प्रवृत्ति - इसमें व्यक्ति अपने आपको दंडित कर मानो दूसरों से प्रतिशोध लेता है। यह प्रवृत्ति अचेतन अवस्था में काम करती है। आत्महत्या इसकी पराकाष्ठा है। इसके मूल में पराजय भाव है। प्रेम या मित्रता में दूसरों से पराजित होकर मनुष्य विवश या स्वयं को पीड़ित कर प्रतिशोध लेता है। जेल में शेखर कई बार इतना व्याकुल हो उठता है कि दांत मींचकर, मुट्ठी बांधकर फर्श पर, दीवार पर, जंगले पर दे मारता है। एक बार, दो बार, तीन बार, जब तक कि खून न फूट जाये। मां के अविश्वास करने पर वह आत्महत्या करने के बारे सोचने लगता है। सरस्वती की शादी पर वह बीमार हो जाता है और उसके जाने की बात सोच-सोच कर उसे निमोनिया हो जाता है।मोहम्मद मोहसिन का जानबूझकर जेल अधिकारियों के नियम न मानकर यातना सहना आत्मपीड़न ही है। बाबा मदनसिंह अहिंसा को परिभाषित करते कहते हैं, ''सच्ची अहिंसा आत्मपीड़न है जो आखिरकार एक प्रकार की हिंसा ही है।''बाल-मनोविज्ञान एवं यौनाकांक्षाएं- सिगमन फ्रायड बच्चे के जन्म सम्बन्धी जिज्ञासा को यौन अकांक्षा से जोड़ते हैं। डाक्टर नंद कुमार राय लिखते हैं, ''मनोविज्ञान का यह परीक्षित सत्य है कि मनुष्य विशेषकर बच्चे निषिद्ध तथा वर्जनाओं के प्रति अधिकाधिक मात्रा में प्रावृत्त एवं जिज्ञासु होते हैं। जिस मात्रा में वर्जनाएं होती हैं उसी अनुपात में बच्चे के मन में रहस्य की गहराई में प्रविष्ट होने की तीव्र उत्कण्ठा लालसा बलवती होती है।''शेखर में भी यह जिज्ञासा है। एक दिन वह देखता है कि उसकी मां के पास एक बच्चा है। यह उत्तर कि बच्चा ईश्वर, डॉक्टर या नर्स ने दिया है, उसे सही नहीं लगता। सरस्वती का उत्तर उसे ठीक लगता है कि बच्चा माँ के शरीर से आता है क्योंकि यह कहते ही वह लज्जा गई थी। शेखर सोचता है, ''सरस्वती ने झूठ नहीं कहा था, नहीं तो वह इतनी लज्जित न होती। अलमारी में छिपा कर रखी गई किताबों को वह पढ़ता है उसके सारे उत्तरहीन प्रश्न दुगुने दबाव से, दुगुनी शक्ति से उसे सताते हैं, कुछ के उत्तर उसे नौकरों, चपड़ासियों या चुराकर पढ़ी गई किताबों से मिलते हैं। माँ-बाप के बीच झगड़े के बाद का खिचाव, लगाव और प्रेम का भाव शेखर के कौतूहल को बढ़ा देता है। सरस्वती के अठमासे बच्चे होने की बात उसे परेशान करती है।

किशोरमन और दमित यौन आकांक्षाए - अपने मन में होने वाले परिवर्तनों से शेखर परिचित है। जैसे भूमि के नीचे ही नीचे अंकुर फूटने से पहले कोई बीज करता होगा वैसा ही वह अनुभव करता है। किशोर शेखर का परिचय जब शारदा से होता है तो यह उसकी वयसन्धि का काल है। यौन अतृप्ति इसी समय अधिकाधिक बलवति होती है। शेखर का मन भी अशान्त है, वह निराश है। शारदा के मिलते ही उसने देखा कि स्त्री में एक आकर्षण है। उसमें सौन्दर्य छिपा हुआ है। शेखर के हृदय की भावनाएं संसार के विस्तार से सिमटकर एक छोटे से बिम्ब में केन्द्रित हो जाती हैं। वह बिम्ब है शारदा के रिबन से बंधे हुए केशों का एक गुच्छा जो उसके कंधे से फिसलकर उसके कान के नीचे छिपने का प्रयत्न कर रहा है। अनुभव की भी अनेक परतें उभरती हैं। जब शारदा वीणा बजाना समाप्त कर लेती है तो एक क्षण दोनों आपस में देखते हैं। शेखर सोचता है कि इसमें डरने की क्या बात है। सभी के सामने एक लड़की से आंखे मिलाने से उसे अपने पर अभिमान होता है। शारदा के सुरभित केशों के बार-बार संकेत के पीछे शेखर की मिलन आतुरता अधिक स्पष्ट होती है। शारदा जब यूकिलप्टिस कुंज के दूसरे सिरे पर प्रवेश करती है तो शेखर के शरीर में बिजली सी दौड़ जाती है। शारदा का आलिंगन उसे अनियंत्रित कर देता है।

अवचेतन मन- मनोविश्लेषणवादी फ्रायड ने मन की तीन अवस्थाएँ मानी हैं - अचेतन, अवचेतन, चेतन। सुविधा और सरलता के लिए फ्रायड ने अचेतन की तुलना एक बड़े पूर्व कक्ष से की है जिसमें अनेक मस्तिष्क उत्तेजनाएँ रहती है। शेखर जब तब अवसर मिलते ही नौकरानी अती के पास पहुँचता है तथा अपनी उपस्थिति सूचित करता है लेकिन अती जानकर भी अनजान बनने का प्रयास करती हुई अपने काम में जुटने का बहाना करती है। एक दिन अती शेखर के कमरे में झाड़ू दे रही थी शेखर बाहर से आया अती के वस्त्र कुछ अस्त-व्यस्त थे शेखर देखता खड़ा रहा। उसने निश्चय किया कि अती को छूकर गुदगुदी पैदा करे पर अती बेख़बर नहीं थी वह हंसती जाती थी। अती के हंसने पर शेखर को चोट पहुंची उसका अहम् आहत हो गया। चेतन मन इस प्रकार के व्यवहार के लिए पूर्णतया तैयार नहीं था। जबकि उसका अचेतन पूर्णतया अती के शरीर को अपनाने के लिए आतुर हो रहा था। शेखर के अचेतन मन में शारदा के शरीर की सुगन्ध से लेकर वेश्याओं के अर्थ भरे कटाक्ष तक विद्यमान हैं। गन्दी किताबों के यौन वर्णन से लेकर अर्द्धनग्न युवतियों के चित्र भरे हैं इसीलिए वह अनियंत्रित होता है। अती की स्वीकार्य भावना से उसका चेतन मन आहत होता है और वह उसे नियंत्रित करता है।

उदात्तीकरण- शेखर का चेतन मन उदात्तीकरण की ओर ध्यानमग्न है। मन का यह पक्ष दमित भावों को उदात्त करता है। शान्ति से उसका परिचय होता है और उसकी बिगड़ती हालत तथा निश्चित मृत्यु की खबर पाकर शेखर का मन द्रवित होता है। यह उसके प्रेमभाव का एक

उदात्त पक्ष है। वह उसे छूने का आग्रह करता है और जब वह अनुमति देती है तो उसका स्पर्श करता है। शान्ति के प्रति उसकी प्रेमभिव्यक्ति भावना उसके मन की उदात्त अभिव्यक्ति है। वस्तुतः शेखर का मन शारदा के प्रति आकर्षित हुआ था। अती के प्रति उसके विकर्षण की प्रतिक्रिया अती अपने ढंग से व्यक्त करती है। वह बन्द किवाड़ खोलकर आती है और कहती है, तुम्हारी वह शान्ति मर गई।स्वप्न - फ्रायड के अनुसार 'स्वप्न हमारी दमित वासनाओं की पूर्ति के अतिरिक्त कुछ नहीं है। इनकी दो विशेषताएँ है - इच्छापूर्ति तथा मतिभ्रामात्मक अनुभव। एडगर के द्वारा व्यक्त मनोविज्ञान के अनुसार, ''स्वप्न अचेतन में श्रेष्ठता प्राप्त करने का साधन है।'' युंग ने स्वप्न को वर्तमान समस्याओं का द्योतक माना है। एडगर इसे भविष्य की ओर संकेत करने वाला और फ्रायड अतीत की समस्याओं से संबंधित मानते हैं। ऊल-जलूल और व्यर्थ जान पड़ने वाले स्वप्न भी सार्थक होते हैं। शेखर एक जीवनी में हमें शेखर के अनेक स्वप्न मिलते हैं। आज़ायब घर में बाघ देखने के पश्चात् शेखर को भयंकर स्वप्न दिखने लगते हैं। शान्ति के पास आने के पश्चात् वह रात को शारदा की कराहट सपने में सुनता है- ''तुम मुझे भूल गये नहीं तो मैं मरती।'' शेखर के चेतन और अचेतन मन का संघर्ष इस प्रकरण में संकेतिक है।शेखर का भाई से झगड़ा होता है। उसे सभी से डांट पड़ती है। सरस्वती का स्पर्श पाकर उसके मन का तनाव कुछ कम होता है। उस रात शेखर ने सपना देखा वह इस प्रकार है कि वह दोपहर की चिलचिलाती धूप में ऊंट पर स्वार होकर मरुस्थल में भागा जा रहा है। कोई उसका पीछा कर रहा हैं धूप तीखी होती जाती है। शेखर ऊंट को भगाता जाता है। एकाएक सामने सेब के वृक्षों का बाग दिखाई देता है जिसके चारों ओर मिट्टी की ऊँची बाड़ है। आयरिस के पौधे हैं। शेखर ऊँट से उतरकर बाड़ पार करके बाग में घुस जाता है। वृक्ष फूलों से लदे हैं, सारी धरती फूलों से भरी है, शेखर थकी सांस लेकर एक पेड़ के नीचे फूलों की छईया पर लेटता है और सो जाता है। वह बाग भी घेर लिया जाता है। शेखर भागता हुआ एक चट्टान के ऊपर पहुँचता है। नीचे पानी का प्रवाह है वहां सरस्वती भी खड़ी है और देखते-देखते एक दिव्य शक्ति उस पर छा जाती है और वह जानता है कि यही है जिसे वह खोजने आया है, जिसके लिये वह भाग रहा था। उसे लगता है कि उसने सरस्वती का हाथ पकड़ा है और वह इतना सजीव हो उठता है। इस स्वप्न में अनेक प्रतीक हैं, मरुस्थल, सेबों के वृक्षों का बाग, चट्टान, पानी का प्रवाह, फूल, दिव्य शक्ति। माँ की अनुदारता और आतंक शेखर को मरुस्थल में छोड़ देते हैं और सरस्वती फूलों की छईया तथा पानी के झरने के प्रतीक रूप में यहाँ दिखाई देती है।

दिवा स्वप्न - दिवास्वप्न कल्पना से उत्पन्न होते हैं। यह दो कारणों से स्वप्न से भिन्न होते हैं। एक तो नींद से इनका कोई सम्बन्ध नहीं रहता। दूसरा इनमें अनुभव या मतिभ्रम भी नहीं होता। अर्द्धसुप्त अवस्था में शेखर के एक सपने का उल्लेख अज्ञेय ने किया है। पटना शहर में गंगा के किनारे शेखर के पिता ने नया मकान लिया। शेखर ने केले के तीन स्तम्भों को बांधकर एक नाव बनाई। गंगा में उसे लेजाकर उस पर सीधा लेटकर हाथ से उसे धार में ले लिया और आकाश की ओर देखने लगा। बादलों के छोटे-छोटे टुकड़े इधर-उधर भाग रहे थे जो धीरे-धीरे लुप्त हो गये थे। शेखर की कल्पना जागृत हो गई उसे लगा आज वह तीन कटे हुए वृक्षों का सहारा लेकर उस सुन्दर देश में जा रहा है जहाँ गंगा जाती है, जहां वह सागर में मिल जाती है। जहां एक राजकन्या रहती है। शेखर उसके पास जायेगा और कहेगा मैं शेखर हूँ, बंधनों के देश से आया हूँ और वह उसे अपने पास बिठा लेगी और कहेगी यहां तुम अबाध हो उस सिरस के फूलों के महल में रहोगे और जो चाहोगे वही करोगे। जब शेखर को यथार्थ -बोध होता है वह सूखी भूमि पर पहुंचता है और काफी थक चुका है। इस स्वप्न की प्रतीकात्मकता यह है कि शेखर बंधनों से मुक्ति चाहता है। वह मृत्यु की कामना भी करता है इसीलिए उसके स्वप्न में राजकन्या, फूलों का महल और राजकन्या के स्नेह भरे शब्द हैं।

आत्मरति - शेखर अपने सम्पर्क में आने वाले समस्त पुरुषों से सम्मान की आकांक्षा करता है और स्त्रियों से प्रणय और प्यार चाहता है। वह केवल आदान चाहता है प्रदान नहीं। कहता है, ''मुझे मूर्ति उतनी नहीं चाहिये। मुझे मूर्ति पूजक चाहिये। मुझे कोई उतना नहीं चाहिय जिसकी ओर मैं देखूँ मुझे वह चाहिये जो मेरी ओर देखे।''मुक्त आसंग - मुक्त आसंग पद्धति में मनः रोगी पात्र डायरी इत्यादि में अपने मन की बात लिखकर तनाव से मुक्त हो जाता है। उपन्यास के आरम्भ में ही शेखर की मां उसके पिता से कहती है, ''मैं तो इसका भी विश्वास नहीं करती और शेखर अपनी डायरी नुमा कापी में लिखता है'' अविश्वसनीय होने से कुत्ता, सूअर, चूहा, दुर्गन्धित कृमिकीट होना अच्छा है। वह दीवार से अंग्रेजी में बोलता है, ''I hate her-I hate her '' और एक प्रतिज्ञा लेता है, ''माँ का कोई काम नहीं करूंगा, कोई काम नहीं करूंगा जिसमें उसे बाध्य होकर मेरा रत्ती भर विश्वास करना पड़े। उससे बोलूंगा भी नहीं। कभी कोई पूछेगा तो कहदूंगा कि यह मेरी माँ नही है।''

अन्तर्मुखी व्यक्ति - ऐसे व्यक्ति की कल्पना अधिक जागृत रहती है, सामाजिकता की उसमें कभी होती है। उसे अपने को अभिशप्त करने में कठिनाई होती है। अन्तर्मुखी दर्शक रहस्यवादी होता है। लोगों की बातों से अधिक अनके आंतरिक अर्थों पर उसका ध्यान रहता है। इसीलिये वह लोगों को अविश्वसनीय तथा धोखेबाज की तरह दिखाई देता है। इसी तरह शेखर न अपने माता-पिता का विश्वास जीत सकता है और न ही सम्पर्क में आने वाले लोगों का।

अस्तित्व शब्द हिन्दी में अंग्रेजी 'Existense' का पर्याय माना है। 'जीवित रहने की वह पद्धति जो अन्य वस्तुओं के साथ समायोजन में निहित हो।' अस्तित्ववादी विचारधारा में एक सूत्र दिया- Existence Proceeds Essence अर्थात् पहले भौतिक जीवन फिर आध्यात्मिक जीवन। यह मानवतावादी दर्शन मनुष्य की त्रासद स्थिति से सम्बद्ध है। योगेन्द्र शाही के अनुसार, ''अस्तित्ववाद को संकट का दर्शन कहा गया है। उसका सीधा सम्बन्ध मनुष्य की त्रासद स्थिति से है। संकट की विषम स्थिति में जीवन तत्व का महत्त्व बढ़ जाता है।'' अस्तित्ववाद की परम्परा किर्केगार्द, दोस्तोवस्वी, नीत्शे, काफका, जैस्पर्स, हैडगर से होती हुई मार्सल, सात्र्र, कामू तक आती है। किर्केगार्द को अस्तित्ववाद का जनक और नीत्शे को अस्तित्ववाद का शिक्षक माना गया है। साहित्य में अस्तित्ववाद को लागू करने का श्रेय ज्यां पाल सात्र्र को है।

ईश्वरीय अनास्था- अनास्थवादी अस्तित्ववादियों में नीत्शे, काफ्का, सात्र्र कामू आदि आते हैं। इन्होंने ईश्वर की मृत्यु की घोषणा करके पूर्ण स्वतन्त्र उतरदायी कर्मठ, संघर्षशील एवं आत्मनिर्माता मनुष्य की प्रतिष्ठा की है। सात्र्र के अनुसार, ''ईश्वर मर चुका है और उसके स्थान पर अभी कोई दूसरा आसीन नहीं हुआ और न ही इसकी संभावना है। नये ईश्वर का आविर्भाव हमारे प्रयत्न के बाहर है और किसी पुराने ईश्वर की ओर जाना अतीत में जीने का व्यर्थ और निरर्थक प्रयास है। हमारे लिये यदि ईश्वर हो भी, तो भी यह तय करने की जरूरत है कि हम स्वयं अपने उद्धारक हैं।''

शेखर बाल्य-अवस्था में ही देखता है कि उसकी उपेक्षा की जा रही है। इससे उसके अहम् भाव को ठेस पहुंचती है और ईश्वर सम्बन्धी अनेकानेक विरोधाभासों के कारण शेखर ईश्वर के प्रति आस्था नहीं रख सकता। मंदिर में सांप के काटने से एक व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है और शेखर सोचता है उस समय ईश्वर कहां था। पूरे परिवार के मंदिर जाने पर वह मंदिर के अन्दर नहीं जाता। प्रार्थना नहीं करता। पिता के डांटने पर कहता है, ''मैं ईश्वर को नहीं मानता, मैं प्रार्थना भी नहीं मानता। भवानी झूठी है, ईश्वर झूठ है, ईश्वर नहीं है।'' जर्मन और अंग्रेजों की लड़ाई में असंख्य वीर वीरगति को प्राप्त होते हैं। बालक शेखर के मन में जिज्ञासा होती है कि मरते कैसे हैं। प्राण कहां चले जाते हैं। बालिका सरस्वती

उसे बताती है कि ईश्वर ही सब को मारता है और मरने के बाद सभी के प्राण उसी के पास चले जाते हैं। अंग्रेजों के भी और जर्मनों के भी। मंहगाई भी ईश्वर ही करता है। नव-शिशु का जन्म भी ईश्वर की मर्जी का परिणाम है। 'प्रवेश' में शेखर सोचता है, ''मानव के लिए झूठ, छल और मक्कारी अत्यन्त सहज हैं क्योंकि ईश्वर ने मानव को अपनी प्रति-रूप बनाया है। ईश्वर हमारे ज्ञान से सबसे बड़ा झूठा छलिया और मक्कार है।'

विद्रोह: अस्तित्ववादी दर्शन के अन्तर्गत व्यक्ति के व्यक्तित्व को ही सर्वोपरि माना जाता है। 'शेखर एक जीवनी' का शेखर भी अपने व्यक्तित्व की रक्षा के लिए विद्रोही बन जाता है। अस्तित्ववादी कामू ने विद्रोह का समर्थन किया है। क्रान्ति और विद्रोह को अलगाते हुए कामू कहते हैं कि क्रान्ति एक पूर्व निश्चित दर्शन को लेकर चलती है और अपनी सफलता के पश्चात् उन्हीं पूर्व निर्धारित मूल्यों के आधार पर अग्रसर होती है। विद्रोह में व्यक्ति और समुदाय को संतुलित जगह मिल जाती है। इस प्रकार कामू क्रान्ति को ही विद्रोह कहता है। शेखर का अंग्रेजी को छोड़कर हिन्दी बोलना, बिस्कुट, डबल-रोटी लेकर घर से निकल जाना, मिस प्रतिभा के घर में अंग्रेजी खान-पान से विद्रोह करते आईसक्रीम खाना, चोट लगने पर अपना प्रिय वृक्ष तोड़-फोड़ देना, जाति का प्रश्न उठने पर अछूतों के होस्टल में चले जाना उसके जन्म जात विद्रोही रूप को दिखाते हैं। किन्तु उसके विद्रोह को रास्ता शशि दिखाती है। कहता है, ''शशि शक्ति मेरे पास है पर मैंने उसे जाना नहीं। आजीवन मैं विद्रोही रहा हूँ पर मैं अपनी विद्रोही शक्ति को व्यर्थ बिखेरता रहा हूँ। एक दिन तुमने यह दिखाया-बताया कि लड़ना स्वयं साध्य नहीं है। लड़ने के लिये लड़ना निष्प्राण है कि विद्रोह किसी के विरुद्ध होना चाहिए।'' शेखर सामाजिक धरातल पर छुआ-छूत के प्रति, नैतिक धरातल पर विवाह-संस्था के प्रति, धार्मिक धरातल पर ईश्वर के अस्तित्व के प्रति, आर्थिक धरातल पर अंग्रेजी राज्य के प्रति विद्रोह करता है। अज्ञेय उसके विद्रोह को मनोवैज्ञानिक पृष्ठ भूमि देते कहते हैं-''मुझे विश्वास है कि विद्रोही बनते नहीं, उत्पन्न होते हैं।'' शशि का भाषण भी विद्रोही भाव लिये हुए है- ''गृहस्थ धर्म उभय मुखी होता है। किन्तु आज के जीवन में पुरुष की ओर ध्येय कुछ भी नहीं है। यह आदर्श नहीं आदर्शों की समाधि है। देह नहीं सदियों से सूखी त्वचा में निर्जीव हड्डियों का ढांचा।''

शून्यताबोध - शून्यता के दर्शन को अस्तित्ववादियों में एडगर और सात्र्र ने विशेष रूप से लिया है। एडगर मानते हैं कि मनुष्य स्वयं को न जाने कहां से इस संसार में फैंका हुआ समझता है, जहां से उसे फैंका गया, वह स्थान उसके लिये अज्ञात है, शून्य है। यह मनुष्य की भूतकाल से सम्बन्धित शून्यता है। जब मनुष्य मरता है तब भी वह न जाने कहां जायेगा। यह उसकी भविष्य सम्बन्धी शून्यता है और भूत-भविष्य की शून्यता वर्तमान को शून्यता बोध से भर देती है। एडगर मानते हैं कि मनुष्य को शून्यता की अनुभूति दो प्रकार से होती है। प्रथमतः जब वह देखता है कि वस्तुऐं उससे दूर खिसकती जा रही है और द्वितीय जब वह स्वयं वस्तुओं से दूर होने लगता है। सात्र्र ने शून्यता के मूल में स्वातन्त्रय भाव माना है। वर्तमान का स्वतन्त्र चयन यही सिद्ध करता है कि वह जो बनना चाहता था वह नहीं है। यही उसकी भविष्य से सम्बन्धित शून्यता है।

'शेखर एक जीवनी' का मूल प्रश्न ही शून्यता बोध से जुड़ा है। बच्चा कहां से आता है और विश्व युद्ध में मरने वाले सैनिक कहां जाते हैं। भूत और भविष्य की यह शून्यता शेखर के वर्तमान को भी शून्य से भर देती है।

जेल में शशि के विवाह की सूचना और उसकी अनिच्छा जानकर शेखर स्वयं को असहाय महसूस करता है। मोहासिन के गाने या बाबा मदन सिंह के सूत्र वाक्य न उसका मनोरंजन कर पाते हैं और न ही उसे मानसिक शान्ति दे पाते हैं। पूरी रात वह एक शून्य से घिरा रहता है। जेल से छूटने के बाद शेखर न कालेज वापिस जा सकता है न उसके पास कोई नौकरी है। सड़कों पर बेकार घूमता सोचता है, ''क्या जीवन की अबाध गति मुझे लहर पर तैरते हुए टीन के खाली डिब्बे सा इधर-उधर नहीं पटकती रही- कहीं पत्थर से टकरा गया तो खन्न से गूँज उठा.....एक आंतरिक खोखला पन जिसके कारण मैं तैरता गया हूँ, डूबा नहीं क्या इसी सम्बल के सहारे जीवन का युद्ध लड़ा जाता है।''इतने बड़े घर में शेखर का कोई संगी नहीं है। न माँ, न पिता, न भाई, मात्र सरस्वती से उसे स्नेह मिलता है और वह भी कभी रसोई में, कभी कढ़ाई करने में, कभी कमला का काम करने में व्यस्त रहती है और अन्त में उसकी शादी हो जाती है। सोचता है, ''क्या इतने बड़े संसार में मेरे लिए जगह नहीं है।'' कभी खिड़की के पास बैठकर 'S' आकार के वृक्ष को देखता और सोचता, ''क्या मेरा ही नाम विधाता ने इस विराट शून्यता में लिख डाला है। क्या यह शाप सदा ही मेरे ऊपर मंडराता रहेगा।''

संत्रास एवं मृत्यु बोध - भय का बाहरी रूप आंतक तथा आन्तिरिक रूप संत्रास माना गया है। संत्रास मृत्यु बोध से सम्पृक्त शब्द है। किर्कगार्द कहते हैं, ''संत्रास भय नहीं है, संत्रास का भाव हमें चारों ओर से घेरता है। सहसा सुखद वातावरण कहीं खो जाता है। जीवन को रंग फीड़ा पड़ जाता है। संत्रास हमें नास्ति के सम्मुख ला देता है।'' एडगर के अनुसार, ''आत्महत्या की अपेक्षा सब कुछ निर्मूल करने वाली मृत्यु संत्रास को अभिव्यक्ति करती है।''संत्रास का भाव बालक शेखर में उस समय घर करता है जब वह अज़ायब घर में एक बाघ को देखकर इतना संत्रस्त हो जाता है कि उसे रात को भंयकर स्वप्न आने लगते हैं। शशि के पिता हृदय रोग से बीमार हैं और पूरा परिवार एक अनिष्ट की आशंका से संत्रस्त है। विश्व युद्ध में मामा की मृत्यु शेखर में अनेक प्रश्न जगाती है। जेल में वह मृत्यु दण्ड के कैदियों की कोठरी में चला जाता है।

उपन्यास का आरम्भ ही शेखर को मिली फांसी की सजा से होता है। शेखर सोचता है - ''जिस जीवन को उत्पन्न करने में हमारे संसार की सारी शक्तियां, विकास, विज्ञान, सभ्यता की सारी क्षमतायें, औजार अक्षम हैं उसे छीनने वाली फांसी .....मुझे मरना है, फांसी पर झूल कर मरना है।भावनाओं की मृत्यु से कथा-नायक को बार-बार गुज़रना पड़ता है। बचपन में क्रूर शिक्षकों तथा संयमित परिवारिक वातावरण के कारण, वयःसन्धि में माँ-बाप के अविश्वास के कारण, किशोरावस्था में शारदा से वियोग के कारण, यौवनावस्था में शशि की वैवाहिक विसंगति और आर्थिक, सामाजिक असमर्थता के कारण, किशोरावस्था में वह समुन्द्र में तैरते-तैरते डूब जाता है, युवावस्था में वह आत्महत्या का यत्न करता है।अकेलापन, अज़नबी-पन, अपरिचय - डाक्टर शिव प्रसाद सिंह के अनुसार, ''अस्तित्ववाद की सबसे बड़ी देन यह है कि उसने आज के वातारण में मनुष्य के अपने और समाज से हुए अलगाव को रेखांकित किया।'' योगेन्द्र शाही लिखते है, ''व्नजेपकमत एवं अज़नबी की भावना की अनुभूति धार्मिक क्षेत्र से अस्तित्वाद में आई।'' डाक्टर इन्द्रनाथ मदान के अनुसार, ''अकेलेपन का बोध बहुत पुराना है, मध्यकालीन है, शायद इससे भी पहले का है.... मध्ययुग में आत्मिक स्तर पर था, रोमांटिक युग में वैयक्तिक स्तर पर तथा आधुनिक युग में स्थिति, नियति के स्तर पर।''शेखर के परिवार के लोगों ने कभी उसे गम्भीरता से नहीं लिया निरन्तर मिलने वाली उपेक्षा के कारण उसे एकान्त में बैठ कर सोचने की आदत पड़ गयी। इसीलिए डलझील के पास के महल में जाना हो या अज़ायब घर में अथवा जंगल में वह अकेला ही जाता है। यहां तक कि वह विवाह न कर अकेला जीवन बिताना ही उचित समझता है। उदाहरण - ''वह अकेला था और अनुभव कर रहा था कि मैं अकेला हूँ और यह भी अनुभव कर रहा था कि इस लिए अकेला हूँ कि मैं उस प्रकार का नहीं हूँ जिसे लोग अच्छा कहते हैं। पढ़ता नहीं हूँ, किसी का कहना नहीं मानता हूँ ढीठ हूँ, लड़ाका हूँ, शैतान हूँ'' ''नहीं तो आज इस समय पिता के पास हँस रहा होता या भाईयों के साथ ही कोई सचित्र पुस्तक पढ़ रहा होता, जिसके स्थान पर मैं सब को भुलाया हुआ अकेला खड़ा हूँ।''

विसंगति और व्यर्थताबोध-काम का चिन्तन और साहित्य हमारे समक्ष विसंगतियों के संसार में अकेले अभिशप्त मनुष्य का चित्रण करता है। उसके लिये कला 'एबसर्ड' में संवाद है। 'एबसर्ड' का तात्पर्य विसंगति की वह अनुभूति है, जहाँ मन संगति और सामंजस्य की अपेक्षा विसंगति और असम्बद्धता पाता है। चाल्स रोला लिखते हैं, ''विसंगति पर सात्र्र आदि ने विचार किया है पर कामू की धारणा उनसे भिन्न है। कामू के लिए विंसगति निराशा का कारण नहीं बल्कि एक ऐसा विरोधात्मक साधन है जो खुशी की प्रेरणा देता है।....विसंगति जीवन का महत्त्व बढ़ाती है और मनुष्य को और अधिक गहराई से जीने को प्रेरित करती है।'' भारतीय परिवेश के संदर्भ में शिव प्रसाद सिंह लिखते हैं, ''जब हम भारतीय परिवेश की ओर नज़र उठाते हैं तो लगता है कि सब कुछ विसंगति का प्रसार है जिसमें अस्तित्व के लिये बड़ी उर्वर भूमि प्रस्तुत है।''शेखर एक जीवनी में पात्र जिन्दगी को दसों अंगुलियों से पकड़ पाने में असमर्थ, विसंगति तथा व्यर्थताबोध का शिकार है।

उपन्यास का आरम्भ फांसी का दण्ड मिले शेखर से होता है। फांसी स्वयं में एक विसंगति है। शेखर सोचता है, ''फांसी क्यों?....अपराधियों को दण्ड देने के लिए। पर क्या इससे वह सुधर जायेगा, इससे क्या उसके अपराधों का मार्जन हो जायेगा।'' जीवन की विसंगति को महसूस करता शेखर अपनी डायरी में लिखता है, ''अच्छा होता कि मैं कुत्ता होता, चूहा होता, ...मैं ऐसा आदमी होता जिसका विश्वास नहीं है।''शेखर इस विसंगति को मानसिक तथा बाह्य दोनों धरातलों पर झेलता है। बचपन में वह भाईयों में घुल-मिल नहीं पाता, न स्कूल में ही घुल-मिल पाता है, न ही घर में रखे मास्टर उसे रास आते हैं। कालेज जीवन में न वह मद्रास के जीवन का अनुगामी बन पाता है और न ही पंजाब का। शारदा का प्रेम सदैव पाना उसके लिए असम्भव है और शशि के प्रति अपने प्रेम को शायद वह स्वयं बहुत देर बाद पहचानता है। उसकी साहित्यिक रचनाएं उसे कोई आर्थिक आलम्बन नहीं दे पाती और नौकरी से धन कमाना उसे अभिष्ट नहीं।

शशि इस विसंगति को मानसिक धरातल पर भोगती है, उसकी इच्छा के बिना उसका विवाह होता है, पति शंकालु प्रवृत्ति का है। इसी कारण वह उसे घर से ही नहीं निकालता, उसके गुर्दे पर भी असहास चोट करता है जो अन्ततः मृत्यु का कारण बनती है। वैवाहिक विसंगति पर उसके पीड़न को भाषण रूप में सुनने के लिए समाज कहीं तैयार नहीं है।

क्षण बोध - अस्तित्ववादी चिंतक क्षण को अत्यन्त महत्व प्रदान करते हैं। शेखर के कालेज की प्रवक्ता 'मिस मोनिका' भी क्षणवाद में विश्वास करती है। उसके यहाँ रात में देर-देर तक खाने तथा शराब की पार्टियां होती है। एक दिन Dinner के बाद शेखर वहां पहुँचा तो मिस मोनिका शराब के नशे में धुत्त थी। उनका दर्शन है-"My candle burns at both ends. It will not last night, But Ah my foesand oh my friends, It gives a lovely light".'शेखर एक जीवनी' में घनीभूत वेदना में एक रात में देखे टपेपवद को शब्दबद्ध करने का प्रयास है। शेखर कहता है- ''नित्यता क्षणों की है पर क्षण क्षणभंगुर हैं।''वरण एवं स्वातन्त्रय बोध - अस्तित्ववादी दर्शन के अनुसार-मनुष्य यदि अपना सार स्वयं नहीं चुन सकता तो उसकी सारी स्वतन्त्रता दासता से कम नहीं। सात्र्र के अनुसार -मनुष्य को अपने अच्छे-बुरे वातावरण में से निर्णय लेना चाहिये कि वह क्या बनना चाहता है और यह निर्णय उसे अनेक बार लेना पड़ता है किन्तु सात्र्र के अनुसार - ''मनुष्य शतरंज के मोहरों की तरह ठेला जाता है। सोचने से पहले ही मृत्यु छा चुकी होती है। इच्छा के उद्भव से पूर्व ही निर्णय लिया जा चुका होता है।'' मूलतः चुनाव साहस की मांग करता है, दुसाहस की मांग भी कर सकता है।

शेखर एक जीवनी उपन्यास का जीवन-दर्शन स्वातन्त्रय की खोज है। इस खोज में प्रायः सभी पात्र लगे हुए हैं। भूमिका में अज्ञेय नायक की स्वातन्त्रय भावना के विषय में लिखते हैं- ''शिशु मानस चरित्र की सच्चाई के लिये मैंने 'शेखर' के आरम्भ के खण्डों में घटनास्थल अपने ही जीवन से चुने हैं फिर क्रमशः बढ़ते हुए शेखर का जीवन और अनूभूति क्षेत्र से अलग चला गया है यहां तक कि मैंने स्वयं अनुभव किया है कि मैं स्वतन्त्र व्यक्ति की प्रगति का दर्शक और इतिहासकार हूँ। उसके जीवन पर मेरा किसी प्रकार का वश नहीं रहा है।''वरण की स्वतन्त्रता पर प्रहार शेखर के जन्म के साथ ही हो जाता है क्योंकि बौद्ध भिक्षु कहते हैं- इस पर महात्मा बुद्ध की अहिंसा का प्रभाव रहेगा। पंडित कहते हैं कि वह ब्राह्मणत्व का नाम उज्जवल करेगा। मां उसे बैरिस्टर तथा पिता इंजीनियर बनाने की सोचते हैं।

नायक शेखर भी बार-बार चुनाव करता दिखाई देता है। स्कूल और मास्टरों को छोड़कर भी वह मैट्रिक पास करता है। ब्राह्मणों के हॉस्टल से अछूतों के होस्टल में शिफ्ट होने का निर्णय लेता है। मद्रास के दूषित होस्टल वातावरण की अपेक्षा पंजाब के छात्रावास का वरण करता है। कालेज के सभी दलों की दलदल से निकल कर सक्रिय राजनीति में आता है। पारिवारिक एवं सामाजिक बन्धनों को तोड़ कर स्वतन्त्र जीवन की खोज करता है।

शशि की नियति यह है कि उसे भारतीय परम्परा के अनुसार माँ द्वारा निर्धारित पुरुष की भार्या बनना पड़ता है। चुनाव का अधिकार उसके पास नहीं है।स्वातन्त्रय भाव का प्रतीकात्मक चित्रण अज्ञेय ने उस तितली के संदर्भ में भी किया है जो कमरे में आ फंसती है और स्वतन्त्रता की खोज में कभी खिड़की के शीशों, कभी दरवाजे की ओर जाती है। उनसे टकराती है, सिर पटकती है और विवश फड़फड़ाती है।

संघर्ष एवं क्षमता बोध - अस्तित्ववादी दर्शन निवृतिवाद का सर्वथा विरोध करता है। क्षमता बोध स्थिति को स्वीकारने की वह क्षमता है जिसमें यातना, मृत्यु, अन्तर विरोध, भय आदि को देख पाने की क्षमता सम्मिलित है। अज्ञेय का शेखर नितान्त विपरीत स्थितियों में जकड़ा है। माँ-बाप उसे मनचाहा स्नेह नहीं दे पाते। भाई अपने में व्यस्त है। बहन सरस्वती जिससे उसे लगाव है, की शादी हो जाती है। स्कूली पढ़ाई और मास्टरों द्वारा मिलने वाला अपमान उसे अच्छा नहीं लगता। अन्तर प्रान्तीय प्रेमिका शारदा शहर छोड़ कर ही चली जाती है। उसकी मूल प्रेरणा शशि विवहोपरांत असामान्य जीवन जीती है। स्वयं सेवकों की अनुशासान- हीनता उसे पीड़ित करती है। किन्तु वह स्वाध्याय से मैट्रिक करता है। विपरीत वातावरण में भी बी०ए० करता है। वयःसन्धि में प्रेमिका के वियोग को चुपचाप झेलता है। शशि को सामान्य बनाने का यथा सम्भव प्रयत्न करता है। स्वस्थ राजनीति में सक्रिय भाग लेता है। यही उसका क्षमताबोध है।

शशि भी विवाहोपरांत के विपरीत वातावरण में अद्भुत जिजीविषा का परिचय देती है। न उसे पति अपने घर में रखता है और न ही वह मां के यहां लौट उसे सामाजिक विसंगति का शिकार बनाना चाहती है। शेखर के यहां रह कर वह उसे प्रेरणा देती है। उसकी मार्ग दर्शक बनती है।

****

संदर्भ

1.सपनों का मनोविज्ञान, सिगमंडफ्रायड, राजपाल एंड संस 2014
2.मनोविश्लेषण, सिगमंडफ्रायड, राजपाल एंड संस 2012
3.शेखर एक जीवनी भाग 1, अज्ञेय, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
4.शेखर एक जीवनी भाग 2, अज्ञेय, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
5.हिन्दी उपन्यास और अस्तित्ववाद: वीनू भल्ला, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली 2004
6.सात्र्र का अस्तित्ववाद: प्रभा खेतान, सरस्वती विहार, दिल्ली, 1984

प्रवासी हिन्दी साहित्य : पहचान के विविध परिप्रेक्ष्य

डॉ.सुनील
विभागाध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय,अमृतसर

डॉ.रूपिका शर्मा
सहायक प्राध्यापक,हिन्दी विभाग
कन्या महाविद्यालय, जालन्धर

प्रवास आधुनिक मानव जीवन पर आरोपित एक ऐसा सत्य है जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। भौतिकतावादी रुझानों से प्रेरित उपनिवेशवादी नीतियों और कालांतर में भूमंडलीकरण और बाज़ारवाद के व्यापक प्रभावस्वरूप पर प्रवास मानव जीवन की नियति के रूप में क्रमश: सम्बद्ध होता दिखाई देता है जिससे बचने के उपाय वर्तमान व्यवस्था में न्यून होते जा रहे हैं। भारतीय इस नियति से बहुत लम्बे से प्रभावित हैं। विशेष रूप से अंग्रेज़ों की गुलामी के दौर से। भारतीयों के लिए प्रवास का मूल कारण आर्थिक दशा की बेहतरी रहा है। फिजि, मारीशस, गुयाना इत्यादि देशों में गिरमिटिया मज़दूरों के रूप में बलात या स्वेच्छा से जाने का संदर्भ हो या सन् 1964 के बाद पढ़े-लिखे मध्यवर्गीय भारतीयों द्वारा बेहतर आर्थिक एवं रोज़गार के अवसरों की तलाश और साफ-स्वच्छ भ्रष्टाचार मुक्त सुरक्षित वातावरण में बसर करने की लालसा ही वे मूल कारण रहे हैं जिनसे प्रेरित होकर भारतीय विदेशों में प्रवास के लिए लालायित रहे हैं। वर्तमान भारतीय समाज में यह प्रक्रिया और भी अधिक तीव्र हुई है जबकि हमारे युवा पहले से कई गुणा अधिक संख्या में स्टडी वीज़ा लेकर विदेशों की तरफ रुख कर रहे हैं।

प्रवास यद्यपि आधुनिक भारतीय जीवन का यथार्थ है परन्तु इस अवधारणा के कई आयाम हैं जो प्रवासी भारतीयों के भौतिक, मानसिक जीवन के सम्बद्ध हैं। एक मनुष्य जो अपनी जन्मभूमि से दूर विदेशी धरती पर भटक रहा है वहां एक आरोपित संस्कृति उसकी सम्पूर्ण जीवन शैली तथा रचना से अनेक स्तरों पर प्रभावित करती है। मूलत: यही वह प्रभाव है जो प्रवासी संवेदना का आधार है जिससे प्रवासी साहित्य जन्म लेता है। प्रवासी शब्द उन लोगों के लिए प्रयुक्त हुआ है जो मजबूरीवश या स्वेच्छा से दूर देशों से बस गए हैं। अत: अपनी जन्मभूमि को छोड़कर दूसरे देश में जाकर बसने वाले व्यक्ति को प्रवासी कहा जाता है। आरोपित जीवन स्थितियों के बीच उसका भौतिक और मानसिक संघर्ष उसकी मानसिकता और विचारों को एक संतुलित ढांचे में ढलने से रोकता है। विदेशी भूमि पर एक अजनबी की भांति विचरते मनुष्य का एहसास उसकी मानसिकता को खंडित करता है। वह विदेश में रहते हुए भी भावात्मक रूप से अपने मातृभूमि, संस्कृति तथा भाईचारे से जुड़ाव महसूस करता है। उसके व्यक्तित्व का एक पक्ष उस देश के साथ जुड़ा रहता है जहां वह प्रवास कर रहा है और दूसरा पक्ष वह मुल्क बना रहता है जहां से वह आया है। इस प्रकार उसकी मानसिकता इन दो पक्षों के बीच द्वंद्वग्रस्त रहती है। इसी द्विविधाग्रस्त मानसिकता से जन्म लेता है प्रवासी साहित्य।

प्रवासी साहित्य साहित्य की एक नवीन विधा एवं चेतना है जो प्रवासियों के मनोविज्ञान से जुड़ी है। यह न केवल एक नई विचारधारा है बल्कि एक नई अंतदृष्टि भी है। प्रवासी साहित्यकार अनेक भाषाओं में लिख रहे हैं और अपनी रचनाधर्मिता से अपनी मातृभाषाओं के साहित्य को सघन बनाने के साथ-साथ पाठक वर्ग को प्रवास की संस्कृति, संस्कार एवं भूभाग से जुड़े लोग की स्थिति से अवगत कराने का प्रयास कर रहे हैं। आज प्रवासी भारतीय विश्व के 43 देशों में फैले हैं। लाखों की संख्या में विदेशों में बसे प्रवासी भारतीय वहां की औसत जनसंख्या का प्रतिनिधित्व भी करते हैं और उन देशों की आर्थिक, राजनीतिक नीतियों को दशा और दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका भी निभा रहे हैं। प्रवासी भारतीय मज़दूर, व्यापारी, शिल्प, अनुसंधानकर्ता,डॉक्टर, वकील, प्रबंधक, प्रशासक आदि के रूप में पूरे विश्व में स्वीकृत है। अपनी परिश्रम की प्रवृत्ति, लगन और शैक्षणिक योग्यताओं के कारण उन्होंने वहां विशिष्ट स्थान बनाए हैं। प्रवासी भारतीयों का साहित्य लेखन और अपनी भाषा के प्रति उनका रुझान भी उन्हें विशिष्टता प्रदान करता है। प्रवासी साहित्य वस्तुत: वह खिडक़ी है जो हमें हमारे इन प्रवासी बंधुओं के मनोजगत और उसके द्वन्द्व और संघर्ष को समझने का रास्ता खोलती है।

प्रवासी लेखक प्रवास के दुख-दर्द की संवेदनाओं के साथ अपने देश के संस्कारों को जोड़कर उनमें व्याप्त विषमताओं को शब्दबद्ध करता है और ये संवेदनाएं सहज ही सबसे जुड़ सबकी संवेदनाएं बन जाती हैं। अपनी इन्हीं संवेदनाओं को खोलने का प्रयास इंग्लैंड, अमेरिका, कैनेडा, मॉरीशस इत्यादि देशों में बसे भारतीय कर रहे हैं। इसी का प्रतिफल है कि आज हम प्रवासियों की ज़िंदगी से जुड़े विभिन्न अनुभवों को सांझा कर रहे हैं। हिन्दी में प्रवासी साहित्य नवयुग का साहित्यिक विमर्श है परन्तु इसका आरंभ प्रेमचंद की 'यह मेरी मातृभूमि है (1908) तथा शूद्रा (1926) कहानियों से होता है। ये अमेरिका लौटे प्रवासी भारतीय तथा मॉरीशस ले जाए गए भारतीय गिरमिटिया मज़दूरों की कहानियां हैं। इस क्रम में आगे फिजि में प्रवासी तोताराम और पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी की पुस्तकें प्रकाशित हुईं और जनवरी 1926 में चाँद पत्रिका के प्रवासी अंक से भारतीय प्रवासी साहित्य की अवधारणा उजागर हुई। मॉरीशस से अभिमन्यु अनंत, इंग्लैंड में लक्ष्मी सिंघवी, अमेरिका में वेद प्रकाश बटुक, कुंवर चंद्रप्रकाश, रामेश्वर अशांव, गुलाब खंडेलवाल, विजय मेहता, ऊषा प्रियम्वदा, सुषम बेदी, सुधा ओम ढींगरा, अंजना संधीर, देवेन्द्र सिंह आदि ने हिन्दी साहित्य के सृजन और विकास में योगदान दिया। त्रिनिनाद आदि देशों में हरिशंकर आदेश ने हिन्दी भाषा, साहित्य और संस्कृति के प्रचार-प्रसार के लिए महत्वपूर्ण कार्य किए। प्रवासी हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत कविताएं, उपन्यास, कहानियां, नाटक, एकांकी, महाकाव्य, खण्डकाव्य, अनूदित साहित्य, यात्रा-वर्णन, आत्मकथा आदि का सृजन हुआ। आज अनेक वेब पत्रिकाएं, ब्लॉग्स इत्यादि के माध्यम से प्रवासी हिन्दी साहित्य अपनी अभिव्यक्ति का व्यापक मंच बना रहा है।

भारतीय हिन्दी साहित्य की प्राचीन परम्परा के सर्वथा विपरीत प्रवासी साहित्य किसी विशेष विचार एवं दर्शन, चिंतन एवं सिद्धान्त से जुड़ा हुआ नहीं है। यह साहित्य केवल भोगे हुए मानसिक संताप और प्रवासी मनुष्य के दुख को चित्रित करता है।भारतवासियों के लिए सांस्कृतिक संघर्ष कोई सर्वथा तथा अनुभव नहीं है क्योंकि पूर्व ऐतिहासिक युग से आधुनिक युग तक अनेक विदेशी संस्कृतियों का प्रवेश यहां होता रहा। पंजाब की धरती पर ऋग्वेद का जन्म आर्य तथा आर्य पूर्व संस्कृतियों के द्वन्द्व का परिणाम है। इस्लामिक संस्कृति तथा भारतीय हिन्दू संस्कृति के समन्वय से सर्वधर्म समभाव के प्रतीक 'आदि ग्रंथ' तथा 'दशम ग्रंथ' सामने आए। आज से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व भक्तिकाल के शिरोमणि भक्त कवि गोस्वामी तुलसीदास ने वर्गों में बंटे समाज, सम्प्रदायों और विचारधाराओं का समन्वय करने का युग परिवर्तनकारी कार्य किया था। अपनी इस विशिष्टता के कारण ही 'रामचरितमानस' इस सार्वजनिक ग्रंथ बन गया है। जब कोई सभ्याचार किसी विकसित समाज सभ्याचार में प्रवासी बनकर प्रवेश करता है तो उसकी स्थिति वहां एक शरणार्थी वाली होती है। अपने अस्तित्व एवं सत्ता को कायम रखने के लिए उसे पराए सभ्याचार की अधीनता स्वीकार करनी पड़ती है। इस स्थिति में प्रवासी सभ्याचार एक द्वन्द्व तथा तनाव में से गुकारते हैं। लेखकों ने इस सांस्कृतिक संकट के बहुपक्षीय एवं व्यापक सत्य और प्रभाव को अपनी रचनाओं में उजागर करने का प्रयास यह सांस्कृतिक संकट प्रवासी भारतीयों को

अनेक ढंग से प्रभावित करता है। इस अकेलेपन और बेगानेपन के एहसास के कारण वह वर्तमान से विमुख होकर अपनी स्मृतियों में बसे सांस्कृतिक परिवेश में अनीतोन्मुख हो जाता है। उसके अंदर वापिस अपनी जन्मभूमि पर जाने की इच्छा जागृत होती है, व्यतीत हो चुके को पुन: जीने की का अपूरणीय अभाव उसकी उदासी का कारण बन जाता है। इस दौर की रचनाओं में प्रवासियों ने ऐसी भावनाओं की अभिव्यक्ति अपनी रचनाओं में की है। इस दौर की रचनाओं को प्रवासी भारतीय लेखकों के मन में बसी मातृभूमि की याद, विदेशी भूमि पर पाए सांस्कृतिक परिवेश, संताप, पश्चिमी जीवनचर्या, जातीय भेदभाव, विकसित पूंजीवादी व्यवस्था के अमानवीय व्यवहार या भौतिकवादी सोच के विभिन्न पक्ष दृष्टिगोचर होते हैं।सांस्कृतिक संकट के परिणामस्वरूप प्रवासियों की पुरानी तथा नई पीढ़ी में उत्पन्न हुआ अंतराल भी प्रवासी साहित्य में प्रमुख रूप से उजागर हुआ है। पहली पीढ़ी के लोगों के पास अपने पारम्परिक भारतीय मूल्यों का एहसास तथा दूसरी पीढ़ी के पास पूंजीवादी व्यवस्था का अनुभव दोनों के बीच का टकराव अनेक रचनाओं में अभिव्यक्त हुआ है। प्रवासी भारतीय लेखकों ने पश्चिमी जीवन शैली के आकर्षक बिम्ब को भी तोड़ा है। प्रत्येक भारतवासी के लिए पश्चिम एक जन्नत के समान है जिसकी चमक-दमक प्रत्येक अशिक्षित, अल्पशिक्षित तथा शिक्षित व्यक्ति को आकर्षित करती है। प्रवासी लेखक अपनी रचनाओं में विदेशी धरती से जुड़े हमारे स्वप्न संसार को तोडक़र पश्चिमी जीवन शैली की विसंगतियों को भी उजागर करने में सचेत हैं। इसी के साथ गैरकानूनी ढंग से विदेश जाने वाली भारतीय लोगों के सपनों तथा वास्तविकता के दो-चार होने पर उनके टूटने की प्रक्रिया को प्रस्तुत करना है।यद्यपि प्रवासी साहित्य को मुख्यधारा के साहित्य से अलग प्रवर्ग में रखकर इसका आकलन किया जाता रहा है किन्तु अब समय के साथ-साथ इसे मुख्यधारा के भारतीय हिन्दी साहित्य की सबल तथा सम्पूर्ण इकाई के रूप में देखा जाना चाहिए।

समसामयिक दौर में प्रवासी व्यक्ति के विषय में दूसरों का ही नकारिया नहीं बदल रहा, अपितु स्वयं की अपने तथा अपने के प्रति सोचने -समझने की दृष्टि भी बदल रही है। यह दृष्टि उसे एक ऐसे व्यक्ति के रूप में पहचानने का प्रयास करती है जो दो समाज, सभ्याचार, दो ध्रुवीय औपचनिवेशिक चेतना के बीच संघर्षशील व्यक्ति के रूप में देखती है जो दुहरे-तिहरे परिप्रेक्ष्यों से संवाद स्थापित करने के लिए सचेष्ट है। आर्थिक जगत में वैश्वीकरण की धारणा जिस पकार फलीभूत हो रही है और विश्वग्राम का स्वप्न देखा जा रहा है और सूचना क्रांति इस स्वप्न को साकार करती दिखाई दे रही है, उसी प्रकार से साहित्य जगत में भी इस प्रकार का नैकट्य लाया जा सकता है। आज प्रवासी लेखक अपने देश के साथ-साथ सम्पूर्ण विश्व से अपने जुड़ाव को अभिव्यक्त कर रहे हैं।प्रवासी साहित्य की सत्ता के कारण चाहे जो भी रहे हों, उनमें चित्रित परिस्थितियां चाहे जैसी भी रही हों किन्तु आज का सत्य यह है कि प्रवासी साहित्य भारतीय हिन्दी साहित्य की मुख्यधारा का अभिन्न अंग है और प्रवासी साहित्यकारों से अपेक्षा है कि वे भाषा, साहित्य, सृजन और विश्व-समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी को समझते हुए अपनी रचनाधर्मिता का निर्वाह करें जिसमें साहित्य और विश्व समाज के नये परिप्रेक्ष्यों को समझने का सार्थक वातावरण तैयार हो सके।

****

संदर्भ-सूची

1.हिन्दी का भारतीय एवं प्रवासी महिला कथा लेखन : डॉ. मधु संधु, नमन प्रकाशन, प्र. सं.-293, नमन प्रकाशन।
2.वर्तमान साहित्य, कुंवरपाल सिंह, नमिता सिंह (संपादक) प्रवासी हिन्दी लेखन तथा भारतीय हिन्दी लेखन, ऊषा राजे सक्सेना (जनवरी, फरवरी 2006)।
3.डॉ. कमल किशोर गोयनका, हिन्दी का प्रवासी साहित्य, अमित प्रकाशन, गाजियाबाद।
4.प्रवासी हिन्दी साहित्य के प्रमुख चिंतन बिंदु, प्रवासी साहित्य और साहित्यकार।

गगनगोचरी वसुंधरा : एक परिचय

डॉ. सुमंगला एस. मुम्मिगट्टी
सेवानिवृत्त प्राध्यापिका एवं अध्यक्ष
हिंदी विभाग, कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड

भारतीयों की, सृष्टि की हर वस्तु में दैवत्व की कल्पना केवल कल्पना मात्र नहीं है अपितु अधिकतर वह वैज्ञानिक सत्य भी है। इसके लिए साक्षी है 'गगनगोचरी वसुंधरा'। इस पुस्तक की मूल परिकल्पना मुंबई नगर के वास्तु विशेषज्ञ अहोरात्र श्री नटेश पोलेपल्ली जी की है। श्रीवत्स एस. वटी इसके लेखक हैं। यह कन्नड में सन् २०१२ में अहोरात्र, कांदिवली, मुंबई से प्रकाशित है। सन् २०१८ में डॉ. मालती आदवानी जी ने इसका हिंदी अनुवाद किया है। इसके प्रकाशक भी अहोरात्र ही हैं। प्रस्तुत पुस्तक के पहले पृष्ठ पर ही शीर्षक के नीचे लिखा गया है- "क्या हमारे पूर्वजों ने आकाश से भूदृष्य देखे थे?" और इस पृष्ठ के अतं में लिखा गया है- "पुरातन शास्त्रों का आतंरिक सत्यान्वेषण।" ये दोनों वाक्य पूरी पुस्तक का सार सर्वस्व हैं।

अहोरात्र जी ने गूगल अर्थ तांत्रिकता की सहायता से भू-समीक्षा करते समय धरती के अनेक आकार और विन्यासों का वीक्षण करते हुए, शोध कार्य करते हुए अनेक कौतूहलपूर्ण चित्रों का संग्रह किया। आज बाह्याकाश विज्ञान ने पर्याप्त प्रगति की है। आज मानव को प्रत्यक्ष अथवा आकाशयान साधनों के द्वारा आकाश से भूदृष्यों का वीक्षण करना संभव हो पाया है। आजकल डिजिटल कैमरा, कंप्यूटर, इंटरनेट, गूगल आदि अत्याधुनिक साधन हैं। किंतु प्रश्न यह उठता है कि प्राचीन काल में, जब ऐसे कोई भी साधन नहीं थे, तब क्या हमारे पूर्वज आकाश की ऊँचाई से ऐसे भूदृष्यों को देखने में समर्थ हुए थे? कईयों का विश्वास एवं अभिमत है कि यह असंभव है। फिर भी हमारे प्राचीन ग्रंथों में, काव्यों में, लोक कथाओं में अनेक उल्लेख तथा वर्णन मिलते हैं कि आकाश से उन्होंने ऐसे भूदृष्य देखते थे। भारत में ही नहीं अन्य देशों में भी अनेक प्रकार के कथा प्रसंग मिलते हैं जो इस बात की पुष्टि करते हैं कि प्राचीन काल में ही मानव ने विविध-रीति से आकाशयान किया था। वाल्मीकि रामायण, श्रीमद्भागवत, कालिदास का मेघदूत आदि रचनाएँ इसके उदाहरण और प्रमाण हैं। धरती के कुछ भागों को हमारे पूर्वजों ने जो नामकरण किया था वे उनके आकार और विन्यास के अनुगुण हैं। श्री नटेश जी ने ऐसे अनेक विषयों को अपने शोधकार्य से वैज्ञानिक रूप से प्रस्तुत किया है। आशय यह है कि नटेश जी यह सिद्ध करते हैं कि प्राचीन काल में ही विशेषतः हमारे भारतीय पूर्वजों ने हर प्रकार से ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों में विश्व के अन्य देशों की तुलना में अधिक परिणति प्राप्त की थी। इस विचार को कई लोग बालिश विचार कहते हैं। खैर! श्रीवत्स वटी जी ने नटेश जी के तमाम शोध कार्य को ललित शैली में कन्नड भाषा के शाब्दिक परिधान पहनाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसलिए इन दोनों के सम्मिलित प्रयोग व प्रयत्न का फल ही 'गगनगोचरी वसुंधरा' नामक कन्नड की विशिष्ट कृति है। इस सदुद्देश्य से कि ऐसी असामान्य कृति का परिचय मात्र कन्नड भाषियों को न हो बल्कि समस्त भारतीय इसका परिचय तथा ज्ञान प्राप्त करे, अधिकांश भारतीयों की संपर्क भाषा बनी हिंदी में इसे अनूदित करने में डॉ. मालती आदवानी जी सफल हो गई हैं।

प्रस्तुत पुस्तक का विषय दस अध्यायों में वर्गीकृत है। वे इस प्रकार हैं : १) क्या हमारे पूर्वजों ने आकाश से भूदृश्य देखे थे?. २) प्राचीन भारत में गगनयान की परिकल्पना, ३) प्राचीन भारत में विमान की परिकल्पना, ४) प्राचीन काल की काव्यगोचरी वसुंधरा, ५) मेघदूतगोचरी वसुंधरा, ६) गूगलगोचरी वसुंधरा, ७) श्री नटेश जी से अन्वेषित अनेक चित्र-विचित्र दृश्य, ८) सप्तद्वीपा वसुंधरा, ९) यथा ब्रह्मांडे तथा पिंडांडे और १०) अतं में और कुछ।भारतीयों का मानना है कि अहोबल क्षेत्र नरसिंह अवतार का स्थल है। नटेश जी अहोबल क्षेत्र का अध्ययन करते समय उनको इस भूभाग के पीछे पेसिफिक सागर में साक्षात नरसिंह की आकृति का दिखाई

देना आश्चर्यचकित कर देता है।प्राचीन भारतीय साहित्य में इस धरती को 'सप्तद्वीपा वसुंधरा' कहकर वर्णित किया गया है। नटेश जी इसके लिए भी सारे प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।आकाश में उडान भरना एक सहज प्रक्रिया है। उडान भरने की शक्ति तीन प्रकार की होती है- १) जन्मजात गुण : पंछी, वानर, यक्ष, गंधर्व, देवता आदि में ऐसी शक्ति होती है। विज्ञान कहता है कि ६० करोड वर्षों पूर्व सरिसृप युग में 'डैनोसार' नामक अनेक दैत्यजीवी पंखयुक्त रहे। वे आकाश में उडान भर सकते थे। हाल ही में अर्थात् लगभग नवंबर २०१९ में चीन देश में पंखयुक्त एक बच्चे का होना सामाजिक अतंर्जाल में वायरल हो गया था। डाक्टरों ने कहा था कि उन पंखों को अलग करने के लिए बच्चे को पांच वर्ष होना अनिवार्य है। क्यों कि पंख रीढ़ की हड्डी से जुडे हैं। रीढ़ की हड्डी मजबूत होने तक पंखों को अलग करना संभव नहीं है। २) तपःसाधना से, योग साधना से अर्जित शक्ति : कई ऐसे उल्लेख मिलते हैं कि भारतीय योगी अष्टांग योग साधना इत्यादि से सशरीर उडने लायक थे। माना जाता है कि आज भी ऐसे कई साधक हिमालय में वास करते हैं। ३) विमान या गगन वाहन की सहायता से गगन विहार : देवी-देवता अपने वाहन के सहारे (जैसे विविध पशु-पक्षी, आकाशरथ, देवरथ आदि) आकाश में विहार करते थे। पुराण तथा शिल्पकलाओं में योगी, संत-महात्माओं, वीर-शूरों की मृत्यु के समय उनको देवरथ में स्वर्ग ले जाने के अनेक उल्लेख, उदाहरण अभिव्यक्त हैं। कहा जाता है कि प्राचीन काल में विमान अथवा हवाई जहाज का प्रयोग किया जाता था। उदाहरण के लिए पुष्पक विमान। भारद्वाज मुनि की मूल कृति 'यंत्र सर्वस्व' नामक ग्रंथ का एक भाग 'वैमानिक प्रकरण' मात्र आज उपलब्ध है। शेष भाग नष्ट हो गये हैं। इसमें २५ से अधिक प्रकार के विमानों के नाम हैं (उदा : त्रिपुर, शकुन, शुक, हंस इत्यादि) तथा विमानचालक के लिए आवश्यक विवरण भी है। यही नहीं रैट बंधुओं के सन् १९०३ के विमान आविष्कार से पहले ही सन् १८९५ में शिवकर बापूजी तालवडे जी ने 'मारुत सख' नामक विमान की संरचना कर मुंबई की चौपाटी में लगभग १५०० फूट की ऊँचाई पर घंटों उडाया था। लेकिन अग्रेंजों के कोपभाजन होने के कारण यह विशिष्ट आविष्कार इतिहास में दर्ज नहीं हुआ एवं कालगर्भ में समाकर नामोनिशान नहीं रह गया। ये सारे विषय प्राचीन काल से ही विमानयान की निरंतरता की पुष्टि करते हैं।

रामायण में अनेक जगहों पर दानवों एवं वानरों की उडान के प्रसंग वर्णित हैं। जैसे, रावण का सीतापहरण प्रसंग, आंजनेय का सीतान्वेषण संदर्भ, संजीविनी लाने हिमालय जाकर लंका लौट आने का प्रसंग, बालि-सुग्रीव से बचने के लिए भारत की चार दिशाओं में उडान भरना आदि यह सिद्ध करते हैं कि उस समय विमान थे।लेकिन रामायण के सिंहिका प्रसंग की संभावना का एक प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। सुंदरकांड में श्रीराम का संदेशवाहक हनुमान आकाश में उडते हुए लंका जाने के संदर्भ में 'सिंहिका' नामक राक्षसी की घटना कौतूहलपूर्ण तथा विचार योग्य है। उस घटना का सार है कि सिंहिका आकाश में उडनेवाले जीवियों की छाया पकडकर उनको खींचकर निगल लेती थी। यह मात्र कल्पना नहीं है। यहाँ पूर्वजों की देखी हुई अनुभव की हुई अगोचर शक्ति को संकेतित किया जा सकता है। क्योंकि नटेश जी के अनुसार यह सागर में आविर्भूत एक प्राकृतिक शक्ति है। केंद्रीकृत गुरुत्वाकर्षण शक्ति जैसी सागर की प्रचंड प्राकृतिक शक्ति एक, आकाश में उडनेवाले जीवियों को पूरी शक्ति के साथ आकर्षित कर सागर की गहराई में खींच लेती थी। अट्लांटिक सागर के बर्मूडा द्वीप परिसर का बर्मूडा ट्रयांगल, जावा द्वीप के पास की अगोचर शक्ति, जपान द्वीपों के वायुव्य भाग के फेसिफिक सागर के ड्रागन्स ट्रयांगल आदि इस विषय की पुष्टि करते हैं। इसलिए यह स्पष्ट है कि प्राचीन लोगों को उडने की शक्ति व साधन होने से ही प्राप्त हुआ अनुभव है यह सब। ये तमाम प्रसंग अत्यंत रोचक हैं।दूत परंपरा अर्थात् दूतों के द्वारा संदेश भेजने की बहुत प्राचीन परंपरा रही है। कहना चाहिए कि कालिदास का समुचा खंडकाव्य 'मेघदूत' आकाश से भूदृश्यों के वीक्षण का रम्य वर्णन से सुशोभित है। नटेश जी 'मेघदूतगोचरी वसुंधरा' में इसे प्रमाणित करते हैं। कैलास पर्वत के पास की अलकापुरी के यक्ष अपने जजमान कुबेर की अवकृपा से एक वर्ष तक अपनी प्रेयसी और अपने वासस्थान लंकापुरी से दूर होकर मध्यभारत के 'रामगिरि' (आज का रामटेक पहाड) पर वास करने लगता है। तब अपनी विरहणी प्रियतमा को विरह संदेश भेजने के लिए चित्रकूट पर्वत पर रुके हुए एक वर्षा बादल को दूत बना लेता है। उस बादल से अपनी प्रियतमा को संदेश पहुँचाने की बिनती करता है। इस काव्य का पूर्व भाग 'रामिगिरि से अलकापुरी तक के गगन मार्ग के समूचे वर्णन के लिए ही सीमित है। उस मार्ग में संचार करते समय उस बादल को वहाँ के भूभाग जैसे गोचरित हुए उसका वर्णन करना ही इस काव्य का उद्देश्य है। यह ज्ञात नहीं है कि यह कवि का स्वानुभव है या परानुभव का उपयोग किया है। गूगल के द्वारा कालिदास वर्णित भूदृश्यों को देखा जा सकता है।रामायण में दक्षिणावर्त अर्थात् विंद्यगिरि के निचले भाग अर्थात् दक्षिणभारत के भूभागों का वर्णन देखते ही बनता है। इसी प्रकार नल महाराज द्वारा हंस को दूत बनाकर अपनी प्रियतमा को भेजा गया संदेश लोकप्रिय है। इस तरह हंस के द्वारा संदेश पत्र भेजने के कारण से ही चिट्ठी या पत्रों की रवानगी की व्यवस्था को कन्नड में 'अंचे' नाम आ गया है। 'अंचे' हंस शब्द का अपभ्रंश रूप है।

नटेश जी ने श्रीचक्र एवं देवकण के बारे में भी शोध कार्य किया है। सनातनधर्मियों के श्रद्धा प्राप्त श्रीचक्र और आज का अणु संबंधी अन्वेषण देवकण (God Particle) में स्थित साम्यता को स्पष्ट रूप में उद्घाटित किया है। इन दोनों चित्रों में अत्यधिक साम्य दिखाई देता है। यही नहीं, वे, 'अणु से ब्रह्मांड तक' विषय पर भी प्रकाश डालते हैं। सन् २००८ के न्यूयार्क के सेसेक्स विश्वविद्यालय के ब्रह्मांड संबंधी शोधपरक अध्ययन ने यह प्रमाणित किया है कि इस विश्व के सारे अशं ऐसे हैं, मानो एक धागे से बांधे गये हों। इस पुस्तक का सारांश यह है कि हमारे पूर्वजों ने कई सदियों पूर्व ही आजकल के अनेकानेक अत्याधुनिक वैज्ञानिक अन्वेषणों का सत्यान्वेषण किया था। इस पुस्तक में नटेश जी ने पाठकों को गूगल तकनीक के द्वारा प्राप्त प्राचीनतम और नवीनतम विज्ञान का अर्थात् धरती के मनोरम दृश्यों के साम्य को अत्यंत स्पष्ट रीति से सचित्र निरूपण के साथ साक्षात्कार कराया है।

ऐसी एक विशिष्ट कृति को डॉ. मालती आदवानी जी ने हिंदी में अनूदित किया है। सब को यह बात विदित है कि ज्ञान की अभिव्यक्ति के लिए भाषा एक वाहक है। भाषा मानव जनजातियों को अलग अलग करती है जबकि भाषांतर अथवा अनुवाद मानव जनजातियों को एकता के सूत्र में बांधता है। ज्ञानक्षितिज के विस्तार के लिए यह एक सुवर्ण माध्यम है। कुवेंपु जी ने कहा है कि अनुवाद एक अपूर्व कल्याण घटना है। क्योंकि यह दो भाषाओं के बीच की लेन-देन का एक शुभकार्य होता है। किंतु किराये की माँ जैसे अनुवादक की जिम्मेदारी और तकलीफ अवर्णनीय है। अनुवादक को मूल कृतिकार का सा स्वातंत्र्य बिलकुल नहीं होता। मूल का पुनः सृजन बहुत कठिन काम है। मालती जी ने ऐसा साहस किया है। यद्यपि मालती जी साहित्य की प्राध्यापिका रहीं फिर भी अत्यंत वैज्ञानिक विषय का सुंदर अनुवाद किया है। मराठी भाषा में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त मालती जी ने कन्नड भाषा में लिखी हुई इस वैज्ञानिक पुस्तक के विषय को आत्मसात कर हिंदी में अनूदित किया है। विषयानुकूल संस्कृतनिष्ठ हिंदी भाषा का प्रयोग किया है। वैज्ञानिक शब्दों का अनुवाद कहीं असंगत नहीं लगता। आवश्यकतानुसार भावानुवाद कर कृति की शोभा दुगुनी कर दी है। मालती जी ने वैयक्तिक समस्याओं से जूझती हुई भी, जीवन की ढ़लती शाम में भी यह कार्य कर यह साबित किया है कि समस्याएँ तथा आयु रचनात्मक कार्यों के लिए कभी बाधा नहीं बनती। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि इस अनुवाद के द्वारा भारत भर के हिंदी भाषिकों को श्री नटेश जी के अद्भुत अन्वेषण का यथावत् परिचय कराने में सफल हुई हैं।

****

दया प्रकाश सिन्हा के ऐतिहासिक नाटकों के कथानक का विवेचन

वैशाली काशिनाथ गायकवाड
शोधार्थी,हिंदी विभाग
डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय
औरंगाबाद, महाराष्ट्र.Mo 9029920423

शोधसार-दया प्रकाश सिन्हा हिंदी साहित्य के एक प्रख्यात वरिष्ठ नाटककार हैं| उन्होंने एक दर्जन से भी अधिक नाटक लिखे हैं| वे नाटक लेखन के साथ नाटक का निर्देशन तथा नाटक में अभिनय भी करते हैं| उनके द्वारा लिखित सभी नाटक प्रकाशन से पूर्व ही रंगमंच पर सफलता पूर्वक मंचित हुए हैं| उनके द्वारा लिखित ऐतिहासिक नाटकों में 'इतिहास-चक्र', 'सीढ़ियाँ', 'इतिहास', 'रक्त-अभिषेक', 'सम्राट अशोक' आदि प्रमुख हैं| प्रस्तुत नाटकों की कथावस्तु ऐतिहासिक घटनाओं के अनुरूप और रंगमंच के तत्वों को ध्यान में रखकर लिखे गये हैं| उनके सभी ऐतिहासिक नाटकों का विषय, काल, समय, घटना अलग-अलग हैं| उनके नाटकों में जीवंतता दिखाई देती है| उन्होंने ऐतिहासिक नाटकों के पात्र में कोई परिवर्तन नहीं किया हैं| बल्कि उन पात्रों के माध्यम से उसका यथार्थपरक चित्रण किया हैं| साथ ही मनुष्य स्वार्थलोलुपता, सत्तालोलुपता के लिए किस प्रकार गलत मार्ग का अवलंबन करता है| यह दिखाया गया हैं|

बीज शब्द: इतिहास, तथ्य, सत्य, दस्तावेज, मनुष्य, स्वार्थलोलुपता, सत्तालोलुपता, लालच, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, जनता, शोषण, उपयोग|

'इतिहास-चक्र' उनका प्रथम ऐतिहासिक नाटक है| इसका रचनाकाल सन 1972 है| प्रस्तुत नाटक की विषयवस्तु युध्द विरोधी है| विश्व में दो देशों के बीच युध्द होते ही आ रहे हैं| यह युध्द मनुष्य के भीतर की स्वार्थ प्रवृत्ति के कारण ही हो रहा है और इसी समस्या को इस नाटक के माध्यम से दर्शाया गया है| शासन करने वाला राजा, पूंजीपति कुबेर, विषकन्या मोहिनी, रिश्वतखोर पत्रकार, बाबु ऐसे पात्र हैं जिन्हें पैसों के अलावा कुछ दिखाई नहीं देता| जो अपनी इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए गलत काम करते रहते हैं|

राजा दक्षिण और उत्तर दोनों देशों के बीच हो रहे युध्द का फायदा उठाकर स्वयं पश्चिम देश की सत्ता अपने हाथों में लेकर वहाँ का तानाशाह बन जाता है| जनता को यह कहकर की युध्द के बादल हमारे पश्चिम देश में भी आ सकते है, जनता तथा देश की रक्षा करने के हेतु से वह तानाशाह बनता है| परंतु सत्ता पाते ही वह जनता के प्रति अपने कर्तव्य को भूलकर अपने स्वार्थ की पूर्ति करता हैं| वह सत्ता की आड़ में स्विजरलैंड की बैंक में अपना बैंक बेलेंस बढ़ाता है| कुबेर, मोहिनी, बाबु जैसे चरित्र भी भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, कालाबाजार करके गरीब जनता का शोषण करते रहते हैं| ये सभी एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं| युध्द से उत्तर में ऊनी कपड़ा और दक्षिण में गेहूं देने का ठेका सरकार से कुबेर को मिल जाता है| कुबेर को मिली संपत्ति का नगण्य भाग वह राजा को भेंट के रूप में देता रहता है| युध्द से पश्चिम देश में रहने वाले अमीर लोग अमीर हो रहे है और गरीब जनता को पेट भर खाना भी नहीं मिल रहा हैं| अनामी एक गरीब और बीमार व्यक्ति है| पैसे न होने के कारण वह अपना इलाज भी नहीं कर पा रहा है| वही दूसरी ओर राजा, कुबेर, मोहिनी, पत्रकार, बाबु जैसे व्यक्ति सभी सुख सुविधाओं का आनंद ले रहे हैं| "अनामी: बाज़ार में तो जैसे आग लगी है| हर चीज बाबा मोल हैं| ऐसे में पहले पेट भरें कि इलाज करें? (खांसी का दौरा) पेट भी कहां भर पता है|"1 बढ़ती महंगाई, भ्रष्टाचार को देखते हुए जनता तानाशाही को हटाकर प्रजातंत्र की मांग करते हैं और तानाशाही के विरुध्द आवाज उठाते है तो राजा अपनी सत्ता बचाने के लिए गरीब जनता का सहारा लेता हैं| जनता के सामने बड़े-बड़े आश्वासन देता हैं| "राजा: हम राजा है| हम तुम्हे जानते है| तुम जनता हो, तुम्हारे करोड़ों मुँह और करोड़ों हाथ हैं, लेकिन पेट खाली है| तुम्हारे पास धूल है, धूप है, गंदगी है, बीमारी है, मौत है| (अनामी पर एक पैर रख कर) हम इन सबके सामने, हम पश्चिमी देश के राजा वादा करते हैं कि तुम को रोटी देंगे, कपड़ा देंगे, फूल देंगे, सुगंध देंगे| तुम मुझे सिर्फ एक चीज दे दो| सिर्फ एक चीज| अनामी: (विमूढ़ता) क्या?
राजा: अपनी निशानी| अपनी यह कमीज| हम इसे अपने झंडे में लगायेंगे| (करीब-करीब जबरदस्ती उतारते हुये) रोटी देंगे, रोटी देंगे....रोटी देंगे|"[2]
राजा गरीब जनता का फायदा अपनी सत्ता बचाने के लिए करता है| उन्हें रोटी देने का आश्वासन देता है और अनामी का कमीज उतार लेता है| जनता को खुश करने के लिए भ्रष्ट व्यक्तियों के खिलाफ इंक्वायरी कमेटी बिठाता है| उससे डरकर बाबू और कुबेर भी अपनी संपत्ति एवं व्यवसाय बचाने के लिए अनामी का सहारा लेते हैं| सभी एक-दूसरे के विरुध्द जनता को भड़काते हैं|
"कुबेर: तुम मेरी बात समझो| उस राजा के पास जो कुछ है, कहां से आया? सब तुमसे ही तो लिया है|
अनामी: कैसे? कुबेर: तुमने मेहनत की जमीन तोड़ी, फावड़ा चलाया, तब ही तो सबका पेट भरा| आज तुम्हीं भूखे हो|.....
कुबेर: हम तुम्हें रोटियां देंगे| मोहिनी: दो व्यक्त, भरपेट!
कुबेर: अब तुम्हारी बीवी भूखे पेट नहीं सोयेगी....
कुबेर: सिर्फ तुम हमारे साथ हो जाओ| अनामी: अच्छा हो गये|
कुबेर: सिर्फ एक चीज तुम दे दो|
अनामी: क्या?
कुबेर: अपनी यह बनियाइन| अपनी निशानी|
अनामी: ले जाओ| लेकिन रोटी....?
मोहिनी: देंगे|"[3]

इस प्रकार कुबेर और मोहिनी भी अनामी को रोटी, मकान देने का आश्वासन दे कर उसकी बनियान उतार लेते है| अंत में बाबु भी अनामी की धोती उतार ने के लिए उसके पीछे भागता है और पत्रकार गरीब अनामी की नंगी फोटो लेकर अपने अख़बार में छापने के लिए बेताब है| 'सीढ़ियाँ' उनका दूसरा ऐतिहासिक नाटक है| इसका रचनाकाल सन 1990 है| यह नाटक मुगल शासन के अंतिम चरण में हो रहे साम्राज्य के बिखराव, सामाजिक विघटन तथा समाज के गिरते जीवन-मूल्यों को दर्शाता हैं| जहाँ सत्य पर असत्य, आस्था पर अनास्था, प्रेम पर वासना, करुणा पर हिंसा और विश्वास पर घृणा की जीत को ही युगधर्म माना जाता हैं| नाटक में अपनी इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए पात्र एक-दूसरे का उपयोग सीढ़ी के रूप में करते रहते हैं|सलीम एक ढिढ़ोंरची है| और वह दिल्ली का सूबेदार बनना चाहता है| "खल्क खुदा का, मुल्क किब्ला जनाब अबुल मुजफ्फर नसीरुद्दीन मोहम्मदशाह बादशाह गाज़ी का, हुकूमत सूबेदार-ए-दिल्ली, दौलतुज्जम्मा शेख मिर्ज़ा सलीमशाह बहादुर की|"[4] सूबेदार बनने के लिए वह झूठ बोलना, धोखा देना यहाँ तक की खून भी करता है| ढिढ़ोंरची से सूबेदार बनने के लिए वह मान खां, कोतवाल, जावेद और अपनी प्रेमिका बानों का भी उपयोग करता हैं| "सलीम: हाँ, तुम्हारी| देखो, सबके सब दोजखी कीड़े हैं| इन्हें तो रूपये चाहिए, या औरत| अगर रूपये का इन्तजाम नहीं कर सकता तो... औरत का इन्तजाम करना पड़ेगा| ....देख, सिर्फ एक रात की बात है| तेरा कुछ नहीं जायेगा| लेकिन मेरी मदद हो जायेगी| मैं ढिंढोरचीगीरी छोडकर खास -सिपाही बन जाऊँगा| फिर हम लोग निकाह कर लेंगे| तेरी इस मदद का एहसानमंद में जिन्दगी भर रहूँगा| बस एक रात के लिए 'हाँ' कर दे|"[5] सलीम सिपाही बनने के लिए बानों को किसी और पुरुष के पास जाने की बात करता है| बानों का विरोध करने पर वह उसका अपहरण करता है और उसके पिता खालू की हत्या भी कर देता है| दूसरी ओर बादशाह मुहम्मद राज्य को देखने के बजाय ऊधमबाई और नूरबाई के पीछे पागल है| जब की नादिरशाह और उसके सैनिक युध्द करने के लिए आ रही है|

"सिपाही-2: ईरान के शहंशाह नादिरशाह की बिजली की रफ्तार से बढ़ती फौजें वजीराबाद, एमनाबाद, गुजरात को नेस्तनाबूद करके लाहौर तक पहुँच गयी हैं|"मोहम्मद शाह: (शराब के नशे में) कौन नादिरशाह? कैसा नादिरशाह? कहाँ का नादिरशाह? हमसे क्या लेना-देना उसका| हम किसी नादिरशाह को नहीं जानते| हम तो सिर्फ उसको जानते है जिसका नाम है- नूराबाई|"[6] अंत में दिल्ली का बादशाह नादिरशाह बन जाता है और सलीम वहां का सूबेदार बन जाता है|

'इतिहास' नाटक 1857 से लेकर 1947 के बीच घटित घटनाओं पर आधारित ऐतिहासिक नाटक है| इसका रचनाकाल सन 1998 है| नाटक में सिन्हा जी ने ऐसे सत्य को उजागर किया है, जिससे पाठक आज तक वंचित थे| उन्होंने दस्तावेज़, तथ्यों की जाँच पड़ताल करते हुए इस नाटक की रचना की है| ब्रिटिश सरकार ने 18 मार्च 1946 को जवाहरलाल नेहरु को सिंगापूर भेज कर एडविना माउन्टबेटन और नेहरु की एक योजना के अंतर्गत दोस्ती करवा दी थी| उनकी यह दोस्ती बाद में प्रेम में बदल गई| नेहरु एडविना माउन्टबेटन से प्रेम करते थे| परंतु एडविना नेहरु से प्रेम का नाटक करते हुए उन्हें अपने प्रेम जाल में फँसाकर उसका उपयोग सुभाषचंद्र बोस के विरुध्द षड्यंत्र करने के लिए कर रही थी| एडविना को जैसे ही पता चला की नेहरू को ब्रिटिश सरकार प्रधानमंत्री बनाना चाहते है, उसने नेहरु को रिझाने के लिए क्या कुछ नहीं किया| यह इस कथन से स्पष्ट होता है-

"एडविना: डोंन्ट टेल इट टू डिकी| हम अंग्रेजी की निगाह में बोस सबसे बड़ा गद्दार था| उसने इंडियन सोल्जर्स को अंग्रेजी राज के लिए ली गई वफादारी की कसम तोड़ने के लिए उकसाया! क्या यह ठीक काम था? कभी नहीं| इट वाज सो इम्मोरल|

नेहरू: (असमंजस में) शायद .....एडविना: (नेहरू के निकट आकर आत्मीयता से) जवाहरलाल, लेट मी टेल यु वन थिंग, जल्दी ही अंग्रेज इंडिया छोड़कर चले जाएंगे| हम सब चाहते हैं की फ्री इंडिया के तुम प्राईम मिनिस्टर बनो| एज प्राइम मिनिस्टर क्या तुम नहीं चाहोगे कि फ्री इंडिया की आर्मी डिसिपिलंड हो? वह अपनी वफादारी की कसम पर डटी रहे?

नेहरु: हाँ, क्यों नहीं?एडविना: अगर आई.एन.ए. मेमोरियल पर "रीड" रखने गए, तो आर्मी को गलत मैसेज जाएगा| फ्री इंडिया में तुमको ही इसे फेस करना पड़ेगा| (अधिक आत्मीयता से) माई डियर जवाहर, तुम्हें आई.एन.ए. मेमोरियल का प्रोग्राम कैंसिल कर देना चाहिए|नेहरू: ठीक है| मैं कैंसिल करता हूँ|"[7] नेहरू ने केवल एडविना के कहने पर ही आई.एन.ए. मेमोरियल जाना कैंसिल कर दिया| जब कांग्रेस की स्थापना हुई तब उसके अध्यक्ष पद के लिए प्रांतीय कमिटियों ने जवाहरलाल नेहरू और वल्लभभाई पटेल का नाम सुनिश्चित किया था| चयन के दरम्यान सात में से पांच कमिटि मेम्बर ने वल्लभभाई पटेल का चुनाव किया| और तीन कमिटि मेम्बर ने नेहरू का चुनाव किया था| ऐसे में वल्लभभाई पटेल को ही कांग्रेस के अध्यक्ष बनवाना चाहिए था| परंतु गांधी जी ने मोतीलाल नेहरू के कहने पर जवाहरलाल को कांग्रेस का अध्यक्ष बना दिया| "मोतीलाल: गांधी जी मैं पिछले एक साल से आपसे रिक्वेस्ट कर रहा हूँ- जवाहर के बारे में| गांधी: मैं सोच रहा हूँ| मोतीलाल: (डायरी देखकर) मैंने 11 जुलाई 1928 को आपको खत लिखा था| गांधी: इतने सीनियर्स हैं| वल्लभ भाई पटेल के लिए पांच प्रांतीय कांग्रेस कमिटियों ने सिफारिश की है| जवाहर के लिए सिर्फ तीन प्रांतीय कमिटियों ने| मोतीलाल: प्रांतीय कांग्रेस कमिटियाँ कुछ भी चाहें| मैं तो यह जानता हूँ कि आप कांग्रेस हैं| आप जो चाहेंगे वहीं होगा| अगर कांग्रेस को आगे बढ़ना है तो यह जरूरी है कि उसकी जगह नौजवानों में हो| अगर जवाहरलाल को कांग्रेस प्रेसिडेंट बनाया जाता है तो करोड़ों नौजवान कांग्रेस में खिंचे चले आएंगे| जवाहर लाल नौजवानों का प्यारा है| गांधी: वल्लभ भाई पटेल से क्या कहें? मोतीलाल: वल्लभ भाई एक साल बाद कांग्रेस प्रेसिडेंट हो सकते हैं|"[8]जब भगतसिंह को फांसी की सजा सुनाई जा चुकी थी| उस समय 17 फरवरी से 5 मार्च 1931 तक गांधी इरविन वार्ता चल रही थी| तब सभी देशवासियों को यह उम्मीद थी की गांधी जी वाइसराय लार्ड इरविन से कहकर भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव की फांसी की सजा माफ़ कर देंगे| परंतु गांधी जी वहाँ चुप रहे| ना बल्कि भगतसिंह को फांसी दिए जाने के बाद देश में दंगा-फसाद ना हो इसके लिए उन्होंने अंग्रेजों की मदद की| "गांधी जी: मैंने सुना है कि भगतसिंह और उसके दो साथियों को फांसी देने के लिए 23 मार्च या 24 मार्च निश्चित है| एमर्सन: तो ? गांधी जी: एक दिक्कत है| 24 मार्च को नया कांग्रेस प्रेसिडेंट कराँची में अपनी गद्दी सम्हालेगा| एमर्सन: सरकार ने इस बात पर गंभीरता से विचार किया और अंत में इस नतीजे पर पहंचे कि फांसी टालना ठीक नहीं है| इससे उनकी उम्मीद जग जाएगी और वह समझेंगे कि उनकी फांसी, लाइफटर्म में कम्यूट होने जा रही है| इससे सिर्फ उनकी और उनके घरवालों की तकलीफ बढ़ेगी| यह आपकी दृष्टि से भी ठीक नहीं होगा क्योंकि लोग समझने लगेंगे कि कम्यूटेशन का विचार हो रहा है, जो सही नहीं है|गांधी: यह बात तो ठीक है| फिर भी मुझे लगता है कि सजा कम्यूट कर देना शायद अधिक बेहतर होगा| इरविन: गांधी जी, सरकार को खतरा है कि इनकी फांसी से कंट्री में हलचल होगी| हम लोगों ने आपसे रिक्वेस्ट की थी कि अगले कुछ हफ्तों तक दिल्ली में पब्लिक मीटिंग न होने देने में सरकार की मदद दें| गांधी: मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं इस मामले में सरकार की पूरी मदद करूँगा|"९ अंग्रेजों द्वारा देशभक्तों को फांसी होने पर गांधी जी का अंग्रेजों का मदद करना यह निंदनीय है| 'रक्त-अभिषेक' उनका चतुर्थ ऐतिहासिक नाटक है| नाटक का रचनाकाल सन 2005 है| इसकी प्रथम-प्रस्तुति 2006 को हुई है| नाटक का कथानक राजा बृहद्रथ और सेनापति पुष्यमित्र के बीच अंतरद्वंद्व पर आधारित नाटक है| जिसमें यूनानी टाइटस भारत में सेल्यूकस की हार का बदला लेने के उद्देश्य से भिक्षु के वस्त्र पहने भारत में आया है| "हम यूनानियों में इतनी ताकत नहीं कि सेल्यूकस की हार का बदला मैदाने- जंग में ले सकें| लेकिन हममें अकल है| हममें चालाकी है| हमने यहाँ बौध्दों और वैदिकों के बीच फुट के बीज बो दिये हैं| धीरे-धीरे इनमें अलगाव बढ़ेगा| वे एक-दूसरे पर शक करेंगे| एक-दूसरे के खिलाफ लामबंद होंगे| एक-दूसरे के दुश्मन हो जाएँगे|"[10]राजा बृहद्रथ बौध्द धर्म के अनुयायी है| "यह सत्य हैं कि हम सम्राट हैं| किन्तु हमारा हृदय युध्द के भेरीघोष से आनंदित नहीं होता| हमें तो धम्मघोष आनंदित करता है| हम चक्रवर्ती सम्राट हैं, क्योंकि हम धम्मचक्र प्रवर्तन करते हैं|"[11] वे हिंसा नहीं, बल्कि शांति चाहते है| इसी का फायदा उठाकर टाइटस ने राजा बृहद्रथ का विश्वास प्राप्त करते हुए अपनी पत्नी अंटोनिया को राजा के सामने बहन के रूप में प्रस्तुत करता है| और राजा उसे राज्य का अमात्य बना देता है| टाइटस और अंटोनिया के षड्यंत्र को पुष्यमित्र जानते है| वे कई बार राजा को सावधान तथा सूचित करने का प्रयास करते है परंतु हर बार की तरह टाइटस और अंटोनिया के बातों में आकर राजा पुष्यमित्र की बात नहीं सुनते| अंत में यूनानियों के आक्रमण से प्रजा और राज्य को बचाने के लिए पुष्यमित्र ने राजा बृहद्रथ की हत्या कर दी| "माँ! जब-जब विदेशी आक्रांता इस भूमि को मलिन दृष्टी से देखेगा, तब, तब कोई न कोई पुष्यमित्र तुम्हारे चरणों में उसकी बलि चढ़ाने जन्म लेता रहेगा|"[12]'सम्राट अशोक' नाटक का प्रकाशन सन 2015 में हुआ है| नाटक में सिन्हा जी ने अशोक को एक सम्राट नहीं बल्कि एक सामान्य व्यक्ति के रूप में दिखाया है| शिलालेख, दस्तावेज आदि के आधार पर अशोक के चरित्र का यथार्थ चित्रण किया है| जिसमें अशोक अपने पिता और भाई के मृत्यु का कारण बना हैं| राजा बिंदुसार सुसीम को राजा बनवाना चाहते थे| अशोक दिखने में कुरूप था| इसलिए बिंदुसार अशोक को पंसद नहीं करते थे परंतु अशोक शौर्य और शस्त्र-संचालन में निपुण था| इससे प्रभावित होकर उन्होंने उस समय उसे गांधार का शासक बना दिया था|अशोक राजा बनना चाहता था| राधास्वामी भी अशोक को ही राजा बनवाना चाहता था| जब बिंदुसार रोगतंद्रा में पड़े थे| उसका फायदा उठाकर राधास्वामी अशोक को महाराज बना देता है| जबकि वह अधिकार सुसीम का था|

राधागुप्त: महाराज! मैं कुमार अशोक का मित्र हूँ, इसलिए उपराजा बनाने के लिए निवेदन नहीं कर रहा हूँ| राजनीती के सभी आचार्यों का मत है- कभी भी एक दिन के लिए भी राज सिंहासन रिक्त नहीं रहना चाहिए| मेरे पितामह आचार्य चाणक्य का भी यही मत था|"[13] राधागुप्त के कहने पर अशोक मुकुट धारण कर लेता है| और उसी समय बिंदुसार की मृत्यु हो जाती है| सिंहासन के लिए सुसीम और अशोक में चार साल तक युध्द चला युध्द में अशोक ने सुसीम की हत्या कर दी और राजा बन गया| राजा बनने के बाद अशोक का असली रंग दिखाई देता है| अशोकावदान की कुछ स्त्रीयों ने उसे कुरूप कहाँ और उसकी विकारयुक्त त्वचा को स्पर्श करने से जुगुप्सा दिखाई, तो उसने उन सब पांच सौ स्त्रियों को जलवा दिया|जब भिक्षु समुद्र गुप्त ने अशोक के हाथों से भिक्षा ग्रहण करने से मना कर दिया यह कहकर की, "प्रजा की रक्षा में हाथ में लगा रक्त और सत्ता-लोलुपता में हाथ में लगा भाई का रक्त! दोनों में बहुत अंतर होता है राजन|"[14] क्रोधित होकर अशोक भिक्षु समुद्र को अग्नि में जलने का मृत्यु दंड देता है| परंतु अग्नि में जलने पर भी भिक्षु समुद्र की मुख से कोई चीख न निकलने पर उस चमत्कार से प्रभावित होकर अशोक बौध्दधर्म का अनुयायी बन जाता है|"अशोक: समझ में नहीं आता कि कोई कैसे मृत्यु-वरण कर सकता है| जलते हुए उसके मुख से एक भी चीख नहीं निकली| कोई कैसे इतनी सहजता से अपने प्राण दे सकता है| भिक्खु समुद्र! हम पराजित हो गये| हम तुमसे पराजित हो गये| ऐसा क्या है बुध्द में, धम्म में, संघ में, जो मानव मृत्यु पर विजयी बनाता है|"[15] प्रभावित होकर अशोक धम्म की शरण में चले जाते है| "संसार में कोई उपहार धर्म-उपहार से बढ़कर नहीं है| कोई दान धर्मदान जैसा नहीं है| कोई मित्र धर्ममित्र जैसा नहीं हैं| कोई भी सम्बन्ध धर्म-सम्बन्ध जैसा नहीं है|"[16] तथागत की शरण में जाकर बौध्द धर्म को ग्रहण करके वह राज्य का सब धन धम्म प्रचार में लगा देता हैं| उसके कारण राधास्वामी अशोक को बंधीगृह में बंद कर देता है| जीवन के अंतिम दिन में काराग्रह में बंदी बने हुए अशोक को जब भिक्खु कात्यायन मिलने आते है| तब उन्हें दान में देने के लिए अशोक के पास केवल एक फल रहता है|

निष्कर्ष:निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं की, सिन्हा जी ने अपने ऐतिहासिक नाटकों में तथ्यों को सामने लाने का प्रयास किया हैं| उन्होंने इतिहास, रक्त-अभिषेक और सम्राट अशोक नाटक के माध्यम से ऐसा सत्य सामने लाने का प्रयास किया है, जिससे पाठक वर्ग आज तक वंचित थे| सीढ़ियाँ और इतिहास-चक्र नाटक के माध्यम से यह दर्शाया की समाज में मनुष्य अपने स्वार्थ, लालच तथा इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए किसी भी हद तक गिर सकता हैं| किसी भी व्यक्ति का उपयोग अपने स्वार्थ के लिए कर सकता हैं| ऐसे व्यक्तियों के वजह से ही समाज में भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी बढ़ रही है, जिससे गरीब जनता भूखी मर रही हैं| यह आज की समस्या है| सिन्हा जी के नाटक आज भी प्रासंगिक हैं|

****

संदर्भ सूची

1.सिन्हा दया प्रकाश, इतिहास-चक्र, वाणी प्रकाशन, 2005, पृ.सं.39
2.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.47
3.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.56,57
4.सिन्हा दया प्रकाश, सीढ़ियाँ, वाणी प्रकाशन, 2008, पृ.सं.15
5.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.60-61
6.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.45
7.सिन्हा दया प्रकाश, इतिहास, वाणी प्रकाशन, पृ.सं.63
8.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.48
9.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.50-51
10.सिन्हा दया प्रकाश, नाट्य-समग्र 3, रक्त-अभिषेक, सामायिक प्रकाशन, पृ.सं.237
11.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.231
12.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.290
13.सिन्हा दया प्रकाश, सम्राट अशोक, वाणी प्रकाशन, 2005, पृ.सं.49
14.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.62
15.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.64
16.वही, वही, वही, वही, पृ.सं.67-68

श्री गुरु गोबिन्द सिंह; काव्य और कृपाण के धनी

डॉ.सुनील
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
हिन्दी-विभाग गुरु नानक देव
विश्वविद्यालय, अमृतसर-143005
(पंजाब) मो. 9878550034

डॉ.नीरज शर्मा
एसोसिएट प्रोफ़ेसर एवम् अध्यक्ष
संस्कृत विभाग कन्या
महाविद्यालय,जालन्धर
मो: 9815219235

असि को अपनी अस्मिता का आधार-अंग बनाने वाले, धर्म-रक्षा हेतु अपना पूरा परिवार बलिदान करने वाले, करनी-कथनी के पूरे दशम-पिता गुरु गोबिन्द सिंह जी का सम्पूर्ण विश्व-समाज को अद्वितीय योगदान है। संस्कार और सामर्थ्य से परिपूर्ण 'खालसा' के निर्माण और दलित और पीड़ित जन-जन के उत्थान का बीड़ा उठाने वाले 'सन्त-सिपाही' ने लोगों के अन्दर सोई हुई शक्ति को जगाया और उन्हें भेड़ों से शेर बनाया।रणबांकुरे गुरु गोबिन्द सिंह जी के व्यक्तिव का एक उज्ज्वल पक्ष उनका सहृदय काव्य-साधक एवं काव्य-संरक्षक रूप भी है। जिस प्रकार बहुत ही कम आयु तक शसरीर इस धरती पर रहते हुए उन्होंने अनेकों युद्ध किए और सैंकड़ों प्रकार के संघर्षों पर विजय पताका फहराई,उसी प्रकार काव्य के क्षेत्र में भी उनका योगदान अनुपम-अविस्मरणीय है। सम्पूर्ण विश्व-साहित्य में एक काव्य-प्रेमी एवं संरक्षक के रूप में उनका महत्वपूर्ण योगदान है।कृपाण के साथ-साथ गुरु गोबिन्द सिंह जी काव्य के भी धनी थे। उन्होंने न केवल स्वयं उत्कृष्ट कोटि का काव्य रचा अपितु बहुत से काव्य-साधकों और काव्य-प्रेमियों को संरक्षण भी दिया। इतिहास साक्षी है कि उन्होंने अपने दरबार में बावन कवियों को समस्त सुख-सुविधाओं और सम्मान के साथ आश्रय दिया हुआ था। मुगलों के उत्पीड़न से त्रस्त होकर गुरु-शरण में आए इन कवियों में भाई नन्द लाल गोया, भाई मनि सिंह, चउंपा सिंह, कृपा राम, ननुआ वैरागी, भाई राम कुइर, देवी दास, लक्खण राय, तनसुख लाहौरी, कासी राम, चन्द्र सेनि सेनापति, प्रहिलाद राय, अमृत राय लाहौरी, मंगल राय, हंस राम वाजपेयी, कँवरेश, टहिकण दास, चन्द, अणि राय, सुखदेव, बृन्द, गिरधर लाल, आलम शाह, नंद राम, हरिदास, गोपाल, धरम सिंह, गुरदास सिंह, गुरदास गुणी, भाई फेरू, ब्रह्म भट्ट, हीर भट्ट, सुन्दर, शारदा, सुदामा, हुसैन अली, चन्दन, धन्ना सिंह, राम दास, बृज लाल, मीर छबीला, मीर मुसकी, केसो भट्ट, देसा सिंह भट्ट, नरबद सिंह भट्ट, कीरत सिंह, निहचल फकीर, नन्द लाल, मान दास बैरागी, ईशर दास, बिहारी तथा आढा के नाम लिए जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि इन सभी कवियों ने बहुत ही उच्च-कोटि का काव्य रचा और उससे 'विद्या सागर' नाम का ग्रन्थ तैयार किया गया।1

भाई सन्तोख सिंह ने इस ग्रन्थ का नाम 'दिद्याधर' लिखा है और इसका वज़न नौ मण बताया है-

तिन कवियन बानी करी लिखि कागद तुलवाइ।
नौ मण होए तोल महि सूखम लिखत लिखाइ॥[2]

आज यह अदभुत ग्रन्थ अपने सम्पूर्ण रूप में उपलब्ध नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि इसे सरसा नदी को भेंट कर नष्ट कर दिया गया। इस ग्रन्थ के कुछ अंशों की प्रतिलिपियां यत्र-तत्र बिखरी प्राप्त होती हैं।

गुरु गोबिन्द सिंह जी की साहित्य-साधना और अगाध साहित्य-प्रेम का ही परिणाम और प्रमाण है कि उनके संरक्षण में अनेक काव्य-धाराएं स्थापित हुईं और उन्होंने साहित्य-संसार को समृद्ध किया। गुरु गोबिन्द सिंह संरक्षित सम्प्रदायों में निर्मला सम्प्रदाय, सेवा पन्थी सम्प्रदाय, ज्ञानी सम्प्रदाय, दमदमी टकसाल सम्प्रदाय, निहंग सम्प्रदाय और कविशरी परम्परा उल्लेखनीय हैं। निर्मला सम्प्रदाय: गुरु गोबिन्द सिंह जी ने पाँच नवयुवकों राम सिंह, करम सिंह, गन्ढ़ा सिंह, वीर सिंह और शोभा सिंह को को संस्कृत की उच्च विद्या सीखने के लिए काशी भेजा।[3] काशी से शिक्षा ग्रहण कर बहुत बड़े विद्वान बनकर वापिस आए औरपण्डित

कहलाए।इन्होंने आनन्दपुर साहिब आकर निवास क्या और साहित्य-साधना की। ये सदैव श्वेत वस्त्र पहनते थे, ब्रह्मचर्य का पालन करते थे और 'निर्मले' नाम से प्रसिद्ध हुए। इन्होंने असंख्य लोगों को भाषा और साहित्य का ज्ञान दिया। आगे चलकर अनेक कवि इस सप्रदाय से निकले जिन्होंने साहित्य-सृजना द्वारा साहित्य-जगत को योगदान दिया है। निर्मला सम्प्रदाय द्वारा संस्कृत, हिन्दी और पंजाबी तीनों भाषाओं में काव्य-रचना की गई। ईशर सिंह रचित दो संस्कृत ग्रन्थ हैं- वाहिगुरू मन्त्रार्थ प्रकाश तथा गुरमत दिग्विजय। संस्कृत का यह विद्वान बहुत ही त्यागी था।[4]

निर्मला सम्प्रदाय के अन्तर्गत सैंकड़ों कवियों द्वारा रचित असंख्य रचनाएँ सुलभ हैं, जो साहित्य में एक बहुत ही महत्वपूर्ण देन है।

सेवा पन्थी सम्प्रदाय: युद्धों में जख्मी हुए दोनों ही पक्षों के सैनिकों को पानी पिलाने का काम करने वाले भाई कन्हैया जी से यह सम्प्रदाय प्रारम्भ होता है। कुछ लोगों की शिकायत पर गुरू गोबिन्द सिंह ने बुलाकर प्रश्न किया तो इन्होंने कहा कि मुझे तो सब में एक गुरूजी की ही मूरत दिखाई देती है; इसलिए मैं उनके लिए पानी की सेवा करता हूँ। गुरूजी ने उसे शाबाशी देकर प्रोत्साहन और संरक्षण दिया। इस सम्प्रदाय में अड्डण शाह हुए, जिन्होंने सेवा की इस परम्परा के साथ-साथ साहित्य के क्षेत्र में भी विशेष कार्य किया।उनकी साहित्य-सेवा को देखते हुए कई विद्वान इस सम्प्रदाय को 'अड्डण शाही' संज्ञा से भी उपमित करतेहैं। इस सम्प्रदाय के लोगों ने सेवा के बदले में कुछ भी स्वीकार नहीं किया और अपना जीवन-यापन करने के लिए स्वयं श्रम करते थे। स्वयं श्याही बनाना और हस्तलिखित लिखतों की प्रतिलिपियां तैयार करना भी इनके कार्य थे। जन-सेवा और मौलिक साहित्य-सृजना इनकी विशेषताएँ मानी जातीहैं। इस सम्प्रदाय द्वारा रचित साहित्य गुण और गणना दोनों ही दृष्टियों से श्लाघ्यहै।[5] ज्ञानी सम्प्रदाय: साहित्य के क्षेत्र में इस सम्प्रदाय का विशेष योगदान है। गुरू गोबिन्द सिंह की सरप्रस्ती में भाई मनी सिंह ने आदि ग्रन्थ को लिखने की सेवा कीऔर यहीं से ज्ञानी सम्प्रदाय का आरम्भ हुआ। धर्म और कौम के लिए अपनी शरीर के टुकड़े-टुकड़े करवाने वाले शहीद भाई मनि सिंह ने अनेक साहित्यिक कार्य भी किए हैं, जो इतिहास में अंकित है। भाई मनी सिंह द्वारा किए साहित्यिक कार्यों में बीड़ दशम ग्रन्थ, बीड़ आदि ग्रन्थ, ज्ञान रतनावली और भगत रतनावली विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। आगे चलकर इन्हीं के शिष्य कवि चूड़ामणि भाई सन्तोख सिंह हुए जिन्होंने सूरज प्रकाश जैसे अद्भुत काव्य-ग्रन्थ साहित्य-संसार को दिए। इसी परम्परा के ज्ञानी हजारा सिंह द्वारा गुरू ग्रन्थ साहिब कोष लिखा गया। इसी प्रकार से इस सम्प्रदाय की साहित्य-सेवा आज भी निरन्तर जारी है, जिसका सम्पूर्ण योगदान अनुसन्धान का विषय है।[6]

दमदमी टकसाल सम्प्रदाय: गुरू गोबिन्द सिंह से ज्ञान एवं दीक्षा लेकर उन्हीं के मुखारविन्द से बाणी का अर्थ ग्रहण कर उनके चौबीस शिष्यों में से एक बाबा दीप सिंह का नाम सिख-परम्परा और विश्व के इतिहास में बहुत ही श्रद्धा और सम्मान के साथ दर्ज है। शारीरिक और मानसिक दृढ़ता के पुंज बाबा दीप सिंह के बारे में प्रसिद्ध है कि वे अपने कटे हुए सिर के साथ भी हरमन्दिर साहिब की परिक्रमा तक जा पहूँचे थे। इन्ही शहीद बाबा दीप सिंह के द्वारा गुरू गोबिन्द सिंह की इच्छा और आदेशानुसार दमदमी टकसाल सम्प्रदाय की स्थापना हुई। इस सम्प्रदाय में बाणी का पाठ ठीक उसी प्रकार किया जाता है, जिस प्रकार स्वयं गुरू साहिब ने उन्हें सुनाया था। इस सप्रदाय की एक देन यह भी है कि यहाँ पर गुरू काशी में बीड़ लेखन का कार्य बहुत मात्रा में करवाया गया। यहाँ पर आने वाले विद्यार्थी घरबार का त्याग कर डेरे पर रहकर ही बाणी साहित्य का अध्ययन-अध्यापन एवं साधना करते हैं। ऐसी मान्यता है कि बीसवीं सदी में इस सम्प्रदाय के प्रमुख सन्त गुरबचन सिंह जैसी आदिग्रन्थ का पाठ किसी और ने नहीं किया।7इस सम्प्रदाय ने गुरबाणी और गुरमत का प्रचार-प्रसार करने के लिए अनेक कार्य किए हैं और आज भी कर रहे हैं।निहंग सम्प्रदाय: गुरू गोबिन्द सिंह जी के सबसे छोटे साहिबजादे फतेह सिंह जी से जुड़ा यह सम्प्रदाय भी साहित्य और शहादत के लिए सदैव स्मरणीय है। इस सम्प्रदाय में एक से बढ़कर एक 'मरजीवड़े' योद्धा हुए हैं, जिनमें सबसे प्रसिद्ध नाम अकाली फूला सिंह का है। यह सम्प्रदाय'खालसेदे बोले' के लिए भी प्रसिद्ध है, जो पंजाबी साहित्य को बहुमूल्य देन मानी जाती है।[8]

कविशरी परम्परा: ऐसी मान्यता है कि स्वयं गुरू गोबिन्द सिंह द्वारा गुरुद्वारा लिखणसर की भूमि को शिक्षा और साहित्य का वरदान दिया गया।उन्होंने लक्खी जंगल में कवि-दरबार लगाया और वहां पर स्वय काव्य-पाठ किया। इस कवि-दरबार में आढा और अन्य कई कवि शामिल हुए। साज न होने की वजह से गुरू साहिब ने बिना साज टेक लगाकर गाने का परामर्श दिया और तभी से यह परम्परा प्रारम्भ हो गई। धीरे-धीरे ऐसे कवियों की संख्या बहुत अधिक हो गई। इस काव्य-शैली को 'कविशरी' कहा जाने लगा। इसी परम्परा के संरक्षण में पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला के अजमेर सिंह का आद्यतन कार्य 'कविशरी विश्व-कोश' अभी प्रगति पर है, जिसके पूर्ण होने पर इस दिशा में और भी मार्ग खुलेंगे।गुरु गोबिन्द सिंह जी के कृपाण-प्रेम के साथ-साथ काव्य -प्रेम का यह सब उपक्रम इस तथ्य को सशक्त ढंग से स्थापित करता है कि समस्त साहित्य जगत में गुरु गोबिन्द जी के जैसा उदाहरण ढूंढना सचमुच दुर्लभ है, जिन्होंने काव्य और कृपाण दोनों से इस स्तर का योगदान दिया हो।

****

सन्दर्भ:

1.कान्ह सिंह भाई, गुरमति मार्तण्ड (भाग दूजा), शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, अमृतसर, 1985,पृ.567
2. भाई सन्तोख सिंह, 'गुर प्रताप सूरज', रुत 5,अम्मू 52
3. प्रीतम सिंह (सम्पा) 'निर्मला सम्प्रदाय', गुरु नानकदेव यूनिवर्सिटी,अमृतसर,1981, पृ.137
4. विशाखा सिंह, सन्त, 'मालवा इतिहास', भाग तीजा, पृ.1138
5. अजमेरसिंह, साहितसम्प्रदावांदासोमा: गुरूगोबिन्दसिंह,खोजपत्रिका, अंक48,सितम्बर1998, पृ.132
6. अजमेरसिंह, साहितसम्प्रदावांदासोमा: गुरूगोबिन्दसिंह,खोजपत्रिका, अंक48,सितम्बर1998, पृ.133
7. अजमेरसिंह, साहितसम्प्रदावांदासोमा: गुरूगोबिन्दसिंह,खोजपत्रिका, अंक48,सितम्बर1998, पृ.135
8. अजमेरसिंह, साहितसम्प्रदावांदासोमा: गुरूगोबिन्दसिंह,खोजपत्रिका, अंक48,सितम्बर1998, पृ.134

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का निबंध साहित्य

डॉ.राम मनोहर मिश्र
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी
अकबरपुर महाविद्यालय, अकबरपुर कानपुर देहात

सारांश-निबंध आधुनिक साहित्य की प्रमुख गद्य विधा है। हिंदी के आरंभिक निबंध आत्माभिव्यंजक शैली में लिखे गए जिनमें लेखक के व्यक्तित्त्व की स्पष्ट अभिव्यक्ति दिखाई पड़ती है। द्विवेदी युग में भाषा की प्रौढ़ता और परिमार्जन के साथ ही गंभीरता आ गई। फलस्वरूप आत्मव्यंजना की प्रवृति का ह्रास हुआ। परिणामतः निबंध के अंतर्गत विषयवस्तु और शैली की दृष्टि से विचार प्रधान निबंधों से हृदय प्रधान निबंधों को अलग करने के लिए उन्हें ललित निबंध निबंध कहा जाता है। हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध साहित्य में वैयक्तिक, आत्मगत व भाव प्रधान तत्वों के होने के बावजूद उनमें विचार तत्व अधिक गहन रूप से मिलता है। यह विचार तत्व इतिहास, पौराणिक गाथाओं, अतीत और परंपराओं से कथानक लेकर वर्तमान संदर्भों को समझने में तो सहायक होता ही है इसके साथ ही लालित्य भाव से पूर्ण होता है जो पाठक को साहित्य के सौंदर्य से जोड़ता है साथ ही अनुभूति की परंपरा से भी संबद्ध करता है। इनके ललित निबंध मनुष्य को केंद्र में रखकर भारतीय ज्ञानधारा और साहित्य के स्वाभाविक विकास क्रम को दिखाते हैं। इनके निबंधों में मनुष्य, साहित्य, भारतीय संस्कृति तथा प्रकृति के स्वाभाविक सौंदर्य की अभिव्यक्ति हुई है।

उद्देश्य - ललित निबंधों के स्वरूप और रचनात्मक वैशिष्ट्य का अध्ययन करना और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों के आधार भारतीय चिंतन धारा की ललित निबंधों में अभिव्यक्ति और समाज पर उसके प्रभाव का विश्लेषण करना।

बीज शब्द- ललित निबंध, साहित्य, भारतीय परंपरा, मानवता

शोध प्रविधि - आलेख में हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों का विश्लेषणात्मक पद्धति में अध्ययन किया गया है।

साहित्यिक पुनरावलोकन- निबंध शब्द नि+बंधअर्थात अच्छी तरह गठा या बंधा हुआ से बना है। हिंदी साहित्य कोश के अनुसार "निबंध का प्रयोग लिखे हुए भोजपत्रों को संवारने बाँधने या सीने की क्रिया के लिए भी होता था, किंतु कालांतर में अर्थ संकोच के रूप में केवल साहित्यिक कृति के लिए इसका प्रयोग होने लगा"। मानक हिंदी कोश के अनुसार "वह विचारपूर्ण विवरणात्मक और विस्तृत लेख, जिसमें किसी विषय के सब अंगों का मौलिक और स्वतंत्र रूप से विवेचन किया गया हो।" साहित्य के अंतर्गत निबंध गद्य साहित्य की एक विद्या है। हिंदी से पूर्व संस्कृत में निबंध का जिक्र मिलता है वहाँ गद्य और पद्यय दोनों ही प्रकार की रचना निबंध के अंतर्गत आती है। "सरस्वती के संपादन-काल तक संस्कृत से पूर्ण परिचित हिंदी के पंडित भी गद्य और पद्य दोनों शैलियों में लिखी गई रचनाओं को निबंध कहते थे। आज का हिंदी निबंध-साहित्य संस्कृत की उस प्राचीन परंपरा से भिन्न है। खड़ी बोली गद्य के लिए उन्नीसवीं सदी और उसमें भी निबंध रचना की दृष्टि से उन्नीसवीं सदी का उतरार्ध महत्वपूर्ण है। इस दृष्टि से निबंध हिंदी साहित्य का नितांत आधुनिक रूप है"। हिंदी साहित्य में निबंध परंपरा का आरंभ भारतेंदु युग से माना जाता है। डॉ रामचंद्र तिवारी के अनुसार'भारतेंदु युग के निबंधकारों में आत्मव्यंजकता का तत्व स्पष्ट लक्षित होता है। द्विवेदी युग में भाषा की प्रौढ़ता और परिमार्जन के साथ ही गंभीरता आ गई। फलस्वरूप आत्मव्यंजना की प्रवृति का ह्रास हुआ। आचार्य शुक्ल ने व्यक्तिव-व्यंजना को निबंधों का आवश्यक गुण मानते हुए भी उनमें वैचारिक गाम्भीर्य एवं क्रमबद्धता का समर्थन किया। सरदार पूर्णसिंह के निबंधों में उनकी मनोलहरी की तरलता ने विचार सूत्रों को क्रमबद्ध नहीं होने दिया। छायावाद युग में गंभीर चिंतन से पूर्ण तथा आत्मनिष्ठ एवं भावात्मक दोनों ही प्रकार के निबंध लिखे गए। छायावादोत्तर युग में पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों में आत्मव्यंजना एवं व्यक्तित्व-विधायक तत्वों का नवोन्मेष हुआ। निबंध परंपरा के अंतर्गत हजारी प्रसाद द्विवेदी के समकालीन ही पंडित विद्यानिवास मिश्र और कुबेरनाथ राय का नाम ललित निबंधों की परंपरा में विशेष स्थान रखता है। डॉ लक्ष्मीसागर वाष्णेय ने मूल अर्थ में निबंध को हृदय की वस्तु माना है और बालकृष्ण भट्ट को हिंदी का प्रथम निबंधकार माना। आचार्य रामचंद शुक्ल के निबंधों की बात की जाए तो उनके निबंध बुद्धि से हृदय की यात्रा करते है।

निबंध के अंतर्गत विचार प्रधान निबंधों से हृदय प्रधान निबंधों को अलग करने के लिए ही कभी-कभी उन्हें ललित निबंध तथा आत्मव्यंजक निबंध कहा जाता है। अज्ञेय ने ललित निबंधों को व्यक्तित्व-व्यंजक या व्यक्तित्व-रंजित कहा तो रमेशचंद्र शाह ने इन्हें व्यक्ति व्यंजना नाम दिया। यूरोप में निबंध सहित्य का जनक मानतेन को माना जाता है। वह एक फ्रेंच साहित्यकार थे। उन्होंने निबंध में आत्माभिव्यक्ति को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना है और माना कि 'जैसी रचयिता की मन: स्थिति होगी वैसी ही निबंध रचना होगी। डब्ल्यू एच. हडसन के अनुसार प्रबंध वस्तुपरक हो सकता है किंतु निबंध व्यक्ति प्रधान होता है। निबंध को गद्य की आधुनिक विधाके अंतर्गत माना जाता है। रामचंद्र तिवारी के अनुसार "निबंध गद्य की आधुनिक विद्या है। इसमें लेखक की रूचि एवं मन: प्रवृति के अनुसार विचारों की शृंखला अव्यवस्थित और शिथिल अथवा सुगठित एवं व्यवस्थित दोनों ही प्रकार की हो सकती है। आत्मव्यंजना निबंध की मूलभूत विशेषता है। इसकी नितांत उपेक्षा किसी भी स्थिति में नहीं की जा सकती है। अच्छे निबंध लेखक में सूक्ष्म निरीक्षण की क्षमता के साथ ही हास्य-व्यंग्य एवं विनोद की प्रवृति भी होनी चाहिए। निबंध में पांडित्य, गंभीर अध्ययन एवं तार्किकता आवश्यक नहीं..निबंध में सजीवता, सरसता तथा स्वच्छंदता आदि विशेषताएं सामान्यत: व्यक्तिव्यंजना के साथ स्वत: आ जाती है। निबंध किसी भी विषय पर लिखा जा सकता है। इसमें विषय के स्थान पर लेखक का व्यक्तित्व ही पाठक के मन पर छा जाता है।" निबंध अपने भीतर व्यक्तिव्यंजकता के तत्व के साथ ही अपने समय समाज को भी निबंध का केंद्र बनाता है।

विषय विवेचन -पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी छायावादोत्तर निबन्धकार हैं। इनके निबंधों की आधारभूमि भारतीय संस्कृति है जिसमें प्रकृति से पुष्प, पौधे, वृक्ष, पशु-पक्षी आदि को माध्यम बनाकर उन्होंने भारतीय संस्कृति के अतीत और वर्तमान को बड़ी ही सरसता ने अपने निबंधों का विषय बनाया है। " आपकी दृष्टि में साहित्य एवं जीवन की हर समस्या का एक सांस्कृतिक पहलू है, जिसकी जानकारी समस्या के उचित समाधान के लिए आवश्यक है। आपके श्रेष्ठ निबंधों में आत्म-व्यंजना का तत्व प्रधान है। इसीलिए विषय माध्यम के रूप में सामने रहता है और आपका व्यक्तित्व धीरे-धीरे उभर कर पाठक के मन पर छा जाता है।" इसे ललित निबंध की विशेषता भी कहा जा सकता है कि यहाँ व्यक्तित्व के साथ ही सृजन तत्व मुख्य होता है। स्वयं द्विवेदी लिखते हैं- "मनुष्य की इच्छा-शक्ति जब सर्जनात्मक रूप ग्रहण करती है तो भारतीय शास्त्रों में उसे विश्वव्यापिनी सर्जनात्मक शक्ति 'ललिता' का व्यष्टिगतरूप कहा जाता है।" ललिता का संदर्भ द्विवेदी जी ने लालित्य

के लिए प्रयोग किया है। जिसे शिव की शक्ति भी कहा जाता है । लालित्य शब्द इसी ललिता से उत्पन्न होकर साहित्य के सृजन का केंद्र लालित्य बना है। जिसके संदर्भ में द्विवेदी जी लिखते हैं कि "लालित्य, अर्थात प्राकृतिक सौंदर्य से भिन्न किंतु उसके समानांतर चलने वाला मानव रचित सौंदर्य ।" जो व्यक्तिक अनुभूति के साथ ही सृजनात्मक होकर जड़तत्व का प्रतिरोध करें और जीवतत्व को अपने सृजन का केंद्र बनाए और अधिक मानवीय हो । मानवीयता का यही भावबोध इनके साहित्य का केंद्र है । द्विवेदी जी के निबंधों का केंद्र मनुष्य रहा है और उसकी तुलना का आधार प्रकृति का हर वो प्राणी है जिसमें जीवन है । तभी तो कभी वसंत के माध्यम से कभी कुटज के माध्यम से वह भारतीय संस्कृति, परंपरा और मानवीय संबंधों के विराट अस्तित्व की परतें खोलते देखे जाते हैं । उनके निबंधों का केंद्रीय तत्व मनुष्य कभी 'अशोक के फूल'निबंध में अशोक के वृक्ष के माध्यम से अतीत से वर्तमान की यात्रा करता देखा जा सकता है तो कभी 'कुटज' निबंध में जीवन के संघर्षों से जूझते मनुष्य की अद्मय जिजीविषा को बनाए रखने का हौसला देता है। डॉ. रामचंद्र तिवारी, हिंदी गद्य साहित्य का इतिहास में लिखते हैं कि "मनुष्य की जय यात्रा पर आपका अखंड विश्वास है । संस्कृति, धर्म-दर्शन, विज्ञान तथा समस्त कला-साधनाएं मनुष्य की जययात्रा के विजय-उद्घोष हैं । अपरिमेय जिजीविषा से प्रेरित मनुष्य निरंतर आगे बढ़ रहा है । जड़ता के अनेक स्तरों को तोड़कर वह चिन्मय तत्व की उपलब्धि के लिए अग्रसर है । द्विवेदी जी ने इसी मनुष्य को उसके पूरे सांस्कृतिक-ऐतिहासिक परिवेश में मूर्त करने का प्रयत्न किया है । आचार्य शुक्ल के बाद हिंदी-निबंध को नवीन मोड़ देकर आचार्य द्विवेदी ने ऐतिहासिक महत्व का कार्य किया है।"

द्विवेदीजी के निबंधों का एक आधार पौराणिक कथाएं भी है । यही कथाएं और उनके कथानक इनके निबंधों का केंद्र बनते हैं । द्विवेदी जी मूलतः वैष्णव परिवार से संबंध रखते हैं । आर्थिक स्थितियाँ अनुकूल नहीं होने के कारण इन्हें शिक्षा अर्जन के लिए कथा वाचक का कार्य भीकरना पड़ा था । उन्हीं भागवत प्रवचनों से प्राप्त सहायता से यह अपनी शिक्षा पूरी करते हैं । राधावल्लभ त्रिपाठी के अनुसार "द्विवेदी जी ने अपने जीवन के इन्हीं संघर्षों से अपने निबंधों का ताना-बाना बुना है । जिस भागवत प्रवचनों के दम पर जीवन की इतनी बड़ी सहायता मिली, जो न पहले 'कभी मिली और मिलेगी' और जिनके बूते पर इंटरमीडिएट की वैतरणी पार हो सकी, उन्हें द्विवेदी जी यों भूल जाएंगे, यह कैसे हो सकता था?...द्विवेदी जी ने प्रवचन की विद्या का नवसंस्कार करके ललित निबंध का अपना ढाँचा तैयार किया । ..." यह ढाँचा आख्यान परंपरा से होता हुआ वर्तमान के स्याह पक्ष को सामने लाता है । उनके निबंधों में सिर्फ अतीत का गौरव गान नहीं है बल्कि उस अतीत का वास्तविक रूप भी होता है । हजारी प्रसाद द्विवेदी 'अशोक के फूल' निबंध में अशोक के वृक्ष के माध्यम से भारत के अतीत के स्वर्ण पक्ष को तो उजागर करते ही हैं इसके साथ ही उसके स्याह पक्ष पर भी लिखते हैं- "अशोक का वृक्ष जितना भी मनोहर हो, जितना भी रहस्मय हो, जितना भी अलंकारमय हो, परंतु है वह उस विशाल सामंत सभ्यता का ही प्रतीक, जो साधारण प्रजा के परिश्रमों पर पली थी, उसके रक्त के संसार कणों को खाकर बड़ी हुई थी और लाखों-करोड़ों की उपेक्षा से समृद्ध हुई थी । वे सामंत उखड़ गए, समाज ढह गए, और मदनोत्सव की घूमधाम मिट गई । संतान-कामिनियों को गंधर्वों से अधिक शक्तिशाली देवताओं का वरदान मिलने लगा । पीरों ने, भूत-भैरवों ने, काली दुर्गा ने यक्षों की इज्जत मिटा दी । दुनिया अपने रास्ते चली गई । अशोक पीछे छूट गया ।" सामंती व्यवस्था को देश बहुत पीछे छोड़ आया है, आज नई सामाजिक व्यवस्थाएं जन्म ले रही है और समाज में अस्तित्व को बनाए रखने के लिए संघर्ष कर रही है या करवा रही है । पूंजीवाद उन्हीं में से एक व्यवस्था है । कहा जा सकता है कि पूंजीवाद सामंतवाद का ही नया विस्तार है । यह तो मनुष्य की स्वभाविक प्रवृति है कि वह निरंतर विकास की प्रक्रिया में बहुत कुछ छोड़ता और बहुत कुछ नए को अपने साथ समेटते हुए आगे बढ़ता चलता है । अशोक का वृक्ष भी उसी मानवीय जीवन और अतीत का ही एक अंश है जो आज भी उसी तरह बना हुआ है जैसे इस आधुनिक परिवेश में हमारी परंपराएँ और अतीत की गौरव गाथाएं । द्विवेदी जी के निबंध केवल विचारों की शृंखला भर नहीं है, न ही उनका उद्देश्य केवल आनंद प्रदान करना भरहै बल्कि अपने निबंधों के माध्यम से वह मनुष्य के भीतर जीवन का सृजन व उत्साह पैदा करते हैं । यह उत्साह मनुष्य जाति के बनने, बिगड़ने, टूटने और फिर टूटकर पुन: सृजित होने का है । यही सृजन अशोक के वृक्ष को आज के समय में भी जीवित बनाए है । भारतीय सभ्यता और संस्कृति के समान अशोक का वृक्ष भी अपने अस्तित्व को बचाए है । बदलाव जीवन का नित्य नियम है उसी बदलाव में मानव जाति भी स्वयं को जीवित बचाए रखने का संघर्ष करती रही है और अशोक का वृक्ष भी । द्विवेदी जी लिखते हैं- "अशोक आज भी उसी मौज में है, जिसमें आज से दो हजार वर्ष पहले थे । कहीं भी तो कुछ नहीं बिगड़ा है, कुछ भी तो नहीं बदला है । बदली है मनुष्य की प्रवृति । यदि बदले बिना वह आगे बढ़ सकती तो शायद वह भी नहीं बदलती । और यदि वह न बदलती और व्यावसायिक संघर्ष आरंभ हो जाता-मशीन का रथ घर्रर चल पड़ता-विज्ञान का सवेग धावन चल निकलता, तो बड़ा बुरा होता" हम पिस जाते । अच्छा ही हुआ जो वह बदल गई । पूरी कहाँ बदली है? पर बदल तो रही है । अशोक का फूल तो उसी मस्ती से हँस रहा है । पुराने चित्त से इसको देखने वाला उदास होता है । वह अपने को पंडित समझता है।" अस्तित्व को बचाए रखने का संघर्ष हर समय काल परिवेश में रहा है और हर आने वाली पीढ़ी इस संघर्ष को देख रही है । जो कभी न समाप्त होने वाला संघर्ष है । ऐसे में आवश्यक हो जाता है कि इस संघर्ष को सकारात्मक रूप से आगे बढ़ने दिया जाए अन्यथा हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में कहा जाए तो "पंडिताई भी एक बोझ है जितनी ही भारी होती है, उतनी ही तेजी से डुबाती है । जब वह जीवन का अंग बन जाती है तो सहज हो जाती है । तब वह बोझ नहीं रहती । वह उस अवस्था में उदास भी नहीं करती । कहाँ! अशोक का कुछ भी तो नहीं बिगड़ा है । कितनी मस्ती में झूम रहा है! कालिदास इसका रस ले सके थे-अपने ढंग से । मैं भी ले सकता हूँ, अपने ढंग से । उदास होना बेकार है ।" इसी तरह जीवन भी है जिसे सहज धारा में बहने दिया जाए तो वह परंपराओं को अपने अनुरूप समेटे आगे बढ़ता रहेगा अन्यथा नदी में रुके हुए पानी के समान जीवन को असहज कर देगा । द्विवेदी जी परंपरा और आधुनिकता, अतीत और वर्तमान के मध्य झूलते मनुष्य के द्वंद्व से मुक्त होने का आधार बदलाव को स्वीकार करना मानते हैं । यह बदलाव परंपरा से आधुनिकता तक की मनुष्य की जीवन यात्रा का बदलाव है । "मनुष्य की जीवनी-शक्ति बड़ी निर्मम है, वह सभ्यता और संस्कृति के वृथा मोहों को रौंदती चली आ रही है । न जाने कितने धर्मचारों, विश्वासों, उत्सवों, उत्सवों और व्रतों को धोती-बहाती यह जीवन-धारा आगे बढ़ी है । संघर्षों से मनुष्य ने नई शक्ति पाई है । हमारे सामने समाज का आज जो रूप है, वह न जाने कितने ग्रहण और त्याग का रूप है देश और जाति की विशुद्ध संस्कृति केवल बाद की बात है । सब कुछ में मिलावट है, सब कुछ अविशुद्ध है । शुद्ध है केवल मनुष्य की दुर्दम जिजीविषा (जीने की इच्छा) । वह गंगा की अबाधित-अनाहत धारा के समान सब कुछ को हजम करने के बाद भी पवित्र है!" आचार्य हजार प्रसाद द्विवेदी अपने समय में जिस द्वंद्व को देख रहे थे वही स्थितियाँ आज भी बनी हुई है । आज भी दो पीढ़ियों की टकराहट को घर से लेकर समाज तक में देखा जा सकता है । आज भी एक पीढ़ी बदलाव चाहती है तो एक उस बदलाव से डरती और अधिक कठोर होकर परंपराओं से खुद को जकड़ने का प्रयास करती देखी जाती है ।

हजारी प्रसाद द्विवेदी भारत के इतिहास, अतीत की गौरव स्मृतियो से गुजरते हुए अपनी चेतना को जीवित बचाए रखने के द्वंद्व को अपने निबंधों में उजागर करते हैं। वह वर्तमान के अतीत पर बार-बार अतिक्रमण पर भी लिखते हैं। जहाँ सभ्यता, संस्कृति, मान्यताओं का द्वंद्व मनुष्य पर बना रहता है। इसका एक पक्ष अतीत की स्मृतियों का धुर विरोधी होता है तो एक उसे मानव जाति की विकासयात्रा का संवाहक मानता है। एक उससे मुक्ति की आकांक्षा करता है तो एक उसे जीवन मानता है। आधुनिकता और परंपरा के इस द्वंद्व में जिन्हें लगता है परंपराएँ टूट रही हैं, मनुष्य आधुनिक हो रहा है और परंपराओं को भूलता जा रहा है उन्हें द्विवेदी जी के निबंध 'पंडितों की पंचायत' को अवश्य पढ़ना चाहिए। जहाँ वह भारतीय संस्कृति बनाम आधुनिक संस्कृति की टकराहट और भारतीय संस्कृति को मजबूत एक सूत्र में बांधने वालों के प्रयासों को देखकर कहते है "मेरे सामने छः हजार वर्षों की और सहस्त्रों योजन विस्तृत देश की विशाल संस्कृति खड़ी है, उसके इस वृद्ध शरीर में जरा भी बुढ़ापा नहीं है, वह किसी चिर नवीन प्रेरणा से परिचाचलित है। उसके मस्तिष्क में सहस्त्रों वर्ष का अनुभव है; लेकिन थकान नहीं है, उसकी आँखों में अनादि तेज झलक रहा है, पर आलस्य नहीं है! वह अपूर्व शक्ति और अनंत धैर्य को अपने वक्ष-स्थल में वहन करती आ रही है। उसने अपने विराट परिवर्तनशील दीर्घ जीवन में क्या-क्या नहीं देखा है? कुछ और देख लेने में उसे कुछ भी झिझक नहीं, कुछ भी हिचक नहीं है। जो लोग इस तेजोमय मूर्ति को नहीं देख सकते वही घबराते हैं, मैं नहीं घबरा सकता।" परंपराएँ टूटती नहीं है बल्कि नए बदलाव के साथ परिवर्तित होती है और यह बदलाव प्रकृति का नियम है। यदि मनुष्य परंपराओं को जड़ बनाने का प्रयास करेगा तो अवश्य एक समय बाद वह टूट जाएगी। इसलिए आधुनिकता और परंपरा के द्वंद्व से मनुष्य को बाहर निकलने की आवश्यकता है। तभी एक स्वस्थ, उर्जावान समाज बनाया जा सकता है। अन्यथा हमारी स्थिति पंडितों की इस पंचायत की तरह हो जाएगी जो पूरे भारतवर्ष में एक एकादशी व्रत की तिथि के निर्णय में पंचायत बैठा देता है और अपने कार्य में सफल भी होता है-"भारतवर्ष एक ही तिथि को व्रत और उपवास करने लगा, एक मुहूर्त में उठने-बैठने के लिए बद्धपरिकर हुआ; पर एक नहीं हो सका। उसकी कमजोरी केवल रस्मों और रवाजों तक ही सीमित नहीं थी, यह तो उसकी बाहरी कमजोरी थी। जातियों और उपजातियों से उसका भीतरी अंग जर्जर हो गया था, हजारों संप्रदायों में विभक्त होकर उसकी आध्यात्मिक साधना शतच्छिद्र कलश की भांति संग्रह हीन हो गई थी-वह हतज्योति उलका-पिंडकी भांति शून्य में छितराने कीतैयारी कर रहा था"। पंडितों की पंचायत जैसी स्थिति आज भी समाज में बनी हुई है। आज भी समाज अपनी भीतरी कमजोरियों से कई भागों में बटा हुआ है और हिंसा की स्थितियाँ बनी हुई है। वहीं बाहरी रूप से हम सभी एक राष्ट्र की भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं। ऐसे में आवश्यक है कि हम समाजकी भीतरी कमजोरियों, टकराहटों को पहले देखें और उन्हें समाप्त करने का प्रयास करें। त्योंहारों की तिथियों के एक्य से अधिक व्यक्ति के भीतर एकता भाव को बनाए। अन्यथा हम ऐसा समाज बना देंगे जो पूरी तरह व्यक्ति केंद्रित होगा, व्यक्ति भी ऐसा जो कई भागों (जातियों व धर्मों) में बटा होगा। हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध केवल विचारों का गुम्फन भर नहीं है बल्कि वह अपने निबंधों के माध्यम से दुनिया के यथार्थ को खोलते हैं। अमूमन सामाजिक तो कभी राजनीतिक भय से लेखक सत्य को स्पष्ट कहने से घबराता है और छद्म आवरण धारण कर लेता है लेकिन हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के साथ ऐसा नहीं था। उन्होंने मानव जाति की बुराइयों और कमजोरियों पर खुलकर लिखा। देवदारु निबंध में जहाँ वह जाति व्यवस्था पर प्रश्न करते है और व्यक्ति के व्यक्तित्व से अधिक जाति की पहचान के श्रेष्ठता बोध की सामाजिक प्रवृति के यथार्थ को उघारते हैं वहीं 'घर जोड़ने की माया' निबंध में हजारी प्रसाद द्विवेदी भारतीय समाज में श्रद्धा के अतिरेक पर प्रश्न खड़ा करते हैं जिसने उन सभी धार्मिक सुधारकों को ईश्वर बना दिया जो जीवन भर स्वयं ही उसके अस्तित्व पर प्रश्न खड़ा करते रहे। जिन्होंने आजीवन ईश्वरीय सत्ता का विरोध किया। वर्तमान समय में वही ईश्वरीय परंपरा के संवाहक बना दिए गए है। "जिन महापुरुष ने संस्कृत को कूपजल कहकर भाषा के बहते नीर को बहुमान दिया था, उसी की स्तुति में आगे चलकर संस्कृत भाषा में अनेक स्तोत्र लिखे गये और जिसने बाह्याचारों के जंजाल को भस्म कर डालने के लिए अग्नि-तुल्य वाणियाँ कहीं, उसकी उन्हीं वाणियों ने नाना बाह्याचारों की क्रियाएँ संपन्न की जाने लगी। इससे बढ़कर आश्चर्य क्या हो सकता है? कबीरोपासना पद्धति में सोने का, उठने का, दिशा जाने तूँबा धोने का, हाथ मटियाने का, मुँह धोने का, दातून करने का, जल में बैठने का, स्नान करने का, तर्पण करने का, चरणामृत देने और लेने का, जलपीने का, घर बुहारने का, चूल्हे में आग जलाने का, परसने का, अँचाने का तथा अन्य अनेक छोटे-छोटे कर्मों का मंत्र दिया गया है। ....श्रद्धा का अतिरेक ही तो सर्वत्र पाया जाता है। कबीरदास ने अवतारों और पैगम्बरों की पूजा की कड़े शब्दों में निंदा की। उनके शिष्यों ने श्रद्धा के अतिरेक में उन्हें जिस प्रकार भवफंद को काटने वाला समझकर स्तुति की, वह शायद किसी भी पीर-पैगम्बर के लिए ईर्ष्या की वस्तु हो सकती है.."। व्यक्ति को भगवान और विचार को अंतिम सत्य बनाए रखने की मनोवृति आज भी समाज में मिलती है। अति श्रद्धा या कहें की श्रद्धा का यह अतिरेक व्यक्ति और समाज के विवेक को शून्य बना देता है और फिर व्यक्ति आजीवन जिन विचारों का विरोध करता रहा अंत में उसी के बंधन में जकड़ जाता हैं। आज कबीरपंथ, दादूपंथ, रैदासपंथ, गाँधीवादी, लोहियावादी, आंबेडकरवादी आदि कितने ही सुधारक व विचारक भगवान बना दिए गए और वहीं उनके विचार नेपथ्य में भूला दिए गए हैं।

हजारी प्रसाद द्विवेदी का निबंध साहित्य व्यक्ति से लेकर समाज तक के मध्य आवाजाही करता है और जीवन के हर उस पहलू को निबंध का केंद्रीय विषय बनाता है जो मनुष्य के मनुष्य होने में बाधा उत्पन्न करता है। क्योंकि वह भारतीय समाज की जड़ों से जुड़े व्यक्ति रहे हैं इस कारण उनकी दृष्टि में एकांगीपन नहीं मिलता है बल्कि वह संपूर्ण परंपराओं के उज्ज्वल पक्ष पर भी लिखतें है उनके स्याह पक्ष पर भी। भारत को विश्व गुरु के संबोधन से आज से नहीं बल्कि हमारी परंपराओं में पहले से कहा जाता रहा है। इसका कारण हमारी भारतीय शिक्षा प्रणाली थी जो विविधताओं से भरी थी जो व्यक्ति अधिक समष्टि के विचार पर केंद्रित थी। लेकिन धीरे-धीरे सामाजिक परिवर्तन ने इसे समष्टि से व्यक्ति केंद्रित बना दिया जोमनुष्य के मानवीय विकास में बाधा बना। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी'हमारी राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली' निबंध में इसी बाहरी विविधताओं से भरी भारतीय शिक्षा प्रणाली के उत्थान और पतन को निबंध का केंद्रीय विषय बनाया है और गुरु की भारतीय परंपरा को भी उजागर किया जहाँ गुरु किसी एक जाति में नहीं बटा था बल्कि ब्राह्मण से लेकर शूद्र तक सभी भारतीय परंपरा में गुरु की भूमिका का निर्वाह करते आए हैं। इसका पूरा एक इतिहास आख्यान परंपराओं मिलता है। जहाँ जनक, कृष्ण, भीष्म, बुद्ध, महावीर, व्याघ, विदुर, संजय, सौति आदि नाम आते हैं जिन्होंने गुरु की भूमिका का निर्वाह किया। मध्यकाल तक आते-आते व्यापक परिवर्तन आया और हमारी शिक्षा प्रणाली लाभालाभ की शिक्षा प्रणाली बन जाती है। बाहरी हस्तक्षेप ने हमें हमारी शिक्षा प्रणाली ज्ञान विज्ञान से दूर कर दिया जबकि वहीं बाहर से आकर विदेशी अनुसंधान करता है और हमारी शिक्षा प्रणाली को दुरस्त करता रहा और आज भी कर रहा है। लेकिन हम आज भी उसी हस्तक्षेप को ढो रहे हैं। यह सत्य है कि हस्तक्षेप ने हमारे दायरे को बढ़ाया है लेकिन हमें अपनी परंपरागत शिक्षा प्रणाली ज्ञान-विज्ञान अनुसंधान से दूर भी कर दिया है जबकि हमें आधुनिक

शिक्षा के साथ ही हमारी पारंपरिक शिक्षा को सामंजस्य के साथ अपनाने की आवश्यकता है| साथ ही अपनी एक स्वतंत्र शिक्षा प्रणाली विकसित करने की आवश्यकता है। "अब समय आया है कि बाहरी हस्तक्षेप की उपेक्षा करके हम संपूर्ण उपलब्ध साधनों का उपयोग करके बदली हुई अवस्था के साथ अपनी शिक्षा-प्रणाली का सामंजस्य स्थापित करें। हमें पुराने साहित्य में इतने प्रकार के प्रयोग मिलते हैं कि किसी विशेष प्रथा को अपनी राष्ट्रीय प्रथा मानने का बंधन स्वीकार करने की जरूरत नहीं है।" यह संदर्भ इसलिए भी महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि आज भी भारतीय शिक्षा प्रणाली में ज्ञानार्जन का माध्यम अंग्रेजी भाषा है जिससे एक बड़ा वर्ग विशेष शिक्षा से दूर हो रहा है। हमारे पास आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएँ और अतिरिक्त हजारों क्षेत्रीय बोलियाँ होने के बावजूद आज भी हिंदी से अधिक अंग्रेजी राजभाषा के रूप में कार्य कर रही है और ग्रामीण क्षेत्र का युवा इसी अंग्रेजी से डरकर शिक्षा में आगे नहीं पढ़पा रहा है। आज़ादी के इतने वर्षों बाद भी अंग्रेजी का वर्चस्व हिंदी व उनकी क्षेत्रीय भाषाओं को प्रभावित कर रहा है। आज शिक्षा की जिन आधुनिक प्रणाली के साथ हम आगे बढ़ रहे हैं बेशक आज उसकी अपनी चुनौतियाँ है लेकिन जब हम इतिहास की ओर देखते हैं तो तब भी देशकाल वातावरण के अनुरूप चुनौतियाँ मौजूद थी। ऐसे में हमें सरल रास्ते को अपनाने की अपेक्षा उन चुनौतियों के समाधान पर कार्य की आवश्यकता है। तभी वर्तमान में हम परंपरा और आधुनिक शिक्षा के तालमेल से बेहतर शिक्षा व्यवस्था को बना सकेंगे। क्योंकि न परंपरा अपने आप में पूर्ण है न ही आधुनिकता। दोनों ही समय, काल और परिवेश में बदलती रहती है। जो आज आधुनिक है, कल वही परंपरा का हिस्सा बन जाएगी ऐसे में आवश्यक है कि परंपराओं को छोड़ने की अपेक्षा व्यक्ति और समाज सकारात्मक बदलाव के साथ उसे आगे लेकर बढ़ने की प्रवृति का विकास करें।

साहित्य को कभी समाज का दर्पण, पथ प्रदर्शक, लोकरंजक कहा गया था। मगर समय के साथ साहित्य और साहित्य लेखन में बदलाव आया। साहित्य सामाजिक से व्यक्ति दृष्टा की भूमिका में आने लगा। साहित्य के उद्देश्य भी समाज हित से व्यक्ति हित में परिवर्तित होने लगें और पुन:साहित्य कैसा होना चाहिए? किसके लिए होना चाहिए? उसके क्या उत्तरदायित्व है? इन विषयों पर विचार-विमर्श होना आरंभ हो गया। साहित्य सदैव से ही समाज का केंद्र रहा है तभी तो भारतीय से लेकर पाश्चात्य काव्यशास्त्र के अंतर्गत काव्य लक्षण, काव्य हेतु, काव्य प्रयोजन पर चर्चा होती है और हर देशकाल वातावरण में उसके संदर्भों पर पुन: विचार किया जाता है क्योंकि व्यक्ति, समाज, राजनीति और अर्थ कहीं न कहीं साहित्य को प्रभावित करता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भी अपने समय में साहित्य के इन्हीं प्रश्नों से जूझ रहे थे, वह 'सावधानी की आवश्यकता' निबंध में लिखते हैं और इन्हीं प्रश्नों के कारक व समाधान को निबंध का केंद्र बनाते है- "आज हमें ऐसे साहित्य की आवश्यकता है, जो हमारे युवकों में मनुष्यता के लिए बलि होने की उमंग पैदा करे, अन्याय से जूझने का उन्माद पैदा करे और अपने अधिकारों के लिए मिट जाने के लिए अकुंठ साहस का संचार करे।" 'मानवता' हर समय के साहित्य का केंद्रीय विषय है। यही है जो समाज को जीवंत और जीने योग्य बनाती है। साहित्य इसे बनाए और बचाए रखने का एक आधार स्तंभ है। जबकि वर्तमान समय में साहित्य लेखन राजनीतिक प्रलोभनों से प्रभावित होकर किया जा रहा है। यही कारण है कि आज के साहित्य की गूंज हमें आजादी के आंदोलन के समय लिखे गए साहित्य के समान प्रतीत नहीं होती है। यही कारण है कि आज का साहित्य जनता की चितवृति का साहित्य न होकर लेखक के चित्त का साहित्य बनकर रह गया है। जो जनता के भीतर आत्मविश्वास और चेतना का भाव पैदा करने में असफल हो रहा है। आज का साहित्य व्यक्ति केंद्रित व व्यक्ति पूजक साहित्य बनकर उभर रहा है। द्विवेदी जी ऐसे साहित्य के विरोधी रहे हैं क्योंकि उनके लिए साहित्य वही है जिसका एक व्यापक उद्देश्य है- "मनुष्य को अज्ञान, मोह, कुसंस्कार और परमुखापेक्षिता से बचाना ही साहित्य का वास्तविक लक्ष्य है।" आज के समय में केवल ज्ञानी व शिक्षित होना ही काफीनहीं है क्योंकि जो ज्ञान और शिक्षा आपके भीतर द्वेष, जातीय वैमनस्य, लोभ, स्वार्थ, घृणा और दूसरों के प्रति शोषण की मानसिकता को जन्म देती है। वह ज्ञान और शिक्षा समाज के किसी काम का नहीं होता है। ज्ञान और शिक्षा तो मानवता को जन्म देती है। परंतु आज स्थितियाँ एकदम विपरीत है। हजारी प्रसाद द्विवेदी का ज्ञान, शिक्षा और साहित्य के उद्देश्य पर किया गया यह प्रश्न आज भी उतना ही ज्वलंत है जितना इस निबंध को लिखते समय के काल व परिवेश में रहा होगा। आज का युवा घृणा, लोभ, क्रोध, अज्ञान, जाति, धर्म व दिशाहीनता के अभाव में अँधेरे की ओर बढ़ रहा है और अब साहित्य भी उसके पथप्रदर्शक की भूमिका नहीं निभा पा रहा है। आज का साहित्य समाज की भांति ही कई वर्गों और जातियों में विभाजित है जो एक दूसरे से अधिक श्रेष्ठ होने लिए प्रतिद्वंदिता कर रहा है, पुराने को ख़ारिज कर नए नरेटिव गढ़ रहा है और अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर रहा है। साहित्य,भाषा, धर्म, कला, संस्कृति यह सब मनुष्य को मनुष्य बनाने के साधन है। मनुष्य तो आदिम काल से ही अपनी जीवित रहने की जिजीविषा और शक्ति के बल पर अपने रास्ते तलाशता आ रहा है और आगे भी तलाशता रहेगा। आवश्यकता है तो सिर्फ उसमें मानवीय गुणों का विधान करते जाने का और ऐसे भारतीय समाज की खोज करना जो बाहर से तो विविधताओं से भरा हो पर भीतर से उसमें एकता बसती हो। उन्होंने मनुष्यता के गुणों को उदीप्त करने वाले साहित्य को ही साहित्य माना है और साहित्य के भीतर से उद्भूत मानवीयता के भाव को ही साहित्य का आनंद स्वीकारा है–"साहित्य वस्तुतः मनुष्य का वह उच्छलित आनंद है जो उसके अंतर में अँटाये नहीं अट सका था"। मानव सत्य, सच्चा साहित्यकार, मानवधर्म, साहित्य का मर्म आदि निबंधों में द्विवेदी जी ने साहित्य, कला, इतिहास, ज्ञान, धर्म, विज्ञान, ज्योतिष, गणित, खगोलशास्त्र, दर्शन आदि के मूल में मानवीय भावनाओं को केंद्रीयता दी है और कहा कि "साहित्य मानव-जीवन से सीधा उत्पन्न होकर सीधे मानव-जीवन को प्रभावित करता है। साहित्य में उन सारी बातों का जीवंत विवरण होता है, जिसे मनुष्य ने देखा है, अनुभव किया है, सोचा है और समझा है। जीवन के जो पहलू हमें नजदीक से और स्थायी रूप से प्रभावित करते है उनके विषय में मनुष्य के अनुभवों के समझने का एकमात्र साधन साहित्य है।" द्विवेदी जी के निबंध भारतीय इतिहास, संस्कृति, सभ्यता, मान्यताओं, टकराहटों, द्वंदों की यात्रा में मनुष्य के मनुष्य बने रहने की यात्रा है जो अतीत की कलुषता को तो उजागर करती है साथ ही उसमें प्रेम, मानवीय संबंधों को भी उजागर करती है जिसने आज भी भारतीय संस्कृति के गौरव और मान को जीवित बनाए रखा है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने लेखन व साहित्य का केंद्र मनुष्य को माना है कहा जा सकता है कि उनका तो संपूर्ण साहित्य ही मानवीय चेतना का साहित्य है। जिसके माध्यम से वह इतिहास, संस्कृति में मनुष्य की शक्ति व उसे मानवीय गुणों से सिक्त बनाए रखने के स्रोतों को उजागर करते हैं। जिनकी वजह से आज भी मानवीयता मरी नहीं है बल्कि मनुष्य के भीतर और बाहरी द्वंदों से टकराकर एक नया रास्ता तलाश रही है। वह कभी कुंठित तो कभी विक्षोभ में होने पर भी मानवीय गुणों से लबरेज है। 'कुटज' निबंध का कुटज इसी अदम्य जिजीविषा के साथ मनुष्य के आगे बढ़ने का प्रतीक है- कुटज क्या केवल जी रहा है? वहदूसरे के द्वार पर भीख माँगने नहीं जाता, कोई निकट आ गया तो भय के मारे अधमरा नहीं हो जाता, नीति और धर्म का उपदेश नहीं देता फिरता, अपनी उन्नति के लिए अफसरों का जूता नहीं चाटता फिरता, दूसरों को अवमानित करने के लिए ग्रहों की

खुशामदनहीं करता, आत्मोन्नति के हेतु नीलम नहीं धारण करता, अंगूठियों की लड़ी नहीं पहनता, दांत नहीं निपोरता, बगलें नहीं झाँकता। जीता है और शान से जीता है–काहे वास्ते, किस उद्देश्य से? कोई नहीं जानता। मगर कुछ बड़ी बात है। स्वार्थ के दायरे से बाहर की बात है। भीष्म पितामह की भांति अवधूत की भाषा में कह रहा है: चाहे सुख हो या दुःख, प्रिय जो मिल जाए उसे शान के साथ, हृदय से बिलकुल अपराजित होकर, सोल्लास ग्रहण करो। हार मत मानो!"। 'कुटज' को पढ़कर तो लगता है कुटज कोई ओर नहीं स्वयं आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी स्वयं हीहै। वह जीवन के जिन संघर्षों से जूझते हुए, आत्मसम्मान के साथ विपरीत स्थितियों में भी निरंतर आगे बढ़ते रहे जो मिला उसे सहज भाव से गले लगाया, कभी चाटुकारिता में विश्वास नहीं किया और जीवन में कभी हार नहीं मानी। यह सभी पहलू आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के वैयक्तिक जीवन का भी हिस्सा रहे हैं। ऐसे में कुटज हर उस संघर्षशील व्यक्ति का प्रतिनिधि बनकर आता है जो सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और वैयक्तिक दबावों से स्वयं को मुक्त कर स्वतंत्र और सहज रूप से अपने कर्तव्य का निर्वाह करता हुआ अपने रास्ते स्वयं तलाशता है। समाज में विषम परिस्थितियों में भी जीवन के प्रति सकारात्मक उर्जा, आशा और जीने की जिजीविषा को बनाए रखते हुए एक उदाहरण प्रस्तुत करता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के निबंधों में उनका व्यक्तित्व व वैचारिक आग्रह भी स्पष्टत: लक्षित होता है। अशोक के फूल, वसंत आ गया है, प्रायश्चित की घड़ी, घर जोड़ने कीमाया, कुटज, मेरी जन्मभूमि, हमारी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली, भारत वर्ष की सांस्कृतिक समस्या, भारतीय संस्कृति की देन, एक कुत्ता और एक मैना, नया वर्ष आ गया, जब कि दिमाग खाली है, वर्षा धनपति से घनश्याम तक, साहित्य में हिमालय की परंपरा, देवदारु, जीवेम शरद:शतम् , आत्मदान का संदेशवाहक: वसंत, दीपावली: सामाजिक मंग्लेच्छा का प्रतिमा पर्व, भारतीय फलित ज्योतिष आदि निबंध अपने विषय और कथ्य की दृष्टि अनूठे है। ऋतु, पर्व, त्यौहार, पुष्प, पादप, स्थान सभी विषयों पर लिखे निबंध व्यक्तिक से आरंभ होकर अतीत के खंडहरों तक पाठक को ले जाते हैं और वर्तमान की यथास्थिति के मध्य पाठक को सोचने और समझने के लिए छोड़ देते हैं। "राधावल्लभ त्रिपाठी के अनुसार "द्विवेदी जी के पूर्व भारतेंदु ने हिंदी निबंध को नाटकीयता से परिपूर्ण चुभते व्यंग्य और गुदगुदाते हास्य वाली एक शैली दी, बालकृष्णभट्ट ने उसमें बाणभट्ट के अलंकृत गद्य को उतारा, प्रताप नारायण मिश्र ने उसमें स्वछंदतावादी चेतना का संचार किया और लोक संस्कारों से भी उसमें जोड़ा; सरदारपूर्णसिंह ने आत्मा का अविकल आलाप प्रस्तुत करते हुए एक अप्रतिम लय और राग उसमें उपजाया। इसके अतिरिक्त बख्शीजी, शांतिप्रिय द्विवेदी, महावीरप्रसाद द्विवेदी, बद्रीनारायण चौधरी प्रेमधन, बालमुकुंद गुप्त आदि भी महत्वपूर्ण निबंधकार द्विवेदी जी के पहले हो चुके थे। फिर भी ललित निबंधे ने द्विवेदी जी को लेखनी से जिस पराकाष्ठा को हासिल किया, वह उनके पहले और बाद में अन्यत्र अगम्य रही। हिंदी में हजारी प्रसाद द्विवेदी का नाम ललित निबंध का पर्याय-सा बन चुका है। इसमें कोई संदेह नहीं कि ललित निबंध की एक विशेष शैली उन्होंने हिंदी को दी"।

****

सहायक ग्रंथ:-

1. तिवारी. रामचंद्र, हिंदी गद्य साहित्य का इतिहास(2014), विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
2. द्विवेदी हजारी प्रसाद, अशोक के फूल (2019), लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज
3. द्विवेदी हजारी प्रसाद, हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथमाला-3 साहित्य सहचर(1965), नैवेध निकेतन रविन्द्रपुरी, वाराणसी
4. सं. त्रिपाठी राधावल्लभ,हजारीप्रसाद द्विवेदी संचयिता(2001),महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय और वाणी प्रकाशन, दिल्ली
5.सं. डॉ धीरेंद्र वर्मा, डॉ ब्रजेश्वर वर्मा, श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी, डॉ रधुवंश, डॉ धर्मवीर भारती, हिंदी साहित्य कोश भाग-1 परिभाषा शब्दावली(2015), ज्ञानमंडल लिमेटेड
6.डॉ. अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली(2009), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

संदर्भ ग्रन्थ

1. सं. डॉ धीरेंद्र वर्मा, डॉ ब्रजेश्वर वर्मा, श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी, डॉ रधुवंश, डॉ धर्मवीर भारती, हिंदी साहित्य कोश भाग-1 परिभाषा शब्दावली, पृ.-344
2. डॉ. अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, पृ.-296
3. सं. त्रिपाठी राधावल्लभ, हजारीप्रसाद द्विवेदी संचयिता, पृ.-34
4. डॉ. अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, पृ.-296
5. डॉ. तिवारी. रामचंद्र, हिंदी गद्य साहित्य का इतिहास, पृ.-63
6. डॉ. तिवारी. रामचंद्र, हिंदी गद्य साहित्य का इतिहास, पृ.-64
7. डॉ. तिवारी. रामचंद्र, हिंदी गद्य साहित्य का इतिहास, पृ.-79
8. सं. त्रिपाठी राधावल्लभ, हजारीप्रसाद द्विवेदी संचयिता, तांडव और लास्य,पृ.-412
9. सं. त्रिपाठी राधावल्लभ, हजारीप्रसाद द्विवेदी संचयिता, तांडव और लास्य,पृ.-413
10. डॉ. तिवारी. रामचंद्र, हिंदी गद्य साहित्य का इतिहास, पृ.-79
11. सं. त्रिपाठी राधावल्लभ, हजारीप्रसाद द्विवेदी संचयिता, पृ.-35
12. द्विवेदी हजारी प्रसाद, अशोक के फूल, पृ.-13-14
13. द्विवेदी हजारी प्रसाद, अशोक के फूल, पृ.-15
14. द्विवेदी हजारी प्रसाद, अशोक के फूल, पृ.-16
15. द्विवेदी हजारी प्रसाद, अशोक के फूल, पृ.-14
16. सं. त्रिपाठी राधावल्लभ, हजारीप्रसाद द्विवेदी संचयिता, (पंडितों की पंचायत) पृ.-123-124
17. सं. त्रिपाठी राधावल्लभ, हजारीप्रसाद द्विवेदी संचयिता, (पंडितों की पंचायत) पृ.-121
18. द्विवेदी हजारी प्रसाद, अशोक के फूल, पृ.-28-29
19. द्विवेदी हजारी प्रसाद, अशोक के फूल, पृ.-56
20. द्विवेदी हजारी प्रसाद, अशोक के फूल, पृ.-39
21. द्विवेदी हजारी प्रसाद, अशोक के फूल, पृ.-43
22. डॉ. तिवारी. रामचंद्र, हिंदी गद्य साहित्य का इतिहास, पृ.-735
23. द्विवेदी हजारी प्रसाद, साहित्य सहचर, पृ.-3
24. सं. त्रिपाठी राधावल्लभ, हजारीप्रसाद द्विवेदी संचयिता, (कुटज) पृ.-99

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के साहित्य में राष्ट्रीय स्वाधीनता एवं क्रान्ति का स्वर

डॉ.सुनील
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर-143005

डॉ.रत्नेश कुमार यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाविभाग, जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय,साम्बा,जम्मू-कश्मीर

कमल दीप सिंह
(शोधार्थी)
पी.एच.डी.(शोधार्थी) हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाविभाग, जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय साम्बा,जम्मू कश्मीर

भारत में स्वाधीनता का प्रथम राष्ट्रव्यापी संग्राम 1857 ई. में हुआ | यह संग्राम 'भारतीय स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम' नाम से इतिहास में दर्ज हुआ| इसकी असफलता के बाद ब्रिटिश ताज का प्रत्यक्ष शासन भारतवर्ष पर स्थापित किया गया | इस बाहरी शक्ति से लड़ने और उसे पराजित करने के आगे कई प्रयास होने थे | क्रमश: काँग्रेस की स्थापना और गाँधीजी के आंदोलनों ने नरम दल में तो भगत सिंह,.चद्रशेखर आज़ाद जैसे क्रान्तिकारों ने गरम दल के रूप में स्वाधीनता का अविस्मरणीय कार्य किया |स्वाधीनता के नायकों को यह भली-भांति ज्ञान था कि भारतवर्ष की स्वतंत्रता के लिए सबसे आवश्यक है,भारतवासियों को उनके अस्तित्व से जोड़ना | कहीं यह अस्तित्व भूतकाल के गौरव के रूप में था 1 कहीं अपने सामर्थ्य को बताने के लिए था 1 इसका एक उद्देश्य अंग्रेजों की श्रेष्ठता को समाप्त कर भारत के कुंठित जनमानस में स्वाधीनता का नवीन संचार करना | यह कार्य सांस्कृतिक-नवजागरण द्वारा संभव था | साहित्य ने इसमें बढ़-चढ़कर भाग लिया | स्वाधीनता की कविताएँ लिखी गई 1 क्रांति के गीत गए जाने लगे 1 वर्ष 1882 ई. में बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय ने बांग्ला भाषा में उपन्यास लिखा जिसका नाम था 'आनंदमठ'| इस उपन्यास का केंद्र सन्यासी विद्रोह था | इसके एक गीत 'वंदेमातरम्' ने सम्पूर्ण भारतवर्ष के लोगों को क्रांति का गीत दिया | यह बात सिद्ध करती है कि कैसे कविताएँ क्रांति करने वालों का आलंबन बना करती हैं, साथ ही वे लोगों के हृदय में क्रांति को जागृत करने का भी कार्य करती है| 1882 ई. में लिखे गये इस गीत का भाव आज भी अपने शब्दों द्वारा हर पीढ़ी को राष्ट्र के महत्त्व और उस पर उत्सर्ग की बात करता है | वंदेमातरम् के उद्घोष से कितने ही क्रांतिकारी सहर्ष राष्ट्र वेदी पर अपना बलिदान दे देते थे | भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु जैसे उदाहरण हमारे सामने हैं | इसी दौर में हिंदी के लेखक भारतेंद हरिश्चद्र अपनी रचनाओं के माध्यम से कहीं प्रत्यक्ष तो कहीं परोक्ष रूप से पराधीन भारत की दुर्दशा जन मानस के बीच रख रहे होते हैं |निज भाषा एवं निज संस्कृति को अपनाने का उनका आह्वान राष्ट्रीय चेतना को जगाने का कार्य करता है | अत:कविताओं ने राष्ट्रीय चेतना के विस्तार को भाषा बंधनों से आगे जाकर कार्य किया है | हिंदी में भी राष्ट्रीय चेतना की कविताएँ लिखी गई |हिंदी मेंराष्ट्रीय -सांस्कृतिक चेतना के लेखकों में मैथिलिशरण गुप्त,रामधारी सिंह दिनकर,सियाराम शरणगुप्त,जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद,केदारनाथ मिश्र प्रभात,माखनलाल चतुर्वेदी,सुभद्राकुमारी चौहान, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आदि हैं | स्वाधीनता एवं क्रांति का साहित्यवह साहित्य है,जिसमें भारतवर्ष की पराधीनता की दुर्दशा,स्वाधीनता के विचार,क्रांति,भारत के गौरवशाली इतिहास को सामने प्रस्तुत करते हुए भारतीय जनमानस में सदियों से व्याप्त कुंठित मानसिकता का अंत करना है | यह साहित्य जहाँ एक ओर समाज के सभी वर्गों को स्वाधीनता की क्रांति में कूदने को कहता है,वहीं यह हमारे महापुरुषों की सत्य गाथा को गाते हुए भारतवासियों तक उनके सन्देश को पहुँचाता है | इसी कार्य में बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का साहित्य अपना मुख्य स्थान रखता है | वे क्रांति एवं स्वाधीनता के लेखक बनकर सामने आते हैं | प्रस्तुत शोधालेख बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के साहित्य में राष्ट्रीय स्वाधीनता एवं क्रांति के विचार पर केन्द्रित है |बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का जन्म 1889ई. को हुआ था। द्विवेदी युग के इस कवि की हिंदी साहित्य में एक अलग ही पहचान है।अपने साहित्य में नवीन जी ने राष्ट्रीयता को मुख्य स्थान दिया।एक ओर जहां वे अपने समय के क्रांतिकारियों तिलक,गांधी,नेहरू,आदि से प्रभावित थे,वहीं अपने समय के साहित्यकारों में वे माखनलाल चतुर्वेदी,गणेश शंकर विद्यार्थी,मैथिलीशरण गुप्त के जीवन से अधिक प्रभावित थे। गणेश शंकर विद्यार्थी का तो उसके जीवन में विशेष संबंध रहा है।वे स्वयं कहते हैं-"मैं अपने विषय में क्या कहूं?मेरे जीवन में गणेश जी अधिक घुले मिले हैं,उनके चरणों में बैठकर कुछ सीखने,कुछ समझने,कुछ लिखने का पाठ मैंने पढ़ा |" आगे चलकर गणेश शंकर विद्यार्थी की मृत्यु के बाद उसके पत्र 'प्रताप' का संपादन बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' द्वारा किया गया। नवीन जी राष्ट्रीय आंदोलनों में भाग लेने वाले लेखक थे, उन्होंने लेखनी के साथ- साथ अपने आप को भी स्वाधीनता की अग्नि में झोंक दिया था | अपने जीवन काल में वे छहबार जेल गए| जिसमें प्रथम बार 1921में असहयोग आंदोलन के समय वे जेल गए अंतिम बार के 1942में जेल गए।अपनी जेल यात्रा में उन्होंने अपना अधिकांश साहित्य रचा।अपनी रचनाओं के माध्यम से वे युवाओं को राष्ट्र सेवा की प्रेरणा देते रहते थे| राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य को बताते हुए वे उसके पूरा करने की बात करते है 1 यह कर्तव्य सभी भारतवासियों का समान रूप से होना चाहिए-

"गौरव स्वदेश का बढ़ता ही चला गया
राष्ट्र हित राष्ट्र गीत गाता ही चला गया।
काव्यका नवीन था प्राचीन राजनीति का
अंत तक फर्ज वो निभाता ही चला गया।"[1]

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की काव्य कृतियों में कुंकुम(इसकी राष्ट्रीय चेतना की कविताएँ सावधान,विप्लव गायन,पराजय गीत एवं शिखर पर हैं)रश्मिरेखा,अपलक,क्वासी,विनोबा स्तवन इनके स्फुट काव्य संकलन तथा उर्मिला,प्राणार्पण इसके प्रबंध काव्य हैं। हम विषपायी जनम के इनका कविता संग्रह वर्ष

1964ई. में प्रकाशित हुआ। नवीन जी के काव्य में जहां राष्ट्रीयता प्रमुख रूप से दिखाए देती हैं वहीं उनके साहित्य में प्रकृति चित्रण,मानवीय,प्रेम की भी अभिव्यक्ति देखने को मिलती हैं | इनकी कविताएं राष्ट्रीय चेतना एवं क्रांति की कविताएं हैं। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' स्वाधीनता का स्वप्न देखने वाले लेखक थे | जो अपनी कविताओं के माध्यम से स्वाधीनता और राष्ट्रीय आन्दोलन को स्वर देते हैं | उनकी रचनाओं में हमें जो विप्लव और विद्रोह का स्वर सुनाई देता है, वह भारत की पराधीनता को स्वाधीनता में परिवर्तित करने की गूंज है 1 यह गूंज एक क्रांति एवं विद्रोह है | जिससे भारत के जनमानस को जगाया जा सके 1 ऐसी क्रांति उत्पन्न हो जिससे भारत वर्ष को पराधीन रखने वाला का समूल नाश हो एवं भारत वर्ष स्वाधीन हो सके 1 इसके लिए बलिदान देने के लिए भारत के कई वीर तत्पर हैं |इसी विप्लव को उनकी निम्न चर्चित पक्तियों में दर्शाया गया है-

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ,उथल पुथल मच जाए
एक हिलोर इधर से आये एक हिलोर उधर से आए
प्राणों के लाले पड़ जाएँ,त्राहि त्राहि रव नभ में छाए
नाश और सत्यनाश का धुवांधार जग में छा जा|[2]

नवीन जी धरा प्रेमी व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे | भारतमाता को पराधीनता की बेड़ियों में देख कर उसके भीतर का भाव उसकी रचनाओं में उभरता है |वे सभी को संकेत करते हुए कहते हैं कि स्वदेश कीइस दुर्दशा पर भला किसका मन क्रांति के भाव से नहीं भरेगा एवं कौन ऐसा होगा जिसकी आँखें इस दुर्दशा को देख सकेंगी| अपने समाज एवं राष्ट्र की इस दुर्गति पर सभी भारतीयों में क्रांति का संचार होना चाहिए | यह क्रांति ही राष्ट्र की स्वतंत्रता का आलंबन बनेगी |जिस भूमि को हमारे ग्रन्थ स्वर्ग से भी प्रिय बताते हैं क्या हम भारतवासी उसकी इस दशा को देख सकते हैं | जिस भूमि को हम माता कहते है उस पर दुष्टों ने अपने कब्ज़ा कर लिया है 1 पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े इस राष्ट्र को देखकर उसके समाज को क्रांति के लिए आगे आना चाहिए 1 उनकी माता समान भूमि दुष्टों द्वारा दूषित हो रही है 1 उसके भीतर इसकी पीड़ा होनी चाहिए 1

स्वर्गादपि गरीयसी,प्यारी जन्मभूमि का पल्ला
खींचा है दुष्टों ने बोला है स्वदेश पर हल्ला
कौन हृदय है जो कि न उबले निज समाज की क्षति में
कौन आँख है देख सके जो माँ को इस दुर्गति में?[3]

अग्रेजों को रावण के समान बताते हुए लेखक अंग्रेजों के भारत में साम्राज्य स्थापन और भारत की स्वाधीनता में भारतीय ध्वजा के फहराने को अंकित करते है | जब अंग्रेजों का भारत से अंत हुआ,तब भारत में स्वाधीनता की पताका लहराई गई | स्वाधीनता की यह पताका कई बलिदानों के बाद हमको प्राप्त हुई है | इस काव्यांश में लेखक अंग्रेजों के भारत पर कब्जे के बाद उसकी ध्वजा एवं स्वाधीनता के बाद भारत की ध्वजा की बात करता है | कितने ही क्रांतिकारियों का स्वप्न स्वाधीनता प्राप्त करना रहा है 1 उसके बलिदान द्वारा ही अंग्रेजों का ध्वज हटकर भारत माता का ध्वज आकाश में फहराया जा रहा है 1

ये फहराई थीं उस दिन भी /जब रावण का ब्याह हुआ
और आज भी फहराती है /जब रावण का दाह हुआ |[4]

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' जी ने अपनी रचनाओं में क्रांति का आह्वान किया है | वे क्रांति के कवि भी कहे जा सकते हैं | क्रांति ही है जिसके माध्यम से भारतीय समाज को जागरूक किया जा सकता है और भारत को स्वाधीन किया जा सकता है | इसी विचार को नवीन जी अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त करते हैं | वे क्रांति को भारत में बुलाते हैं और क्रांति भारत की गली- गली में विचरे इसका आह्वान भी करते हैं | क्रांति भारतीय जन समुदाय की निद्रा के साथ- साथ चली आ रही परिपाटी का भी अंत करने का सामर्थ्य रखती है,जिससे पराधीनता की रात्रि समाप्त होकर स्वाधीनता का सूर्य भारत धरा पर उदय हो | इसके लिए क्रांति की आवश्यकता है| इसके लिए वे क्रांति के भाव का जन जन में उतरे ऐसा विचार करते हैं 1 घर-आँगन गली में आई क्रांति भारत माता को पराधीनता की बेड़ियों से स्वतंन्त्र करा सकती है

आओ क्रांति,बलाएँ ले लूँ,/अनाहूत आ गई मली
बास लरो ,मेरे घर-आँगन /विचरो मेरी गली गली
सड़ी गली परिपाटी मेरी /इसे भस्म कर तुम जाओ|[5]

भारतीय समाज में स्त्री को देवी का रूप माना गया है | वह अपने अन्य रूपों के साथ-साथ योद्धा भी है | एक यौद्धा के रूप में अपनी रचना उर्मिला में बालकृष्ण शर्मा नवीन जी स्त्रियों से क्रांति की धनुष सँभालने का आह्वान करते हैं | रानी लक्ष्मीबाई के रूप के हम ऐसा की शौर्य 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में देख चुके हैं | इसी पर सुभद्राकुमारी चौहान की बहुचर्चित कविता बुंदेलों हर बोलों के हमने सुनी कहानी थी...| सबने पढ़ी है | स्त्री समाज से इसी प्रकार के रण-चंडी रूप की अपेक्षा नवीन जी निम्न पंक्तियों में कर रहे हैं, जिससे समाज की आधी आबादी भी स्वाधीनता की क्रांति से जुड़े 1 वीरांगना स्त्रियाँ राष्ट्र स्वाधीनता के यज्ञ में अपना योगदान दे 1 इसका आह्वान नवीन जी अपनी काव्य-पंक्तियों में करते हैं 1 इस राष्ट्र की स्त्रियों को अपनी वीरता को दिखाते हुए राष्ट्र पर बलिदान होना है 1 कोई उनको कायर न कहे न कोई उनको कोमल भाव वाली समझे वे समय आने पर चंडी का रूप भी धारण करती है -

कहे न कोई आर्य देश की ललनाएं कायर हैं
दिखला दो तुम हृदय तुम्हारे मृदु है पर तत्पर हैं |
आर्य पुत्रियों रण-चंडी बन थामें निज धनु-डोर|[6]

स्वाधीनता के लिए जो क्रांति भारतवर्ष में चल रही थी | उसमें 1942 के दौर में करो या मरो के नारे ने आर-पार की जंग ला दी थी | अब भारतीय जनमानस क्रांति के माध्यम से इस अंग्रेजी साम्राज्य के अँधेरे का अंत करने के लिए प्रतिबद्ध हो चुकी थी | नवीन जी कहते हैं कि क्रांति अब इतनी तेज़ प्रकाश वाली हो चुकी है कि वो अपनी ज्योति द्वारा इस अधेरे को खत्म कर सकती है | वो अंग्रेजों के साम्राज्य का समूल नाश कर सकती है | अंग्रेजों के आने के बाद भारत वर्ष में जो अँधेरा छाया है उस अँधेरे को समाप्त करते हुए यह क्रांति अब भारत में अपनी ज्योति दिखा रही है 1 नवीन जी अपनी पंक्तियों में भी इसी का आह्वान करते हुए लिखते है -

अपने भस्मक तेज़ पुंज से कर दे क्षण में क्षार इन्हें
गर्व खर्व कर दे इस तम का,आ,तू अपनीज्योति दिखा।[7]

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' हिंदी साहित्य के ऐसे लेखक हैं,जिनके साहित्य ने लोगों के भीतर क्रान्ति की भावना को उत्पन्न किया | युवकों को अपनी शक्ति और स्वाधीनता की चेतना का परिचय नवीन जी ने अपनी कविताओं के माध्यम से करवाया | नवीन जी स्वयं क्रांतिकारी रहते हुए कई बार जेल भी गये | क्रांतिकारियों के विद्रोह पर उन्होंने कई कविताएँ लिखी | उनकी राष्ट्रीय चेतना वाली कविताओं के केद्र में विद्रोह एवं विप्लव ही रहा है | बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने अपनी साहित्य रचनाओं के माध्यम से समाज में स्वाधीनता की भावना को फैलाने का कार्य किया | नवीन जी के इस सामाजिक अवदान के बारे में ही लिखा गया है-

नवीन ने बोध करवाया कि तुम्हारे भीतर ही अनल छिपा है | तत्कालीन युग में इस राग को गाने का समय आ गया है | विद्रोह में आस्था रखने वाले कवि ने स्वाधीनता की चेतना उत्पन्न करते हुए युवकों को उनकी शक्ति का परिचय करवाया |[8] बालकृष्णशर्मा 'नवीन' ऐसे साहित्यकार रहे हैं जिनके साहित्य में स्वाधीनता और क्रांति की कविताएँ प्रमुखता से रची गई | अपने योगबोध को समझते हुए उन्होंने अपने साहित्य में भारतवर्ष की स्वाधीनता का गायन और क्रांति का सशक्त आवाहन किया | उनकी कविताएँ अपने युग की संवेदनाओं को आगे ले जाती हुई रचनाएँ हैं | बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' को उसके क्रांति एवं विप्लव की कविताओं के लिए सदैव स्मरण किया जायेगा 1इस प्रकार बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' हिंदी साहित्य में द्विवेदी युग में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक धारा के एक महत्वपूर्व कवि हैं | इनकी रचनाएँ विषय वैविध्य में भी अनुपम हैं | अपने रचनाकाल की परिस्थितियों को अपनी रचनाओं में स्थान देने में नवीन जी अग्रणीय कवि हैं | भारत की स्वाधीनता का स्वप्न अपनी रचनाओं में रचने वाले नवीन जी अपने समकालीन लेखकों में माखनलाल चतुर्वेदी से सर्वाधिक प्रभावित थे | इनके समकालीन लेखकों में राष्ट्रीय चेतना के महत्वपूर्व कवि हुए | माखनलाल चतुर्वेदी की रचना 'पुष्प की चाह' हो या जयशंकर प्रसाद का अपने नाटकों के माध्यम से भारत के गौरवपूर्ण इतिहास को सामने लाना हो | उनका लिखा गीत 'हिमाद्री तुंग...स्वतंत्रता पुकारती |' स्वाधीनता का गीत है | इसी प्रकार मैथिलिशरण गुप्त ने भारत-भारती में भारत के गौरव को दर्ज करते हुए उसकी वर्तमान स्थिति पर विचार'हम क्या थे क्या हो गये क्या होंगें अभी आओ मिलकर विचारे यह समस्याएं सभी'करने की बात की है| इसी धारा में श्यामनारायण पाण्डेय द्वारा लिखित हल्दीघाटी काव्य भारतीय इतिहास के महान योद्धा महाराणा प्रताप के शौर्य गाथा द्वारा युवा वर्ग में क्रांति का संचार करने का कार्य करता है| इन सभी लेखकों के बीच बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने अपने साहित्यिक अवदान एवं स्वाधीनता आन्दोलन में सक्रिय भागीदारी द्वारा ये भी सिद्ध किया कि वे केवल कलम से ही अपने स्वाधीनता और क्रांति के स्वप्न को लोगों तक नहीं पहुंचाते हैं बल्कि स्वयं भी स्वाधीनता के आंदोलन में क्रांति के मशाल लेकर चलने वाले लेखक रहे हैं | उनका विचार एवं आचरण दोनों एक धरातल पर उपस्थित दिखाई देते हैं | यह उनके व्यक्तित्व की विशेषता ही है|

****

संदर्भ-ग्रंथ

1श्रीकुंजबिहारी वाजपेयी,तस्वीर तुम्हारी है,बालकृष्ण शर्मा नवीन के प्रति,पृष्ठ 87
2 हम विषपायी जन्म के'विप्लव गान',पृष्ठ 426
3 उर्मिला, पृष्ठ 41
4 स्वाधीनता की चेतना और बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का साहित्य
5 प्रलयंकर क्रांति, 22 वीं. कविता छंद 3
6 उर्मिला,पृष्ठ 40
7 नवीन–गहन तमिस्रा की परीखा, काव्य रचनावली, भाग 4, पृष्ठ 1225
8 क्रांतिकारियों को ध्वनियों का नाशक ,विद्रोह का रूप और नल राग स्रष्टा कहकर संबोधित किया, पृष्ठ 138

मध्यकालीन भक्ति आंदोलन और कबीर की कविता

डॉ.अभिलाष कुमार गोंड
सहायक प्रोफेसर
हिंदी साहित्य विभाग क्षेत्रीय केंद्र, कोलकाता
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा मो.8090613455

मध्यकाल का महत्त्व जितना इतिहास में है उतना ही साहित्य में भी, परंतु जब हम मध्यकाल पर बात करते हैं तो बहुत खींच ले तरीके से कुछ घटनाओं की परिधि में घूमते हुए बहुत से बिंदुओं को या तो छोड़ देते हैं या उसे नकारते हुए आगे बढ़ जाते हैं। भक्ति आंदोलन के संबंध में भी इसे देखा जा सकता है। कहने का अभिप्राय है कि भक्ति आंदोलन की शुरुआत को लेकर भले ही अनगिनत भ्रांतियां मौजूद हो परंतु विचारकों ने इसे चुनौती के साथ देखते हुए इसके सार्थक व्याख्या करने का प्रयास किया है। भक्ति काल के संबंध में यह प्रचलित धारणा है कि सर्वप्रथम दक्षिण के अलवार तथा नयनार संतों द्वारा ही भक्ति को भक्ति को प्रसारित किया गया। बारहवीं शताब्दी के आरंभ में रामानंद द्वारा आंदोलन दक्षिण भारत से उत्तर भारत में कठिन दौर का सामना करना पड़ा।। इस आंदोलन को चैतन्य महाप्रभु, नामदेव, तुकाराम, जयदेव जैसे कवियों ने आगे बढ़ाते हुए बहुत सी छोटी बड़ी बातों का ध्यान रखा। जिसके कारण भक्ति आंदोलन अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु समाज के सभी वर्गों वर्गों के साथ आगे बढ़ रहा था। बहुत से ऐसे प्रश्न भी खड़े होते हैं जिन प्रश्नों पर विचार किए बिना ना तो हम भक्ति आंदोलन को ही समझ सकते हैं और ना ही भक्ति के विचार को इन सभी बिंदुओं को समझने के लिए आवश्यक हो जाता है कि भक्ति आंदोलन के दौर के महत्वपूर्ण कवि हस्ताक्षर कबीरदास पर विचार किया जाए। हिन्दू धर्म एवं समाज में सुधार में समन्वय स्थापित करना भी संत काव्य का उद्देश्य था। कबीर का आविर्भाव इतिहास में तब हुआ जब सामंती सत्ता मजबूती से अपना प्रभाव स्थापित कर चुकी थी। परंतु इसके साथ ही पूंजीवादी समाज धीरे-धीरे उभरना शुरू हो रहा था यही कारण है कि बहुत से विचारको ने कबीर के समय को संक्रांति काल के रूप में भी देखने का प्रयास किया है।

एक समग्र राष्ट्र के रूप में भारत की पहचान बनती है मध्यकाल के 'भक्ति आन्दोलन' से और आधुनिक युग के 'नवजागरण' से यही दोनों वे आंदोलन थे जिसने भारतीय समाज को भीतर तक प्रभावित किया। इस समय की स्थापनाओं ने परम्परा से चली आती धारणाओं को एक क्रांतिकारी तर्कों के द्वारा खारिज करना शुरू किया। मध्यकाल की यह युगांतकारी महान घटना ही भक्ति आन्दोलन का उद्भव तथा प्रसार का कारण रहीं। इस आन्दोलन ने पहली बार विशेष भूभाग के निवासियों जिसमें साधारण जनों और समग्र राष्ट्र की शिराओं तक आन्दोलन को विस्तार दिया। मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन पूरी शक्ति के साथ उभरते हुए धार्मिक-सांस्कृतिक आन्दोलन के रूप में सामने आया। अनेक विचारकों ने उसके मूल में धार्मिक चरित्र होने के नाते उसकी तुलना हिंदी की प्रगतिशील धारा से की है। परंतु उन्होंने इस युग की कविता के सामाजिक अंतर्वस्तु की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया उनका मानना था कि किसी युग के अंतर्विरोधों तथा उनके पीछे की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक शक्तियों को भी न पहचानने के अनगिनत दोष हैं उसे मात्र एक तक सीमित करके देखने से न तो कविता के साथ न्याय हो सकता है और न ही युग की समुचित मांग की ही पूर्ति हो सकती है। क्योंकि कविता अपने युग तक नहीं बल्कि उससे आगे के तमाम विमर्शों को लेकर बढ़ती है। यही कारण था कि भक्तिकाल अपने प्रत्येक क्रियाकलापों के मूल में धर्म को केन्द्रीय करते हुए कभी आगे बढ़ता है तो कभी मुक्ति के नवीन विकल्प भी सुझाता है। मध्ययुग में

उभरकर सामने आने वाला कोई भी अभियान चाहे वह जनतांत्रिक अभियान ही क्यों न हो धर्म को माध्यम बनाकर आगे बढ़ता है। शिवकुमार मिश्र यूरोप के महान सुधार आन्दोलन का उल्लेख करते हुए कहते हैं ''मध्ययुग ने धर्म-दर्शन के साथ विचारधारा के अन्य रूपों, दर्शन, राजनीति, विधिशास्त्र को जोड़ दिया, और उन्हें धर्म दर्शन की उपशाखाएँ बना दिया। इस तरह उसने हर सामाजिक और राजनीतिक आन्दोलन को धार्मिक जामा पहनने के लिए विवश किया। आम जनता की भावनाओं को धर्म का चारा देकर और सब चीजों से अलग रखा गया। इसलिए कोई भी प्रभावशाली आन्दोलन आरम्भ करने के लिए अपने हितों को धार्मिक जामे में पेश करना आवश्यक था।''[1] इसी भक्ति आन्दोलन ने भारत में अलग-अलग मतों को जन्म दिया, सम्प्रदायों को जन्म दिया। इसके बावजूद भी भक्ति की शाखाओं और उपशाखाओं के बीच भक्ति आन्दोलन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आन्दोलन जन-साधारण से शुरू होकर सामाजिक कट्टरपनता के विरूद्ध जनसाधारण को सचेत किया परन्तु जैसे-जैसे समय बीतता गया जनसाधारण के स्थान पर उच्चवर्गीयों ने इस पर अपना आधिपत्य स्थापित करना शुरू कर दिया और आन्दोलन को कमजोर करने के लिए इसे अपनी तरह का बना लिया। जिस व्यापक जागरण के साथ भक्ति आन्दोलन का उदय हुआ है वह अकारण नहीं है इसमें बरसों से दबी कुचली जनता का विद्रोह भी दिखता है। जनता की व्यापक भागीदारी के कारण ही यह आन्दोलन पहला जन आन्दोलन का रूप लेता है, भले ही उसकी मूल संवेदना भक्ति पर खड़ी हो लेकिन इसकी पृष्ठभूमि सामंती शोषण से त्रस्त जनता के भीतर पनप रहे विद्रोह में देखी जा सकती है। यह एक ऐसा आन्दोलन है जिसका मुखौटा भक्ति का है और उसके पीछे छिपा चेहरा उस विशाल जन आन्दोलन का जो भक्ति की अगुवाई में पूरी शक्ति के साथ आगे बढ़ता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जब अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्ति की उत्पत्ति का कारण बताते हुए राजनीतिक उलटफेर के पीछे हिन्दू जनसमुदाय की भावना को देखने का प्रयास शुक्ल जी ने भी किया। यह बात आंशिक रूप से सत्य हो सकती है लेकिन पूर्णतः नहीं, इस आन्दोलन के साथ जनसाधारण के दबे प्रश्नों को भी अभिव्यक्ति मिलती और सामंतवाद, जातिव्यवस्था, धार्मिक रूढ़ियों के खिलाफ पहली बार जनसामान्य खड़ा होता है और इसे शक्ति मिलती है दक्षिण से चले आ रहे भक्ति आन्दोलन से और भक्ति-आन्दोलन सम्बन्धी अपनी इस चर्चा को हम भी इसके धार्मिक या भक्ति-परक पहलुओं की अपेक्षा उसके सामाजिक निहितार्थों पर ही केन्द्रीत करना चाहेंगे ताकि तीन-सौ वर्षों से भी अधिक के इसके प्रवाह को सामाजिक निहितार्थों के आलोक में वस्तुनिष्ठ तरीके से जान और समझ सकें।मध्यकाल के इस विशिष्ट दौर में समाज के निचले तबकों के जातियों के बीच से संतों-भक्तों की एक शानदार परम्परा सामने आई, मध्यकाल से आज तक हमें देखने को नहीं मिलती है और दूसरी बार इसी तरह का जनआन्दोलन आधुनिक काल में दिखता है। क्या कारण रहा होगा इन संतो-भक्तों में अधिकतर कामगर वर्गों से संबंधित थे। यह एक अलग शोध का विषय है। लेकिन इसके बावजूद भी मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन ने एक कामगर वर्ग के बीच से 'कबीर' को जन्म दिया और कबीर जिसकी सांस्कृतिक चेतना को हम उनकी रचनाओं में मूर्त होते देखते हैं, वह भारतीय संस्कृति की रूढ़िबद्ध धारणा का तिरस्कार करती दिखती है। सामाजिक गतिशीलता के कारण जिन दिनों उच्चतर मनुष्यत्व की अवधारणा आकार ले रही थी, उन्हीं दिनों इसके विरोध में धार्मिक कट्टरतावाद भी नंगा रूप धारण कर रही थी। इसपर कबीर कहते हैं -

''संतन जात न पूछो निरगुनियाँ
साध बाभन साध छत्री, साधै जाती बनियाँ
साधन माँ छत्तीस कौम है, टेढ़ी तोर पुछनियाँ
साधै नाऊ साधै धोबी, साध जाति है बरियाँ
साधन माँ रैदास संत हैं, सुपच ऋषी सो भँगियाँ
हिन्द-तुर्क दुई दीन बने हैं, कछू नहीं पहचानियाँ ''[2]

बौद्ध धर्म के साथ भक्ति आन्दोलन भारतीय सामाजिक चेतना का दूसरा क्रांतिकारी था। बौद्ध धर्मावलम्बी हिन्दू धर्म से विद्रोह करके बाहर निकल चुके थे। जबकि भक्तों ने उसी हिन्दू धर्म के भीतर रहकर सुधार करने का प्रयास किया। कबीर के ये पद बहुत कुछ बया करते हैं, नादानों संतों की जाति क्या पूछते हो साधु ब्रहमण भी हैं और क्षत्रिय भी और बनिये भी जिन्हें ज्ञान है सभी साधू हैं। कबीर पीड़ा और कल्पित सुख में समान रूप से तन्मय हो जाने वाले साधक कवि थे। पीड़ा का यथार्थ उनके लिए सुख की कल्पना तक पहुँचने का ही एक सोपान था। कबीर अपने भीतर की समूची तन्मयता और तड़प के साथ बाहर आते हैं और गहरे आवेग से सामाजिक पाखण्ड पर प्रहार करते हैं। कबीर अपने दोहों के माध्यम से सामाजिक क्रांति के प्रणेता के रूप में दिखते हैं। मध्यकाल के किसी और कवि ने समाज को उस तरह नहीं देखा जिस तरह कबीर ने देखा और उसे खुली चुनौती दी। समूचा संत काव्य यूं तो मध्ययुग की वर्चस्वशाली संस्कृति के बरक्स एक नई तरह के आत्मबोध का स्वर लेकर प्रकट हुआ था लेकिन उसमें कबीर संभवतः अकेले ऐसे कवि थे जो अपने उद्धत आत्मभिमान के साथ समाज के सामने खड़े हो सके थे। यह कबीर का अपने से बाहर निकलना था- अपनी समूची तड़प और तन्मयता के साथ। यहाँ कबीर अपने समय और यथार्थ के साथ तन्मय हो उठते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने काफी समय पहले यह संकेत किया था कि, कबीर के पदों में संबोधन बहुत महत्वपूर्ण हैं। संबोधन के द्वारा ही उनके कथ्य की जानकारी मिलती है कि वो क्या कहना चाहते हैं और उसका निष्कर्ष क्या है ? कबीर जिस सम्प्रदाय के साधक को संबोधित करते हैं, उसी के तर्कों, उसी की शब्दावली से पहले उसे तोड़ते हैं उसके पश्चात् अपना मत देते हैं।

ई माया रघुनाथ की बौरी, खेलन चली अहेरा हो।
चतुर चिकनियाँ चुनि-चुनि मारे, काहु न राखे नेरा हो।
मौनी-बीर-दिगंबर मारे, ध्यान धरते जोगी हो।
जंगल में के जंगम मारे, माया किन्हहुँ न भोगी हो।
वेद पढ़ते वेदुआ मारे, पुजा करते सामी हो।
अरथ विचारत पंडित मारे, बाँधेउ सकल लगामी हो।
सिंगी रिषि बन भीतर मारे, सिर ब्रह्मा का फोरी हो।
नाथ मछंदर चले पीठि दै, सिंहलहू में बोरी हो।
साकट के घर करता-धरता हरि भगतन की चेरी हो।
कहहिं कबीर सुनहु हो संतो, जौं वावै तौं फेरी हो।[3]

कबीर ने अपनी पुरी कविताई में जिन प्रतीकों, बिम्बों से जगत को देखने का प्रयास किया है वह ठोस सामाजिक यथार्थ के धरातल पर खड़ा है। यह कहना गलत न होगा कि उन्होंने भयानक यथार्थ को अनावृत किया है। कबीर का दार्शनिक सच उनके इस भाषा और प्रतीकों से होकर गुजरता है। कबीर के दर्शन में वह शून्य भी, ठोस सामाजिक सच्चाई में अभिव्यक्ति होता है यह आकस्मिके नहीं है कि कबीर ने अपने दर्शन में 'कथनी और करणी' की एकता का इतना अधिक बल दिया है। स्वयं कबीर एक श्रमजीवी थे, आजीवन उन्होंने अपना जुलाहा कर्म निभाया, इसलिए जीवन उनके निकट 'झीनी-झीनी बींनी चदरिया' के रूप में साकार होता है।

कासों कहों को सुने को पतियाय, फुलवा के छुवे के भँवर मरि जाय।
गगन-मँडल महँ फूल एक फूला, तरि भा डार उपर भा मूला।
जोतिये न बोइये सिंचिये न सोय, बिन डार बिन पात फूल एक होय।
फूल भय फूलन मालिनि भल गांथल, फुलवा बिनसि भँवरा निरासल।
कहहिं कबीर सुनहु संतो भई, पंडित-जन फूल रहत लुभाई।[4]

मध्यकाल में कबीर एक क्रांतिकारी समाज सुधारक के रूप में मध्यकाल

में दिखते। उन्होंने अपनी कविताओं में बाह्याडम्बरों पर जमकर प्रहार किया है। वे कहते हैं कि हे मौलिवियों ! आप लोग जिस किताब की बात कर रहे हैं उसके विषय में मैं भी कुछ जानता हूँ। उनको जरा ध्यान से सुनें उन्होंने यह प्रश्न उनके सामने खड़ा किया कि जिस बकरी के गर्दन को चूरे की मदद से आप काटते हैं, उसके विषय में आपकी पुस्तक में 'माता' कहकर संबोधित किया गया है। क्योंकि वह दूध पिलाती है और जो जीव का दूध दूसरों को पालन-पोषण में कार्यरत हों, वह निश्चय ही माता तुल्य है क्योंकि माता ही अपने बच्चों के पालन-पोषण में अपने आप को लुटा देती है। वह उसे अपना दूध पिलाती है उसकी रात-दिन सेवा करती है जिससे उसका बच्चा हृष्ट-पुष्ट बने उसी प्रकार अगर गाय हो या बकरी अगर उसका दूध भी हमें मजबूती प्रदान करने के लिए अर्पित है तो वह भी हमारी 'माता' है और मनुष्य कसाई बनकर सिर्फ अपनी भूख को शांत करने के लिए एक निरीह माशूम जानवर को मार देते हैं और उसके कलमा पढ़कर अपने-आपको पवित्र कर लेते हैं। कबीर इस बात पर व्यंग्य करते हैं कि यह विपरीत शिक्षा कहाँ से मिली ? वे कहते हैं कि हे मूर्ख इंसान। क्या तुम्हें इस कुकर्म करते हुए लज्जा भी नहीं आई। अच्छा तुम्हीं बताओं कि जब सारा संसार एक ही ब्रह्म का पसारा है। तब दूसरा कहाँ से आया जब मैं तुमसे अच्छी तथा सच्ची बातें पूछता हूँ, तब तुम लोग हमें खिझाते हो। कबीर कहते हैं कि हे मौलवियों ! जिस किताब की बातें आप लोग करते हैं क्या उसके अर्थ को भी आप समझ पाये हैं ? हे भाई शिक्षित तथा नम्र मुसलमान वही हो सकता है जिसको कुशल और शिक्षित गुरु मिल जायँ। जिस बकरी की निर्मम हत्या की बात तुम्हारी पुस्तक में की गई है वे अजा अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष तथा अभिनिवेश है।

मोलना सुन कितेब की बातें।
जिस बकरी का दूध पियो तुम, सो तो मातु के नाते
उस बकरी का गरेदन काटो अपनी हाथ छुराते।।
काम तो करो कसाई का औ, पाक करो कलामाते।
यह मत उलटी कौन सिखाई, अहमक नहीं लजाते।।
एक ब्रह्म का सकल पसारा, कीट पतंग जहां ते।
दूजो कहौ कहां ते आया, ता पर हमें खिजाते।।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो यह पद है निर्वाते।
एक तनिक जिह्वा के कारण, साफ नरक में जाते।। [5]

कबीरदास अपने समय और समाज की स्थिति समझते थे वह समाज की स्थिति के ऊपर कटु व्यंग्य तो करते थे जिसे उस समय लोगों द्वारा समर्थन नहीं मिलता था। वे धर्म, जाति के नाम पर बाह्य आडम्बर करते थे ओर जिसके कारण समाज अंदर ही अंदर उस खोखले वृक्ष के समान हो रहा था, जो ऊपर से समृद्ध और भीतर से खोखला हो, जिसका अस्तित्व खतरे में दिखाई देता हो। कबीर अपने समय को बखूबी समझ रहे थे। उनकी बातें तीखी और कड़वी तो थीं ही लेकिन उसमें सत्य मेरा हुआ था। लोग जाति के नाम पर बाह्य आडम्बर करते थे और पत्थर पूजा गाय और बकरी जैसे जीवों की निर्मम हत्या करते थे, धर्म के नाम पर लोगों को ठगना ऐसे ही लोगों का काम था जिससे समाज भरा पड़ा था। धर्म को लेकर लोगों के आँखों के सामने पर्दा था और वे भी उसी परदे के पीछे ही रहना चाहते थे चाहे उस परदे के पीछे असत्यता की मोटी चादर ही क्यों न हो, वे उससे बाहर आना नहीं चाहते थे जिस पर कबीर ने अपनी कविता में व्यंग्य के माध्यम से प्रश्न खड़ा किया। अगर हम उनकी कविता को पढ़ते तो उनके ये प्रश्न आज भी प्रासंगिक रूप में दिखाई पड़ते हैं क्योंकि आज समाज कबीर के समय से कितना आगे बढ़ गया है लेकिन ऐसा लगता है कि मानों उस समय की परिस्थिति आज भी बनी हुई है। लेकिन हम उस समय और आज के समय की परिस्थिति को देखें तो स्थिति ठहरी हुई जान पड़ती है बल्कि और भी ज्यादा दयनीय दिखाई पड़ती है। कबीर तो अनपढ़ थे लेकिन फिर भी अपनी बातों में अपने अनुभव की व्यापकता की पहचान दिलाते थे परन्तु आज के समय में समाज की स्थिति पढ़-लिख कर भी उनकी दयनीय बनी हुई है। उनकी सोच और समझ के दायरे में कोई परिवर्तन नहीं आया है बल्कि स्थिति और भी ज्यादा जटिल हो गई है। ऐसे में कबीर एक क्रांतिकारी द्रष्टा के रूप में हमारे समक्ष नजर आते हैं। कबीर योगियों से कहते हैं कि हे योगी ! तुमने अपना माथा मुड़ाकर कपड़ा रंग करवा लिया, इसके साथ ही गीता का पूर्ण अध्ययन भी किया, परन्तु तुम्हें इसके बावजूद भी आत्मज्ञान प्राप्त नहीं हो पाया,केवल तुमने लवार का काम प्रारम्भ किया है, तो इससे क्या ला ? इसलिए हे योगी आत्मज्ञान केवल कपड़ा रंगाकर नया वेषधारण कर लेने भर से नहीं मिलता, उसके लिए बाह्य आडम्बर त्यागकर सच्चे आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए तत्पर रहना होगा तभी तुम्हारा कल्याण सम्भव है।

कबीर का अन्तर्जगत समाज, लोक-व्यवहार और धर्म के कारनामों को देखकर विचलित था। उनके समय में जितना विक्षोभ बाह्य वातावरण में था, उतना ही उसके अंतर में था। बाहर के इन निर्मम चोटों को उनका सुकुमार अन्तर अत्यन्त विकलतापूर्वक सह रहा था। इसलिए वे शांति चाहते थे और जिस कारण उनका व्याकुल हृदय उस शांति की खोज में लग गया। संघर्ष सदैव अद्वैत के अभाव की दशा में होता है। जहाँ द्वैत होगा वहाँ संघर्ष की सम्भावना होगी। यही कारण है कि कबीर में अद्वैत का आश्रय लेकर शान्ति के पथ पर प्रस्थान किया। कबीर अपनी कविताई में कई बार 'हरिजन' शब्द का प्रयोग करते दिखते हैं, लेकिन इसका अर्थ यह कदापि अछूतों के लिए नहीं लगाया जा सकता। कबीर ग्रंथावली की सबसे पहली साखी के अंतर्गत जो हरिजन संवान को हितू, हरिजन संई न जाति कहकर उन्होंने हरिजनों की जाति को सर्वश्रेष्ठ बतलाया है वह भी वर्तमान अछूतों से संबंध नहीं रखता। कबीर के हरिजन वास्तव में वे लोग हैं जिनके मुख्य गुण उनके नीचे लिखे पदों में मिलते हैं-

रोड़ा भया तो क्या भया, पंथी जो दुख देई।
हरिजन जैसा चाहिये, जिसी जिमी की खेह।।
पाणी भया तो क्या भया, ताता सीता होई।।
हरि भया तो क्या मया, जासौ सब कुछ होइ।
हरिजन ऐसा चाहिये, हरि भजि निर्मल होइ।।[6]

कबीर के हरिजन वे लोग है, जिन्हें वे दूसरे शब्दों में जीवंत मृतक (जीवन्मुक्त(संत अथवा हंस कहा करते हैं। कबीर ने समाज में व्याप्त सभी प्रकार के रूढ़ियों आडंबर ओं का खंडन किया था, उनका मानना था कि जब तक समाज में इस तरह की व्यवस्था मौजूद रहेगी, जब तक लोग एक दूसरे के प्रति सौहार्दपूर्ण संबंध स्थापित नहीं करेंगे और आपस में विभाजित रहेंगे तब तक एक स्वस्थ समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। जिसे समझाते हुए कबीर हरिजन को हंस पक्षी का रूपक देकर अपने पद में इस प्रकार भी कहते हैं-

हरिजन हंस दसा लिये डोलै, निर्मल नांव चवै जस बलै।।
मानसरोवर तट के वासी, राम चरण चित आन उदासी।।
मुकताहल बिन पंच न लावैं, मौनि गहै के हरि गुन गावै।।
कउआ कुबुद्धि निकट नाहिं आवै, सौ हंसा निज दरसन पावैं।।[7]

अर्थात् हरिजन हंसों की भाँति भ्रमण करते हुए हरिनाम का वर्णन किया करते हैं, उनका ध्यान सदा अपने मूल स्थान पर ही रहता है और वे राम को छोड़ उदासीन वृत्ति धारण करते हैं, मुक्ति के सिवाय अन्य वस्तु की इच्छा कबीर के काव्य में नहीं मिलती। मध्यकालीन संत परम्परा में कबीर का एक महत्वपूर्ण स्थान तो है ही साथ-साथ वे इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण दिखते हैं कि उनका समाज शोषितों का समाज है जहाँ मानवीय मूल्यों का प्रश्न सर्वप्रथम है। कबीर ने अपनी कविताई में जाति-पाति की संकीर्ण मानसिकता को अस्वीकार किया,उनका मत था कि जब सभी जातियों के लोग एक ही तरह पैदा होते हैं तो उनमें भेद कैसा ?

संतो देखहु जग बौराना
हिंदू कहें मोहि राम पियारा
तुरक कहै रहिमाना
आपस में दोउ लर लर मूए
मरम न कोई जाना।[8]

कबीरदास जीवन और जगत के रहस्य को समझाते हुए बहुत सी ऐसी बातें कहते है जो महत्वपूर्ण हैं। जिससे उनके नितांत मौलिक विचार और मौलिक सुधारवादी जीवन दृष्टि का बोध होता है। यही कारण है कि आज भी कबीर को पढ़ते हुए उनके कठोर और मार्मिक संदेश नवीन और सशक्त होते हुए साधारण जनमानस के हृदय में आज भी विद्यमान है। कबीर की दृष्टि से यदि विचार किया जाए तो सामाजिक भेदभाव कृत्रिम है, यह मानव द्वारा बनाया गया है लेकिन इसे ईश्वरकृत बनाने का प्रयास हमारे वेदों पुराणों द्वारा बराबर किया जाता रहा है। कबीर ने रामनाम के बीज मंत्र को इस प्रकार जी लिया था कि निर्भयता उनकी वाणी में दिखने लगी थी, उन्होंने हिन्दुओं की हिंदुवाई और तुरकों की तुरकाई अच्छी तरह देख और समझ ली थी, उन्होंने उस सारे कर्मकांड पर, उन सारे आचार-विचार पर कड़ी चोट की, जो साधारण जन को अपमानित करते थे। आदमीयत से बढ़कर सतही विधि विधानों को, खोखली पूजा-चर्या को, पुराने रीति-रिवाजों को मानते थे।

मेरा-तेरा मनुआँ कैसे इक होई रे।
मैं कहता हौं आँखिन देखी, तू कहता कागद की देखी।
मैं कहता सुरझावनहारी, तू राख्यौ उरझाई रे।
मैं कहता तू जागत रहियो, तू रहता है सोई रे।
मैं कहता निर्मोही रहियो, तू जाता है मोही रे।
जुगन जगन समुझावत हारा, कही न मानत कोई रे।
तू तो रंडी फिरै बिहंडी, सब धन डारे खोई रे।
सतगुरु धारा निर्मल बाहै, वामैं काया धोई रे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, तबही वैसा होई रे॥ [9]

कबीरदास जहाँ एक ओर गुरु को भगवान से बड़े मानते हैं तो वहीं दूसरी ओर ऐसे गुरुओं की घोर निन्दा भी करते हैं जो शिष्य की सहानुभूति को तीव्र नहीं करते और उन्होंने जाति-पाति के बंधनों से मुक्त नहीं करते। कबीर का संकेत परम्परागत ब्राह्मण गुरुओं की ओर है जिन्हें वह भक्ति से हीन और अज्ञानी कहते हैं, जिसका गुरु दृष्टि विहीन है और चेला स्वयं जन्मांध है, उसी तरह ये दोनों नष्ट हो जाते हैं।

कबीरदास के अनेक पद ऐसे हैं जिसमें उन्होंने ज्ञान के महत्व पर जोर दिया है। अज्ञानता वश मनुष्य कैसे गलत संगति का शिकार हो जाता है जो माया के कारण आती है। यही कारण है कि कबीर माया रूपी भ्रम की टाटी उड़ाने की बात करते हैं क्योंकि जब तक मनुष्य माया में वशीभूत रहेगा तब तक वह अज्ञानता पूर्ण जीवन जीता रहेगा। कबीर कहते हैं –

संतों भाई आई ग्यान की आँधी रे।
भ्रम की टाटी सबै उडाँणी, माया रहै न बाँधी॥ टेक॥
हिति चित की द्वै यूँनी गिराँनी, मोह बलिंडा तूटा।
त्रिस्नाँ छाँनि परि घर ऊपरि, कुबधि का भाँडाँ फूटा॥
जोग जुगति करि संतौं बाँधी, निरचू चुवै न पाँणी।
कूड़ कपट काया का निकस्या हरि की गति जब जाँणी॥
आँधी पीछे जो जल बूठा, प्रेम हरि जन भींनाँ।
कहै कबीर भाँन के प्रगटे उदित भया तम षींनाँ॥ [10]

कबीर ने केवल अपनी कविता में माया, पाखंड और धार्मिक अंधविश्वास का खण्डन नहीं किया, बल्कि अपने जीवन-व्यवहार में भी इसका खंडन किया था। कबीर की सामाजिक और नैतिक मान्यताओं की सीमा है। लेकिन वह सीमा जितनी कबीर की है, उससे कहीं ज्यादा मध्यकालीन परिस्थिति की है। कबीर संपत्ति और अधिकार के विवरण की किसी नयी व्यवस्था का निर्माण नहीं कर सकते थे और न ही श्रम-जीवियों का कोई संगठन बना सकते थे। लेकिन आध्यात्मिक साधना से अलग और विचारों के प्रचार से भिन्न संघर्ष का मार्ग अपनाना मध्यकाल में संभव न था। कबीर ने धार्मिक जागरण ने भारत की सोई जनता को जगाया जिससे जातीय प्रभुत्व की स्थिति में भी फर्क आया। कबीर जिस तरह का समाज बनाना चाहते थे वैसा नहीं बन पाया। जाति पाति नहीं मिटा, लिंग भेद भी आज बरकरार है ऐसे में एक समाज सुधारक एक क्रांतिकारी उपदेशक क्या कर सकता है जब लोग बदलना ही नहीं चाहते परिवर्तन एक व्यक्ति के बस की बात नहीं है इसके लिए पूरे मानव समाज को एक साथ खड़ा होना होगा तब परिवर्तन सम्भव है। इतिहास गवाह है कि जब किसी ने सच की मशाल को थामा है दुनिया उसके खून की प्यासी हो गई है क्योंकि इस सच की आड़ में बहुत से झूठे आडम्बरों का पर्दाफाश हो जाता है। कबीर की दृष्टि में मध्यकालीन भारतीय समाज की मुख्य चुनौती अलगाववादी प्रवृत्तियां हैं जो सामंती हितों को पुष्ट करने का काम करती है। इसलिए समाज में जाति-पाति छुआछूत का भेदभाव पैदा करने वालों को कबीर ने कभी क्षमादान नहीं दिया। कबीर अपनी कविता में इन अलगाववादियों को अच्छी तरह चिंहित करते हैं।

निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि कबीर का काव्य सामाजिक कुरीतियां, धार्मिक अंधविश्वास पाखंड, माया जैसे विषयों को उद्घाटित करते हैं। जिससे कबीर समाजोन्मुख कवि की श्रेणी में शामिल हो जाते हैं। बहुत से विद्वानों का यह मत भी रहा है कि कबीर की काव्य भाषा सूर तुलसी जैसी सहज ना होकर क्लिष्ट है जिसमें विषय की व्यापकता के साथ व्यापक जीवन दर्शन मौजूद है। वर्णन की व्यापकता भले ही कबीर की कविताओं में न दिखाई देती हो परंतु उनकी कविता महानतम और उत्कृष्टतम विचार अवश्य प्रवाहित करती है।

****

1 (भक्ति आन्दोलन और भक्ति-काव्य, शिवकुमार मिश्र, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय आवृति,2015 पृ0 16)
जाति के प्रश्न पर कबीर , कमलेश वर्मा , द मार्जिन लाइज्ड, सानेवाड़ी वर्धा , पृ0 48
3. जाति के प्रश्न पर कबीर , कमलेश वर्मा , द मार्जिन लाइज्ड, सानेवाड़ी वर्धा , पृ0 126
4. जाति के प्रश्न पर कबीर , कमलेश वर्मा , द मार्जिन लाइज्ड, सानेवाड़ी वर्धा , पृ0 127
5. श्री सद्गुरु कबीर, कबीरवाणी प्रकाशन केन्द्र, वाराणसी, पृ210-209 0
6.कबीर साहित्य चिन्तन, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ-(140
7. कबीर साहित्य चिन्तन, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, स-पृ0 142
8. भक्ति काव्य धारा, संपादन हिंदी विभाग काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, द्वितीय संस्करण 2011, पृष्ठ संख्या 23
09. भक्ति काव्य धारा, संपादन हिंदी विभाग काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, द्वितीय संस्करण 2011, पृष्ठ संख्या 34
10 .भक्ति काव्य धारा, संपादन हिंदी विभाग काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, द्वितीय संस्करण 2011, पृष्ठ संख्या 34

जनकवि नागार्जुन का प्रतिरोधी स्वर

डॉ.मन्नू राय
सहायक शिक्षक
राजकीय उत्क्रमित मध्य विद्यालय पिठौरी
पोस्ट अघैला सिवान (बिहार) 84 14 36

प्रगतिवादी कविता के शीर्ष स्तंभ जनकवि नागार्जुन की काव्य चेतना का सबसे मजबूत पक्ष आम आदमी के प्रति संवेदना के साथ उनकी सक्रिय हमदर्दी है।उन्होंने सर्वहारा वर्ग के संघर्ष को आवाज दी है।कबीर एवं निराला की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए नागार्जुन ने भी शोषक और अत्याचारी पर प्रहार की है,फिर वह चाहे किसी वर्ग का क्यों ना हो।इस दृष्टि से नागार्जुन सच्चे अर्थों में स्वाधीन भारत के प्रतिनिधि जनकवि हैं। अपनी रचनाओं में नागार्जुन ने भी जनहित में अपनी जनवादी प्रतिबद्धता को स्वीकार किया है। *जनता मुझसे पूछ रही है,क्या बतलाऊं?जनकवि हूं,मैं साफ कहूंगा क्यों हकलाऊं*।

नागार्जुन की कविता में देश एवं समाज की समसामयिक स्थितियों ,गतिविधियों का चित्रण है।उनकी कविताओं में व्यंग, विद्रोह तथा सहानुभूति है।वे सामाजिक तथा राजनीतिक गतिविधियों के प्रति सचेत हैं।वे श्रम की महत्ता को स्वीकार करते हैं,शोषितो के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हैं।उन्हें सामन्ती वर्ग के वैभव, प्रदर्शन, ढोंग एवं पाखंड पर क्रोध आता है।अपनी कविताओं में सामन्ती वर्ग के द्वारा सर्वहारा के शोषण की अभिव्यक्ति की है।

जनकवि नागार्जुन का जीवन सामान्य नहीं था।उनके साधारण परिधान में असाधारण व्यक्तित्व छुपा था,जिसमें जन्म , स्थान, जाति , व्यवसाय आदि कोई संस्कार जम ही नहीं पाया। वे अपने बचपन के ढक्कन मिसिर को ध्वस्त कर बैजनाथ मिश्र हुए लेकिन उनकी यह पहचान भी दीर्घकालिक नहीं हुई।वे इसको भी ध्वस्त कर यात्री और नागार्जुन हुए।लेकिन इसको लांघने में भी उनको ज्यादा समय नहीं लगा।उनका जन्म मिथिलांचल के दरभंगा जिले के तरौनी गांव में हुआ था।पिता गोकुल मिश्र विधुर थे और वे अपने इस मातृहीन बालक को कंधे पर बिठाकर रिश्तेदारों में यहां-वहां डोलते रहते थे।उनकी यह यायावरी ही संस्कार के रूप में बालक ढक्कन मिसिर के मन मस्तिष्क में स्थायी रूप से जम गई।नागार्जुन के व्यक्तित्व की तरह ही उनका कवि रूप भी आजीवन कोई एक रूप पहचान नहीं बना सका।किसी को समझने के लिए कोई पहचान बनानी पड़ती है।इसके लिए तुलना ,समीक्षा और वर्गीकरण करने पड़ते हैं,लेकिन नागार्जुन का जीवन और कविता इसकी अनुमति नहीं देते।उनकी कोई पहचान बनाना बहुत मुश्किल काम है,क्योंकि वे बनने ही नहीं देते हैं।उनके जीवन और कविता में इस निरंतर विचलन और अस्थिरता के कारण इतना वैविध्य, विस्तार और विषमता है कि उनको किसी सामान्यीकरण में बाधा ही नहीं जा सकता।अपने को ध्वस्त करने और फिर इसको लांग कर आगे बढ़ जाने की इस आदत के कारण नागार्जुन की कविता में जीवन की ऐसी समृद्धि और विविधता आई है जो अन्यत्र दुर्लभ है।

नागार्जुन बहुमुखी प्रतिभा संपन्न रचनाकार हैं।साहित्य के क्षेत्र में उनका अपना दृष्टिकोण है।उनकी दृष्टि में कविता के प्रतिपादन से अधिक उसका प्रतिपाद्य महत्वपूर्ण है।वे शिल्प- सौंदर्य से अधिक भाव को प्रमुखता देते हैं।इस पर प्राचीन एवं नवीन अनेक साहित्यकारों जैसे कालिदास ,रविंद्र नाथ ठाकुर,विद्यापति, कबीर ,तुलसी, भारतेंदु हरिश्चंद्र, निराला ,प्रेमचंद आदि का प्रभाव पड़ा। विद्वान आलोचक डॉ प्रकाश चंद्र भट्ट के शब्दों में - "नागार्जुन का हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है।प्रेमचंद्र-सी भारतीय कृषक - मजदूर वर्ग के प्रति आत्मीयता,निराला सा फक्कड़पन और अक्खडपन तथा बातों पर कबीर-सी फटकार - सबका मिला-जुला रूप ही नागार्जुन के व्यक्तित्व का आधार है।" *१*

नागार्जुन के काव्य का क्षेत्र अत्यंत विशाल है। शीत,ताप,धूप,ओस,हिमपात जैसी प्राकृतिक स्थितियों से लेकर राग , द्वेष, क्रोध ,घृणा, हर्ष ,शोक,उमंग,आक्रोश, निश्चय,संशय, क्रम ,व्यतिक्रम, निष्ठा,अनिष्ठा,आस्था,अनास्था जैसे विभिन्न मानवीय भावो तथा जीवन,मृत्यु उत्थान, पतन जैसी विभिन्न स्थितियों का चित्रण उनकी कविता में हुआ है।नागार्जुन की कविता सिर्फ पृथ्वी की ही नहीं है,वह पाताल ग्रह- उपग्रह तक भी फैली हुई है -

संबध्द हूं ,जी हां संबध्द हूं *पृथ्वी-पाताल से,ग्रह-उपग्रह से*
निहारिका-जल से,रिक्त से शून्य से
व्याप्ति-अव्याप्ति-महाव्याप्ति से ।*२*

वैयक्तिक जीवन के संघर्षों ने भी नागार्जुन को विद्रोही बना दिया।इन संघर्षों के कारण भी वे शोषितो की पीड़ा को अधिक गहराई से अनुभव कर सके।गरीबी और उत्पीड़न के होते हुए भी वह बसंत की अगवानी का सपना देखते हैं।उनका मानना है कि कल यहां ऐसे समाज का निर्माण होगा,जहां लोग स्वार्थहीन होकर समता को सही मायने में स्थापित करेंगे -

सब के दुख में दुखी रहेगा
सबके सुख में सुख मानेगा
समझ बूझ कर ही समता का
*असली मुद्दा पहचानेगा । *३*

नागार्जुन घुमक्कड़ , यायावर प्रकृति के कवि थे।भ्रमण करते हुए जहां कहीं उन्हें नया ज्ञान मिलता था या कोई जानकारी प्राप्त होती थी,वहीं पर वे अपना लेखन आरंभ कर देते थे।कविता लिखकर स्वयं घूम घूम कर बेचा करते थे तथा उनका प्रचार करते थे।सभाओं, संगोष्ठियों में अपनी कविताएं सुनाते थे।डॉ अजय तिवारी के अनुसार "वे (नागार्जुन) यायावर हैं,उनकी कुटिया यह संसार ही है।उनका मानववाद उनकी क्रांतिकारी आस्था से दीप्त है।निराशावाद के लिए उसमें स्थान नहीं है।" *४*

नागार्जुन समाजवादी जीवन दर्शन के समर्थक हैं,उनकी कविता का कथ्य शोषित , दु:ख में डूबी जनता का यथार्थ चित्रण है,इसके साथ ही स्वयं भीषण परिस्थितियों से गुजर कर होने वाली अनुभूति का भी अंकन है।मानव जीवन के चित्रण में शहर की अपेक्षा गांव ने उन्हें अधिक आकर्षित किया है।बेकारी भूखमरी अकाल आदि के दृश्य इनकी कविताओं में चित्रित हुए हैं।आजादी के बाद भारत में पंचवर्षीय योजनाएं बनी है,किंतु इन योजनाओं से देश के करोड़ों शोषितो को कोई लाभ नहीं मिला। डॉ• आनंद प्रकाश दीक्षित ने लिखा है कि "असल में नागार्जुन की कविताओं में जीवन की उष्मा है और उनकी कविताओं में प्राण भर्ती है आस्था और उनका विश्वास ।" *५*नागार्जुन ने कविता को वैयक्तिक दायरे से बाहर निकाल कर उसे सामाजिक भूमिका प्रदान की।यही कारण है कि उनकी कविताओं में अकेलापन,अलगावबोध,अजनवीपन,व्यर्थताबोध आदि का भाव है। उनका मानना है कि करोड़ों जनता पीड़ित है,और मैं भी उन्हीं में से एक हूँ.

मै न अकेला,कोटि-कोटि है मुझ जैसे तो
सब को ही अपना-अपना दुख वैसे तो
पर दुनिया को नरक नहीं रहने देंगे हम
*कर परास्त छलियों को ,अमृत छिनेंगे हम । *६*

उनके कवि-कर्म का लक्ष्य यह रहा है कि समाज को शोषण,छल, गरीबी आदि से भरा हुआ नरक नहीं होने देना और समाज को क्षमता

का अमृत प्रदान करना।इसके लिए वे दलित- श्रमिक वर्ग का साथ देना चाहते हैं।उनकी कविता के नायक भी यही उपेक्षित श्रमिक लोग हैं।डॉ विजय बहादुर सिंह के अनुसार , "नागार्जुन के यहां निम्न वर्ग या सचमुच का सर्वहारा वर्ग कविता का नायक है। रिक्शा खींचने वाला,चटकल में काम करने वाला मजदूर,उच्च वर्ग का पुश्तैनी शिकार हरिजन और मछुआरा एवं महिला वर्ग,जो वर्षों नहीं, शताब्दियों से भारतीय समाज की गुलामी करने को विवश है,नागार्जुन के चरित्र नायक है।" *७*

हिंदी साहित्य में निराला के बाद नागार्जुन सबसे महत्वपूर्ण पद के हकदार हुए हैं।नागार्जुन पर संवाद का आशय है लगभग बीसवीं शताब्दी के सामाजिक एवं साहित्यिक धरातल का मुकम्मल संवाद।क्योंकि साहित्यकार अपने समय को जीता है, अपने अनुभव को प्रस्तुत करता है। जब कोई रचना आम आदमी को अभिव्यक्त करती है और समय की शिला पर प्रासंगिक होती है,तो वह रचना सिर्फ साहित्यकार की ना होकर जन समुदाय की हो जाती है -

कई दिनों तक चूल्हा रोया/चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुत्तिया/सोई उनके पास
चमक उठी घर भर की आंखें/कई दिनों के बाद
कौए ने खुद लाई आंखें/कई दिनों के बाद (*८*)

दरअसल यह कविता हारे हुए लोगों की गरिमा को गहरे पीड़ा- बोध के साथ बचाने की कोशिश करती है और जो चीज हमें खींच लेती है-' *जो नहीं हो सके पूर्ण काम,मैं उनको करता हूं प्रणाम'* । जिस कुंठित और लक्ष्यभ्रष्ट समय में हम जी रहे हैं,जहां रोज किसी उम्रसाधना की द:खांतकी देखने को मिलती है और प्रतिकूल परिस्थिति मनुष्य के सारे मनोरथ को चूर-चूर कर देती है। यह कविता एक पिड़ा भरा सुकून देती है , क्योंकि नागार्जुन की कविताओं में एक तरल आवेग है लेकिन विवेक से पूरी तरह से संयमित।

नागार्जुन की कविताओं में प्रतिरोधी स्वर के साथ ही विदूषकीय तत्व भी खूब है।विदूषक की असली कला निर्भिरता है और ऐसी लापरवाही,फक्कड़ाना तबीयत और मस्ती,जो जवाबदेही और जिम्मेदारी से निकलती है। हिंदी कविता में कबीर की परंपरा को बहुत मजबूती के साथ नागार्जुन आगे बढ़ाते हैं।कबीर जैसा साहस, ललकार भरे शब्द-बाण,त्याग का भाव एवं खंडन- मंडन की शक्ति नागार्जुन की शैली को मौलिक बनाती है। उनकी सामाजिक दृष्टि आज की देसी राजनीति में कहीं भी फिट नहीं हो पा रही है,क्योंकि इस रचनाकार की प्रतिबद्धता है बहुजन समाज की सतत प्रगति।'स्व' स्थापना हेतु संकुचित आपाधापी इन दिनों किस तरह विकसित हो रही है-यह सब सामने है। नागार्जुन इस आपाधापी को तोड़ने के लिए समाज के शोषणकर्ताओं द्वारा बनाए गए परिवेश को तोड़ने में अपनी रचनाओं के साथ हमेशा हर जगह तैयार दिखते हैं। पूरी उम्र विद्रोह में गुजरे और परिणाम के नाम पर शून्य जैसा ही कुछ हाथ लगे,तो आज की परिस्थिति में विक्षोभ का होना स्वाभाविक ही है।विक्षोभ के क्षणों में कटु-तिक्त व्यंग का जन्म होता है । नागार्जुन के पास व्यंग व सहज हथियार है ,जिससे कहीं भी निशाना लगाया जा सकता है।व्यंग में रचित अनेक कविताएं कालजयी बन गई है।अपने समकालीन कवियों जैसे शमशेर , त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल आदि से अधिक चुटीले व्यंग रचना के कारण नागार्जुन प्राय: सबसे अलग दिखते हैं। डॉ• नामवर सिंह ने तो यहां तक कहा है कि कबीर के बाद हिंदी कविता में नागार्जुन ने सत्ता का प्रतिरोध करने का साहस किया है।नागार्जुन की कविताओं पर बहस का मतलब है,आम जनता के करुणा , व्यंग, विरोध और विडंबना-बोध को एक साथ समझना।यदि इसमें जरा सी भी चूक हुई तो सामाजिक विडंबना के पीछे छिपी त्रासद स्थितियों का उद्घाटन संभव नहीं है । यहां साधारण जनता की नियति में अपने संपूर्ण सत्ता का विसर्जन करने वाले कवि का रचना संसार है,जो कलीमुद्दीन रिक्शावाला भूख की भट्ठी में खाक होकर ,गले में रुद्राक्ष की माला डाल,'परेम परकाश' बनकर जीने की कोशिश कर रहा है,उसका नया वेश हंसता और रुलाता एक साथ है। -

बाबा जी हम अब चुटिया भी रखेंगे
आठ दस रोज की *भुखमरी के बाद*
हमारे अंदर/प' अक्किल फूटी है/बाबाजी
रुद्राक्ष के मनके/अच्छी मजूरी दिला रहे हैं/'बाबाजी'अब हम
चुटान्ना भी रखेंगे माथै पे/अब हम चंदन की टीका भी
रोज लगाते रहेंगे। (*९*)

नागार्जुन की यह कविता सांप्रदायिकता के लहू-सने खंजर को अंगूठा दिखाती है।'शासन की बंदूक' आज के अराजक शासन-व्यवस्था व घटिया राजनीति का मोखौल उड़ाता है।वेदांता पर होने वाले अत्याचार से उसी के अनुपात में क्षुब्ध होते हैं,उनका प्रतिरोध ना होने पर उतना ही बेचैन होते हैं,वामपंथ से वे इस प्रतिरोध की आशा करते हैं लेकिन इसके बदले वामपंथ को परस्पर विरोधी अपघातो में देखकर वे आपे से बाहर हो जाते हैं,यह अपघात देश के भीतर वामपंथी दलों का आपस में भी हो सकता है।देश के जनवादी क्रांतियों के प्रति समाजवादी देशों का भ्रांति पूर्ण व्यवहार भी हो सकता है और समाजवादी देशों का आपसी टकराव भी हो सकता है।इन सब चीजों पर नागार्जुन की प्रतिक्रिया भले ही वह *'क्या है दक्षिण क्या है वहां'* या *कार्ल मार्क्स की दाढ़ी में जू* की हद तक क्यों न हो , कभी भी वामपंथ की या जनहित की राजनीति भी चौहद्दीयो के बाहर नहीं जाती। या किसी भी स्थिति में पूंजीवादी या फासिस्ट राजनीति के पक्ष में झुकाव नहीं दर्शित करती। वे जनवादी सत्ता पर भी शिष्टाचार के साथ थूकते नजर आते हैं।उनकी राजनीतिक दृष्टि उनके जिन मूलभूत सरोकारों से उत्पन्न हुई है,उसने यह स्पष्ट समझदारी दी है कि -

*शासन के कुछ और सत्य हैं*जनता के कुछ और- --सुप्रसिद्ध कथाकार काशीनाथ सिंह नागार्जुन के पास अपने अत्यंत निकट संबंधों का जिक्र करते हुए कहते हैं कि "नागार्जुन से अपने आप में एक जन आंदोलन थे और उस आंदोलन की लाै आज की कविताओं में बुझती सी दिख रही है ।" नागार्जुन आज भी प्रासंगिक हैं। यह कहना मुझे बहुत कचोटता है कि नागार्जुन की कविताओं में जो समस्याएं हैं,वह आज भी समाज में व्याप्त है। इन समस्याओं का समाधान तो बहुत पहले हो जाना चाहिए,लेकिन दुर्भाग्य है कि नहीं हो पाया।यही समाज के लिए सबसे अधिक अफसोस की बात है। नागार्जुन की कविताएं निरंतर संवाद और मूल्यांकन की मांग करती है।निरंतर मूल्यांकन से रचना के कई पहलू निखर कर सामने आते हैं।कोई व्यक्ति खतरनाक नहीं होता,उसके विचार खतरनाक होते हैं और यह नागार्जुन पर भी लागू होती है।सामाजिक धरातल पर जब अराजकता अपने पैर जमा चुकी हो,नैतिकता भ्रष्टाचार के बोझ तले दबती जा रही हो और भूमंडलीकरण के दौर में मानवता का हत्यारा बाजारवाद संप्रदायिक ताकतों को सिर उठाने की मौत इजाजत देता हो ,तो जनकवि नागार्जुन की कविताओं का प्रतिरोधी श्वर आज के परिवेश में अधिक प्रासंगिक हो जाती है।

****

संदर्भ ग्रंथ-

1- डॉ• प्रकाश चंद्र भट्ट : नागार्जुन जीवन और साहित्य , पृष्ठ संख्या 40
2-अजय तिवारी नागार्जुन की कविता पृष्ठ संख्या 28
3-सुरेश चंद्र त्यागी :नागार्जुन ,आनंद प्रकाश दीक्षित हजार हजार बाहोवाली पृष्ठ संख्या 178
4-विजय बहादुर सिंह ,नागार्जुन:आनंद प्रकाश दीक्षित हजार हजार बाहोवाली पृष्ठ सं-178
5-डॉ• नामवर सिंह
6- डॉ• काशीनाथ सिंह
7- नागार्जुन रचनावली खंड 1 पहला संस्करण 2003 पृष्ठ संख्या 315
8- डॉ शोभा कांत मिश्र :नागार्जुन की चुनी हुई रचनाएं भाग 2 प्रथम संस्करण 1985 पृष्ठ . 29

मणिपुर में हिन्दी भाषा के विभिन्न आयामों का संक्षिप्त मूल्यांकन

डॉ. शिवम चतुर्वेदी
शोध निदेशक, प्रोफेसर एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष
अरुणाचल यूनिवर्सिटी ऑफ स्टडीज, नामसाइ, अरुणाचल प्रदेश।

किस्मतुन बेगम
शोधार्थिनी, हिन्दी विभाग
अरुणाचल यूनिवर्सिटी ऑफ स्टडीज, नामसाइ, अरुणाचल प्रदेश।

सार-आज के संदर्भ में मणिपुर में हिंदी की स्थिति की बात करें तो निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि हिंदी की स्थिति अच्छी ही है। यहाँ संपर्क की भाषा मणिपुरी है,परंतु मणिपुरी के बाद प्रयोग होने वाली भाषा हिंदी है। मणिपुर में हिंदी का प्रयोग कब और कैसे शुरू हुआ- इस संदर्भ में यह अनुमान लगाया जाता है कि 11 वीं शताब्दी के आस-पास भारत के हिंदी प्रदेशों पर मुसलमानों का आक्रमण हुआ तब इन प्रदेशों के ब्राह्मण विभिन्न क्षेत्रों में चले गए थे। इन हिंदी भाषी ब्राह्मणों में से बहुत लोग मणिपुर भी पहुँचे थे तब मणिपुर वासियों का परिचय हिंदी से हुआ। कुछ विद्वान चौथी शताब्दी से हिंदी भाषी लोगों का आगमन मानते हैं। प्रामाणिक रूप से मणिपुर में ब्राह्मणों का आगमन राजा कियाम्बा के शासन काल 1467-1508 में बताया जाता है। इतिहासकार श्री इबुङोहल सिंह और निङथौखोङ्जम खेलचन्द्र इस बात का समर्थन करते है। इसकी पुष्टि- बामोन खुनथोक तथा बामोन मैहौबारोल से हो जाती है, जहाँ ब्राह्मणों के मणिपुर में आगमन का उल्लेख मिलता है। ये ब्राह्मण भारत के विभिन्न क्षेत्रों- गुजरात, मथुरा, कन्नौज, ओडिसा, कोलकता, नदिया, असम तथा त्रिपुरा से आए थे और अपने साथ अपनी भाषा और अपनी संस्कृति लेकर आए थे। यहाँ की भी अपनी समृद्ध भाषा तथा संस्कृति थी, जिसका प्रभाव बाहर से आए ब्राह्मणों पर पड़ा और ब्राह्मणों का एक भिन्न स्वरूप सामने आया। वहीं पर ब्राह्मणों की भाषा और संस्कृति का प्रभाव स्थानीय लोगों पर पड़ा। अतः दोनों संस्कृतियों के समन्वय से मणिपुर में एक नई संस्कृति का जन्म हुआ। ईश्वर की पूजा-आराधना जैसे धार्मिक अनुष्ठानों में ये ब्राह्मण संस्कृत तथा हिंदी की शब्दावली का प्रयोग करते थे। मणिपुर के शाही अभिलेख 'चैथारोल कुम्बाबा' में इस तथ्य की जानकारी भी मिलती है कि पन्द्रहवीं शताब्दी में राजा कियाम्बा द्वारा लमलाङदोङ या विष्णुपुर में स्थापित विष्णु मन्दिर में पूजा-अनुष्ठान करवाने के लिए ब्राह्मण नियुक्त किए गए थे।

प्रस्तावना-भारत के सीमांत उत्तर पूर्व में स्थित मणिपुर पर्वत मालाओं से घिरा प्राकृतिक संपदाओं से सम्पन्न ऐसा राज्य है, जो अपनी कला-संस्कृति और खेलों में अदभुत प्रतिभा के कारण एक विशिष्ट पहचान रखता है।इसकी सीमाएँ जहाँ उत्तर में नागालैंड, दक्षिण में मिज़ोरम और पश्चिम में असम से मिलती हैं तो पूरब में अंतर्राष्ट्रीय सीमा बर्मा अर्थात म्यामार से मिलतीहै। यहाँ का कुल क्षेत्रफल 22356 वर्ग कि.मी. जो अधिकांश पहाड़ी इलाका है । इसके कुल 16 जिले हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार यहाँ की जनसंख्या 27,21,756 है, जिसमें 13,51, 992 स्त्री और 13,69,764 पुरुष हैं। यहां विविध प्रकार की जाति और उपजातियाँ निवास करती हैं, पर प्रमुख जाति मैतै है। उनकी भाषा मणिपुरी है। भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से यह तिब्बतो-बर्मन परिवार की कुकीचीन उपशाखा के अंतर्गत आती है। यहाँ प्रमुख रूप से मणिपुरी भाषा या मैतैलोन का प्रयोग होता है। मैतै के अलावा यहाँ 34 जनजातियाँ भी निवास करती हैं और उनकी अपनी बोलियाँ हैं।15 अगस्त 1947 ई. को भारत आजाद हुआ। मणिपुर एक प्रिंस्ली स्टेट बना रहा और 15 अक्टूबर 1949 ई. से मणिपुर भारत में पार्ट-सी स्टेट के रूप में विलय हुआ। 21 जनवरी 1972 में इसे पूर्ण राज्य का दर्जा भी मिल गया।अट्ठारहवीं शताब्दी में पामहैबा अर्थात महाराजा गरीबनवाज़ द्वारा अपने शासन काल में वैष्णव धर्म को स्वीकार करने तथा राज धर्म घोषित कर दिए जाने के बाद तो वैष्णव पदावली तथा जयदेव के गीतगोविन्द के पदों का गान मणिपुरी समाज-सांस्कृतिक तथा धार्मिक क्रियाओं का अभिन्न अंग बन गया। यहाँ के हिंदुओं पर वैष्णव धर्म का सर्वाधिक प्रभाव पड़ा। अतः मणिपुरी लोगों के मन में हिन्दुओं के प्रमुख तीर्थ स्थलों-काशी, हरिद्वार, नवद्वीप, पूरी, वृन्दावन आदि क्षेत्रों के प्रति श्रद्धा का भाव जागा। अपने जीवन काल में इन तीर्थ स्थलों की यात्रा की आस हर हिंदू करने लगा। इन स्थलों की यात्रा से हिंदी तथा यहाँ की बोलियों से मणिपुर के लोगों का परिचय बढ़ा। उन्नीसवीं शताब्दी में जब अंग्रेज मणिपुर आए उस समय वे अपने साथ कुछ बंगला तथा हिंदी भाषी अधिकारियों को भी साथ लाए थे। उनसे सम्पर्क स्थापित करने के लिए भी मणिपुर के लोगों को हिंदी की आवश्यकता महसूस हुई। उन्नीसवीं शताब्दी में महाराज चुड़ाचाँद के शासन काल में औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था के लिए विद्यालयों की स्थापना की गई। मेधावी विद्यार्थियों को विद्याध्ययन के लिए काशी, प्रयाग,नवद्वीप जैसे स्थानों पर भेजा गया। इन धार्मिक स्थलों में रहकर उन विद्यार्थियों ने संस्कृत के साथ हिंदी का भी ज्ञान प्राप्त किया। इसके साथ मणिपुर में हिंदी को प्रसारित करने में हिंदी भाषी व्यापारियों की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही है। इस तरह हिंदी की एक पृष्ठभूमि इतिहास में ही निर्मित हो गई थी।

मणिपुर के हिंदी साहित्य को दो प्रकार से विभाजित किया जा सकता हैं-

पहला - मौलिक रचनाएँ तथा अनूदित रचनाएँ

दूसरा - स्थानीय या मणिपुरी रचनाकारों की रचनाएँ तथा गैर मणिपुरी रचनाकारों की रचनाएँ रचनाएँ चाहे स्थानीय रचनाकारों की हो या गैर मणिपुरी रचनाकारों की मणिपुर के हिंदी साहित्य को समृद्ध ही करती है। अतः दोनों ही प्रकार की रचनाओं को यहाँ सम्मिलित करना उचित होगा। रचनाओं को विधा के आधार पर कालक्रमानुसार प्रस्तुति समीचीन है। प्राप्त तथ्यों के आधार पर मणिपुर की पहली हिंदी पुस्तक अतोम बाबू शर्मा की 1951 में प्रकाशित **मणिपुर का सनातन धर्म** है। इसमें लेखक ने मणिपुर में वैष्णव धर्म के स्वरूप को स्पष्ट किया है। इसके बाद कलाचान्द द्वारा रचित पहला हिंदी उपन्यास **खम्ब-थोइबी** 1963 प्रकाशित हुआ। इसकी कथावस्तु मणिपुर की लोक गाथा खम्ब-थोइबी पर आधारित है। इसी वर्ष इसी लोकगाथा पर आधारित सी.एच. निशान निङतम्बा का नाटक खम्ब-थोइबी प्रकाशित हुआ। 1987 में श्री के. याइमा शर्मा द्वारा रचित नाटक **वीर टिकेन्द्रजीत** प्रकाशित हुआ। इस नाटक में युवराज टिकेन्द्रजीत के मातृभूमि की रक्षा के लिए अंग्रेजों से संघर्ष और अंतः जीवन की आहुति का मार्मिक चित्रण किया गया है।

1972 में एस. गोपेन्द्र शर्मा की **मणिपुरी संस्कृति-एक झाँकी** प्रकाशित हुई। डॉ. रमाशंकर नागर की **मणिपुर एक सांस्कृतिक झलक**, डॉ. गुरु वनमाली की **मणिपुरी नर्तन कला**, राधागोविंद थोङाम की **हिंदू धर्म के मूल तत्व**, प्रो. देवराज द्वारा संपादित **मणिपुर : विविध संदर्भ** तथा **मणिपुर : भाषा और संस्कृति** प्रकाशित हुई। डॉ. देवराज की ही मणिपुरी कविता मेरी दृष्टि में तथा मणिपुर विविध सन्दर्भ प्रकाशित हुआ। मौलिक काव्य संग्रहों में आचार्य राधागोविंद थोङाम का संग्रह **क्षितिज-सा-ध्येय** 1977 में प्रकाश में आया। इन कविताओं में मूल रूप से मानव प्रेम, निःस्वार्थ भाव और सदाशयता को महत्व दिया गया है।1992 में प्रो. देवराज का काव्य संग्रह **चिनार** प्रकाशित हुआ, जिसमें अन्य कविताओं के साथ प्रकृति के रंग, नम्बुल, लोकताक, थोइबी, खोङजोम तुरेल और इम्फाल

हशामिल है जो मणिपुर की पृष्ठभूमि पर रची गई है। 1999 में मणिपुर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के विद्यार्थियों द्वारा रचित कविताओं का एक संग्रह **प्रयास** प्रो. देवराज के संपादन में प्रकाशित हुआ। हिंदी में रचित मौलिक रचनाओं की सूची कालक्रमानुसार इस प्रकार दी जा सकती है-

मणिपुर का सनातन धर्म- अतोमबाबू शर्मा, सं.-1951, चुड़ाचाँद प्रिंटिंग वर्क्स, इम्फाल मणिपुर हिंदी और मणिपुरी परसर्गों का तुलनात्मक अध्ययन- अरिबम कृष्णमोहन शर्मा, सं.- 1972, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा मणिपुर : भाषा और संस्कृति- सं. प्रो. देवराज, हिंदी परिषद, हिंदी विभाग मणिपुर विश्वविद्यालय, कांचीपुर, इम्फाल-795003

मणिपुर : विविध संदर्भ, सं.- प्रो. देवराज, हिंदी परिषद, हिंदी विभाग, मणिपुर विश्वविद्यालय, काँचीपुर इम्फाल-795003 (मणिपुर)

हिंदी-मणिपुरी क्रिया संस्करण- इबोहल सिंह काङजम, प्रवीण प्रकाशन 1/1079- ई, महरौली, नई दिल्ली-110030

भारतीय संस्कृति की आधारशिला, सं.-राधागोविंद कविराज,प्र-1994, लोकप्रकाशन, उरिपोक, इम्फाल 755001 (मणिपुर)

हिंदू धर्म के मूल तत्व- राधागोविंद कविराज, लोकमंगल प्रकाशन, इम्फाल उरिपोक-795001 मणिपुर

हिंदी और मणिपुरी की समान शब्दावली (व्यतिरेकी अध्ययन)- ब्रजेश्वर शर्मा, 2000 एस.कुलचन्द्र शर्मा एण्ड सन्स प्रकाशन ब्रह्मपुर नहाबम, पुरितमयुम लैरक इम्फाल-795001 मणिपुर

प्रयोजनमूलक हिंदी- ह. सुबदनी देवी, 2002, वांखै थाङपात मपाल, वांखैराष्ट्रभाषा महाविद्यालय इम्फाल 975001 मणिपुर

हिंदी और मणिपुरी वाक्य गठनों का व्यतिरेकी अध्ययन- ह. सुबदनी देवी,2003 वांखै राष्ट्रभाषा महाविद्यालय,वांखै थाङपात इम्फाल-795001 मणिपुर

हरिकृष्णप्रेमी के एकांकी नाटकों एवं कविताओं का एक अध्ययन 2004, एम.अचौबी सिंह. पूर्वांचल सत्साहित्य प्रकाशन संस्थान इम्फाल, मणिपुर

अनुचिंतन- चिंतन : साक्षात्कार – सुरेन्द्र सिंह, 2005 थौनाओजम एंटरप्राइजेज इम्फाल मणिपुर

समकालीन हिंदी उपन्यास : समय से साक्षात्कार- ई. विजय लक्ष्मी, 2006 राधकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड 7/31अंसारी मार्ग, दरियागंज नई दिल्ली-110002

हिंदी साक्षात्कार का विकासात्मक इतिहास – सुरेन्द्र सिंह, 2007 थौनाओजम एंटरप्राइजेज इम्फाल मणिपुर

जीवन-चरित्र अथवा जीवनी साहित्य जैसे विधाओं में भी हिंदी में अनेक पुस्तकें उपलब्ध हैं। इस क्षेत्र में प्रथम प्रयास मणिपुर के प्रमुख हिंदी सेवी फुराइलातपम गोकुलानंद शर्मा द्वारा किया गया। इनके द्वारा सम्पादित पुस्तक **वीर नर-नारियों की जीवन गाथाएँ** 1985 में प्रकाशित हुआ। इस विधा को आगे बढ़ाने वाली रचनाएँ हैं-आचार्य राधागोविंद थोङाम की मणिपुर के **अमरदीप**(1988) तथा फुराइलातपम गोकुलानंद शर्मा की मणिपुर की प्राचीन कहानियाँ (1989)। इन पुस्तकों में मणिपुर के इतिहास से संबंधित चरित्रों का वर्णन किया गया है।1990 में जगमल सिंह की प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार द्वारा प्रकाशित पुस्तक **पूर्वोत्तर के स्वतंत्रता सैनानी** का प्रकाशन हुआ। मणिपुर हिंदी परिषद से जुड़े तथा हिंदी से जुड़े लोगों का परिचयात्मक पुस्तक संकल्प और साधना प्रो. दवराज के संपादन में पत्रिका विभाग, मणिपुर हिंदी परिषद द्वारा प्रकाशित किया गया। मणिपुर के हिंदी सेवियों और उनके द्वारा सम्पन्न कार्यों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने वाली अरिबम ब्रजकुमार शर्मा की पुस्तक **हिंदी को मणिपुर की देन** 2014 में प्रकाश में आई।इस महत्वकांक्षी शोध के माध्यम से न केवल हिंदी सेवियों का परिचय मिलता है बल्कि यह भी पता चलता है कि जन-जन तक हिंदी को पहुँचाने के लिए हिंदी सेवियों ने कितना संघर्ष किया है।

किसी भी समाज की संस्कृति, परम्परा, जीवन शैली तथा उस समाज के व्यक्ति मन के स्पंदन को पहचानने के लिए लोक साहित्य से बढ़कर दूसरा कोई साधन नहीं है। मणिपुरी लोक साहित्य के अपार भण्डार को हिंदी में भी संकलित करने का सराहनीय कार्य का आरंभ 1984 में हो गया था जब मणिपुरी लोक साहित्य को हिंदी में संग्रहीत करने के प्रथम प्रयास डॉ.सापम तोम्बा द्वारा किया गया जो श्रेष्ठ मणिपुरी लोक कथाएँ शीर्षक से प्रकाशित हुई।हिंदी में उपलब्ध मणिपुरी लोक साहित्य की सूची इस प्रकार है-

श्रेष्ठ मणिपुरी लोक कथाएँ, सापम तोम्बा सिंह, सं 1984, मणिपुरी हिंदी अकादमी, तेरा सापम लैरक, इम्फाल)मणिपुर)।795001

मणिपुर की लोक कथाएँ- सं. हीरालाल गुप्त, लोक मंगल प्रकाशन-1986 उरिपोक इम्फाल- 795001, मणिपुर।

मणिपुरी लोक कथाएँ- सी. एच.निशान निङतम्बा और जगमल सिंह, नुमितथोइ प्रकाशन-1991 क्वाकैथेल लमदोङ लैकाइ इम्फाल-795001, मणिपुर।

मणिपुर की लोक कथाएँ (भाग-2) - सं. हीरालाल गुप्त, गुप्त प्रकाशन 1990, तेली पट्टी इम्फाल, मणिपुर।

नोंदोननु- सी. एच. निशान निङतम्बा और देवराज, नुमितथोइ प्रकाशन-1991, क्वाकैथेल इम्फाल 795001, मणिपुर।

मणिपुरी लोक कथा संसार- सं. देवराज, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड-1999 नई दिल्ली।

मणिपुरी लोक गाथाएँ- सं. लनचेनबा मीतै, हिंदी लेखक मंच, मणिपुर हिंदी परिषद, इम्फाल मणिपुर

इस तरह सापम तोम्बा, हीरालाल गुप्त, सी.एच निशान, प्रो. जगमल सिंह, डॉ. देवराज तथा लनचेनबा मीतै द्वारा मणिपुरी लोक कथाओं और लोकगाथाओ से हिंदी पाठक को परिचित करवाया और मणिपुरी लोक कथाएँ तथा लोक गाथाएँ हिंदी साहित्य की धरोहर बनी।

साहित्य के क्षेत्र में अनुवाद का महत्वपूर्ण स्थान है। अनुवाद के माध्यम से एक भाषा का साहित्य दूसरी भाषा तक पहुँचता है, क्योंकि साहित्य संस्कृति का वाहक होता है। एक संस्कृति का दूसरी संस्कृति से परिचय भी बढ़ता है। इस तरह साहित्य के माध्यम से मानव हृदय में निकटता आती है। यह अति प्रसन्नता का विषय है कि अनुवाद के माध्यम से मणिपुरी साहित्य प्रचुर मात्रा में हिंदी साहित्य में पहुँच रहा है। इस क्षेत्र में पहल **छत्रध्वज शर्मा** द्वारा 1962 में ही की जा चुकी है । इन्होंने नवजागरणकालीन मणिपुरी साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर डॉ.कमल की रचना लै-परेङ से नौ कविताओं का गद्यानुवाद कविश्री माला शीर्षक से प्रकाशित की।सन् बासठ से अनुवाद का जो क्रम शुरू हुआ वह आज तक जारी है।

1989 में मणिपुरी साहित्य के द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर 34 कवियों की 78 कविताओं का अनुवाद काङजम इबोहल द्वारा किया गया जिसे प्रो. देवराज द्वारा संपादित कर **आधुनिक मणिपुरी कविताएँ** शीर्षक से प्रकाशित हुआ। मणिपुरी भाषा में आधुनिक काव्य आन्दोलन का आरंभ 1949 से माना जाता है और इस संग्रह में संकलित कविताओं में युद्धोत्तर मणिपुर की परिवर्तित सामाजिक,राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिस्थितियों को कवियों ने विषय रूप में चुना है।प्रो. देवराज द्वारा संपादित **मीतै चनु** (1978), 1996 में हजारीमयुम गोकुलानंद शर्मा की 52 कविताओं का संग्रह हृदय सुमन राष्ट्रीय चेतना चिंतन प्रकाशित हुआ।1990 में फागुन की धूल नामक संग्रह प्रकाशित हुआ। इसमें मणिपुरी कवियों की हिंदी में अनूदित कविताएँ तथा हिंदी में रचित कविताओं का संकलन किया गया है।1993 में हजारीमयुम सुबदनी द्वारा डॉ.कमल की कृति लै-परेङ का हिंदी अनुवाद **पुष्पमाला** के नाम से प्रकाशित हुआ।1995 में सिद्धनाथ प्रसाद द्वारा अनूदित तथा प्रो. देवराज द्वारा

संपादित **नवजागरणकालीन मणिपुरी कविताएँ** प्रकाश में आईं। इन संग्रहों की विशेषता यह है कि इनमें संकलित कविताओं में प्रमुखतः मातृभूमि और मातृ भाषा प्रेम और उसकी उन्नति के लिए चिंता के साथ सामाजिक तथा धार्मिक रूढ़ियों का विरोध, प्रगतिशीलता, देशप्रेम, समानता और भाइचारा प्रमुख रूप से दिखाई देता है। जननेता इरावत द्वारा 1942- 43 के दौरान जेल में रचित कविताएँ ईमागी पूजा शीर्षक से सन्1987 में प्रकाशित हुई। इसी का हिंदी अनुवाद 1998 में माँ की आराधना शीर्षक से प्रकासित हुई। सन् 2000 में लनचेनबा मीतै की रचनाएँ जित देखूँ तथा तुझे नहीं खेया नाव और मेमचओबी की अन्द्रो की आग युवा कविता आन्दोलन की महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं। मणिपुर में उग्रवाद की समस्या से उत्पन्न स्थिति और आम जनता पर उसके प्रभाव और प्रतिक्रिया को इन कविताओं में व्यक्तिगत अनुभूति के आधार पर व्यक्त किया गया है।सन् 1960 के बाद भारत में मोह भंग की जो स्थिति उत्पन्न हुई और उसके परिणास्वरूप साहित्य की जो प्रवृत्तियाँ उभर कर आईं उसी तरह मणिपुरी काव्य की प्रवृत्ति में भी बदलाव देखा जा सकता है, जिसने दो नए काव्यान्दोलन क्रुद्ध कविता आन्दोलन और युवा कविता आन्दोलन की शुरुआत कर दी। इन कविताओं में युवा पीढ़ि की मनोदशा को बखूबी दिखाया गया है। आधुनिक मणिपुरी कविता के महत्वपूर्ण कवि लाइश्रेम समरेन्द्र के काव्य संग्रह दो भागों में - कुछ कहूँ पतंग और कथा एक गाँव की- 2003 में प्रकाशित हुआ

कविता के बाद मणिपुरी कहानियों का अनुवाद सर्वाधिक रूप से हुआ है। युग का परिवेश तथा आम लोगों की समस्याओं को कहानियों ने व्यापक रूप से आवाज दी है। आधुनिक युग में बेरोजगारी, विकास का अभाव और उग्रवाद की समस्या के बीच जीवन व्यापार के लिए मजबूर आम लोगों को कहानीकारों ने विषय-वस्तु के रूप में चुना है। ऐसी अनेक मणिपुरी कहानियों का हिंदी अनुवाद पत्र-पत्रिकाओं में भी छपती रहीं हैं परंतु संग्रह रूप में प्रकाशित निम्नांकित पुस्तकों का उल्लेख किया जा सकता है- आधुनिक मणिपुरी कहानियाँ (विभिन्न कहानीकार),अनु – सापम तोम्बा सिंह,1991, मणिपुर हिंदी अकादमी, तेरा सापम लैरक, इम्फाल-795001, मणिपुर।प्रतिनिधि मणिपुरी कहानियाँ (विभिन्न कहानीकार)- अनु- इबोहल सिंह काङजम, सं- देवराज,1994 वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली। भारतीय शिखर कथा कोश(मणिपुरी कहानियाँ)- एकाधिक अनुवादक-सं- कमलेश्वर, पुस्तकायन प्रकाशन 1997 नई दिल्ली। पर्वत के पार (जामिनी देवी), अनु-ई. विजय लक्ष्मी,2005, रायप्रवीणा ब्रदर्स तेरा बाजार इम्फाल, मणिपुरधरती (विभिन्न कहानीकार) अनु- ई. विजय लक्ष्मी, 2008,परिलेख प्रकाशन नजीबाबाद(उ.प्र)

क्षितिज(विभिन्न कहानीकार) अनु- ई. विजय लक्ष्मी,2012 यश पब्लिकेशंस, नई दिल्ली प्रति शोध (ई. सोनामणि) अनु- ई. विजय लक्ष्मी 2019 यश पब्लिकेशंस, नई दिल्ली इन कहानियों के अलावा मणिपुरी उपन्यास भी हिंदी पाठकों को उपलब्ध हो चुके हैं-माधवी (डॉ.लमाबम कमल) अनु-निशान निङतम्बा, चिङाम्बम निशान प्र. 1978 क्वाकैथेल इम्फाल मणिपुर इम्फाल और उसकी आबोहवा (पाचा मीतै) अनु-युमनाम इबोतोम्बी, दशुमती देवी प्रकाशन1989 थाङमैबंद इम्फाल, मणिपुर

जहेरा(हिजम अङाङहल) अनु- निशान निङतम्बा, नुमितथोइ प्रकाशन1998 क्वाकैथेल, इम्फालाँ माँ (राजकुमार शितलजीत) अनु- सिजगुरुमयुम ब्रजेश्वर शर्मा, कुलचन्द्र शर्मा एण्ड संस पब्लिकेशंस 2000 ब्रह्मपुर नहाबम इम्फाल मणिपुर**नाटक**-थम्बालनु (बी.जयंतकुमार शर्मा) अनु- अरिबम कृष्णमोहन शर्मा, अरिबम रूपा शर्मा और अरिबम रोज़लीन शर्मा प्रकाशन 1994, शगोलबंद मबुधौ मंत्री लैकाइ मणिपुर।मणिपुर में हिंदी की स्थिति को मजबूत बनाने में पत्रकारिता की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसका आरंभ सन् साठ से माना जा सकता है। प्राप्त तथ्यों के आधार पर क्षेत्र में भी हिंदी को सक्रिय ही माना जाना चाहिए।णणिपुर में हिंदी की स्थिति की चर्चा अधूरी रह जाएगी यदि इसमें पत्रकारिता को शामिल न किया जाएगा। उपलब्ध प्रमाण के अनुसार इस क्षेत्र में भी साठ के दशक में ही प्रयास शुरू हो गया था। आधुनिक (1960), सम्मेलन गजट (1964), नागरिक पंथ (1972), पूर्वी पाणी(1977), पर्वती वाणी (1977), गाँधीवाद (1979), युमशकैश (1980), कुन्दोपरेङ(1983), महिप(1985), मणिपुरी महिला समाज (1988), जगदम्बी(1989), चयोल पाउ (1998) समय -समय पर निकलती रही पर इनमें से अधिकांश का प्रकाशन काल काफी अल्प रहा। इनमें महिप, चयोल पाउ और युमशकैश ही ऐसी है जो आज भी निकल रही है। इनमें मौलिक रचनाएँ, समीक्षात्मक लेख आदि साहित्य संबंधी सामग्रियों का प्रकाशन होता है। चयोल पाउ साप्ताहिक समाचार-पत्र है पर इसमें साहित्यिक सामग्रियों का भी प्रकाशन होता है।ये तमाम साहित्यिक रचनाएँ आज हिंदी साहित्य का धरोहर है। यहाँ केवल मणिपुर में हिंदी में रचे जा रहे साहित्य की चर्चा की गई है। जरूरी इस बात की ओर ध्यान देने की है कि पूर्वोत्तर में रचे जा रहे हिंदी साहित्य को क्या वह स्थान मिल पाएगा, जिसकी वह अपेक्षा करता है। इस संबंध में मुझे लगता है कि हिंदी समाज को पूर्वोत्तर साहित्य के प्रति थोड़ी सदाशयता के साथ विचार करने की आवश्यक्ता है। पूर्वोत्तर के हिंदी साहित्य को भी पाठक मिलने चाहिए और यह तभी संभव है जब देश-विदेश में हिंदी पढ़ने वाले लोगों को पूर्वोत्तर संबंधी साहित्य की जानकारी उपलब्ध हो।

निष्कर्ष-मणिपुर में मणिपुरी हिंदी सेवियों और प्रचारकों की संख्या ठीक है किंतु आधुनिक मणिपुरी भाषी हिंदी लेखकों में से निमाकित लेखकों का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है- डॉ. सुबदनी देवी, प्रोफेसर दीनमणि सिंह, प्रोफेसर अरिबम कुमार शर्मा, प्रोफेसर सापम तोम्बा सिंह, प्रोफेसर इबोहल सिंह काडजम, डॉ. अरिबम कृष्ण मोहन शर्मा, डॉ. लनचेनबा मैतै, डॉ. ब्रजेश्वर शर्मा आदि लेखकों ने मणिपुर के हिंदी वांड्मय में श्रीवृद्धि की है। वह दिन दूर नहीं है, जब मणिपुरी भाषी हिंदी लेखक अपनी राष्ट्रीय पहचान बना सकेंगे और हिंदी की साहित्यिक धारा में अपना प्रमुख स्थान निश्चित करेगें।

****

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. काङजम सिंह अनु.-इबोहल (1990) आधुनिक मणिपुरी कविताएँ (विभिन्न कवि) सं.-देवराज, वाणी प्रकाशन दरियागंज नई दिल्ली।
2. काङजम सिंह अनु.-इबोहल (1990) फागुन की धूल (विभिन्न कवि), सं.-देवराज, काङजम इंटरप्राइजेज़ नाउरेमथोङ, लौक्राकपम लैकाइ इम्फाल मणिपुर।
3. काङजम सिंह अनु.-इबोहल (2002) तीर्थयात्रा-(एलाङबम नीलकांत सिंह), 1996, हिंदी बुक सेन्टर, असफ अली रोड, नई दल्ली।
4. काङजम सिंह अनु.-इबोहल (2002) प्रतिनिधि मणिपुरी कहानियाँ (विभिन्न कहानीकार)- सं-देवराज,1994 वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. कुछ कहूँ पतंग और कथा एक गाँव की- (लाइश्रम समरेंद्र) अनु-हैराङखोङजम मेघचंद्र 2003 मणिपुर राइटर्स क्लब, नम्बोल, मणिपुर।
6. चाओबा कवि (1997) – जीवन और साहित्य, सं.- देवराज, साहित्य विभाग, मणिपुर हिंदी परिषद इम्फाल, विधानसभा मार्ग, इम्फाल मणिपुर.
7. जित देखूँ- (लनचेनबा मीतै), अनु सिद्धनाथप्रसाद. सं-देवराज, मणिपुर हिंदी परिषद विधान सभा मार्ग, इम्फाल मणिपुर।
8. देवी सुशीला (2000) आंद्रो की आग- (मेमचओबी) अनु- सोरोखाइबम, मणिपुरी हिंदी परिषद, विधान सभा मार्ग, इम्फाल मणिपुर
9. धरती (विभिन्न कहानीकार) अनु- ई. विजय लक्ष्मी, परिलेख प्रकाशन नजीबाबाद(उ.प्र)
10. नवजागरणकालीन मणिपुरी कविताएँ-(विभिन्न कवि)-अनु सिद्धनाथ प्रसाद, सं. देवराज, 1995 सुजाता प्रकाशन मेरठ।
11. पर्वत के पार अनु-ई. विजय लक्ष्मी,रायप्रवीणा ब्रदर्स तेरा बाजार इम्फाल, मणिपुर।
12. पुष्पमाला- (डॉ.लमाबम कमल सिंह) अनु- हजारीमयुम सुबदनी देवी, 1993 हजारीमयुम विनोदकुमार शर्मा थाङपात मपाल, इम्फाल।
13. प्रसाद सिद्धनाथ (2000) तुझे नहीं खेया नाव- (लनचेनबा मीतै) सं.-देवराज, विधान सभा मार्ग, इम्फाल-मणिपुर
14. भारतीय शिखर कथा कोश (1997) (मणिपुरी कहानियाँ)-एकाधिक अनुवादक-सं- कमलेश्वर, पुस्तकायन प्रकाशन नई दिल्ली।
15. सिंह लमाबम कमल (1962) कविश्रीमाला, अनु-अरिबम छत्रध्वज शर्मा, 1962 राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा महाराष्ट्र।
16. लक्ष्मी विजय धरती (विभिन्न कहानीकार) अनु- ई., परिलेख प्रकाशन नजीबाबाद(उ.प्र)
17. देवी आनंदी (1998) सपने का गीत-(खुमनथेम प्रकाश), आशिष प्रकाशन नागमपाल लाइमयुम लैरक, इम्फाल मणिपुर।

मराठी संत साहित्य में सामाजिक समता के तत्वों का अध्ययन

डॉ. संदीप मधुकर सपकाले
सहायक प्रोफेसर
मराठी विभाग महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

शोध सारांश : समग्र भारतीय साहित्य में मराठी संत साहित्य का अपना एक विशिष्ठ स्थान है। भारत को भावनात्मक रूप से एक साथ जोड़ते हुए भारतीय संत साहित्य ने सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध धार्मिक और सांस्कृतिक जागरण किया था। तत्कालीन सामाजिक राजनीतिक परिस्थितियों में इन संतों का सामाजिक जीवन भी 'प्रवाह के विरुद्ध तैरने' के समान था। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में उत्पन्न जातिभेद और अस्पृश्यता जैसी विकृत मानसिकता को अपने संत हृदय और भक्ति के सत्याग्रह से इन संतों ने सामाजिक समता के लिए कई यत्न किए। उनके यह यत्न हमें उनके भक्ति और काव्य की विविध कोटियों में देखने को मिलती है। सामाजिक समता पर संतों की भूमिका पर वर्ण और जाति व्यवस्था के आलोचनात्मक अध्ययन क्रम में प्रश्न भी उपस्थित हुए है। क्या भारतीय सामाजिक संरचना की वर्ण-व्यवस्था और उससे उपजी जातिभेद की अवस्था का पूरी तरह से उन्मूलन करने का प्रयास संतों ने किया ? इस प्रकार के प्रश्न भी संत साहित्य की आलोचनात्मक परिधि में लगातार उपस्थित होता रहा है। प्रस्तुत शोध आलेख में संत साहित्य की सामाजिक समता की दिशा में रचे गए मराठी संत काव्य को केंद्र में रखकर समझने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द : *मराठी, संत, साहित्य, अस्पृश्यता, भक्ति, विठ्ठल, पांडुरंग, जाति व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, सामाजिक समता*

भारतीय सामाजिक संरचना में वर्णव्यवस्था द्वारा वर्गीकृत समाज जब जातियों की असंख्य श्रेणियों में विभाजित होता गया तब जातिभेद की विकृतियों में सबसे भयावह विकृति के रूप में समझे जानेवाली 'अस्पृश्यता' भारत के लोगों के लिए एक अभिशाप बनकर उभरती है। जातिभेद की मानसिकता मात्र ऊपर से नीचे के क्रम में ही नहीं तो नीचे से ऊपर के क्रम में भी टकराहट पैदा करती हुई भारतीय समाज को लगातार अस्थिर करने का प्रयास करती रही है। मराठी संत साहित्य की सामाजिक पृष्ठभूमि में धर्म और धार्मिकता का शुद्ध स्वरूप प्रवाहमान है। संत साहित्य का सामाजिक दृष्टि से अध्ययन करनेवाले विद्वान मानते है कि तत्कालीन सामाजिक अवस्था और व्यवस्था में बदलाव के पक्षधर के रूप में संत उपस्थित नहीं होते बल्कि वे मान्य और प्रचलित धार्मिक रूढ़ियों में आयी हुई विसंगतियों की समीक्षा अवश्य करते हैं। मराठी संतों ने भक्ति-मार्ग का रास्ता दिखाते हुए प्रचलित सामाजिक व्यवस्था में व्यक्तिगत आध्यात्मिक उन्नयन पर जोर दिया। मराठी संत साहित्य के विद्वान ग. बा. सरदार लिखते है- *"संतों ने जातिसंस्था की पवित्रता को पूरी तरह सम्हाला। जन्मसिद्ध व्यवसाय के तत्वों का भी पक्ष उन्होंने लिया। जाति और जन्म आधारित व्यवसाय के बंधन से अधिक उससे उपजी उचनीचता की भावना उन्हें अधिक हानिकारक लगती थी। इसीलिए उन्होंने लोगों के ऊँचनीच के दायरे की सोच पर प्रहार किया। मनुष्य के वास्तविक बड़प्पन का सार उसकी जाति और व्यवसाय नहीं है बल्कि उसका चारित्र्य, ईश्वरभक्ति और परोपकार बुद्धि है"।* मराठी संत साहित्य ने भक्तिपरक चारित्रिक गुण संपन्नता के साथ परोपकार जैसे मूल्य को संत-व्यक्तित्व के जीवन आचरण का प्रमुख आधार माना है। वर्ण आधारित जातिव्यवस्था के प्रचलित मानदंडों के स्वीकार के साथ पूर्व जन्म के पापकर्मों का फल इस (मनुष्य) जन्म में भोगना पड रहा है। पूर्व जन्म में उनके हाथों हुई एक गलती को संत चोखामेला अपने एक अभंग में कहते है-

शुद्ध चोखामेळा । करी नामाचा सोहळा ॥ १
पमी यातिहीन महार । पूर्वी निळाचा अवतार ॥ २
कृष्णनिंदा घडली होती । म्हणोनि महार जन्मप्राप्ती ॥३
चोखा म्हणे विटाळ । आम्हा पूर्वीचें हें फळ ॥

प्राचीन मराठी साहित्य की काव्य-परंपरा के अध्ययन-क्रम में हमें संत परंपरा, पंडिती परंपरा और शाहीरी परंपरा प्रमुखता से देखने को मिलती हैं। मात्र इन तीनों परंपराओं में मराठी साहित्य के अध्ययन-अनुसंधान में केन्द्रीय स्थान पर संत परंपरा को माना जाता है। अपनी भक्ति से मराठी काव्य की संत परंपरा ने मराठी-साहित्य और समाज के वर्तमान को आज भी प्रभावित रखा है। मराठी साहित्य की वैचारिक विरासत के रूप में जब भी हम मराठी संत साहित्य के प्रभाव को देखते हैं तब भारतीयता की भावनात्मक एकता में हमें प्रमुखता से संत-साहित्य का आधार प्राप्त होता है। भारत के पूर्व से लेकर पश्चिम और उत्तर से लेकर दक्षिण तक भारत के संतों ने अनेक परिणामों और प्रभावों के बीच भारतीय जनमानस को एकसूत्र में बाँधे रखा है। मराठी संत-वाङमय का प्रस्थान पंढ़रपुर की विठ्ठल भक्ति से होते हुए मराठी-मानस को भारतीय-दर्शन (तत्वज्ञान) की अद्वैत परंपरा में 'भागवत-धर्म' की अखंडता में आज भी बाँधे हुए है। महाराष्ट्र की वारकरी परंपरा ही नहीं बल्कि आंध्र -कर्नाटक सहित दक्षिण भारत में विठ्ठल भक्ति की परंपरा विविध रूपों में देखी जा सकती हैं। विठ्ठल या विठोबा का वर्णन करते हुए संत ज्ञानेश्वर यह अभंग प्रस्तुत है-

पांडुरंगकांती दिव्य तेज झळकती ।
रत्नकीळ फांकती प्रभा ।
अगणित लावण्य तेज:पुंजाळले ।
न वर्णवे तेथींची शोभा ॥१॥

कानडा हो विठ्ठलु कर्नाटकु ।
तेणें मज लावियला वेधु ।
खोळ बुंथी घेऊनि खुणाची पालवी ।आळविल्या नेदी सादु ॥२॥
(कानडा हो विठ्ठलु कर्नाटकू
शब्देंवीण संवाद दुजेविण अनुवाद ।हें तव कैसेंनि गमे ।
परेहि परतें बोलणें खुंटलें ।वैखरी कैसेंनि सांगे ॥३॥)

पहले अभंग के पाठ का सामान्य भाषांतर – 'पांडुरंग के दिव्य तेज और उसकी कांति से रत्नों की प्रभा भी खिल उठी है। अगणित लावण्य और तेजपुंज का ऐसा प्रकटन हुआ है की वहाँ की शोभा अवर्णनीय हैं। कर्नाटकू-कानडे विठ्ठल ने मेरे मन के लक्ष्य को वेध लिया है'। दूसरे अभंग के पाठ का भाषांतर – 'इस कर्नाटकू-कानडे-विठ्ठल से शब्दों के बिना ही मेरा संवाद हुआ है और किसी दुभाषिए के बिना ही अनुवाद भी हो गया'। पंढ़रपुर के मंदिर में विठ्ठल कैसे प्रकट हुए ? उसके पीछे कई कथाएं है जिसमें एक कथा मातृपितृभक्त 'पुण्डलिक' की यह कथा सर्वश्रुत है। मनुष्य जीवन की नैतिकता को दर्शानेवाली भारतीय बोध-कथा की परंपरा में पंढ़रपुर, विठ्ठल और पुण्डलिक' की यह कथा हमारी सहज सामूहिक भारतीय स्मृति का संचित हैं। संत ज्ञानेश्वर से लेकर संत निलोबा तक 'पांडुरंग' की भक्ति का दर्शन विविध स्तर के मराठी संतों (स्त्री-पुरुष) के भक्ति साहित्य में गहरे-भावनात्मक रूप में प्रकट हुआ है। विठ्ठल से विठोबा यह नाम सर्वसामान्य लोगों के बीच भक्ति के चरमोत्कर्ष को प्राप्त करते हुए प्रचलित हुआ। मराठी संत साहित्य की परंपरा में जिनकी केन्द्रीय भूमिका रही है ऐसी संत कवियत्री

जनाबाई ने अपने अभंगों में विठ्ठल से अपने सखा रूप में संवाद किया है। संत जनाबाई के अभंग में हम विठ्ठल को एक ऐसे पिता के रूप में देखते है जिसमें महाराष्ट्र की समस्त जातियों के संत बालक रूप में अपने पिता के पूरे शरीर पर विराजमान हैं-

विठो माझा लेंकुरवाळा । संगे लेंकुरांचा मेळा ॥
निवृत्ती हा खाँद्यावरी । सोपानाचा हाथ धरी ॥
पुढे चाले ज्ञानेश्वर । मागे मुक्ताई सुंदर ॥
गोरा कुंभार मांडियेवरी । चोखा जीवा बरोबरी ॥
बंका कडियेवरी । नामा करांगुळी धरी ॥
जनी म्हणे गोपाळा । करी भक्तांचा सोहळा ॥

इस प्रकार हम देखते है कि मराठी संत साहित्य ने अपने व्यक्तिगत आध्यात्मिक उन्नयन के साथ महाराष्ट्र की समस्त जातियों को विठ्ठल भक्ति के वारकरी पंथ में सामाजिक समता का महत्वपूर्ण संदेश दिया है। संत जनाबाई ने विठ्ठल को एक ऐसे पालनकर्ता पिता के रूप में दिखाया है जिसमें भेदभाव करनेवाली मानसिक प्रवृत्ति का भक्ति-तत्वज्ञान के आधार पर सत्याग्रही निषेध किया गया है। मराठी संत साहित्य भारतीय समाज में व्याप्त अनेक दुर्गुणों और भेदभाव उत्पन्न करनेवाली बुराइयों तथा कुरीतियों के विरुद्ध अहिंसक रूप से भक्तिमय प्रतिरोध को बनाएँ रखता है। जिसके फलस्वरूप मराठी संत साहित्य का महाराष्ट्र की सामाजिक समता को स्थापित करने में अपनी भूमिका का निर्वहन आज भी निरंतर जारी है।

निष्कर्ष : भारतीय संत साहित्य के विस्तृत परिदृश्य में मराठी संत साहित्य ने भारत की सामाजिक समता की दिशा में पंढ़रपुर के विठ्ठल यानी पांडुरंग भक्ति के मार्ग को अपने आदर्श के रूप में स्थापित किया है। मराठी संत साहित्य ने सामाजिक समता स्थापित करने के क्रम में समस्त महराष्ट्रीय परिवेश की विभिन्न जातियों को भक्ति के एकतासूत्र में वारकरी पंथ के मार्ग पर आरूढ़ भी किया है। किंतु विठ्ठल भक्ति के लिए पंढ़रपुर की ओर वारकरी पंथ द्वारा प्रतिवर्ष की जानेवाली वारी के समापन के बाद महाराष्ट्रीय परिवेश में व्याप्त सामाजिक भेदभाव और विषमतापूर्ण बुराइयों को रोकने के लिए संतों की वाणी को आज भी सामाजिक समता की दिशा में प्रयुक्त किए जाने की आवश्यकता महसूस होती है।

****

संदर्भ :

1. ***सरदार, ग. बा. (2014). संत वाङमयाची सामाजिक फलश्रुती, लोकवाङमय गृह प्रकाशन, मुंबई***
2. ***खरात, शंकरराव. (2002). चोखोबाचा विद्रोह, सुगावा प्रकाशन, पुणे***
3. ***https://brah.ma/lekh/sant-dnyaneshwar-and-adwaita-siddhanta/***
4. ***https://www.santsahitya.in/dnyaneshwar/sant-dnyaneshwer-abhnag-906/***
5. ***ईलेंकर, सुहासिनी यशवंत.(2002). संत जनाबाई, प्रकाशन महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृति मंडळ, मुंबई***

विनोद कुमार शुक्ल के काव्य संग्रह में निहित जीवन-यथार्थ

डॉ. बीना कुमारी नायर वी.जी.
सहायक प्राध्यापिका एवं कोऑर्डिनेटर
हिंदी विभाग,लोयोला कॉलेज, चेन्नई-600 034

विनोद कुमार शुक्ल समकालीन कविता के संसार में बहुत ही प्रतिष्ठित कवि हैं, उनकी प्रारंभिक कविताओं में व्यंग्य, विसंगति और विडंबना का अधिक प्रभावोत्पादक प्रयोग हुआ है। उनकी कविताओं में मानवीय सहानुभूति,करुणा,यथार्थ दृष्टि और निजीपन आदि अधिक मात्रा में नज़र आते हैं। वे ज्यादा देशज, आंचलिक और स्थानीय वर्णन करते हैं। विनोद कुमार शुक्ल का, यथार्थ को देखने का तरीका बिलकुल नया और निजी है। उनकी विषय वस्तु निम्न और निम्नमध्यवर्ग से जुड़ी हुई जनवादी है। वे भारतीय जनसाधारण के कवि हैं। उनकी विशेषता यह है कि वे जीवन को हमेशा उसे जीने वालों की नज़रो से देखते हैं और बयान करते हैं। समाज में विद्यमान शोषण,अत्याचार,अन्याय,गरीबी,भेदभाव,आदि का स्पष्ट वर्णन उनकी कविताओं में मिलता है। जीवन को जितनी गहराई,सहानुभूति,करुणा से विनोद कुमार शुक्ल ने देखा है, उतना किसी और ने नहीं देखा। उनके काव्य में अपने समाज और समय का प्रभाव है। आजकल समाज में मानव मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है।

मनुष्य को मानवता का मूल्य जानना चाहिए और शांति, विश्वास और भाईचारे को बढ़ाकर एक नए स्वस्थ्य मानवीय मूल्यों युक्त समाज का निर्माण करना चाहिए। मानव को मानव से जोड़ना चाहिए। बढ़ती हुई महँगाई को भी कवि ने अपनी लेखनी का विषय बनाया है। उन्होंने अपनी कविता में बताया है कि महँगाई गरीबों के लिए अभिशाप है, यह उन्हें कुपोषण का शिकार बनाती है। यथा-

"बाज़ार से खरीदी गई है यह टँगी हुई रंगीन तस्वीर
सुन्दर गोल-मटोल बच्चों की-
कि अपने घर के बच्चे इतने सुन्दर नहीं होते,
वैसे जूते-कपड़े /और इतने स्वस्थ, गोल-मटोल भी नहीं होते।"

यह समाज और देश के विकास के लिए बाधा है। वे अपने काव्य में इस बात पर भी ज़ोर देते हैं कि जो भी चीज़ महँगी होगी वह आम आदमी की पहुँच के बाहर होगी। अतः महँगाई को रोकने का प्रयास भारत जैसे देश के लिए परम आवश्यक है। यथा-

"सबसे गरीब बीमार आदमी के लिए
सबसे सस्ता डॉक्टर भी/बहुत महँगा है।"

उनकी कविताओं में गांव एवं शहर के बीच के अंतर को दूर करने का प्रयास किया गया है। उन्होंने एक ओर महानगरीय जीवन की भागदौड़ भरी ज़िन्दगी को इंगित किया है तो दूसरी ओर पहाड़ी एवं ग्रामीण जीवन के अभाव भरी ज़िन्दगी को रेखांकित करने का प्रयास किया है।

-1-

कवि का कथन है-

"अरे! रोक दो मत जाने दो/मज़बूर विस्थापित मजदूरों को
कहाँ गया लाल झंडा! लाल बत्ती!! गाड़ी रोकने को
आ क्यों नहीं जाता सामने सूर्योदय लाल सिग्नल सा
खींच दे उनमें से ही कोई ज़ंजीर ख़तरे की
या पहुंचे कोई इंजन तक/ कर ले कब्जा गाड़ी के आगे बढ़ने पर
पलटा दे दिशा गाड़ी की/कूदे सब खिड़की दरवाज़े से डिब्बे की
लौटें लेकर फैसले का विचार लश्कर
छोड़ दें पीछे मोह कचरे की गृहस्थी का
टट्टा कमचिल बासी की बटकी हंडी भी
पर भूल न जायें ढ़िबरी कंदिल
ज़रूरत अंधेरे में रास्ता ठीक देखने की।"

वे जीवन को जीने के प्रति लालायित हैं। वे ईर्ष्यापूर्ण जीवन जीना नहीं चाहते हैं, बल्कि समाज और मानव मात्र की भलाई के लिए अपना जीवन समर्पित करना चाहते हैं। कवि संघर्ष करते हुए कठिनाइयों का मुकाबला करने के लिए तैयार हैं। वे किसी तानाशाह की मनमर्जी का विरोध करते हैं। विनोद कुमार जी ने अपने काव्यों में शोषकों,अत्याचारियो एवं तानाशाही सत्ता का विरोध किया है और मज़दूर, गरीब और दलित लोगों के लिए आवाज़ उठाई है। कवि स्वयं भी गरीब पृष्ठभूमि से हैं, अतः वे गरीबों की दयनीय स्थिति से अच्छी तरह वाकिफ़ हैं। उन्होंने खुद अत्याचार, अन्याय, भूख आदि को आँखों से देखा और सहा है। इसलिए इनकी कविताओं में अन्य कवियों की अपेक्षा अधिक संवेदनशीलता है। वे कविताओं में कोरी भाषण बाजी को पसंद नहीं करते हैं। वे शोषित वर्ग के जीवन के यथार्थ को प्रकट करना चाहते हैं।कवि के शब्दों में -

"रोटी और सूखी आलू की सब्जी को बिखरता
ढक्कन अलग दूर हुआ
अचानक तब इकट्ठे भूखे नंगे लड़कों में
होने लगी उसी की छीना झपटी
मेरी छाती में धक-धक
मेहनत को आगे भूख का ख़तरा हर हमेशा।"

आज हमारी युवा पीढ़ी में उदासी और आक्रोश है। हमारे वर्तमान का नया अर्थतंत्र एवं जीवन पद्धति, उपभोगतावादी समाज की देन है जिससे हमारे समाज की सारी मूल्य व्यवस्था चरमरा गई है।यथा-

"घर के लोगों से घर का संबंध नहीं
तथा यह सामाजिक समाज नहीं
-2-
तथा थोड़ी दूर पर रहने वाला मेरा भाई
कई दिनों से मिला नहीं
तथा सड़क से जाते हुए वह मुझे दिखा
उसने भी देखा/ पर चला गया।"

जिन मूल्यों पर मानव समाज टिका हुआ है उनसे सबका विश्वास उठता जा रहा है। आज बड़े-बड़े पदों पर आसीन अधिकारी एवं मंत्रियों के भ्रष्टाचार, बेरोज़गारी और भौतिक सुखों को प्राप्त करने के लिए हो रही अंधी दौड़ ने युवा मन को निराश,अंधकार और परेशानी में डाल दिया है। आज समाज में ईमानदारी, निष्ठा,विश्वास,परोपकार और भाईचारे की जगह स्वार्थ,छल,कपट,लालच,अपराध आदि बढ़ गए हैं। ऐसे में मनुष्यता को बचाए रखना कठिन है इसलिए कवि मनुष्यता के हत्यारों समाज के कंटकों को अपनी कविताओं में सीधी चुनौती देते हैं।

विनोद कुमार शुक्ल ने अपने काव्य में कुछ प्रेम संबंधी कविताएं भी संकलित की हैं लेकिन उनकी प्रेम कविताएं अन्य कविताओं से भिन्न है। उनकी प्रेम-कविताओं से प्रेम करने वालों की मनःस्थिति का पता चलता है। यथा -

" वे दोनों एक दूसरे के भक्त
और कोई देवी-देवता नहीं
चौरासी करोड़ देवी देवताओं से
निर्जन प्रदेश का एकांत
वहीं घर/ पूजा की कठोरी सा।"

इनकी कविताएं पुराने दायरों को तोड़ने वाली कविताएं हैं। इनकी कविताएं पीड़ा और दुख की स्थिति में पलायन करने के बजाय, जिंदगी के सैलाब में कष्टों का डटकर मुकाबला करने की प्रेरणा देती है। ये एक ऐसे कवि हैं जो अपनी कविताओं में अपने समय में रहते हुए समय से पार देखते हैं। कवि अच्छाई का साथ देते हैं और बुराई के खिलाफ हैं।

वे अन्याय का सदैव विरोधी हैं एवं न्याय को बढ़ावा देने के लिए उनमें साहस है, और वह आम आदमी के साथ हैं। इनके काव्य संग्रह में ऐसी कविताएं हैं जो कि मनुष्य में कर्म की चेतना जाग्रत करती है। उन्होंने अपनी कविताओं में अपने समय और अपनी पीढ़ी की मानसिकता को प्रदर्शित करने का प्रयास किया है। जीवनोन्मुख रहकर ही वे ऐसी कविताएं प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं। विनोद कुमार ने सामाजिक ताने-बाने पर कड़ा प्रहार किया है।कवि सामाजिक कुरीतियां,धार्मिक पाखंड आदि बुराइयों को दूर करने की कसम ली है। समाज में ईमानदार आदमी का कोई मूल्य नहीं है। चालक बेईमान लोग और भ्रष्ट नेता आज समाज के बुद्धिजीवी बनकर धर्म के ठेकेदार बने हुए हैं। कवि का कथन है-

"लोगों तक पहुंचने की कोशिश में
दो-चार लोगों ने
-3-
सबसे मुझे अलग किया
मुझको सुनसान किया
बड़ा नुकसान किया।"

कवि इस तरह के लोगों का साथ नहीं देना चाहते हैं। वे उनके वास्तविक रूप को पहचान कर दंड देना चाहते हैं। जो लोग संत का रूप धारण कर अपराधों को जन्म दे रहे हैं, भोली-भाली जनता को भड़का कर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं, उनको समाज से हटाना चाहिए। कवि ने उन लोगों को भी अपने काव्य में सचेत किया है जो समाज कंटकों के बहकावे में आ जाते हैं और अन्याय सहन करते हैं। यथा -

"ईश्वर अब अधिक है
सर्वत्र अधिक है
निराकार साकार अधिक
हरेक आदमी के पास बहुत अधिक है।"

विनोद कुमार शुक्ल प्रकृति प्रेमी हैं। वे इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर थे। इस वजह से भी उन्हें पर्यावरण और पेड़-पौधों से बहुत लगाव है। वे मानते हैं कि प्रकृति का नष्ट होना मानव का नष्ट होना है। प्रकृति प्रेम, गांव एवं पहाड़ों से आत्मीयता उनके काव्यों में देखी जा सकती है। कवि के शब्दों में-

"पहाड़, टीले,चट्टाने,तालाब
असंख्य पेड़ खेत
कभी नहीं आएंगे मेरे घर
खेत खलिहानों जैसे लोगों से मिलने
गांव-गांव, जंगल, गलियां जाऊँगा।"

कवि रायपुर में रह रहे हैं तो भी उनके पैतृक गांव छत्तीसगढ़ उनके जीवन से पूरी तरह नहीं हटा है। वे समय-समय पर वहां जाते रहते हैं। कवि के शब्दों में-

"रायपुर बिलासपुर संभाग
हाय ! महाकौशल छत्तीसगढ़ या भारतवर्ष
इसी ने नांद गांव मेरा घर
कितना कम पहुंचता हूं जहां
इतना जिंदा हू/ सोच कर खुश हो गया कि
पहुँचूगा बार-बार।"

उनकी अधिकांश कविताओं की भावभूमि आज के समग्र जीवन को पकड़ने की कारगर कोशिश मिलती है। विनोद कुमार मानवीय संवेदना का प्रक्षेपण उस साधारण आदमी की खोज में करते हैं, जिसे हमारे समाज ने अनदेखा किया है।

-4-

उनकी कविताओं में निम्न वर्ग की निपट ज़िन्दगी का चित्रांकन है। मध्यवर्ग उनकी कविता में विरल है,अगर मध्यवर्ग कभी कविता में आता भी है तो मध्यवर्ग को तीखी आलोचनात्मक दृष्टि के साथ देखते हैं।

कवि की संवेदना मध्यप्रदेश के आदिवासी जनजीवन में बराबर धड़कती रहती है। वे उनके गरीब और बेसहारा जिंदगी में घुसकर जीवन के क्रूर यथार्थ का साक्षात्कार करते हैं। 'कोसाफल के तैयार होते ही' कविता में आदिवासी जिंदगी के यथार्थ का क्रूर साक्ष्य प्रस्तुत करती है। जैसे-

"जंगल के आदिवासियों को
उनकी संपूर्ण और अर्ध नग्नता में
कि कोसावस्त्रफल तैयार हो गया है
उसी स्पर्श को छूते हुए
आदिवासी जन कोसाफल तोड़ने निकल जाते हैं।"

कोसाफल आदिवासी सभ्यता का प्रतीक है और उसका बिकना उनकी बेचारगी भरे जीवन का प्रतीक है। आदिवासी लोगों की जिंदगी आज कितनी असुरक्षित है इसका उदहारण उनकी कविता 'जंगल के दिन भर के सन्नाटे में' द्रष्टव्य है। यथा -

"एक अकेली आदिवासी लड़की को
घने जंगल जाते हुए डर नहीं लगता
बाघ-शेर से डर नहीं लगता
पर महुवा लेकर गीदम के बाजार जाने से
डर लगता हैं। "

विनोद कुमार शुक्ला यह कहना चाहते हैं कि आज आदिवासी स्त्री का सबसे बड़ा डर एक सभ्य समाज के बाज़ार है। सभ्यता का यह डर केवल आदिवासी जीवन में ही नहीं है बल्कि आज के सभ्य समाज में भी व्याप्त है। यह असुरक्षा आतंकवादी, गुंडों, मवालियों द्वारा हमारे घर में व्याप्त है।

अपनी सुदीर्घ काव्य यात्रा के जिस मुकाम पर विनोद कुमार शुक्ला आज खड़े हैं,वहाँ उनकी काव्योपलब्धि का मूल्यांकन करना आलोचना के लिए कठिन कार्य है।उनकी सूक्ष्म काव्याभिव्यक्ति की तरह से पेचीदी भी।

गौर से देखें तो उनकी कविता का रेंज इतना व्यापक,गहरा और समावेशी है कि उसकी शिनाख्त करते वक्त बराबर यह संशय बना रहता है कि उनका महत्वपूर्ण कहीं छूट न जाए। खासतौर से विनोद की कविता में शब्दों की चतुराई भरा खिलवाड़ है।

'सब कुछ होना बचा रहेगा' काव्य संग्रह की कविताओं में आज के समग्र जीवन को पकड़ने की कारगर कोशिश दिखाई देती है। बाहर से बेहद शांत और ठंडी दिखने वाली इन कविताओं में बोरसी की आग सरीखी ऊष्मा और बैचैनी है जो दुनिया के उस मनुष्य के पक्ष में खड़ी है जो असहाय और निहत्था है। कवि ऐसे मनुष्यों की दुर्लभ प्रजाति को बचाने के लिए कृतसंकल्प है।

-5-

विनोद कुमार जी की बेचैनी केवल घर की खोज नहीं, बल्कि वे छिपे हुए उन मनुष्यों की खोज करना चाहते हैं जो इस संसार में रोजी रोटी के लिए पिस रहे हैं। 'जो मेरे घर कभी नहीं आएंगे' कविता में कवि यही सत्य ढूंढते हैं । यह मनुष्यता के सघन आवेग की अद्भुत कविता है जिसमें कवि की काव्य संवेदना की अदृश्य ताकत का अंदाजा लगाया जा सकता है। अनोखे शिल्प विन्यास के कारण विनोद कुमार की कविता शब्दों का खेल करती है पर वास्तव में यह उनका हुनर है। उनकी कविता समकालीन कविता के दृश्य पर समकालीन जीवनानुभव को प्राचीनता से, प्रकृति से मनुष्य को जिस तरह उद्घाटित करती है उससे कविता की एक दूसरी दुनिया खड़ी हो जाती है इसे देखने के लिए कवि की नज़र चाहिए।

निष्कर्ष:

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि विनोद कुमार जी की कविताओं के भूगोल का जायजा लिया जाये तो यह पता करना कठिन होगा कि असल में कवि किस भूभाग के हैं। उनकी कविता इतिहास,परंपरा,स्मृति,अध्यात्म और प्राक जीव का अन्वेषण तो करती ही है, उनका उत्खनन भी करती है। कवि साधारण जीवनानुभव के बीच से गुजरती हुई चीजों और अनुभवों को इस तरह देखते हैं जैसे लगता है ऐसे तो कभी देखा ही ना था। यह देखना सिर्फ क्रिया भर नहीं है बल्कि जीने की प्रक्रिया है। देखने में जीने की यही प्रक्रिया कवि को अपने समय से बाहर ले जाकर इतिहास,परंपरा,संस्कृति यहाँ तक कि आदिमानव तक खींच ले जाती है जहां से वे सबका पुनरीक्षण करते हैं। उनकी कविता वर्तमान के यथार्थ को पकड़ने के लिए अतीत और भविष्य दोनों ओर झांकती है।

****

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. 'अतिरिक्त नहीं',विनोद कुमार शुक्ल,पृ- 66.
2. 'सब कुछ होना बचा रहेगा',विनोद कुमार शुक्ल,पृ- 36.
3. 'वह आदमी नया गरम कोट पहिनकर चला गया विचार की तरह', विनोद कुमार शुक्ल,पृ-130.
4. 'वह आदमी नया गरम कोट पहिनकर चला गया विचार की तरह', विनोद कुमार शुक्ल', पृ-131.
5. 'अतिरिक्त नहीं',विनोद कुमार शुक्ल, पृ- 15.
6. 'अतिरिक्त नहीं',विनोद कुमार शुक्ल, पृ- 88.
7. 'सब कुछ होना बचा रहेगा',विनोद कुमार शुक्ल,पृ- 59.
8. 'अतिरिक्त नहीं',विनोद कुमार शुक्ल, पृ - 20.
9. 'सब कुछ होना बचा रहेगा',विनोद कुमार शुक्ल, पृ- 13.
10. 'वह आदमी नया गरम कोट पहिनकर चला गया विचार की तरह',विनोद कुमार शुक्ल, पृ-23
11. 'सब कुछ होना बचा रहेगा', विनोद कुमार शुक्ल, पृ- 19.
12. 'सब कुछ होना बचा रहेगा', विनोद कुमार शुक्ल, पृ- 20.
13. 'सब कुछ होना बचा रहेगा',विनोद कुमार शुक्ल,पृ- 22.

हिन्दी उपन्यासों में चित्रित नारी अस्मिता पर विमर्श

डॉ.सुनील
एसोसिएट प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष,हिन्दी-विभाग
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय,
अमृतसर-143005 (पंजाब)

पवन कुमारी
हिंदी-विभाग
हंसराज महिला महाविद्यालय,जालंधर
मोबाइल न. 9915511752

भारतीय पुरुष प्रधान समाज में नारी को गौण स्थान दिया गया है। स्वतंत्रता के बाद भारतीय नारी को घर से बाहर निकलने का अवसर मिला। भारत की सामान्य नारी आज भी सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी नजर आ रही है। कहीं सामान्य नारियां अपने हितों और हकों से अभी भीअनभिज्ञ हैं। अनादि काल से नारी, साहित्य का केंद्र रही है। साहित्य और नारी का सबंध शाश्वत है। साहित्य में मानवीय संवेदनाएं प्रभावपूर्ण ढंग से अभिव्यक्ति पाती हैं। उपन्यास साहित्य अपने उद्भव काल से ही नारी को उसके सहज रूप में चित्रित करता रहा है। " जिस तरह नारी के बिना पुरुष में तथा समाज में पूर्णता नहीं आ पाती,उसी प्रकार साहित्यभी नारी चित्रण के बिना पूर्ण नहीं हो सकता। सभ्यता एवं संस्कृति का विकास वस्तुतः नारी की स्थिति के विकास से ही प्रतिबिंबित होता है।समाज नारी से प्रेरणा, प्रेम विश्वास प्राप्त करता है।"[1]

हिंदी उपन्यास साहित्य में प्रारंभ से ही भारतीय नारी प्रमुख वर्ण्य-विषय रही है। विश्व का समस्त साहित्य अति प्राचीन काल से नारी केंद्रित रहा है। नारी जीवन एवं नारी के मनोभावों का रहस्योद्घाटन ही साहित्य का प्रमुख विषय पहले भी था और आज भी है। हिंदी उपन्यास में साहित्य नारी की स्थिति सदैव युग साक्षेप रही है। भारतीय नारी का सांप्रतिक रूप बहुत ही प्रभावशाली एवं सार्थक पद्धति में हिंदी उपन्यासों के प्रारंभिक काल से ही दिखाई देता है। बाल-विवाह , अनमेल विवाह, विधवाओं की बुरी दशा के प्रति आक्रोश का भाव तत्कालीन उपन्यासों में दिखाई देता है। इस युग में नारी विलास की वस्तु समझी जाती थी। उसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था।

हिंदी का प्रथम उपन्यास ' परीक्षा गुरु'में हमें नारी का सनतरी रूप ही मिलता है। इस युग में वेश्यावृत्ति के उन्मूलन के प्रयास किए गए, साथ ही विधवाओं के पुनर्वास की भी कल्पनाएं की जाने लगी थी। प्रेमचंद कायुग हिंदी कथा- साहित्य में नव युग का प्रारंभ था। जिसमें एक और रूढ़ियों से जर्जित समाज था तो दूसरी ओर नवजागरण की स्थितियां भी विद्यमान थी। नारी जाति की स्थिति में सुधार लाने में आर्य समाज बहुत सक्रिय रहा। बाल विवाह, पर्दा प्रथा और अस्पृश्यता जैसी कुरीतियों के विरुद्ध आर्य समाज ने आवाज उठाई। प्रेमचंद के दौर से स्त्री शिक्षा का महत्व अधिक होने लगा। स्त्री शिक्षा ने नारी समाज में नई चेतना जगाई। वह आर्थिक धरातल पर स्वाबलंबी बनने लगी। प्रेमचंद युगीन नारीवादी दृष्टि सुधारवादी थी। तथा इस युग की नारी उत्तेजना ने इसे जागृत किया, अतः नारी के सम्मुख जीवन का लक्ष्य स्पष्ट हो चुका था । नारी भी पुरुषों के समान सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य कर स्वयं को समाज के लिए सार्थक बनाना चाहती थी। प्रेमचंदोत्तर काल के हिंदी उपन्यासों में अनेक नई प्रवृत्तियों ने जन्म लिया। मनोविश्लेषण प्रधान उपन्यासों में नारी की मानसिकता का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नारी से संबंधित राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक स्थितियां परिवर्तित होती दिखाई देती हैं।

" स्वतंत्रयोत्तर हिंदी उपन्यासों में भारतीय नारी- जीवन के दो महत्वपूर्ण पक्ष उद्घाटित हुए ,पहला- भारतीय नारी की आर्थिक, सामाजिक और परिवारिक स्थितियों का विश्लेषण, दूसरा- पुरुषों के साथ उसके संबंधों का विश्लेषण"[2]

स्वतंत्रयोत्तर हिंदी उपन्यासों में कामकाजी नारी का चित्रण अधिक हुआ है। इस काल की भारतीय नारी की मानसिकता में अनेक बदलाव आए। छायावाद की नारी ने प्राचीन रूढ़ियों से मुक्ति प्राप्त करने के प्रयास किए, वही प्रयास स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात अधिक गतिशील होकर नारी-जीवन को अधिक आत्मनिर्भर तथा स्वतंत्रचेता बनाने लगे। नारी जागरण की यह प्रक्रिया भारत में आज भी जारी है। बुद्धिजीवी, कामकाजी, , शहर व संपन्न वर्ग की नारियों में अपने अधिकारों के प्रति चेतना अधिक कारगर और यथार्थपरक दिखाई देती है। उत्तरशती के उपन्यासों में उन महिलाओं का चित्रण अधिक मिलता है जो अपनी स्वेच्छा एवं आत्मनिर्भर जीवन के लिए आजीवन अविवाहित रह जाना स्वीकार कर रही हैं। आज भारतीय नारी विवाह के शोषण युक्त स्वरूप को चुनौती दे रही हैं। जागरूक नारी और पुरुष के अधीन नहीं रहना चाहती। अब भारतीय स्थितियों में विवाह का अर्थ स्वामित्व अथवा दासत्व नहीं रहा बल्कि वह एक सुमधुर सम्मान युक्त सहजीवन है। आज भारतीय समाज में विवाह में जातिभेद की समस्या गौण एवं महत्वहीन होने लगी है। अनेक हिंदी उपन्यासों में इसके उदाहरण परिलक्षित होते हैं- ' जहाज का पंछी' उपन्यास में इसाई फेक सुखिया वेश्या से हिंदू पद्धति से विवाह करता है। ' झूठ सच' उपन्यास में कनक- गिरी, बूंद और समुद्र उपन्यास में सज्जन- वन कन्या और' उखड़े हुए लोग' उपन्यास में शरद-जया विजातीय विवाह करते हैं। आज भारतीय नारी ने जीवन के प्रति दृष्टिकोण को बदल दिया है। वह स्त्री- पुरुष संबंधों के प्रति दृष्टिकोण में क्रांतिकारी परिवर्तन को स्वीकार कर चुकी है। प्राचीन जीवन मूल्यों के प्रति उसकी दृष्टि आलोचनात्मक तथा विश्लेषणात्मक हुई है। आधुनिक काल में भारत में राजनीति के क्षेत्र में महिलाओं का वास्तविक पदार्पण बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में देखा जाता है। इस युग में महिलाओं ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत के संविधान निर्माण में भी अनेक स्त्रियों ने अपना योगदान दिया।' बीज' उपन्यास की उषा, हरिजन आंदोलन में सक्रिय भाग लेती हैं। उत्तरशती का हिंदी साहित्य सामूहिक वैचारिकता के विकास का ही परिष्कृत रूप है। इस प्रकार की जो नई वैचारिक स्फूर्ति दिखाई देती है। उससे सिद्ध होता है कि इस काल का चिंतन रूढ़ियों मुक्त एवं अति नूतन है। "इस दशक की नारी विविध रूप लेकर पाठकों के सामने खड़ी है। कैरियर के पीछे पड़ी नारी,रखैल नारी, विधवा नारी,उन्मुक्त यौन संबंधों के पीछे पड़ी नारी, चेतित नारी, उपेक्षित- प्रताड़ित दलित नारी, नौकरी पेशा नारी, विवाह बंधन से मुक्त नारी इस दशक के नारी के यह विविध रूप इस दशक की नारी की स्थिति के सबूत पेश करते हैं। "[3]स्वतंत्रयोत्तर काल की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थिति ने मानवीय मूल्यों में क्रांतिकारी परिवर्तन उत्पन्न कर दिया था। महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में यह परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देता है। प्राचीन संस्कारों और नवीन आदर्शों के मध्य संघर्षरतनारी का जीवन इनके उपन्यासों में अधिक चित्रित हुआ है। नष्ट नीड, डार से बिछड़ी, पानी की दीवार, जाड़े की धूप, मोम के मोती, फूलों की सुगंध, कांटो की चुभन, मूक तपस्वी, भटकती आत्मा, सपने, मान और हट इत्यादि स्वतंत्रयोत्तर काल में महिलाओं के द्वारा रचित प्रमुख उपन्यास हैं। कामकाजी नारी की समस्याओं, स्त्री पुरुष के बदलते संबंधों, स्त्री की तनावग्रस्त एवं द्वंदग्रस्त मानसिकता एवं मुक्ति की कामना को महिला उपन्यासकार ने अत्यंत सुगमता एवं मार्मिकता के साथ चित्रित किया है। आज नारी अपनी इच्छाओं के दमन की पक्षधर नहीं है, ना ही वह जीवन के एकाकीपन और नीरसता से समझौता करना चाहती है।

इसके विपरीत वह अपने पुरुष मित्रों के साथ स्वतंत्र संबंधों की आकांक्षी है। भारतीय समाज में नारी जागरण के परिणाम स्वरूप नारी आज आत्मनिर्णय के द्वारा ही जीवनयापन करना चाहती है। वह अपने जीवन में माता-पिता या अन्य किसी का हस्तक्षेप स्वीकार नहीं करती। 'चौधाह फेरे' उपन्यास की नायिका अहिल्या का जीवन इसी संघर्ष को रेखांकित करता है। बाल्यावस्था में वह अपनी मां की ममता से वंचित है उसकी मां पति के शोषण के कारण गृह त्याग कर देती है। अहिल्या का पिता किसी अन्य स्त्री से अवैध संबंध स्थापित कर अपना जीवन व्यतीत करता रहता है ।अहिल्या पिता के अधीन दमित जीवन को सहने के लिए विवश हो जाती है। उसका पिता उसकी इच्छा के विरुद्ध उसका विवाह निश्चित कर देता है हालांकि उसे पुत्री अहिल्या और राजू नामक एक सैनिक अफसर के प्रेम संबंधों की जानकारी रहती है ।वह अपनी पुत्री और उसके प्रेमी के संबंधों को ईर्ष्यावश तोड़कर पुत्री का विवाह बलपूर्वक करने के लिए राजू की मृत्यु का झूठा समाचार अहिल्या को देता है। इस प्रसंग में पिता द्वारा पुत्री का दमन और शोषण अपने चरम बिंदु पर दर्शाया गया है। परंतु अपने अस्मिता की रक्षा हेतु अहिल्या भी स्थिरता के साथ राजू के जीवित होने के सत्य का पता लगाकर उसी से विवाह करने के लिए पिता को त्याग कर घर से निकल पड़ती है। इस उपन्यास में लेखिका ने नारी की आत्मनिर्भरता, सजगता और संघर्षप्रियता को दर्शाया है। नारी अपने जीवन के महत्वपूर्ण निर्णय अपने पक्ष में लेने के लिए कभी-कभी अपने ही परिवारिक परिवेश के विरुद्ध बगावत करती है जो वैध एवं उचित है अपने पक्ष में विद्रोह के औचित्य को निरूपित करने वाले महत्वपूर्ण स्त्री पात्रों में उपरोक्तपात्र विशेष उल्लेखनीय है।स्वाधीनता प्राप्ति के बाद सार्वजनिक क्षेत्र में भारतीय नारी ने दृढ़ आत्मविश्वास एवं मनोबल के साथ प्रवेश किया। राजनीतिक, उद्योग, व्यापार, प्रशासन आदि विभिन्न सार्वजनिक कार्य क्षेत्रों में स्त्री की सक्रिय भागीदारी उसकी नारीवादी चेतना को ही रेखांकित करती है महिला उपन्यासकारों के अधिकांश नारी पात्र जुझारू संघर्षशील तथा नारीवादी चेतना से युक्त है। इनके नारी पात्रों की संकल्पना में पर्याप्त व्यवस्था भी दिखाई देती है। सार्वजनिक कार्य क्षेत्र में अधिकारी पद पर कार्यरत भारतीय नारी अपनी बौद्धिक क्षमताओं का पूर्ण परिचय आज दे रही है। उसमें अदम्य साहस तथा मनोबल विद्यमान है। इसलिए वह अत्यंत कुशल प्रशासिका , उत्तम पुलिस अधिकारी, वैज्ञानिक, शिक्षाविद, चतुर राजनीतिज्ञ, पर्वतारोही, सफल उद्योगपति आदि सभी कुछ बन सकती है। उसने उच्च पदों पर सफलतापूर्वक कार्य करके अपने उच्च बौद्धिक गुणों का परिचय दिया है उसकी विजय और सफलता एवं अभूतपूर्व गुणों तथा क्षमताओं से पुरुष वर्ग ईर्ष्यालू होता है इस ईर्ष्या और द्वेष के भाव के कारण वह स्त्री को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से नीचा दिखाने का प्रयास शुरू कर देता है। उसके भीतर का अहंकार स्त्री की सफलता और स्त्री के अधीनता को स्वीकार नहीं कर पाता ।नए युग की नारी अपने जीवन को पूर्ण स्वेच्छा और स्वतंत्रता के साथ जीना चाहती है । अतः वह प्राचीन और नवीन मूल्यों के द्वंद को दूर करने के लिए संघर्षरत है। स्वाधीनता के बाद भारतीय समाज में नारी ने संघर्ष के माध्यम से अपने बौद्धिक स्तर को बहुत ऊंचा उठाया है उनमें से बहुत बड़ी संख्या में उच्च शिक्षा प्राप्त कर प्रशासन के सर्वोच्च पदों पर कार्यरत भी दिखाई दे रही हैं भारतीय नारी ने कामकाज के हर क्षेत्र में अपनी सफलता एवं कार्यकुशलता का कीर्तिमान स्थापित किया है। कामकाजी नारियों का जीवन घर और बाहर दो क्षेत्रों में बटा हुआ रहता है आज समाज में नारी की अपनी एक अलग पहचान है उसके सिद्धांत हैं उसकी अपनी मूल्य दृष्टि है जिसे नकारना संभव नहीं है यही कारण है कि समाज द्वारा आरोपित किसी भी कलंकको स्त्री जीवन का अभिशाप स्वीकार नहीं करती है। अपने प्रति किए गए अन्याय का प्रतिकार करने का साहस आज स्त्री में दिखाई देता है पुरुष के अमानवीय शोषण के लिए अपने आप को पाप से ग्रस्त रखना उसे स्वीकार नहीं ,आज के नए समाज में नए मूल्यों की स्थापना के लिए वह संघर्षरत है। आधुनिक युग में शिक्षा ने स्त्री को अपने अस्तित्व, व्यक्तित्व की पहचान करवाई है। आज की शिक्षित स्त्री अपनी दुर्दशा के प्रति अधिक सजग हो उठी है। आर्थिक स्वतंत्रता ने नारी को अपने स्वाभिमान के प्रति जागृत किया है। हिंदी उपन्यासों में नारी स्वतंत्रता एवं नारी जागरण की स्थिति अपने चरम पर चित्रित हुई है। आज नारी अपनी विषम स्थितियों से निरंतर जोड़ते हुए भी अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व को स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील दिखाई दे रही है। आज की नारी के लिए अस्मिता की तलाश अत्यंत महत्वपूर्ण है। युगीन परिस्थितियों में नारी की चेतना को विभिन्न स्तरों पर आंदोलित किया गया। आज समाज में नारी विषयक चिंतन में परिवर्तन की जो प्रक्रिया शुरू हुई है, वह नारी की कर्मठता और उसके अथक संघर्ष का परिणाम है। आज परंपरागत सामाजिक मूल्य नारी की नवीन जीवन दृष्टि में निरर्थक सिद्ध होने लगे हैं। जहां कहीं नारी के लक्ष्य की पूर्ति में समाज बाधक बना है, वहां नारी विरोध करने लगी है। इस प्रकार नारी अपना स्वतंत्र अस्तित्व पाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रही है। स्वतंत्र अस्तित्व का अर्थ है- अपने बारे में स्पष्ट अभिमत और उसी के अनुसार स्वयं का व्यक्तित्व विकास।

आज अपनी अस्मिता को बनाए रखने और अधिकार प्राप्ति के लिए नारी के समक्ष कई चुनौतियां खड़ी है। कठिन परिस्थितियों में स्त्री को अपने विवेक क्षमता को नए सिरे से परखना होगा। प्रतिकार के स्थान पर उपकार, प्रतिहिंसा की जगह अहिंसात्मक एकता दिखानी पड़ेगी । प्रेम, त्याग, पवित्रता, सहनशीलता, निर्मलता के भाव पुरुष और स्त्री जगत में समान रूप से आदर्श मानी जाए। स्त्री अपने आपको जब से मनुष्य के रूप में मान सम्मान देगी, तब समाज में उसके अधिकार और अस्मिता सुरक्षित होकर सुगंधित हो उठेगी। निष्कर्षत ::इस प्रकार नारी अपने अस्तित्व को और अधिक उजागर करने में सक्षम बन सकेगी तथा एक ऐसे समाज की स्थापना होगी जिसमें नारी और पुरुष के मध्य के भेद को समाप्त कर नारी के अस्तित्व को पूर्ण सम्मान मिलेगा।

****

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ किरण बाला अरोड़ा, साठोत्तरी हिंदी उपन्यासों में नारी, पृष्ठ-289 ,
2. डॉ अमर ज्योति, महिला उपन्यास कारों के उपन्यासों में नारीवादी दृष्टिकोण, पृष्ठ-35
3. डॉ क्षितिज यादवराव धुमाल, बीसवीं सदी के अंतिम दशक के हिंदी उपन्यासों का प्रवृत्तिमूलक अनुशीलन, पृष्ठ-380

सहायक पुस्तक सूची-

1. डॉ अमर ज्योति, महिला उपन्या कारों के उपन्यासों में नारीवादी दृष्टि, अन्नपूर्णा प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण:: 1999
2. डॉ उषा यादव, हिंदी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना, राधाकृष्ण प्रकाशन, पहला संस्करण:1999
3. डॉ एम वेंकटेश्वर, हिंदी के समकालीन महिला उपन्यासकार, अन्नपूर्णा प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण:2002
4. डॉ किरण बाला अरोड़ा, साठोत्तरी हिंदी उपन्यासों में नारी, अन्नपूर्णा प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण:1990
5. बलराज सिहमार , मानव मूल्य और स्वतंत्रयोत्तर हिंदी उपन्यास , खामा पब्लिशर्स, प्रथम संस्करण:2002
6. डॉ सौ. मेहरदत्ता पाथरीकर, साठोत्तरी हिंदी महिला कथा- लेखन में आधुनिकता का बोध, शैलजा प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण:2007
7. डॉ क्षितिज यादवराव धुमाल, बीसवीं सदी के अंतिम दशक के हिंदी उपन्यासों का प्रवृत्तिमूलक अनुशीलन , अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण ::2006

इस्लामिक समाज और स्त्री शिक्षा

डॉ.मो. माजिद मियाँ
प्राध्यापक (हिंदी विभाग)
श्री अग्रसेन महाविद्यालय, दालखोला, उत्तर दिनाजपुर Mo-9851722459

शोध सारांश-शिक्षा और स्त्री को लेकर यदि वैश्विक धरातल पर सोचा व देखा जाए तो उसमें स्त्री हमेंशा पुरुषों के उपरांत ही आती है। उसी प्रकार भारत के भी विभिन्न समाजो में पितृसत्तात्मक व्यवस्थ होने के कारण स्त्रियों की शिक्षा को दोयम दर्जे पर रखा गया । इसी कारण कुछ चिंतकों ने स्त्रियों को उपनिवेश' तक की संज्ञा दे दी है। मुस्लिम समाज और परिवार भी पूर्णत: पितृसत्तात्मक है। इसलिए मुस्लिम परिवार में स्त्री शिक्षा का स्तर बहुत ही निम्न है।

शब्द कुंजी – मुस्लिम समाज, स्त्री का स्थान, अधिकार, दशा एवं दिशा.

प्रस्तावना -जिस प्रकार सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था पर जेंडर का विभेदीकरण दिखाई देता है, उसी तरह मुस्लिम समाज की शिक्षा व्यवस्था पर भी पितृसत्तात्मक विचारधारा का पूरा प्रभाव बना हुआ है। महान विचारक रुसो स्वयं स्त्री शिक्षा को गैर ज़रूरी समझता था। वह तो स्त्री शिक्षा को घर तक और पुरुषों के लिए आवश्यक मानता था। यदि इस परिस्थिति को भारतीय परिवेश में रखकर देखा जाए तो स्थिति और भी भयावह है। जहां स्त्रियों को केवल ताड़न' के अधिकारी के रूप में ही देखा जाता रहा है। यहाँ के पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की स्थिति कभी पुरुष के सहायक के रूप में भी नहीं बनी। वह हमेंशा समाज द्वारा एक ऐसी वस्तु के रूप में उपयोग की जाती रही है, जिसे पुरुष वर्ग ने जितना चाहा उपयोग किया। इस कारण उसकी विधवत शिक्षा के कोई संकेत नहीं मिलते। किसी भी राष्ट्र का विकास उसकी संपूर्ण मानव क्षमता के ऊपर निर्भर करता है और स्त्रियाँ विश्व की आधी आबादी हैं, यदि यह आधी आबादी विकसित नहीं हुई तो आधी मानवीय क्षमता व्यर्थ चली जाएगी। मुस्लिम समाज अपनी रूढ़िवादिता और अंधविश्वास के कारण स्त्री शिक्षा में और भी पीछे रह गया है। भारतीय मुस्लिम समाज में पितृसत्ता, पर्दाप्रथा और धार्मिक कट्टरता के चलते मुस्लिम समाज की स्त्रियां शिक्षा के क्षेत्र में बहुत विकास नहीं कर सकी हैं। यदि हम इस्लाम धर्म के मौलिक सिद्धांतों की नारीवादी नजरिए से समीक्षा करें तो कुरान और हदीस की कई ऐसी आयतें हैं जिनमें स्त्री और पुरुष को समान अधिकार दिया गया है, विशेष कर शिक्षा के क्षेत्र में हदीस की आयात है, जिसमें शिक्षा के महत्व को इस प्रकार बताया गया है- "तलबुल इल्म फरीजतुन अलाकुल्ली अलमुस्लिम व मुस्लिमा।"[1] इस आयत के माध्यम से हजरत मुहम्मद साहब ने बताया है कि तालीम हर मर्द और औरत के लिए बेहद और निहायत जरूरी है। इसी तरह इस्लाम हर मामले में जाति, वर्ग और जेंडर से परे हो कर सबको समान अधिकार देता है। कहा जाता है कि इस्लाम धर्म दुनिया के सारे धर्मो में आधुनिक होने के साथसाथ उदार भी है। इस्लाम की मूल प्रकृति पितृसतात्मक नहीं है, बल्कि पितृसतात्मक समाज द्वारा बनाई गई है। भारत में उन्नीसवी शताब्दी के समाज सुधार आंदोलन की शुरुआत होती है। यह तो धर्म सुधार या यूं कहें की यह आंदोलन इस्लामिक पुनरुत्थान का आंदोलन था। जिसके माध्यम से इस्लामिकरण और अरबीकरण किया गया। इस आंदोलन के दौरान मुस्लिम स्त्रियों से जुड़े मुददों को भी उठाया गया, जैसे की पर्दा-प्रथा और शिक्षा आदि। औपनिवेशिक कालीन भारत में स्त्री शिक्षा को लेकर काफी मतभेद रहा एक तरफ आधुनिक शिक्षा और देशी शिक्षा तो दूसरी तरफ स्त्रियों की स्कूली शिक्षा को लेकर लोगों के अलग-अलग मत थे। यही हाल मुस्लिम स्त्री का भी था, मुस्लिम समाज सुधारक और बुद्धजीवी दो अलग-अलग विचारधाराओं के थे। एक तरफ इस्लाम के रेडिकल धर्म गुरु और उलेमा जैसे कि सैयद अहमद बरेलवी, मौलाना अशरफ अली थानवी, अकबर इलाहाबादी, मुहम्मद कालिम ननौत्वी और रशीद अहमद गंगोही जैसे पुनरुत्थानवादी नेता थे, जो स्त्रियों के मुद्दों पर विशेषकर शिक्षा पर रूढ़िवादी नजरिया अपना रहे थे। दूसरी तरफ सैयद अहमद दहलवी, मौलाना अल्ताफ हुसैन हाली, डिप्टी नजीर अहमद, मुमताज़ अली व मौलवी करामत हुसैन जैसे आधुनिक सोच रखने वाले पुरुष नेता थे, जो स्त्री शिक्षा के पक्के हिमायती थे। शायद यही वजह थी की मौलाना अल्ताफ हुसैन, मुमताज़ अली और करामत हुसैन जैसे लोगों का उनसे वैचारिक मतभेद था। मौलवी मुमताज़ अली, सर सैयद अहमद के ही खेमें के थे। लेकिन लैंगिक समानता की जब बात आती तो मुमताज़ हमेंशा स्त्रियों के हक की बात करते थे। असगर अली इंजीनियर लिखते हैं कि -"मौलवी मुमताज़ अली जाने-माने आलिम थे और देवबंद के मदरसे में पढ़े थे, परंतु महिला अधिकारों के मामले पर वे परम्परागत उलेमा से पूरी तरह असहमत थे। महिला अधिकारों के मामले में तो उनकी सोच आधुनिक थी। इसके चलते उन्होंने हुकूक-अल-निस्वान नामक पुस्तक लिखी, जिसमें लैंगिक समानता के सिद्धांतों पर बहस थी."[2]

मुसलमानों के महान नेता सर सैयद अहमद खान मुस्लिम नौजवानों की आधुनिक शिक्षा के लिए अपना खून पसीना एक किये दे रहे थे, लेकिन औरतों के लिए कुरान और घरेलू शिक्षा को ही काफी समझते थे, उनका कहना था "मेरी ख़्वाहिश नहीं की तुम उन पवित्र किताबों के बदले, जो तुम्हारी दादियाँ और नानियाँ पढ़ती आयी हैं, इस ज़माने की प्रचलित अशुभ किताबों को पढ़ने की ओर उन्मुख हो।"[3] सर सैयद अहमद खान स्त्रियों के लिए सिर्फ और सिर्फ धार्मिक शिक्षा को ही आवश्यक मानते थे। जबकि पुरुषों के लिए वह आधुनिक शिक्षा पर ही ज़ोर देते थे। उनका मानना था कि पुरुष घर से बाहर नौकरी करने जाएगा इसलिए उसे आधुनिक शिक्षा हासिल करनी ही चाहिए । "सर सैयद मुसलमानों में आधुनिक शिक्षा के सूत्रधार थे। उन्होंने 1875 में मुसलमान लड़कों के लिए एक स्कूल कायम किया, उसके दो बरस बाद कॉलेज में तब्दील किया और आज वह स्कूल अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी बन चुका है।"[4] शिक्षा के क्षेत्र में इतने बड़े काम के बावजूद मुसलमान लड़कियों की आधुनिक शिक्षा के समर्थकों सेउन्हें आख़िरी उम्र तक मतभेद रहा । सर सैयद अहमद यूरोप में औरतें पोस्ट मास्टर या मेंम्बर ऑफ पार्लियामेंट हो सकें लेकिन हिंदुस्तान में न अब वह ज़माना है और न सैकड़ों बरस में आने वाला है।' जबकि पुरूषों के मामले में उनके विचार अलग थे। उन्होंने पुरूषों के लिए आधुनिक शिक्षा को ज़रूरी समझा । इसी प्रकार कुछ अन्य नेता थे, जिन्होंने ताउम्र स्त्रियों को गर्त में धकेलने का प्रयास किया। जैसे अशरफ अली थानवी और अकबर इलाहाबादी आदि। थानवी ने तो स्त्री-शिक्षा का इस कदर विरोध किया की औरतों की मजहबी तालीम के अतिरिक्त अन्य शिक्षा को स्त्रियों के लिए हानिकारक बताया। "मौलाना थानवी लड़कियों को शिक्षण संस्थानो में भेजने के भी प्रबल विरोधी थे, भले ही वे संस्थान विशुद्ध रूप से लड़कियों के लिए ही बने हों। उनका मानना था कि ऐसे संस्थानों में विभिन्न कौम, विभिन्न वर्ग, विचार पृष्ठीभूमि की लड़कियां इकट्ठा होंगी और उनमें मेलजोल से विचार तथा नैतिकता पर हानिकारक प्रभाव पड़ेगा।"[5] मुस्लिम स्त्रियों की शिक्षा के संदर्भ में आधुनिक सोच रखने वाले नेता सर सैयद अहमद खान का नजरिया बिलकुल पुनरुत्थानवादियों जैसा था। भारत में स्त्रियों के लिए स्कूल खोलने के वे कतई खिलाफ थे। सन 1868 में लाहौर के एक जलसे में उन्होंने स्त्री शिक्षा के विषय पर अपना वक्तव्य देते हुये कहा कि "औरतों की तालीम के लिए मदरसों का कायम करना और यूरोप के जनाना मदरसों की ताकीद करना हिंदुस्तान की

मौजूदा हालात के लिए किसी तरह मुनासिब नहीं है और मैं इसका सख्त मुखालिफ हूं।"[6] इसी प्रकार शिक्षा के मामले में अकबर इलाहावादी इतने कट्टर थे, कि मुसलमान पुरुषों के लिए भी आधुनिक शिक्षा को हानिकारक बताया। वहीं कुछ ऐसे समाज सुधारक भी थे जो स्त्री शिक्षा के लिए आधुनिक नज़रीय से सोचते थे। जस्टिस सैयद अमीर आली स्त्री शिक्षा के समर्थक थे उन्होंने स्त्रियों के लिए आधुनिक शिक्षा को आवश्यक बताते हुये कहा कि "जब तक हम लड़कियों की तालिम पर ध्यान नहीं देंगे तो सिर्फ लड़कों की आधुनिक शिक्षा से हमको जिंदा कौम बनने से बिलकुल मदद नहीं मिल सकती।"[7] इन आधुनिक विचारकों के साथ-साथ कई मुस्लिम औरतें भी थीं, जिन्होंने अपने अधिकार और आजादी के लिए स्वयं बीड़ा उठाया । इनमें भोपाल की बेगम, रुकैया शेखावत हुसैन, मुहम्मदी बेगम आदि प्रमुख महिलाएं थीं। इन लोगों ने औरतों के अधिकरों के लिए संघर्ष किया। जहां एक तरफ मुस्लिम स्त्री शिक्षा के लिए मुस्लिम समाज स्वयं जिम्मेदार है। वहीं दूसरी तरफ सामाजिकता और संसाधन भी इस मामले में जिम्मेदार है। यदि वर्तमान समय में देखा जाए तो मुस्लिम समाज कई स्तरों पर संघर्ष कर रहा है। यह स्थितियाँ भी कहीं न कहीं स्त्री शिक्षा के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उत्तरदायी हैं। "मुसलमान महिलाओं की समस्याओं के लिए कई कारण जिम्मेदार हैं। अधिकतर मुसलमान अपने छोटे-छोटे स्वरोजगार चलाते हैं और समाजशास्त्रीय दृष्टि से वे कुएं के मेंढ़क हैं। फिर वे मुसलमान है जो ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं और खेतिहार मजदूर के रूप में काम करते हैं। वे और अधिक परंपरवादी हैं।"[8] प्लेटो शिक्षा को महत्त्वपूर्ण मानते हैं, वह रिपब्लिक में लिखते हैं कि "जिनके हाथों में सत्ता है उनकी ज़िम्मेदारी है कि वे न्यायपरायण समाज का निर्माण करें और शिक्षा ही वह साधन है जिसके जरिये समाज को ऐसा बनाया जा सकता है,प्लेटो के अनुसार सामाजिक शिक्षा ही सामाजिक न्याय का साधन है।"[9]

इस्लाम धर्म भी सामाजिक शिक्षा पर विशेष बल देता है। इस्लाम प्रत्येक मुसलमान के लिए शिक्षा प्राप्त करना फर्ज़ करता है। भारतीय परिवेश में स्त्री शिक्षा को लेकर बात की जाए तो नवजागरणकाल में इसके बीज देखने को मिलते हैं। परंतु मुस्लिम शिक्षा को यदि ध्यान में रखकर देखा जाए तो इसके कुछ बहुत ज़्यादा सूत्र नहीं मिलते। मुस्लिम परिवारों में स्त्री शिक्षा के प्रति बहुत अधिक चेतना नहीं है। अधिकांश अपने घर की लड़कियों को प्राथमिक शिक्षा तक पढ़ाने को लेकर ही सचेत हैं। स्त्रियों के प्रति इनकी जो रूढीगत धारणाएं हैं, वे इनको उच्च शिक्षा के लिए प्रेरित नहीं करती जिस कारण से स्त्री समाज की व्यावहारिकता को समझ नहीं पाती। मुस्लिम परिवारों में पर्दा प्रथा और कम उम्र में शादी कर देना भी इनका अशिक्षत होने का एक कारक है। मुस्लिम महिलाओं का शोषण दोनों (आंतरिक व बाहय) स्तर पर होता है। मुस्लिम पुरुष अधिकांशत इस्लाम की गवाही देकर अपने घर की महिलाओं को दबाते हैं। अपनी रूढ़ मानसिकता के कारण स्त्री के पक्ष में या उसके विकास, स्वतंत्रता, शिक्षा आदि के बारे में सोचने को तैयार नहीं है। जबकि इस्लाम में शिक्षा के लिए लिंग, आयु और स्थान किसी भी तरह का भेद नहीं किया गया है। मोहम्मद साहब ने शिक्षा प्राप्त करने के लिए दरी को भी अड़चन नहीं माना है। उन्होंने हीदायत दी कि "इल्म हासिल करने के लिए अगर चीन भी जाना पड़े तो जाना चाहिए।"[10] इक्कीसवी सदी में मनुष्य दसरे ग्रहों पर पहुँचने की तैयारी कर रहा है। तकनीक, वैज्ञानिक क्रांति असंभव को संभव कर रही है,सामाजिक जगरुकता की बात की जा रही है, वहीं दूसरी ओर जड़ व रूढ़िगत मानसिकता से ग्रस्त मुस्लिम समाज में स्त्री को शिक्षा से वंचित किया जाता रहा है। 1400 वर्षों पहले कुरान व हदीस में औरतों के लिए जो कानून बनाए गए थे व मात्र सैद्धांतिक ही रहे हैं, उन्हें व्यवहारिक रूप में नहीं अपनाया गया है। मोहम्मद साहब ने इल्म हासिल करने के संबंध में मर्द-औरत की कोई खुसुसियत नहीं की, मिशकात और तिरमिजी की हदीस है की मोहम्मद सहाब ने आदेश दिया है कि- "तालीम हासिल करो और लोगों को तालीम दो"[11] औरत को शिक्षा देना और दिलवाना न केवल अख़लाकी हैसियत रखता है, बल्कि इस्लाम ने औरत के शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार को कानूनी तौर पर स्वीकार किया है । मोहम्मद साहब के युग में सहाबा की तरह सहाबियत भी तालीम व नसीहत में माहिर थीं। जिस प्रकार सहाबा में फतवा देने वाले ज्ञानी थे। उसी प्रकार सहाबियात में भी कुछ महिलाएं फतवा देती थीं। हज़रत आयशा, हज़रत उम्मे सलमा और हज़रत हफ़्ज़ा से बड़ेबड़े सहाबा फतवा लिया करते थे। हज़रत आयशा दीन के अतिरिक्त चिकित्सा, गणित आदि विभिन्न विषयों में ज्ञान रखती थीं। इस काल में मुस्लिम स्त्रियाँ साहित्य, कविता, कला, चिकित्सा, गणित के क्षेत्र में अपना स्थान बना चुकी थीं, जबकि कुछ कटठरपंथी मौलवियों ने स्त्री के लिए धार्मिक शिक्षा को ही उचित ठहराया। पितृसत्तात्मक मुस्लिम समाज कहीं न कहीं अपने अस्तित्व को लेकर डरा हुआ है, चूंकि वह स्त्री से अपने को नीचे नहीं देख सकता। इसलिए उसने अपने आपको बचाने और अपना दबदबा स्त्रियों पर कायम रखने के लिए धर्म का सहारा लिया। कट्टरपंथी मौलवियों ने कुरान की आयतों का गलत विश्लेषण कर कम पढ़े-लिखे वर्ग को बेवकूफ़ बनाया है। इसका विरोध करते हुये ज़ोया हसन लिखती हैं कि "मुस्लिम औरत का हिन्दस्तान में नहीं पढ़ने का का मूल कारण गरीबी है। उनकी स्थिति अनुसूचित जाति की तरह है जिस वजह से अनुसूचित जाति की औरतें नहीं पढ़ पाती । धर्म और पर्दा उतना बड़ा कारण नहीं । सामाजिक और आर्थिक पहलुओं को नज़र अंदाज़ कर मुस्लिम औरत की स्थिति को ठीक से नहीं समझा जा सकता।"[12]

निष्कर्ष -समकालीन समय में औरतें जागरूक हो रही हैं तथा अपने अधिकारों की मांग करने लगी हैं। उन्होंने शिक्षा के महत्व को भी समझना शुरू कर दिया है। शिक्षा के माध्यम से स्त्री की सामाजिक स्थिति में भी सुधार हुआ है। कुछ शिक्षित मुस्लिम परिवारों में पर्दा-प्रथा धीमे-धीमें घटती जा रही है। क्योंकि आज लड़कियां उच्च शिक्षा प्राप्त कर नौकरियाँ भी कर रही हैं, वह ऊंचे पदों पर भी हैं। वे बुर्का पहनकर पुरुषों के साथ या पुरुष समाज में साथ-साथ काम कैसे कर सकती हैं? " यदि एक परिस्थिति ने बुर्का या पर्दा-प्रथा चलाई थी तो आज की प्रगतिशील सोच और परिस्थिति ने पर्दा-प्रथा को कम भी किया है। जैसे-जैसे हमारे देश की मुस्लिम महिलाएं शिक्षित होकर कामकाजी महिलाएं बनेगी पर्दा प्रथा स्वत: ही कम हो जाएगी। यह जागरूकता शिक्षित और प्रगतिशील समाज के लिए ही आवश्यक नहीं है, वरन परिवार की उन्नति के लिए भी बहुत आवश्यक है।" आधुनिक युग में शिक्षा की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुये हर स्त्री को उसका शिक्षा का अधिकार समाज को प्रदान करना चाहिए। क्योंकि इस दौड़ती भागती जिंदगी में शिक्षा के बिना कुछ नहीं हो सकता। शिक्षा के माध्यम से इंसान में समझ बढ़ती है उसको अच्छे और बुरे की समझ आती है। जिंदगी की हर समस्या का समाधान आसानी से करने की ताकत ज्ञान के माध्यम से ही आ सकती है।

****

संदर्भ :

1.फरजाना अमीन, मुस्लिम पुरुष: पोषक या शोषक, पृ. स. 143
2. असगर अली इंजीनियर, धर्म और सांप्रदायिकता, पृ. स. 271
3. ज़ाहिदा हिना, पाकिस्तानी स्त्री: यातना और संघर्ष पृ. स. 149
4.वही, पृ. स. 149
5. मुबारक अली, इतिहासकार का मतांतर, पृ. स. 124
6. ज़ाहिदा हिना, पाकिस्तानी स्त्री: यातना और संघर्ष, पृ. स. 22
7. वही, पृ. स. 149
8. असगर अली इंजीनियर, धर्म और सांप्रदायिकता पृ. स. 221
9.फरजाना अमीन, मुस्लिम पुरूष: पोषक या शोषक पृ. स. 43-44
10.फरजाना अमीन, मुस्लिम पुरूष: पोषक या शोषक पृ. स. 143
11.वही, पृ. स.143
12.ज़ोया हसन, [illegible] अंक, [illegible] 2003, पृ. [illegible]

स्वाधीनता आंदोलन में वीरांगनाओं की भूमिका

डॉ.सुनील
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
हिन्दी-विभाग गुरु नानक देव विश्वविद्यालय,
अमृतसर-143005 (पंजाब) मो. 9878550034

डॉ.विनोद कालरा
अध्यक्ष,स्नातकोत्तर हिंदी विभाग
कन्या महाविद्यालय(स्वायत्तशासी), जालंधर

भारत वर्ष आदिकाल से ही स्त्री-शक्ति का उपासक रहा है। लगभग सभी देशवासी 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता' पर अगाध विश्वास करते हैं। मानवता की रक्षा के लिए आदिशक्ति जगदम्बा ने दुराचारियों का दमन किया है, इससे कोई भी व्यक्ति अंजान नहीं है। वेद पुराण इस बात के प्रमाण हैं। जब जब धर्म का ह्रास और अधर्म का बोलबाला हुआ,जब जब अन्याय और असत्य अपनी चरम सीमा पर पहुंचा, तब तब स्त्री शक्ति ने धर्म, न्याय और सत्य की स्थापना के लिए अपना हर संभव सहयोग दिया है। उन्होंने अपने प्राणों की आहुति देकर भी सामाजिक मर्यादाओं की रक्षा की है।

यदि हम इतिहास में खोजें तो अनेक ऐसी नारियों का उल्लेख मिलता है जिन्होंने आवश्यकता पड़ने पर अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राणों का त्याग कर दिया। ऐसी नारियों की संख्या बहुत अधिक है। यहाँ स्वाधीनता संग्राम में बहुत-सी स्त्रियों ने अपनी वीरता,हिम्मत, हौसले, शक्ति,सूझ-बूझ से विदेशी आक्रांताओं, क्रूर अंग्रेजी शासकों के विरुद्ध संघर्ष किया और अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। भारतीय स्वाधीनता का इतिहास वीरता,साहस, बलिदान और देशभक्ति की भावनाओं से ओतप्रोत है। इस आंदोलन में 20वीं शताब्दी में जहाँ महात्मा गांधी, लाला लाजपत राय, राजगोपालाचारी, तिलक, गोखले, मोती लाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू,अबुल कलाम आजाद, सुभाषचंद्र बोस ने अन्यतम भूमिका निभाई वहां महिलाओं ने भी पुरुषों के साथ बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया। इन महिलाओं में नेतृत्व क्षमता विद्यमान थी। वे प्रखर वक्ता थी। उनमे निर्णय क्षमता, अथक परिश्रम, वीरता, साहस, त्याग, बलिदान, सहनशीलता अदि गुण विद्यमान थे। ये महिलाएं समाज के सभी वर्गों से सम्बंधित थीं।

19वीं शताब्दी के प्रथम स्वाधीनता संग्राम की नायिका रानी लक्ष्मी बाई, महारानी अहिल्या बाई होल्कर ने इस आंदोलन का नेतृत्व किया। स्वर्ण कुमारी घोषाल तथा कादम्बरी गांगुली जैसी अनेक महिलाओं ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में महिलाओं का प्रतिनिधित्व किया। देखा जाये तो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय थी। इन महिलाओं का कोई विशेष वर्ग नहीं था। उन्होंने इस आंदोलन में भाग लेकर अपने अद्भुत साहस और वीरता का परिचय दिया था। महारानी जिन्दा, महारानी तपस्विनी आदि अनेक महिलाओं ने अनेक अमानवीय अत्याचार सहकर, अभावों से भरा जीवन चुनकर अपनी सेनाओं का नेतृत्व करते हुए अपने प्राणों को न्योछावर कर दिया।

बीसवीं शताब्दी में महिलाओं ने स्वाधीनता आंदोलन को और तेज़ी प्रदान की। अंग्रेजों ने उन पर अत्याचार किये, उन्हें जेलों में बंद किया, भूखे रखा परंतु वे कर्तव्यच्युत न हुईं और न ही अपने जोश को किसी प्रकार कम होने दिया। उन्होंने पूरे मनोयोग से अनेक आंदोलनों में सम्मिलित होकर स्वाधीनता आंदोलन की जड़ों को मज़बूत किया। स्वाधीनता आंदोलन, सत्याग्रह आंदोलन, नमक सत्याग्रह, असहयोग आंदोलन, पूर्ण स्वराज आंदोलन,अंग्रेज़ो भारत छोड़ो आंदोलन आदि सभी आंदोलनों का वे बहुत बड़ा हिस्सा रहीं। 31 दिसम्बर 1929 को रवि नदी के किनारे जब पूर्ण स्वराज की घोषणा की जाने वाली थी तब पंडित जवाहर लाल नेहरू के हाथों में तिरंगा थमाने वाली छात्राओं का सबसे बड़ा दल कन्या महाविद्यालय का था। उन छात्राओं के भीतर राष्ट्र को स्वतंत्र करने का जज़्बा था।उन्होंने सूत काता, स्वयं तिरंगा बुना, राष्ट्रभक्ति के गीत लिखे। जिन दिनों तिरंगे को फहराना राष्ट्रीय अपराध समझा जाता था उन्हीं दिनों कन्या महाविद्यालय के बीचोबीच इस संस्था की छात्राएं तिरंगा फहराती थीं। सरोजिनी नायडू, बसंती देवी सुचेता कृपलानी, दुर्गाबाई देशमुख, कस्तूरबा गांधी,सुशीला नैयर ,कमला नेहरू, सुशीला दीदी, दुर्गा भाभी आदि अनेक वीरांगनाओं ने विभिन्न गतिविधियों में सक्रिय भूमिका निभाई। उन्होंने क्रांतिकारियों का भरपूर साथ दिया। कुछ विदेशी महिलाओं-एनी बेसेंट, मीरा बेन,सिस्टर निवेदिता आदि ने भी स्वराज आंदोलन में अपना अपूर्व सहयोग दिया। वीरेंद्र जी *वे इंक़लाबी दिन* पुस्तक में दुर्गा भाभी और सुशीला दीदी का ज़िक्र करते है ," आज़ाद क्रन्तिकारी दल में महिलाओं को शामिल करने के विरुद्ध थे। महिलाओं के कारण एक -दो घटनाएं ऐसी हो चुकी थीं जिन्होंने पार्टी को झिंझोड़ दिया था। इसलिए आज़ाद नहीं चाहते थे कि किसी महिला को क्रान्तिकारी दल में शामिल किया जाए किन्तु दो महिलाओं के लिए उनके मन में अगाध आदर था और वे उनका बहुत अधिक सम्मान करते थे। एक सुशीला दीदी और दूसरी दुर्गा भाभी का। सुशीला की उस समय तक शादी नहीं हुई थी किन्तु वह बहुत ऊंची नैतिकता की मालिक थीं।उनके विरुद्ध कभी किसी प्रकार की शिकायत नहीं मिली थी। ....दुर्गा देवी विवाहित थी। उनका एक बच्चा भी था।उनके पति भी इसी काम में लगे हुए थे।अतः उनके विषय में भी किसी प्रकार की आशंका न थी इसलिए आज़ाद इन दोनों को क्रान्तिकारी पार्टी में काम करने की अनुमति दे रखी थी।'

1715 में जन्मी *रानी भवानी* की स्वाधीनता आंदोलन में बहुत बड़ी भागीदारी है। वे अहिंसा शांति और मानवता की प्रतिमूर्ति थीं। नाटौर के लिए एकत्र टैक्स की राशि को लुटेरों द्वारा लूट लिए जाने पर रानी भवानी ने अपने ज़ेवर बेचकर टैक्स जमा किया था। जब तक वे जीवित रहीं,फिरंगी और नवाब नाटौर की और देखने का साहस नहीं जुटा सकते थे। रानी ने आत्मतेज से सभी को पराभूत कर दिया था। 1802 में रानी भवानी की मृत्यु हो गयी।

दक्षिण भारत की लक्ष्मीबाई *रानी चेनम्मा* (1778 -1829) का नाम अंग्रेजों से लोहा लेने वाली हस्तियों में सम्मान से लिया जाता है। अंग्रेजी दास्ताँ के विरुद्ध संघर्ष करने में उत्तर भारत में जो सम्मान झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई का है वही स्थान दक्षिण भारत में कित्तूर की रानी चेनम्मा का है। रानी चेनम्मा के पति राजा मल्लसर्ज की मृत्यु के उपरान्त रानी चेनम्मा का पुत्र रुद्रसर्ज गद्दी पर बैठा। राज्योचित गुणों के अभाव में उसने अंग्रेजों का साथ दिया, परिणामस्वरूप अंग्रेजों ने उस पर कब्ज़ा कर लिया।परिस्थिति की गंभीरता को देखते हुए रानी चेनम्मा ने मन ही मन अंग्रेजों के प्रति विद्रोह करने की ठान ली पर उस समय चुप रहना ठीक समझा।समय आने पर अंग्रेजों से रानी ने युद्ध किया और अंग्रेजों ने रानी चेनम्मा को वैल्होगल नामक स्थान पर कठिन यंत्रणा सहित कारावास में रखा। स्वतंत्रता की अमर अभिलाषा लेकर रानी स्वर्ग सिधारी। भारतभूमि में रानी चेनम्मा वह पहली वीरांगना है जिन्होंने अंग्रेजों से लोहा लिया और उन्हें अपनी वीरता का लोहा मनवा लिया।

अंग्रेजों के साथ वीरता से युद्ध करने वाली वीरांगनाओं में *भीमाबाई* का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। सन 1797 में होल्कर राज्य के राजा जसवंत सिंह व उनकी पत्नी केसरी बाई के घर जन्म लेने वाली भीमाबाई को शूरवीरता विरासत से मिली थी। बचपन से ही वे धनुषबाण और तलवार से खेलती थीं। जसवंत सिंह की मृत्य के

बाद उनका पुत्र मल्हार राव उत्तराधिकारी बना। अंग्रेजों ने इस दौरान उसकी संपत्ति को हड़पने का प्रयास किया। इससे पूर्व भीमाबाई ने घूम घूम कर राष्ट्र के नवयुवकों को देश की रक्षा के लिए प्रेरित किया। राज्य की विशाल सेना बन जाने पर इन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। भीमा बाई युद्ध में पराजित अवश्य हुई पर जैसा कि उन्होंने प्रण लिया था, इंदौर में सैनिक छावनी बनने नहीं दी। भीमा बाई की वीरता के कारण सभी उनका बहुत आदर करते थे। किसी कवि ने उनकी वीरता पर लिखा है:- वीर,शेरनी,लड़ने वाली,रण से हुई सगाई थी।खूब लड़ी मर्दानी रण में, वह तो भीमा बाई थी।1817 में इनकी मृत्यु हो गयी।*महारानी साहब कुंवरि* एक ऐसी वीरांगना है जिन्होंने अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध बड़ी वीरता से युद्ध किया तथा शत्रुओं पर अपनी वीरता की छाप छोड़ी। वे पटियाला के राजा साहब की बहन थीं। प्रशासकीय राजकार्य में निपुण एवं अत्यंत योग्य थीं। अपने भाई की अयोग्यता को भांपकर,अपने पति स.जयमल सिंह की आज्ञा से पटियाला में रहकर उन्होंने पटियाला रियासत का कार्यभार अपने ऊपर ले लिया। उनके सुप्रबंधन से राज्य की दशा सुधरी। वर्ष1793 में एक फ्रांसीसी अधिकारी टॉमस ने हांसी-हिसार पर अधिकार कर के जींद को चारों ओर से घेर लिया। सिख सैनिक उन पर हमला करके भी असफल रहे। अंत में साहब कुँवरि अपने सैनिकों को लेकर युद्धभूमि में पहुंची और टॉमस को हरा दिया। सिख सैनिकों ने पराजय स्वीकार करके टॉमस से संधि कर ली परंतु पटियाला की सेना उसमें सम्मिलित नहीं थी।

कुछ लोगों ने महारानी के खिलाफ राजा के कान भरने शुरू किए। उन्होंने उन पर विश्वास करके महारानी साहब को किले में नज़रबन्द कर दिया। रानी विश्वसनीय नौकर की सहायता से वहां से निकल गईं। जब तक वे जीवित रहीं पटियाला रियासत से कोई सम्बन्ध नहीं रखा। 1799 में उनकी मृत्यु के उपरांत उनके भाई को बेहद पश्चाताप हुआ।इस प्रकार रानी साहस कुंवरि अपनी बहादुरी व लोकोप्रिय शासन के कारण पटियाला व उसके आसपास के इलाकों में बेहद प्रसिद्ध थीं। लोग उन चिरकाल तक स्मरण करते रहेंगे।

एक और महारानी थीं- *महारानी जिन्दां* जो महाराजा रणजीत सिंह की सबसे छोटी रानी थीं। लोग इन्हें शेर-ए-पंजाब के नाम से अभिहित करते थे। वे वीरता का अपूर्व उदाहरण थी यद्यपि उनके दरबारी विश्वासघाती थे। उनके षड्यंत्रों के कारण रानी जिन्दां और उनका अबोध बेटा अंग्रेजों की कूटनीति का शिकार हो गए। जब तक महाराजा रणजीत सिंह जीवित रहे तब तक किसी में भी पंजाब पर अधिकार करने साहस नहीं था पर उनकी मृत्यु के उपरांत अंग्रेजों को पंजाब हड़पने का अवसर मिल गया। रानी के विश्वासघाती प्रधान मंत्री व अन्य दरबारियों ने रानी जिन्दां की अंग्रेज़ विरोधी गतिविधियों की खबर अंग्रेजों तक पहुंचा दी और उसे बंदी बना लिया गया। बाद में उसे देश निकाला देकर धोखे से रानी के देश निकाले के आदेश पर उसके पुत्र दिलीप सिंह के हस्ताक्षर भी करवा लिए। 1849 में वे जेल से भाग कर नेपाल पहुँच गयीं.।अंग्रेजों ने उनके पुत्र से उसका राज्य छीन कर उसे इंग्लैंड भेज दिया। रानी ने पंजाब को बचाने के लिए बहुत काम किया पर उनके गुप्तचर सारा भेद खोलते रहे। 1857-58 की क्रांति के उपरांत रानी जिन्दां ने फिर से कोशिश की और कश्मीर के राजा को पत्र लिखा पर उनका पत्र पकड़ा गया। 1857 के आंदोलन में रानी की गतिविधियों से स्पष्ट होता है कि रानी ने जैसे ही विद्रोह के लिए सर उठाया, अंग्रेजों ने उसे दबाकर उनके सारे प्रयास असफल कर दिए और काशी जेल भेज दिया। यदि रानी को पंजाब आने की गुप्त योजना में सफलता मिल जाती और उनसे विश्वासघात नहीं किया जाता तो पंजाब में भी अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति अवश्य सफल हो जाती।भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में बेगम ज़ीनत महल ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनमें अपूर्व साहस था। उनमें सूझ बूझ की असाधारण क्षमता विद्यमान थी। बेगम ने अपने पति मुग़ल सम्राट बहादुरशाह ज़फर को अत्याचारी अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध संचालन एवं उसको नेतृत्व करने की प्रेरणा प्रदान की। **उनमें** देश भक्ति की भावना कूट कूट कर भरी थी। बेगम ज़ीनत महल को अपराधी घोषित करते हुए अंग्रेजों ने उन्हें बहुत यातनाएं दीं पर देश प्रेम के लिए उन्होंने बहुत कुछ सहन किया। इसी प्रकार बेगम हज़रत महल (1820-1879) भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अपनी आहुति देने वाली अवध की वीरांगना थीं।

1830 में जन्मी झलकारी देवी का इस आंदोलन में योगदान कम नहीं है। वे झाँसी के किसान सदोबा सिंह की पुत्री थीं। माता की मृत्यु के बाद पिता ने इसे अस्त्र शस्त्र की शिक्षा दी ताकि समय आने पर वह अपनी सुरक्षा स्वयं कर सके। कालांतर में रानी लक्ष्मी बाई के तोपची पूरणसिंह से विवाह करने के उपरांत वे रानी लक्ष्मी बाई की विश्वस्त सेविका बन गयी। उन्होंने समय-समय पर रानी लक्ष्मी बाई को आगाह भी किया और मशविरे भी दिए। उन्होंने अपनी जान पर खेलकर रानी लक्ष्मी बाई को किले से सुरक्षित बाहर भेजकर अपनी देशभक्ति और वफादारी सिद्ध की। इतिहास में उनका योगदान अविस्मरणीय रहेगा।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में ऐसी वीरांगनाएं भी हैं जिनका योगदान तो अक्षुण्ण है पर उनके बारे में लोगों को जानकारी बहुत कम है। इन्हीं में से एक है मध्यप्रदेश के रामगढ रियासत की रानी अवंती बाई लोधी। जब 1857 में क्रांति भड़की तब झांसी,सतारा, कानपुर,मेरठ आदि स्थलों पर क्रांतिकारियों ने अपने झंडे फहराये । उसी समय इस क्रांति में रानी अवंती बाई ने भी इसमें भाग लिया। जबलपुर के कमिश्नर के कहने पर भी वह अंग्रेज़ी अधिकारी से नहीं मिलीं। उन्होंने युद्ध के लिए कमर कस ली थी। अपने सरदारों को संबोधित करते हुए कहा कि," भाइयो! जब भारत माँ गुलामी की ज़जीरों से बंधी हो तब हमें सुख से जीने का कोई हक नहीं। माँ को मुक्त कराने के लिए हमें ऐशो आराम को तिलांजलि देनी होगी। खून देकर ही आप अपने देश को आज़ाद करा सकते हैं।" जब अंग्रेजों ने रामगढ़ पर आक्रमण किया और रानी की सेना कम हो गयी तो वह सैनिकों के साथ जंगलों में भाग गई। वह चाहती तो आत्मसमर्पण कर सकती थीं।पर अंग्रेजों के हाथों मरने से पूर्व स्वयं अपने हाथों से अपने प्राण लेना उचित समझा। रानी अवंती बाई ने देश की आज़ादी के नाम पर अपने प्राणों का उत्सर्ग कर भारतीय इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित करवाया, रानी लक्ष्मी बाई के बारे में कौन नहीं जानता। इनका जन्म 1835 में बनारस में हुआ। किस प्रकार उन्होंने अपने पति गंगाधर राव की मृत्यु के बाद अपने अबोध बच्चे के साथ झाँसी को संभाला, प्राणपण से देश की रक्षा के लिए अपने प्राण न्योछावर किये, यह किसी से छिपा नहीं। उनकी इच्छा थी कि मरने पर भी उनका शव अंग्रेजों के हाथ न लगे। विद्रोहियों के बीच यह महिला मात्र एक मर्द थीं।' जनरल ह्यूरोज़ का यह कथन सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता को सार्थक करता है:- 'खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।" 17 जून 1857 को उनकी मृत्यु हुई। उनकी बहादुरी युगों-युगों तक हमें प्रेरणा देती रहेगी। इसके अतिरिक्त जमानी बेगम ने भी स्वाधीनता संग्राम में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया। राष्ट्रमाता कस्तूरबा गांधी राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की पत्नी थीं। गांधी जी के विदेश जाने पर उनमें संयम, नियम और सहिष्णुता जैसे गुणों का विकास हुआ। उन्होंने चंपारण सत्याग्रह के दौरान सफाई व किसानों को धैर्य दिलाने का काम किया,विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया।1933से 1943 तक का समय उन्होंने सेवाग्राम में बिताया।बारडोली किसान आंदोलन में उन्होंने किसानों को बल दिया। 13 फरवरी 1879 को जन्मीं सरोजिनी नायडू का साहित्य से बहुत लगाव था। इन्होंने अंतरजातीय विवाह करके अपने साहस का प्रमाण दिया।गांधी जी से मिलकर वे कांग्रेस में सम्मिलित हुईं। देश भक्ति और राष्ट्रीय चेतना का संदेश लेकर वे जन जन तक पहुंचीं।1917 में उन्होंने महिला मताधिकार आंदोलन जा नेतृत्व किया।1918 में जेनेवा सम्मेलन में भी उन्होंने ज़ोरदार ढंग से महिलाओं का पक्ष प्रस्तुत किया। वे शिक्षा, जागृति, स्वतंत्रता, मताधिकार,

समानाधिकार, पर्दा प्रथा,अशिक्षा, दहेज़, धार्मिक बंधन के विरुद्ध,जीवन पर्यंत लड़ती रहीं। इस नारी रत्न अपने बीच पाकर भारत को गर्व महसूस हो रहा था।महात्मा गांधी की शिष्या मेडलिन स्लैड को मीराबेन नाम से जाना जाता है। वे अंग्रेजी मूल की थीं वे बापू द्वारा चलाये गये कार्यक्रमों को गति देने के लिए विभिन्न स्थलों का दौरा करती थीं। भारत छोड़ो आंदोलन के दिनों में भी वे11 अगस्त 1942 से लेकर 1944 तक आगाँ खां महल में नज़रबंद रहीं। अस्वस्थ बापू की उन्होंने पुत्री बनकर बहुत सेवा की। उनकी मृत्यु के उपरांत वे विदेश लौट गई। 26 जनवरी 1982 को भारत सरकार ने उन्हें पद्मविभूषण से सम्मनित किया।

राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारत का गौरव बढ़ाने वाली साहसी महिला विजयलक्ष्मी पंडित थी जो मोतीलाल नेहरू की बेटी थीं। बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि वाली विजयलक्ष्मी ने फर्राटेदार अंग्रेजी बोलना और घुड़सवारी करना सीख लिया था। 1919 में इनका विवाह रणजीत पंडित से हुआ तब वे स्वरूप रानी से यह विजयलक्ष्मी पंडित हो गयीं। इसी वर्ष इनकी भेंट गांधी जी से हुई। कांग्रेस गढ़ आनंद भवन से ही ये राजनीतिक गतिविधियों का सञ्चालन करती थीं। ये 1931,1941 तथा 1942 में जेल गयीं। वे आकर्षक व्यक्तित्व वाली और ओजस्वी वक्ता थीं और जवाहर लाल नेहरू की बहन होना सोने पे सुहागा थीं। उन्होंने अमेरिका में जगह-जगह सभाएं कीं। अमेरिका में उस समय ब्रिटिश सरकार का कोई प्रतिबन्ध नहीं था। उन्होंने जगह-जगह पर आलेख भीं लिखे।उनका मानना था कि भारत का प्रतिनिधित्व स्वतंत्र भारत के लोग ही कर सकते हैं।विजय लक्ष्मी जी का व्यक्तित्व गौरवमयी और ओजस्वी था। उन्होंने स्वाधीनता आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया और अंतरराष्ट्रीय मंच पर भी भारत का गौरव बढ़ाया।सुभद्रा कुमारी चौहान कवयित्री के रूप में अत्यंत प्रसिद्ध हैं। उन्होंने नौवीं कक्षा में पढाई छोड़ दी थी और देश प्रेम की कविताएं लिखनी आरम्भ कर दी थीं। 'जलियांवाला बाग में बसंत' और 'राखी की लाज' इन्हीं दिनों लिखी गईं। एक दिन 'प्रताप' के संपादक गणेश शंकर विद्यार्थी का पत्र सुभद्रा जी को मिला जिसमें लिखा था," बहन!तुम्हारे होते हुए लक्ष्मण सिंह भारत माँ की पुकार न सुनकर वकालत में कैसे चले गए।" (सुभद्रा जब स्कूल में थीं तो लक्ष्मण सिंह एम ए की पढाई छोड़ कर असहयोग आंदोलन में कूद पड़े थे)यह बात सुभद्रा जी को लग गयी और वे जबलपुर से कार्य करने लगीं। उन्होंने स्त्रिओं में राष्ट्रीय चेतना जागरण,स्वयंसेवकों का संगठन करना शुरू किया। उनकी ओजस्वी कविताओं के कारण टाइम्स ऑफ़ इंडिया की ओर से उन्हें 'लोकल सरोजिनी' कहा गया।उन्होंने गांधी जी के साथ 'झंडा सत्याग्रह', 'व्यक्तिगत सत्याग्रह', 'भारतछोड़ो आंदोलन' में भाग लिया। वे अंतिम सांस तक स्वतंत्रता के लिए लड़ती रहीं। उनके बौद्धिक गुणों तथा राष्ट्र सेवा भावना के के लिए सदा स्नेह,प्रेम तथा आंतरिक हृदय से सदैव याद रखेंगे। सुशीला दीदी भी एक महान क्रान्तिकारी थीं। 1921 से 1927 तक उनकी शिक्षा जालंधर के कन्या महाविद्यालय से हुई। वे 'बुलबुले पंजाब' के नाम से जानी जाती थीं।लाल लाजपत राय और गांधी जी की गिरफ़्तारी पर उन्होंने गीत लिखे।उनके प्रकाशित लेखों से अंग्रेजी हकूमत सदा भयभीत रहती थीं। उन्होंने कलकत्ता के दैनिक 'स्वतंत्र' में एक लेख लिखा था जिस पर संपादक को 6 वर्ष का कारावास हुआ था। यह लेख भगत सिंह को जेल में राखी के साथ पत्र के रूप में सुशीला दीदी द्वारा भेजा गया था। अपने पिता की नौकरी बचाने के लिए वे भगवतीचरण वोहरा के घर गयीं।वे उन्हें भाई मानती थीं और उनकी पत्नी दुर्गा को भाभी। सभी क्रांतिकारियों ने उन्हें दीदी मानना शुरू कर दिया। तभी से आप सुशीला से सुशीला दीदी बन गईं। सुशीला दीदी ने 23 दिसंबर 1929 में दिल्ली में वायसरॉय की ट्रेन उड़ाई थी जिसमें वे बाल-बाल बच गयीं। भगत सिंह व उनके साथियों को जेल से भगाने की योजना में सुशीला दीदी की महत्वपूर्ण भूमिका थीं। वे पुरुषोत्तम दास टंडन के घर बेटी बन कर रहीं। बाद में चंद्रशेखर आज़ाद के घर 'मातृ मंदिर' में रहीं। तलाशी अभियानों में वे बाल-बाल बचीं। वेश बदल कर कई बार वे भगत सिंह से मिलने गयीं। इंदु नाम से चांदनी चौक में भाषण भी दिया और 6 माह का कारावास भी सहन किया। अतः स्वतंत्रता संग्राम में उनकी बहुत अधिक भागीदार रहीं।

भारतीय स्वाधीनता संग्राम में क्रांतिकारियों की सहायक, भगवती चरण की पत्नी, भगत सिंह, आज़ाद और सुखदेव की ममतामयी भाभी दुर्गा भाभी का नाम बड़ी श्रद्धा से लिया जाता है। 1930 को रावी नदी के किनारे बम परीक्षण के दौरान भगवती चरण की मृत्यु हो गयी। दुर्गा अपने बच्चे के साथ लुकते छिपते भगतसिंह, सुखदेव व राजगुरु की रिहाई का प्रयास करती रहीं। उन्होंने मुम्बई के पुलिस कमिश्नर को मारने की कोशिश की।पर भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव की फांसी के बाद उन्होंने अध्यापन एवं समाज सेवा का काम आरम्भ किया। 4 अक्टूबर 1998 में दुर्गा भाभी का निधन हो गया। स्वतंत्र भारत में प्रथम मुख्यमंत्री बनने का गौरव प्राप्त करने वाली सुचेता कृपलानी स्वाधीन भारत के स्वप्न देखा करती थीं।समाजसेवा में कार्यरत रहते हुए भी गुप्त रूप से राजनीति में वे भाग लेती रही। अध्यापन छोड़ कर वे कांग्रेस में शामिल हो गईं।वे गांधी जी के साथ भारत छोड़ो आंदोलन और व्यक्तिगत सत्याग्रह से जुड़ीं। 1943 में उन्होंने राष्ट्रीय कांग्रेस के महिला विभाग एवं अंडर ग्राउंड वालंटियर फोर्स की स्थापना भी की। 1941-42 में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के महिला और विदेश विभाग की मंत्री, 1945 में ये कस्तूरबा ट्रस्ट की संगठन मंत्री बनीं। 1946 में केंद्रीय विधान सभा की सदस्या बनीं। 1948 से 51 तक वे कांग्रेस कार्यकारिणी की सदस्या,1958 से 60 तक वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की महामंत्री व 1949 में वे संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा अधिवेशन में भारतीय प्रतिनिधि मंडल की सदस्या के रूप में मनोनीत हुईं। 1963 से मार्च 67 तक वे उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री बनीं। एक प्रखर वक्ता, देशभक्त, साहसी,वीरबाला,भारत पुत्री सुचेता कृपलानी भारतवासियों दिलो दिमाग पर अमित छाप छोड़ गयीं।एनी बेसेंट, मैडम भीकाजी गामा, सिस्टर निवेदिता, रानी नेहरू, कस्तूरबा गांधी, मातंगिनी हज़ारा ,सटल देवी, सरोजिनी नायडू, रामेश्वरी नेहरू, राजकुमारी अमृत कौर, मीरा बेन, हंस मेहता, रानी द्रौपदी बाई, कमला नेहरू, विजयलक्ष्मी पंडित, कमला देवी चट्टोपाध्याय, मणिबेन पटेल, सुभद्रा कुमारी चौहान, सुशीला दीदी, दुर्गा भाभी, सुचेता कृपलानी, दुर्गा बाई देशमुख, अरुणा आसफ अली, उर्मिला देवी शास्त्री,रानी ईश्वर कुमारी, मृदुला साराभाई, डॉ सुशीला नायर, डॉ लक्ष्मी, रानी गिडालू, इंदिरा गांधी, भारती सहाय, उषा मेहता, प्रकाशवती पाल,कनक लता बरुआ, निर्मला देशपांडे, काली बाई का नाम कभी भुलाया नहीं जा सकता। अन्य अनेक वीरांगनाएं हैं जिनका स्वतंत्रता आंदोलन में महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय योगदान है उनके नाम इस प्रकार हैं:-हामिद बानो बेगम, महारानी जोधाबाई, महारानी क्षत्राणि ,चंचल कुमारी, रानी प्रभावती, जवाहर बाई, केतु बाई,रज़िया सुल्ताना,हब्बा खातून,नूरजहां, जीजा बाई, रानी दुर्गावती, रानी पद्मिनी, सावित्री बाई और होड़ी रानी-सभी क्षत्राणियों नाम अनमोल है जिन्होंने राष्ट्र की रक्षा के लिए कुर्बान होना, अपने प्राणों का त्यागना सर्वोत्तम समझा। इन महिलाओं ने अपने लेखनी के माध्यम से भारतीय जनमानस को राष्ट्रीय बना दिया।इस प्रकार महिलाओं की विभिन्न भूमिकाओं में रहते देश के स्वाधीनता आंदोलन में भरपूर योगदान दिया। इसी सहयोग का सुखद परिणाम था-देश की स्वाधीनता। देश की स्वाधीनता प्राप्ति के इतिहास में इन महान महिलाओं का नाम अंकित है। इस योगदान को सभी देशवासी हमेशा याद रखेंगे और सम्पूर्ण राष्ट्र इनके प्रति सदैव कृतज्ञ रहेगा।

****

सन्दर्भ:

1.श्याम नारायण मिश्र,स्वाधीनता आंदोलन की प्रमुख वीरांगनाएं,श्वेता बुक एजेंसी, पिलानी,2017
2.वीरेंद्र, वे इंक़लाबी दिन,राजपाल एंड संस,दिल्ली,2017
3.किम इल सुंग ,हमारी क्रांति में साहित्य और कला का स्थान, साहित्यिकी,नयी दिल्ली, 1975
4.आशा गुप्ता,हिंदी पत्रकारिता की विकास यात्रा:तब से अब तक, कनिष्का पब्लिशर्स, नयी दिल्ली,2002
5.सविता चड्ढा,आज़ादी के 50 वर्ष और हिंदी पत्रकारिता, राजसूर्य प्रकाशन, दिल्ली,2000

कैलाश बनवासी का उपन्यास 'लौटना नहीं है' में स्त्री जीवन

डॉ.जेस्ना रहीम
सहायक आचार्य हिन्दी विभाग
श्रीनारायणगुरु ऑपण विश्वविद्यालय, कोल्लम

औद्योगिक सभ्यता और जीवन मूल्यों को बदलने वाले उत्तर-आधुनिक यथार्थ के फलस्वरूप ही विश्व भर में स्त्री के अस्तित्व की चर्चायें होने लगीं। इन उत्तर- आधुनिक स्थितियों ने पुरुष केन्द्रित सभी केन्द्रों को व्यर्थ कर दिया। हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विकास के फलस्वरूप ही स्त्री समाज के और एक हद तक विचार के केन्द्र में आ गयी। साहित्य में एक विमर्श के रूप में इसकी चर्चा उत्तर – आधुनिकता में ही शुरू हुई थी। सन् 1929 में विर्जीनिया वुल्फ (ए रूम ऑफ वन्स ओन) से शुरू होकर सिमोण द बुवा (द सेकंड सैक्स) , केट मिलेट (सैक्सुअल पॉलिटिक्स) से आगे चलकर डोरोथी रिचर्डसन, शोजाना फिल्मैन, कोरा काल्पान, डेल स्पैडर, एलेन शूवाल्टर, जूलिया क्रिस्टीयेवा, तोरील मोय, एनी लेक्लर्क, टिली आल्सन आदि लोग स्त्री के प्रश्न को उत्तर संरचनावादी पद्धतियों और विचारों के अंतर्गत लाये। इसी पद्धति से आगे चलकर हिन्दी स्त्री लेखन भी स्त्री को केन्द्र में लाने में सफल रहे हैं। लेकिन दुख की बात यह है कि वर्षों के प्रयत्नों के बावजूद समाज में महिलाओं के विकास और सफलताओं पर हम सशंकित हैं।

पितृसत्तात्मक समाज में जहाँ पुरुष का ही वर्चस्व है, वहाँ स्त्री को योग्य होते हुए भी शोषित बनके रहना पडता है, यह स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों का मुख्य विषय रहा है। कैलाश बनवासी का उपन्यास 'लौटना नहीं है' में आठवीं दशक के स्त्री जीवन का पुनर्पाठ करके यह साबित करने की कोशिश की गयी है कि दुर्भाग्यवश आज भी हमारा समाज और नारी अनेक कारणों से पितृसत्तात्मक व्यवस्था से मुक्त नहीं हैं। अनामिका के शब्दों में –"यह कितनी बडी बात है कि इतना अनाचार झेलने के बावजूद स्त्रियों ने पुरुषों के दबे – ढंके मनुष्यत्व में आस्था नहीं छोडी है। पहले की स्त्रीयाँ संबंध निभाती थीं तो आर्थिक परतंत्रताजन्य विवश्ता उनके साथ रहती थी | घर के पुरुषों से विरोध भी है तो चुपचाप सहना है, निभाना है – इसके सिवा उपाय भी क्या है ? अब आर्थिक स्वतंत्रता है तो उपाय बहुतेरे हैं, फिर भी स्त्रियाँ जन्दी किसी को बीच मंझधार नहीं छोडती – बेटी/पत्नी/ मां / बहन/ दोस्त / सहकर्मी – किसी भी रूप में।" (मन मांझने की ज़रूरत, अनामिका, पृ.58,59) जिन सामाजिक व्यवस्थाओं ने नारी को शोषित बनाया, वह आज भी ज़ारी है। समाज , परिवार, शिक्षा , रंग, नौकरी जैसे सबकहीं नारी का शोषण और पाखण्ड वाली सभ्यता - संरचना को लेखन ने पर्दाफाश किया है। यह उपन्यास छत्तीसगढ के गरीब, मध्यवर्गीय स्त्री जीवन की अनुभवात्मक प्रस्तुति है, जिसमें एक बहन की पीडा को उसी के छोटे भाई 'राजेश' द्वारा पेश किया गया है। छत्तीसगढ के 'दुर्ग' गाँव की आँचलिकता को उजागर करने के साथ – साथ वहाँ की भाषा, रीति-रिवाज़, आचार- विचार, त्योहार, वेश-भूषा को भी पेश करके छतीसगढी संस्कृति का खुला चित्रण सामने लाया जाता है। इसप्रकार 'दुर्ग' ग्राम की आम जनता का जीवन - यथार्थ है यह उपन्यास। इसकी नायिका 'गौरी' के माध्यम से शताब्दियों से सामाजिक व्यवस्थाओं से पीडित नीरी की ज़िन्दजी को प्रश्नांकित किया गया है। 'गैरी' उस स्त्री वर्ग की प्रतिनिधि है जो विभिन्न सामाजिक – धार्मिक परम्पराओं और रूढियों से मुक्त नहीं।

इसमें चित्रित 'बालग्राम' शोषित नारियों की संगमस्थली है , जिससे समाज की विभिन्न कोटी से आयी भारतीय नारियों का जीवन यथार्थ सामने आता है। इसकी नायिका 'गौरी' भी ज़िंदगी में भोगे हुए भयानक अतीत से बचने केलिए उस बालाश्रम में सात बच्चों की माँ बनकर अपनी बाकी जीवन बिताना चाहती है, जहाँ वह मशीन जैसे काम करने और जेलखाना जैसे रहने केलिए भी तैय्यार है। गौरी की इस फैसले के बारे में राजेश यों कहता है – " आखिर वहाँ भी रहेगी तो उसका जीवन कुछ बदलने वाला नहीं है बल्कि ये जगह उसकेलिए घर से भी ठीक है।" (पृ.239) इन शब्दों से स्पष्ट है कि गौरी सदियों से शोषित उस स्त्री का प्रतीक है जो पुरुषसत्तात्मक समाज के अधीन है। गौरी विधवा थी। इसलिए समाज में अन्य स्त्रियों की अपेक्षा उनकी तकलीफें ज़्यादा थीं। क्योंकि विधवा होने के बाद स्त्री को बेकसूर नरकीय जीवन जीना पडता है। इसलिए राजेश के अनुसार बालग्राम जैसी संस्थाएँ उन स्त्रियों केलिए भी अनुयोग्य है, जैसे - "....जिनको घर से भी ठोकर मिलती है और बाहर से भी ! जिन्हें अपने घर में घुटन होती है और बाहर निकलने को वे छटपटाती हैं, विधवा या तलाकशुदा स्त्रियां..."।(पृ.238)

उपन्यास भर में लडकियों के खिलाफ षडयंत्र रचने वाले पितृसत्तात्मक समाज पर व्यंग्य करते हैं लेखक। पैदा होने से लेकर मरने तक की एक लडकी की सफर समाज द्वारा पूर्णनिर्णित है। हर एक लडकी इससे मुक्त नहीं। पैदा होते ही लडकी की शादी के बारे में समाज सोचता है। इसके बारे में राजेश यों व्यंग्य करता है – "इनके लिए शादी – ब्याह ही मानो जीवन का सबसे बडा लक्ष्य है। सबसे ज़्यादा ये इसी के बारे में सोचते हैं। किसी भी लडकी के सयानी होने पर उसके ब्याह की चिंती ये करने लगते हैं। अगर ब्याह में कुछ देरी हुई तो इनकी कानाफूसी बढ जाती है। ..... और अगर शादी हो गई तो उसके आगे की इन्हें बस एक ही चिंती रहती है। उसकी गोद भरने की।" (पृ.28,29) इसप्रकार घर संभालना लडकियों का अच्छा गुण माना जाता है। राजेश के शब्दों में लेखक यों व्यक्त करते हैं – " उनके लिए तो लडकी होने का मतलब ही घर- गृहस्थी और चूल्हा- चौका था। यही तो करती हैं लडकियाँ, चाहे कितना ही पढें।"(पृ. 47) इसके अलावा धन, रूप और रंग में लडकियों को मापने वाला समाज कभी भी उसके हृदय और बुद्धि पर ध्यान नहीं देता। बालग्राम में नौकरी करने केलिए तैयार होने वाली 'संगीता' काली होने के कारण कोई उसको पसन्द नहीं करता। तीस उम्र को पास करने वाली संगीता माँ- बाप के साथ खुश रहकर भी सामाजिक कुप्रथाओं से मुक्त नहीं। उसके पिताजी कहते हैं – " कोई लडका उसको पसन्द नहीं करता, साला ! दस साल से यही चल रहा है घर में। अब तीस को पार कर गई है वो। क्या करें ? ... रंग काला है, बस। अब रंग अपने हाथ में थोडी है ? बस यही तो ! बाकी और क्या खराबी है उसमें ?" (पृ. 238) इसलिए गौरी की तरह वह भी बालग्राम में रहना चाहती है।

गौरी की जीवन गाथा प्रस्तुत करके पूरे उपन्यास में नारी शोषण की यथार्थ स्थिति को बेपर्दा किया है। लेखक के अनुसार हर एक लडकी को 'लडकी' जैसे बडे करने में समाज का बडा हाथ है। बचपन के खेल-कूद से लेकर यहाँ भेद भाव शुरू होता है। लडकियाँ गुड्डा- गुडिया खेल खेलती हैं तो लडके भौंरा, बांटी या गिल्ली डंडा खेलते हैं। गुडिया को संभालने वाली हर एक लडकी में भविष्य की 'घरवाली' को पाया जाता है। मात्र 'घरवाली' ! क्योंकि पुरुषसत्तात्मक समाज स्त्री को मात्र घरवाली के रूप में ही देखना चाहता है। उपन्यास में राजेश और गौरी की सहेली 'उर्मिला' लडके वाले खेल खेलती थी और जीतती थी। उर्मिला के बारे में सबकी यही राय थी- " उर्मिला सच में इन सब खेलों में चैम्पियन थी।" (पृ.46) यहाँ लेखक पितृसत्तात्मक समाज का ऐसा राज़ खोलने का प्रयास करते हैं जो हर लडकी को चैम्पियन बनाने से रोकती है। उर्मिला के माध्यम से यह साबित होता है कि नारी हर काम के लिए काबिल और शक्तिशाली है। स्त्रियों को शिक्षा देना उनपर वैधव्य बुलाना समझा जाता था। इसके लिए समाज ने ऐसा नियम बनाकर रखा है कि 'शिक्षित लडकी' बिगड जाती है। उपन्यास में गौरी आठवीं कक्षा पास करने के बाद सिलाई क्लास जाती थी। गौरी का दादा कहता है –

" और ज़्यादा पढ़ के क्या करेगी ? लडकी जात कितना ही पढ- लिख ले, उसको तो आखिर चूल्हा ही फूंकना है।"(पृ.17) यहाँ गौरी का छोटा भाई राजेश अपनी पढाई आगे बढाता है। लडका – लडकी का यह भेद- भाव भारतीय समाज का एक सामान्य प्रणाली था। सिर्फ शिक्षा में ही नहीं बल्कि जीवन के हर एक क्षेत्र में यह भेद- भाव था। इसलिए हर परिवार में भाई का स्थान बहन से ऊपर था चाहे भाई उम्र में छोटा भी हो। इसका स्पष्ट उदाहरण उपन्यास में राजेश और गौरी के बर्ताव से मिलता है। खुद राजेश इस भेद-भाव के बारे में कहता है –" गौरी की बहुत सी बातों पर मैं अक्सर खीझ जाता हूँ, बहुत जल्दी। आदतन मैं उसपर ऐसे खीझता हूँ मानो मेरा अधिकार हो ! और वह भी जैसे इसे स्वीकार कर चुकी है कि भाई जो करेगा सही करेगा.... उससे उमर में दो बरस छोटा होने के बवजूद !" (पृ.8) पुरुष को बचपन से मिलने वाला यह अधिकारी भाव पूरी ज़िन्दगी में उसके साथ रहता है। यह अधिकार अपनी माँ, बहन और बीवी पर हमेशा प्रकट भी करता है। गौरी की माँ पर चिल्लाने वाला पिता इसका एक सच्चा उदाहरण है। हमेशा दारू पीकर वह माँ से यों चिल्लाता है –"तू मेरे को ऐसा समझाती है क्या ? अनपढ औरत ! घर क्या तेरी कमाई से चल रहा है ? घर मेरी कमाई से चल रहा है !...हमारी जो मरजी हो, करेंगे ! हमको कोई नहीं रोक सकता !" (पृ.24) यहाँ स्पष्ट है कि पुरुषसत्तात्मक समाज स्त्री को पढने और नौकरी करने से क्यों रोकता है।

इसप्रकार स्त्री का वस्त्र, बोलचाल सब में पाबन्दी लगायी है समाज ने। इसकेलिए अनेक रीति-रिवाज़ों का भी सहारा लेते हैं। इसके मुताबिक लडकी सयानी होने से उसे साडी पहनना पडती है। गौरी भी स्कूल ड्रेस छूटने के बाद अपनी अनिच्छा के बावजूद साडी पहनती है। माँ कहती है – "सब लोग चाहे जैसे पहनें, हम लोग अपने रीति-रिवाज़ के मुताबिक पहनेंगे।"(पृ.21)

समाज लडकियों को ऐसे भी नियमों के अंतर रखता है, जिनमें सबसे बडा गुण है 'शरमाना'। नायिका गौरी केलिए 'सगा'(लडकी देखने आने वाले लोग) आते वक्त गौरी मेहमानों के पास से गुज़रते हुए एकदम सिमट – सी गयी। इस पर व्यंग्य करते हैं लेखक – "इसी को लोग शरमाना कहते हैं, यहाँ लडकी का एक बड़ा गुण माना जाता है और खासकर ऐसे मौकों के लिए बहुत ज़रूरी समझा जाता है।"(पृ.29) इसमें ध्यान देने की बात यह है कि इन सारी कुरीतियों, रीति - रिवाज़ों और आचारों को बढावा देने वाले गाँव की महोलाएँ हैं। उनमें हर एक लडकी की माँ, दीदी और बहनें शामिल हैं। इस उपन्यास में गौरी की माँ ही सामाजिक कुप्रथाओं का पालन करने के लिए आगे है। अपनी ज़िन्दगी में भोगी सभी दुविधाओं के बावजूद वह गौरी केलिए ऐसी ही ज़िन्दगी चुन लेती है जिससे गौरी कभी खुश नहीं रह पायेगी। गौरी की शादी की वक्त लडके की कमियों को सबसे पहले माँ ही नज़रअंदाज़ करती है। अपने पति यानी गौरी के पिताजी के पीना- खाना और गाली देना देखने के बाद भी माँ सोचती है कि गौरी के पति में भविष्य में सुधार होगा। गौरी के लिए चुना गया लडका शराबी होते हुए भी माँ इस रिश्ते से पीछे नहीं जाती। क्योंकि उसे रिश्ता टूटने का भय था। समाज में ऐसा एक अंधविश्वास था कि किसी लडकी का रिश्ता टूटा तो फिर उस लडकी के लिए दूसरा कोई रिश्ता नहीं मिलेगा। इसी डर से माँ अपनी बेटी की शादी एक शराबी से करने के लिए भी तैयार थी। राजेश के शब्दों में इसका कारण यह है – "माँ समाज से बहुत डरती थी। यह डर इतना हावी था कि उसे अपनी बेटी के भविष्य से ज़्यादा समाज के लोग क्या कहेंगे, इसकी चिन्ता थी।"(पृ.98) स्त्री को आदर्श नारी का चेहरा देकर रीति-रिवाज़ों और अंधविश्वासों के नाम पर उसको कैद करने वाले पुरुषसत्तात्मक समाज और व्यवस्था को यहाँ बेपर्दा करते हैं लेखक।साथ ही इन व्यवस्थाओं से प्रतिरोध करने वाली सशक्त नारी पात्रों को भी प्रस्तुत किया गया है। लडकों के खेल खेलने वाली 'उर्मिला' एक उदाहरण है। गौरी के रिश्तेदार 'रूपा' भी गौरी के भविष्य पर हमेशा सवाल करती थी। वह शिक्षित है और इस लिए ही अपना अधिकार की पूरी जानकारी भी है। गौरी को लडका पसन्द नहीं होते हुए भी उसकी शादी उससे करने पर वह सवाल करती है। उसी प्रकार राजेश का दोस्त हरीश की बहनें 'वर्षा' और 'मेघा' दोनों छोटी उम्र में लडकियों की शादी करना पसन्द नहीं करती। इसलिए गौरी की शादी पर भी सवाल करती है। लेकिन उपन्यास में सबसे सशक्त प्रतिरोधी स्वर खुद गौरी की है। अपने पति के दुर्व्यवहार से तंग आकर वह दृढ स्वर में कहती है – "मैं अब नहीं जाऊगी आपके साथ! आप यहाँ से चले जाईए। मैं नहीं रह सकती आपके साथ। बस्स !"(पृ.151) यहाँ गैरी जैसी लडकियों की मानसिक शक्ति सामने आती है। मायके में रह जाने वाली स्त्री के बारे में समाज क्या सोचता है, इसका अन्दाज़ा उसे था, इसके बावजूद उसने यह कठोर फैसला लिया था। समाज हमेशा स्त्री को दुर्बल दिखाने की कोशिश करता है। अत: स्त्री के लिए ऐसे नियम भी बनाये जाते हैं कि औरत के जीवन में पेति से बढकर और कुछ नहीं होता। वहीं स्त्री जीवन का सबसे बडा सुख है। इसलिए पति से बचकर मायके आने वाली गौरी को लोग कसूर समझते हैं। बाद में जब उसका पति मर जाता है, तब भी वह सामाजिक दुर्व्यवस्थाओं से मुक्त नहीं। समाज के नज़र में विधवा बनने वाली गौरी को अंधविश्वासों और कुरीतियों से बचाने के लिए उसका चाचा कहता है – "देश – काल परिस्थिति के अनुसार नियम को बदलना पडता है। हमारे ही समाज में कई बार नियम बदला है। नियम तो हम ही बनाते हैं न समाज की भलाई के लिए।" (पृ.192) ध्यान देने की बात यह है कि यह शब्द एक पुरुष का है, जो स्त्रियों की भलाई के लिए कह रहा है। यह उम्मीद की बात है। उसीप प्रकार परंपरा और सभ्यता के नाम पर बनाये गये सभी नियम पुरुषसत्ता की ही निर्मिति है। लेकिन भारतीय संस्कृति में खुद इन नियमों को तोडने की शक्ति निर्लीन है। छत्तीसगढी त्योहार 'तीजा' इसका एक उदाहरण है। छत्तीसगढी महिलायें 'तीजा' के लिए इंतज़ार करती हैं। यहाँ त्योहार सुहागिनें अपने मायके में मनाती हैं। इस लिए ही तीजा सुहागिनें के लिए मायके आने का एक मौका थी। गौरी ने भी 'तीजा' के समय घर आते वक्त अपनी दुरवस्था घरवालों को सुनायी थी। नारी को महत्व देने वाली इस त्योहार के माध्यम से भारतीय संस्कृति में स्त्री का स्थान स्पष्ट होता है। सबको एक साथ संभालने वाली स्त्री की शक्ति पर प्रकाश डाला है लेखक ने। जीवन में बहुत कुछ सहने के बाद भी मायके में आकर घर संभालने की ज़िम्मेदारी गौरी को थी। घर संभालने के साथ वह नौकरी भी करती थी। स्त्री का यह बहु आयामी बल ही उसका सबसे बडा गुण है। बालाश्रम में 'माँ' के पद में काम करने वाली पंजाबी औरत भी ऐसी एक स्त्री है जो सात बच्चों के पालन – पोषण करने के साथ ही अपनी कमाई से बचाकर टीवी, फ्रिज़, सोफा, टेप रेकोर्डर जैसे सबकुछ खरीदती है। उनके बच्चे भी पढ-लिखकर अच्छी नौकरी कर रहे हैं। पुरुष के बिना घर चलाने वाली स्त्री का उदाहरण है यह औरत। इसप्रकार पूरे उपन्यास में स्त्री को अपने व्यक्तित्व में खडे होने का उपदेश देते हैं लेखक। यह शिक्षित होने से मात्र नहीं हो सकता। 'न' कहने की हिम्मत जब तक लडकियों में नहीं होती, तबतक उनकी स्थिति में बदलाव नहीं आएगा। नहीं तो पढने लिखने से कोई फायदा नहीं। लखक कहते हैं – "मैट्रिक क्या, एम. ए, पीएच.डी हो तो भी क्या फर्क पडता है अगर वह अपने फैसले खुद नहीं ले सकती हो ?" (पृ.187) यहाँ लेखक गौरी का उदाहरण लेते हैं। लेकिन गौरी समाज की हर एक लडकी का प्रतीक है।इसप्रकार आठवें दशक के स्त्री जीवन को सामने लाकर लेखक यह साबित करने की कोशिश करते हैं कि आधुनिक सुविधाओं के कारण आज स्त्री बहुत आगे आ चुकी है, लेकिन पूर्ण रूप से सामाजिक व्यवस्थाओं से मुक्त नहीं। आज भी लडकी के पैदा होने से समाज डरता है। आज भी लडकी की शादी माँ- बाप के लिए बोझ है। आज स्त्री ने सभी क्षेत्रों में उनका हस्ताक्षर और पहचान बनाये हैं। लेकिन जब तक इन क्षेत्रों में स्त्रियों के योगदानों की चर्चा नहीं होती है, तब-तक स्त्री का विकास नहीं होगा। यह आठवीं दशक के उस पुरुषसत्तात्मक समाज का उत्तरआधुनिक चेहरा है। स्पष्ट है कि उस ज़माने से आज सिर्फ सुविधायें बदली हैं, मनोभाव नहीं। इसलिए ही आठवीं दशक की यह कथा बिलकुल प्रासंगिक है।

****

अस्मितामूलक विमर्श : वैचारिकी और हिंदी दलित साहित्य

डॉ.पंडित बन्ने
डी.लिट्,शोध-निर्देशक एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग
भारत महाविद्यालय, जेऊर (म.रेल)
तह. करमाला, जि. सोलापुर (महाराष्ट्र) मो नं. 9834582128

शोध सारांश :-अस्मितामूलक विमर्श रुढिवादी परंपराओं और सिद्धांतों के विरुद्ध एक वैचारिक विद्रोह है। आज अस्तिलमूलक विमर्श में ना केवल स्त्री, दलित और आदिवासी की बात होती है बल्कि किन्नर, बालक, वृद्ध, किसान, मजदूर, युवा, पर्यावरण एवं समस्त चराचर जगत को अभिव्यक्ति देने का महत्ती प्रयास परिलक्षित होता है। साहित्य में अस्मितामूलक विमर्श को दृष्टिकोण से प्रचलित हुआ। इसमें सहानुभूति परक लेखन था। जैसे प्रेमचंद की 'ठाकुर का कुआँ' व 'सद्गति' यह रचना सहानुभूति परक अस्मितामूलक विमर्श है। दूसरा दृष्टिकोण स्वानुभूतिपरक था। लेखक स्वयं हासिए पर धकेल दिए गए पक्ष का होता है। स्वयं लेखक अन्याय, अत्याचार, शोषण की आत्मसात पीड़ा को अभिव्यक्त करता है। जैसे ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा 'जूठन' में स्वानुभूतिपरक अस्मितामूलक विमर्श देखने को मिलता है। पीड़ित वंचित, वंचित, दमित पक्ष स्वयं की स्वतंत्रता का आस्तित्व को लेकर सोचने पर विवश होता है।

बीज शब्द :- अस्मितामूलक, दलित, आदिवासी, विमर्श, समाज, साहित्य, स्वानुभूतिमूलक, गुलामी, स्वतंत्रता, सम्मान, समानता।

भूमिका :-हिंदी साहित्य के दलित, आदिवासी, किन्नर, नारी, वृद्ध, किसान, मजदूर, युवा विमर्शों में समाज के इन वंचित वर्गों ने कहानी, कविता, उपन्यास, नाटक, एकांकी, आत्मकथा और अन्य विधाओं के माध्यम से साहिस जगत में मुख्य धारा का ध्यान अपनी ओर खींचा है। राजेंद्र यादव अस्मिता के बारे में कहते हैं – "अस्मिता जितनी मेरी है, उतनी ही मेरे परिवेश और परंपरा की भी। उसमें वर्ग, वर्ण, क्षेत्र, धर्म, लिंग, परंपराएँ सभी कुछ घुसे और घुले मिले हैं।"[1]

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जिनके विचारों से दलित समाज को अपनी गुलामी का अहसास हुआ, उनकी वेदना को वाणी मिली। दलितों की वेदना ही दलित साहित्य की जन्मदात्री है। दलित साहित में वेदना 'मैं' की वेदना नहीं। वह पूरे बहिष्कृत समाज की वेदना है। डॉ. बाबासाहेब आंबेडेकर ने लेखकों को आहवान किया है – "अपनी साहित की रचना में उदात्त जीवन मूल्यों सांस्कृतिक मूल्यों को परिष्कृत कीजिए। अपना लक्ष्य सीमित मत रखिए। अपनी कलम की रोशनी को इस तरह से परिवर्तित कीजिए कि गाँव, देहातों का अंधेरा दूर हो । उनकी पीड़ा व्यथा को भली भाँति जान लीजिए और अपने साहित्य द्वारा उनके जीवन को उन्नत करने का प्रयास कीजिए इसमें सच्ची मानवता निहित है।"[2]वामन दादा कर्डक तमाम शोषितों को डॉ. आंबेडकर के नेतृत्व में संघटित होने का आह्वान करते हैं। सेठ साहूकार, उद्योगपति, व्यापारी अफसर, राजनेता, दलाल सभी संघटित है। इन शोषकों ने शोषितों को कभी संघटित नहीं होने दिया। अंधश्रद्धा, रूढ़ि-परंपराओं में लिप्त रखकर निरंतर इनका धार्मिक शोषण किया गया। इन शोषितों को जगाने का प्रयास वामनदादा कर्डक ने किया है। वे बार-बार कहते हैं - 'संघटित हो जाओ -- अब जाग जाओं, संघर्ष करों, जैसे–

"जाग उठो, जाग उठो, जाग उठो,
आग बन के इस वतन के नाग उठो।
मेहनत का फल जो तुम्हें पाना है,
फलन मिले तो जलाने बाग उठो।
खीच करके लाना है, रोटी को,
ते लगाने एकता की आग उठो
माँग, मेहर, धेड, चमारों
धोने अपने अछूत के दाग उठो ।"[3]

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर के अथक प्रयासों से शोषितों नवचेतना आ गई अपने अस्तित्व के लिए वे संघर्ष करने लगे। अत्याचार, अन्याय का विरोध करने लगे। बाबासाहेब को एक आवाज में शोषित हजारों की संख्या में इकट्ठा होने लगे। अन्याय के विरूद्ध में सत्याग्रह करने लगे। कवि वामनदादा कर्डक कहते हैं –

"आंबेडकर की बात हमारे साथ है,
उनकी सारी साथ हमारे साथ है,
क्रांति का ऐलान हमारा आज हैं
वामन तेरे साथ अराजक बन जाते
सारे-सारे हाथ अराजक बन जाते
लेकिन दिल में आज हमारे बुद्ध है।"[4]

दलित कविता की आक्रोशपूर्ण अभिव्यंजना भावपूर्ण है। मुक्ति की छटपटाहट में वह हर प्रकार के बंधने को तोड़ देना चाहती है। उसमें वैचारिक तीव्रता भी है। सूरजपाल सिंह कृत 'धन्यवाद शहर में' –

"गाँव में मैं होता हूँ
दलित समाज के विभिन्न रूपों में
टुकड़े-टुकड़े अलग-थलग
शहरों में हम होते हैं
सिर्फ हम होते हैं शेडयूल्ड कास्ट
धन्यवाद शहर तुमने
मुझे मैं से हम बनाया।"[5]

डॉ. आंबेडकर शोषित जनता के शासक बनाना चाहते थे। दीन, दालित, शोषित, पीड़ित, सर्वहारा वर्ग, अभावग्रस्त जिंदगी जीने वाले वर्ग के उत्थान के प्रति डॉ. आंबेडकर का कार्य सराहनीय रहा है। दलित साहित्यकार समानता, सम्मान और अपनी आजादी के लिए लिख रहे हैं। जाति के आधार पर हो रहे भेदभाव को वह खत्म करना चाहता है। दलित साहित्यकार अपने जीवन कटु अनुभवों को व्यक्त करते हैं। 'जूठन' आत्मकथा में ओमप्रकाश वाल्मीकि को मास्टर कालीराम ज्ञानदान करने बजाय स्कूल में के झाडू लगाने के लिए कहता है। स्कूल के कमरे, बरामदे और पूरा मैदान साफ कर देते हैं। लेखक मजबूरी से मास्टर के आतंक के सामने डरकर झाडू लगता है। लेखक के पिता अपने बेटे को झाड़ लगाते देख गुस्सा हो जाते हैं और कहते हैं – "कौन सा मास्टर है वो द्रोणाचार्य की औलाद मेरे लड़के से झाड़ लगवाये हैं -----।"[6] कहना सही है कि यह व्यवस्था के विरोध में विद्रोह का स्वर है। सुशीला टाकभौरे का काव्य उनकी स्वानुभूतियों का जीवंत दस्तावेज है। आज नारी खुद को पहचान लिया है। आज शिक्षा और स्वतंत्रता, अर्थ - निर्भरता और आत्मनिर्भता ने उसे अपने अस्तित्व का एहसास निर्भरता हो गया है। अब शिक्षा एवं विवेक से दलित जाग उठा है। उसने अपने दलितपन की केंचुली को उतारकर फेंक दिया है। 'तुमने उसे कब पहचाना' कविता में सुशीला टाकभौरे कहती है —

"आज वह खुरदार औरत
अपने आपको पहचान गई है
इमे यूँ न सत्ताओ / वरना यह भी
नंगेपन पर उतर आएगी
तुम्हारे सर्वस्व को नकार कर
तुम्हीं को नीचा दिखाएगी ।"[7]

निष्कर्ष :-

ओमप्रकाश बाल्मीकि, सुशीला टाकभौरे, कुसुम वियोगी, कंवल

भारती, मोहनदास नैमिशराय, जयप्रकाश कर्दम, दयानंद बटोही, सी.बी. भारती, विमल थोरात, डॉ. तुलसीराम पूरणसिंह आदि. दालित साहित्यकार है। उन्होंने सामाजिक न्याय के लिए मानवीय मूल्यों स्वतंत्रता, समता, करूणा, मैत्री, शांति, परोपकारिता और बंधुता को अत्यधिक महत्व दिया है। दलितों में अस्मिता जगाने का कार्य डॉ. बाबासाहेब ने किया है। आधुनिक काल में फुले, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के विचारों और कार्यों प्रेरणा पाकर दलित साहित्य नए सिरे से सामने उभरकर आया वर्तमान समय में दलित विमर्श साहिस के केंद्र में बने हैं। समाज के दलित और शोषित लोगों को अपनी आस्मिता समाज और आस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष हेतु तैयार तथा उनमें आत्मगौरव की भावना विकसित करना ही दलित साहित्य का उदेश्य है।

****

संदर्भ ग्रंथ -

1. हंस -सं. राजेंद्र यादव, अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली जून 2009, पृ. 9
2. बयान - सं. मोहनदास नैमिशराय, पृ. 42, जून-2012, नई दिल्ली
3. जनकवि वामनदादा कर्डक - सुकुमार भंडारे, पृ. 49, विकास प्रकाशन, कानपुर, सं. 2012
4. वही 4.67
5. नई सही और दलित- डॉ. सुजाता वर्मा, पृ. 149, विकास प्रकाशन, कानपुर, सं. 2013
6. जूठन - ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृ.16, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली,
7. सामाजिक क्रांति और दलित साहित्य - सं. जयवंत आधव, डॉ. भरत संगरे, पृ. 219, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर, सं. 2014

सुशीला टाकभौरे की कहानियों में दलित अस्मिता एवं अस्तित्व का संघर्ष
('संघर्ष' कहानी के विशेष संदर्भ में)

डॉ.नवनाथ गाड़ेकर
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
भारत महाविद्यालय, जेऊर (म.रेल)
तहसील-करमाळा, जिला-सोलापुर (महाराष्ट्र) 413202

शोध सारांश :- 'संघर्ष' कहानी में सुशीला टाकभौरे ने उच्च वर्ग द्वारा दलित वर्ग पर हो रहे अन्याय अत्याचार का चित्रण किया है। कहानी में चित्रित एक दलित परिवार है, परिवार के सभी सदस्य पीड़ित है। शंकर चौदह साल का लड़का है वह उदंड, नटखट और शरारती है। उसने अपने माता-पिता और समाज को परेशान किया है। उसकी नानी गाँव की गंदगी साफ करने काम करती है, यह उसे अच्छा नहीं लगता। यह कार्य करने के लिए उसे वह कई बार रोकने की कोशिश करता है। उसके सहपाठी अपने घर में आने नहीं देते, कभी वह उनके घर में गया तो वे उसे बाहर निकाल कर शुद्ध पाणी छिडकाकर घर को शुद्ध कर लेते हैं। शंकर जितना नटखट, शरारती, उदंड, उधमी है उतना ही होशियार भी है। शंकर का पूर्ण परिवार गाँव के साथ लड़ता हुआ दिखाई देता है। देश के प्रत्येक दलित परिवार की अवस्था इसी प्रकार की है। कहानी में चित्रित केवल शंकर का परिवार नहीं है, वह केवल प्रतिनिधित्व करता हुआ दिखाई देता है। सुशीला टाकभौरे ने यह कहानी लिखकर एक दलित परिवार अन्याय अत्याचार के विरुद्ध लड़ते-लड़ते वह कैसे अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए संघर्ष करता है, इसका विस्तृत रूप से चित्रण किया है।

बीज शब्द:-

संघर्ष, अस्मिता, अस्तित्व, समाज, दलित, गाँव, सवर्ण, वर्ग, परिवार, व्यवस्था, चित्रण, लड़का, छुआछूत आदि।

मूल आलेख:-

सुशीला टाकभौरे महिला दलित कथा लेखिकाओं में अग्रणी स्थान रखती है। उन्होंने अपनी कहानियों में दलित लोगों पर होने वाले अन्याय अत्याचार का चित्रण किया है। उनका व्यक्तित्व और कृतित्व बहुआयामी रहा है। उन्होंने कविता, कहानी, नाटक आदि विधाओं में अधिकार के साथ लेखनी चलाकर दलित वर्ग की समस्या उनके दुःख, पीड़ा, यातना आदि का चित्रण किया है। उन्होंने 'शिकंजे का दर्द' नाम की आत्मकथा भी लिखी है। इस आत्मकथा में अपने अनुभव के आधार पर दलित स्त्री वर्ग की पीड़ा यातना को चित्रित किया है। 'दलित लेखन में स्त्री चेतना' नामक समीक्षा ग्रंथ भी उनके नाम पर है। उनकी साहित्य सेवा देखकर मध्य प्रदेश दलित साहित्य अकादमी की ओर से विशिष्ट सेवा सम्मान, रमणिका फाउंडेशन से सावित्रीबाई फुले सम्मान, महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी की ओर से डॉ. उषा मेहता हिंदी सेवा सम्मान आदि विविध पुरस्कारों से गौरवान्वित किया है।प्रस्तुत कहानी में सुशीला टाकभौरे ने उच्च वर्ग द्वारा निम्न वर्ग को हेय की दृष्टि से देखे जाने और उस पर अत्याचार करने के विरुद्ध संघर्ष का चित्रण किया है। दलित कहानीकारों की कहानियों में समाज की वास्तविकता का चित्रण किया है। उनकी कहानियों में भारतीय समाज की विद्रूपताओं, विडंबनाओं को जिम्मेदारी के साथ व्यक्त किया है। विषमता और घृणा पर आधारित समाज की जगह समता और करूना के महान विचार का प्रस्तुतीकरण दलित कहानियों में है। उनका चिंतन कार्ल मार्क्स, गौतम बुद्ध, कबीर, बाबासाहेब आंबेडकर, महात्मा ज्योतिबा फुले और पेरियार के विचारों पर आधारित है। दलित समाज के स्थिति के संदर्भ में डॉ. विमल थोरात का कहना है कि, "संवैधानिक प्रावधानों के होते हुए भी शिक्षा के क्षेत्र में ब्राह्मण वर्चस्व का

बोलबाला है और ऐसी हर संभव कोशिश होती हुई दिखाई देती है, जिससे ज्ञान अर्जित कर दलित आदिवासी अपनी स्थिति बेहतर बनाने के लिए संघर्ष का रास्ता अपनाएँ।"[1] संघर्ष कहानी में सुशीला टाकभौरे ने एक दलित परिवार का चित्रण किया है। यह परिवार देहाती है, देहात में रहते हुए वह गाँववालों से निरंतर संघर्ष करता रहता है। देहात में दलित समाज की ओर देखने की दृष्टि कितनी घिनौनी है यह देखने को मिलती है। शहर की हवा देहात में गई है शहर की कई घटना प्रसंगों का अनुकरण देहाती दुनिया करती है। परंतु दलित समाज के साथ भेदभाव करने की दृष्टि में किसी भी प्रकार का बदलाव नहीं हो रहा है। दलित समाज अपनी अस्मिता और अस्तित्व के साथ लड़ता हुआ दिखाई देता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि अपनी आत्मकथा जूठन में दलित समाज के संदर्भ में कहते हैं, "दलित पढ़ लिख कर समाज की मुख्यधारा से जुड़ना चाहते हैं लेकिन सवर्ण उन्हें इस धारा से रोकता है। उनसे भेदभाव करता है अपने से हीन मानता है। उसकी बुद्धिमत्ता, योग्यता, कार्यकुशलता पर संदेह व्यक्त किया जाता है। प्रताड़ित करने के तमाम हथकंडे अपनाएँ जाते हैं। इस पीड़ा को वही जानता है जिसने इसके विभिन्न शिखा के नश्तर अपनी त्वचा पर सहे है। जिसने जिस्म को सिर्फ बाहर से ही घायल नहीं किया है अंदर से भी छिन्न-छिन्न कर दिया है।"[2] आज संपूर्ण भारतवर्ष में आजादी का अमृत वर्ष बड़े धूमधाम से मनाया जा रहा है। परंतु लोगों के विचारों में बदलाव नहीं आ रहा। विज्ञान ने क्रांति की है मनुष्य ने चाँद पर पाँव रखा है लेकिन जाति की दीवारें अधिक मजबूत होती गई है।

'संघर्ष' कहानी का प्रत्येक पात्र समाज व्यवस्था के साथ अपनी अस्मिता एवं अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा है। इस कहानी में शंकर, नानी, और उसके माता-पिता आदि पात्र है। शंकर अपने माता-पिता के साथ ननिहाल में रहता है। उसे अपने पैत्रक गाँव में रहने के लिए घर नहीं है। शंकर की उम्र चौदह साल की है। उसका रंग सांवला है, नाक लंबी है और आंखें छोटी छोटी है। हम दलित परिवार के हैं, सवर्णों के घर जाना नहीं चाहिए यह उसे नहीं समझता वह बेचारा निष्पाप बालक है। सवर्ण समाज के द्वारा उसे हम निम्न जाति के हैं यह बोध हो जाता है। शंकर की नानी गाँव की गंदगी साफ करने का काम करती है। उसके बदले में बासी रोटी मिलती है, बासी रोटी खाकर सभी जीवन जी रहे हैं। शंकर नटखट है शरारती है उसकी प्रवृत्ति खिलाडू है। गाँव में जब काले मुँह के बंदर आते हैं तब उनको उनकी तरह आवाज निकालकर नकल करता है। शंकर के हूप हूप करने करने के कारण बंदर हंगामा मचाते हैं। घर का नुकसान करते हैं। घर के आंगन में गौरैया दाना चुगने के लिए आती है तब उनके पीछे दौड़ कर उनको भगाता है। सड़क के किनारे दो जामुन के पेड़ है उसको गिराने के लिए वह पत्थर मारता है। उसके कुछ पत्थर तेलन के घर पर गिरने के कारण वह उसे गंदी गंदी गालियाँ देती है,"मरई खाये ठठरी बांधे, जामुन पर पत्थर मारे है। पत्थर हमारे घर पर गिरे है। कवेलू फूट रहे हैं। तेरो बाप खरीद के देयगो हमें ? शनिचर कहीं के इसके पेट में आग लगे। सारी दुनिया का जामुन छोड़कर इसी जामुन के पेड़ पर आँख रखे हैं। नानी बेचारी सारे गाँव का गू-मूत करते फिरे है और इसको मस्ती चढ़ी है। इसका नाश हो जाए।"[3] शंकर को इस प्रकार गाँव के सवर्ण जाति के लोग डाँटते हुए और गालियाँ देते हुए दिखाई देते हैं। परंतु शंकर को उनकी डाँट का गाली का कुछ भी नहीं लगता। वह अपनी पद्धति से जीवन जीता है। जीवन जीते हुए वह प्रत्येक क्षण का आनंद लेता है। एक दिन आम के बगीचे में जाता है। पेड़ पर चढ़कर टहनी जोर-जोर से हिलाता है। इसके कारण कई पके हुए आम के साथ कच्चे आम भी गीरते हैं। वहाँ नौकरी करनेवाले राजाराम को जब पता चलता है तब हाथ में डंडा लेकर उसे मारने के लिए दौड़ता है। शंकर उसे देखते ही पेड़ से कूदकर भाग जाता है। राजाराम गालियाँ देते हुए शंकर के घर जाता है। स्कूल में जाकर यही सीखता है क्या आदि बातें सुनाता है। घर जाने पर शंकर के बप्पा को राजाराम बहुत बातें सुनाता है। दूसरी बार अगर वह बगीचे में आया तो टाँग तोड़ दे दूँगा ऐसी समझ देकर वहाँ से चला जाता है। थोड़ी देर के बाद जब शंकर डरते-डरते घर आ जाता है तब उसके बप्पा उसे दो-चार तमाचे दे देते हैं। उसकी माँ भी उसे कोसती है। उसे गाँववालों से डर लगता है किसी दिन यह लोग हमें गाँव के बाहर निकाल देंगे। चिंता के स्वर में वह कहती है," यह लड़का हमें चैन से जीने नहीं देगा कहाँ-कहाँ की तोहमत लाता है। इसके कारण नाक में दम आ गया है। कहाँ गया गया है वह? बुलाओं उसे और खूब पीटो।"[4] उसके पिता ने शंकर को मारा है इसी कारण वह रोता है। रोते हुए अपने लड़के को देखकर बप्पा को भी बुरा लगता है उनका मन दु:खी हो जाता है। समाज व्यवस्था पर गुस्सा निकालते हुए वे कहते हैं," बच्चा है बच्चे धूम करते ही है। मगर लोगों को हमारा बच्चा ही बुरा लगता है। न जाने लोग हमारे पीछे ही क्यों पड़े रहते हैं? जहाँ देखो जात- पाँत की बात करके हमें नीचा दिखाते हैं, जैसे हमारी कोई इज्जत नहीं है।"[5] इस प्रकार शंकर के पिता जी समाज को दोष देते हैं। उनको लगता है लड़के-लड़के ही होते हैं उन्हें कितना भी मारो पीटो वह गलतियाँ करते ही रहते हैं। परंतु हमारे बच्चे को सवर्ण समाज के लोग समझकर नहीं लेते। उनका लड़का अगर इस प्रकार का होता तो वह उसकी तारीफ करते कितना हुनर बाज है, कितना साहसी है। परंतु शंकर केवल दलित जाति में पैदा हुआ है इसी कारण उसके पीछे सब पढ़े हैं हर कोई उससे मारने पीटने और गालियाँ देते हुए बात करता है।

गाँव के सारे लोग उनसे छुआछूत मानते हैं। यह शंकर को अच्छी नहीं लगता, उसके सहपाठी मित्र भी उसे घर के अंदर आने नहीं देते। मगर वह उनके घर में अंदर तक चला जाता है। घर के लोग उसे डाँटते हुए उसे घर के बाहर निकालते हैं। उसके मित्र भी उसे भगाते हुए कहते हैं,"घर में मत आ बाहर भाग बाहर दूर खड़ा होकर बात कर।"[6] वह सबका मुँह आश्चर्य से देखता हुआ बाहर आ जाता है। उसे बहुत अपमान लगता था। उसके मित्र और घरवालों का इस प्रकार का व्यवहार देखकर उसे बहुत बुरा लगता है। दूसरी बार जब उनके घर जाता था तब भी वह उनके घर अंदर तक चला जाता था। फिर से वे उसको बाहर निकालते थे। शंकर को बाहर निकालकर वे अपना घर शुद्ध पानी छिड़ककर घर को शुद्ध कर लेते थे। देहात में रहने वाले लोगों की छुआछूत को लेकर गलत धारणा थी। हम मनुष्य है वह भी हमारे लड़के का दोस्त है, हमारे ही गाँव का लड़का है, यह भावना उन लोगों में नहीं थी। दलितों को अपना शत्रु मानकर चलते थे। गाँव में छुआछूत और आचार विचार की भावना अधिक मात्रा में होने पर भी इतना परिवर्तन जरूर हुआ है कि शंकर स्कूल में अपने उच्च वर्गीय सहपाठियों के साथ कक्षा में बैठकर पढ़ सकता है। यह बात शंकर को बहुत अच्छी लगती है। अब मुझे स्कूल से कोई भगा नहीं सकता भले ही वह अपने घर से भगा दे। इसीलिए वह अपने दोस्तों से चैलेंज करते हुए कहता है कि अब कोई मुझे यहाँ से भगा कर देखिए किसमें कितना दम है यह देखता हूँ। इसका कारण यह है कि उसने अपने हेड मास्टर से सुना था कि," मध्यप्रदेश में और पूरे देश में यह सरकारी नियम बन गया है। शंकर को स्कूल से भगा नहीं सकता। नहीं तो कानून हमें भगाएगा। शंकर को स्कूल में आने और पढ़ने का अधिकार मिल गया है। डॉ. अंबेडकर ने देश के संविधान में उन्हें मूलभूत अधिकार दिए हैं।"[7] शंकर को यह सुनकर बहुत अच्छा लगा।

शंकर जितना शरारती, नटखट उधमी है उतना ही पढ़ाई में भी तेज है। सवर्ण जाति के लड़कों को नीचा दिखाने के लिए पढ़ाई करके आता था। मास्टर जी भी जब भी प्रश्न पूछते थे तब फटाफट सारे प्रश्नों के उत्तर देता था। स्वयं को सभ्य सवर्ण कहनेवाले घर के लड़कों को पूछे हुए प्रश्न के उत्तर नहीं आते थे। मास्टर जी उनको बहुत डाँटते और एक एक छड़ी मारते। जिन्होंने मार खाया वह लड़के शंकर को चिढ़ाते थे। उस पर हँसते थे उसका मजाक उड़ाते थे और परेशान भी करते थे। एक दिन

लड़कों ने चिढ़ाते हुए कहा कि," शंकर तू तो बड़ा होशियार है रे। क्यों रे शंकर तू किस चक्की का आटा खाता है रे?"[8] यह सुनकर उसे बहुत बुरा लगता। उसकी आँखों के सामने गाँव की बस्ती की रोटियाँ और जूठन के टोकने घूमने लगे। उसे अपनी नानी पर गुस्सा आया। कठोरता के साथ चिढ़ाने वाले लड़कों को उसने पूछा," तुम लोग मेरी नानी को बुलाकर जूठन क्यों देते हो? तुम खुद चाहते हो मेरी नानी लेती रहे और हम तुम्हारी जूठन खाते रहे। तुम जानबूझकर ऐसा क्यों करते हो? पहले अपने घर के लोगों को समझा दो मेरी नानी को अब किसी ने बुलाया तो देख लेना मैं तुम सब की पिटाई करूँगा।"[9] गाँव में जाकर नानी सबके घर की साफ सफाई करती है उसके बदले में लोग उसे जूठन और बासी रोटी देते हैं। इसी कारण वह गुस्से से लाल हो जाता है। पेशाब पानी की बीच की छुट्टी मिलते ही वह घर भागकर आ जाता है। नानी से चेतावनी देकर कहता है तू यहाँ से चली जा। तू इस घर में रह नहीं सकती। नानी हँसकर कहने लगी यह तो मेरा घर है। परंतु नादान शंकर को यह पता नहीं था कि हम नानी के घर रहते हैं। नानी ने गाँव से लाई हुई जूठन की पूड़ी-मिठाई को टोकनी को देखते ही। उसने उठाया और उसे आँगन के बाहर धूल मिट्टी में बिखेर दिया।। शंकर के माता और पिता ने समझ लिया था कि शंकर ऐसा क्यों कर रहा है। शंकर को नानी का गाँव में सफाई के लिए जाना पसंद नहीं है। वह चिढ़कर नानी से कहता है क्यों जाती हो तुम उनके घर। शंकर को घर के आँगन में कहीं नानी को झाड़ू टोकना दिखाई देता तो वह नानी को बहुत डाँटता था। नानी भी डर के मारे तोड़कर फेंक दूँ घर के सामने दिखाई नहीं देना चाहिए ऐसा उसे हमेशा लगता था। इस प्रकार शंकर अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए लड़ता हुआ दिखाई देता है।

शंकर का घर स्कूल के पास ही था। दोपहर की छुट्टी में उसके सहपाठी मित्र कुछ कॉपी लेने या देने के लिए घर आते थे। ऐसे समय घर का आँगन खराब दिखाई देने पर वह घर के लोगों को डाँटता था। नानी और माँ पर गुस्सा निकालने के लिए वह घर के सामानों को तोड़फोड़ डालता। स्कूल में उसे अपने दोस्त चिढ़ाएँगे यह सोचकर वह गुस्से से लाल हो जाता था। शंकर के स्कूल के पास से आते जाते नानी को देखकर उसके सहपाठी लड़के नानी को देखकर कहते देख शंकर तेरी नानी आ रही है, देख शंकर तेरी नानी जा रही है। शंकर को नानी को देखकर शर्म आती थी। वह लड़कों की बातों को सुनकर अनसुना करने की कोशिश कर लेता। शंकर के गाँव कुश्ती का खेल होता था दूर-दराज के बड़े- बड़े पहलवान आते थे। उसके सहपाठी सुंदर, नाजुक, द्विवेदी, त्रिवेदी, चतुर्वेदी आदि ने शंकर के साथ कुश्ती का खेल खेलने की इच्छा व्यक्त की। उनको देखकर शंकर कहता यह तो भाजीपाला है इनमें क्या दम है। शंकर दलित जाति का है जूठन खाता है इसलिए सवर्ण जाति के लड़के उसकी तरफ देखकर थूँकते थे। इस समय उसे मौका मिला था। उन लड़कों के साथ उसने भी कुश्ती खेलना चाहा। स्कूल छूटने के बाद शंकर की कुश्ती शुरू हो जाती है। जात पात मानने वालों के प्रति उसका मन आक्रोश से भर गया था। उसने ऐसा जोर लगाया कि लड़कों को उठा-उठा कर पटकने लगा। शंकर को पिछले दिनों के सारे प्रसंगों की याद आ जाती है। वह उन लड़कों से कहता है," मेरे सामने थूको और अपने ही थूक को मेरे सामने चाटो तभी जाने दूँगा नहीं तो जाने नहीं दूँगा। छुट्टी के बाद शाम को स्कूल के पीछे का मैदान सुनसान हो जाता है। लड़के डरने लगे, रोने लगे। मगर शंकर ने नहीं माना वह उनसे उनका थूक चटवाकर ही रहा"[10] दूसरे दिन शंकर की शिकायत स्कूल के हेड मास्टर जी के पास होती है। वे शंकर का ट्रांसफर सर्टिफिकेट तैयार करके उसके हाथ में देते हैं। इसी कारण उस दिन से शंकर का स्कूल में आना बंद हो जाता है। यह देख कर उसके आँखों में पानी आने लगा। उसको अपना भविष्य अंधकारमय दिखाई देने लगा। शंकर ने उनसे माफी माँगी। लेकिन उसकी बात को कोई भी मानने के लिए तैयार नहीं है। उसकी नानी रोती हुई गाँव के पटेल के पास जाती है उनको हाथ जोड़कर शंकर को स्कूल में बैठने की बिनती करते हुए कहती है,"पटेल जी मास्टर जी को हुकुम दे दो, मेरे शंकर को स्कूल में बैठने दो। मेरी नाती पढ़ाई में होशियार है। वह मैट्रिक की परीक्षा में अच्छे नंबर से पास हो जाएगा, अच्छी नौकरी करेगा वह जीवन भर आपका नाम लेगा। उस पर दया करो पटेल जी।"[11] नानी की बात सुनकर पटेल को जरा भी दया नहीं आई। उसकी माँ-बप्पा भी हेड मास्टर जी को मिले माफी माँगी फिर भी उन्होंने नहीं माना। शंकर और उसके घर वालों के सारे प्रयास हुए थे एक दिन शंकर लकड़ी का बड़ा लट्ठ लेकर स्कूल के गेट के सामने खड़ा हो जाता है। उसके सहपाठी शंकर को देखकर डरने लगे। यह खबर उन्होंने अपने हेड मास्टर से दी। हेड मास्टर भी उसके रूप को देखकर सोच में पड़ गए। हेड मास्टर जी के कक्ष में सभी शिक्षकों की मीटिंग हुई। हेड मास्टर ने कहा कि शंकर को कक्षा में बैठने की अनुमति देनी चाहिए। बच्चों-बच्चों का झगड़ा है। उनका यह झगड़ा स्कूल के समय के बाद में हुआ है। गाँव वाले उसे कुछ भी सजा दे सकते हैं, परंतु स्कूल की तरफ से उसे सजा नहीं मिलनी चाहिए। उसका नाम स्कूल में फिर से लेना चाहिए। दूसरे दिन से शंकर स्कूल में आने लगा। उस दिन से शंकर को कोई नहीं चिढ़ाता था। सभी उसके साथ सम्मान से बात करने लगे। परिणाम यह हुआ कि शंकर दसवीं की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में पास हो जाता है। शंकर आत्मबल से आगे बढ़ता गया। एक दिन शंकर को स्कूल में बुलाकर बताया गया कि शिक्षा अधिकारी का पत्र आया है। गाँव की ओर से भी उसका सम्मान होने लगा। शंकर समझ गया था कि सफलता के लिए शिक्षा होनी चाहिए जो आज तक उसके साथ घिनौना व्यवहार करते थे वही आज उसका सम्मान कर रहे थे। इस प्रकार शंकर और उसका पूरा परिवार अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा था।

निष्कर्ष:-सुशीला टाकभौरे ने संघर्ष कहानी में एक दलित परिवार का चित्रण किया है। वह परिवार अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए अंत तक लड़ता हुआ दिखाई देता है। अधिकारों और सुविधा के क्षेत्र में सवर्ण समाज हाथी जैसा विशालकाय और ताकतवर है। दलित समाज का अस्तित्व चींटी के समान है। परंतु शंकर यह जानता था कि चींटी एक हाथी को भी परेशान कर सकती है। लोग भले ही दलित जाति के हो अपनी सूझबूझ, आत्मबल और संघर्ष के बल पर अपने दुश्मनों का मनोबल तोड़ सकते हैं। मन के हारने से ही हार हो जाती है इसीलिए मनुष्य ने कभी भी मन से हार नहीं माननी चाहिए। शंकर की सोच इस प्रकार की होने के कारण वह गाँव वालों से लड़ते-लड़ते अपना भविष्य बनाता है। आज तक छुआछूत को मानने वाले उसका सम्मान कर रहे थे। शंकर ने अंत तक हार नहीं मानी वह अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए के लिए लड़ता रहा। इस कहानी का प्रत्येक पात्र इस प्रकार के प्रश्नों के साथ लड़ते हुए दिखाई देता है।

****

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. डॉ. विमल थोरात, दलित साहित्य का स्त्रीवादी स्वर, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृ.100
2. ओमप्रकाश वाल्मीकि, जूठन, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पंद्रहवाँ संस्करण, 2020, पृ.155
3. सं. डॉ. सुरैया शेख, डॉ.दिलीप कसबे, साहित्यसमा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2020, पृ.72
4. वहीं, पृ. 72
5. वहीं, पृ.73
6. वहीं, पृ.74
7. वहीं, पृ.74
8. वहीं, पृ.75
9. वहीं, पृ.75
10. वहीं, पृ.84
11. वहीं, पृ.85

जनजातीय विकास के विविध उपागम एवं संवैधानिक प्रयासों का समाज वैज्ञानिक विश्लेषण

डॉ.प्रज्ञा
सहायक प्रोफेसर ,समाजशास्त्र
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय प्रयागराज

डॉ. नीरज कुमार राय
सहायक प्रोफेसर ,समाजशास्त्र
राजकीय महिला महाविद्यालय, ढिंढुई ,पट्टी ,प्रतापगढ़

सारांश: जनजातियाँ सम्पूर्ण भारत के विविध भौगोलिक क्षेत्रों में फैली हुई हैं किन्तु उनकी जनसंख्या का सत्तर प्रतिशत हिस्सा भारत के सात राज्यों- छत्तीसगढ़ महाराष्ट्र, उड़ीसा, झारखण्ड, आंध्र प्रदेश, गुजरात एवं उत्तरांचल में अवस्थित है। सामाजिक-आर्थिक विकास के विविध संकेतक यह प्रदर्शित करते हैं कि भारत की औसत गैर जनजातीय आबादी की अपेक्षा भारतीय जनजातियों का विकास बहुत कम हुआ है और आज भी ये आदिम और विविध चुनौतियों से ग्रस्त हैं। सरकार ने इनके विकास के लिए विभिन्न पंचवर्षीय और सालाना योजनाओं का निर्माण किया हैं। लेकिन देश की जनजातियों के विकास के मार्ग अब भी अवरुद्ध हैं और व्यापक चुनौतियां विद्यमान हैं। इस शोध पत्र मे जनजातियों के विकास और चुनौतियों से संबंधित विविध पक्षों का विश्लेषण किया गया हैं । प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक स्रोतों एवं विवरणात्मक शोध प्रारूप पर आधारित हैं ।

बीज शब्द : जनजातियाँ, पृथक्करण एवं सात्मीकरण, परम्परा, शोषण, कल्याण और विकास

प्रसिद्ध मानवविज्ञानी के. एस . सिंह के नेतृत्व मे भारत मे मानवशास्त्रीय सर्वेक्षण द्वारा भारतीय जनों के अध्ययन मे बताया गया हैं की भारत के कुल 2800 समुदायों मे कुल 461 अनुसूचित जनजातियाँ हैं । भारत ग्रामीण आजीविका फाउंडेशन द्वारा जारी रिपोर्ट मे स्पष्ट किया गया हैं की वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत का जनजातीय समुदाय देश की जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत अर्थात 10.45 करोड़ है । मध्य भारत मे इनकी जनसंख्या सबसे ज्यादा हैं । 257 अनुसूचित जनजातीय जिलों मे से 230 जिले या तो वनक्षेत्र या पहाडी अथवा रेगीस्तानी क्षेत्र मे हैं । कुल आबादी में अनुसूचित जनजातियों के अनुपात में वृद्धि देखी गई है। देश की जनसंख्या में उनका हिस्सा 1961 में 6.9 प्रतिशत था जो 2011 में बढ़ कर 8.6 प्रतिशत हो गया लेकिन आजादी के 75 वर्ष बाद भी वे देश के विकास के पदानुक्रम मे सबसे निचले स्तर पर हैं और विभिन्न पैमानों पर देश के अन्य समुदायों की तुलना में जनजातियों की सामाजिक और आर्थिक प्रगति कम रही है। **(1,2,3)**

नीतियों एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के लिए जनजातियों के विभिन्न अवस्थाओं के अंतर्गत विविध दृष्टिकोणों का निर्माण किया गया हैं । इसके अतर्गत दो प्रमुख दृष्टिकोण थे- पृथक्करण एवं सात्मीकरण। औपनिवेशक काल में जनजातीय विकास के प्रति ब्रिटिश शासन का आरम्भिक दृष्टिकोण पृथक्करण की नीति पर आधारित था । जनजातियों को समाज की मुख्य धारा से पृथक रखने के पीछे दो मुख्य तर्क थे। जनजातियों पर अधिकार बनाये रखने के लिए पहला यह कि जनजातियों को अलग-अलग रखकर शासन करना आसान था। ब्रिटिश शासन के विरुद्ध जन असंतोष कहीं जन आन्दोलन न बन जाय तथा जनजातीय आबादी उस जन आन्दोलन में शामिल होकर उसे सशक्त न बना सके इसलिए उन्हें सामान्य जन से पृथक रखना ही श्रेयश्कर होगा। विभिन्न अवसरों पर विभिन्न क्षेत्रों में जनजातियों के द्वारा किये जाने वाले प्रतिरोध एवं विद्रोह के आधार पर वे जनजातीय शक्ति क्षमता से परिचित थे, अत: वे इन्हें पृथक रखना चाहते थे। पृथक्करण के पीछे दूसरा तर्क यह है कि जनजातियों को पृथक रखकर उन्हें बाहरी हस्तक्षेप से बचाया जा सकता है ताकि उनकी परम्परा, सहज जीवन शैली, उनकी विशिष्टता एवं अस्मिता को सुरक्षित रखा जा सके। पृथक्करण की नीति के अन्तर्गत 1870 में भारत सरकार अधिनियम, 1874 में अनुसूचित जिला अधिनियम, 1919 में भारत सरकार अधिनियम, 1935 में भारत सरकार अधिनियम के अन्तर्गत जनजातीय बहुल कुछ क्षेत्रों को पिछड़े क्षेत्र, अनुसूचित भू-भाग, स्वायत्त क्षेत्र के रुप में पृथक किया गया। वेरियर एल्विन ने इस पृथक्करण की नीति को बौद्धिक आधार प्रदान किया। उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि जनजातियों के राष्ट्रीय उत्थान के रुप में उनको बाहरी दुनिया से पृथक रखकर नियंत्रित करना श्रेयश्कर होगा। जनजातीय पृथक्करण की ब्रिटिश नीति के प्रति सामान्य जनों में संदेह पनपने लगा। एल्विन जैसे मानवशास्त्री भी पृथक्करण की नीति के पक्षधर थे, इसलिए मानवशास्त्रियों के विरुद्ध भी चर्चा होने लगी। जनमत में यह धारणा प्रबल होने लगी थी कि पृथक्करण की नीति के आधार पर ब्रिटिश शासन अपना आधिपत्य स्थापित करने की साजिश कर रहा है तथा मानवशास्त्रीय जनजातीय क्षेत्र को अजायबघर बनाना चाहते हैं जहाँ वे अपना अध्ययन व अनुसंधान बिना किसी हस्तक्षेप के करते रहें। इस परिप्रेक्ष्य में जनजातीय विकास के दूसरे उपागम- सात्मीकरण की नीति को स्वीकारने एवं क्रियान्वित करने का आधार निर्मित हुआ। सात्मीकरण की नीति की मूल मान्यता यह थी कि जनजातियों एवं जनजातीय क्षेत्रों को पृथक रखना व्यावहारिक दृष्टि से न तो वांछनीय है और न ही सम्भव, इसलिए उन्हें समाज की मुख्य धारा में आत्मसात कर लेना चाहिए। जी एस घूरिये ने अपने जनजातीय अध्ययन में पृथक्करण की नीति की आलोचना करते हुए कहा कि लगभग सभी जनजातीय समूह किसी न किसी रुप में मुख्य हिन्दू संस्कृति के सम्पर्क में आ गये हैं केवल कुछ ही जनजातियाँ इस सम्पर्क से अछूती हैं। अत: इनका भविष्य पृथकता की बजाय वृहद समाज में इनके सात्मीकरण की प्रक्रिया पर निर्भर करेगा तथा इनके पिछड़ेपन को पृथकता के आधार पर दूर नहीं किया जा सकेगा। सात्मीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत स्वतंत्रतापूर्व एवं स्वातंत्र्योत्तर भारत में विविध प्रयास हुए। इस प्रयास में विविध समाज सुधारकों- महात्मा गांधी, ए.वी.ठक्कर, आदि ने जनजातीय कल्याण के विविध प्रयास किये। समाजसेवी संस्थाओं विशेषकर ईसाई मिशनरीज के द्वारा जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षा, चिकित्सा, सामाजिक जागरुकता, आदि की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किये गये। किन्तु जनजातियों के धर्मान्तरण की प्रक्रिया एवं अन्य आधारों पर ईसाई धर्मावलम्बी जनजातियों एवं गैर ईसाई जनजातीय समूहों पर सात्मीकरण का अलग-अलग परिणाम उत्पन्न हुआ जिसके कारण जनजातीय समूहों में विभेदीकरण पनपा। इसके अतिरिक्त सात्मीकरण की प्रक्रिया ने गैर आदिवासी समूहों- साहूकार, ठेकेदार, जमींदार, बिचौलिया, आदि को जनजातियों के शोषण की अवसर प्रदान किया । **(4,5,6,7)**

इन आधारों पर सात्मीकरण की प्रकृति को ऊपर से लादी गयी आरोपित प्रक्रिया के रुप में विश्लेशित करते हुए इसकी आलोचना की गई । इन आलोचनाओं के परिप्रेक्ष्य में कालान्तर में भारत में जनजातीय विकास का तीसरा दृष्टिकोण उभरा जिसे समन्वय की नीति की संज्ञा दी गयी। समन्वयवादी नीति के अन्तर्गत जहाँ एक ओर जनजातीय समूह एवं वृहद गैर जनजातीय समूह के बीच रचनात्मक सामंजस्य के आधार पर उनके विकास का प्रयास किया गया है वहीं दूसरी ओर जनजातीय विशिष्टता एवं अस्मिता को सँजोये रखने का

आग्रह भी शामिल है। इस दृष्टिकोण से जनजातीय संस्कृति एवं मुख्य धारा की संस्कृति के बीच पारस्परिक लेन-देन एवं एक दूसरे के सम्मान को बल दिया गया है। समन्वयवादी दृष्टिकोण पर आधारित जनजातीय विकास की वर्तमान नीति को अतीत में अपनाई गयी पृथक्करण एवं सात्मीकरण की नीति की अपेक्षा श्रेयश्कर माना गया है किन्तु इसकी सफलता भविष्य में इस तथ्य पर निर्भर करेगी कि जनजातीय एवं गैर जनजातीय समुदाय दोनों एक दूसरे के प्रति कितना अनुकूल व्यवहार अपनाते हैं। संविधान में अनुसूचित जनजातियों के हितों की रक्षा के लिए अनेक प्रावधान किए गए हैं। भारत के संविधान निर्माताओं ने अनुसूचित जनजातियों की विशेष ज़रूरतों को समझते हुए उनके हितों की रक्षा के लिए कुछ खास प्रावधान किए हैं। इन प्रावधानों का उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक न्याय सुनिश्चित करने के अलावा इस समुदाय को शोषण से बचाना भी है। नागरिकों के मौलिक अधिकार उनका समग्र विकास सुनिश्चित करते हैं। साथ ही, संविधान में निरूपित राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत सरकार को ऐसा माहौल बनाने के लिए प्रेरित करते हैं जिसमें नागरिक अपने मौलिक अधिकारों का इस्तेमाल कर सकें। अनुसूचित जनजातियों की बहुलता वाले क्षेत्रों के लिए संविधान में विशेष प्रावधान किए गए हैं। **(8,9)**

नीति निर्माताओं और योजनाकारों ने पहली पंचवर्षीय योजना (1951-56) की शुरुआत से ही अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी है। पहली योजना में वंचित तबकों की ज़रूरतों को पर्याप्त और समुचित ढंग से पूरा करने के लिए योजनाओं और कार्यक्रमों को बनाने से संबंधित सिद्धांत निर्धारित किए गए। इसके अलावा, अनुसूचित जनजातियों के समग्र विकास के लिए प्रभावी और सघन अभियान चलाने के मकसद से विशेष प्रावधान भी किए गए। सरकार ने पहली योजना के अंत में देश में अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए ठोस और समेकित विकास योजनाओं की जरूरत को महसूस किया जिसके परिणामस्वरूप दूसरी योजना (1956-61) के दौरान अनुसूचित क्षेत्रों के लिए विकास कार्यक्रमों को चार समूहों में बांटा गया जो इस प्रकार थे- (1) संचार (2) शिक्षा और संस्कृति, (3) जनजातीय अर्थव्यवस्था का विकास तथा (4) स्वास्थ्य, आवासन और जल आपूर्ति। आर्थिक विकास पर जोर देते हुए इस बात का ध्यान रखा गया कि समाज में असमानता घटे। अनुसूचित जनजातियों के लिए विकास कार्यक्रमों की योजना बनाते समय उनकी सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और आर्थिक समस्याओं को ध्यान में रखा गया। ये कार्यक्रम इस समुदाय की संस्कृति और परम्पराओं के प्रति सम्मान और समझ पर आधारित थे। पहली योजना में जनजातीय कल्याण के लिए जो कार्यक्रम तैयार किए गए थे, उन्हें 1961 तक प्रभावी स्वरूप मिल गया। दूसरी योजना के इस आखिरी वर्ष में सरकार ने 43 विशेष बहुउद्देश्यीय जनजातीय प्रखंडों की स्थापना की। इन्हें बाद में जनजातीय विकास खंड (टीडीबी) का नाम दिया गया। अनुसूचित जनजातियों को अवसरों की समानता प्रदान करने के लिए दूसरी योजना में शामिल योजनाओं और नीतियों को तीसरी योजना (1961-66) में भी जारी रखा गया। चौथी योजना (1969-74) में देशवासियों के जीवन स्तर में तेज सुधार का संकल्प जाहिर किया गया ताकि सबके लिए समानता और सामाजिक न्याय सुनिश्चित किया जा सके। वर्ष 1971-72 में आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और ओडिशा में छह प्रायोगिक परियोजनाएं शुरू की गई। पांचवीं योजना (1974-78) में विकास कार्यक्रमों का प्रत्यक्ष लाभ अनुसूचित जनजातियों तक पहुंचाने के लिए जनजातीय उप-योजना (टीएसपी) शुरू की गई। टीएसपी का उद्देश्य सिर्फ अनुसूचित जनजातियों के जीवन-स्तर में सुधार के लिए विकास गतिविधियों को बढ़ावा देने तक सीमित नहीं था। इसमें इस समुदाय के हितों की कानूनी और प्रशासनिक मदद से रक्षा पर भी ध्यान दिया गया। टीएसपी के तहत यह प्रयास किया गया कि विकास के अन्य क्षेत्रों से अनुसूचित जनजातियों के लिए धन का प्रवाह आबादी में उनके अनुपात के अनुरूप हो तथा जवाबदेही और पारदर्शिता सुनिश्चित की जा सके। छठी योजना (1980-85) में कोषों का अधिक विकेंद्रीकरण सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया। साथ ही, अनुसूचित जनजातियों के कम-से-कम 50 प्रतिशत परिवारों को गरीबी रेखा से ऊपर लाने के लिए निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम चलाया गया। अनुसूचित क्षेत्रों में अवसंरचनात्मक सुविधाओं का विस्तार किया गया। सातवीं योजना (1985-90) के दौरान अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास के लिए दो राष्ट्रीय संस्थाओं का गठन किया गया। इनमें से एक 1987 में गठित जनजातीय सहकारी विपणन महासंघ (ट्राइफेड) है। यह राज्य जनजातीय विकास सहकारी निगमों के लिए शीर्ष संस्था है। इसके अलावा, अप्रैल 2001 में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और जनजाति वित्त और विकास निगम (एनएसएफडीसी) की शुरुआत की गई। ट्राइफेड अनुसूचित जनजातियों को उनके वन और कृषि उत्पादों के लिए लाभकारी मूल्य दिलाने में मदद करता है। दूसरी तरफ, एनएसएफडीसी का काम रोजगार सृजन के लिए ऋण की व्यवस्था करना है। आठवीं योजना (1992-97) में अनुसूचित जनजातियों के शोषण को खत्म करने के प्रयासों के साथ ही उनके अधिकारों के दमन, भूमि से बेदखली, न्यूनतम मजदूरी का भुगतान नहीं होने तथा उन्हें छोटे वन उत्पादों के संग्रह के अधिकार से वंचित किए जाने जैसी समस्याओं के हल पर भी ध्यान दिया गया। नौवीं योजना (1997-2002) में ऐसे परिवेश के निर्माण पर जोर दिया गया जिसमें अनुसूचित जनजातियां अपने अधिकारों और विशेषाधिकारों का स्वतंत्रता से उपयोग करते हुए समाज के बाकी तबकों के समान ही जीवन व्यतीत कर सकें। इसके बाद दसवीं योजना (2002-07) में जनजातीय समाज के अनसुलझे मसलों और समस्याओं को समयबद्ध ढंग से सुलझाने पर ध्यान केंद्रित किया गया। ग्यारहवीं (2007-12) और बारहवीं (2012-17) योजनाओं में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के उपायों को मजबूत करने पर जोर दिया गया। इसके अलावा राज्यों को अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए यथोचित और समुचित गतिविधियां चलाने के बारे में निर्देश दिए गए। **(10,11)**

पुनः विकास कार्यक्रमों को आगे बढ़ाते हुए भारत सरकार के नीति आयोग के द्वारा वार्षिक योजनाओं में राज्यों में अनुसूचित जनजातियों के विकास की जरूरतों को ध्यान में रखा गया और इस संदर्भ में आयोग जनजातीय उप-योजनाओं को केंद्रीय मंत्रालयों और विभागों के जरिए लागू करने के बारे में समय-समय पर दिशानिर्देश जारी करता है। नीति आयोग ने केंद्रीय मंत्रालयों और विभागों को हर साल अपने कुल योजना आवंटन का 4.3 से 17.5 प्रतिशत तक हिस्सा जनजातीय विकास के उद्देश्य से रखने के लिए अधिकृत किया है। योजना आयोग ने भारत में गरीबी के आकलन के लिए राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (एनएसएसओ) के सर्वे नतीजों पर आधारित तेंदुलकर पद्धति को अपनाया था। इन अनुमानों के अनुसार 2011-12 में गरीबी रेखा से नीचे के अनुसूचित जनजातियों के लोगों की संख्या गाँवों में 45.3 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में 24.1 प्रतिशत थी। एनएसएसओ के आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (पीएलएफएस) के अनुसार अनुसूचित जनजातियों के लिए सामान्य स्थिति (मूल सहायक) में श्रमबल भागीदारी दर (एलएफपीआर) 2017-18 में 41.8 प्रतिशत और 2019-20 में 471 प्रतिशत थी। सभी वर्गों के लिए यह दर 2017-18 में 36.8 प्रतिशत और 2019-20 में 40.1 प्रतिशत थी |इसी तरह, एनएसएसओ के पीएलएफएस 2019-20 से पता चलता है कि अनुसूचित जनजातियों के लिए सामान्य स्थिति के अनुसार बेरोजगारी दर 2017-18 में 4.3 प्रतिशत से घट कर 2019-20 में 3.4 प्रतिशत रह

73 प्रतिशत और अनुसूचित जनजातियों में 59 प्रतिशत थी। युवा वर्ग की बात करें तो कुल आबादी और अनुसूचित जनजातियों के बीच साक्षरता दर का अंतर 11.1 प्रतिशत था। यह अंतर युवकों में 7.1 प्रतिशत और युवतियों में 14.7 प्रतिशत का था। कुल आबादी और अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के बीच साक्षरता दर का यह फासला काफी बड़ा है। निःसंदेह, सरकार के साक्षरता अभियानों का लाभ देश के सभी नागरिकों तक समान रूप से नहीं पहुंच पाया है । विद्यालय परित्याग दर शैक्षिक विकास के अभाव और शिक्षा के एक खास स्तर तक पहुंचने में किसी सामाजिक समूह की अक्षमता का महत्वपूर्ण संकेतक है। अनुसूचित जनजातियों के मामले में प्राथमिक, उच्च प्राथमिक और माध्यमिक कक्षाओं में विद्यालय परित्याग दर में कमी आ रही है । अनुसूचित जनजातियों के छात्रों में साक्षरता की कमी, औपचारिक शिक्षा के परित्याग और दाखिले के कम

अनुपात जैसी समस्याओं के समाधान के लिए उन्हें विशेष प्रोत्साहन दिए जा रहे हैं। स्कूलों में उनकी शिक्षा निःशुल्क किए जाने के साथ ही उन्हें पुस्तकें और वर्दियां मुफ्त दी जा रही हैं। अनुसूचित जनजातियों के लिए खासतौर से आवासीय विद्यालय खोले गए हैं। इनमें इस समुदाय के छात्रों के भोजन और आवास का खर्च सरकार वहन करती है। जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय, मध्याह्न भोजन योजना और नवोदय विद्यालय के अंतर्गत अनुसूचित जनजातियों के छात्रों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। शिक्षा संवर्धन अभियान का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जनजातियों के छात्रों में साक्षरता का प्रसार है। दूरदराज के गाँवों के निवासी और गरीब छात्रों के लिए छात्रावास की सुविधा उपलब्ध करायी जा रही है ताकि वे अपनी पढ़ाई जारी रख सकें। लड़कियों के लिए छात्रावासों का निर्माण तीसरी योजना के दौरान ही शुरू कर दिया गया था। वर्ष 1989-90 में अनुसूचित जनजातियों के लड़कों के लिए छात्रावासों के निर्माण की एक अलग योजना शुरू की गई। जनजातीय उप-योजना के क्षेत्रों में 1990-91 से आदिवासी विद्यालयों की स्थापना शुरू की गई। सरकार ने अनुसूचित जनजातियों के छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के मकसद से संविधान के अनुच्छेद 275 (1) के तहत कोष के एक अंश का उपयोग करने का फैसला किया। इस धन का इस्तेमाल 20 राज्यों में छठी से बारहवीं तक कक्षाओं के लिए 288 एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालयों (ईएमआरएस) की स्थापना पर किया जाना था। वर्ष 1997-98 में शुरू की गई इस पहल का उद्देश्य अनुसूचित जनजातियों के छात्रों को उच्चतर और पेशेवर शिक्षा के पाठ्यक्रमों तथा सरकार और सार्वजनिक क्षेत्र की उच्चस्तरीय नौकरियों में आरक्षण का लाभ उठा पाने के लायक बनाना था। संशोधित कार्यक्रम को 12 सितंबर, 2019 को शुरू किए जाने के समय तक 200 ईएमआरएस काम करने लगे थे।**(12)**

सरकार ने संशोधित योजना के तहत ईएमआरएस की स्थापना के लिए देश में 452 प्रखंडों की पहचान की है। ये प्रखंड इन विद्यालयों की स्थापना के लिए 50 प्रतिशत या इससे ज्यादा जनजातीय आबादी और कम-से-कम 20,000 आदिवासियों के निवास की शर्तें पूरी करते हैं। इन प्रखंडों में स्थापित किए जाने वाले ईएमआरएस पुरानी योजना के तहत मंजूर 200 विद्यालयों के अतिरिक्त होंगे। सरकार ने 740 ईएमआरएस खोलने का लक्ष्य निर्धारित किया है। मौजूदा समय में देश भर में 378 ईएमआरएस चल रहे हैं। इनमें से 205 विद्यालयों का संचालन पिछले पांच वर्षों (2017-22) के दौरान शुरू हुआ है। उद्यमिता और कौशल विकास साक्षरता और शिक्षा में प्रगति के साथ ही उद्यमिता के माहौल और कौशल विकास की पहलकदमियों की भी दरकार है ताकि अनुसूचित जनजातियों के शिक्षित व्यक्तियों को अपने निवास स्थान के नजदीक ही समुचित रोजगार मिल सके। कौशल विकास मंत्रालय ने स्किल इंडिया मिशन के तहत इस दिशा में कई योजनाएं और कार्यक्रम शुरू किए हैं। प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, जन शिक्षण संस्थान योजना और राष्ट्रीय प्रशिक्षुता संवर्धन योजना के जरिए अल्पकालिक प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है। शिल्पकार प्रशिक्षण योजना में जनजातीय समुदाय समेत समाज के सभी तबकों के युवाओं को औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों के ज़रिए दीर्घकालिक कौशल उपलब्ध कराया जाता है। इन सभी योजनाओं में अनुसूचित जनजाति घटक के माध्यम से आदिवासियों के लिए कोषों के उपयोग का अनिवार्य प्रावधान किया गया है। संसाधनों की कोई कमी नहीं होने के बावजूद अनुसूचित जनजातियों के रोज़गार के योग्य युवाओं को उनकी जरूरतों और आकांक्षाओं के अनुरूप विभिन्न पेशों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना एक बड़ी चुनौती है।**(8,9)**

निष्कर्ष: यह स्पष्ट हैं की संवेधानिक प्रावधानों और सरकार की योजनाओं तथा कार्यक्रमों में अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास पर हमेशा जोर दिया गया है। लेकिन राज्यों में इस दिशा में हुई प्रगति में काफी असमानता है। आँकड़ों के विश्लेषण से पता चलता हैं कि अन्य समुदायों की तुलना में अनुसूचित जनजातियां आर्थिक तौर पर अभी भी ज़्यादा पिछड़ी हैं। अनुसूचित जनजातियों की गरीबी रेखा से नीचे की ज़्यादातर आबादी भूमिहीन खेतिहर मजदूरों की है। सरकार ने अनुसूचित जनजातियों की समस्याओं की पहचान करते हुए विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलकदमियों के जरिए उनके समाधान के तौर-तरीके तैयार किए हैं। जनजातियों की भागीदारी पर आधारित स्वशासन की एक ऐसी प्रणाली को लोकप्रिय बनाने की ज़रूरत है जिसमें इस समुदाय के सदस्य संसाधनों का खुद प्रबंध कर अपनी प्रगति और भविष्य की रूपरेखा निर्मित कर सकें । इससे जनजातियों का उनकी भागीदारी और उनके प्रबंधन वाली विकास प्रक्रिया में सशक्तीकरण होगा। अनुसूचित जनजातियों के युवाओं और महिलाओं की योग्यता और ज्ञान के आधार को बढ़ाने के लिए अतिरिक्त प्रयास किए जाने चाहिए। जनजातीय समुदाय प्रकृति के काफी करीब होते हैं ,इसलिए प्राकृतिक उत्पादों और वनों पर आधारित व्यवसाय को अनवरत बढ़ावा देने से उनको कुशल और योग्य बनाया सकता हैं । विश्व बाजार से उनका और उनके उत्पादों का जुड़ाव होने से उनकी आत्मनिर्भरता और उत्थान का कुशल मार्ग प्रशस्त होगा ।

****

संदर्भ-सूची :-

1 Kumar Suresh Singh (1985): Tribal Society in India, New Delhi,,Manohar

2 https:// www.brlf.in

3 Nadeem Hasnain (2017): Tribal India, Palaka Prakashan Delhi

4 Archana Prasad (2003): Against ecological romanticism: Verrier Elwin and the making of an anti-modern tribal identity, Three Essays Collective

5 Nari Rustomji (1988): Verrier Elwin and India's north-eastern borderlands, North-Eastern Hill University Publications

6 Ramchandra Guha (1999): Savaging the Civilized — Verrier Elwin, his tribals and India,
University of Chicago Press; OUP

7 Govind Sadashiv Ghurye (1943): The aborigines-so-called-and their future Pub.by D.R.Gadgil for the economics

8 वार्षिक रिपोर्ट (2021-22): जनजातीय कार्य मंत्रालय, www.tribal.nic.in

9 के. के. त्रिपाठी (2022): भारत मे जनजातीय विकास की रणनीतियाँ ,कुरुक्षेत्र

10 https://trifed.tribal.gov.in/home

11 https://www.nsfdc.nic.in

12 https://www.niti.gov.in

21 वी सदी का आदिवासी समाज और हिन्दी साहित्य

निलेश देशमुख
शोधार्थी, हिन्दी विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी मो.-9404787698

शोध सारांश- वर्तमान में भूमंडलीकरण ने विश्व में एक बाजारवाद स्थापित किया हुआ है| इस बाजारवाद और औध्योगिकीकरन ने कम-अधिक रूप से सभी देशों के नागरिकों को प्रभावित करना शुरू कर दिया है| लेकिन इन सब में सबसे अधिक जो प्रभावित हो रहा है, वह इस देश का आदिवासी समाज है| जो वर्षों से पठारी के क्षेत्र पर रहा तो उन्हें वहां से जंगल का रास्ता दिखाया और अब जंगल में रहता है तो वहां से भी उन्हें संसाधनों के लिए विस्थापित किया जा रहा है| देश की राजनीती ने कभी उद्योगों के बहाने तो, कभी संसाधनों के बहाने मूल आदिवासियों को विस्थापित करने के लिए मजबूर किया है| हमला कही से भी हो प्रभाव आदिवासी की संस्कृति, भाषा और साहित्य पर ही अधिक पड़ता हुआ दिखाई देता है| अमूमन हम देखते हैं कि हर जगह आये दिन कुछ-न-कुछ समस्याओं को लेकर आदिवासी हर जगह लढता दिखाई देता है| इसके पीछे कारणों की पड़ताल करते हैं, तो ज्ञात होता है कि कभी उन्हें विस्थापित करके अपनी मूल जगह से निकाल दिया जाता है, तो कभी उन्हें आदिवासी मानने पर प्रश्न उपस्थित कर देते हैं, जब इन सबके बावजूद नहीं आदिवासी अपनी जगह से नहीं निकल पाते तब उनकी भाषा, पुरखा साहित्य और संस्कृति पर प्रहार करना शुरू कर देते हैं| इससे उनका अस्तित्व, अस्मिता और भाषा पर गहरा संकट दिखाई दे रहा है| पिछले कुछ वर्षों से आदिवासी समाज में राजनीती एवं साहित्य के माध्यम से जल-जंगल-जमीन, अस्तित्व, अस्मिता, भाषा-संस्कृति से जुड़े सवालों पर आदिवासी ने प्रश्न उठाना शुरू किए हैं| लेकिन उनमें खास परिवर्तन नहीं हुआ है| इसलिए अब भी मूल रूप से भारत में निवास करने वाले आदिवासी को खदेड़ने के बरसक प्रयास किये जा रहे हैं| लेकिन 21 वी सदी के तृतीय दशक में आदिवासी अच्छे से समझ गया है कि उन्हें क्या करना है और क्या नहीं| उनमें चेतना जगी है अब तक यह समाज हाशिये पर रहते आया है, लेकिन उन्होंने अपनी अस्तित्व, अस्मिता, भाषा और संस्कृति को बचाने के लिए साहित्य को मुख्य हथियार बनाया है| समकालीन आदिवासी साहित्य में इन सब विषयों को देख सकते हैं| जिनमें आदिवासी लेखकों के साथ-साथ गैरआदिवासी लेखकों का भी साहित्य में हस्तक्षेप हैं|

बीजशब्द- आदिवासी, संस्कृति, साहित्य, अस्तित्व, अस्मिता

आलेख- दुनिया में तमाम प्रकार के परिवर्तन यह भूमंडलीकरण, जागतिकीकरण, औध्योगिकिकरन के कारण हो रहे हैं| इन सब में कुछ देश विकास के राह पर है, तो कुछ देश अब भी विकास के पीछे दौड़ लगा रहें हैं| भारत की स्थिति पीछे से दौड़ लगाने वालों में हैं जो अन्य देशों की तुलना में ज्यादा विकास नहीं कर पाया| विकसित देशों की देखा देखी में भारत भी विकास के राह पर तो है, लेकिन वह बहुमूल्य जीवन मूल्यों को खोकर प्रगति करना चाहता है| जो इस समय तो कदापि संभव नहीं है, जब मूल्य ही नहीं बचेंगे तो देश का विकास कैसे होगा अर्थात देश का विकास कितना भी हो जाये पर वह आगे नहीं बढ़ सकता| देश में विभिन्न धर्म सम्प्रदाय, जाति-नस्लवाद जैसे विषय पर आये दिन विभिन्न घटनाएँ घटित हो रही है| इन सब को हम साहित्य में देखते हैं| साहित्य के माध्यम से न सिर्फ किसी एक विषय को लेकर लिखा जा रहा हैं बल्कि वर्तमान के विभिन्न छोटे-मोटे विषय भी उसमें भी सम्मिलित्त कर लिये जाते हैं| यही कारण होगा कि भारतीय साहित्य में विभिन्न विमर्श ने जन्म लिये हैं|20 वी सदी में स्त्रीवादी साहित्य और दलित साहित्य के बाद आदिवासी साहित्य पर आये दिन बड़ी चर्चा हो रही है इसका कारण क्या है? कि अचानक से आदिवासी के बारे में जानने के लिए, उनके जीवन सम्बन्धित लेखन में लोग रूचि ले रहे हैं| इसका एक कारण यह हो सकता है कि जो कुछ भी आज जीवन मूल्य बचे हुए हैं, वह सिर्फ आदिवासियों में परिलक्षित किये जा सकते हैं| इसलिए आज आदिवासी पर अर्थात साहित्य में आदिवासी को केंद्र बनाकर सबसे अधिक लिखा जा रहा है| विश्व में आदिवासी साहित्य ही एक ऐसा साहित्य है जो सबसे अधिक प्रकृति प्रेम, सहजीविता, सामूहिकता, सहभागिता, समानता, सहयोगिता जैसे मूल्यों की मांग करता है, न सिर्फ मांग करता है वह आदिवासी समाज अपने प्रतिदिन के जीवन व्यवहार में भी जीता है| आदिवासी साहित्य में अधिकतर विषय जल-जंगल-जमीन-जानवर और विस्थापन से सम्बन्धित होते हैं| आज आदिवासी समाज मुखर हो रहा है उनके आस पास घटित समस्या को लेकर लिख रहा हैं| आदिवासी साहित्य पर वंदना टेटे कहती है कि "आदिवासी साहित्य मूलतः सृजनात्मकता का साहित्य है| यह इन्सान के उस दर्शन की अभिव्यक्त करने वाला साहित्य है जो मानता है कि प्रकृति सृष्टि में जो कुछ भी है, जड़ चेतन, सभी कुछ सुंदर है|...वह दुनिया को बचाने के लिए सृजन कर रहा है| उसकी चिंताओं में पूरी सृष्टि, समष्टि और प्रकृति है| जिसका एक प्रमुख अंग इन्सान भी है|"[1]

आदिवासी साहित्य आदिवासी दर्शन पर आधारित साहित्यिक आन्दोलन है| जो अपनी अस्मिता और अस्तित्व को बच्चाने की जदोजहद कर रहा है| हजारों वर्षों से आदिवासी अपने अस्तित्व एवं अस्मिता के लिए संघर्ष करता दिखाई देता है| उन के उपर अब भी अपनी पहचान का संकट मंडरा रहा है| आदिवासी अपनी पहचान के लिए सरकार से आदिवासी धर्म कोड(कौलम) की मांग कर रहा है, जिस प्रकार हिन्दू, बौद्ध, जैन, ख्रिचन लिखा जाता है| वैसे ही आदिवासी कौलम क्यों नहीं बना रहे हैं, इसके लिए सरकार ने आज कान बंद कर लिए है| देश की प्रथम नागरिक अर्थात राष्ट्रपति आज आदिवासी महिला होकर भी आदिवासी समस्या की मांग को अनसुना कर रही हैं, इसके अलावा भारत देश में आदिवासी का कोई मसीहा है या नहीं ? देश की राजनीती अपने कामों में इतनी व्यस्त है कि आदिवासी को सुनने के लिए उनके पास समय ही नहीं है, इसलिए अपनी समस्या को प्रेषित करने का एक मात्र रास्ता साहित्य और पत्रकारिता ही है| सरकार को जब भी कोई परियोजना लानी हो, तो सब से पहले आदिवासी क्षेत्र में उसको लगाते हैं क्योंकि उन्हें आसानी विस्थापित किया जा सके| इस प्रकार का दिकुओं का रवैया रहा है|वर्तमान में आदिवासी साहित्य की मूल परम्परा की पड़ताल करने के लिए अतीत के आदिवासी साहित्य के स्त्रोतों का अध्ययन करना जरूरी है| इसके लिए हमें पूर्व निर्धारित प्रतिमानों और पूर्वग्रहों से मुक्त होकर आदिवासी साहित्य को समझना चाहिए| जिस प्रकार मुख्यधारा के साहित्य को किसी प्रमुख भाषा में महानगर से प्रकाशित, पुरस्कृत, प्रशंसित, किताब को ही श्रेष्ट साहित्य मानते हैं| यह विचारधारा बदलनी पड़ेगी क्योंकि आदिवासी लेखक इस प्रकार का व्यय नहीं उठा पाता तथा उन्हें सही प्रकाशक नहीं मिल पाता| आदिवासी साहित्य की अवधारणा पर विचार करते समय मुख्यधारा के लेखकों को इस परिपाटी को छोड़ना पड़ेगा तब सही अर्थ में आदिवासी साहित्य के स्त्रोत सामग्री का चयन कर पाएंगे| "आदिवासी भाषाओं में रचित साहित्य और मौखिक परम्परा आदिवासी साहित्य का मूल स्त्रोत है| सिर्फ हिंदी में लिखित-मुद्रित आदिवासी सम्बन्धी लेखन को आदिवासी साहित्य कहना उचित नहीं है| मौखिक साहित्य इसका

मूलाधार है|"[2] आदिवासी साहित्य को मूल रूप से तिन वर्गों में बांटकर समझा जा सकता है-

1.पुरखा साहित्य|

2.आदिवासी भाषाओँ में लिखित साहित्य की परम्परा|

3.समकालीन आदिवासी लेखन इत्यादि में|

1.पुरखा साहित्य- आदिवासी साहित्य सच कहा जाए तो पुरखा साहित्य ही है, आदिवासी दर्शन व साहित्य का मूलाधार यही पुरखा साहित्य है| हजारों वर्षो से मौखिक साहित्य की परम्परा जीवित है जो अनवरत चलती आ रही है| परम्परा से आज तक विभिन्न मौखिक साहित्य आदिवासी भाषाओं में लिखा जा रहा है| आदिवासी चिन्तक इस मौखिक परम्परा को मौखिक साहित्य या लोक साहित्य कहने के बजाए पुरखा साहित्य कहते हैं| इसके पीछे कुछ ठोस तर्क आदिवासी साहित्यकार वंदना टेटे ने दिए हैं उन्होंने वाचिकता(ऑरेलिटी) को प्रमुख स्थान दिया है| जो इस प्रकार है- "रॉक आर्ट, स्थापत्य, क्राफ्ट और कला-परम्पराएँ, आनुष्ठानिक और परफोर्मेंस स्थल, सामुदायिक परफोर्मेंस, स्मृति गीत, गाथाएँ और पुरखा कहावते व साहित्य, अदृश्यता, ऑरल ज्ञान-केंद्र, आदिम गुरिल्ला प्रवृत्ति, सृष्टि: सर्वोच्च नियंता मार्गदर्शक, भाषा" आदि तत्व पुरखा साहित्य को जानने के लिए महत्वपूर्ण है| जिस से हम आदिवासी पुरखा साहित्य को जान पाएंगे|

आज तमाम आदिवासी भाषाओं में पुरखा साहित्य की एक समृध्द परम्परा मौजूद है| इनके माध्यम से हम उनके जीवन दर्शन, ज्ञान परम्परा, जीवन के मानव मूल्यों, विश्वासों आदि को जान सकते हैं| यही कारण है कि आदिवासी जीवन को जानने के लिए पुरखा साहित्य को संकलित करना और सहेजना आज बेहद जरूरी है|

2. आदिवासी भाषाओं में लिखित साहित्य की परम्परा- वर्तमान में आदिवासी समाज में विभिन्न भाषओं के लिपियों को निर्माण हो रहा है| आदिवासी भाषाओं में पुरखा साहित्य और इतिहास से सम्बन्धित मूल धरोहर हमें प्रमुखता से देखने को मिलती हैं| इसलिए आदिवासी भाषा में लिखित जो भी साहित्य मौजूद है, वह काफी महत्वपूर्ण है| पिछले सौ साल से गोंडी, मुंडारी जैसे आदिवासी लिपि में साहित्य लिखा जा रहा है, वह काफ़ी महत्वपूर्ण है| आदिवासी स्त्रोत सामग्री के अनुसार मेन्नय ओडेय का 'मतुराअे कहनि' नामक मुंडारी उपन्यास पहला आदिवासी उपन्यास माना जाता है| जो कि 20 वी सदी के दुसरे दशक में लिखा गया था| और इसके एक भाग का हिंदी में अनुवाद 'चलो चाय बागान' नाम शीर्षक से किया गया है| इससे मालूम होता है कि किस प्रकार से आदिवासी भाषा में भी अन्य भाषा जैसे ही साहित्य की परम्परा पुराणी है| इसके अतिरिक्त गोंडी भाषा की एक समृद्ध परम्परा है|

3. समकालीन आदिवासी लेखन- आदिवासी भाषाओं सहित हिंदी, मराठी, बांग्ला, तमिल, मलायलम, उड़िया आदि में बढ़ी मात्रा में समकालीन आदिवासी साहित्य लिखा जा रहा है| हिंदी में इसकी शुरुवात चार दशक पहले शुरू हुई है| हिंदी भाषा में प्रमुख विधा कविता है लेकिन आदिवासी साहित्य में उपन्यास, कहानी, नाटक, आलोचना आदि भी उसके समान ही लिखे जा रहे हैं| आदिवासी साहित्यकारों की रचना जल्दी कोई प्रकाशक प्रकाशित नहीं करता इसके पीछे उनकी क्या मंशा है यह तो नहीं ज्ञात होता लेकिन यह बात जरूर है कि अपनी मातृभाषा में उन्होंने काव्य रचनाएं की है| लगातार इन दिनों आदिवासी साहित्यकारों की रचनाएँ मातृभाषा में प्रकाशित हो रही है| लेकिन हिंदी साहित्य की एक समृद्ध परम्परा होने से उनको जानना जरूरी है|

आदिवासी कविता लेखन-

आदिवासी साहित्य में कविता की परम्परा अत्यंत पुरानी है| हिंदी आदिवासी कविता की शुरुवात सुशीला सामद से मानी जाती है लेकिन बिच में निरन्तरता का अभाव दिखाई देता है| इस कारण हिंदी आदिवासी कविता की शुरुवात प्रमुख आदिवासी साहित्यकार रामदयाल मुंडा की कविता से मानते हैं| जिन्होंने हिंदी कविता के साथ ही मुंडारी में भी काफी कविताएँ लिखी है| रामदयाल मुंडा की रचनाओं के संग्रह है 'वापसी','पुनर्मिलन' तथा 'अन्य नगीत', तथा 'नदी और उसके सम्बन्धी अन्य नगीत'| दुलायचंद्र मुंडा का 'नव पल्लव'-1966 आदि| रामदयाल मुंडा आदिवासी कविता के प्रमुख कवी है| इस सम्बन्ध में गंगा सहाय मीणा लिखते हैं- "रामदयाल मुंडा आदिवासियत के बड़े कवी हैं| उनकी कविताओं में वह सहजता स्पष्ट देखी जा सकती है, जो आदिवासी जीवन का अनिवार्य अंग है| वे अपनी चार-पांच पंक्तियों की छोटी-छोटी कविताओं के माध्यम से आदिवासी मन की ऐसी बातें कह जाते हैं, जिसके लिए अन्य रचनाकार को शायद दर्जनों पृष्ट रंगने पड़े|"[3] इससे मालूम होता है कि आदिवासी रचनकार अपनी बात को अधिक बड़ चड़कर नहीं बल्कि साफ़ और कम शब्दों में लिखता-बोलता है| उसी के साथ ग्रेस कुजूर का 'एक और जनी शिकार', रोज केरकेट्टा, हरिराम मीणा, शंकर लाल मीणा, सरिता सिंह बड़ाईक, महादेव टोप्पो-'जंगल पहाड़ के पाठ', निर्मला पुतुल- नगाड़े की तरह बजते शब्द, 'अपने घर की तलाश', 'बेघर सपने' वंदना टेटे की लोकप्रिय आदिवासी कविताएँ, वाहरु सोनवने की 'पहाड़ हिलाने लगा है', लक्ष्मण सिंह कावडे, अनुज लुगुन के 'बाघ और सुगना मुंडा', 'पत्थलगड़ी' जंसिता केरकेट्टा के 'अंगोर', 'ईश्वर और बाजार' पूनम वासम आदि कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से आदिवासी समाज के छोटे-बड़े सभी विषयों पर बखूबी से लिखा और लिखते रहे हैं| समकालीन आदिवासी कविता संसार काफ़ी फैला हुआ है| राजनीती, सामाजिक, ऐतिहासिकता, आर्थिक विषय के विभिन्न घटक को देख सकते हैं| वस्तुतः यह आदिवासी अस्तित्व, अस्मिता और भाषाओं के संघर्ष की दास्तान है|

आदिवासी उपन्यास लेखन-आदिवासी साहित्य में आदिवासी और गैर आदिवासी साहित्यकारों का लगाव उपन्यास लिखने के प्रति धीरे-धीरे बढ़ रहा है| वैसे 20 वी सदी से ही आदिवासी के जीवन के सन्दर्भ का उल्लेख कुछ उपन्यासों में होता रहा है जिनमें रथ के पहिए(देवेन्द्र सत्यार्थी-1952), कब तक पुकारूँ (रांगेय राघव-1958), सूरज किरण की छांव(राजेन्द्र अवस्थी-1958), जंगल के फुल(राजेन्द्र अवस्थी-1969), जंगल के आसपास(राकेश वत्स-1985), शैलूष(शिवप्रसाद सिंह(1986), धार(संजीव-1995), गगन घटा घहरानी(मनमोहन पाठक-1991), पांव तले की दुब(संजीव-1995), जहाँ बास फूलते हैं (श्रीप्रकाश मिश्र-1997), अल्मा-कबूतरी(मैत्रेयी पुष्पा-2000), जंगल जहाँ शुरू होता है(संजीव-2000), सावधान! नीचे आग है(संजीव-2000)आदि| इनमें भारत के विभिन्न जनजातियों के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक स्थिति के साथ ही अन्याय, अत्याचार, शोषण, पिछड़ेपन आदि का चित्रण हुआ है| लेकिन जिस मुखरता से 21 वी सदी के उपन्यासों में आदिवासी जीवन के सम्बन्ध में राजनितिक संघर्ष, दिकुओं की रणनीतियों के खिलाफ संघर्ष हुए हैं वह 20 सदी में कम दिखाई देते हैं| 21 वी सदी के उपन्यासों में यही शोषण, अन्याय अत्याचार के विरुद्ध बुलंद होता आवाज दिखाई देता है| आदिवासी जीवन को केंद्र में रखकर आदिवासी और गैर आदिवासी साहित्यकारों ने समान रूप से लिखा है, और लगातार तमाम विधाओं में लिख रहें हैं| 21 वी सदी के प्रमुख आदिवासी उपन्यास इस प्रकार हैं- आदिभूमि (प्रतिभा राय-2002), काला पादरी(तेजिन्दर-2002), पठार पर कोहरा (राकेश कुमार सिंह-2003), रेत(भगवानदास मोरवाल-2008), धुणी तपे तीर(हरिराम मीणा-2008), ग्लोबल गाँव के देवता(रणेंद्र-2009), अरण्य में सूरज(श्रीमती अजित गुप्ता-2009), मरंग गोंडा नीलकंठ हुआ(महुआ माजी-2012), जोराम यालाम- (जंगली फुल) आदि| पिटर पॉल एक्का का 'पलाश के फुल', 'मौन घाटी' और सोन पहाड़ी आदिवासी दर्शन की दृष्टी से महत्वपूर्ण उपन्यास है| वाल्टर भेंगरा तरुण

के 'जंगल के गीत', 'लौटते हुए', 'शाम की सुबह' 'तलाश' जोराम यालाम का 'जंगली फुल' अरुणाचल प्रदेश के तानी समुदाय की लोककथा पर आधारित है| हरिराम मीणा का धुनी तपे तीर आदिवासी मानगढ़ धाम हत्याकांड पर आधारित है, जिसमें जालियांवाला हत्याकांड से भी अधिक लोगों पर गोलीबारी की थी आदि उपन्यास लिखे हैं, वे भी आदिवासी जीवन दृष्टी से बेहद महत्वपूर्ण है| मंगल सिंह मुंडा का 'छौला संदु' और अजय कंडूलना का 'बड़े सपनों की उडान' आदि आदिवासी उपन्यास रहें हैं| यह उपन्यास लिखने की परम्परा अब तक अनवरत चल रही है| आदिवासी कहानी लेखन- आदिवासी कथाओं की परम्परा अत्यंत पुरानी है, सभी भाषाओँ में कोई-कोई लोककथा सृष्टि की उत्पत्ति, इतिहास एवं जीवन के विविध प्रसंग को लेकर अवश्य कही जाती है| लेकिन कहानी यह गद्य विधा आधुनिक है| हिंदी आदिवासी कहानी का लिखित रूप सर्व प्रथम एलिस एक्का की कहानी से माना जाता है, इसका पुन: संपादन वंदना टेटे ने किया है| रामदयाल मुंडा कविता के अलावा कहानी में भी काफी सक्रिय थे| पिट्टर पॉल एक्का भी कहानी विधा में बहुत दिनों से सक्रीय देखने को मिलते हैं| उनकी कहानी संग्रह- 'राजकुमारों के देश में' और 'परती जमीन' आदिवासी कहानियों में महत्वपूर्ण संग्रह है| रोज केरकेट्टा का 'पगहा जोरी जोरी रे घाटो' हिंदी पाठकों के बिच चर्चित है| उनका दूसरा संग्रह बिरुवार गमछा तथा अन्य कहानियां आदि| वाल्टर भेंगरा तरुण एक सक्रीय आदिवासी कहानीकार है, जिनके संग्रह 'जंगल की ललकार' 1989 में प्रकाशित हुआ है| इसके अलावा उन्होंने लौटती रेखाएं, देने का सुख आदि भी रचे हैं और हिंदी की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में लगातार नई कहानियां पढने को मिलती है| अन्य आदिवासी कहानीकारों में प्यारा केरकेट्टा, मंगल सिंह मुंडा, विजय सिंह मीणा, रूपलाल बेदिया, सिकरादास तिर्की, पार्वती तिर्की, शंकर लाल मीणा आदि भी सक्रीय है|

आदिवासी नाटक- आदिवासी नाटक अधिक तो नहीं लेकिन जितने लिखे गए वे काफी महत्वपूर्ण है| आदिवासी नाटककारों में प्यारा केरकेट्टा, सिद्धेश्वर सरदार का नाम उल्लेखनीय है| प्यारा केरकेट्टा ने 'जूझइन डांड' मंगल सिंह मुंडा ने 'कमिनाला', सिद्धेश्वर सरदार ने 'तुम्हारा हाथ दो, हमारा साथ दो', प्यास भरी आदि नाटकों के माध्यम तत्कालीन समस्याओं को उठाते हैं| खैर इन नाटकों के अलावा कुछ नौटंकी आदि भी तैयार हो रही है| उसी के साथ आज डायरी, संस्मरण, आत्मकथा आदि भी लिखी जा रही है| उन में विविध जल-जंगल और जमीन के विषयों को एक साथ साहित्य के माध्यम से सामने लाया है| संक्षेप में कहे तो आदिवासी समाज और साहित्य जिस प्रकार सामने आ रहा है वह बड़ा ही समृद्ध रूप से है| परिपूर्ण न सही लेकिन जो है वह काबिले तारीफ है| इसलिए आदिवासी समाज और साहित्य की परम्परा 20 सदी की तुलना में 21 वी सदी के तृतीय दशक में काफी आगे बडी है| आदिवासी साहित्यकारों ने आदिवासी के जीवन के मानव मूल्यों के विभिन्न विषयों को लेकर तथा अपनी अस्तित्व की लड़ाई विकास के विरोध नहीं, बल्कि अपनी अस्मिता, अस्तित्व के संरक्षण के लिए लड़ता दिखाई देता है| सब विषयों को समकालीन आदिवासी साहित्य लेखन से ज्ञात कर सकते हैं| आदिवासी साहित्य में सहानुभूति और स्वानभूति के सवाल को लेकर निरंतर बातचीत होती है| आदिवासी साहित्य रचाव बचाव के साहित्य के साथ साथ आदिवासी जीवन दर्शन को लेकर लिखा जाता है| इसलिए अन्य विमर्श से विभिन्न है| यह खुद के साथ अन्य को बचाने की बात करता है| मनुष्य से अधिक प्रकृति पर विचार करता है जल-जंगल-जमीन और जानवर यह प्रमुख विषय होते हैं|

****

सन्दर्भ-

1. वंदना टेटे, आदिवासी साहित्य:परम्परा और प्रयोजन, पृ.87-88
2. आदिवासी चिंतन की भूमिका – गंगा सहाय मीणा, अनन्य प्रकाशन दिल्ली, पृ.46
3. वही पृ.51

दमन,शोषण और अपराध की अरण्य गाथा

(संदर्भ : संजीव का उपन्यास 'जंगल जहाँ शुरू होता है')

धर्मेन्द्र कुमार
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
राम जयपाल महाविद्यालय
जय प्रकाश विश्वविद्यालय,छपरा

शोध-सार-21 वीं सदी के हिन्दी उपन्यासकारों में संजीव की पहचान विशिष्ट है। सन् 2000 ई. में प्रकाशित इनका उपन्यास 'जंगल जहाँ शुरू होता है' अपने आप में अनोखी रचना है। इस उपन्यास के केन्द्र में है- बेतिया का जंगल और वहाँ पनपता अपराध। बिहार के पश्चिमी चंपारण ज़िले का यह बीहड़ इलाक़ा अपराध की नर्सरी के रूप में जाना जाता है। दुर्गम और दुरूह होने के कारण यहाँ डाकू समस्या का जन्म हुआ। डाकू समस्या के उन्मूलन के लिए बिहार सरकार द्वारा 'ऑपरेशन ब्लैक पैंथर' लागू किया गया। डीएसपी कुमार इस उपन्यास का केन्द्रीय पात्र है जो इस ऑपरेशन का नेतृत्व करता है। इस क्रम में, कुमार अनुभव करता है कि डाकू समस्या के मूल में सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक कारण हैं। स्थानीय ज़मींदारों, सामंतों और प्रभावशाली लोगों के हाथों में शक्ति और सत्ता है। प्रस्तुत शोध-आलेख में 'जंगल जहाँ शुरू होता है' की मूल संवेदना के अन्तर्गत बेतिया की थारू जनजाति, डाकू समस्या,स्थानीय नागरिकों के दमन, शोषण और राजनीति के अपराधीकरण आदि की पड़ताल करने की कोशिश की गई है। साथ ही, यह दर्शाने का भी प्रयास किया गया है कि बेतिया की थारू जनजाति के शोषण के स्तर कई हैं। पुलिस-प्रशासन से लेकर डाकू,राजनेता और सामंत तक अपने हित के लिए उनका इस्तेमाल करते हैं।

बीज शब्द-डाकू की समस्या, पुलिस की क्रूरता, थारू जनजाति की दुर्गति, बीहड़ प्राकृतिक परिवेश, राजनीति का अपराधीकरण, अंधविश्वास, स्त्रियों की स्थिति, शोषण के विभिन्न रूप, लोकतंत्र की विफलता, भोजपुरी मिश्रित भाषा आदि।

मूल आलेख-'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास की मूल विशेषता है -बेतिया और इसके आस-पास के इलाके में डाकुओं की समस्या। संजीव के अनुसार, ये डाकू इसी सामाजिक-सांस्कृतिक और प्राकृतिक परिवेश की उपज हैं। परशुराम, परेमा, नोनिया, काली जैसे डाकू अपहरण, फिरौती, हत्या, बलात्कार जैसे कृत्य करते हैं। अपराध के बाद जंगल और सीमांत का लाभ उठाकर नेपाल की सीमा में प्रवेश कर जाना इनके लिए सामान्य बात है। डाकुओं के अपराधी जीवन की शुरूवात ग़रीबी,अभाव के कारण होती है। ये डाकू अपने जीवन के आरंभिक दिनों में किसी-न-किसी ज़मींदार अथवा सामंत के यहाँ लठैत या नौकर के रूप में कार्य करते हैं। शोषण, अन्याय, बलात्कार की ट्रेनिंग इन्हीं ज़मींदारों के यहाँ इन्हें मिलती है। छोटे-मोटे अपराध से शुरू कर इन लठैतों का विकास डाकू के रूप में होता है। इस उपन्यास में इन्हीं तथ्यों को रेखांकित किया गया है। फिर, इनके डाकू बनने में सामाजिक परिवेश, ग़रीबी, प्रशासन की विफलता आदि कारक भी कम ज़िम्मेवार नहीं हैं। डॉ. आदर्श सक्सेना के अनुसार,''नित नए पैदा होने वाले डाकू कानून और व्यवस्था के लिए बड़ी चुनौती बनकर आते हैं परंतु उनके जन्म के कारणों को अनदेखा किया जाता रहता है। ये कारण हैं-प्रकृति की मार, जमींदारों और साहूकारों के अत्याचार, प्रशासन की अकर्मण्यता,कुसंस्कार, अंधविश्वास और निपट दरिद्रता।''[1] चूँकि ये डाकू स्थानीय होने के कारण अपने समाज से भली -भाँति परिचित होते हैं, इस कारण कुछ में सामाजिक न्याय एवं स्थानीय मूल्यों के प्रति आस्था भी देखी जा सकती है। डाकू काली का एक रूप ऐसा ही है। वह इस उपन्यास के सशक्त पात्रों में एक है।

पुलिस का दायित्व जन-सामान्य की सुरक्षा एवं भयरहित जीवन का पोषण करना है। लेकिन यही पुलिस अगर रक्षक के स्थान पर भक्षक हो जाए तो? 'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास पुलिस की क्रूरता की दास्तान है। डाकू उन्मूलन और सर्च ऑपरेशन के नाम पर स्थानीय नागरिकों को उजाड़ दिया जाता है। संजीव इलाहाबाद उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश आनंद नारायण मुल्ला का हवाला देते हुए रेखांकित करते हैं कि पुलिस अपराधियों का सबसे बड़ा संगठित गिरोह है। काली के भाई बिसराम के साथ पुलिस बिना अपराध के जेल में इतना अधिक 'थर्ड डिग्री' का इस्तेमाल करती है कि वह चल-फिर नहीं पाता। जेल में ही उसका एनकाउंटर कर दिया जाता है। इसी प्रकार, परेमा यादव के साथी श्यामदेव को जंगल में ले जाकर, एनकांउटर के नाम पर उसकी हत्या कर दी जाती है। पुलिस की क्रूरता का सबसे अधिक शिकार मलारी नाम की थारू औरत होती है। उसे डाकुओं से संबंध के कारण मकरंदापुर से उजड़कर अन्यत्र बसना पड़ता है। डीएसपी कुमार मलारी का शारीरिक शोषण भी करता है। मलारी कहती है-'' डाकू का विश्वास कर लेना, लेकिन किसी हाकिम का विश्वास मत करना।''[2] पुलिस की क्रूरता पाठकों के रोंगटे खड़ी कर देती है। ध्यातव्य है-'' उपन्यास डाकुओं का ही नहीं, पुलिस की बर्बरता के भी रोंगटे खड़े कर देने वाले विवरण प्रस्तुत करता है। इस दृष्टि से श्यामदेव, बिसराम और जोगी जैसे पात्रों पर किए गए अत्याचार भारतीय पुलिस के असली रूप को उजागर करते हैं।''[3]

बेतिया की थारू जनजाति वहाँ की मूल निवासी है। थारू सीधे -सादे, सरल और स्वभाव के भोले होते हैं। उन्हें क्रोधित होते बहुत कम देखा जाता है। थारू स्त्रियाँ भी तुलनात्मक रूप से अधिक सुंदर होती हैं। थारूओं की यही विशेषता उनकी दुर्गति का कारण बन जाती है। चन्द्रदीप सिंह, ललन बाबू जैसे ज़मींदारों से लेकर पुलिस-प्रशासन तक इनका शोषण आसानी से करते हैं। बिसराम की बड़ी बेटी दुलारी की मौत साँप काटने से होती है। वह साँप का विष उतरवाने ओझा के पास ले जाता है। रात के अँधेरे में कुमार बिसराम, काली और उसके साथियों को डाकू समझकर सर्च ऑपरेशन पर निकल पड़ता है। कुमार का सामना और बेटी की मौत होने पर बिसराम विलाप करते हुए कहता है-''हमार तो हर तरीका से मौवत लिखल बा, ए बेटी! जिमींदार से, डाकू से, देवता-पिता से, भूत-भवानी से, पुलिस लेखपाल से.....अरे कबन सुख देखलू ऐ बेटी...ई...ई...ई....! तहरा के बचा न सकल बाप ई अभागा-आ-आ-आ!''4 पूछताछ के नाम पर थाने में बुलाकर पुलिसवाले बिसराम की पत्नी का बलात्कार करते हैं। काली को किए गए काम की मज़दूरी नहीं मिलती। उल्टे ज़मींदार की झिड़की सुननी पड़ती है। प्रसिद्ध उपन्यासकार रणेन्द्र के शब्दों में-''थारूओं के दुखों की अनंत कथा कहने के लिए उपन्यासकार ने केन्द्रीय पात्र के रूप में काली को चुना है जिसके भाई बिसराम की हत्या की जाती है। जिसकी भाभी और बहन मलारी की दैहिक शोषण नियति बन गई है, जिसकी पत्नी मायके से ही धोखे से चुराकर बेच दी गई है।''[5]

बीहड़ प्राकृतिक परिवेश बेतिया और इसके आस-पास के इलाकों की ख़ासियत है। इस परिवेश का अत्यंत ही प्रामाणिक और मनोहारी चित्रण 'जंगल जहाँ शुरू होता है' में है। घने जंगलों के कारण एक ओर यह इलाक़ा दुर्गम है तो दूसरी ओर डाकुओं का सुरक्षित पनाहगार भी। बेतिया के जंगलों में कई जंगली जानवरों यथा बाघ, भालू, जंगली भैंसे, अजगर आदि का डर सदैव बना रहता है। प्राकृतिक झरने और पहाड़ मन को मोह लेते हैं। इस अंचल के उत्तर में नेपाल, पश्चिम में यूपी, बीच में जंगल-पहाड़ और रेता के बीच की छिटकी आबादी और मीलों फैले गन्ने के खेत हैं। जगह-जगह पेड़ों के व्यूह सहज द्रष्टव्य हैं। ध्यातव्य है-''इतना घना झुरमुट देखकर भला कोई सोच भी सकता है कि एक बेहद सुहानी झील इनकी ओट में छिपी पड़ी है। लंबी, दोहरी, घोड़े की नाल-सी, बीच में कोई द्वीप-सा। कितनी सुरक्षित जगह है अपहरणकर्ताओं के लिए।''[6] उपन्यास में कई स्थलों पर प्रकृति के आकर्षक चित्र हैं।

विगत कुछ वर्षों से भारतीय लोकतंत्र एवं राजनीतिक व्यवस्था की विडंबना रही है कि इसका अपराधीकरण हुआ है। राजनैतिक दल जातीय समीकरण को साधते हुए अपराधियों, हत्यारों-यहाँ तक कि लुटेरों-बलात्कारियों को भी टिकट दे रहे हैं। 'जंगल जहाँ शुरू होता है' में जनतंत्र पर 'अपराध तंत्र' हावी है। मंत्री दबे चुनाव जीतने के लिए बिन्दा, गोकुल और परशुराम की सहायता से बूथ कैप्चर करवाते हैं। वे डाकुओं को पालते-पोषते हैं और उनका इस्तेमाल करते हैं। विरोधी पार्टी द्वारा पोषित डाकू परेमा के खिलाफ़ वारंट निकलवाते हैं। यही भारतीय लोकतंत्र का दुर्भाग्य है। डॉ. संतोष रघुनाथराव रायबोले लिखते हैं-'' 'जंगल जहाँ शुरू होता है' राजनीति के अपराधीकरण और अपराध के राजनीतिकरण की औपन्यासिक विकृति है। यहाँ जंगल स्थूल से ज़्यादा एक मेटाफर है-बाहर से ज़्यादा अंदर का जंगल।''[7] डाकू परशुराम राजनीति के अपराधीकरण का उदाहरण है। वह चुनाव जीतकर विधायक बन जाता है। वह अपने दल-बल के साथ मुरली पांडे के माध्यम से डीएसपी कुमार को धमकी देता है। लोकतंत्र के माध्यम से चुने हुए डाकुओं-अपराधियों के समक्ष सरकारी व्यवस्था और कुमार जैसे ईमानदार पुलिस अधिकारी की बेबसी को भी गहराई से रेखांकित करने का कार्य संजीव इस उपन्यास में करते हैं।

आज भी भारत के सुदूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों में अंधविश्वास का बोलबाला है। 'जंगल जहाँ शुरू होता है' में भी थारू जनजाति के बीच प्रचलित अंधविश्वासों एवं उनकी मान्यताओं का चित्रण हुआ है। अधिकांश आदिवासी समुदायों की तरह थारूओं में भी भूत-प्रेत, जादू-टोना और मंत्र का बोलबाला है। बिसराम थारू अपनी बेटी को साँप काटने पर अस्पताल की जगह ओझा के पास ले जाता है। लड़की के मरने के बाद भी एक आदमी कहता है-''हिम्मत हार गइल-अ! अरे मंतर से मुअल आदमी भी ज़िदा हो जाता है। राम-राम कर-आ!''8 थारू समाज में प्रचलित अंधविश्वास उनके पिछड़ेपन का प्रमुख कारण है। इसी प्रकार, दुसाध समाज के द्वारा 'बराह पूजा' का आयोजन किया जाता है जिसमें देवता को खुश करने के लिए भगत द्वारा सुअर के बच्चे की बलि दी जाती है।। भगत हैरतअंगेज करतब दिखाकर लोगों पर अपना प्रभाव जमाता है। भगत पूरे पांड़ेपुर गाँव को अपनी मंत्रशक्ति से बाँधना चाहता है। डीएसपी पाण्डे भी अपनी हर समस्या का समाधान तांत्रिक व्योम बिहारी के माध्यम से करता है। निराशा और उदासी के क्षणों में पांडे कुमार को भी व्योम बिहारी के पास ले जाता है। प्रदेश का मुख्यमंत्री भी व्योम बिहारी की सलाह पर ही चलता है। इन घटनाओं के माध्यम से यह स्पष्ट करना भी लेखक का उद्देश्य रहा है कि हमारे समाज में अंधविश्वास की जड़ें कितनी गहरी हैं।

उपन्यास की मुख्यकथा के साथ-साथ अन्य कथाओं के माध्यम से बेतिया की आदिवासी एवं अन्य स्त्रियों की स्थिति चित्रण है। बिसराम की पत्नी, मलारी, सोखाइन आदि साधारण स्त्रियाँ शोषित एवं उपेक्षित हैं। बिसराम की पत्नी का चौतरफा शोषण होता है। वह डाकू परशुराम के भय से उसका और उसके साथियों का खाना अपने घर से बनाकर भेजती है। इसी अपराध में पुलिस उसे उठाकर ले जाती है। पूछताछ के नाम पर उसकी पिटाई की जाती है और रात-भर थाने में रखा जाता है। वहाँ पुलिस के लोगों द्वारा उसका यौन-शोषण भी होता है। इस घटना के बाद वह मृतप्राय-सी हो जाती है। बिसराम और काली की बहन मलारी डाकू और पुलिस-दोनों द्वारा शोषित-प्रताड़ित होती है। काली की पत्नी को औरतों का व्यापार करने वाला दलाल जोगी बेच देता है। कुल मिलाकर, यह उपन्यास किसी-न-किसी रूप में नारी के शोषण और उनकी दुर्दशा को भी रेखांकित करता है। स्त्रियों, विशेषकर

थारू और दलित नारियों पर रोंगटे खड़े कर देने वाले कई दृश्य इस उपन्यास में हैं। सुन्नर पांडे की पत्नी इसका दृष्टांत है। वह अपने ही घर में काम करने वाली फेंकन दुसाध की पत्नी का बलात्कार अपने भाई से करवाती है। मकेश्वर रजक का कहना है- ''काली अपनी ही पत्नी का बलात्कार करता है। जोगी अपनी ही बेटी को मलिकार के हाथों बेचने के लिए बाध्य हो जाता है। मलारी इस उपन्यास की एक ऐसी स्त्री है जो डाकू और पुलिस दोनों के द्वारा शारीरिक शोषण का शिकार होती है। क्या एक औरत की यही नियति है?''[9]

शोषण के विविध रूपों की व्याख्या 'जंगल जहाँ शुरू होता है' में है। उपन्यास शोषण की कई परतों को उद्घाटित करता है। मंत्री दुबे अपनी बेटी की शादी में डीआईजी, एसपी, डीएसपी जैसे अधिकारियों का इस्तेमाल घरेलू व्यवस्था देखने के लिए करता है। वह डाकुओं का भी इस्तेमाल चुनाव के समय करता है। दुबे के कारण ही डाकू गोपाल और बिन्दा मारे जाते हैं। सुलेमान खाँ जैसे ठेकेदार, चन्द्रदीप सिंह और ललन बाबू जैसे सामंत और ज़मींदार भी आम थारूओं का भरपूर शोषण करते हैं। इसका सबसे अधिक भुक्तभोगी काली है। एक मज़दूर के रूप में काली के अनुभवों का चित्रण करते हुए संजीव लिखते हैं-''महीने-भर नहर पर काम करता रहा। पैसे माँगने पर टरकाया जाता रहा और जब जिद कर बैठा तो ठेकेदार ने हाथ ही छोड़ दिया उस पर। किसी ने भी उसका साथ न दिया। उलटे मेठ उसी को भला-बुरा कहने लगा,उसे ही माफी माँगनी पड़ी।''[10] परिस्थितिवश, चन्द्रदीप सिंह जैसे लोगों का भी शोषण होता है। पूरा तंत्र 'जंगल तंत्र' में तब्दील होते देखा जा सकता है। शोषण के विभिन्न रूप प्रत्यक्षतः दृष्टिगोचर हैं। यहाँ तक कि डीएसपी कुमार भी सरकारी मशीनरी द्वारा शोषित है। 'आपरेशन ब्लैक पाइथन' में वह जी-जान से मेहनत करता है जबकि नक्कारा पुलिस अधिकारी पांडे को मेडल मिलता है। कुमार को सबके सामने मुख्यमंत्री की लताड़ सुननी पड़ती है सो अलग। सम्पूर्ण उपन्यास में, शोषण का एक चक्र घूम रहा है। इसकी लपेट में कब कौन आएगा,कहना कठिन है।

आज़ादी के कई दशक बीत जाने के बाद भी लोकतंत्र की पहुँच सामान्य मनुष्य तक नहीं हो सकी है-इस तथ्य का रहस्योद्घाटन 'जंगल जहाँ शुरू होता है' में हुआ है। उपन्यास में स्पष्ट हुआ है कि 'जनतंत्र' अब 'जंगल तंत्र' में तब्दील हो चुका है। परशुराम जैसे डाकू विधायक चुने जा रहे हैं। उपन्यासकार की दृष्टि में, लोकतंत्र विफल हो गया है। सत्ता और सरकारी नौकरशाही के नाम पर एक ऐसी सुविधाभोगी पीढ़ी तैयार हो रही है जिसका उद्देश्य ही सामान्य जन का शोषण है। डॉ. राहुल सिंह के शब्दों में-'' 'जनतंत्र' में 'जन' बड़ा है या 'तंत्र' के सवाल पर संजीव भारत के लोकतंत्र के दावों और राष्ट्र राज्य की अवधारणा की चिन्दी-चिन्दी उड़ाकर रख देते हैं। .....'जंगल जहाँ शुरू होता है' हमारे समय के एक रूपक में तब्दील होने लगता है। हमारे आस-पास और अपने भीतर उग आये जंगल की ओर हमारा ध्यान जाता है और हम पाते हैं कि 'जंगल यहाँ शुरू होता है', हमारे आस-पास से। और पूरा देश एक मिनी चंबल में तब्दील हो जाता है।''[11]

भाषा और शब्द-प्रयोग की दृष्टि से भी, 'जंगल जहाँ शुरू होता है' एक सफल प्रयोग है। सम्पूर्ण उपन्यास में भाषा की गतिशीलता देखते ही बनती है। भोजपुरी मिश्रित भाषा और विशेष लहज़े के साथ स्थानीय शब्दों के इस्तेमाल के कारण उपन्यास आद्यन्त पाठकों को बाँधे रखता है। ऐसा लगता है, संपूर्ण पश्चिमी चंपारण उपन्यास में उतर आया है। यह उपन्यासकार की शिल्प-कुशलता ही कही जाएगी कि इतनी गहराई से शब्दों, संवादों और कहावतों-मुहावरों की अदायगी की गई है। उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

1. ''हजूर, हमरा नाम पारबती है। जात से कहार हैं। इस गेस्ट हौस के चौकीदार हैं साहेब! हमरा से जो सेवा बनेगा, उठा नई रखेंगे हजूर।''[12]
2. ''अब मने कि बाघ तो बाघ न है हजूर, कोई गरीब-गुरबा हरिण तो नहीं न! रानी लोग का शिकार करेंगी।''[13]

भोजपुरी में रचे-बसे अंतरंग व्यक्ति की तरह संपूर्ण उपन्यास भोजपुरी मिश्रित बोली-बानी में आकंठ डूबा हुआ है। इस प्रसंग में, यह कथन सत्य प्रतीत होता है-'' 'जंगल जहाँ शुरू होता है' संजीव की धाकड़ रचना है। धाकड़ इसलिए कह रहा हूँ कि यह अकेले बहैसियत उपन्यासकार उनकी धाक जमाने के लिए काफी है।....कहानी की गति आद्यन्त पाठकों को बाँधे रहती है। विश्वसनीयता और कथात्मकता के बीच संतुलन के जिस निर्वाह का अभाव संजीव के पिछले उपन्यासों में दिखता रहा है, वह यहाँ सिरे से गायब है।''[14]

इस प्रकार, इस शोध-आलेख के आधार पर निष्कर्षतः कुछ बातें स्पष्टतः कहीं जा सकती हैं। प्रथम, यह कि 'जंगल जहाँ शुरू होता है' सिर्फ़ ऐसी रचना नहीं है जिसे पढ़ कर विस्मृत कर दी जाय। उपन्यास के कथ्य की गत्यात्मकता और शिल्प की सजगता इसे अविस्मरणीय बनाती है। रेणु के 'मैला आँचल' और श्रीलाल शुक्ल के 'राग दरबारी' की तरह यह लम्बे समय तक याद रखी जाने वाली कृति है। द्वितीय, इस उपन्यास में कई स्थलों पर संजीव हमें चौकाते हैं। कारण, कथ्य-शिल्प का अनोखापन एवं आद्यन्त पठनीयता है। उपन्यासकार की गहराई, सूक्ष्मता और परकाया प्रवेश वास्तव में हमें कायल बना देता है। तृतीय, यह बात उभर कर आती है कि विगत दो-तीन दशकों में राजनीति के अपराधीकरण में तेज़ी आई है। सत्ता और व्यवस्था के दुरुपयोग के कारण विकास, समानता और न्याय के समुचित लाभ से आज का साधारण जन वंचित है। चतुर्थ, थारू जैसी जनजाति के लोग सामाजिक, आर्थिक एवं कई स्तरों पर पिछड़े हैं। ऐसे लोगों में शिक्षा और जागरुकता की अधिक आवश्यकता है ताकि ये अपने जीवन की कठिनाइयों को कम कर सकें। पंचम, पुलिस-प्रशासन को संवेदनशील होने के साथ सहयोगी रवैया अपनाने की ज़रूरत है तभी उनमें व्यवस्था के प्रति विश्वास कायम किया जा सकता है। तभी अपराध भी कम होंगे और डाकू समस्या का समाधान स्वतः होने लगेगा।

****

संदर्भ-सूची

1. संपादक डॉ. गिरीश काशिद, कथाकार संजीव, शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण-2019, पृष्ठ- 308
2. संजीव:जंगल जहाँ शुरु होता है, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000, पृष्ठ-202
3. संपादक डॉ. गिरीश काशिद, कथाकार संजीव, शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण-2019, पृष्ठ-308
4. संजीव : जंगल जहाँ शुरु होता है, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000, पृष्ठ-21
5. संपादक शिव कुमार यादव, निशांत, 'सहयोग' पत्रिका,बर्नपुर,पश्चिमी वर्धमान (प.बं.),अंक-1,मई 2021, पृष्ठ-149
6. संजीव:जंगल जहाँ शुरु होता है, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000, पृष्ठ-135
7. डॉ. संतोष रघुनाथराव रायबोले, संजीव के कथा-साहित्य में सर्वहारा समाज, सारस्वत प्रकाशन, मुजफ्फरपुर, प्रथम संस्करण-2016, पृष्ठ-81
8. संजीव : जंगल जहाँ शुरु होता है, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000, पृष्ठ-21
9. संपादक शिव कुमार यादव, निशांत, 'सहयोग' पत्रिका,बर्नपुर,पश्चिमी वर्धमान (प.बं.), अंक-1,मई 2021, पृष्ठ-194
10. संजीव:जंगल जहाँ शुरु होता है, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000, पृष्ठ-83
11. डॉ. राहुल सिंह, अन्तर्कथाओं के आइने में उपन्यास, भारतीय ज्ञानपीठ नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण-2018, पृष्ठ-106
12. संजीव:जंगल जहाँ शुरु होता है, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000, पृष्ठ-11
13. वही, पृष्ठ-12
14. डॉ. राहुल सिंह,अन्तर्कथाओं के आइने में उपन्यास,भारतीय ज्ञानपीठ नयी दिल्ली,प्रथम संस्करण-2018, पृष्ठ-106

महत्वकांक्षाओं की उड़ान कितनी??

सरोज राम मिश्रा 'प्रकृति'
नोएडा, इंडिया Mo.9871145370

उद्देश्य – अवसाद के प्रति समाज में चेतना व जागरूकता जगाने का प्रयास मात्र।

महत्वकांक्षाओं की उड़ान कितनी??

मैं हार गया! मैं किसी काबिल नहीं हूँ! मेरे सारे सपने टूट गए! लोग क्या कहेंगे?

किसी व्यक्ति के अचेतन मन में उठने वाले इस तरह के प्रश्न एंग्जायटी / दुष्चिन्ता को जन्म देता है। धीरे धीरे यही व्यग्रता अचेतन मन से उठकर चेतन मन पर हावी हो जाती है। ऐसे में यदि व्यक्ति अपने भावों व विचारों में सामंजस्य नहीं कर पाता और लंबी अवधि तक अपनी उलझन से संघर्ष करता रहता है तो यह भयंकर खतरे का सूचक है। इस मेंटल **डिसऑर्डर** को मनोवैज्ञानिक व मनोचिकित्सक **डिप्रेशन** कहते हैं। इस सिंड्रोम में रोगी समझने की शक्ति खो देता है। जिससे हताश मन इस बात का सहजता से आकलन नहीं कर पाता कि सफलता-असफलता जीवन का एक पड़ाव है; पूरी जिंदगी नहीं!। सपना, उम्मीद जीवन में खुशियाँ भरने वाले इंद्रधनुषी रंग हैं। जिससे इंसान में एक नई ऊर्जा का संचार होता है। पर एक सपने के टूट जाने पर जिंदगी खत्म नहीं हो जाती। शेष और रंग भी तो हैं जीवन को सुंदर गढ़ने के लिए। अपने असंतोष के चलते वह इस बात को आँक नहीं पाते कि महत्वकांक्षाओं की उड़ान आखिर कितनी ऊँची हो? अथवा अपने सपने की पूर्ति के लिए उसके द्वारा किया गया प्रयास कितना सार्थक था?

छठी सदी के भारतीय दार्शनिक और बुद्धिजीवी आदि शंकराचार्य ने कहा कि ''अल्पकालिक वस्तुओं के प्रति उदासीनता और आंतरिक चेतना के साथ संबंध ही सच्ची प्रसन्नता देता है।''

पर क्या आत्मिक प्रसन्नता सब समझ पाते हैं? आज के बाजारी युग में जिंदगी की जरूरत बस रोटी, कापड़ा, और मकान ही नहीं है 'थोड़ा और चाहिए की भूख...' सुरसा के मुहँ की तरह बढ़ती जा रही है। चकाचौंध से भरी जिंदगी पाने की चाह में कई बार हम बिना विचार विमर्श किये, बिना अपनी काबलियत जाने कूद पड़ते हैं होड़ में। और दूसरों की रफ्तार में कदम से कदम मिलाकर दौड़ने की कोशिश में अपनी जिंदगी की रफ्तार तेज करते जाते हैं। इस अंधी दौड़ में कुछ एक लोगों की लालसाएं पूरी हो भी जाती हैं पर कइयों के इस अंतहीन दौड़ में अचानक एक ब्रेक लग जाता है। जिंदगी रुक जाती है और जिंदगी की पूंछ पकड़े हम चारों खाने चित्त हो जाते हैं। अब उनका समाना होता है अपनी क्षमता लिए जमीनी हकीकत से! अहम के चलते अपनी इस हार को हम सरलता से पचा नहीं पाते हैं और मायूसी के गहरे मंजर में डूबते हुए वे अपने ही नकारात्मक ख्यालों का दर्द भरा चक्रव्यूह रच अपनों से, मित्रों से, और अपने परिवेश से कटते हुए 'अकेलापन' अपना लेते हैं। स्वयं को अकेला मानना उन्हें भीतर ही भीतर **खोखला** करता जाता है। दुनिया से उनका विश्वास उठ जाता है। अपनी इस बेचैनी को वह कमजोरी मानते हैं इसलिए किसी से भी साझा करते हुए घबराते हैं कि 'कहीं उसकी बातें खुल न जाए'। 'लोग उसे 'निरर्थक' न समझे।' मैंने स्वयं ऐसे रोगियों से बातचीत की हैं जो अपनी व्यक्तिगत बात बताते हुए कतराते हैं। मुझसे कहते हैं कि "अगर मैं बता दूँगा तो दुनिया मुझपर हँसेगी ?" अक्सर ही ऐसे रोगी मानते हैं कि ''मेरी जिंदगी में अब कुछ बचा नहीं'' यह एक ऐसा खतरनाक अंतरदवंद है जिससे छुटकारा पाने के लिए आखिरकार वे खुदकुशी का जोखिम उठाते हैं!

2019 में आई कोविड-19 ने लोगों के मानसिक दशा पर आघात किया है। इससे **डिप्रेशन** और आत्महत्या के मामलों में और भी इज़ाफ़ा हुआ है। कोरोना ने मौत का तांडव कर विश्व भर में सूदक लगा दिया था। महामारी की तीन लहरों में न जाने कितने संक्रमित हुए, कितने अपने इस संसार से अलविदा कह गए। ऐसे में, मनोवैज्ञानिक दबाव के चलते एक ही घर में रहने वाले सदस्य साथ साथ रहते हुए इंटरनेट में सिमट गए थे। इस दौरान इंटरनेट से जुड़ना आवश्यक व मजबूरी थी और अब आदत बन गई है। इस वर्चुअल संसार ने भी मानसिक कुंठा की समस्या को बढ़ावा दिया है। बेशक इस समय हम कोरोना काल के भयाक्रांत दौर से निकल चुके हैं पर पुरुष, महिला और बच्चे सभी वर्ग के मस्तिष्क में अनजाने के निशाँ आज तक मौजूद है। और फिर से इस महामारी के लौटने की आहट से लोग उद्विग्न हो रहे हैं।

अवसाद के लक्षण-

अनिद्रा, गुस्सा, निराशा, उदासी, रोना, व्यर्थता व घुटन जैसी मानसिक भावनाओं के चलते ऐसे लोग छोटी छोटी बातों से घबरा रहे हैं। कोई बुरी खबर सुनते ही उससे खुद को जोड़ ले रहे हैं। बंद कमरे में, बेसमेंट में, अंधेरे से घबरा रहे हैं। किसी काम में खुद को एकाग्र नहीं रह पा रहे। इसके अतिरिक्त कुछ रोगी भूलने की समस्या का सामना कर रहे हैं। कई बार जागरूकता की कमी और सही समय पर उचित उपचार न मिलना भी अवसाद को बढ़ा रहा है।

आज समूचा विश्व मानसिक अंतरदवंद के शिकंजे में है। **विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO)** की एक चौंकाने वाला रिपोर्ट के मुताबिक 2019 में दुनियाभर में 970 मिलियन लोग मानसिक परेशानी से जूझ रहे थे। पूरी दुनिया में तकरीबन 26 करोड़ लोग अवसाद में हैं। उनमें से हर वर्ष 8 लाख लोग आत्मघात करते हैं यानी हर 40 सेकेंड में एक व्यक्ति खुदकुशी करता है। जिनमें से सिर्फ भारत के इक्कीस फीसद लोग होते हैं। (WHO) के आकड़ें के मुताबिक 15 से 19 वर्ष के किशोरों की मौत की दूसरी सबसे बड़ी वजह सुसाइड है। वर्तमान में हमारे भारत का हर छठा इंसान डिप्रेशन का शिकार है। **भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के मनोचिकिसक विभाग** के अनुसार की हमारे देश में 14 वर्ष से कम उम्र के 50% बच्चे, 25 वर्ष से कम उम्र के 75% युवा अवसाद की चपेट में हैं।

कोविड महामरी में बी बी सी द्वारा अवसाद से संबंधित आकड़ें

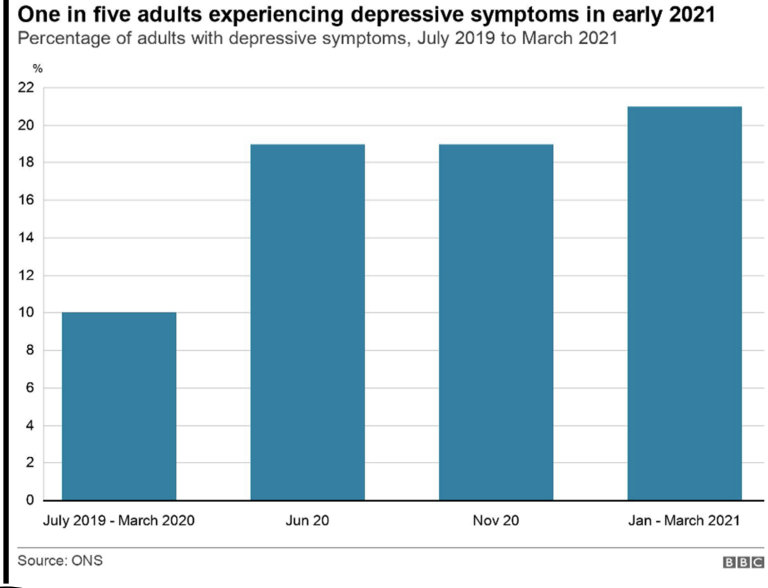

व अनिश्चितता के चलते अवसाद में तेजी से बढ़ोतरी हुई और रोगियों की संख्या बढ़कर कुल जनसंख्या का 19% हो गई।

गहन विश्लेषण करने पर मैं स्पष्ट तौर पर कह सकती हूँ कि कि अवसाद का कारण परिवेश में नहीं बल्कि हमारे भीतर ही है। हमारे शरीर और मस्तिष्क को बहुत सारे हार्मोन संतुलित करते हैं। डोपामाइन व सेरोटोनिन ऐसे ही ब्रेन केमिकल हैं। इन्हीं से हम सोचते-समझते हैं, योजनाएँ बनाते हैं और उनके पूरा होने पर प्रसन्न होते हैं। इनकी कमी से अवसाद और चिंता की समस्या खड़ी हो जाती है।

अवसाद को दूर करने में साहित्य की भूमिका –कहाँ दर्ज हो पाते हैं मन-ही-मन में लड़े जाने वाले युद्ध? पर लेखन संवेगात्मक समायोजन का अनूठा प्रभावी उपाय है। उसके द्वारा चिंता में डूबे हुए उद्वेलित अंतस को, उसकी पीड़ा और संवेदनाओं को रचनात्मक दिशा दिया जा सकता है। अवसादी अपने लेखन के द्वारा अपने मन को एकाग्र करने में न केवल सक्षम हो पाएगा बल्कि लिखने से वह अपने भीतर के जंजाल को, वितृष्णा को वाँछनीय दिशा दे पाएगा। इससे उसके विचार न केवल ***अक्षुण्ण*** रहेंगे वरन उसके तीखे मोहभंग को पढ़कर कुछ अन्य चिंतातुर व्यक्तियों को भी नई सकारात्मक दिशा मिलेगी।

इसके अतिरिक्त कुछ सूझबूझ / तरीके अपनाकर अवसाद और आत्महत्या के विचार से जूझ रहे रोगी को सामान्य बनाया जा सकता है

(1) परिवार और प्रेम- यदि आपके परिवार का कोई सदस्य किसी भी वजह से परेशान है या सदैव मानसिक दबाव में रहता है । तो उसपर नाराज होने, झिड़कने व उसका दोष बताने से बचें। उससे प्रेम जताए। उसके साथ रहते हुए उसके भावों को सुने। इससे उसे अपनी आदतों को बदलने में सहायता मिलेगी।

(2) चिकित्सक - डॉ. के परामर्श से दिमाग की कुछ ग्रंथियों को दवाइयों से आराम दिया जाता है। इससे मस्तिष्क पूरी तरह से शांत हो जाता है। पर इन दवाइयों के दुष्प्रभाव भी (साइड इफेक्ट) हैं। लंबे समय तक इन्हें लेने पर शरीर पर इनका प्रभाव समय के साथ कम होता जाता है। और समस्या पुन: उत्पन्न हो जाती है।

(3) पर्याप्त नींद- शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य (**मेंटल हेल्थ**) के लिए रोजाना 6-8 घंटे की नींद जरूर लेनी चाहिए। इससे मानसिक विकार उत्पन्न नहीं होता।

(4) आहार- स्वस्थ शरीर के साथ साथ मन को शांत व स्थिर बनाए रखने के लिए हर दिन हमें आहार में ऐसी चीजों को शामिल करना चाहिए जो हमारी सेरोटोनिन न्यूरोट्रांसमीटर को बढ़ाकर मूड ठीक रखते हैं। डार्क चॉकलेट के सेवन के साथ साथ अपने आहार में विभिन्न प्रकार के फल, पालक व हरी सब्जियां, माँस, मछली के अतिरिक्त एमीनो एसिड बढ़ाने वाले नट्स और सीड्स जैसे- कद्दू के बीज, तिल और सूरजमुखी के बीज, बादाम, काजू, मूंगफली, और अखरोट भी लेने चाहिए।

(5) अकेला न छोड़ें- मनोचिकित्सक का मानना है कि मानसिक परेशानी झेल रहे रोगी सदैव अपने को नुकसान पहुँचाने की फिराक में रहता है। अत: इन्हें ज्यादा देर तक अकेला न छोड़ें।

(6) संवाद करें - मेरा अनुभव है कि उलझन में डूबे रोगी का मित्र बने । बातचीत करें, हँसी–ठिठोली करें। इससे वह आपके साथ सहज होते हुए अपनी परेशानियाँ आपसे खुल कर कहेगा।

(7) सकारात्मक परिवेश- कई बार स्वस्थ्य इंसान में भी बुरी खबर सुन सुन मनोविकार उत्पन्न हो जाता है । विशेषज्ञों का मानना है कि अवसादी को बुरी खबर व दुखद घटना को सुनने से रोकते हुए सकारात्मक परिवेश देना चाहिए। अच्छी किताबें, प्रेरणादायी फिल्में, प्रकृति के बीच घूमना-फिरने से वह अपने बारे में बने यथार्थ पूर्व कल्पनाओं में परिवर्तन लाएगा।

(8) कलात्मक बने- मेरा अनुभव हैं कि विभिन्न कलाएँ जैसे रेखांकन, पेंटिंग, नृत्य, नाटक आदि में भागीदारी से रोगी में नवीन ऊर्जा का संचार होता है। उससे उसे उन कार्यों की करने की प्रेरणा मिलेगी जिसको करने से उसे खुशी मिलती हो।

(9) योग एवं समाधि - मनोविकार को नियंत्रित के लिए योग और साधना भी बहुत लाभकारी है। इससे आंतरिक संघर्ष और व्यक्तिगत तनाव कम होगा। तन-मन के सामंजस्य से रोगी में अपने बलबूते पर बहुत कुछ करने का सामर्थ्य बढ़ता है। भ्रामरी और योग निद्रा इसमें सहायक है।

(10) संगीत सुने- मनोंचिकित्सकों का मानना है कि अच्छा संगीत डोपामाईन के स्तर को बढ़ाने में मदद करता है। हमारी भारतीय शास्त्रीय संगीत में बहुत सारे ऐसे राग हैं जो दिमाग को शांति देने और खुशियों की अनुभूति बढ़ाने में सहायक हैं।

(11)शराब ,तंबाकू, कैफीन व ड्रग के प्रयोग से बचें। यह तुरंत तो मूड को ठीक करते हैं पर लंबी अवधि में नुकसान पहुँचाने हैं।

(12)- सोशल मीडिया व स्क्रीन टाइम का सीमित उपयोग करें।

इस तरह के कुछ उपायों से रोगी में आत्मबोध जगाकर उसे स्वयं के प्रति उदार, करुणामय व प्रेम से ओत प्रोत किया जा सकता है । खुद से प्रेम होते ही वह अपने आसपास के परिवेश से जुड़ने लगेगा। दुनिया उसे अच्छी लगने लगे गी। उसमें जीवन जीने की ललक बढ़ेगी । वह सभी को अपना मानने लगे गा। इससे वह अपने भीतर छिपे क्षुब्धता उत्पन्न करने वाले भावों को हमारे साथ अभिव्यक्त जरूर करेगा जिससे उसका सांवेगिक दबाव कम होगा। परिणामत: उसकी मानसिक बीमारी की गंभीरता भी कम हो जाएगी।

''दूसरों को प्यार करना जरूरी है, लेकिन खुद को प्यार करना बहादुरी है। इसलिए पहले खुद को प्यार करें। किसी और के लिए लड़ाई करने से पहले आपको खुद के लिए लड़ना होगा।''- सरोज मिश्रा 'प्रकृति'

उपसंहार 'बहुत ऊंचा लक्ष्य', ज्यादा की इच्छा' और ' आगे जाने की तमन्ना' रखना कोई खराब विचार नहीं है क्योंकि यही सोच हमारे जीवन की दिशा निर्धारित करता है। बस जरूरत है यह जानने की कि मेरे लिए क्या सही है? मेरी खुशी का पड़ाव क्या है? आवश्यकता है अपनी इच्छाओं को संतुलित करने की। हम सबको यह समझना होगा कि जब भी हमारी जिंदगी में उठा पटक होती है। तब हमें ठहर कर आत्मावलोकन की आवश्यकता होनी चाहिए। और तब जिंदगी को पुनः पटरी पर लाने के नए तरीके खोजने चाहिए। कुछ भी स्थाई नहीं है; न तो सफलता का जश्न... न ही असफलता का दुःख ..! दिन ढलने पर ही अगले दिन की तैयारी होती है। सूर्य का ढलना उसके अगले दिन के प्रगटीकरण का ही संकेत है। जरूरी है तो हमारी चेतना का बने रहना उसकी उपस्थिति के बिना स्वयं के अस्तित्व का भान भी असंभव है। हम सभी को जन्म से स्वयं के लिए और स्वयं से जुड़े संसार के प्रति एक जिम्मेदारी दी गई है, सर्वप्रथम इसे पहचानना और तत्पश्चात पूरे मनोयोग से उसे निभाना ही जीवन का वास्तविक उद्देश्य है।

****

संदर्भ "-

1. सभागार में प्रस्तुति हेतु एक ppt तैयार की गई है ।
2. (NMHS) (national mental health survey)
3. प्रभात खबर अखबार
4. https://ndtv.in/health/mental-health-mental-health-can-affect-the-health-of-the-brain-take-care-of-both-like-this-hindi-3572493
5. https://grehlakshmi.com/hindi-health/tips/manochikitsa-ke-saarthak-uddeshy
6. अवसाद पर मेरे द्वारा लिए गए कई साक्षात्कार। (अवसादी- पंकज पुष्कर)
7. WHO से प्राप्त आकड़ें। (गूगल)

मनोविज्ञान, योग और भाषा - एक अनुशीलन

सुश्री. चंद्रकला देवाराम शाहू
पी-एच.डी. शोधार्थी (अनुवाद अध्ययन)
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा, महाराष्ट्र

मनोविज्ञान विशेष रूप से मानव मन की जटिलता का गहराई से अध्ययन करने का एक विशिष्ट शास्त्र है। जब तक मानव मन सरल है, तब तक मानव जीवन भी सरल और सहज है। शायर साहिर लुधियानवी ने इसी दार्शनिकता का परिचय अपनी इस रचना में श्रीमद्भगवद् गीता का मानव मन में चल रहे आत्मा और परमात्मा संबंधित द्वंद को निरुपित करते हुए कहा है -

"प्राणी अपने प्रभु से पूछे किस विधी पाऊँ तोहे, प्रभु कहे तू मन को पा ले, पा जाएगा मोहे।
तोरा मन दर्पण कहलाए, भले बुरे सारे कर्मों को देखें और दिखाए
मन ही देवता, मन ही ईश्वर, मन से बड़ा न कोय, मन उजियारा जब जब फैले, जग उजियारा होय
इस उजले दर्पण पर प्राणी धूल न जमने पाये, तोरा मन दर्पण कहलाए
सुख की कलियाँ, दुःख के काँटे, मन सब का आधार, मन से कोई बात छूपे ना, मन के नैन हज़ार
जग से चाहे भाग ले कोई, मन से भाग न पाये, तोरा मन दर्पण कहलाए
तन की दौलत ढ़लती छाया, मन का धन अनमोल, तन के कारण मन के धन को मत माटी में रोल
मन की कदर भूलाने वाला, हीरा जनम गंवाए, तोरा मन दर्पण कहलाए

रचयिता साहिर लुधियानवी शायर की इस रचना में मन की शक्ति का ईश्वर के साथ अद्भुत जुड़ाव है। प्राणी शब्द जीव से संबंधित है। ईश्वर से जुड़ाव का उपाय मनुष्य पूछता है, तब प्रभु कहते हैं कि अगर तुम मुझे पाना चाहते हो तो तुम अपने मन को जीत लो, तो मुझे पा लोगे। मन को शायर ने दर्पण कहा है, जो मानव के अच्छे-बुरे सभी कर्मों को प्रदर्शित करता है। मन सर्वोच्च शक्ति है। समस्त ब्रह्मांड में मन से बड़ा कोई नहीं है। मन शुद्ध हो तो कोई मैल अपने अंतर-आत्मा पर नहीं जम सकता। सुख और दुःख का आधार मनःस्थिति पर निर्भर रहता है। चाहे जीवन में फूलों की सेज हो या काँटों भरा जीवन पथ, लेकिन मन की स्थिति ही है, जो जीवन में सुख या दुःख का निर्माण करती है। जीवन की गोपनीय से अति गोपनीय हकीकत मन से छुप नहीं सकती क्योंकि मन की आँखें हज़ार हैं। अगर मानव यह समझता है कि मैं जो भी कर रहा हूँ, उसे कोई नहीं देखता है, आप अपने आप से भाग कर कहाँ जाओगे ? अपने मन से कोई नहीं भाग सकता। मन ही है आत्मा और परमात्मा, आप उससे भाग कर कहाँ जाओगे ? तन यानी शरीर नाशवंत है, वक़्त के साथ-साथ वह भी जीर्ण-क्षीर्ण होगा ही। मन है वह आत्मा ही है, जो परमात्मा का एक अंश है, वह अमर है। मन का धन अनमोल है, जीवन के अंत में मानव के साथ उसके कर्म ही जाएँगे, आज तक किसी के भी साथ इस दुनिया की कोई भी दौलत किसी के साथ न गई है और न जाएगी। अंत में शायर कहते है कि तन यानी शरीर का धन नाशवंत है, उसके खातिर मन की दौलत जो अनमोल है, उसे माटी में न रोल। मन की कदर भूलाने वाला हीरा जनम गंवाए। मनुष्य योनी में जन्म 84 लक्ष योनियों के चक्कर काटने के बाद ही मिलता है, दुन्यवी धन दौलत में सब से अनमोल हीरे की गणना होती है, वैसे ही मनुष्य जन्म अति कीमती हीरे जैसा ही है। यही ही एक अवतार है, जिसमें अपना अच्छा-बुरा, सोचने-समझने की बुद्धि, शक्ति परमपिता - परमात्मा ने मनुष्य को ही प्रदान की है।

आहार निद्रा भय मैथुन च समन्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषः धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ॥

अर्थात् आहार, निद्रा, भय और मैथुन - ये तो इंसान और पशु में समान है इंसान में विशेष केवल धर्म है, अर्थात् बिना धर्म के लोग पशु तुल्य है भारतीय संस्कृति और दर्शन की प्रमुख संकल्पना है धर्म। 'धर्म' शब्द का पश्चिमी भाषाओं में कोई तुल्य शब्द पाना बहुत कठिन है। साधारण शब्दों में धर्म के बहुत से अर्थ हैं, जिनमें से कुछ ये हैं – कर्तव्यनिष्ठ, अहिंसा, न्याय, सदाचरण, सद्गुण आदि।

शेष सभी योनियों में प्राणी, आहार, निद्रा, भय और मैथुन में आसक्त रह कर अपने जीवन चक्र को चलाते ही रहते हैं। मनुष्य भी वही करता है, लेकिन सभी प्राणियों में जो नहीं है, वह उसके पास है। ***That is the power of thinking positively or negatively to understand the wellbeing of self, which leads one to the supreme goal of the life - reuniting with the Super Soul at last.*** योग का भारतीय जीवन से गहरा संबंध है, मेरा सरोकार है, समाज से - मानसिक, आध्यात्मिक, पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक, आर्थिक और शैक्षिक। भारतीय जीवन में योग के महत्व को अनदेखा नहीं कर सकते। सादा जीवन, उच्च विचार और जीवनचर्या।

योग का अर्थ : युज् समाधौ - दिवादिगणीय युज् धातु का अर्थ है, समाधि। समाधि का प्रकृति प्रत्यय अर्थ है, सम्यक् स्थापन। अर्थात् जब प्रगाढ़ संयोग सुषुम्ना में स्थिर ब्रह्मनाड़ी से होता है, वह समाधि की स्थिति होती है। दूसरे अर्थ में समाधि की सिद्धि के लिए जुड़ना।

युजिर योगे - रुधादिगणीय युज् धातु का अर्थ है, जुड़ना, जोड़ना, मिलना, मेल करना। युजिर योगे का अर्थ है, संयोग करना। अर्थात् इस दुःख रूप संसार से वियोग और ईश्वर से संयोग का नाम ही योग है। जिसका वर्णन श्रीमदभगवद् गीता में इस प्रकार किया गया है -

'तं विद्याद् दुःख संयोग वियोग योग संज्ञितम्।'

गीता 6/23अर्थात् इस दुःख रूप संसार के संयोग से रहित होने का नाम ही योग है। वह साधन जिसके द्वारा परमात्मा के साथ ज्ञानपूर्वक संयोग है, जीवात्मा का। इस प्रकार योग का अर्थ जीवात्मा का परमात्मा के साथ संयोग है। युजसंयमने - चुरादिगणीय - चुरादिगणीय युज् धातु का अर्थ है, संयमन् अर्थात् मन का संयम या मन का नियमन। इस प्रकार युज् संयमने का अर्थ है, मन का नियमन करना ही योग है। मन को संयमित करना ही योग है, तथा यह मन को नियंत्रित करने की विद्या योग ही है। इस प्रकार योग का अर्थ - योग साधनाओं को अपनाते हुए मन को नियंत्रित कर, संयमित कर, आत्मा का परमात्मा से मिलन ही योग है।

संसार में ईश्वर, जीव, प्रकृति - ये तीन पदार्थ सदा रहने वाले हैं। इनका कोई आरंभ या अंत नहीं है। ईश्वर के संबंध में ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के विषय में आए हैं। वहाँ देख लेना चाहिए।जीव - सभी योनी में अलग-अलग स्वतंत्र जीव है, वह अनंत है, वही आत्मा है। जीवात्मा सदा रहने वाला है। जीव कर्म करने हेतु स्वतंत्र है, कर्म करने का अधिकार प्राप्त है, लेकिन फल की प्राप्ति ईश्वर के अधीन है। एक ही आत्मा अपने कर्मों के फलस्वरूप मनुष्य शरीर में तथा पशु, पक्षी आदि शरीरों में घूमता रहता है। आत्मा और शरीर का मिलन होना जन्म है और इनका एक दूसरे से बिछड़ जाना मृत्यु है। सांसारिक दृष्टि से जन्म और मृत्यु होता है, यही संसार चक्र निरंतर रहता है, कर्म की गति न्यारी है।प्रकृति - प्रकृति को अंग्रेजी में *matter* कहते हैं। प्रकृति संसार में सदा रहने वाली है, निरंतर अपना स्वरूप बदलती रहती है। जो आज लकड़ी है, आग में जला देने से वह कार्बन, बाष्प

और वायु में बदल जाती है। इसी प्रकार, बदलने वाले सभी पदार्थ प्रकृति कहलाते हैं। आज का विज्ञान केवल प्रकृति को ही अनादि मानता है, परंतु वेद इसके साथ दो और पदार्थों - ईश्वर और जीव को भी अनादि मानता है। मनोविज्ञान *(Psychology)* एक शैक्षिक व अनुप्रयोगात्मक विद्या है, जो प्राणी (मनुष्य, पशु आदि) के मानसिक प्रक्रियाओं *(mental processes)*, अनुभवों तथा व्यक्त व अव्यक्त दोनों प्रकार के व्यवहारों का एक क्रमबद्ध तथा वैज्ञानिक अध्ययन करने का शास्त्र है।
आत्म साक्षात्कार तथा ईश्वर साक्षात्कार तभी संभव है, जब आत्मा में अन्य चारों कोशों को बांधकर अपने कल्याण में प्रयोग करें। जैसे सभी कोशों का अपना-अपना भोजन है, उसी प्रकार से आनंदमय कोश अर्थात आत्मा का भोजन परमात्मा है।
भगवद् गीता के अनुसार -

"योगस्थ कुरु कर्माणि संगत्यकत्वा धनंजय।
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ।।"

गीता 2/48

अर्थात् योग में स्थिर हो कर कर्म फल का त्याग कर, और सिद्ध-असिद्ध में सम होकर कर्मों को कर, यही समता ही योग है।

"बुद्धि युक्तो जहाँ तीहं उभय सुकृत दुष्कृते।
तस्याद्योगाय युज्ज्स्व योगः कर्मसु कौशलम् ।।"

अर्थात् कर्मों में कुशलता का नाम ही योग है। कर्मों की कुशलता का तात्पर्य यह है कि हमें कर्म इस प्रकार से करने चाहिए कि वे बंधन का कारण ना बने। अनासक्त भाव से अपने कर्तव्य कर्मों का निर्वहन करना ही कर्म योग है।

"तं विद्याय दुःख संयोग वियोगं योग संज्ञितम्।
स निश्चयेन योंक्ताव्यो योगो ऽनिर्विण्णचेतसा ।।"

अर्थात् उस योग को उत्साह, श्रद्धा, धैर्य से समाहित चित्त से निश्चय पूर्वक करना चाहिए। इस दुःख रूप संसार के संयोग से रहित है, वह योग है। पातंजल योगदर्शन के अनुसार जिसके जानने से यह संसार जाना जाता है, ऐसे योग शास्त्र को जानने के लिए परिश्रम करना चाहिए।

योग अध्ययन का मुख्य उद्देश्य ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करना है, ऐसे योगियों व ईश्वर भक्तों का निर्माण करना है, जिनका भावनात्मक स्तर दिव्य मानवता से, दिव्य योजनाओं से, दिव्य आकांक्षाओं से उमंगित हो। वे सामान्य - साधारण मनुष्यों की तुलना में कहीं अधिक उत्कृष्ट व् समर्थ होते हैं। ऐसे व्यक्तियों की कार्य क्षमता उच्च स्तर की होकर जीवन दिव्य, उच्च होता है।

योग विद्या के अलग-अलग विषयों पर देखें - यदि हम अष्टांग योग के अंतर्गत देखें तो हम यह पाते हैं कि महर्षि पतंजलि ने अष्टांग योग का उद्देश्य चरित्र की शुद्धि कर स्थूल शरीर के विकर्षणों को दूर करना है। यम, नियम हमारे व्यवहार को, चरित्र को शुद्ध, सात्विक व निर्मल बनाते हैं। व्यवहार शुद्ध हुए बिना किसी भी साधना में प्रवृत्त नहीं हो सकता और नाही मनुष्य का सर्वांगीण विकास होगा। चारित्रिक स्वास्थ्य यम-नियम का मूल उद्देश्य है और शारीरिक स्वास्थ्य आसन-प्राणायाम का मूल उद्देश्य है। प्रत्याहार का मूल उद्देश्य जीवन में संयम है। संयमित जीवन शैली प्रत्याहार द्वारा ही की जा सकती है। धारणा, ध्यान और समाधि का उद्देश्य मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति है। धारणा द्वारा चित्त का बिखराव, भटकाव रोक कर एक स्थान विशेष पर केंद्रित करना ध्यान का उद्देश्य है और समाधि ध्यान की उत्कृष्ट अवस्था है, जिसके द्वारा आत्म साक्षात्कार प्राप्त किया जा सकता है। समाधि की उच्चतम अवस्था में परमात्मा का साक्षात्कार किया जा सकता है। समाधि का उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति है, जो कि मनुष्य मात्र का परम लक्ष्य है। महर्षि पतंजलि कृत योग दर्शन में वर्णित योग सूत्र पर दृष्टि डालें तो योग का उद्देश्य कर्मयोग, भक्तियोग तथा ज्ञानयोग की प्राप्ति है। तप को अपनाकर कर्म करने की प्रवृत्ति होती है। मनुष्य कर्मयोगी बनता है और स्वाध्याय का उद्देश्य है, ज्ञान की प्राप्ति और ईश्वरप्रणिधान का उद्देश्य है, भक्ति की प्राप्ति। इस प्रकार कर्म, ज्ञान, भक्ति का समन्वय मनुष्य के लिए आवश्यक है, जो कि मनुष्य जीवन को उच्च एवं दिव्य बनाता है। योग का उद्देश्य है, क्लेशों जो कि मनुष्य जीवन में कलुषता लाते हैं, दुःख देते हैं, उन क्लेशों को क्षीण कर सर्वांगीण विकास करना। मनुष्य जीवन की आकुलता, कलुषता, पीड़ा, चिंता, तनाव आदि को खत्म कर संपूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति योग का मुख्य उद्देश्य है, जिससे कि संपूर्ण मनुष्य जाति दिव्य शांति एवं समरसता को प्राप्त कर सकें। वही योग क्लेशों को कमजोर कर समाधि की प्राप्ति में सहायक है। जब क्लेशों का पूर्ण रुपेण क्षय हो जाता है, तब समाधि की उच्चतम स्थिति असम्प्रज्ञात समाधि प्राप्त होती है और चित्त अपने मूल कारण प्रकृत्ति में लीन हो जाता है, तब आत्मा अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित होता है और पुरुष के लिए वही स्थिति कैवल्य की है। इस प्रकार योग का उद्देश्य क्लेशों को कम करके कैवल्य की प्राप्ति है।

आधुनिक युग में यदि देखें तो योग का उद्देश्य शारीरिक स्वास्थ्य या मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त करना, धन अर्जित करना, शारीरिक सौंदर्य की प्राप्ति, यश प्राप्ति तक ही सीमित रह गया है, किन्तु ये सभी गौण हैं। सही मायने में, योग का उद्देश्य उस परम तत्त्व की प्राप्ति है। तीन पुरुषार्थ की पूर्ति करते हुए अंततः मोक्ष की प्राप्ति ही योग का उद्देश्य है। मनोविकृति प्रवर्तमान युग की एक बड़ी विडंबना है। मनोविकृति आज की अधिकतर मानसिक, शारीरिक और सामाजिक समस्याओं की जड़ है, उसे हम नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते हैं। मनोविकृति की जननी आधुनिक पश्चिमी खान-पान, आचार-विचार, विकृत दृश्य-श्रव्य सिनेमा और वीडियो और साहित्य अध्ययन एवं संगत का गहरा प्रभाव बच्चों से लेकर बूढ़ों पर भी पड़ता है। मूलतः योग के आलोक में दृष्टिपात करें तो भारतीय जीवन शैली अत्यंत सरल, सहज और उच्च विचारों से प्रभावित आध्यात्मिकता के साथ उच्च स्तरीय जीवन दर्शन की रही है। आज प्रवर्तमान युग के अनेकों प्रलोभनों से अपने आप को और अपनी भारतीय संस्कृति को बचते-बचाते स्वास्थ्य जागृत लोग अपने शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को योग के माध्यम से संरक्षित करने हेतु संनिष्ठ प्रयासरत हैं।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। विश्व के समस्त जीवधारियों में केवल मनुष्य ही संस्कृति का निर्माणकर्ता है। इस विशेषता का मूल कारण है भाषा। भाषा के ही माध्यम से एक पीढ़ी की संचित संस्कृति की अनुभूति भविष्य में आनेवाली पीढ़ियों में हस्तांतरित होती रहती है। प्रत्येक समाज की पीढ़ी का अविरत सांस्कृतिक विकास, देशकाल, धर्म, राजनीतिक बदलाव, नए आविष्कार, मान्यताओं में बदलाव का समाज पर प्रतिबिंब और प्रभाव पड़ता है। संस्कृति सामाजिक परिसर का वह भाग है जिसका निर्माण मानव समाज स्वयं करता है। **ई. बी. टाइलर** के अनुसार संस्कृति उस समुच्चय का नाम है जिसमें भाषा, ज्ञान, विश्वास, कला, नीति, विधि, रीति-रिवाज़ तथा अन्य ऐसी क्षमताओं और आदतों का समावेश रहता है जिन्हें मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में मानता है। योग दुष्प्रवृतियों का दमन नहीं है, अपितु रूपांतरण है। चित्तवृत्तियों के निरोध के साथ ही योग का लक्ष्य सिद्ध होता है। विश्व प्रसिद्ध आधुनिक भारतीय चिंतक - स्वामी विवेकानंद, श्री अरविंद, परमहंस योगानंद, डॉ राधाकृष्णन आदि सभी दार्शनिकों ने योग के संबंध में अपने शब्दों में, अपने विचारों में भिन्नता होने के बावजूद योग की व्यावहारिक उपयोगिता और महत्ता पर एकरूप से सार्वजनिक स्वीकृति दी है। शक्ति का मूल स्रोत योग ही है। शिव की कल्याणकारी प्रवृत्तियाँ भी शक्ति की सहायता के बिना अर्थहीन है। शक्ति सर्वोपरि, श्रेयस्कर एवं अनिवार्य है। 'शक्ति' शब्द शक् धातु से स्त्रीलिंग क्तिन् प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है, जिसके अर्थ हैं - सामर्थ्य, अर्थ बोधकता, देवी या स्त्री देवता आदि।

संस्कृत साहित्य के प्रसिद्ध शब्दकोश 'वाचस्पत्यम्' में इस शब्द की व्याख्या कुल 149 पंक्तियों में की गई है क्योंकि इसकी महत्ता प्राग्वैदिक काल से ही स्वतः प्रमाणित है। ऋग्वेद काल में सूर्य के साथ उषस्, वरुण के साथ वरुणानी, इन्द्र की इन्द्राणी व यम के साथ यमी आदि की उपासना शक्ति के महत्व के जाज्ज्वल्यमान प्रमाण है। यथा - *सूर्यो देविमुषसं रोचमानां मर्यो न योषामभ्येति पश्चात् ... इत्यादि*। कालान्तर में इसी परंपरा के अनुरूप शिव-पार्वती, विष्णु-लक्ष्मी, ब्रह्मा-सरस्वती, राधा -कृष्ण, राम-सीता, प्रकृति-पुरुष, माया-ब्रह्म तथा शची-पुरंदर प्रभृति युग्मों की आराधनाएं भारतीय चिंतन-पद्धति में शक्ति की उपासनागत महत्ता को प्रतिपादित करती रही हैं। तत्पश्चात् ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, भाष्य, सूत्र वार्तिक, पुराणोपपुराण, टीका, वृत्ति, प्रटीका एवं उपवृत्ति वाङ्मय की श्रृंखला में शक्ति के बिना कहीं कुछ भी वर्णित नहीं है। यहाँ तक कि समुद्र मंथन के चतुर्दश रत्नों में भी रंभा, लक्ष्मी व कामधेनु का स्थान सर्वोपरि स्वीकृत रहा है, क्योंकि शक्ति व् शक्तिमान का परस्पर न केवल समवाय संबंध है, प्रत्युत शक्ति शक्तिमानों की शारीरिक शक्ति के दुरुपयोग को बौद्धिक रूप धारण कर रोकती भी है। यही कारण है कि अमृत के विभाजन में छिड़े देवासुर-संग्राम को जब रोकना हुआ, तो सारे त्रैलोक्य को अपने तीन डग से नापने में समर्थ व्यापक भगवान् विष्णु को भी शक्ति किंवा मोहिनी रूप ही धारण करना पड़ा। स्वामी मुक्तानंद अपने पुस्तक 'कुण्डलिनी : जीवन का रहस्य' में कहते हैं - "जिस प्रकार एक नदी लंबे समय तक बहती है, समुद्र में विलीन हो जाती है और समुद्र बन जाती है, वैसे ही जब कुंडलिनी अपना काम पूरा कर लेती है, तो आप पूरी तरह से भगवान में डूब जाते हैं।" योगशास्त्र में 'मंत्रयोग' शब्द यद्यपि विभिन्न स्थानों में विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ है, तथापि यदि हम लोग मंत्रयोग का मुख्य अर्थ 'मंत्र में आश्रय से जीवात्मा और परमात्मा का सम्मिलन' मान लें, तो उसमें कोई आपत्ति न होगी। शब्दात्मक-मंत्र चेतन होने पर उसी की सहायता से जीव क्रमशः ऊपर गमन करते-करते शब्द से अतीत परमानन्द-धाम पहुँच सकता है। वैखरी शब्द से क्रमशः मध्यमा अवस्था को भेदकर पश्यन्ति में प्रवेश करना ही, मंत्रयोग का प्रधान उद्देश्य है। पश्यन्ति शब्द-स्वप्रकाशमान चिदानन्दमय है, चिदात्मक पुरुष ही वही अक्षय और अमर षोड्शी कला है। वही आत्मज्ञान, इष्ट देवता के साक्षात्कार अथवा शब्द-चैतन्य का प्रकृष्ट है। इस अवस्था में पहुँचने पर जीव कृतकृत्य हो सकता है। इसके बाद अव्यक्त भाव अपने आप उदित होता है। यही शब्द की तुरीयावस्था है। इडा-पिंगला की गति रुककर प्राण और मन को सुषुम्ना के अंदर प्रविष्ट होने पर वह नित्य सारस्वत-स्त्रोत का अनुभव करता है। यही क्रमशः साधक को आज्ञा-चक्र में ले जाता है और वहाँ से बिन्दु-स्थान भेदकर क्रमशः सहस्त्रार के केन्द्र में पहुँचा देता है। मंत्र, जिसका जीव निरंतर श्वास-प्रश्वास के साथ जप करता है, गुरुकृपा से प्राण की विपरीत भावपन्न अवस्था में ओऽम मंत्र के रूप में परिणत होता है।

वाणी ही मनुष्य का वास्तविक आभूषण है। वाणी का उच्छृंखल दुष्प्रयोग परिवार, समाज, राष्ट्र और समस्त विश्व में अशांति का दूषित वातावरण सर्जन करता है। हमें अपनी अनर्गल वाणी को नियंत्रित करना चाहिए। बोलने से पहले यदि हम अपनी वाणी को युक्ति युक्त ढंग से, विनम्र होकर प्रयुक्त करेंगे तो जो भी व्यक्ति हमारी बात सुनेगा वह प्रभावित होगा। वाक् संयम जीवन यात्रा का सर्वोत्तम पाथेय है। शांत और अचल मानस से शुद्ध, मधुर, सार्थक वाणी स्फुरित होती है। कुशल वक्ता वही हो सकता है, जो अच्छा विचारक हो। विचारों की परिपक्वता, स्पष्टता, गंभीरता और ओजस्विता के अनुरूप ही वाणी का प्रादुर्भाव होता है। वाणी तभी प्रभावी होती है, जब वह समयानुसार ओजस्व और माधुर्यपूर्ण हो।

कहते हैं कि जैसा आहार, वैसा ही विचार, और विचारों के अधीन ही वाणी, वर्तन और कर्म का प्रादुर्भाव होता है। साथ ही अपने घर के संस्कार और रहन-सहन, जीवन शैली, शिक्षा का स्तर और धार्मिक एवं अध्यात्मिक सोच, संगत और आर्थिक स्तर पर भी भाषा का निर्धारण किया जाता है। सब कुछ होने के अलावा भी अगर मानसिक स्वास्थ्य उत्तम हो तो कैसी भी निम्न स्थिति में हो तो भी व्यक्ति प्रवर्तमान दूषित माहौल में पला-बड़ा हो तो भी जीवन को उच्च स्तर पर ले जाने में सक्षम रहता है।'वाक्भूषणं भूषणम्' वाणी दूषित करने वाले अवगुणों से बचने का सतत प्रयास करना चाहिए। हमें क्या बोलना है ? कैसे बोलना है ? क्यों बोलना है ? कब बोलना है ? कहाँ बोलना है ? किससे बोलना है ? साथ ही कितना बोलना है ? इसका निरंतर ध्यान रखना चाहिए। वाणी की सार्थकता इसी में है कि वह सबको सुख-शांति प्रदान करते हुए सबके मंगल की कामना करें -

ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करें, आपुहि शीतल होय॥

(ऐसी वाणी बोलिए कि मन का अहंकार मिटा कर औरों(सुनने वालों) को शीतल (अच्छी)लगे, और इससे स्वयं भी शीतल (अच्छा)हो जाए वाणी का दुष्प्रयोग जीवन को नर्क समान बना देता है। वाणी अग्नि स्वरूपा है, वाणी ही जीवन को स्वर्ग और नर्क बनाने की क्षमता रखती है। चेहरे को विकृत बनाकर, आग बबूला होकर शब्दों के शोले बरसाना वाणी प्रदूषण है, ऊपर वाला बचाए ऐसे वाणी प्रयोग से। राग, द्वेष और मनोविकारों से मुक्त होने हेतु वाणी और मन का संयम अत्याधिक आवश्यक है। योग से ही मन की प्रसन्नता, सौम्य स्वभाव, मौन, मनोनिग्रह और शुद्ध विचार ये योग के निष्कर्ष के साथ-साथ मन के तपश्चर्या का परिणाम हैं। मौन की प्रायोगिकता से मनोनिग्रह और शुद्ध विचारों का उद्भव होता है।

मनोवैज्ञानिक का कथन है कि हम जो अच्छा या बुरा उच्चारण करते हैं, वैसा पहले मन में सोचते हैं। वह पहले विचार रूप में हमारे ही मन में उदित होता है। अतः अनावश्यक वाचालता से मन निरर्थक विचारों से परिपूर्ण हो उठता है, जो क्षणिक और काल्पनिक विचारों को उत्पन्न कर देते हैं। मौन से वाणी और मन दोनों को शांति प्राप्त होती है। वाणी का संयम करने से मन को शांति प्राप्त होती है। मौन इसलिए कि वाणी के साथ-साथ मन की स्थिरता, मन में व्यर्थ चिंतन का अभाव, आत्म-तत्त्व पर एकाग्रता अनिवार्य है।

योग के संदर्भ में मौन का एक अलग ही अर्थ और स्थान है। मन का शांत हो जाना अर्थात कल्पनाओं की व्यर्थ उड़ान न भरना है। आतंरिक मौन में लगातार शब्द मौजूद भी रहें तो भी, मौन बना ही रहता है। उस मौन में तुम कुछ बोलते भी हो तो, उसका उस मौन पर कोई अंतर नहीं पड़ता। मौन की अपनी ही एक ताक़त होती है, कई स्थानों पर जहाँ शब्द की ज़रूरत नहीं होती है, वहाँ मौन ही काफ़ी है।

मौन ब्रह्माण्ड की भाषा है, कुछ भी बोले बिना बहुत सारी बातें बता देता है मौन। मौन एक सांकेतिक भाषा का स्वरूप है। कई मायने में बहुत कुछ कह जाता है एक आभूषण है। मौन प्रतीक है - शक्ति का, मज़बूरी का, प्रेम का, क्रोध का, प्रतिरोध का और कई अनगिनत, अकथित, अनकहे, अनचाहे, अवांछित मन के भाव और वेदनाओं का। मौन का अर्थ शांति, ख़ामोशी है। आमतौर पर हम 'मौन' का अर्थ होंठों के हलचल को मानते हैं, लेकिन मौन का यह एक बहुत ही सीमित अर्थ है। संत कबीर जी ने कहा है :

"कबीरा यह गत अटपटी, चटपट लखि न जाए।
जब मन की खटपट मिटे, अधर भया ठहराय।"

अधर मतलब होंठ। होंठ वास्तव में तभी ठहरेंगे, तभी शांत होंगे, जब मन की खटपट मिट जाएगी। हमारे होंठ भी ज्यादा इसीलिए चलते हैं क्योंकि मन अशांत है, और जब तक मन अशांत है, तब तक होंठ चलें या न चलें कोई अंतर नहीं क्योंकि मूल बात तो मन की अशांति है, वो तो बनी हुई ही है।मौन मानव जीवन और मृत्यु के साथ-साथ गीता का

दार्शनिक संदेश भी दे जाता है कि - "तुम्हारा क्या था कि इतना व्यथित होते हो ? क्या लेकर आए थे ? क्या खोकर जा रहे हो ? यहाँ से पाया और छोड़ कर जाते हो ? तो फिर इतनी हताशा और दर्द क्यों ? ईश्वर का अद्भुत सर्जन मानव ख़ुद जब अमर नहीं है, शरीर नाशवंत है, मिट्टी से आया है और मिट्टी में ही विलीन होना है। जब ईश्वर की अद्भुत संरचना शरीर, पंचमहाभूतों से - पृथ्वी, अग्नि, वायु, जल और आकाश से निर्मित है, तो जब नष्ट होने पर उसी पंचमहाभूतों में विलीन होता है, तो उसका अफ़सोस क्यों ? आत्मा तो अमर है ही, जो परम आत्मा का अंश है, सो शरीर के नष्ट होने पर परमात्मा में विलीन हो जाता है। अपने कर्मों के अनुसार जीर्ण शरीर, पुराना शरीर छोड़ कर नया शरीर धारण करता है, तो अफ़सोस क्यों करना और गर्व किस बात का ? शरीर कालजई कैसे हो सकता है ? आत्मा अमर है।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं कल्याद्यंतपोत न शोषयति मारुतः ।। 2.23 ।।

श्रीमद भगवद गीता में, भगवान कृष्ण ने आत्मा की प्रकृति की व्याख्या की और अर्जुन से कहा - आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकता, अग्नि जला नहीं सकती, पानी भीगो नहीं सकता और वायु सुखा नहीं सकती। योग का मन से सीधा संबंध है। योग की स्थिति में संकेत का ध्यान भी महत्वपूर्ण है। अध्यात्म के क्षेत्र में साधक परमात्मा के चिंतन में तल्लीन हो जाता है। उसके हृदय में परमात्मा के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। जो सुखी जीवन के लिए अपूर्व उपलब्धि है। यह तो अपूर्व आनंद की उपलब्धि है। आज मनोविज्ञान में भी योग को शारीरिक स्वास्थ्य के साथ हु मानसिक, आतंरिक स्वास्थ्य के लिए अत्यंत मूल्यप्रद माना है। वह आधि-व्याधि को नष्ट कर शांत, अंतः दर्शन और आत्म विवेचन का हेतु है।

संदर्भ सूची :-

1) आर्य मान्यताएं. (नवंबर 2017). दिल्ली: आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट.
2) उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय. योग परिचय
3) कविराज, गोपीनाथ, पूर्वोधत., सिंह, जयप्रकाश. (2016). संपूर्ण संचारविद् आचार्य अभिनव गुप्त, नई दिल्ली : जम्मू -कश्मीर अध्ययन केंद्र .
4)जिंदल, राकेश. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान. पंचवटी : उत्तर प्रदेश. आरोग्य सेवा प्रकाशन.
5) मुंधरा, माधोदास. सुखी जीवन, कोलकाता : भारतीय विद्या मंदिर.
6)लुधियानवी, साहिर. (1965). हिंदी फिल्म : काजल कल्पना लोक. https://www.youtube.com/watch?v=c44Ah24hr9M
7) वीर, वरुण. (जून 21, 2020). योग दर्शन: पंचकोश ध्यान, जनसत्ता.
8) योग-दर्शन. गोरखपुर : गीताप्रेस.
9) सिंह, अरुण कुमार. (2019). आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान. दिल्ली : मोतीलाल बनारसी दास.
10) सिंह, अरुण कुमार. (2018). उच्चतर नैदानिक मनोविज्ञान. दिल्ली : मोतीलाल बनारसी दास
11) स्वामी, ओमानंद, तीर्थ. पातंजलयोगप्रदीप. गोरखपुर : गीताप्रेस.
12) स्वामी, ब्रम्हलिनमुनि.(2021). वाराणसी : चौखम्बा प्रकाशन.
12) स्वामी, मुक्तानंद. (1979). कुंडलिनी-जीवन का रहस्य. गणेशपुरी : सिद्धयोग प्रकाशन
13) स्वामी, रामसुखदास. श्रीमद्भागवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर.
14) स्वामी, सदानंद सरस्वती. (महाशिवरात्री, संवत 2065). भगवत्पाद श्रीमदादिशङ्कराचार्यविरचिता सौंदर्य – लहरी भूमिका. द्वारका : शारदा पीठ प्रकाशनं.

21वी शताब्दी में शिक्षा का विकास : अवसर व चुनौतियाँ

डॉ.सुनील
विभागाध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर

संदीप कुमार शर्मा
सहायक प्रोफेसर
नैशनल कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन, सिरसा

भूमिका: हाल ही में घोषित क्यूएस वर्ल्ड यूनिवर्सिटी रैंकिंग 2023 में, भारतीय उच्चतर शैक्षणिक संस्थानों ने अब तक का अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन किया है। सौ से अधिक स्थानों की छलांग लगाते हुए, सात विश्वविद्यालयों ने इस वर्ष शानदार रेंकिंग में प्रवेश किया है, जबकि 17 विश्वविद्यालयों ने सफलता प्राप्त की है और 17 अन्य विश्व के शीर्ष उच्च शिक्षण संस्थानों के रूप में अपने पिछले वर्ष की स्थिति पर अडिग रहे हैं। मद्रास विश्वविद्यालय 541-550 श्रेणी में है, जबकि चंडीगढ़ विश्वविद्यालय (800-1000) सूची में स्थान हासिल करने वाला विश्वविद्यालय है। विश्व स्तरीय विश्वविद्यालयों की स्थिति अब विश्वविद्यालय रैंकिंग से अंतरराष्ट्रीय मान्यता पर भी निर्भर करती है। निस्संदेह परिणाम महत्वपूर्ण हैं, और यह स्वीकार करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि परिवर्तन अचानक नहीं लाया गया है। हजारों शिक्षकों, नीति निर्माताओं और नागरिक समाज के सदस्यों की मेहनत का परिणाम हे। प्रधान मंत्री ने कहा है कि एनईपी "देश में सर्वश्रेष्ठ अंतरराष्ट्रीय संस्थानों के परिसरों को सामान्य परिवारों के युवाओं की पहुंच के भीतर लाने का मार्ग प्रशस्त करके" प्रतिभा पलायन से निपटेगा। सरकार उन सपनों को साकार करने की दिशा में लंबे समय से कदम उठा रही है। दो राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों, आईआईटी-बॉम्बे और आईआईटी-दिल्ली ने एआर मीट्रिक में शीर्ष 100 में जगह बनाने के लिए रिकॉर्ड तोड़ दिया है, क्रमशः 59वें और 72वें स्थान पर हैं और साल दर साल अपनी रैंक में सुधार कर रहे हैं। इसके साथ ही शीर्ष 500 में शामिल पांच संस्थानों की रैंकिंग में तेजी से वृद्धि हुई है। यह ऐतिहासिक है कि 10 साल के अंतराल के बाद शीर्ष 500 में शामिल सभी भारतीय संस्थानों ने अपनी रैंकिंग में सुधार किया है। भारत ने क्यूएस वर्ल्ड यूनिवर्सिटीज 2023 में 41 विश्वविद्यालयों की रैंकिंग के साथ बेहतर गुणवत्ता और विश्व स्तर पर मान्यता प्राप्त तृतीयक शिक्षा के लिए मंच तैयार किया है। शैक्षिक मूल्यांकन का दुनिया का सबसे बड़ा और सबसे उल्लेखनीय वार्षिक सर्वेक्षण, क्यूएस रैंकिंग विभिन्न पहलुओं को मापकर एक विश्वविद्यालय के प्रदर्शन का मूल्यांकन करता है। - शैक्षणिक हितधारकों के छह से अधिक प्रदर्शन संकेतक-अकादमिक प्रतिष्ठा, नियोक्ता प्रतिष्ठा, संकाय/छात्र अनुपात, उद्धरण प्रति संकाय (सीपीएफ), अंतरराष्ट्रीय संकाय अनुपात, और अंतरराष्ट्रीय छात्र अनुपात। भारतीय विश्वविद्यालयों ने क्यूएस वर्ल्ड रैंकिंग 2023 में एक महत्वपूर्ण वैश्विक स्थान प्राप्त किया है, जिसमें बेहतर फैकल्टी/छात्र अनुपात, प्रति फैकल्टी साइटेशन, अंतरराष्ट्रीय छात्र प्रवेश, पुरुष / महिला छात्र नामांकन अनुपात। यह सब उच्च शिक्षा के स्तर में सुधार की दिशा में सरकार के सचेत प्रयासों के कारण हुआ है। शोध पर भारत का खर्च दशकों से कम रहा है। अंत में, भारत में शिक्षा की पैठ अंतिम मील तक नहीं है, लेकिन यह कुछ ऐसा है जिसे सरकार 2018 में 26.3 प्रतिशत के मुकाबले वर्ष 2035 तक 50 प्रतिशत सकल नामांकन अनुपात प्राप्त करने के अपने लक्ष्य के माध्यम से सुधारना चाहती है। सरकार को भारत की शिक्षा प्रणाली को मजबूत, समावेशी और न्यायसंगत बनाने के लिए इन मुद्दों का समाधान करना चाहिए। ऐसे कई क्षेत्र भी हैं जिन पर सरकार को तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है। पहला जीडीपी के प्रतिशत के रूप में शिक्षा पर राज्य का खर्च है। फिर अंतरराष्ट्रीय संकाय और छात्रों की गतिशीलता का मुद्दा आता है। शोध पर भारत का खर्च दशकों से कम रहा है। वर्तमान क्यूएस रैंकिंग में श्रेष्ठ नौ संस्थानों को शीर्ष 1,000 में, शीर्ष 500 में पांच और शीर्ष 200 में तीन संस्थानों को स्थान

दिया गया है।शिक्षा सामाजिक व आर्थिक विकास का एक मात्र स्त्रोत है। इस समय भारत वर्ष में लगभग 1050 राज्य, केन्द्रीय, निजि, डिम्ड विश्वविद्यालय है, तथा लगभग 46000 महाविद्यालय है। इन संस्थानों में वर्तमान समय में लगभग 31 मीलीयन विद्यार्थी व शोद्यार्थी विभिन्न विषयों व संकायों में शिक्षा गृहण कर रहें है। पिछले 10 साल में ग्रॉस रेशो लगभग दोगुणा हो चुका है। वर्तमान समय में यह 27 प्रतिशत है जो कि 2035 तक 50 प्रतिशत अनुमान के नजदीक है। इसके साथ-साथ रोजगार की समस्या एक परेशानी का कारण है। स्नातक करने के पश्चात एक विद्यार्थी अपने आप को इस आर्थिक भागदौड व प्रतिस्पर्धा के दौर में व्यवसाय तक नहीं पहुँचा पाता है, जिस कारण बेरोजगारी दर बढ रही है। लगभग 95 प्रतिशत युवा स्नातक करने के पश्चात बेरोजगार रहते है और मात्र 5 प्रतिशत विद्यार्थी ही अपने आपको उद्योग जगत या रोजगार में स्थापित कर पाते है। वर्तमान में नई शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत कौशल युक्त शिक्षा, स्टार्टअप प्रोग्राम, ऑनलाइन डिग्री कार्यक्रम, कौशल आधारित सर्टिफ़िकेट प्रोग्राम, इंटीग्रेटेडडिग्री प्रोग्राम, डुयुअलडिग्री मान्यता आदि यत्न किए गए है ताकि शिक्षा। व्यवस्था को रोज़गारून्मुख बनाया जा सके क्योंकि बेरोज़गारी का एक प्रमुख कारण पुरानी शिक्षा व्यवस्था व शिक्षण विधियाँ भी है जिसमें बदलाव की अति आवश्यकता है ताकि शिक्षा को उत्पाद अधारित बनाया जा सके, उच्च शिक्षा में "आऊटकम बेसड एजुकेशन अर्थात् उत्पाद आधारित शिक्षा की अति आवश्यकता है। इस माध्यम से ही हम शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य को प्राप्त कर सकते है।

शिक्षा में बदलाव व सुधार हेतु निम्न प्रयास अति आवश्यक है -

1 उच्च-शिक्षा में नई तकनीक व विधियों का समावेश।
2 ग्रॉस इंनरोलमेंट रेशो का 50 प्रतिशत तक लेकर जाना।
3 राज्य, लिंग, जाति के आधार पर ग्रॉस इंनरोलमेंट रेशो के अंतर का 5 प्रतिशत तक कम करना।
4 शोध पुरक शिक्षा को बढावा देना।
5 विश्व के प्रथम 200 विश्वविद्यालयों की सुचि में कम से कम 20 भारतीय विश्वविद्यालयों की सुचि में लेकर जाना।
6 कौशल आधारित शिक्षा को बढ़ावा देना।
7 रोज़गार उन्मुख पाठ्यक्रम का निर्माण करना।

भारतीय उच्च शिक्षा के सम्मुख प्रमुख चुनौतियाँ

1 विस्तार:- विश्व ग्रॉस इंनरोलमेंट रेशो तक न पहुँच पाना।

2 उत्कृष्टता:-

लगभग सभी राज्य व केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में 50 प्रतिशत पदों का रिक्त होना। लगभग 50 प्रतिशत संस्थान नेक से सत्यापित नहीं है।

3 समता:

• देश में ग्रामीण, शहर व लिंग के आधार पर बहुत असमानता शैक्षिक स्तर पर की देखने को मिलती है जो देश के शैक्षिक व आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न करती है।

• दिल्ली में उच्च शिक्षा में इंनरोलमंट यहां लगभग 70 प्रतिशत है वही असम में लगभग 15 प्रतिशत है। • शहरी क्षेत्र में इंनरोलमेंट यहां लगभग 40 प्रतिशत है वहीं ग्रामीण क्षेत्र में लगभग 20 प्रतिशत से भी कम है।

• इसी प्रकार की असमानता लैंगिक आधार पर भी व्यापक है।

• इसके साथ-साथ जातिय आधार पर की असमानता देखने को मिलती है, जोकि चुनौतिपूर्ण है।

अन्य चुनौतियाँ–

1 मात्रात्मक व गुणात्मक मुद्दे: मात्रात्मक रूप में भारतीय शिक्षा व्यवस्था आज़ादी के पश्चात विकास की दृष्टि से संतोषजनक रही है लेकिन गुणात्मक दृष्टि से अभी बहुत सुधार की आवश्यकता है। देश का एक भी शिक्षण संस्थान वर्ल्ड रैंकिंग में प्रमुख 100 संस्थानों में शामिल न होना इसका मुख्य उदाहरण है।

2 गुणवता पूर्ण शोध: वर्तमान समय मे पैसे के माध्यम से शोध को बढ़ावा देना व पदोन्नति हेतु अंकों को एकत्रित करने की होड़ ने गुणवत्ता आधारित शोध को हाशिये पर धकेल दिया है।

3 दाखिला प्रक्रिया की प्रादर्शिता: महाविद्यालयों व यूनिवर्सिटी में दाख़िले की प्रक्रिया पर समय-समय प्रश्न उठते रहते है। वर्तमान में देश की सभी सैंट्रल यूनिवर्सिटी ने सीयूटी के माध्यम से दाख़िला प्रक्रिया को पात्रता परीक्षा के माध्यम संचालित करना शुरू किया है। लेकिन अब भी अधिकतर कॉलेजो व यूनिवर्सिटी में अंक प्रतिशत के आधार पर ही दाख़िला किया जा रहा है जो प्रासंगिक नहीं है।

4 पाठ्यक्रम का रोज़गार से संबध न होना: नई शिक्षा नीती 2020 के अनुसार पाठ्यक्रम में व्यापक स्तर पर बदलाव किए गए हैं जिसका मुख्य कारण वर्तमान पाठ्यक्रम का रोजगार परक् न होना है। नई शिक्षा नीती में मुख्यतः इन्टीग्रेटेड शिक्षा व्यवस्था को बढ़ावा दिया गया है जिसके अंतर्गत विषय के सैद्धांतिक ज्ञान के साथ साथ कौशल आधारित ज्ञान का भी समावेश किया गया है।

5 कौशल अधारित शिक्षा पाठ्यक्रम का आभाव: विद्यार्थी के व्यावसायिक विकास में पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण योगदान होता है अगर शिक्षा का पाठ्यक्रम व्यावसायिक नहीं है तो शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात् एक विद्यार्थी के सम्मुख व्यवसाय के साधन गौण मात्र होते हैं 21 मैं औद्योगिक वेर तकनीकी का बोल वाला है जिसमे शिक्षा पाठ्यक्रम का व्यवसायीकरण हो ना अति आवश्यक है ताकि विद्यार्थी अपनी शिक्षा पूर्ति के पश्चात् स्वयं का कोई स्टार्टअप कार्यक्रम या किसी व्यवसाय के साथ जुड़ सकें और यह केवल मात्र पाठ्यक्रम के व्यवसायीकरण के पश्चात ही संभव हो सकता है।

6 अध्यापकों की कमी: आज प्राथमिक स्तर से लेकर के विश्वविद्यालय स्तर तक अध्यापकों के 50% पद रिक्त हैं जिससे न केवल शिक्षा व्यवस्था प्रभावित हो रही है अपितु शोध कार्य पर भी इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।

7 समन्वय का आभाव: महाविध्यालय विश्वविद्यालय व विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं का आपस में समन्वय न हो पाने के कारण बहुत सारी शिक्षा योजनाएं सुचारु रूप से लागू नहीं हो पाती है और जिस कारण शिक्षा का प्राथमिक उद्देश्य पूर्ण नहीं हो पाता है।

8 शिक्षा का माध्यम: शिक्षा का माध्यम भी रोजगार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। अंग्रेजी भाषा का वर्तमान से में रोजगार के क्षेत्र में बोल वाला है, जिसकारण अन्य क्षेत्रीय भाषाएं व राजभाषा हिंदी मैं अध्ययनरत विद्यार्थी विभिन्न प्रकार की कंपनियों में साक्षात्कार के समय पिछड़ जाते हैं। यह भी उच्च शिक्षा के समक्ष एक प्रमुख चुनौती है की शिक्षा के माध्यम को रोजगार का पैमाना बनाने से कैसे संतुलित किया जाए।

9 पठन सामग्री का गुणवता पुर्ण न होना: शोध अंक एकत्रित करने वह प्रकाशन की होड़ ने गुणवत्तापूर्ण पठन सामग्री को व्यापक नुकसान पहुंचाया है। आज ऐसा कोई विषय नहीं है जिसपर सैकड़ों पुस्तकें न लिखी गई हो लेकिन यह भी कटु सत्य है की इनकी विषयवस्तु व पठन सामग्री गुणवत्ता के आधार पर स्वीकार्य नहीं है।

10 तकनीकी का आभाव: विज्ञान व वाणिज्य के विषयों को छोड़कर अगर हम भाषा ही विषयों के बारे में चर्चा करें तो भाषा पाठ्यक्रम में आज भी तकनीकी का अभाव है जिसकारण औद्योगिक जगत में भाषा स्नातकोत्तर विद्यार्थियों को रोजगार प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

11 मूल्यांकन व परीक्षा प्रणाली का दोषपुर्ण होना: प्राचीन वार्षिक परीक्षा प्रणाली विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास में सबसे प्रमुख मूल्यांकन प्रणाली को बहुआयामी होना चाहिए जिसमें विद्यार्थी के मौखिक लिखित प्रायोगिक सभी पक्षों का सम्मिलित मूल्यांकन करने के पश्चात्

अंकीय फ़लांक निर्धारित होने चाहिए। इसके साथ साथ पश्चिमी देशों की मूल्यांकन प्रणाली जिसमें शोध को प्रमुख स्थान दिया गया है और इसके अलावा दत्त कार्य अभी वहाँ की मूल्यांकन प्रणाली का प्रमुख अंग है जिसमें विद्यार्थी को एक समस्या दी जाती है जिसे उसने तीन से 4000 शब्दों में परिभाषित करना होता है। इससे विद्यार्थी की विषय के प्रति सूक्ष्म व व्यापक ज्ञान के स्तर को मापा जाता है तथा उसकी विश्लेषण व संश्लेषण योग्यता का भी ज्ञान होता है।

12 उच्च शिक्षा में आरक्षण: दाखिला प्रक्रिया में आरक्षण, प्रतियोगी प्ररिक्षओं के पास अंको में आरक्षण इत्यादि।

13 वितिय आभाव: वार्षिक वित्तीय बजट में शिक्षा बजट को प्रति वर्ष कम किया जा रहा है जो उच्च शिक्षा के विकास में अनुचित कदम है।

14 सीटो का आभाव: रोज़ बार परख विषयों में सीटों का अभाव होना। शोध आधारित डिग्री अर्थात् पीएचडी की सीटो का अभाव होना भी उच्च शिक्षा के विकास में एक चुनौती है।

उच्च शिक्षा हेतु सरकार के प्रयास:-

1 मैरिट अधार पर छात्रवृतियां प्रदान करना।
2 शिक्षा का अंतराष्ट्रीयकरण करना
3 शोधपरक वातावरण का निर्माण करना।
4 शिक्षकों की भर्ती करने हेतु प्रयास।
5 शिक्षा स्थानांतरण हेतु तकनीकी का प्रयोग व सुधार।
6 रोजगार प्रदान करना।

भारत सरकार ने उपरोक्त प्रयासों आधार पर उच्च शिक्षा में विद्यार्थियों को आकर्षित करने के ये प्रमुख प्रयास किए है। जिनमें मैरिट आधारित छात्रवृतियों जो की विभिन्न निम्न जाति व आरक्षित वर्ग को दी जाती है। इसके अलावा जे आर एफ एस आर एवं राजीव गाँधी फैलोशीप आदि प्रदान की जाती है शिक्षा का अंतराष्ट्रीयकरण के तहत भी उच्च शिक्षा पाठ्यक्रम को व मूल्यांकन प्रणाली को विश्व स्तरीय बनाया जा रहा है, जिसके तहत शिक्षा व्यवस्था का ढाँचा व परीक्षा प्रणाली आदि को विश्वस्तरीय रूपरेखा प्रदान की जा रही है। शोधपरक वातावरण के तहत शोध को बढावा देने के लिए बहुत सारी योजनाएं व वितिय सहायता प्रदान की जा रही है जिसमें राष्ट्रीय अंतराष्ट्रीय संगोष्ठीयों में भाग लेने हेतु वितिय सहायता आई. सी. एस. एस. आर. (ICSSR) द्वारा दी जाती है, शोध ग्रंथ प्रकाशन हेतु भी विभिन्न संस्थाएं वितिय सहायता प्रदान करती है। विश्विद्यालय में शिक्षकों की भर्ती हेतु वर्तमान सरकार व शिक्षा विभाग. द्वारा सभी विश्वविद्यालय को निर्देश जारी कर दिए गए है कि व जल्द से जल्द रिक्त पदों की भर्ती प्रक्रिया को शुरू करे ताकि शिक्षा व्यवस्था की गुणवता व उत्कृष्टता को बढाया जा सके। शिक्षा में तकनीकी प्रयोग के अंतर्गत सभी शैक्षिक संस्थाओं में स्मार्ट क्लास रूप और प्रोजक्टर इत्यादि जो भी उपकरण शैक्षिक तकनीकी को बढावा दे सकते इनका प्रंबध संस्थाओं में किया जा रहा है। इस हेतु यूजीसी द्वारा समय समय पर वितिय सहायता संस्थानों को प्रदान की जाती है इसके साथा एम. एच. आर. डी व इग्नु के द्वारा भी दुरदर्शन व ज्ञानदर्शन के माध्यम से विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है। एम. एच. आर. डी केंद्रों के द्वारा मूक(MOOC'S), अर्पित (ARPIT), ऑनलाइन रीफरर्शर कोर्स आदि का संचालन हो रहा है

वर्तमान– समय में उच्च शिक्षा की स्थिति ए आई एस एच ई रिपोर्ट 2018-19 के अनुसार देश में सिर्फ 2.5 प्रतिशत कॉलेज में पी एच डी के अवसर पर उपल्बध है। देश में उच्च शिक्षा का हाल बताने वाले एक सर्वे में इसका खुलासा हुआ है। शिक्षा के अखिल भारतीय सर्वे के अनुसार देश में 1,69,170 विद्यार्थी पीएचडी कर रहे है। इनमें विज्ञान के छात्रों की संख्या सवार्धिक है इसके बाद इंजीनियरिंग व टंक्नोलॉजी का नंबर है। जबकि सबसे ज्यादा पोस्ट ग्रेजुएट समाज विज्ञान व प्रबंधन में तैयार हो रहे है। आंध्र प्रदेश और यूपी में 88 प्रतिशत कॉलेज प्राइवेट और गैर-अनुदानित है। तमिलनाडु में संख्या 87 प्रतिशत है। लेकिन असम में केवल 16 प्रतिशत ही ऐसे कॉलेज है इस वार्षिक सर्वे के अनुसार 77.8 प्रतिशत प्राईवेट कॉलेज है। इनमें से केवल 13.5 ही विशुद्ध रूप से सरकारी अनुदान से चल रहे है। सर्वे में कुल 962 विश्वविद्यालयों, 38,179 कॉलेज और 9,190 उच्च शिक्षण संस्थान शामिल हुए है

उच्चतर शैक्षिक संस्थानों द्वारा की जाने वाली पहल-सूचना एवं संचार प्रोद्योगिकी आधारित शिक्षण यंत्र आनॅलाईन ज्ञानअर्जन।
गैर प्रत्यापित संस्थानों को परामर्श देना।
संकाय द्वारा गुणवता पूर्ण शोध
संकाय प्रेरणा कार्यक्रम और अर्पित समाज एवं उद्योग वर्ग से संपर्क।
नियमित अंतराल पर पाठ्यक्रम में परिशोधन।
दीक्षारंभ - विद्यार्थी प्रेरणा कार्यक्रम
विद्यार्थियों के लिए जीवन कौशल
परीक्षा प्रणाली में सुधार।

उपसंहार-वर्तमान समय में उच्चतर शिक्षा प्रणाली में लगभग 3.6 करोड छात्र नामांकित है विश्वविद्यालय / कॉलेजों व संस्थानों का यह फर्ज है कि प्रत्येक छात्र को गुणवतापूर्ण शिक्षा प्रदान की जाए। प्राथमिक स्तर से उच्चतर स्तर तक व क्षेत्र के किसी भी डिग्री में प्रवेश लेने पर संस्थान व समर्थन की आवश्यकता रहती है कि वे विद्यार्थियों के साथ लगाव व अपनेपन की भावना के साथ उनके अधिकारों के साथ उतरदायित्व के संज्ञान का विकास करें। उच्चतर शिक्षा व शिक्षा संस्थान एक विद्यार्थी, परिवार, समाज के विकास में एक विशेष भूमिका अदा करते है व्यक्ति को सभी क्षेत्रों का ज्ञान देने में उसका सर्वांगीण विकास करने उसकी योग्यताओं व अभिक्षमताओं को पहचानने व आंतरिक शक्तियों को सही दिशा प्रदान करने में अपनी विशेष भूमिका अदा करती है। व्यक्तित्व के विकास व समाज निर्माण व राष्ट्र निर्माण हेतु उच्चतर शिक्षा अति आवश्यक है। उच्चतर शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मानव विकास में सहायता करना, उनकी प्रगति के लिए उतरदायी होना तथा समाज और प्रकृति को पोषित करने के साथ-साथ उन्हें अपने जीवन-यापन करने हेतु सक्षम करना है।

****

संदर्भ:-

1. https://www.education.gov.in/
2. https://www.nirfindia.org/
3. https://www.ugc.gov.in/

महामारी समय में मानव अधिकारों के वैश्विक प्रश्न

डॉ.अमित राय
एसोसिएट प्रोफ़ेसर
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा

कोरोना के बारे में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को महत्त्व नहीं देने के फलस्वरूप इस महामारी का प्रसार हुआ,याद कीजिए ली वेनलियांग,चीन के एक डॉक्टर को,जिसने कोरोना वायरस महामारी की सबसे पहले खोज की और चीनी अधिकारियों ने इस तथ्य को बाहर आने नहीं दिया और संदिग्ध हालत में उसकी मृत्यु हो गयी,चीनी राज्य किस तरह इस कोरोना महामारी से निबटेगा इसकी उम्मीद के मुताबिक सबसे अच्छी प्रतिक्रिया हांगकांग के पत्रकार वेरना यू की टिप्पणी में मिलती है, "यदि चीन अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को महत्त्व देता तो वहां कोई कोरोना वायरस संकट नहीं आता । जब तक चीनी नागरिकों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और अन्य बुनियादी अधिकारों का सम्मान नहीं किया जाएगा, तब तक ऐसे संकट बार बार आते रहेंगे..... चीन में मानव अधिकारों के लिए काम करने की जगह बाकी दुनिया से कम है,लेकिन जैसा कि हमने इस संकट में देखा,आपदा तब आई,जब चीन ने अपने नागरिकों की स्वतंत्रता को ख़त्म किया । निश्चित रूप से यह समय अंतरराष्ट्रीय समुदाय को इस मुद्दे को और अधिक गंभीरता से लेने का समय है ।

मानवाधिकारों को एक सभ्य समाज की बुनियाद माना जाता है लेकिन उनकी चर्चा अधिकांशतः राजनीतिक संदर्भ में ही की जाती रही है और वह भी काफी हद तक केवल अपनी राय की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति के सवाल तक ही सीमित रह जाती है,राजनीतिक संदर्भ में मानवाधिकारों की प्रतिष्ठा में राज्य की भूमिका पर विचार करते समय केवल अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य तक सीमित नहीं रहा जा सकता,राज्य से यह अपेक्षा की जाती है कि वह उन सभी अधिकारों को प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपलब्ध करवाने की लगातार कोशिश करेगा जिनका उल्लेख मानवाधिकारों के अंतर्गत आता है क्योंकि मनुष्य, मनुष्य पहले है और प्रजा बाद में और उसी के द्वारा निर्मित किसी भी व्यवस्था में यदि उसका वास्तविक प्रतिनिधित्व नहीं होता तब वह अपने प्रतिनिधित्व के अन्य मार्गों की तलाश व्यवस्था को बदलने के लिए करता है। इस दृष्टि से राज्य की भूमिका केवल अभिव्यक्ति के अधिकार का सम्मान करने से बढ़कर सभी मानवीय अधिकारों की प्रतिष्ठा में अपनी सत्ता और विधि निर्मात्री शक्ति का प्रयोग करने तक फ़ैल जाती है।

दूसरी ओर एक सभ्य समाज से सामान्यतया यह अपेक्षा की जाती है कि उसका राजनैतिक आचरण भी सभ्य अर्थात लोकतांत्रिक व वैधानिक हो । लेकिन जब कभी जनसामान्य या किसी वर्ग विशेष द्वारा किन्हीं मांगों को मानने के लिए दबाव डाला जाता या आंदोलन किया जाता है तब सत्ता द्वारा वैधानिकता का आग्रह किया जाता है और अक्सर उस वैधानिकता का तात्पर्य सत्ता पक्ष की सहूलियत या इच्छा हो जाती है क्योंकि अंततः सत्ता की स्वीकृति ही किसी बात को वैधानिकता प्रदान करने के मान्य तरीके के रूप में स्वीकार की जाती है। इसलिए समाज से सभ्य आचरण की अपेक्षा करते समय यह देखना भी निहायत आवश्यक हो जाता है कि इस शासक,सत्तासंपन्न या सुविधाभोगी विशिष्ट वर्ग का अपना व्यवहार वास्तविक अर्थों में कितना सभ्य और सुसंस्कृत है और वह अपने आचरण में किस सीमा तक लोकतांत्रिक है। अभिव्यक्ति के विभिन्न पक्षों की दार्शनिकता में न जाएँ तो देखा गया है कि अभिव्यक्तियों का प्रयोग मुख्यतः राजनैतिक संदर्भों में ही किया जाता है, मानव अधिकार के संदर्भ में भी अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य के अधिकार के अंतर्गत बिना किसी बाधा के सूचनाएं प्राप्त करने और देने तथा किसी भी प्रसार-यन्त्र के माध्यम से अपने विचारों को अबाधित प्रचार करने के अधिकार को मान्यता दी गयी है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में बाधा ने किस तरह से पूरे विश्व को एक बड़ी महामारी के कालखंड में धकेल दिया है इसके हम सभी गवाह बन रहे हैं। चीन में यदि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को महत्व दिया गया होता तो निश्चित रूप से इसके प्रसार को रोका जा सकता था। शुरुआत में इस महामारी की उत्पत्ति,प्रभाव और प्रसार के संबंध में हमारे पास जब कोई जानकारी नहीं थी तब हमने या शेष विश्व ने इसे किस तरह लिया इसे समझने के लिए खासकर इसके मनोवैज्ञानिक पक्ष को समझने के लिए हमें स्लावोज जिजेक के अध्ययन को समझना आवश्यक है ताकि मानवाधिकार के पक्षों से इसे समझा जा सके। स्लावोज जिजेक एक स्लोवेनियाई दार्शनिक हैं और जुब्लजाना विश्वविद्यालय में कला संकाय के दर्शन विभाग में एक शोधकर्ता और लंदन विश्वविद्यालय के मानविकी के लिए बर्कबेक संस्थान के अंतरराष्ट्रीय निदेशक भी हैं। उन्होंने हाल ही में प्रसिद्द मनोवैज्ञानिक एलिजाबेथ कुबलर-रॉस की किताब 'ऑन डेथ एंड डाइंग' के संदर्भ से बताया कि किसी भी महामारी के आने पर हमारी प्रतिक्रिया पांच चरणों में होती है,इससे कोरोना वायरस महामारी के प्रति हम हमारी प्रतिक्रियाओं के बारे में कुछ सीख सकते हैं,किसी मरणान्तक बीमारी के होने पर सबसे पहली प्रतिक्रिया होती है,बीमारी से इंकार (सामान्य तौर पर सबसे पहले हम इस तथ्य को स्वीकार करने से इंकार करते हैं: "यह नहीं हो सकता,यह मेरे लिए नहीं है"); उसके बाद का चरण है क्रोध, (क्रोध का विस्फोट तब होता है जब हम तथ्य को नकार नहीं पाते : "यह मेरे ही साथ कैसे हो सकता है?"); तीसरा चरण है एक तरह की सौदेबाजी का (आशा है कि हम किसी भी तरह से बीमारी के तथ्य को स्थगित या कम कर सकते हैं: "बस मुझे अपने बच्चों को स्नातक होते देखने तक जीवित रहना है"); इसके बाद का चरण है,अवसाद (लिबिडिनल डिसइन्वेस्टमेंट: "मैं मरनेवाला हूं, तो किसी भी चीज से क्यों परेशान रहूँ ?"); और अंत में स्वीकृति ("मैं इससे नहीं लड़ सकता,लेकिन इसके लिए ठीक से अपने को तैयार कर सकता हूँ")। बाद में, कुबलर-रॉस ने इन सभी प्रतिक्रियाओं को भयावह व्यक्तिगत नुकसान (बेरोजगारी, प्रिय की मृत्यु, तलाक, नशीली दवाओं की लत) के किसी भी रूप पर लागू किया और इस बात पर जोर भी दिया है कि प्रत्येक मामले में जरूरी नहीं कि ये चरण एक ही क्रम में आयें या सभी रोगियों द्वारा पाँचों चरणों का अनुभव हो ।

ठीक यही हमारे जीवन पर डिजिटल नियंत्रण के बढ़ते खतरे पर भी लागू होता है : पहले हम इसके खतरे से इंकार करते है (यह मानते हैं कि यह एक अतिशयोक्ति है,वामपंथी व्यामोह है, कोई भी एजेंसी हमारी दैनिक गतिविधि को नियंत्रित नहीं कर सकती है); तब बड़ी कंपनियों और राज्य की गुप्त एजेंसियों पर, हमारे गुस्से का विस्फोट होता है जिन्हें आपके बारे में आपसे ज्यादा जानकारी होती है और इस ज्ञान का उपयोग वे हम पर नियंत्रण रखने और हेरफेर करने के लिए करतीं हैं; इसके बाद सौदेबाजी (अधिकारियों को आतंकवादियों की खोज करने का अधिकार है, लेकिन हमारी निजता के उल्लंघन का नहीं... ।); इसके बाद अवसाद (अब बहुत देर हो चुकी है, हमारी निजता खत्म हो चुकी है और अब व्यक्तिगत स्वतंत्रता का समय खत्म हो गया है); और अंत में स्वीकृति (डिजिटल नियंत्रण हमारी स्वतंत्रता के लिए खतरा है, हमें इसके सभी आयामों को लेकर जनता को सजग करना चाहिए और इससे लड़ने के लिए सबको एकजुट होना चाहिए !) ।क्या यह भी वैसा ही नहीं है जैसा हमने 2019 के अंत में हुए कोरोना वायरस के कारण हुई महामारी के विस्फोट से निपटने के लिए किया? सबसे पहले हमने इंकार किया (कुछ भी गंभीर नहीं है, केवल कुछ गैर जिम्मेदार व्यक्ति दहशत फैला

रहे हैं); तब क्रोध (ज्यादातर नस्लीय या राज्य विरोधी रूप में: यह कहकर कि चीनी दोषी हैं, हमारा राज्य कुशल नहीं है..); अगली बारी सौदेबाजी की आई (ठीक है,कुछ ही लोग इसके शिकार हो रहे हैं, लेकिन यह सार्स से कम गंभीर है और हम इसके नुकसान को सीमित कर सकते है..); यदि यह तर्क भी काम नहीं करता है,तब अवसाद उठता है (यह कोई बचपना नहीं है, सब बर्बाद हो रहा है) . . . लेकिन स्वीकृति का अंतिम चरण कैसा होगा यह देखना होगा? हांगकांग के प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य महामारी विज्ञानी गेब्रियल लेंग के अनुसार, अगर इसे नियंत्रित नहीं किया जा सका तो कोरोना वायरस महामारी दुनिया की आबादी के लगभग दो तिहाई तक फैल सकती है। उन्होंने कहा, "लोगों को अपनी सरकार पर विश्वास रखने की जरूरत थी,जब तक कि वैज्ञानिक समुदाय द्वारा नए प्रकोप की अनिश्चितताओं पर कार्य नहीं कर लिया जाता",वह कहते हैं और निश्चित रूप से जब आपके पास सोशल मीडिया और फर्जी समाचार और असली खबरें हैं तो सभी एक दूसरे में मिल जातीं हैं,तब विश्वास खत्म हो जाता है तब ऐसे में आप महामारी से कैसे लड़ सकते हैं? आपको अतिरिक्त भरोसे की जरूरत है,एकजुटता की अतिरिक्त भावना की, अतिरिक्त सद्भावना की।

एक स्वस्थ समाज में एक से अधिक आवाज होनी चाहिए, डॉक्टर ली ने अपनी मौत से ठीक पहले अपने अस्पताल के बिस्तर से कहा, लेकिन अन्य आवाजें जो आना चाहिए उनकी तत्काल जरूरत है, इसका मतलब अनिवार्य रूप से यह नहीं है कि पश्चिमी शैली का बहुदलीय लोकतंत्र हो,यह केवल इतनी मांग करता है कि नागरिकों के लिए अपनी महत्वपूर्ण प्रतिक्रियाओं को प्रसारित करने के लिए एक खुली जगह हो। इस विचार के खिलाफ राज्य का मुख्य तर्क होता है कि राज्य को दहशत को रोकने के लिए अफवाहों को नियंत्रित करना है लेकिन यह नियंत्रण ही अविश्वास फैलाता है और इसलिए और भी षड्यंत्र सिद्धांतों (कांस्पिरेसी थियोरी) को फैलाता है। केवल आम लोगों और राज्य के बीच आपसी विश्वास ही ऐसा होने से रोक सकता है।मानवाधिकार के संदर्भों से वैश्विक स्थितियों और राज्य की भूमिका को देखा जाए तो इसकी गंभीरता को समझा जा सकता है, सबसे पहले, हमें यह समझना चाहिए कि जब तक हमें इस महामारी की जड़ें नहीं मिलतीं, इसकी पुनरावृत्ति होने वाली है,शायद इससे भी बदतर रूप में,ऐसा सामान्य रूप से पूंजीवादी व्यवस्था की तिकड़मों के कारण होगा जो कि ऐसी परिस्थितियों को निर्मित कर रही है जिसमें उनके लाभों के लिए परिस्थितियां बदतर होती जायेंगीं। इन्हें हम कई अन्य बातों के साथ-साथ प्रोत्साहन बिल में देख सकते हैं।

अब, दूसरा, ग्लोबल वार्मिंग के कारण,जो चल रहा है और यह सबको अँधेरे में रखता है,हम इससे गंभीर कीमत पर उबरेंगे। हम ध्रुवीय बर्फ की पिघल रही चादर से उबरने वाले नहीं हैं। इसके लिए हमें समकालीन पूंजी की मानसिकता को समझने की जरुरत है आप देखेंगे कि पिछले वर्ष 10 फरवरी को जबसे महामारी उग्र हो रही थी और बदतर होती जा रही थी ट्रंप ने अपने बजट प्रस्तावों में क्या रखा,वे महत्वपूर्ण बिंदु क्या थे? पहला बिंदु: सरकार के स्वास्थ्य संबंधी तत्वों के लिए डिफंडिंग (स्वास्थ्य सेवाओं से राशि में कटौती करना) करना। अपने पूरे कार्यकाल के दौरान वह उन सभी चीजों से वित्त में कटौती कर रहे थे जो निजी सत्ता और धन, कारपोरेट शक्ति को लाभ नहीं पहुंचा रहीं थीं। इसलिए सरकार के स्वास्थ्य से जुड़े सभी हिस्सों में तेजी से वित्तीय कटौती की गयी थी। उन्होंने सभी स्वास्थ्य कार्यक्रमों और इससे संबंधी सभी प्रकार की चीजों को खत्म कर दिया। इस बजट में उन्होंने सेंटर फॉर डिजीज कंट्रोल (सीडीसी) और सरकार के अन्य स्वास्थ्य संबंधी हिस्सों को और डीफंडिंग किया। लेकिन बजट में क्षतिपूर्ति में वृद्धि, जीवाश्म ईंधन उद्योग को अधिक सब्सिडी भी थी। इसका तात्पर्य स्पष्ट था कि स्वास्थ्य सुविधाओं में कटौती के चलते कितने लोगों की जाने जा सकतीं थीं और गयीं इसे खुला छोड़ दिया गया और जीवाश्म ईंधन उद्योगों को सब्सिडी देने से पर्यावरण संबंधी पूरे समाज के नष्ट होने के खतरों को बढ़ाने की दिशा में कदम बढ़ाया गया। तो, यह इससे न केवल जितने लोगों को मारना संभव था मारा जाए बल्कि पूरे समाज को नष्ट करने की कोशिश की जाए। मूल रूप से उनके शब्दों का यही मतलब था। जबकि सुरक्षा के क्षेत्र में वहां सेना के लिए और उसकी प्रसिद्ध दीवार के लिए और अधिक राशि दी गयी।2003 में सार्स महामारी (यह भी एक कोरोनावायरस जनित थी) के बाद यह अच्छी तरह से वैज्ञानिकों द्वारा समझा गया था कि एक अन्य कोरोना वायरस की पुनरावृत्ति होगी, जो कि शायद अधिक गंभीर होगी। खैर, इसे समझना भर पर्याप्त नहीं है। जब इस महामारी का प्रसार व्यापक हो गया तब दो संभावनाएं थीं। एक थी दवा कंपनियां,किंतु वे सामान्य पूंजीवादी तर्क का पालन करती हैं। आप वही करो जिससे कल लाभ हो। आप इस तथ्य के बारे में चिंता नहीं करते कि अगले दो सालों में सब कुछ खत्म होने वाला है। यह आपकी समस्या नहीं है। इसलिए दवा कंपनियों ने अनिवार्य रूप से कुछ नहीं किया। ऐसी चीजें थीं, जो की जा सकती थीं। वहां बहुत सारी जानकारी वितरित हो रही थी। वैज्ञानिकों को पता था कि क्या करना है। इसकी तैयारियां हो सकती थीं। खैर, एक तर्कसंगत दुनिया में, यहां तक कि रोनाल्ड रीगन से पहले एक पूंजीवादी दुनिया में, सरकार ने इस तरह के कदम उठाये थे और यह किया था,इसका उदाहरण हमारे सामने था।यह बहुत बढ़िया तरीके थे जिस तरह से पोलियो खत्म हो गया था, जिस तरह से सरकार के द्वारा पोलियो निर्मूलन के कार्यक्रमों की पहल की गयी और फंडिंग की गयी थी। जब जोनास साल्क ने वैक्सीन की खोज की तो उन्होंने जोर देकर कहा कि इसका कोई पेटेंट नहीं है। उन्होंने कहा, "यह सार्वजनिक है, ठीक सूर्य की तरह"। तब भी पूंजीवाद था, लेकिन यह पूंजीवाद जो आज है वह रेजिमेंटेड है। वह पूंजीवाद रोनाल्ड रीगन द्वारा एक स्ट्रोक पर समाप्त हो गया था। सरकार समाधान होती है जब निजी क्षेत्र मुसीबत में होता है, यह समझ में आता है। लेकिन अगर यह सिर्फ जब जनता को कुछ की जरूरत है और सरकार का जवाब नहीं है तो समझा जा सकता है। इसलिए 2003 में वहां सरकार कोई कदम नहीं उठा सकी। वास्तव में, उसने जो भी कदम उठाया वह एक हद तक मामूली था और यह देखने वाली बात है कि क्या हुआ था। ओबामा ने इबोला संकट के बाद माना कि समस्याएं अधिक हैं। हमें कुछ करना पड़ेगा। ओबामा ने कई काम किए। इनमें से एक था वेंटिलेटर के लिए अनुबंध करने की कोशिश करना। वेंटिलेटर अभी सिस्टम में बड़ी अड़चन हैं और यही था जो नर्सों को निर्णय लेने के लिए बाध्य कर रहा था कि कल किसे मारना है। यह उनके लिए उनमें पर्याप्त नहीं हैं, लेकिन ओबामा प्रशासन ने उच्च गुणवत्ता, कम लागत वाले वेंटिलेटर के विकास के लिए अनुबंध किया था लेकिन बाद के प्रशासन ने आज एक बड़ी कंपनी को लाकर इस परियोजना को दरकिनार कर दिया - यह कंपनी अपने महंगे वेंटिलेटर के साथ प्रतिस्पर्धा कर रही थी - और तब सरकार के लिए यह बदल गया और उसने कहा कि वे अनुबंध से बाहर निकलना चाहते हैं, यह काफी लाभदायक नहीं है।यह बर्बर पूंजीवाद है। सिर्फ पूंजीवाद ही नहीं, बल्कि नवउदारवादी पूंजीवाद है। यह और भी बदतर हो जाता है। इस साल के जनवरी और फरवरी में, जब अमेरिकी खुफिया एजेंसियां व्हाइट हाउस के दरवाजे पर जोर जोर से कह रहीं थी, "अरे, यह एक असली संकट है,कुछ करो तब कुछ नहीं किया। लेकिन ट्रंप प्रशासन जो कुछ कर रहा था, वह था व्यापार संतुलन में सुधार के लिए चीन और अन्य देशों को वेंटिलेटर का निर्यात। जो कि मार्च तक चला"। अब वही निर्माता और शिपिंग कंपनियां जो उन्हें बाहर भेज रही थीं, अब उन्हें वापस ला रही थीं, दोहरे लाभ के साथ। यह वही है जिसके साथ हम रह रहे हैं। यह आसानी से हो सकता है। इसलिए, यदि आप पूरी बात पर पीछे मुड़कर देखते हैं, तो मूल में एक भारी बाजार विफलता नजर आती है। वे मिल्टन फ्रीडमैन और अन्य जिस तरह बताते हैं उसकी तरह कार्य करते रहे: बस लालच से। वे सिर्फ अपने कल्याण, धन के लिए काम करते हैं और कुछ नहीं। यह एक अंतर्निहित आपदा है। हमारे पास बहुत सारे उदाहरण हैं इसलिए शुरुआत में यह बाजार की असफलता है।

तब उसके बाद बर्बर पूंजीवाद, नव उदारवाद के हथौड़े का अतिरिक्त झटका, जिससे हम 40 साल से दुनिया भर में पीड़ित है, ये वेंटिलेटर से परे चला जाता है ।हमारी स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली पूरी तरह से एक अंतरराष्ट्रीय घोटाला है । लेकिन व्यापार मॉडल, बेशक, इसे एक अंतर्निहित आपदा बनाता है और कुछ अन्य चीजें जो और भी असली हैं उनकी चर्चा की जानी भी आवश्यक है। यू एस ए आई डी (USAID) पशु आबादी में वायरस का पता लगाने का एक सफल कार्यक्रम था, जो मनुष्यों के साथ जंगली आबादी के आवास विनाश और ग्लोबल वार्मिंग के कारण घनिष्ठ संपर्क में आने से फैलता था। वे चीन में भी काम कर रहे हजारों संभावित रोग वायरस की पहचान कर रहे थे । ट्रम्प ने इसे भंग कर दिया । उन्होंने इसकी फंडिंग रोक दी,लेकिन तब इसे भंग किया जब इसका उत्तम समय था अर्थात अक्टूबर में ।

महामारियों के समय में जबकि हमें प्रत्येक मनुष्य को केंद्र में रखकर कार्य करना चाहिए था तब सत्ता के कुछ लोग परपीड़क समाजविकृति की मानसिकता के साथ एक समूह में गहरी बाजार विफलताओं को तीव्र कर कर रहे हैं जो तेजी से पीछे की ओर धकेल रहे हैं और वे इसे और तेज कर रहे हैं । अमीर यह देखने का इंतजार नहीं कर रहे हैं कि अगली दुनिया का निर्माण कैसे किया जाता है । वे इस पर अभी से काम कर रहे हैं, उन्हें इस बात पर यकीन है कि यह सही रास्ते पर है । जीवाश्म ईंधन के लिए आगे सब्सिडी देना, EPA नियमों जो लोगों को बचा सकता है, लेकिन मुनाफे को नुकसान कर सकता है यह सब ठीक हमारी आंखों के सामने हो रहा है आर्थिक राजनैतिक आधारों पर मानवाधिकार के इन प्रश्नों को समझने की जरुरत है और सवाल यह भी है कि क्या इसका कोई प्रतिवाद होगा?

हम ब्राजील की स्थिति से समझ सकते हैं,जहाँ सत्ता के लिए पूरी महामारी सिर्फ एक सर्दी-जुकाम है। ब्राजीलियाई लोग वायरस से प्रतिरक्षा कर रहे हैं और ये कह रहे हैं कि "हम विशेष लोग हैं," और यही नहीं इससे भी आगे बहुत कुछ। सरकार कुछ नहीं कर रही है । कुछ गवर्नर हैं जो कुछ कर रहे हैं पर वहां संघीय सरकार नहीं है । इसका सबसे बुरा हाल मलिन बस्तियों, गरीब क्षेत्रों, देशज क्षेत्रों का हो रहा है ।

रियो में फेवलेस जैसी सबसे खराब मलिन बस्तियों में, जहाँ हर घंटे हाथों को बार बार धोना थोड़ा मुश्किल है क्योंकि उनके पास पानी नहीं है या जहाँ एक ही कमरे में सभी को भरा हुआ है,वहां अपने आपको अलग रखना ही मुश्किल है । लेकिन एक समूह है जो इन भयानक परिस्थितियों में आता है और कुछ शर्तों मानकों को थोपने की कोशिश करता है। ये कौन है? यह क्राइम गैंग है जो फेवलेस को आतंकित करता है। वे बहुत ही शक्तिशाली हैं और वहां पुलिस भी जाने से डरती है। वे ही इस स्वास्थ्य संकट से निपटने की कोशिश कर रहे हैं।यह स्थिति आपसे कुछ कहती है एक तरह से फ्रंट लाइन में नर्सों की तरह। ये ही वहां मानव संसाधन हैं और ज्यादा अप्रत्याशित स्थानों पर सामने आ सकते हैं । ये न कारपोरेट क्षेत्र से हैं,न अमीरों से और न ही भावपूर्ण निगमों से और सरकार से तो निश्चित रूप से नहीं, विशेष रूप से ये रोगवालों की तरह। अन्य लोग बेहतर कर रहे हैं,लेकिन इन लोकप्रिय कार्रवाईयों से एक आशा है ।

उपसंहार- आज सबसे बड़ी चुनौती या मानवाधिकार के प्रश्न से संबंधित है तो वह है डिजिटल नियंत्रण से संबंधित मूल समझ की,जो चीजें और बदतर बनातीं हैं वह हैं कि "अच्छी" अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को "बुरी" अफवाहों से अलग करने का कोई आसान तरीका नहीं है। जब महत्वपूर्ण आवाजें शिकायत करतीं हैं कि चीनी अधिकारियों द्वारा "सत्य को हमेशा ही अफवाह की तरह माना जाएगा"। इसमें किसी को भी यह जोड़ना चाहिए कि सरकारी मीडिया और डिजिटल समाचारों के विशाल डोमेन पहले ही अफवाहों से पूरे भरे हुए हैं।इसके साथ हमें यह समझना चाहिए कि जनता को पूरी सच्चाई नहीं बताने से कभी कभी प्रभावी रूप से दहशत की लहर को रोका जा सकता है जो और अधिक पीड़ितों का कारण बन सकती है। इस स्तर पर, समस्या का समाधान नहीं किया जा सकता – इससे बाहर निकलने का एक ही रास्ता है वह है जनता और राज्य तंत्र के बीच आपसी विश्वास । जैसे विश्वव्यापी महामारी विकसित होती है, हम इस बात पर सजग होने की जरुरत है कि बाजार तंत्र अराजकता और भुखमरी को रोकने के लिए पर्याप्त नहीं होगा । आज हममें से अधिकांश को "कम्युनिस्ट" के रूप में दिखाई देने वाले उपायों पर वैश्विक स्तर पर विचार करना होगा: उत्पादन और वितरण का समन्वय बाजार के निर्देशांक के बाहर होना चाहिए । हमें यहां 1840 के दशक में हुए आयरिश आलू अकाल को याद करना चाहिए जिसने आयरलैंड को तबाह कर दिया,लाखों लोग मारे गए या कहीं अन्य जगह बसने के लिए मजबूर हो गए । आज की परस्पर जुड़ी हुई दुनिया में, हम सब एक ही नाव में सवार हैं,एक ब्रिटिश व्यक्ति सिंगापुर में किसी से मिलता है, फिर इंग्लैंड लौटता है और फिर फ्रांस में स्कीइंग के लिए जाता है, वहां चार अन्य लोगों को संक्रमित कर रहा है.... । हमारा विश्व एक दूसरे से जुड़ा हुआ है और एक स्थानीय आपदा पूरे विश्व में भय और अंततः एक तबाही को शुरू कर सकती है। याद कीजिए 2010 के वसंत में,आइसलैंड में एक मामूली ज्वालामुखी विस्फोट से निकले एक धूल बादल ने, पृथ्वी पर जीवन के जटिल तंत्र में एक छोटी सी अशांति ला दी थी, यूरोप के अधिकांश हवाई यातायात पर ठहराव ला दिया था। यह एक साफ़ चेतावनी थी कि प्रकृति को बदलने की समस्त जबरदस्त गतिविधियों के बावजूद पृथ्वी पर उपस्थित कई जीवित प्रजातियों में से सिर्फ मानव जाति बचती है।इस तरह का एक मामूली विस्फोट का बहुत ही भयावह सामाजिक आर्थिक प्रभाव हमारे तकनीकी विकास की कमजोरी के कारण हुआ, इस मामले में हवाई यात्रा बाधित हुई। तकनीकी विकास हमें प्रकृति से अधिक स्वतंत्र बनाता है और साथ ही एक अलग स्तर पर, प्रकृति की सनक पर भी अधिक निर्भर करता है । और ठीक इसी तरह का प्रभाव कोरोना वायरस का प्रसार हुआ। हालांकि, इस भयानक दृष्टि में एक अप्रत्याशित मुक्ति संभावना छिपी हुई है। पूंजीवादी उपभोक्तावादी विश्व में पिछले दिनों वुहान को याद करने की जरुरत है। एक मेगालोपोलिस में परित्यक्त सड़कें-आम तौर पर हलचल वाले शहरी केंद्र भूतिया कस्बों की तरह लग रहे हैं,बिना ग्राहकों की दुकानों के खुले दरवाजे,एकाध अकेला पैदल चलने वाला या यहाँ वहां एकाध कार, यह एक उपभोक्तावादी दुनिया किस तरह दिखेगी की एक झलक देता है । कहीं ऐसा न हो कि यह वुहान हमारे हर शहर का भविष्य हो। इसलिए जरुरत है राज्य और नागरिकों के बीच आपसी विश्वास को कायम करने की और एक ऐसे मीडिया की जो इस विश्वास में वृद्धि करे न कि अफवाह फैलाए। एक बात तो निश्चित है कि अकेले अलगाव, नई दीवारों का निर्माण और फिर क्वारेन्ताइन से काम नहीं चलेगा। बिना शर्त पूर्ण एकजुटता और वैश्विक सहयोग की जरूरत है। यदि हम अपने प्रयासों को इस दिशा में उन्मुख नहीं करते,तो वुहान हमारे हर शहर का भविष्य होगा। जो हमें स्वयं को स्वीकार करना चाहिए और सामंजस्य करना चाहिए,वह है कि जीवन की एक दूसरी सतह भी है जो ख़त्म नहीं हुई है। मूर्खताओं का दोहराव, वायरस का पुनर्प्रजनन जीवन, हमेशा ही होता रहेगा और एक गहरी छाया की तरह हमेशा हमारे साथ होगा, यह हमेशा ही हमारे अस्तित्व के लिए खतरा पैदा करता रहेगा, जितनी हम उम्मीद करते हैं यह उससे भी अधिक विस्फोटक हो सकता है।

****

संदर्भ

1.Žižek Slavoj,(2002),*Welcome to the Desert of the Real*: Five Essays on September, London and New York: Verso.

2.Žižek Slavoj,(2020),*Pandemic,covid-19 Shake The World,*OR Boosk New York,London.

3.John Maynard Keynes,*The End of Laissez-faire,*The HogarthPress,London.

4.Sigmund Freud and Josef Breuer,(1974), *Studies on Hysteria*, translated by James and Alix Strachey,vol. 3,Harmondsworth: Penguin.

5.Chris Brooks, April 13, 2020,Interview: Noam Chomsky on How Bosses Are Making Coronavirus 'Worse, for Their Benefit'on Labour Note.

राष्ट्रीय शिक्षा नीति - 2020 : समग्र अवलोकन

डॉ.शैलेश मरजी कदम
सहायक प्रोफेसर
मराठी विभाग , महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा -442001

शोध सारांश-राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 : समग्र अवलोकन नामक इस शोध पत्र के माध्यम से राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 का समग्र अवलोकन करने का प्रमुख लक्ष्य रखा गया है । मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 के दस्तावेज का प्रकाशन होने के बाद समाज के विभिन्न घटकों ने अपने भिन्न-भिन्न विचार विभिन्न माध्यमों से संप्रेषित करने का प्रयास किया हैं । इन समस्त प्रयासों में राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के किसी एक पहलु पर विस्तार से चर्चा की गई है किंतु इन समस्त प्रयासों में राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के समग्रता पर बहुत कम प्रकाश डाला गया है । इस शोध पत्र के माध्यम से राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 का संक्षिप्त रूप में समग्र अवलोकन करने का प्रयास किया गया है जो इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 को समग्र रूप में समझने में निश्चित रूप से सहाय्यक सिद्ध होगा ।

मुख्य शब्द – शिक्षा, संप्रेषण, मानव संसाधन, आवलोकन , राष्ट्रीय

1. प्रस्तावना :- राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 को लागू करने की प्रक्रिया की शुरुआत जनवरी 2015 से की गई थी । 14 फरवरी 2015 को मानव संसाधन विकास मंत्री भारत सरकार के अन्य मंत्रालयों के साथ इस विषय पर हितधारकों से सुझाव आमंत्रण हेतु बैठक करते है । 21 मार्च 2015 को राज्य शिक्षा मंत्रालय और भारत सरकार के सचिवों के साथ परामर्श बैठक सम्पन्न होती है । इसके बाद नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के कार्यान्वयन हेतु स्वर्गीय श्री . टी .आर. एस. सुब्रहमन्यम के अध्यक्षता में 31 अक्टूबर 2015 को एक समिति का गठन किया जाता है । 27 मई 2016 को समिति अपनी रिपोर्ट मानव संसाधन विकास मंत्रालय को प्रस्तुत की । 10 नवम्बर 2016 को संसद सदस्यों के साथ शिक्षा संवाद करने के बाद 24 जून 2017 को डॉ. के. कस्तुरीरंगन जी को अध्यक्ष बनाते हुए समिति बनाकर इस शिक्षा नीति के कार्य हेतु विस्तार का आदेश दिया गया । समिति द्वारा अपना कार्य पूर्ण करने के पश्यात 31 मई 2019 को मंत्रालय में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया । राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 इसी प्रतिवेदन पर आधारित है । 25 जूलाई 2020 को राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू की गई है । सन 2040 तक पूर्णरूप से राष्ट्रीय शिक्षा नीति को क्रियान्वित किया जाना है ।

2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 लाने का मुख्य कारण :-

भारत सरकार ने पूर्व में प्रथम शिक्षा नीति -1968, द्वितीय शिक्षा नीति 1986/संशोधित-92) इन दो शिक्षा नीतियों की शिफारिशों को पूर्णतया क्रियान्वित करने का कार्य अभी चल रहा था । इसके बावजूद राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 लायी गई । इसके लाने का मुख्य कारण यह है कि, सन -1945 में स्थापित संयुक्त राष्ट्र (UN-युनाइटेड नेशन्स) के प्रमुख अंग में से महत्वपूर्ण अंग है "संयुक्त राष्ट्र आर्थिक एवं सामाजिक परिषद " जिसमें संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा विश्व के 54 सदस्यों का तीन वर्ष के लिये निर्वाचन किया जाता है । भारत भी इसका निर्वाचित सदस्य है । यह परिषद सतत विकास पर विमर्श करती है । इसके अंतर्गत भारत ने 2015 में सतत विकास अजेंडा- 2030 को स्वीकृति दी है । सतत विकास अजेंडा- 2030 के लक्ष्य संख्या चार में वर्णित है कि वैश्विक शिक्षा विकास अजेंडा के अनुसार विश्व में -2030 तक सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्ता युक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवन पर्यंत शिक्षा के अवसर को उपलब्ध करा-कर बढावा दिये जाने का लक्ष्य रखा गया है । इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 लाना भारत सरकार की मजबुरी बन गई थी । क्योंकि वर्तमान में भारत की शिक्षा व्यवस्था की संरचना में इतनी भिन्नता है कि इस व्यवस्था के माध्यम से सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्ता युक्त शिक्षा देना संभव नहीं है; क्योंकि भारत की शिक्षा व्यवस्था में बारहवी की कक्षा तक मूल रूप में चार बोर्ड चलाये जाते हैं । जैस- स्टेट बोर्ड (State Board), केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE), कौन्सिल फॉर इंडियन स्कूल सर्टिफिकेट एक्झामिनेशन(CISCE), नॅशनल इन्स्टिट्यूट ऑफ ओपन स्कूलिंग(NIOS) इन चारों बोर्ड का लक्ष्य, उद्देश और पाठ्यक्रम पूर्णता अलग-अलग हैं । इस कारण समान गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा देने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020 की आवश्यकता महसूस की गई है । दूसरी ओर भारत के कुछ शिक्षा संस्थान भारत सरकार के वित्तपोषण से चलते है तो कुछ नीजी व्यवस्था से से चलते हैं । इन दोनों संस्थानों में दि जानेवाली शिक्षा सर्वसमावेशी एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा नहीं है । सरकारी शिक्षा संस्थान की गुणवत्ता और नीजी शिक्षण संस्था की गुणवत्ता में जमीन-आसमान का फर्क दिखाई देता है । राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020 सर्वसमावेशी एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने का लक्ष्य रखती है । उपरोक्त सरकारी एवं नीजी शिक्षा संस्थानों में छात्र -शिक्षक को मिलने वाली भौतिक सुविधाओं में बहुत ज्यादा अंतर होने के कारण भी समान गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देना संभव नही हो पा रहा था । राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020 में सभी शिक्षा संस्थानों के छात्र और शिक्षकों को मिलनेवाली सुविधाएं एक रखने का लक्ष्य रखा गया है । उल्लेखनीय है कि इन सभी का क्रियान्वयन राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020 में किस प्रकार किया जाता है इस पर यह लक्ष्य निर्धारीत है ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020 की दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि मनुष्य के जीवन पर्यंत उसे शिक्षा के अवसर प्रदान करना । पूर्व की शिक्षा व्यवस्था में मनुष्य स्वयंसे जीवन पर्यंत विद्यार्थी रह सकता था लेकिन वह औपचारिक रूप से जीवन पर्यंत किसी विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में प्रवेश नहीं ले सकता था उसके लिए पत्राचार , दूर शिक्षा के माध्यम से औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने का रास्ता उपलब्ध था । किंतु इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020 में कोई भी मनुष्य आपने जीवन पर्यंत शिक्षा के अवसर प्राप्त कर सकता है । संपूर्ण विश्व में ज्ञान, तकनीक और विज्ञान के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे है । विश्व ने इस परिवर्तन के अनुरूप अपनी शिक्षा व्यवस्था में पूर्व में ही बदलाव किये है । इसी शिक्षा व्यवस्था में किये गए बदलाव के कारण विश्व के अनेक राष्ट्र आर्थिक विकास के मामले में भारत से आगे है । उनकी अर्थव्यवस्था, जीडीपी, आधारभूत संरचना आदि सभी क्षत्रों में भारत को उनके बराबर आने के लिए बहुत लंबा रास्ता तय करना है । विश्व के अनेक देशों ने जो प्रगति की है । उदाहरण के लिए अमेंरिका, जपान, चायना, आदि ने बिग डेटा, मशीन लर्निंग, आर्टिफिशियल इंटेलिजन्स, सायबर सूरक्षा, यातायात सूरक्षा आदि नये-नये विषयों में शिक्षा क्षेत्र में जो अनुसंधान किया है उसके तुलना में भारत काफी पिछड़ा है । इस कारण भारत मनुष्य श्रम के बजाय मशीन का प्रयोग अन्य देशों की तुलना में बहुत कम करता है । विश्व के ज्यादात्तर देश मशीन के प्रयोग से आधारभूत संरचना खड़ी करने का कार्य करते है जिसके कारण अपने मानव संसाधन का अनुसंधान कार्य करने के लिए बेहतरीन उपयोग कर रहे है । भारत को भी इसी दिशा में कार्य करने की अत्यंत आवश्यकता है । राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 को इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है । संपूर्ण विश्व में आ रहे तमाम बदलावों के कारण विशेषतः संगणक क्षेत्र में जो बदलाव आ रहे है

उनके कारण 'सतत सीखते रहने की कला' प्राप्त करने की आवश्यकता है । संगणक और तकनीक के क्षेत्र में भारत में रोजगार की अनेक संभावनाओं को देखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 में शिक्षा को "शिक्षार्थी- केंद्रित" रखकर शिक्षार्थी में जिज्ञासा, खोजी प्रवृत्ती, गहन चिंतन और संवाद तथा अनुभव के आधार पर संचालित करने का लक्ष्य रखा है । पूर्व की शिक्षा पद्धती शिक्षार्थियों के व्यक्तित्व के सभी पक्षों को समान रूप से विकसित करने में असमर्थ रही है। क्योंकि विज्ञान का विद्यार्थी केवल विज्ञान, कला विद्यार्थी केवल कला और वाणिज्य का विद्यार्थी केवल वाणिज्य की शिक्षा प्राप्त करता था । उसकी विभिन्न विषयों में शिक्षा प्राप्त करने की क्षमता, रूची होने के बावजूद वह अन्य विषयों में शिक्षा नहीं ले सकता था । उसे अपना ही सीमित पाठ्यक्रम पढ़ना अनिवार्य था । विज्ञान संकाय का छात्र साहित्य, कला संकाय के विषय औपचारिक रूप से नही पढ़ सकता था । आयआयटी जैसे प्रमुख संस्थान में केवल तकनीकी विषय पढ़ाने से शिक्षार्थी का समग्र विकास नहीं हो पा रहा था । वह एक संवेदनशील मनुष्य नहीं बन पा रहा था । वह पैसों से अमीर हो रहा था लेकिन दिल से बहुत गरीब हो रहा था । राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के पाठ्यक्रम में शिक्षार्थियों के जीवन के सभी पक्षों का और उसमें नीहीत क्षमताओं का समग्र और समयानुसार विकास होने के लिए उसकी इच्छा अनुसार सभी विषयों जैसे- विज्ञान और गणित के छात्र को कला, संगीत, साहित्य, मानवीकी जैसे विषय चयन करने की औपचारिक रूप से अनुमती इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 में दि गई है । इसके कारण विद्यार्थी में मानवीयता के मूल्य का संचारण होगा, उसके चरित्र निर्माण की शुरुआत होगी और वह एक संवेदनशील, करुणामय और नैतिक मनुष्य बनेगा । साथ-साथ उसकी क्षमता के अनुसार वह रोजगार भी प्राप्त कर सकेगा इन सभी पक्षों पर इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति में बल दिया गया है ।

इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के माध्यम से सन- 2040 तक भारत की शिक्षा व्यवस्था में सामाजिक और आर्थिक रूप से भिन्न शिक्षार्थियों को एकसमान और सर्वोच्च गुणवत्ता की शिक्षा प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया है। भारत के विकास के लिए जो-जो अनिवार्य आवश्यकता है वह इस शिक्षा नीति के माध्यम से प्राप्त हो यह प्रयास सभी को करने होंगे ।

3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 मुख्य बातें :- यह शिक्षा नीति को मूल रूप में चार भागों में बांटा गया है । इस चार मुख्य बिंदु में निम्नलिखित बातें महत्त्वपूर्ण है । जैसे- 3.**1. विद्यालय शिक्षा**- बालकों के लिए आधिगम हेतू वातावरण निर्माण करना, विद्यालय छोडने वाले बालकों के लिए कार्य करना, विद्यालय स्तर की पाठ्यक्रम/ पाठ्यचर्या का निर्माण, सभी के लिए विद्यालय शिक्षा की व्यवस्था, विद्यालय क्लस्टर का निर्माण, विद्यालय शिक्षा के लिए मानकों का निर्माण, शिक्षक आदि कार्य होने है ।

3.**2. उच्च शिक्षा-** उच्च शिक्षा के अंतर्गत गुणवत्तापूर्ण विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों का निर्माण, शैक्षिक संस्थाओं की पुनर्रचना करना, नवोन्मेष एवं अनुसंधान पर जोर, शिक्षकों का आधिगम, उच्च शिक्षा हेतू नियमन करने वाली प्रणाली का निर्माण, प्रबंधन आदि कार्य होने है ।

3.**3. अन्य केन्द्रीय विचारणीय पक्ष -** इसके अंतर्गत व्यावसायिक शिक्षा, प्रौढ शिक्षा एवं सतत शिक्षा, भारतीय भाषाओं, कलाओं, और संस्कृतियों का विकास, तकनीक का प्रयोग और ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा के संदर्भ में विचार विमर्श किया जाना है ।

3.**4. कियान्वयन**- इस बिंदू के अंतर्गत केंद्रीय शिक्षा सलाहकार मंडल का सशक्तिकरण, वित्तीय सहयोग और सभी महत्त्वपूर्ण बिंदूओं का क्रियान्वयन को रखा गया है ।

4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के महत्वपूर्ण प्रावधान :- इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020 में जो भी प्रावधान किये गये है वे "प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और दर्शन की बृहत परंपरा को ध्यान में रखकर किये गये है । भारतीय दर्शन और विचार में ज्ञान, प्रज्ञा और सत्य की खोज को सर्वोच्च माना गया है । प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति में ज्ञान प्राप्त करने का मतलब था कि इस ज्ञान के आधार पर पूर्ण आत्मज्ञान का बोध हो सके ।" भारतीय दर्शन और संस्कृति का विश्व में जो प्रभाव दिखाई देता है इस महत्वपूर्ण भारतीय दर्शन और ज्ञान का विश्वभर में आनेवाले पीढ़ियों को लाभ हो इस दृष्टि से केवल इसका सही रखरखाव और संप्रेषण ही नहीं करना बल्कि इसपर गहन अनुसंधान करके उसमें अपना योगदान देना है और इस शिक्षा नीति में इसका नयी पद्धति से प्रयोग करना है । इस शिक्षा नीति में शिक्षकों को प्रशिक्षण के माध्यम से सक्षम और अधिगम प्रक्रिया प्रभावी बनाने के लिए प्रयास किये गये है । सभी छात्रों के लिये वे किसी भी भौगोलिक प्रदेश, जाति, धर्म, पंथ उपेक्षित, दलित, अल्पसंख्यांक, आदि किसी भी वर्ग के हो सभी को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का प्रावधान इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 की महत्वपूर्ण विशेषता है ।

5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 की दृष्टि:- राष्ट्रीय शिक्षण नीति- 2020 की दृष्टि विशाल है । छात्र में वैचारिकता के अलावा उनके व्यवहार, मस्तिष्क और दिलो- दिमाग में भारतीयता का गर्व हो; मनुष्य के अधिकार, सतत और शाश्वत विकास की दृष्टि, पर्यावरण के अनुकूल जीवनशैली जीने का समर्थन करने का ज्ञान, कौशल, मूल्य अर्जित करने के साथ इन सब पर आधारित जीवनशैली को अपनाने को मजबूर करने वाली दृष्टि का पूर्ण विकास करना इस नीति का दर्शन है । इस दर्शन के चलते वह भविष्य में वास्तविक रूप में वैश्विक "मनुष्य" बने यही इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020 की सबसे महत्वपूर्ण बात है ।

6. विद्यालय शिक्षा पाठ्यक्रम संरचना :- वर्तमान समय में विद्यालय शिक्षा की संरचना 10 + 2 की है । राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में यह संरचना 5 + 3 + 3 + 4 होगी मसलन प्रथम स्तर में 3 से 8 वर्ष के बालक पूर्व विद्यालय शिक्षा में 3 से 6 वर्ष तक तथा प्रथम और द्वितीय कक्षा में 7 से 8 वर्ष तक आधारभूत अध्ययन करेंगे । इस नीति में बच्चे 3-8 वर्ष 8 से 11वर्ष 11 से 14 वर्षे और 14 से 18 वर्षे उम्र के अनुसार चार अलग-अलग चरणों में विभाजित किये गये है । पहले चरण में प्रायमरी से दूसरी कक्षा, दूसरे चरण में तीसरी से पांचवीं कक्षा, तीसरे चरण में छटी से आठवीं कक्षा और चौथे चरण में नौवीं से बारहवीं कक्षा सम्मिलित है ।प्रथम चरण फाउंडेशन है इसमें तीन से आठ वर्ष के बच्चों को अंगनबाडी में प्रथम 3 से 6 वर्ष प्री- स्कूलिंग की शिक्षा लेनी होगी । इसके बाद उम्र सात और आठ में बच्चा प्रथम एवं दूसरी कक्षा की पढाई प्राथमिक स्कूल में करेगा । इस प्रकार प्रथम पाच वर्षे की पढाई होगी । दूसरा चरण प्रीपेटरी चरण है इसमें उम्र 8 से 11 वर्ष के बच्चे कक्षा 3 से 5 की पढाई करेंगे । तीसरा चरण मिडल स्कूल है इसमें उम्र 11 से 14 वर्ष तक के बच्चे कक्षा 6 से 8 तक की पढाई करेंगे । चौथा चरण सेकंडरी स्टेज है इसमें उम्र 14 से 18 वर्षे तक के बच्चे प्रथम 9 वीं और 10 वीं की कक्षा तथा दूसरे चरण में 11 वीं और 12 वीं कक्षा की पढाई करेंगे ।

7. निष्कर्ष :- राष्ट्रीय शिक्षा नीति -2020 शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी बदलाव ला सकती है । इसके अंतर्गत जिन संस्थाओं को बनया जाना है उसे जल्द बनया जाय और क्रियान्वयन के लिए आवश्यक निर्देश , मार्गदर्शन , प्रशिक्षण समय-समय पर प्राप्त हो ।

****

8. संदर्भ :-

1. राष्ट्रीय शिक्षा धोरण, 2020 - चित्किसा, प्रा. डॉ. भालबा विभुते , मेहता पब्लिशिंग हाउस, पुणे – प्रथम आवृति – जून – 2022.
2. राष्ट्रीय शिक्षा धोरण- 2020 (हिंदी), मानव संसाधन विकास मंत्रालय , भारत सरकार .
3. ऑल इंडिया सर्वे ऑन हायर एजुकेशन- 2019-20, शिक्षा मंत्रालय, उच्च शिक्षा विभाग, भारत सरकार.
4. सयुक्त राष्ट्र – आर्थिक एवं सामाजिक परिषद रिपोर्ट 2015- 16, प्रकाशन विभाग, सयुक्त राष्ट्र- न्यूयार्क शहर.

विराटेश्वर मन्दिर के मूर्ति शिल्प का प्रतिमा.शास्त्रीय विवेचन

डॉ.शिवा कान्त त्रिपाठी
सह.आचार्य
प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय अमरकंटक मध्य प्रदेश-484887

प्रो. आलोक श्रोत्रिय
आचार्य
प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय अमरकंटक मध्य प्रदेश-484887

रमेश कुमार
शोध छात्र
प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय अमरकंटक मध्य प्रदेश- 484887

कलचुरियों का शासन काल कला एवं स्थापत्य की दृष्टि से अतिशय महत्त्वपूर्ण रहा है। इस वंश के शासक साहित्य और कला के आश्रयदाता होने के साथ ही धार्मिक भावना से अनुप्राणित भी थे। अतः उनके प्रयासों से अनेकानेक मन्दिरों का निर्माण करवाया गया। इसी क्रम में मध्य प्रदेश के शहडोल संभाग के सोहागपुर में 11वीं शताब्दी ई0 में युवराज देव प्रथम ने विराटेश्वर मन्दिर का निर्माण करवाया।1 किंवदंती है कि यह क्षेत्र महाभारत में विराट या मत्स्यदेश के राज्य का एक हिस्सा था और इसका नाम इसके राजा महाराजा विराट के नाम पर रखा गया था। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में ध्यातव्य है कि कलचुरि नरेश युवराज देव शिव के अनन्य उपासक थे एवं सामाजिक और आध्यात्मिक विकास की दृष्टिकोण से इस मन्दिर का निर्माण उनके द्वारा बेसर शैली में कराया गयाए जिसकी गणना कलचुरियों द्वारा निर्मित बेहतरीन एवं सुरुचिपूर्ण स्मारको में की जाती है। भगवान शिव की यहां विराटेश्वर के रूप में पूजा की जाती है। ऐसा माना जाता है कि युवराज देव प्रथम ने इस मंदिर का निर्माण गोलकी मठ के आचार्य के सम्मुख प्रस्तुत करने के उद्देश्य से करवाया थाए जिसकी लम्बाई 40 फीट तथा ऊंचाई 72 फीट है। यह मन्दिर 87ष्ा56ष्ा6ष् की एक उच्च जगती पर निर्मित है2ए जिसका मुख पूर्व की ओर है। इस मन्दिर के बाहर शिव के वाहन नंदी की प्रतिमा स्थापित है। वर्षा और धूप के कारण यद्यपि नंदी की प्रतिमा थोड़ी घिस गई है। ध्यातव्य है कि मन्दिर की दीवारों पर बाहर की ओर जो भी प्रतिमाएँ पत्थरों पर नक्काशी कर बनाई गयी हैंए वे पूर्ण रूप से चंदेल कालीन खजुराहों की मूर्ति कला का स्मरण कराती हैं।3 मन्दिर की निर्माण योजना में एक वर्गाकार गर्भगृहए अन्तरालए महामण्डप ;प्रवेश द्वारद्ध अथवा मण्डप शामिल है। इस मन्दिर के महामण्डप तथा अर्धमण्डप का कायाकल्प किया गया हैए अस्तु उनकी योजना का मूल्यांकन केवल अनुमान पर ही आधारित है। महामण्डप में आंशिक रूप से संरक्षित एक वितान की योजना मिलती है।

विराटेश्वर मंदिर के प्रत्येक कोने में गर्भगृह जो कि 2ण्96 मीटर ग 2ण्96 मीटर के आकार का है4ए भित्तिस्तम्भों से सुसज्जित है। मंदिर में जलधरी के साथ एक शिव लिंग गर्भगृह में स्थापित हैए जिसका वरीमार्ग पूर्व की तरह उत्तर की ओर है। वितान में प्रतिक्षेदि वर्ग होते हैं और जिसे एक पूर्ण खिले हुए कमल से अलंकृत किया गया है। समतल छत के अन्तराल में स्तम्भ शीर्ष वाले भित्तिस्तम्भों का निर्माण कराया गया है। मन्दिर के गर्भगृह तक पहुंचने के लिए एक अलंकृत द्वार हैए सप्त शाखाओं के चैखटों पर नक्काशी की योजना उत्कृष्ट कोटि का है। मुख्य रूप से पत्र शाखाए गन्धर्व शाखा और रूप शाखाओं का उत्कृष्ट विधान मिलता है। देवी गंगा तथा यमुना सर्पफण से ढकी हुई है और महिला परिचारिकाओं के साथ द्वार के दोनों किनारों पर उनकी उपस्थिति मन्दिर के सौन्दर्य तथा मांगलिक भावों की अभिवृद्धि कर रही है। वे चार सशस्त्रगणों से घिरे हुए हैए बायीं ओर के गणों के दाहिने हाथों में बज्र तथा अक्षसूत्र धारित कर रखा हैए जबकि बाएँ हाथों में खण्डक तथा त्रिशूल धारण कर रखा है। गणों के ये आयुध मन्दिर में अलंकरण के साथ ही साथ गणों के शक्तिशाली होने के भी परिचायक हैए ये गण दाहिने हाथ में सृष्टि के प्रतीक कमल तथा बायें हाथ में खटवांग धारण कर रखे हैए जबकि दाहिने हाथ डमरु तथा कपाल शोभायमान है।उतरंग को तीन कोष्ठकों में प्रतिक्षेपित किया गया हैए जिनमे से ललाटविम्ब में शिव की मूर्तियाँ हैं। बायें और दाएँ कोष्ठकों में नृत्यरत गणेश की प्रतिमा हैए जबकि विद्या की देवी सरस्वती अपने वाद्य यन्त्र वीणा के साथ रूपायित है। इसके अतिरिक्त अन्यत्र अन्य देवताओं में सरस्वती के साथ परमपिता ब्रह्मा चतुर्भुजी विष्णु के साथ लक्ष्मी तथा गजलक्ष्मी और चतुर्भुजी गजलक्ष्मी की प्रतिमा दाहिनी ओर हाथी के साथ प्रदर्शित है5। ध्यातव्य है कि गजलक्ष्मी की प्रतिमा पल्लव कालीन महाबलीपुरम से प्राप्त गजलक्ष्मी की प्रतिमा से साम्यता रखती है। मन्दिर में शिव की प्रतिमा शीर्ष शिखर पर अधिष्ठित है और नवग्रह के साथ.साथ सप्तमातृकाओं कि प्रतिमाएँ पारम्परिक क्रम में दर्शायी गयी है। उदम्बरा को नवीनीकृत किया गया है।

विराटेश्वर मन्दिर में पीठ वेदिबन्ध जंघा और वरन्डिका तथा शिखर क्रमशः ऊंचाई के क्रम में हैंए सम्पूर्ण मन्दिर के घटकों को एक उच्च स्तर पर सजाया गया है।मन्दिर का प्रारम्भ जात्य कुम्भ तथा कलश युक्त पीठ से होता हैए जिसके उपर हीरों की एक सपाट ढलाई होती है और यही योजना मान्दिर के चतुर्दिक दिखलाई पड़ती है। वेदिबंध को तीन गहरे मोल्डिंग से युक्त किया गया है तथा एक भाग को फ्लैट मोल्डिंग से ढका गया है। मन्दिर की दो क्षैतिज पट्टिया जंघा को तीन भागों में विभाजित करती हैए जिनमें से सबसे निचला भाग अत्यधिक लम्बा है। प्रत्येक चरण में अपसराओंए व्याल तथा अन्य देवताओं की प्रतिमाओं की एक पंक्ति प्रदर्शित है। मन्दिर के भद्ररथ को तीन भित्तिस्तम्भों से सुसज्जित किया गया हैए हलांकि इनमें से अधिकांश भाग खाली हैं। मन्दिर के वरन्डिका का हिस्सा जंघे का मुकुट है जिसमें चार सपाट साचें बने है- मन्दिर निर्माण की उपयुक्त योजना का पालन कपिली तक किया जाता है।मन्दिर के गर्भगृह के दीवारों को भूइयाँ शिखर के आधार पर सात रथों में प्रक्षेपित किया गया है। उल्लेखनीय है कि प्रत्येक रथ एक सम्बन्धित लघु अंग शिखर में परिणित होता है। इस क्षेत्र को चैत्य रुपांकनों के साथ सजाया गया है। उत्तर.दक्षिण और पश्चिम का भाग थोड़े लम्बे लघु शिखर से सुशोभित हैए जो पतले शिखर की सुन्दरता को और भी बढ़ा देता है। शिखर की यह सुन्दरता चन्देल कालीन खजुराहों के मन्दिरों से बहुत हद तक साम्यता रखती है।मन्दिर का शिखर सप्त रथ प्रकार का है। मध्यलता और सहायक लताएँ समतल है जबकि इसके विपरीत कर्ण रथ 21 भूमि आमलकों से सुशोभित है। विराटेश्वर मन्दिर का शिखर आज भी सुरक्षित अवस्था में है जिसमे आमलकए चन्द्रिकाए अमलसारिका तथा कलश मन्दिर की शोभा में अभिवृद्धि कर रहें हैं। अन्तराल के ऊपर वास्तु की छत में शुक.नासिका की उपस्थिति मन्दिर की शोभा को और भी बढ़ा देती है। मन्दिर में भित्तिस्तम्भों से आवृत्त एक केन्द्रीय चैत्य शयन कक्ष है जिसमे एक मानवाकृति भी दिखाई पड़ती है। शुक.नासिका के ऊपर ताण्डव शिव को ढके हुए एक फलक हैए जो उत्तर और दक्षिण के पार्श्व अग्र भाग कई क्षैतिज पैनल एवं मोलडिंग से युक्त है। दोनो ओर की भित्तिस्तम्भों पर शिव और दुर्गा की प्रतिमाएँ अधिष्ठित है।

मन्दिर में दोनों ओर के भित्तिस्तभों में महामण्डप जिसका आकार 6.25 मी0 x 6.25 मी0 का है और इसके पास अनुप्रस्थ भाग में कक्षासन का निर्माण किया गया है। उल्लेखनीय है कि दक्षिणी कक्षासन अपेक्षाकृत अधिक संरक्षित है जबकि उत्तरी कक्ष सम्प्रति नष्ट हो चुका है जिसके प्रतिरूप को ब्यालो द्वारा अन्तराल में खड़ी अपसराओं से संजोया गया है। निचले भाग को कीचकों से युक्त किया गया है तथा पूरे पैनल आविष्टित है। मन्दिर के छज्जे की छत को सहारा देने वाले भारवाहक स्तम्भ कक्षासन पर रूपायित हैं। महामण्डप की छत का निर्माण प्रतिच्छेद करने वाले वर्गों से बनाया गया है। सभी कोनो में दो स्तम्भ बने है और इस प्रकार कुल भित्तिस्तम्भों की संख्या बढ़कर 8 हो जाती है। यहाँ उल्लेखनीय है कि मन्दिर के समस्त भित्तिस्तम्भों को चैत्य तथा अन्य सजावटी रूपांकनों से अलंकृत किया गया हैए यद्यपि मन्दिर के छत का मध्य भाग नीचे गिर चुका हैए जबकि बची हुई तीन महिला आकृतियाँ सम्भवतः भार का समर्थन करने वाली शालभंजिकाएँ मन्दिर की शोभा में अभिवृद्धि कर रही है। महामण्डप की छत समतल है। जैसा कि प्रसिद्ध पुरातत्त्वविद प्रो0 आर0 डी0 बनर्जी सोहागपुर स्थित इस विराटेश्वर मन्दिर को अमरकंटक मन्दिरों के समूह के साथ चेदी वंश के दूसरे समूह में रखा है। प्रो0 आर0 डी0 बनर्जी के शब्दों में कहे तो नागर शैली में निर्मित इस मंदिर का निर्माण कलचुरियों द्वारा 11वीं शताब्दी में कराया गया।

जिस प्रकार मानव शरीर में आत्मा का वास होता है उसी तरह मंदिर में प्रतिमा की भी प्राण प्रतिष्ठा की जाती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ईश्वर की उपासना के लिए मन्दिरों का निर्माण उनकी प्रतिमाओं को स्थापित करने के लिए ही हुआ होगा। इस प्रकार कला के अनेक रूपों में मूर्तिकला अभिव्यक्तिकरण का एक सशक्त माध्यम रहा जिसने सांस्कृतिक विचारों और भावनाओ के अर्थ को भी समझाने में भी महती भूमिका का निर्वाह किया है। इस दृष्टि से 10वीं शताब्दी ई0 में उदित होने वाले कलचुरि राजवंश का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

विराटेश्वर मन्दिर की मूर्तिकला प्रतिमा शास्त्रीय और सौन्दर्य की दृष्टि से अनुपम है। यह मन्दिर मुख्य रूप से शिव को समर्पित है जो कल्याण तथा कभी.कभी संहारक के रूप में जाने जाते है। इस प्रकार शिव का स्वरुप बहुपक्षीय हैए अपने भक्तों के लिए जहाँ वह कृपालु और अनुग्रह दाता हैं तो दूसरी ओर सृष्टि के विनाश हेतु ताण्डव नृत्य कर्ता भी है उक्त मन्दिर में शिव की प्रतिमा लिंग के रूप में है। धातव्य है कि विष्णु धर्मोत्तरपुराण में लिंग के तीन प्रमुख भाग क्रमशः भोगपीठ भद्रपीठ और ब्रह्मपीठ बताये गये हैए कला में शिव के एक मुख से लेकर पाँच मुखों का चित्रण किया जाता रहा है।6 मन्दिर के बाहर शिव के वाहन नंदी की प्रतिमा स्थापित है जो धर्म के प्रतीक है। जैसा कि पुराणों में नन्दी को शिव के वाहन तथा उनके अवतार रूप में भी स्वीकार किया गया है 7 जो बैल के रूप में शिव मन्दिरों में प्रतिस्थापित होते हैं। नन्दी को शक्तिसम्पन्नता तथा कर्मठता का प्रतीक माना जाता है। विराटेश्वर मन्दिर में विष्णु को उनके आयुध गदाए अक्षमाला तथा शंखण्चक्र के साथ दिखाया गया है। विराटेश्वर मंदिर में विष्णु की स्थानक मुद्रा की प्रतिमा प्राप्त होती है तथा उन्हें चतुर्भुजी रूप में प्रदर्शित किया गया है। जैसा कि प्रतिमा शास्त्र में विष्णु की चार प्रकार से प्रतिमा निर्माण का विधान मिलता हैए योगस्थानक भोगस्थानक वीरस्थानक और अविचारक8। लक्ष्मी धनधान्य तथा समृद्धि की देवी के रूप में जानी जाती रही है विराटेश्वर मंदिर में लक्ष्मी मं का गजलक्ष्मी स्वरूप दिखलाई पड़ता है. जो कि प्राचीन भारतीय कला में लक्ष्मी का सर्वाधिक लोक प्रिय स्वरूप है। जैसा कि श्रीसुक्त में इस देवी को हस्तिनाद प्रमोदनीय अर्थात हाथियों के चिंघाड़ से प्रसन्न होने वाली कहा गया है। गजलक्ष्मी के रूप में उन्हें स्थानक और आसन्न दोनों ही मुद्राओं में प्रदर्शित किया गया है9। हाथ में पद्म लिए हुए तथा पद्म पर स्थित लक्ष्मी को दोनो पाश्र्व से दो गजों के द्वारा घटाभिषेक कराते हुए प्रदर्शित किया गया है।मन्दिर में विष्णु के वाराह अवतार की प्रतिमा स्थापित है जिसे पृथ्वी के उद्धार करने का प्रतीक माना जाता है। इस रूप में आकृति का पूरा शरीर वाराह का होता हैए जैसा कि शिल्प रत्न में वाराह की मूर्ति के विषय में बताया गया है कि उसे तीष्णदाढ़ों चौड़े स्तम्भ तथा अध्रोष्टों से युक्त महाकाय शूकर की तरह बनाये जाने का विधान मिलता है10। विराटेश्वर मन्दिर की वाराह प्रतिमा के हाथो में गदा और पद्म दिखाया गया है. जो मत्स्य पुराण में बताये गये लक्षण से पर्याप्त साम्यता रखती है11 .

महावराहं वक्ष्यामि पद्महस्तं गदाधरम्।
तीक्ष्णदंष्ट्राग्रं धोणास्यं मेदिनीवामकर्पूरम॥
दंष्ट्राग्रेणोद्धतांदान्तां धरणींमुत्पलान्वितम्।
विस्मयोत्फुल्लनयनामुपरिष्टात्प्र कल्पयेत॥
दक्षिणं कटिसंस्थं तु करं तस्याः प्रकल्पयेत।
कूर्मोपरि तथा पादमेकं नागेन्द्रमूर्धनि॥
मत्स्यपुराण. 260.28.30

मन्दिर के मुख्य द्वार पर नवग्रह की प्रतिमाएँ बनी है जिसके अन्तर्गत सूर्य चन्द्र मंगलए बुद्ध बृहस्पति शुक्र शनि राहु .केतु शामिल है। ध्यातव्य है कि मौलिक रूप से नवग्रहों की प्रतिमा का विकास प्रधान देवों के रूपोद्भावना के रूप में हुआ यथा चन्द्र से वरुण मंगल से कार्तिकेय बुद्ध से नारायणए बृहस्पति से ब्रम्हा, शुक्र से शुक्र शनि से यम, राहु से सर्प और केतु से मंगल इत्यादि देवता विकसित हुए। विराटेश्वर मंदिर में इन नवग्रहों की मूर्तियां नवग्रह पट्टों के रूप में मुख्य प्रवेश द्वार के उतरंग के रूप में दिखलाई पड़ता है12। मन्दिर में नवग्रह प्रतिमा निर्माण के पीछे यह भावना थी कि व्यक्ति का जीवन सुखी और समृद्ध हो तथा वह दीर्घायु की प्राप्ति हो। हालांकि गरुड़ पुराण के अनुसार धन और शान्ति चाहने वाले नवग्रहों की पूजा करते हैं। विराटेश्वर मन्दिर के बाह्य भाग के ऊपर बीच में महामण्डप के एक किनारे से दूसरे किनारे तक अप्सराओं का विभिन्न भाव.भंगिमाओं में अंकन प्राप्त होता है13. जो प्रतिमा शास्त्रीय तथा सौन्दर्य की दृष्टि से अति महत्तवपूर्ण है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि शहडोल जिले का प्राचीन विराटेश्वर मंदिर अपनी धार्मिक और आध्यात्मिक शक्ति के लिए जाना जाता है। यहां भगवान शिव को विराटेश्वर के रूप में पूजा जाता है और कहा जाता है कि यह मंदिर सर्वोच्च चेतना की एक झलक प्रस्तुत करता है और इसके दर्शनों का पुण्य बारह ज्योतिर्लिंगों के दर्शन के बराबर है। किंवदंती के अनुसारए पांडवों ने अपने निर्वासन के अंतिम वर्ष इस क्षेत्र में बिताए थे। मंदिर की बाहरी भित्तियों पर उकेरी गयी श्रृंगार मूर्तियाँ एवं देवी देवताओं के विभिन्न शिल्पांकन मंदिर मंदिर से ध्वनित आध्यात्मिकता और कलचुरि कला का सजीव परिचय प्रस्तुत करती हैं।

****

सन्दर्भ-

1. धरोहर संचालनालय पुरातत्त्व अभिलेखागार एवं संग्रहालय जिला पुरातत्त्व संघ शहडोल 2010
2. वाजपेयी एसण् केण् शआर्क्योलॉजिकल एक्सप्लोरेशन ऑफ़ साइट्स मोनुमेंट्स एंड आर्ट.रेलिक्स ऑफ़ शहडोल डिस्ट्रिक्टशए मध्य भारतीए अंक 43 वर्ष 1997 पृण् 104
3. सिंह ए0के0 टेम्पल्स ऑफ़ द कल्चुरि पीरियड प्रतिभा प्रकाशन 2002 पृण् 87
4. वही पृष्ठ संख्या 89
5. वही पृष्ठ संख्या 88
6. श्रीवास्तव ब्रजभूषण प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान एवं मूर्तिकलाए विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी 1998 पृष्ठ 59
7. वहीं पृष्ठ 69
8. वही पृष्ठ 12
9. वही पृष्ठ 119
10. वही पृष्ठ 32
11. वही पृष्ठ 32
12. मित्रा डॉ.संघ उत्तर भारतीय अप्रधान हिन्दू देव देवियाँ प्रतिमा शास्त्रीय अध्ययन पृष्ठ 94 से 99
13. धरोहरः संचालनालय पुरातत्त्व अभिलेखागार एवं संग्रहालयए जिला पुरातत्त्व संघ शहडोल 2010

कार्यबल उपकरण: गिग अर्थव्यवस्था के विकास में कौशल प्रशिक्षण

डॉ. विनोद सेन
सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक (म.प्र)

संजीत कुमार
शोधार्थी ,अर्थशास्त्र विभाग, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक (म.प्र)

संघमित्रा कर
शोधार्थी ,अर्थशास्त्र विभाग, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक (म.प्र)

शोध सारांश -*गिग अर्थव्यवस्था एक ऐसी प्रणाली है जिसमे रोजगार, अनुबंध के आधार पर किया जाता है। इसमें रोजगार का स्वरूप लचीला और स्वतंत्र होता है। श्रमिक अपने इच्छा अनुसार किसी भी कार्य को चुन सकते है और उसे छोड़ सकते है, उनपर कोई दबाव नहीं होता। यह प्रक्रिया पूर्णतः ऑनलाइन प्लेटफोर्म के माध्यम के तहत संचालित की जाती है। इस शोध पत्र में भारत में गिग अर्थव्यवस्था और गिग श्रमिकों के कौशल विकास के विभिन्न पहलुओं जैसे कौशल की आवश्यकताओं, चुनौतियों और कौशल विकास के लिए रणनीतियों पर चर्चा की गई है। इसमें बताया गया है की गिग श्रमिकों को अपने कौशल को उन्नत करने और प्रासंगिक बने रहने के लिए निरंतर सीखते रहना होगा और इसके लिए उन्हें अपनी जिम्मेदारियों को समझने की आवश्यकता है। यह अध्ययन विभिन्न माध्यमिक स्रोतों जैसे पत्रिकाओं, लेखों, सर्वेक्षण आंकड़े, वेबसाइटों इत्यादि से एकत्रित जानकारी पर आधारित है। इस शोध पत्र का उद्देश्य गिग अर्थव्यवस्था की सफलता के लिए आवश्यक कौशल और सीखने की प्रथाओं में अंतर्दृष्टि प्रदान करना है, जो व्यक्तियों को इस प्रकार के कार्य में सफलता की संभावना बढ़ाने में मदद कर सकता है।*

शब्द कुंजी: कौशल विकास, ऑनलाइन प्लेटफॉर्म श्रमिक, गिग श्रमिक, गिग अर्थव्यवस्था

परिचय-गिग अर्थव्यवस्था ने जन - मानस की कार्य - प्रणाली में क्रांति ला दी है, जिससे वे अल्पकालिक, लचीली कार्य व्यवस्था के माध्यम से पैसा कमा सकते हैं। जिससे पिछले कुछ वर्षों में महत्वपूर्ण लोकप्रियता प्राप्त हुई है, श्रमिक गिग कार्य को अपनी आय के प्राथमिक स्रोत के रूप में ले रहे हैं। हालांकि, गिग अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए, व्यक्तियों को विशिष्ट कौशल बनाने की आवश्यकता होती है जो उन्हें अत्यधिक प्रतिस्पर्धी बाज़ार में अलग दिखने की अनुमति देता है। भारत में गिग अर्थव्यवस्था तेजी से बढ़ रही है और इसके 2023 तक 455 बिलियन डॉलर के मूल्य तक पहुँचने की उम्मीद है। केपीएमजी की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में गिग अर्थव्यवस्था इंटरनेट और स्मार्टफोन की बढ़ती पैठ, लचीलापन कार्य की बढ़ती माँग जैसे कारकों से प्रेरित है। कार्य की व्यवस्था, और सहस्राब्दियों की बढ़ती आबादी जो कार्य के अवसरों के लिए खुली है। गिग अर्थव्यवस्था में रोजगार के नए अवसर पैदा करने और भारत में आर्थिक विकास को गति देने की क्षमता है। हालांकि, गिग श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा और लाभों की कमी के साथ-साथ शोषण और निम्न मजदूरी की संभावना के बारे में भी चिंताएं हैं (बनिक और पडलकर, 2021)।"आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के लिए राष्ट्रीय रणनीति" पर नीति आयोग की रिपोर्ट भारत में गिग अर्थव्यवस्था से संबंधित आकड़े प्रदान करती है। रिपोर्ट के अनुसार भारत में गिग अर्थव्यवस्था के 2020 तक मौजूदा $1.5 बिलियन से $2 बिलियन तक बढ़ने की उम्मीद है। भारत में गिग अर्थव्यवस्था विविध है और इसमें राइड -हेलिंग, फूड डिलीवरी, ई-कॉमर्स और फ्रीलांस कार्य जैसे क्षेत्र शामिल हैं। गिग अर्थव्यवस्था से रोजगार के नए अवसर पैदा होने की उम्मीद है, खासकर महिलाओं और युवाओं के लिए, और यह बेरोजगारी के मुद्दे को दूर करने में मदद कर सकता है। हालाँकि, गिग अर्थव्यवस्था कुछ चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करती है, जैसे कि सामाजिक सुरक्षा लाभों की कमी और गिग श्रमिकों के लिए सीमित कानूनी सुरक्षा। रिपोर्ट गिग अर्थव्यवस्था में कौशल विकास और श्रमिकों के फिर से कौशल की सुविधा के लिए एआई-आधारित तकनीकों के उपयोग की सिफारिश करती है। रिपोर्ट में गिग श्रमिकों के अधिकारों और हितों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक व्यापक कानूनी और नियामक ढांचे के विकास का भी आह्वान किया गया है। इसमें गिग श्रमिकों को सामाजिक सुरक्षा लाभ प्रदान करने और शिकायत निवारण तंत्र तक उनकी पहुँच से संबंधित उपाय शामिल हैं। रिपोर्ट भारत में गिग अर्थव्यवस्था की क्षमता को पहचानती है, और यह सुनिश्चित करने के लिए कौशल विकास, रीस्किलिंग और नियामक ढांचे के लिए एक समन्वित दृष्टिकोण की आवश्यकता पर प्रकाश डालती है कि गिग अर्थव्यवस्था का विकास समावेशी है और सभी हितधारकों को लाभ पहुंचाता है।

सम्बंधित साहित्य की समीक्षा -कार्य और रोजगार संबंधों की बदलती प्रकृति पर विशेष ध्यान देने के साथ हाल के वर्षों में गिग अर्थव्यवस्था का बड़े पैमाने पर अध्ययन किया जा रहा है। कई शोधकर्ताओं ने गिग अर्थव्यवस्था के विकास के लिए गिग श्रमिकों के कौशल विकास और प्रशिक्षण पर जोर दिया है।

कोहेन और सुंदरराजन (2015) ने गिग अर्थव्यवस्था को प्रशिक्षण और कौशल विकास के एक नए मॉडल की आवश्यकता पर जोर दिया है, जो लचीलेपन और अनुकूलन क्षमता पर जोर देता है। अध्ययन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के विकास की सिफारिश करता है जो संचार और समस्या-समाधान जैसे सॉफ्ट स्किल्स के निर्माण पर ध्यान केंद्रित करते हैं, साथ ही तकनीकी कौशल जो गिग अर्थव्यवस्था के लिए विशिष्ट हैं।

क्यूक और अन्य (2015) द्वारा गिग अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए गिग श्रमिकों के पास विभिन्न प्रकार के कौशल स्वरूपों की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है। अध्ययन में ऐसे प्रशिक्षण कार्यक्रमों के विकास की सिफारिश की गई है जो गिग श्रमिकों को विभिन्न गिग अर्थव्यवस्था से जुड़े रोजगार में सफल होने में मदद करने के लिए डिजिटल साक्षरता, संचार और मार्केटिंग जैसे कई कौशल विकसित करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

ऑटोर और डॉर्न (2013) द्वारा किया गया एक अध्ययन गिग कर्मचारियों को प्रशिक्षण और कौशल विकास के अवसरों तक पहुँच पर जोर देता है। अध्ययन का तर्क है कि गिग अर्थव्यवस्था के परिणामस्वरूप श्रम बाजार का "ध्रुवीकरण" होने की संभावना है, अत्यधिक कुशल श्रमिकों को नए अवसरों से लाभ होगा, जबकि कम कुशल श्रमिकों को कार्य खोजने के लिए संघर्ष करना पड़ेगा।

डे, ट्यूर और रवि (2022) ने भारत में गिग अर्थव्यवस्था का संक्षिप्त लेकिन सूचनात्मक अवलोकन प्रदान करता है। यह लेख भारत में गिग अर्थव्यवस्था के वादों पर चर्चा करता है, जिसमें नौकरी सृजन, आय सृजन और लचीलापन शामिल है, लेकिन देश में गिग श्रमिकों के सामने आने वाली चुनौतियों जैसे नौकरी की असुरक्षा, कम वेतन और सामाजिक सुरक्षा लाभों की कमी को भी स्वीकार करता है। लेखक इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता पर जोर देते हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि गिग श्रमिकों का शोषण न हो।

वू और वेई (2020) का लेख लोकप्रिय ऑनलाइन प्लेटफॉर्म फाइवर पर केंद्रित है और प्लेटफॉर्म पर कौशल के प्रावधान में अंतर्दृष्टि प्राप्त करने के लिए इसकी नेटवर्क संरचनाओं का विश्लेषण करता है। अध्ययन दो प्रकार के नेटवर्क की पहचान करता है: कार्य-उन्मुख और विश्वास-उन्मुख, और गिग अर्थव्यवस्था में विश्वास और प्रतिष्ठा के महत्व पर जोर देता है।

बर्क और काउलिंग (2020) का शोध पत्र फुर्तीली अर्थव्यवस्थाओं में फ्रीलांसरों की महत्वपूर्ण भूमिका की जांच करता है। लेखक स्वतंत्र कार्य के बढ़ते प्रसार और व्यक्तिगत श्रमिकों और व्यापक अर्थव्यवस्था दोनों को मिलने वाले लाभों पर प्रकाश डालते हैं। उनका तर्क है कि गिग

अर्थव्यवस्था के उदय ने अधिक तीव्र और लचीली कार्य व्यवस्था की आवश्यकता पैदा की है, और इस माँग को पूरा करने के लिए फ्रीलांसरों को विशिष्ट रूप से तैनात किया गया है। शोध पत्र के प्रमुख निष्कर्षों में से एक यह है कि पारंपरिक कर्मचारियों की तुलना में फ्रीलांसरों के स्व-नियोजित होने की अधिक संभावना है, जो उन्हें अपने कार्य पर अधिक नियंत्रण देता है और उन्हें उन परियोजनाओं को आगे बढ़ाने की अनुमति देता है जो उनके हितों और कौशल के साथ संरेखित होती हैं। संक्षेप में कहे तो गिग अर्थव्यवस्था में गिग श्रमिकों की सफलता के लिए कौशल विकास और प्रशिक्षण महत्वपूर्ण हैं। लचीला, अनुकूलनीय प्रशिक्षण कार्यक्रमों का विकास जो सॉफ्ट और तकनीकी कौशल के निर्माण पर ध्यान केंद्रित करता है, एवं प्रशिक्षण के अवसरों की एक विविध श्रेणी तक पहुँच का प्रावधान।

अध्ययन के उद्देश्य

- भारतीय गिग अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषताओं को समझन और गिग श्रमिकों एवं कंपनियों के सामने आने वाली चुनौतियों का अध्ययन करना।
- गिग श्रमिकों के कौशल आवश्यताओ की पहचान और कौशल विकास की नीतियों का मूल्यांकन करना।

अध्ययन की शोध - प्रविधि-यह अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जैसे की पत्रिकाओं ,लेखों, सर्वेक्षण डाटा , वेबसाइटों इत्यादि से एकत्रित जानकारी को विश्लेषण किया गया है।

गिग कार्य का भारतीय अर्थव्यवस्था में स्थान-गिग अर्थव्यवस्था कई कारणों से महत्वपूर्ण है:

लचीलापन: गिग अर्थव्यवस्था का एक मुख्य लाभ यह है कि यह श्रमिकों को उनकी कार्य व्यवस्था में अधिक लचीलापन प्रदान करती है, साथ ही गिग अर्थव्यवस्था गिग कर्मचारियों को जब चाहें, जितना चाहें उतना कार्य करने की अनुमति देता है, जिससे उन्हें अपने समय-सारणी पर अधिक नियंत्रण मिलता है।

नौकरी के अवसर बढ़े: गिग अर्थव्यवस्था ने उन लोगों के लिए नौकरी के नए अवसर पैदा किए हैं जो पारंपरिक रोजगार व्यवस्था में कार्य नहीं कर पाए होंगे। इसने परियोजना-दर-परियोजना आधार पर कार्य खोजने के लिए ग्राफिक डिजाइनरों, लेखकों और वेब डेवलपर्स जैसे विशेष कौशल वाले व्यक्तियों के लिए अवसर खोले हैं।

नवीनीकरण: गिग अर्थव्यवस्था ने नई तकनीकों और बिजनेस मॉडल के विकास को भी प्रेरित किया है। गिग श्रमिकों को ग्राहकों से जोड़ने वाले डिजिटल प्लेटफॉर्म ने व्यापार करने के नए आयाम प्रस्तुत किये, और पारंपरिक उद्योगों को बाधित किया है।

लागत बचत: व्यवसायों के लिए, प्रतिभा और संसाधनों तक पहुँचने के लिए गिग अर्थव्यवस्था एक लागत प्रभावी तरीका हो सकता है। यह व्यवसायों को परियोजना-दर-परियोजना के आधार पर श्रमिकों को नियुक्त करने की अनुमति देता है, उनकी श्रम लागत को कम करता है और उन्हें उनके कर्मचारी के आवश्यकताओं को पूरा करने में अधिक लचीलापन प्रदान करता है।

आर्थिक विकास: गिग अर्थव्यवस्था में नव रोजगार सृजन एवं उद्यमशीलता को बढ़ावा देकर आर्थिक विकास को गति देने की क्षमता है। यह नए उद्योगों और व्यापार मॉडल के विकास में भी योगदान दे सकता है।अतः निष्कर्ष के रूप में गिग अर्थव्यवस्था अति महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह श्रमिकों को अधिक लचीलापन और रोजगार के अवसर प्रदान करती है साथ ही नवाचार और आर्थिक विकास को भी बढ़ावा देती है। हालाँकि, यह चुनौतियों का भी सामना करता है और श्रमिकों के अधिकारों और कार्य के इस नए रूप के नियमन के बारे में भी पक्ष रखा जाता है।

गिग अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक कौशल-गिग अर्थव्यवस्था की सफलता के लिए आवश्यक कौशल गिग कार्य और उद्योग के प्रकार के आधार पर भिन्न हो सकते हैं, लेकिन कुछ सामान्य कौशल जो गिग श्रमिकों के लिए महत्वपूर्ण हैं, उनमें शामिल हैं:

डिजिटल साक्षरता: ज्यादातर गिग कार्य डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से होते हैं, इसलिए गिग श्रमिकों के लिए बुनियादी कंप्यूटर और इंटरनेट में कौशल होना आवश्यक है। उन्हें संचार, परियोजना प्रबंधन और वित्तीय लेनदेन के लिए डिजिटल टूल और ऐप का उपयोग करने में सहज होना चाहिए।

नेटवर्किंग: नए गिग कार्य का सृजन करने, और एक विश्वसनीय और कुशल गिग श्रमिकों के रूप में प्रतिष्ठा बनाने के लिए नेटवर्किंग आवश्यक है। इसमें ग्राहकों, साथियों और अन्य पेशेवरों के साथ संबंध बनाना शामिल है।

स्व-प्रचार: ग्राहकों को आकर्षित करने और भीड़ भरे बाजार में अलग दिखने के लिए गिग कर्मचारियों को खुद को और अपने कौशल को प्रभावी ढंग से बाजार में प्रस्तुत करने में सक्षम होना चाहिए। इसके लिए उच्च संचार कौशल और स्वयं प्रचार कौशल के साथ ही व्यक्तिगत ब्रांड बनाने की क्षमता की आवश्यकता होती है।

समय प्रबंधन: गिग कर्मचारियों को अपने समय को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने और समय सीमा को पूरा करने में सक्षम होना चाहिए, क्योंकि वे अक्सर एक साथ कई परियोजनाओं और ग्राहकों को चकमा दे रहे होते हैं।

अनुकूलनशीलता: गिग अर्थव्यवस्था लगातार विकसित हो रही है, इसलिए गिग श्रमिकों को अनुकूल होना चाहिए और नए कौशल सीखने और उद्योग में परिवर्तानुसार अनुकूल होना चाहिए।

विशिष्ट कौशल: गिग कार्य के प्रकार के आधार पर विशेष कौशल जैसे लेखन, ग्राफिक डिजाइन, प्रोग्रामिंग या फोटोग्राफी की आवश्यकता भी हो सकती है।

गिग श्रमिकों के लिए कौशल प्रशिक्षण -कौशल प्रशिक्षण गिग श्रमिकों की सफलता के लिए आवश्यक है, क्योंकि यह उन्हें गिग अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए आवश्यक कौशल हासिल करने में मदद कर सकता है। यहाँ गिग श्रमिकों के लिए कौशल प्रशिक्षण के कुछ विकल्प दिए गए हैं:

ऑनलाइन पाठ्यक्रम: कई ऑनलाइन पाठ्यक्रम उपलब्ध हैं जो गिग श्रमिकों को गिग अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए आवश्यक कौशल विकसित करने में मदद कर सकते हैं। उडेमी, कौरसेरा और स्किलशेयर जैसे प्लेटफॉर्म डिजिटल मार्केटिंग से लेकर प्रोग्रामिंग, ग्राफिक डिजाइन तक कई तरह के विषयों में पाठ्यक्रम पेश करते हैं।

पेशेवर संगठन: ज्यादातर पेशेवर संगठन अपने सदस्यों के लिए प्रशिक्षण और विकास कार्यक्रम पेश करते हैं। उदाहरण के लिए, फ्रीलांसर्स यूनियन ऑनलाइन पाठ्यक्रम, वेबिनार और इन-पर्सन इवेंट सहित फ्रीलांसरों के लिए कई तरह के संसाधन और प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रदान करता है।

साथ साथ सीखना (पीयर लर्निंग): गिग श्रमिक अन्य गिग श्रमिकों के साथ नेटवर्किंग करके और ऑनलाइन समुदायों में भाग लेकर अपने साथियों से सीख सकते हैं। यह नए अवसरों के बारे में जानने, सर्वोत्तम प्रथाओं को साझा करने और अपने कार्य पर प्रतिक्रिया प्राप्त करने का एक शानदार तरीका हो सकता है।

अनुभवी व्यक्ति : अपने क्षेत्र में अनुभव रखने वाले अनुभवी व्यक्ति को ढूंढना नए कौशल सीखने और गिग अर्थव्यवस्था में सफल होने के बारे में सलाह लेने का एक बेहतर तरीका हो सकता है। सलाहकार मूल्यवान प्रतिक्रिया और मार्गदर्शन प्रदान कर सकते हैं, साथ ही आपको नए अवसरों और संपर्कों से परिचित करा सकते हैं।

उद्योग प्रमाणीकरण: गिग कार्य के प्रकार के आधार पर, उद्योग प्रमाण पत्र उपलब्ध हो सकते हैं जो गिग श्रमिकों को अपनी विशेषज्ञता प्रदर्शित

करने और अन्य गिग श्रमिकों से खुद को अलग करने में सहायता कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, परियोजना प्रबंधन, डिजिटल मार्केटिंग और कोडिंग के लिए प्रमाणन कार्यक्रम उपलब्ध हैं।गिग कर्मचारियों को अपने कौशल को विकसित करने और उद्योग के रुझानों और सर्वोत्तम प्रथाओं पर अग्रसर रहने के अवसरों की तलाश करनी चाहिए।

गिग श्रमिकों को कुशल बनाने में चुनौतियां-गिग श्रमिकों को कुशल बनाना कुछ चुनौतियाँ पेश कर सकता है, जिनमें शामिल हैं:

प्रशिक्षण तक सीमित पहुँच :-गिग श्रमिकों के पास पारंपरिक कर्मचारियों के समान प्रशिक्षण और विकास के अवसरों तक पहुँच नहीं हो सकती है, क्योंकि कई प्रशिक्षण कार्यक्रम पारंपरिक रोजगार मॉडल के लिए तैयार किए जाते हैं। यह गिग श्रमिकों के लिए गिग अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए आवश्यक कौशल विकसित करना चुनौतीपूर्ण बना सकता है।

नियोक्ता समर्थन का अभाव:-गिग श्रमिकों के पास पारंपरिक कर्मचारियों के समान समर्थन और संसाधन नहीं होते हैं, क्योंकि वे अक्सर स्वतंत्र रूप से कार्य कर रहे होते हैं, एवं उनका कोई व्यवस्थित श्रमिक संगठन नहीं होता। यह गिग श्रमिकों के लिए प्रशिक्षण और विकास संसाधनों तक पहुँच को चुनौतीपूर्ण बना सकता है।

लागत: कई प्रशिक्षण कार्यक्रम महंगे हो सकते हैं, और गिग श्रमिकों के पास अपने स्वयं के प्रशिक्षण और विकास में निवेश करने के लिए वित्तीय संसाधन नहीं हो सकते हैं। यह प्रशिक्षण और विकास के अवसरों तक उनकी पहुँच को सीमित कर सकता है।

समय की कमी: श्रमिक अक्सर परियोजना-दर-परियोजना के आधार पर कार्य करते हैं और उनके पास प्रशिक्षण और विकास के लिए समर्पित करने का समय नहीं होता है। इससे उनके लिए प्रशिक्षण के अवसरों का लाभ उठाना और गिग अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए आवश्यक कौशल विकसित करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है।

कौशल अंतर: गिग अर्थव्यवस्था लगातार विकसित हो रही है, और गिग श्रमिकों के पास कौशल की मांग और कौशल की पूर्ति के मध्य अंतर हो सकता है। इससे गिग श्रमिकों के लिए कार्य ढूंढना और गिग अर्थव्यवस्था में सफल होना चुनौतीपूर्ण हो सकता है ।गिग श्रमिकों को कुशल बनाना कुछ चुनौतियाँ पेश कर सकता है, लेकिन गिग श्रमिकों को सफल होने के लिए आवश्यक कौशल विकसित करने के लिए कई अवसर और संसाधन भी उपलब्ध हैं।

गिग श्रमिकों के लिए कौशल प्रशिक्षण रणनीति-गिग श्रमिकों के लिए कौशल प्रशिक्षण रणनीति विकसित करने में निम्नलिखित चरण शामिल हो सकते हैं:

आवश्यक कौशल की पहचान करें: उन कौशलों की पहचान करके शुरुआत करें जिनकी आपके उद्योग या गिग कार्य के क्षेत्र में सबसे अधिक माँग है। यह आपको प्राथमिकता देने में मदद कर सकता है कि आपकी प्रशिक्षण रणनीति में किन कौशलों पर ध्यान केंद्रित किया जाए।

स्किल गैप का आकलन करें: सर्वप्रथम संबंधित उद्योग या गिग कार्य के क्षेत्र में गिग श्रमिकों के बीच मौजूद स्किल गैप का निर्धारण करें। यह उन विशिष्ट क्षेत्रों की पहचान करने में मदद कर सकता है जहां गिग श्रमिकों को प्रशिक्षण और विकास की आवश्यकता है।

प्रशिक्षण विधियों का निर्धारण करें: अनुकूल प्रशिक्षण विधियों पर निर्णय लें जो उद्योग या गिग कार्य के क्षेत्र में गिग श्रमिकों के लिए सबसे प्रभावी होंगी। इसमें ऑनलाइन कोर्स, पीयर लर्निंग, मेंटरशिप या इन-पर्सन ट्रेनिंग प्रोग्राम शामिल हो सकते हैं।

साझेदारी स्थापित करें: गिग श्रमिकों को प्रशिक्षण और विकास संसाधनों तक पहुँच प्रदान करने के लिए प्रशिक्षण प्रदाताओं, पेशेवर संगठनों और अन्य हितधारकों के साथ साझेदारी करें। यह गिग श्रमिकों के लिए प्रशिक्षण को अधिक सुलभ और किफायती बनाने में मदद कर सकता है।

निरंतर समर्थन प्रदान करें: गिग श्रमिकों को उनके कौशल विकसित करने के लिए निरंतर सहायता प्रदान करें। फलस्वरूप गिग श्रमिकों को गिग अर्थव्यवस्था में सफल और स्थायी करियर बनाने में मदद करने के लिए मेंटर्स, नेटवर्किंग के अवसरों और अन्य संसाधनों तक पहुँच सुनिश्चित हो सकती है।

मूल्यांकन और समायोजित करें:- नियमित रूप से अपनी प्रशिक्षण रणनीति की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करें और आवश्यकतानुसार समायोजन करें। इससे यह सुनिश्चित करने में मदद मिल सकती है कि गिग श्रमिकों को गिग अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण और विकास प्राप्त हो रहा है। गिग श्रमिकों के लिए एक कौशल प्रशिक्षण रणनीति विकसित करने से उनके सामने आने वाली चुनौतियों का समाधान करने में मदद मिल सकती है और उन्हें गिग अर्थव्यवस्था में सफल होने के लिए आवश्यक संसाधन उपलब्ध करा सकते हैं। कौशल प्रशिक्षण के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाकर, गिग कर्मचारी वे कौशल विकसित कर सकते हैं जिनकी उन्हें सफल और टिकाऊ करियर बनाने के लिए आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष:-गिग अर्थव्यवस्था तेजी से बढ़ रही है, और गिग श्रमिकों को कुशल बनाना उनकी सफलता के लिए महत्वपूर्ण होता जा रहा है। जैसे-जैसे गिग अर्थव्यवस्था का विकास जारी है, गिग श्रमिकों को अपने कौशल को लगातार विकसित करने और प्रतिस्पर्धी बने रहने के लिए बाजार की बदलती मांगों के अनुकूल होने की आवश्यकता है। इसके लिए कौशल प्रशिक्षण के लिए एक रणनीतिक और व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो गिग श्रमिकों द्वारा सामना की जाने वाली अनूठी चुनौतियों को ध्यान में रखे। गिग श्रमिकों के लिए कौशल प्रशिक्षण तक सीमित पहुँच, नियोक्ता समर्थन की कमी, लागत, समय की कमी, और कौशल अंतर सहित चुनौतियां प्रस्तुत करता है। जबकि, इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए अवसर और संसाधन उपलब्ध हैं और गिग श्रमिकों को प्रशिक्षण और विकास तक पहुँच प्रदान करने के लिए उन्हें सफल होने की आवश्यकता है। गिग श्रमिकों के लिए एक सफल कौशल प्रशिक्षण रणनीति में आवश्यक कौशल की पहचान करना, कौशल अंतराल का आकलन करना, प्रभावी प्रशिक्षण विधियों का निर्धारण करना, प्रशिक्षण प्रदाताओं और अन्य हितधारकों के साथ साझेदारी स्थापित करना, निरंतर समर्थन प्रदान करना और प्रशिक्षण रणनीति का नियमित रूप से मूल्यांकन और समायोजन करना शामिल है। गिग श्रमिकों के लिए कौशल प्रशिक्षण में निवेश करके, हम गिग अर्थव्यवस्था की सफलता सुनिश्चित करने में मदद कर सकते हैं और गिग श्रमिकों को सफल और सुरक्षित भविष्य बनाने के लिए आवश्यक उपकरण प्रदान कर सकते हैं।

****

संदर्भ सूची:-

1. Dey, C., Ture, R. S., & Ravi, S. (2022). Emerging world of gig economy: Promises and challenges in the Indian context. *NHRD Network Journal*, *15*(1), 71-82.
2. Huang, K., Yao, J., & Yin, M. (2019). Understanding the skill provision in gig economy from a network perspective: A case study of fiverr. *Proceedings of the ACM on Human-Computer Interaction*, *3*(CSCW), 1-23.
3. Burke, A., & Cowling, M. (2020). On the critical role of freelancers in agile economies. *Small Business Economics*, *55*, 393-398.
4. Biswas, D., & Bathla, P. (2022). A Study on relationship between unemployment and rise of the Gig Economy. *Asian Journal of Management*, *13*(1), 77-84.
5. KPMG. (2020). India's Gig Economy: An Overview.
6. Banik, N., & Padalkar, M. (2021). The spread of gig economy: trends and effects. *Форсаїт*, *15*(1 (eng)), 19-29.
7. NITI Aayog. (2018). National Strategy for Artificial Intelligence.
8. Cohen, G., & Sundararajan, A. (2015). Self-regulation and innovation in the peer-to-peer sharing economy. University of Chicago Law Review Dialogue, 82, 116-127.
9. Kuek, S. C., Paradi-Guilford, C., Fayomi, T., & Imaizumi, S. (2015). The global opportunity in online outsourcing. World Bank Group.
10. Autor, D. H., & Dorn, D. (2013). The growth of low-skill service jobs and the polarization of the US labor market. American Economic Review, 103(5), 1553-1597.

भारतीय रक्षानीति प्राचीन काल से लेकर औपनिवेशिक शासन काल तक

डॉ.अरविन्द कुमार कुशवाहा
सहायक आचार्य
राष्ट्रीय सुरक्षा अध्ययन विभाग, राजीव गांधी विश्वविद्यालय, अरुणाचंल प्रदेश

सरांश -सुरक्षा एक व्यापक अवधारणा है, जिसके अन्तर्गत हम किसी देश की उन विभिन्न अवयवों का अध्ययन करते है जो कि उस देश के समग्र विकास के लिए अतिअवाश्यक तत्व होते है। जब हम इन महव्वपूर्ण अवयवों की बात करते है तो हमें निम्नलिखित घटको के बारे में पता चलता है, और वे निम्नलिखित घटक इस प्रकार से है-औद्योगिक विकास, सांस्कृतिक विकास, वैज्ञानिक एवं तकनीकि विकास, समाजिक समरसता, शैक्षिक विकास, वाहय देशों का समग्र सहयोग, देश की रक्षा प्रकृति एवं शक्ति इत्यादि। अर्थात् रक्षा उपरोक्त दर्शित विषयों में से एक मात्र उपागम है जो किसी देश की समग्र सुरक्षा व्यवस्था को व्यवस्थित करता है। जब हम किसी भी देश की सम्पूर्ण सुरक्षा की बात करते हैं तो उसमें उस देश की अधोलिखित सम्पूर्ण अवयवों का सम्वयन स्वयं ही हो जाता हैं। इस प्रकार से सुरक्षा की तुलना में रक्षा एक लघु अवधारणा है। यद्यपि यह एक लघु अवधारणा अवश्य ही है, परन्तु बिना पर्याप्त रक्षा तैयारियों और संकलन के आज के सुरक्षा परिदृश्य में कोई भी देश अपने आप को पूर्णतया सुराक्षित किसी भी प्रकार से नहीं मान सकता है। रक्षा तैयारियो व रक्षो उपकरणों एवं उचित प्रशिक्षण के द्वारा ही कोई भी देश अपनी निश्चित सीमा परिधि की रक्षा अपने सशस्त्र बलों के द्वारा संभव करता हैं। इसलिए जिस प्रकार से सुरक्षा के विभिन्न अवयवों का महत्व देश की सुरक्षा के लिए होता हैं ठीक उसी प्रकार से रक्षा का भी महत्व किसी भी देश की समग्र सुरक्षा व्यवस्था के लिए अति अवाश्यक होता है। प्रायः इसीलिए ऐतिहासिक काल से लेकर वर्तमान काल तक सभी देश अपनी-अपनी सुरक्षा व्यवस्वथा को सुनिश्चित करने के लिए अपनी रक्षा व्यवस्था लगातार सुदृढ़ करने का प्रयास करते रहते हैं, तथा इसके लिए रक्षा सहयोग, सैन्य अभ्यास, सैन्य संधिया, सैन्य व्यापार, इत्यादि उपागमों का लगातार प्रयोग करते रहते है।

कुंजी शब्द: समाजिक समरसता, सैन्य संधिया, रक्षा सहयोग, सैन्य अभ्यास, औपनिवेशिक हित, आंतरिक रिम,बाहरी रिम

प्रस्तावना-सुरक्षा एक व्यापक अवधारणा है, जिसके अन्तर्गत हम असैन्य व सैन्य विषयों का व्यापक रुप से अध्ययन करते है। विस्तार रुप से देखने पर हमें यह ज्ञात होता है कि असैन्य विषयों के अन्तर्गत हम औद्योगिक विकास, सांस्कृतिक विकास, वैज्ञानिक एवं तकनीकि विकास, समाजिक समरसता, शैक्षिक विकास, वाहय देशों का समग्र सहयोग, सशक्त गौरवशाली इतिहास इत्यादि का अध्ययन करते हैं जबकि सैन्य विषयों में हम मुख्य रुप से रक्षा तैयारिया व रक्षा उपकरणों की खरीद उनका रख-रखाव एवं उचित प्रशिक्षण, उनका प्रयोग, रक्षा व्यापार इत्यादि का अध्ययन किया करते हैं। भारत में रक्षा तैयारिया प्राचीन काल से ही विदेशी अक्रामणकारियों के विरुद्व हमेशा से ही सशक्त रही हैं हम इसका उदाहारण नंद वंश, मौर्य वंश, शुंग वंश,गुप्त वंश, राजपूत काल, गुलाम वंश, मुगल वंश आदि समय के काल खण्डों में पर्याप्त रुप से देख सकते है। भारत में रक्षा के क्षेत्र में जो व्यापक परिवर्तन हमें देखने को मिलता है वो हमें बक्सर के युद्ध के बाद पर्याप्त रुप से देखने को मिलता हैं बक्सर का युद्ध जो कि 22 अक्टूबर, 1764 को ब्रिट्रिश ईस्ट इंण्डिया कंपनी और बंगाल के तत्कालीन नवाब मीर कासिम और उनके सहयोगियो ;अवध के नवाब शुजाउद्दौल एवं मुगल बादशाह शाह आलमद्ध के बीच लड़ा गया था। इस युद्ध में ब्रिट्रिश ईस्ट इंण्डिया कंपनी विजयी होती है तथा इस युद्ध के पश्चात् भारत में ब्रिट्रिश ईस्ट इंण्डिया कंपनी अपनी एक मजबूत आर्थिक, राजनैतिक व सैनिक पकड़ बना लेती है। इसके पश्चात् ब्रिट्रिश ईस्ट इंण्डिया कंपनी भारत में जो एक रक्षानीति का निर्माण करती है वह भारत केन्द्रित तो थी ही परन्तु इसके साथ ही साथ यह वैश्विक औपनिवेशिक हितों के लिए भी बनायी गयी थी, जिससे इनके व्यापारिक हितों की पूर्ति भारत सहित सम्पूर्ण औपनिवेशिक जगत से होती रहे, इस बात का विशेष रुप से ध्यान रखा गया था।

साहित्य का पुनर्वलोकन-भारतीय रक्षानीति का ऐतिहासिक विकासक्रम के क्षेत्र में रक्षानीति का ऐतिहासिक महत्व को ऐसे कई अध्ययनो में व्यापक रुप से खोजा गया है जो कि इस प्रकार से है लॉरेन ;1965द्धए खेड़ा;1968द्धए लॉगर;1974द्धए सुखवंत;2009द्धए बॉसे;2011द्धए कौल बी0 एम0 ;2011द्धए सिवॉच आर0 एस0;2017द्धए तारा पोर अरजॉन, ;2021द्धए साहित्य समीक्षा अब तक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय दोनों ही क्षेत्रों में उपयुक्त नये सिरे से सरोकार का अभाव पाया गया है।

शोध पत्र का उद्देश्य -उपरोक्त साहित्य के पुनर्वलोकन को दृष्टिगत रखते हुए द्वितीयक स्रोतों का सहारा लेते हुए नवीन अयामों को स्थापित किया जायेगा।

शोध विधि -उपरोक्त शोध के निर्माण में विभिन्न पुस्तकालयों में उपलब्ध विषय से सम्बन्धित सामग्री का विश्लेषणात्क अध्ययन किया गया है। इसमें कथा वस्तु विश्लेषण विधि का प्रयोग किया गया है। इसके साथ ही साथ इसमें द्वितीयक स्रोतों का भी उचित प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण-रक्षानीति किसी भी देश की विदेश नीति का एक मुख्य घटक होता है। जिसका मुख्य कार्य देश की रक्षा करना होता है। रक्षानीति विदेश नीति का मुख्य अंग होता है। इसके अंर्तगत निम्नलिखित बातों को शामिल किया जाता है। उदाहरणस्वरुप-

1 देश को आंतरिक एवं बाहरी खतरों से रक्षा प्रदान करने का कार्य किया जाता है।

2 देश की एकता अखण्डता को प्रत्येक मूल्य पर बनाये रखा जाता है।

3 देश में उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग करके अधिक से अधिक रक्षा प्रदान किया जाता है।

4 देश की रक्षा आवश्कताओं का मूल्याकंन किया जाता हैं।

5 देश में व्याप्त रक्षा खतरों का आंकलकन किया जाता है, ये खतरे त्वरित व दूरगामी स्तर के भी हो सकते है।

6 रक्षा सहयोग, रक्षा मित्रता, रक्षा संधिया, वैश्विक अनुकूल रक्षा वातावरण को बनाना इत्यादि।

ये सभी कुछ ऐसे तत्व है जो कि भारत सहित पूरे विश्व में प्रायः सर्वमान्य है। भारतीय संदर्भ में हम देखते हैं तो यहा पर प्राचीन काल से रक्षा का अस्तित्व रहा है। राज्य का सैन्य संगठन कैसा हो, राज्य की रक्षा नीति किस प्रकार से हो इसके विषय में हमें व्यपाक जानकारी वालमिकी रचित रामायण एवं वेद व्यास रचित महाभारत व आचार्य कौटिल्य द्वारा रचित अर्थशास्त्र के माध्यम से हमें प्राप्त हो जाती है। इन सभी रचनाओं में हमें यह जानकारी प्राप्त होती हैं कि युद्ध राज्यनीति का एक महत्वपूर्ण अंग होता था। आचार्य कौटिल्य ने विदेशनीति के सम्बन्ध में अपने कई महत्वपूर्ण विचारों को प्रदान किया था जिसमें षष्ठ सिंद्धात अति महत्वपूर्ण थो। आचार्य कौटिल्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य के सहयोग से जो मौर्य वंश का का निर्माण किया था वह इस दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण काल था। क्योंकि इस काल में भारत ने एक सशक्त रक्षानीति का निर्माण करके यवनों से भारत की रक्षा काफी समय तक की थी। इसक काल के बाद शंुग काल आता हैं जिसने अपनी रक्षानीति कि के द्वारा भारत की रक्षा बाहरी शक्तियों जैसे यवनों की थी। इसके पश्चात् गुप्तों का काल भी रक्षानीति के क्षेत्र में काफी गौरवशाली व प्रभावशाली रहा है। गुप्तों ने वैवाहिक सम्बन्धों और मोक्षानुग्रहण नीति के माध्यम से भारत को बाहरी शक्तियों जैसे हूणो से बहुत हद तक सुराक्षित रखा। मोक्षानुग्रहण नीति के माध्यम से गुप्त शासक किसी राज्य को पहले अपने आधीन कर लेते थे तथा इसके पश्चात् उन्हें कुछ शर्तो के साथ मुक्त कर देते थे

जिसमें बाहरी राज्य से बिना उनकी अनुमति के सम्बन्ध न बनाना, बिना अनुमति के किसी के उपर आक्रमण नहीं करना, समय पर निश्चित कर देते रहना तथा इसके बदले में सुरक्षा इनके द्वारा प्राप्त करते रहना इत्यादि। गुप्तों के पश्चात् हर्षवर्धन का काल आता है, हर्ष का शासन लघु होने के कारण इस काल में भारत में पूर्व की ही भाति रक्षा नीति बनी रही। हर्ष की मृत्यु के पश्चात् भारत कई छोटे-छोटे खण्ड़ो में विभाजित हो गया था, जिसके कारण इस काल में पुनः एक बार बाहरी शाक्तियों को भारत पर आक्रामण करने का एक अवसर प्राप्त हुआ, इस क्रम में भारत पर जो पहला आक्रमण हुआ वो अरब आक्रमणकारियों के द्वारा मोहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में भारत के उत्तर-पश्चिम क्षेत्र सिंध पर हुआ था जिसे सिंध के राजा दाहिर ने काफी हद तक विफल कर दिया था। इसके पश्चात् भारत में लगातार अरबों, तुर्कों का आक्रमण होता रहा जिसमें दिल्ली और अजमेर के शासक पृथ्वीराज चौहान ने बाहरी आक्रमण का प्रतिरोध करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। इसके पश्चात् भारत में गुलाम वंश की स्थापना हो जाती है जिसमें गियासुद्दीन बलवन और आलाउद्दील खिलजी आदि शासकों के द्वारा मंगोल अक्रामणकारियों का सामना किया गया। इसके पश्चात् 21 अप्रैल 1526 के पानीपत के युद्ध के बाद बाबर के द्वारा भारत में मुगल सम्राज्य की स्थापना की गयी। और मुगलों ने भारत को सुराक्षित रखने के लिए अफगानिस्तान और भारत के दक्षिण हिस्सों पर अपना नियंत्रण स्थापित करके भारत को सुराक्षित करने का प्रयास किया।

भारत में रक्षा के क्षेत्र में जो व्यापक परिवर्तन हमें देखने को मिलता है वो हमें बक्सर के युद्ध के बाद पर्याप्त रुप से देखने को मिलता हैं बक्सर का युद्ध जो कि 22 अक्टूबर, 1764 को ब्रिट्रिश ईस्ट इण्डिया कंपनी और बंगाल के ततकालीन नवाब मीर कासिम और उनके सहयोगियो ;अवध के नवाब शुजाउद्दौल एवं मुगल बादशाह शाह आलमद्ध के बीच लड़ा गया था। इस युद्ध में ब्रिट्रिश ईस्ट इण्डिया कंपनी विजयी होती है तथा इस युद्ध के पश्चात् भारत में ब्रिट्रिश ईस्ट इण्डिया कंपनी अपनी एक मजबूत आर्थिक, राजनैतिक व सैनिक पकड़ बना लेती है। इसके पश्चात् ब्रिट्रिश ईस्ट इण्डिया कंपनी भारत में जो एक रक्षानीति का निर्माण करती है वह भारत केन्द्रित तो थी ही परन्तु इसके साथ ही साथ यह वैश्विक औपनिवेशिक हितो के लिए भी बनायी गयी थी, जिससे इनके व्यापारिक हितों की पूर्ति भारत सहित सम्पूर्ण औपनिवेशिक जगत से होती रहे, इस बात का विशेष रुप से ध्यान रखा गया था। ब्रिट्रिश शासकों ने भारतीय रक्षानीति के संदर्भ में रिंग फेंस नीति का अनुसरण किया। इस नीति के दो प्रमुख आयाम थे, जो कि इस प्रकार से थे।

1 आंतरिक रिम

2 बाहरी रिम

आंतरिक रिम के अंर्तगत हिमालयी राज्य तथा कुछ कबिलाई राज्य आते थे। उदाहरणस्वरुप नेपाल, भूटान, सिक्किम, आसाम, उत्तर-पूर्व के कुछ राज्य इत्यादि। जबकि बाहरी रिम के अंतर्गत फारस के शेख का राज्य, अफगानिस्तान, तिब्बत, स्याम ;थाईलैण्डद्ध इत्यादि। ब्रिट्रिश सरकार ने आन्तरिक और वाहय इन दोनों स्तरों पर ही खतरों का आकलन करके एक समग्र रुप रक्षानीति बनाने का प्रयास किया, जो कि उनके औपनिवेशिक हितों के अपुरुप हो। इसी के अनुरुप उन्होंने यहा पर विभिन्न सैन्य व असैन्य क्षेत्रों में लगातार विकास को प्रयोजित करते रहे।

दोनों महायुद्धों तक अर्थात् लगभग एक शाताब्दी तक ब्रिट्रिश काल में इनके द्वारा इसी रक्षानीति को जारी रखा गया। हिन्द महासागर में ब्रिट्रिश शासकों की मजबूत स्थिति होने के कारण भारत के उपर जो भी बाहरी खतरा समुद्र मार्ग से था वो लगभग बहुत कम था।

निष्कर्ष-

भारत की रक्षानीति प्राचीन काल से लेकर औपनिवेशिक काल तक विभिन्न काल खण्डो में, विभिन्न शासकों के द्वारा एक स्पष्ट एवं सुनियोजित प्रकार की थी। प्राचीन काल में जहां भारत की रक्षानीति विभिन्न उपागमों जिसमें सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक, सांस्कृतिक, वैवाहिक, मोक्षानुग्रहण नीति पर आधारित थी वहीं औपनिवेशिक काल मे ब्रिट्रिश भारत में रक्षानीति का मुख्य आयाम उनके व्यवपारिक व सामरिक हितों की रक्षा करना था जिसके परिणामस्वरुप इस काल खण्ड में ऐसी रक्षानीति का अनुसरण किया गया था जो कि उनके उपरोक्त हितों की रक्षा कर सके। इस कालखण्ड तक आत-आते भारत सहित पूरे विश्व में व्यापक रुप से परिवर्तन आ गया था जिसका प्रभाव विभिन्न समाजिक आयामों के साथ ही साथ युद्ध पर भी समान रुप से पड़ा जिसका प्रभाव हमें पानीपत के प्रथम युद्ध में भी देखने को मिला जब युद्ध की नई तकनीकि जिसे तुलगमा तकनीकि के नाम से जाना गया और युद्ध में बारुद का प्रयोग किया गया था। इसके उपरांत संचार के नवीन साधनों एवं खाई युद्धकर्म व जंगी जहाजे जिसने युद्ध क्षेत्र में व्यापक रुप से परिवर्तन को प्रक्षेपित किया। भारतीय रक्षानीति के क्षेत्र में यह एक ऐसा संक्रमणकालीन युग था जिसने विभिन्न काल खण्डों से होते हुए भारतीय रक्षानीति को लगातार मजबूती प्रदान किया।

****

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. 1 काविर्क जे0 लॉरेंस, ;1965द्धए इंण्डिया क्वेस्ट फॉर सेक्यूरटी, डीफेंस पॉलिसी, ई0 बी0 डी0 पब्लिशिंग एण्ड डिस्ट्रिब्यूटिंग, देहरादून।
2. 2 खेरा एस0 एस0 ;1968द्धए इंण्डियॉस डिफेंस प्राब्लम, ओरिऐंट लॉगमैन, नई दिल्ली।
3. 3 लॉगर वी, ;1974द्धए रेड कोट एण्ड ऑलिव ग्रीनःए हिस्ट्री ऑफ इंण्डियन ऑर्मी, एलाईड पब्लिसर, बॉम्बे।
4. 4 जैन बी0 एम0 ;2007द्धए इंण्डियॉस डिफेंस एण्ड सेक्येरिटी-इंट्रा रिजनल डाईमेंसन, आई0 एन0 ए0 श्री पब्लिकेशन, जयपुर।
5. 5 घोष सी0 एन0 नायर, ;2007द्धए इंण्डियॉस टूमारो वॉर इन टेवन्टी वन सेनचूरी, डिफेंस स्ट्राटीज, मानस पब्लिकेशन,नई दिल्ली।
6. 6 बोंसले के0 राहुल, ;2008द्धए इंण्डियॉस नेशनल सेक्येरिटीः द ऐसीमेट्रिकल चैनेंजेज, नॉलेज वर्ल्ड पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
7. 7 गडेकरी नितिन, ;2017द्धए इंण्डियॉस डीफेंस पॉलिसीः ईशूज एण्ड प्रॉस्पेटिव, भारत शक्ति, इंस्सट्ीटियूट, नई दिल्ली।
8. 8 सिवॉच आर0 एस0;2017द्धए इंण्डियॉस इन टेवन्टी वन सेनचूरी, वॉल्यूम14 जून/ दिसम्बर पृष्ठ सं033-44, इंण्डियन जनरल ऑफ एशियन स्टीज, नई दिल्ली।
9. 9 तारा पोर अरजॉन, ;2021द्धए इंण्डियॉस डीफेंस पॉलिसी, वॉल्टर एच. शोरेनस्टीन एशिया पैसिफिक रीसर्च सेंटर, कैलिफोर्निया, यू0 एस0 ए0।

मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी.टी.सी. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. शिक्षकों के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ.भूपेन्द्र कौर
सहायक प्रोफेसर
शिक्षाशास्त्र विभाग आईएफटीएम विश्वविद्यालय मुरादाबाद

अजय कुमार
शोधार्थी
शिक्षाशास्त्र विभाग आईएफटीएम विश्वविद्यालय मुरादाबाद

सारांश-व्यक्ति को सफल जीवन व्यतीत करने के लिए अपने वातावरण और परिस्थितियों के साथ समायोजन स्थापित करना आवश्यक हो जाता है। व्यक्ति के जीवन में अनेक प्रकार की अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियां आती रहती है जिनका उसे सामना करना पड़ता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी अलग-अलग क्षमता अनुसार समायोजन करने का प्रयत्न करते हैं। कुछ लोग प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने में सफल होते हैं और कुछ लोग हार मानकर अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति असन्तोष या कुण्ठा मानसिक द्न्द एवं तनाव का शिकार बने रहते हैं। ये सभी बातें शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती है। समायोजन को सामंजस्य व्यवसाय में अनुकूलन भी कहते हैं। समायोजन दो शब्दों से मिलकर बना है- सम और योजन। सम् का अर्थ है भली-भाति अच्छी तरह या समान रूप से और योजन का अर्थ है व्यवस्था अर्थात अच्छी तरह व्यवस्था करना। शोध अध्ययन में प्राप्त निष्कर्ष-मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 पुरूष शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया, मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 महिला शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया, मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 कला वर्ग के शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया, मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 विज्ञान वर्ग के शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

मुख्यशब्द - बी0टी0सी0 शिक्षक, विशिष्ट बी0टी0सी0 शिक्षक, समायोजन

प्रस्तावना-शिक्षा के विभिन्न साधनों में विद्यालय एक औपचारिक संस्था है। वर्तमान समय में सभ्यता और संस्कृति का इतना अधिक विकास हो गया है कि घर में बालक को पूर्ण शिक्षा प्रदान नहीं की जा सकती है। व्यापक ज्ञान प्रदान करने का कार्य विद्यालय ही कर सकता है। विद्यालय एक सामाजिक संस्था है जो व्यक्ति को विभिन्न प्रकार की शिक्षा प्रदान करती है, इस शिक्षा से विद्यालय और समाज दोनों का कल्याण होता है। विद्यालय का अर्थ है विद्या का घर अर्थात् वह स्थान जहाँ शिक्षार्थी को विद्या प्राप्त होती है। विद्यालय को परिभाषित करते हुए ड्यूवी ने कहा है विद्यालय एक ऐसा परिवेश है, जहाँ जीवन के कुछ गुणों और कुछ विशेष प्रकार की क्रियाओं तथा व्यवसायों की शिक्षा इस उद्देश्य से दी जाती है, कि बालक का विकास वांछित दिशा में हो।, व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है और सामाजिक प्राणी होने के नाते उसका कुछ उत्तरदायित्व है, इस उत्तरदायित्व का वह केवल शिक्षा द्वारा निर्वहन नहीं कर सकता, अतएव उसके सर्वांगींण विकास हेतु विद्यालयों का विकास हुआ। राष्ट्र एवं समाज के विकास में विद्यालयों के महत्व के सम्बन्ध में एस॰बी॰ जोशी का मत हैA किसी भी राष्ट्र की प्रगति का निर्णय विधानसभाओं, न्यायालयों एवं फैक्ट्रियों में नहीं वरन् विद्यालयों में होता है। विद्यालय केवल एक सामाजिक संस्था ही नहीं है बल्कि वह समाज का लघु रूप भी है। शिक्षा-प्रक्रिया एक सामाजिक प्रक्रिया है, विद्यालय में वे समस्त प्रभावपूर्ण साधन केन्द्रित रहते हैं, जो समाज की निरन्तरता एवं विकास हेतु आवश्यक हैं। टी॰पी॰ नन लिखते हैं. विद्यालय समस्त संसार का नहीं बल्कि मानव जाति का एक आदर्श लघु रूप होना चाहिए। भारत का उच्च शिक्षा क्षेत्र अति विशाल है, इसका अमेरिका के बाद विश्व में द्वितीय स्थान है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की समस्याओं को देखते हुए ही आज वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के कारण शिक्षा का निजीकरण हो चुका है। अतः सरकार ने ऐसे संस्थानों की स्थापना की संकल्पना की है, जो स्वयं धन अर्जित कर जन-जन तक शिक्षा पहुँचाने का उत्तरदायित्व वहन कर सकें, ऐसे संस्थानों को स्ववित्तपोषित संस्थानों के रूप में जाना जाता है।प्रोफेसर ड्रेवर के शब्दों में शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा भावी ज्ञान, चरित्र एवं व्यवहार को उचित स्वरूप प्रदान किया जा सकता है अतः मनुष्य को स्वतन्त्र एवं पूर्णतर बनाने वाला एक मात्र साधन शिक्षा ही है। हमें वही शिक्षा देनी एवं प्राप्त करनी चाहिए जो व्यक्ति को उचित एवं अनुचित का निर्णय करने में मदद प्रदान कर सके तथा उसके सही मार्गदर्शन हेतु यह क्षमता विकसित करे कि जीवन और जगत को देखकर वह विवेकपूर्ण ढंग से निर्णय ले सके कि उचित के प्रति उसके क्या दायित्व है और अनुचित के प्रति क्या कर्तव्य। अतः शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो मनुष्य को अन्धकारयुक्त वातावरण से निकालकर प्रकाशयुक्त वातावरण की ओर अग्रसरित करती है। जिस देश की शिक्षा व्यवस्था जितनी सुदृढ़ होगी वह देश उतना ही कुशल एवं सुयोग्य नागरिकों का देश होगा अर्थात् कुशल एवं योग्य नागरिकों के उद्गम में एक शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षक को समाज का निर्माता कहा जाता है, जिस प्रकार कुम्हार अपनी बुद्धि एवं कला के द्वारा कच्ची मिट्टी को एक विशेष साँचे में ढालकर भिन्न-भिन्न प्रकार के बर्तन तैयार करता है उसी प्रकार शिक्षक अपनी बुद्धि एवं अपनी क्षमता के आधार पर बालकों में एक ऐसी ऊर्जा की ज्योति जगा देता है जिससे बालक विभिन्न क्षेत्रों में ज्ञानार्जन करते हुए देश की समृद्धि एवं विकास में योगदान हेतु महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। शिक्षक राष्ट्र निर्माता, समाज का आदर्श व मार्गदर्शक एवं मानव की सभ्यता, संस्कृति तथा जीविकोर्पाजन की स्थिति का ज्ञान कराने वाला कहा जाता है अर्थात् शिक्षक का कार्य यह होता है कि वह शिक्षा प्रदान कर विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास करे ताकि आगे चलकर वे एक सुसंस्कृत तथा श्रेष्ठ नागरिक बन सकें, इस रूप में अच्छे शिक्षक समाज के लिए वरदान होते हैं। निःसन्देह अच्छे शिक्षकों के अभाव में सर्वोत्तम शिक्षा प्रणाली भी अपने परम लक्ष्य तथा उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सकती है। शिक्षक विभिन्न समस्याओं से सम्बन्ध रखने वाली चीजों का सामना करने से विचलित नहीं होते। जिस ज्योति की रक्षा का भार उन्हें सौंपा गया है उसे वे बखूबी निभाये रखने हेतु अपने कर्तव्य तथा उत्तरदायित्वों का निर्वाह पूर्ण निष्ठा तथा तत्परता के साथ पूरा करने की कोशिश करते हैं, ताकि वे उस ज्योति को मन्द किये बिना अपने उत्तराधिकारों को दूसरों के हाथों में सौंप सकें, इसके लिए आवश्यक है कि उच्च शिक्षा स्तर पर कुशल एवं योग्य शिक्षकों को नियुक्त किया जाये, तभी शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव है। भारतीय समाज में अध्यापक का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। अध्यापक अपने आदर्श व्यक्तित्व से अपने शिष्यों को प्रभावित करता है और उसके सर्वांगीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है। अध्यापक शिक्षार्थी का प्रत्येक पथ पर पथ प्रदर्शक होता है। वह शिक्षार्थी को उसके जीवन के उद्देश्य एवं लक्ष्यों से परिचित कराता है एवं उन लक्ष्यों तक पहुंचने में उसकी

सहायता करता है। विद्वानों ने कहा है- अध्यापक एक माली के समान होता है और शिक्षार्थी पौधों के समान होता है, माली की अनुपस्थिति में पौधों का विकास उचित दिशा में नही हो सकता, माली उनको सींचता है तथा उसका उचित लालन-पालन करके उसको वृक्ष बनने में सहायता करता है। सामान्यतः अध्यापकों को गुरू कहा जाता है। माता-पिता को भी गुरू कहते हैं। वास्तव में गुरू शब्द का अर्थ है महान। महान वही है जो अपने को कृतकृत्य करके दूसरों को कल्याणकारी मार्ग का दर्शन कराता है। जब तक व्यक्ति स्वयं वीतरागी नहीं होगा तब तक वह दूसरों को सदुपदेश नहीं दे सकता है। यह आवश्यक नहीं है कि गुरू जब मुख से उपदेश देवे तभी गुरू है अपितु गुरू वह है जो मुख से उपदेश दिये बिना भी अपने जीवन दर्शन द्वारा दूसरों को सन्मार्ग में लगा दे। गुरू ही तो सत्य से साक्षात् करवाने वाला, अज्ञान के अन्धकार को तार-तार करने वाला है। ज्ञान के भास्कर को उद्भावित करने वाला, नश्वरता, क्षणभंगुरता, सामयिकता की बेड़ियों में जकड़े मरदेह से हटाकर चिरंतन आत्मा की अनुभूति करवाने वाला होता है। वह गुरू ही था, यह गुरू ही रहेगा।

आवश्यकता एवं महत्व-अध्यापक शिक्षा के औपचारिक स्वरूप का प्रचलन यद्यपि भारत में बहुत पहले से नहीं हो पाया था, लेकिन यदि अनौपचारिक दृष्टि से देखा जाए तो इसका प्रारम्भ प्राचीन काल से ही होता हुआ प्रतीत होता है। सुविधा के लिए अध्यापक शिक्षा की पृष्ठभूमि को विकासात्मक सन्दर्भ में ऐतिहासिक तथा आधुनिक या अर्वाचीन दो भागों में बाँट सकते हैं। ऐतिहासिक कालखण्ड के अन्तर्गत प्राचीनकाल, बौद्धकाल तथा मध्यकाल जैसी तीन पृथक अवधियाँ स्पष्टतया दिखाई देती है, जबकि अर्वाचीन कालखण्ड के अन्तर्गत स्वातन्त्र्य-पूर्व बिटिश काल तथा स्वातन्त्र्योत्तर कालावधि को सम्मिलित किया जा सकता है। वर्तमान में प्राथमिक शिक्षकों के रूप मे नियुक्ति पाने वाले उच्च योग्यता धारी व्यक्तियों का अवसर मिलते ही प्राथमिक स्तर को छोड़ जाने की प्रवृत्ति दृष्टिगत हो रही है। इसकी पृष्ठभूमि में मुख्य रूप से दो कारण हो सकते हैं व्यवसाय से असंतुष्टि और असमायोजन। उच्च योग्यताधारी शिक्षक फलतः अपने व्यवसाय से असन्तुष्ट हो अथवा निम्न वेतन पाने के कारण असन्तोष की भावना जागृत होती है जिस कारण वो विद्यालयों में समायोजन नहीं कर पाते। उच्च शिक्षा की और हमेशा आकर्षित रहता है। समय-समय पर उच्च शिक्षा में निकलने वाले नौकरियाँ उनको अपनी और खींचती है। जिस कारण उनका मन प्राथमिक विद्यालयों में कम ही लगता है साथ ही उनको यह भी लगता है कि उच्च शिक्षित होने के बाद भी हम लोग आज कम पैसे वाली नौकरी कर रहें है जिससे उनके अन्दर समायोजन करने की क्षमता कम हो जाती है। मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में बी॰टी॰सी॰, विशिष्ट बी॰टी॰सी॰ एवं शिक्षा मित्र अध्यापकों द्वारा अध्यापन कार्य किया जा रहा है। इसमें बी॰टी॰सी॰ शिक्षक से तात्पर्य उन महिला व पुरुष शिक्षकों से है जिनकी न्यूनतम शैक्षिक योग्यता इण्टरमीडिएट या स्नातक है तथा द्विवर्षीय बेसिक शिक्षक प्रमाण पत्र का प्रशिक्षण प्राप्त किया है। विशिष्ट बी॰टी॰सी॰ शिक्षक से तात्पर्य उन पुरुष व महिला शिक्षकों से है जिनकी न्यूनतम शैक्षिक योग्यता स्नातक एवं बी॰एड॰ (शिक्षा स्नातक) है। जिन्हें कम से कम 6 माह का विशिष्ट बेसिक शिक्षक प्रमाण पत्र प्रदान किया गया है। अतः बी॰टी॰सी॰ एवं विशिष्ट बी॰टी॰सी॰ शिक्षकों की शैक्षिक योग्यता के कारण उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना शोधकर्ता का उद्देश्य है। क्योंकि इससे ये ज्ञात करने में भी सहायता मिलेगी कि विशिष्ट बी॰टी॰सी॰ शिक्षकों के प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश करने से केवल संख्यात्मक रूप से शिक्षण में प्रभाव पड़ा है या गुणात्मक रूप से भी सुधार हुआ है। ये ज्ञात होगा कि क्या दोनों प्रकार के शिक्षक अपने व्यवसाय से समायोजित है| इस अध्ययन से शिक्षक की गुणवत्ता एवं प्राथमिक शिक्षा में सुधार सम्भव होगा। अतः शोधकर्ता को यह अनुभव हुआ कि मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में बी॰टी॰सी॰ एवं विशिष्ट बी॰टी॰सी॰ शिक्षकों के समायोजन के कारणों को जानकर उनको दूर करने का प्रयास किया जाये जिससे प्राथमिक स्तर की शिक्षा को उन्नत किया जा सके।

सम्बन्धित शोध साहित्य अध्ययन-निम्नलिखित विद्यार्थियों ने प्रस्तुत विषयों को शोध का विषय बनाया है जिसमें सिंह एवं सिंह, एस0 (2021), कुमार, ए0 (2021), आजाद, आर0 एवं कुमार, डी0 (2021), कौर, जे0 एवं गुप्ता, पी0 (2021), जमाल, एस0 एवं भट्ट, एस0 (2020) आदि प्रमुख है।

समस्या कथन

"मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 शिक्षकों के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन"

शोध अध्ययन के उद्देश्य-

- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 पुरूष शिक्षकों के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन।
- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 महिला शिक्षकों के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन।
- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 कला वर्ग के शिक्षकों के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन।
- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 विज्ञान वर्ग के शिक्षकों के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन।

शोध अध्ययन की परिकल्पनायें-

- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 पुरूष शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं है।
- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 महिला शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं है।
- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 कला वर्ग के शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं है।
- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 विज्ञान वर्ग के शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं है।

आंकड़ा संग्रहण के उपकरण

प्रस्तुत लघु शोध हेतु आंकड़ों के संकलन के लिए विद्यार्थियों से व्यक्तिगत सम्पर्क करके प्रश्नावली के माध्यम से आंकड़ों का संकलन किया गया।

न्यादर्श :-वर्तमान शोधपत्र हेतु 400 शिक्षकों को शामिल किया गया है।

उपकरण :-

समायोजन- मंगल अध्यापक समायोजन मापनी डॉ॰ एस.के. मंगल द्वारा निर्मित।

तालिका संख्या-1

मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 पुरूष शिक्षकों के समायोजन का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात का विश्लेषण एवं व्याख्या

पुरूष शिक्षक	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर
बी0टी0सी0	110	54.53	14.12	1.40	0.05= 1.96
विशिष्ट बी0टी0सी0	90	52.60	13.64		0.01= 2.59

0.01 सार्थक 0.05 सार्थक, सार्थक नहीं

व्याख्या :- तालिका संख्या 1 में मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी॰टी॰सी॰ एवं विशिष्ट बी॰टी॰सी॰ पुरूष शिक्षकों के समायोजन को दर्शाया गया है। तालिका में प्राथमिक विद्यलयों में कार्यरत् बी॰टी॰सी॰ पुरूष शिक्षकों का मध्यमान, मानक विचलन 54.53 एवं 14.12 प्राप्त हुआ है जबकि प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् विशिष्ट बी॰टी॰सी॰ पुरूष शिक्षकों का मध्यमान, मानक

विचलन क्रमशः 52.60 एवं 13.64 प्राप्त हुआ है। दोनो समूहों के मध्य क्रन्तिक अनुपात का मान 1.14 प्राप्त हुआ है। प्राप्त क्रान्तिक अनुपात सार्थकता के दोनों स्तर (0.01 एवं 0.05) से कम है। कम सार्थकता स्तर दोनों समूहों के मध्य सार्थक अन्तर को स्पष्ट नहीं करता है। इससे सिद्ध होता है कि मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी०टी०सी० एवं विशिष्ट बी०टी०सी० पुरूष शिक्षकों की प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

तालिका संख्या - 2

मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 महिला शिक्षकों के समायोजन का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात का विश्लेषण एवं व्याख्या

महिला शिक्षक	सख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर
बी0टी0सी0	110	56.55	14.38	1.45	0.05=1.96 0.01=2.59
विशिष्ट बी0टी0सी0	90	52.65	12.27		

0.01 सार्थक 0.05 सार्थक, सार्थक नहीं

व्याख्या:- तालिका संख्या 2 में मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी०टी०सी० एवं विशिष्ट बी०टी०सी० महिला शिक्षकों के समायोजन को दर्शाया गया है। तालिका में प्राथमिक विद्यलयों में कार्यरत् बी०टी०सी० महिला शिक्षकों का मध्यमान, मानक विचलन 56.55 एवं 14.38 प्राप्त हुआ है जबकि प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् विशिष्ट बी०टी०सी० महिला शिक्षकों का मध्यमान, मानक विचलन क्रमशः 52.65 एवं 12.27 प्राप्त हुआ है। दोनो समूहों के मध्य क्रन्तिक अनुपात का मान 1.45 प्राप्त हुआ है। प्राप्त क्रान्तिक अनुपात सार्थकता के दोनों स्तर (0.01 एवं 0.05) से कम है। कम सार्थकता स्तर दोनों समूहों के मध्य सार्थक अन्तर को स्पष्ट नहीं करता है। इससे सिद्ध होता है कि मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी०टी०सी० एवं विशिष्ट बी०टी०सी० महिला शिक्षकों की प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

तालिका संख्या - 3

मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 कला वर्ग के शिक्षकों के समायोजन का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात का विश्लेषण एवं व्याख्या

कला वर्ग के शिक्षक	सख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर
बी0टी0सी0	140	51.42	13.03	0.73	0.05=1.96 0.01=2.59
विशिष्ट बी0टी0सी0	100	53.32	12.74		

0.01 सार्थक 0.05 सार्थक, सार्थक नहीं

व्याख्या:- तालिका संख्या 3 में मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी०टी०सी० एवं विशिष्ट बी०टी०सी० कला वर्ग के शिक्षकों के समायोजन को दर्शाया गया है। तालिका में प्राथमिक विद्यलयों में कार्यरत् बी०टी०सी० कला वर्ग के शिक्षकों का मध्यमान, मानक विचलन 51.42 एवं 13.03 प्राप्त हुआ है जबकि प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् विशिष्ट बी०टी०सी० कला वर्ग के शिक्षकों का मध्यमान, मानक विचलन क्रमशः 53.32 एवं 12.74 प्राप्त हुआ है। दोनो समूहों के मध्य क्रन्तिक अनुपात का मान 0.73 प्राप्त हुआ है। प्राप्त क्रान्तिक अनुपात सार्थकता के दोनों स्तर (0.01 एवं 0.05) से कम है। कम सार्थकता स्तर दोनों समूहों के मध्य सार्थक अन्तर को स्पष्ट नहीं करता है। इससे सिद्ध होता है कि मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी०टी०सी० एवं विशिष्ट बी०टी०सी० कला वर्ग के शिक्षकों की प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

तालिका संख्या - 4

मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 विज्ञान वर्ग के शिक्षकों के समायोजन का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात का विश्लेषण एवं व्याख्या

विज्ञान वर्ग के शिक्षक	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर
बी0टी0सी0	100	56.63	13.50	1.48	0.05=1.96
विशिष्ट बी0टी0सी0	60	52.88	11.69		

0.01 सार्थक 0.05 सार्थक, सार्थक नहीं

व्याख्या:- तालिका संख्या 4.4 में मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी०टी०सी० एवं विशिष्ट बी०टी०सी० विज्ञान वर्ग के शिक्षकों के समायोजन को दर्शाया गया है। तालिका में प्राथमिक विद्यलयों में कार्यरत् बी०टी०सी० विज्ञान वर्ग के शिक्षकों का मध्यमान, मानक विचलन 56.63 एवं 13.50 प्राप्त हुआ है जबकि प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् विशिष्ट बी०टी०सी० विज्ञान वर्ग के शिक्षकों का मध्यमान, मानक विचलन क्रमशः 52.88 एवं 11.69 प्राप्त हुआ है। दोनो समूहों के मध्य क्रन्तिक अनुपात का मान 1.48 प्राप्त हुआ है। प्राप्त क्रान्तिक अनुपात सार्थकता के दोनों स्तर (0.01 एवं 0.05) से कम है। कम सार्थकता स्तर दोनों समूहों के मध्य सार्थक अन्तर को स्पष्ट नहीं करता है। इससे सिद्ध होता है कि मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी०टी०सी० एवं विशिष्ट बी०टी०सी० विज्ञान वर्ग के शिक्षकों की प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

निष्कर्ष-

- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 पुरूष शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 महिला शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 कला वर्ग के शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
- मुरादाबाद जनपद के प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत् बी0टी0सी0 एवं विशिष्ट बी0टी0सी0 विज्ञान वर्ग के शिक्षकों के समायोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

****

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. आजाद, राकेश कुमार एवं कुमार, धुरव (2021) ने व्यावसायिक एवं गैर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन, शोध पत्र, शिक्षा शोध मंथन, वा.7, नं0 2, अक्टूबर 2021.
2. सिंह, डा सतीश पाल एवं सिंह, सोमेन्द्र (2021) मेरठ जनपद में राजकीय एवं अनुदानित महाविद्यालयों के कार्यरत् शिक्षकों की समायोजन क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन, शोध पत्र, शिक्षा शोध मंथन, वा.7, नं0 2, अक्टूबर 2021.
3. सुखिया, एस.पी. (1966). शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व कोलकाता: कलकत्ता प्रकाशन।
4. Jamal, s.& Bhatt, S.(2020)- Family Environment and Adusjtment among Young Adults. Mukul shabd, .9(5). 1296-1312
5. Kaur, J & Gupta, P. (2021). Study of Relationship Between Adjustment And Intelligence IRJEDT,2(2), 122-128.

हिंदी उपन्यास में किन्नर विमर्श - 'तीसरी ताली' के विशेष संदर्भ में

डॉ.सुनील एम.पाटिल
सहयोगी प्राध्यापक
आर. सी. पटेल कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय शिरपुर, जिला-धुलियां.

विमर्श शब्द का अर्थ अत्यंत व्यापक है l विमर्श का व्युत्पत्तिपरक अर्थ विचार, समझना, समीक्षा, सोचना एवं आलोचना करना है l अंग्रेजी के डिस्कार्स (Discourse) का समानार्थी हिंदी शब्द है विमर्श l इसका साधारण अर्थ है Dialogue एवं Talk यानि कि चर्चा, संवाद एवं बहस करना l विमर्श के उभरने के तीन कारण है जिनमें पहला है शिक्षा, दूसरा है विचारधाराओं की केन्द्रियता की पराजय, तीसरा कारण राजनीतिक है l

अत: साहित्य के क्षेत्र का विमर्श सचमुच सदियों से उपेक्षित, तिरस्कृत, अस्वीकृत हशिएकृत एवं अधिकार से वंचित वर्ग, जाति या दल के जागरण की, अपने अधिकार की मांग की तथा अपने होने की स्थिति को जताने के लिए उठाई गई आवाज का नाम है, अपने स्वत्व को स्थापित करने की पुकार है l किन्नर विमर्श इसी कोटि में आता है l

समकालीन हिंदी साहित्य में बहुत सारे विमर्श उभर आए है जैसे नारी विमर्श, आदिवासी विमर्श, किसान विमर्श, दलित विमर्श, वृद्ध विमर्श, दिव्यांग विमर्श, बात विमर्श के साथ - साथ किन्नर विमर्श आदि हमारे समाज में नर और नारी के अलावा समाज में अन्य लोग भी रहते है जो किन्नर, नपुसंक, उभयलिंगी, शिखंडी एवं ट्रान्सजेंडर के नाम से जाने जाते है l इन लोगों को समाज ने त्याग दिया है l इन्हें अपने ही लोग अपानाने में हिचकिचाते है l इनकी अधूरी देह के कारण इन्हें अपमानित, द्वेष, तिरस्कृत एवं उपहासों के पात्र बन जाते है l

साहित्य विमर्श में मुख्य है " किन्नर विमर्श " किन्नर या हिजडों से अभिप्राय उन लोगों से है, जिनका जननांग पूरी तरह से विकसित न हो पाए हो, अथवा पुरुष होकर भी नारी स्वभाव के हो l समाज से तिरस्कृत एवं हाशियेकृत होने के कारण अकेलेपन का शिकार हो जाते है l इस अकेलेपन की मानसिकता इन्हें अपने घरों से और समाज से मिलती है l इन्हें समाज से विस्थापित होने हेतु मजबूर कर देती है l

किन्नरों के सामने दो समाज हैं - एक खुद का समाज अर्थात किन्नरों का समाज जहाँ नारी - पुरुष है और इस मुख्य धारा समाज में किन्नरों को शामिल नही किया जाता हैं l आज भी किन्नरों का इस्तेमाल लगातार जारी हैं, लेकिन उनके हित की बात न तब की गई और न अब l समाज में रहते हुए भी उन लोगों कई यातनाएं, पीडाएं, अपमान सब सहने पडते हैं l

भारत में किन्नर समुदाय पिछडा हुआ हैं l समाज द्वारा इसके विकास के रस्ते में अनेक बाधाएं खडी की गई हैं l इसी कारण यह वर्ग विकास के पथ पर आगे नही बढ पाया और दबा कुचला वर्ग बन के रह गया l उन्हें अपने घरों में भी सुरक्षा का एहसास नहीं होता l यहाँ तक की उसके अपने माता - पिता भी उसे दूसरों के सामने स्वीकार करने से मना कर देते हैं l इन लोगों को समाज में समानता मिलने का अधिकार दिलाने में साहित्य की भूमिका महत्वपूर्ण रही हैं l

किन्नर के विषय पर कई उपन्यास आने लगे हैं l भारत में नही बल्की विदेशों में भी कई ख्याती प्राप्त किन्नर लोग है, और उनके जीवन को आधार बनाकर उपन्यास बनाया भी है l साहित्य जगत में किन्नरों के विषय पर चर्चा बढते जाने पर ही समाज को किन्नरों की सच्ची जीवन - कहानियों के बारे में पता लगने लगा है l

हिंदी उपन्यास जगत में नीरजा माधव, महेंद्र, चित्रा मुदगल, अनुसया त्यागी तथा प्रदीप सौरभ आदि के उपन्यास साहित्य में किन्नरों के विषय को स्थान मिला है l इन दोनों समाजों को एक साथ चित्रित करने का सफल प्रयास प्रदीप सौरभ जी ने " तीसरी ताली " उपन्यास में किया है l

" तीसरी ताली " उपन्यास में किन्नर समाज और उसके सामाजिक जीवन का विस्तृत एवं विशाल चित्रण हुआ है l यह एक साथ रहते है l सभी दृष्टी से एक साथ रहने से समाज बनता है l किन्नर जब मुख्यधारा से विस्थापित होकर ही किन्नर अपने समाज का निर्माण करते है l किन्नर विभिन्न मंडली या घरानों में बाटकर जीते है l हर मंडली का एक मुखिया होता है, जिसे आम तौर पर नायक या सरगाना कहा जाता है l

इस उपन्यास में चित्रित मुख्य मंडली का सरगाना, " डिम्पल " नामक पात्र है l प्रत्येक मंडली का एक गुरु होता है l इनके गुरु आशामाई है जिनका आश्रम या पीठ मेहरोली की पहाडियों के बीच स्थित है l किन्नर अपने सारे कार्य - कलाप गुरु के उपदेशों के अनुसार करते है l किन्नरों की शादी भी होती है l जिनसें वे शादी करते हैं या अपने पति मानते हैं, उन्हें " गिरिया " कहते हैं l ये उनके नाम का करवा चौध भी रखते है l आम तौर पर ये मंडली में बाजा बजाने का काम करते हैं l यहाँ गोपाल नामक पात्र का चित्रण पहले " गिरिया " के रुप में हुआ है l

किन्नर समाज में चार वर्गो के हिजडे हैं - निलिमा, हंसा, बुचरा तथा मनसा आदि l इन नामों का उल्लेख कहीं भी नही है l लेकिन हरेक पात्र का विश्लेषण इन चार वर्गो के निर्धारित लक्षणों के आधार पर किया जा सकता है l इनमें वास्तविक हिजडा " बुचरा " ही होते है l क्योंकि ये जन्मजात रुप से न पुरुष न नारी हैं l इस उपन्यास में गौतम साहब का बेटा विनीत बुचरा हैं l उनके जन्म से संबंधित जो विवरण उपन्यास में मिलता है, उससे यह पता चलता है l उपन्यासकार लिखते है कि - " सब ने एक ही जबाब दिया, बच्चे में स्त्री और पुरुष दोनों के लक्षण हैं l मॉ के पेट में ग्यारहवें सप्ताह सेक्सल आर्गन को विकसित करनेवाले होरमेन अपनी भूमिका पूरी नही कर पाये l " l बुचरा कि मानसिकता को स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत करने में उपन्यास सफल हुआ है l

इस उपन्यास का दूसरा पात्र निलिमा है l निलिमा किसी कारणवश स्वयं को हिजडा बनने के लिए समर्पित कर देता है l ज्योति निलिमा हिजडा है l बाबू श्यामसुंदर सिंह के साथ लौन्डे-बाजी करनेवाली ज्योति को इस कारण से छोड देते है कि किसी ने इसके साथ छेड खानी की है l यह ज्योति को समाज से ही फेंक देती है l भूख और आर्थिक विषमता ज्योति को हिजडा सोनम के पास ले पहुंचाती है l सोनम उससे लौन्डेबाजी की और धंधा छोड देने की सलाह देती है l ज्योति सोनम से अपने आपको हिजडा बना देने की बिनती करती है l ज्योति कहती है कि - " बिना हिजडा के भी मैं हिजडा बना हुआ हूँ l जो अपने को मर्द कहते है, वे कौन से हिजडों से कम है, गरीब का बेटा हूँ तो पूरे गांव की भौजाई बन गया हूँ l " [2]

यहाँ ज्योति हिजडा न होने पर भी उनका परिवेश उन्हें हिजडा बना देता है l ज्योति का कथन है कि - " माना मैं मर्द हूँ, लेकिन ये समाज मुझ से मर्द का नाम लेने के लिए राजी नही है l मुझे इस समाज ने मादा की तरह भोग की वस्तु की चीज में तबदील कर दिया है l मैं मर्द हूँ, औरत राहा हूं या फिर हिजडा बन जाऊ, इससे किसी को कोई फर्क नही पडेगा l पेट की आग तो बडे - बडे को न जाने क्या - क्या बना देती है l " [3] यहाँ ज्योति सामाजिक करणों से किन्नर बनने को मजबूर हुआ है l कोई भी किन्नर समाज की ओर पलायन करता है l क्योंकि की इस के लिए आर्थिक विषमता मुख्य कारण है l मनसा नामक एक और वर्ग

का चित्रण भी इसमें है जो शारीरिक रुप से पुरुष या स्त्री है l लेकिन मानसिक रुप से अपने को विपरीत लिंग अथवा अक्सर स्त्री लिंग के अधिक निकट महसूस करता है l

इस उपन्यास में मंजू इस प्रकार का पात्र है जिसका पता उपन्यास के वाक्यों से चलता है - " दरअसर मंजू बचपन से हिजडों के साथ रहते रहते अपने को हिजडा समझने लगी थी l शायद जीवन भर मंजू एक मुकम्मल औरत होने पर भी हिजडों की तरह व्यवहार करती है l " [4] यहाँ मंजू स्वयं यह जानती भी है कि वह एक मुकम्मल औरत है l लेकिन किन्नर बिरादरी के होने के नाते इतनी सारी कठिनाइयाँ झेलने पर भी किन्नर समाज से मुक्त होने की चिंता उनके मन में कभी भी नही होती l अर्थात मंजू अपने आप उस माहौल से तादात्म्य प्राप्त करती है l

किन्नर समाज की एक पूजा - आराधना की व्यवस्था है l इसी प्रकार इन्हें भी अनुष्ठान की एक व्यवस्था है l समाज के प्रत्येक मंडल किसी न किसी देवता को अपनी इष्ट देवता को अपनी इष्ट देवता मानता है, इसी प्रकार किन्नर समाज की इष्ट देवता है मुर्गीवाली बुचर माता है - " मुर्गीवाली माँ को किन्नर अपनी इष्ट देवता मानते हैं l राजस्थान में उनका वास है, ऐसी उनकी मान्यता है l " [5]

किन्नर समाज अपने विश्वास के प्रति आदर - समाज एवं समर्पण की भावना रखता है l उनके सामाजिक जीवन के हर पहलू में इन आस्थाओं की झलक देख पाती है l मुख्य समाज की तरह किन्नर भी गुरु देवों के प्रति आस्था एवं श्रद्धा रखते हैं l किन्नर इनके प्रकोप से डरते भी हैं l गोपाल की रस्म क्रिया परंपरा के विरुद्ध होने के कारण बुजुर्ग हिजडा कहता हैं कि - " संत जी ने कहा है कि हिजडों की गद्दी का गुरु कोई मर्द हो सकता l यदि ऐसा हुआ तो धरती पर हर हिजडे को मुर्गा देवी का प्रकोप झेलना पडेगा l वह नाच - गाकर कमाने लायक भी नहीं रहेंगे l " [6] किन्नर समाज के लोग नृत्य - गायन करके लोगों का मनोरंजन करते हैं और आशीश देकर शगुन के रुप में रुपये लेकर जाते हैं जिससे उनकी सारी भौतिक आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं l

किन्नर समाज में आम तौर पर किसी की मृत्यु होने पर लोग रोते हैं l लेकिन किन्नर समाज में किसी हिजडे की मृत्यु पर गद्दी के अन्य हिजडे रोते नही हैं l उनके लिए खुशी की बात है l किन्नर की शवयात्रा समाज से छिपकर अंधेरे में मध्यरात्रि के बाद निकलती हैं l उपन्यास में इसका चित्रण यों मिलता है - " दिल्ली में आम तौर पर हिजडे के शव को रात को डन्डे से मारते है उस पर चप्पल जमते बरसते और सडक पर खींचते हुए शमशाम घाट ले जाते हैं l इस तरह शव को शमशाम में ले जाने के पीछे की मान्यता है कि मरनेवाला दुबारा तीसरी योनी में जन्म नही लेगा l " [7]

समाज एवं परिवार के लिए किन्नर अनुपयोगी चीज है l क्योंकि वंश वृद्धी करने में असमर्थ होने के कारण इनमें घर - परिवार या समाज के परिवार को आगे बढाने की क्षमता नही होती है l समाज द्वारा इन्हें अस्वीकारने का कारण इनकी जैविक और यौनिक भिन्नता है l इस उपन्यास में प्रदीप सौरभ लिखते है - " घर में ऐसे बच्चों को पैदा होना उसकी पैदाईश के साथ ही उनकी उपयोगिता को खतम कर देता है l घर में बेटा जरुर हुआ था, लेकिन कुछ दिनों के अंदर ही परिवार को पता चल गया कि वह किसी काम का नहीं है l बढने के साथ उसका पुरुषांग विकसित नही हुआ है l " 8 यहाँ जैविक रुप में शरीर के किसी अंग का अविकसित होना विशेष तौर पर जननांगों का, उसके पूरे व्यक्तित्व को ही प्रश्न के घेरे में डाला देता है l वास्तव में यह किन्नर समुदाय का जैविक यथार्थ है l इसी आधार पर समाज ने किन्नर को समाज से बाहर कर दिया है l

किन्नर एक ओर परिवार और समाज से बहिष्कार झेलता है, वही दूसरी ओर राज्य और राष्ट्र में उपेक्षा और अवहेलना का पात्र बनता है l बचपन से ही यौन उत्पीडन और मानसिक संघर्ष का शिकार होते है l किन्नर के पिता यह सोचते है कि लोग उसके पुरुषत्व पर संदेह करेगा और बडा होकर यह बच्चा परिवार की प्रतिष्ठा धूल धूसरित करेगा l उपन्यासकार निकिता के पिता की हालत का वर्णन यूं करता है - " गौतम साहब में जो अकड थी, वह ढीली पड जाती है l जो हमेशा झुझलाए से रहते है और अजीब तरह की चिंता उनके माथे पर दिखाई देने लगी l बेतर तभी ऐसी है कि गौतम साहब कभी मोजा पहनना भूल जाते तो कभी उनकी कमीज आगे पीछे से निकली होती ऐसा लगता जैसे उन पर कोई पहाड गिर गया हो l " [9] अत: वे जल्द से जल्द उस बालक को या तो ठिकाने लगाने या किन्नरों के बीच छोडने का प्रयास करते है l

इस उपन्यास में आनन्दी अँटी बिना समाज के परवाह किये अपनी बेटी को पढाना चाहती है l वह उसके लिए प्रयास करती है l मगर हर जगह निराशा हाथ लगती है l फिर भी चाहे लडकियों का स्कूल हो या लडकों का l दोनों जगह से एक ही जबाब मिला कि - " जेंडर स्पष्ट न होने के कारण हम दाखिला नहीं दे सकते हैं --- यह स्कूल सामान्य बच्चे के लिए हैं, बीच वाले बच्चे को दाखिल देने से स्कूल का माहौल खराब हो जाता हैं l " [10] मतलब यह समाज केवल जैविक असमानता को ही नही झेलता हैं वरन सामाजिक जेंडर असमानता का भी सामना करता है l

निष्कर्ष रुप से कहा जा सकता कि इस उपन्यास में हिजडों के सुख - दुःख, हशिए समाज पर जिंदगी जीने की व्यवस्था, लैंगिक असमानता, भेदभाव की पीडा, आजीविका की समस्या, परिवार से परित्यक्त होने का दर्द आदि को रेखांकित किया गया है l किन्नर समाज से विस्थापित के कारण उत्पन्न अकेलेपन की समस्या को उजागर करने का प्रयास भी इस में हुआ है l यह स्पष्ट करने की कोशिश भी हुई है कि किन्नरों का भी दिल होता है और वह धडकता भी है l सचमुच यह उपन्यास किन्नर समाज की सच्ची कहानी है l

****

संदर्भ : --

1) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 41
2) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 56
3) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 57
4) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 106
5) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 44
6) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 105
7) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 147
8) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 40
9) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 10
10) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, पृ. सं. 17

Rhetorical Fabrication of the Self: The Autobiography of Benjamin Franklin

Gurpreet Kaur
Assistant Professor
Department of English
Mata Sundri College for WomenUniversity of Delhi

Although Autobiography has only lately gained prominence, its roots can be traced back to antiquity. Autobiography is reasonably a versatile form with tight ties to works such as memoirs, confessions, letters, diary writings, journals, etc. Given its protean identity, establishing an authoritative definition is quite challenging. Philippe Lejeune, a French professor of autobiography, in order to develop a foundational theory that would help academicians to categorise this well-known genre, puts it like this "[r]etrospective prose narrative written by a real person concerning his own existence, where the focus is his individual life, in particular the story of the development of his personality" ('Philippe Lejeune'). The terms 'real' and 'existence' in the above definition seem to emphasise the authenticity, factuality, and accuracy of events, places, and situations related to a person's life. But now the question arises whether its content solely comprises the real/truth or some alteration/ fabrication of it. Autobiographies, no doubt, presume an implicit trust between the narrator and the reader, and they can't operate without that 'trust factor'. But if autobiographies are read only with the assumption held by the reader that the author's intention is the final word, then it ends up in a naive reading and not a critical one. My paper aims to interrogate the category of real in *The Autobiography of Benjamin Franklin* and to deconstruct the author's attempt at self-construction.

Like in other autobiographies where facts are woven with fictive details to add a dramatic touch and the narrative 'I' is mounted on authorial intention to project a desired image, Benjamin's narrative also hinges upon the principle of careful selection and omission of events, thereby arranging and embellishing the factual data in order to present himself as a prototype not only for his future generations but also for the entire mankind. The tale of Benjamin, in addition to describing his life, provides the reader with an insight into how his identity is formed and unformed and presents his underlying concerns. To mould and improve his image, he employs the art of rhetorical manipulation and self-fashioning, which is the subject of our study.

In the beginning of his autobiography, Benjamin reveals his purpose for writing it where he says "Having emerg'd from the Poverty and Obscurity in which I was born and bred, to a State of Affluence and some Degree of Reputation in the World, and having gone so far thro' Life with a considerable Share of Felicity, the conducing Means I made use of, which, with the Blessing of God, so well succeeded, my Posterity may like to know, as they may find some of them suitable to their own Situations, and therefore fit to be imitated." (Franklin, 8). According to the statement above, Benjamin Franklin's purpose is to present his life as a guiding force for his descendants to achieve worldly success. He intends to do so by showcasing the "conducing means" that he used during his incredible journey from his lowly beginnings and life of obscurity and poverty to accomplished wealth and fame. The phrase "conducing Means" refers to the qualities or virtues he possessed or pursued, such as industry, frugality, self-improvement, temperance, and humility. However, "conducing Means" here is as literal as material. Literally, it refers to the manipulation of the self-image by the narrator through the techniques of enhancement of his own persona and effacement of other characters. Self-enhancement is shown by the acquisition of good traits. Benjamin, by highlighting his devotion, diligence, self-discipline, and determination, judiciously tries to persuade a wider audience and earn a good reputation. Numerous anecdotes can be found that indicate that his virtues became his key to success.

Despite having the qualities of a good scholar, Benjamin was forced to quit school at the age of ten due to financial constraints. He was asked to join his father's candle-making business, a trade he disliked. He had been fond of reading since his childhood, and he saved all his little money to buy books. His bookish inclination made his father allow him to pursue his love of reading and work as an apprentice under his brother James. He took it as an opportunity to read as many books as he could and improve his style of writing by imitating the works of prolific writers. He used to spend hours reading books and eat less to save money to buy the books. No circumstances or challenges could deter him from getting an informal education. He proved himself as a literary scholar, capable enough to win the admiration of kings and governors through his industry. It is clear in the quote "Reading was the only amusement I allow'd myself.I spent no time in taverns, games, or frolicks of any kind; and my industry in my business continu'd as indefatigable as it was necessary……I from thence considered industry as a means of obtaining wealth and distinction, which encourag'd me, tho' I did not think that I should ever literally stand before kings, which, however, has since happened; for I have stood before five, and even had the honor of sitting down with one, the King of Denmark, to dinner."(Franklin, 77)

The aforementioned quote emphasises his hard work, self -control, and dedication. He describes how he taught himself various skills, including writing and public speaking, and how he developed a strong work ethic that allowed him to succeed in various ventures. It is noticeable that Benjamin used 'industry as a means' not only to obtain wealth and distinction but also to win acclaim and popularity. The real intention of enhancing self-image is also evident in the quote "I mention this industry the more particularly and the more freely, tho' it seems to be talking in my own praise, that those of my posterity, who shall read it, may know the use of that virtue, when they see its effects in my favour throughout this relation." (Franklin, 61). The repeated emphasis on the virtue of industry is worth noting as it lays bare his consciousness of how future generations will perceive him. This shows that he thoroughly knows about his subject matter and its implications for the reader. So, in order to persuade the audience, he meticulously tuned it.

Another trait he claimed to possess was "Humility". He credited God for his success and happiness. He writes "And now I speak of thanking God, I desire with all humility to acknowledge that I owe the mentioned happiness of my past life to His kind providence, which lead me to the means I used and gave them success." (Franklin, 9). While Benjamin advocates humility as a vital virtue to possess, he himself has struggled to fully embody it and exhibits more of vanity. He is careful not to include anything that would make his list or belief objectionable, but vanity is still highly evident in his disposition. He not only possesses it but also contests the conventional viewpoint in its favour that vanity is a vice as he says "Most people dislike vanity in others, whatever share they have of it themselves; but I give it fair quarter wherever I meet with it, being persuaded that it is often productive of good to the possessor, and to others that are within his sphere of action; and therefore, in many cases, it would not be altogether absurd if a man were to thank God for his vanity among the other comforts of life." (Franklin, 9)

Benjamin's autobiography is loaded with self-boasting images. He engages in excessive self-promotion, which undermines his credibility and leads others to question his integrity and trustworthiness. So he defends himself by claiming that pride and vanity are two instinctive drives that, according to him, are the hardest to suppress. One is likely to encounter it frequently in his life. He himself agrees on this point when he says "In reality, there is, perhaps, no one of our natural passions so hard to subdue as pride. Disguise it, struggle with it, beat it down, stifle it, mortify it as much as one pleases, it is still alive, and will every now and then peep out and show itself; you will see it, perhaps, often in this history; for, even if I could conceive that I had compleatly overcome it, I should probably be proud of my humility." (Franklin, 88). The use of the words "disguise", "struggle", "beat", "stifle", and "mortify" in the above quote provides a room for his pride to persist even after his struggle to overcome it. He, therefore, hides his arrogance under the disguise of humility to lessen the negative effect on his reputation among readers. It is a fake humility, not a genuine one, acquired to justify his existent pride. Judith. P. Saunders, in her book *American Classics: Evolutionary Perspectives,* also noted that Benjamin, "Deliberately attempting to overcome a reputation for being "proud," "overbearing" and "insolent," he consciously forges a humble persona for himself…. Humble self-presentation may not be as admirable as genuine humility" (Saunders 6).

A similar kind of relationship is seen in his contradictory actions. His own claim about the virtues he aspires to imbue and the account of himself that he provides are in conflict with one another. He endorses 'Chastity', where he holds the opinion of pursuing venery "never to injure of your own and another's peace or reputation". However, his engagement in premarital and extramarital affairs, one of which strained his relationship with his friend and inflicted him pain. This episode doesn't find expression in detail, as he deliberately omits some of his less desirable and unpaid qualities.

'Silence' is one of the 13 virtues he listed, by which he means "speak not but what may benefit others or yourself: avoid trifling conversation" (Franklin, 80). By this virtue, he intends to convey that he should avoid talking about trivial matters and only speak when the things are helpful to you or others. This means he sees everything from the perspective of reaping the benefits. Although he claimed the purpose of his autobiography was to aid his descendants but, in its garb, he disguises his own benefit to promote himself as a role model. Holding conversation with his son in the autobiography was, in fact, his personal interest to draw out his positive image in his reader's mind. It is also observed that he frequently used the words "means", "useful" and "utility," which indicates that the author used some means to manipulate his subject matter in accordance with his utility. He looked at the underlying advantages of the activities he engaged in. So, it seems obvious that he chooses his words carefully while creating the literary framework for his vision.Benjamin further emphasises the importance of kinship in his life. He offers several examples to demonstrate to the audience how deeply important and sentimental the concept of family is to him. He expressed sorrow over the death of his young son from a contagious disease called smallpox. Though he couldn't save his son, he used this as an opportunity to counsel other parents about immunisation. The account of this incident inspires the reader to believe in his virtue and gains his trust. Another reference to family connection is about the friction caused in his relationship

with his brother, James. Long after their relational split, he carefully considered the reason for leaving James and came to realise that it happened due to a hasty decision motivated by ego and self-interest. He remembers "At length, a fresh difference arising between my brother and me, I took upon me to assert my freedom, presuming that he would not venture to produce the new indentures. It was not fair in me to take this advantage, and this I therefore reckon one of the first errata of my life; but the unfairness of it weighed little with me, when under the impressions of resentment for the blows his passion too often urged him to bestow upon me, though he was otherwise not an ill-natur'd man: perhaps I was too saucy and provoking." (Franklin, 24)

A tone of remorse and humility runs throughout Franklin's account of falling out with James. When he says, "It was not fair in me to take this advantage", he intends to convey his admittance of being at fault. Calling his action unfair, he displays his subdued pride and his ability to view things from the viewpoint of his sibling. His intention is to show how the split between the two left a deep scar on him. Franklin makes the implication that his journey towards selfimprovement has begun by reconsidering his "errata" concerning parting ways with James. By doing so, he swiftly creates a humble turning point after a brief defence of his rebellious behaviour by accusing himself of being "too saucy and provoking". Thus, readers would appreciate Franklin's newly discovered sense of humility. Furthermore, he also talked of assisting his old brother's son in getting an education and establishing his business after the death of his brother. He thought of him as his responsibility and forgot about all his ill feelings for his brother. Through this, Franklin demonstrates that wrongdoings may be remedied by taking initiative and can eventually result in rewards by restoring one's moral fibre and character. The twisting of his actions displays his consciousness of the fact that his skilful handling of subject matter reaps the reward of enhancement of his self. Apart from self enhancement, he also uses the strategy of effacing the self of other characters like James, his brother, who was put in prison for going against the government and was prohibited from releasing his newspaper. Benjamin portrays his brother as a hot-headed, jealous, and vengeful person who got retribution by forbidding Benjamin to get a job in Boston. This highlights his brother's immoral disposition in contrast to his own moral excellence. He also presents John Collins as a gambler and drunkard who used all the money borrowed from Vernon but never returned it. Governor William Keith was portrayed as the worst character, initially appearing to Benjamin as great a mentor and remarkable benefactor. He offered help in starting his business but later betrayed him. He was an evil scoundrel who broke his word. Another character, Keimer, Franklin's first boss was a nasty, envious opportunist who publicly humiliated him by shouting at him. By downplaying other characters, Benjamin employs the tactic to make his persona standout by destabilising other characters in his immediate acquaintance. Due to the manipulation of the subject content to leave a favourable impression on the reader, Benjamin also invited a lot of criticism. Franklin was viewed by Mark Twain as being dishonest; he refused to believe that Franklin adhered to his own maxims and berated him for projecting an image to the public that he had no intention of upholding. Twain "could not tolerate the skilful image-making in Franklin." (White 297). The same disdain was shown by Ralph Waldo Emerson, who brushed his writings aside. "Franklin's man is a frugal, inoffensive, thrifty citizen, but savours of nothing heroic" (Issacson 480). D. H. Lawrence undoubtedly made a most scathing criticism of Franklin "Franklin proceeded to automatise himself, to subdue life so that it should work automatically to his will. Like Rousseau, he makes a confession of his life. But he is purely self-congratulatory. He tells us in detail how he worked out the process of reducing himself to a deliberate entity." (Buxbaum, 46). At some places, it seems he himself confides that his individual traits must be "visible to…. neighbours" (Franklin, 61) so that it begins "to give us character and credit" (Franklin, 61). He admits that to achieve the desired "character and credit", he took great care in tailoring the content "I took care not only to be in reality industrious and frugal, but to avoid all appearances to the contrary." (Franklin, 65)

This implies that he highlights only his admirable traits and avoids the contrary ones. Therefore, it is seen as a deliberate move to draw out his precise character. He selectively chooses and arranges the events of his life to present his self-image in a positive light. Overall, Franklin's autobiography is a rhetorically fabricated and strategically presented account of his life that reinforces his legacy as a self-made man and influential figure in American history.

****

Works Cited

1. Buxbaum, Melvin H. "The Lawrence Attack". *Critical Essays on Benjamin Franklin*. G K Hall & Co., 1987.
2. "Franklin and the American Identity". 27 Oct. 2009, https://
userpages.umbc.edu/~jamie/html/on_benjamin_franklin_and_the_a.html.
3. Accessed 18 Nov. 2021.
4. Franklin, Benjamin. *The Autobiography of Benjamin Franklin*. Duke Classics, 2012.
5. Isaacson, Walter. *Benjamin Franklin: An American Life*. Simon & Schuster, 2004.
6. "Philippe Lejeune". *Wikipedia: The Free Encyclopedia*. Wikimedia Foundation, 17 Apr. 2022, https://en.m.wikipedia.org/wiki/Philippe_Lejeune. Accessed 2 Jan. 2022.
7. Saunders, Judith P. "The Autobiography of Benjamin Franklin: The Story of a Successful Social Animal". *American Classics: Evolutionary Perspectives*. Academic Studies Press, 2018. *Jstor*, https://doi.org/10.2307/
j.ctv4v3226. Accessed 9 Feb. 2020.
8. Seavey, Ormond. *Becoming Benjamin Franklin: The Autobiography and the Life*. Pennsylvania State University Press,1990.
9. White, Charles W. *Benjamin Franklin: A Study in Self-Mythology*. Taylor & Francis, 1987.
10. Zeng, Angela. "Meaningful Manipulation in The Autobiography of Benjamin Franklin". *Angelazeng.org*, 28 Apr. 2017, https://
angelazeng.org/2017/06/05/meaningfulmanipulation-in-the-autobiography
-of-benjamin-franklin/. Accessed 18 Nov. 2021.

Paulo Coelho's *The Zahir*: A Thematic Study

Dr. Kumar Gaurav
Assistant Professor
Department of English School of Humanities Lovely Professional University Phagwara, Punjab

Abstract: Paulo Coelho, the famous Brazilian lyricist and writer is considered one of the most famous and influential writers of modern times. The aim of this article is to critically analyze the execution of the themes of freedom, obsession and love in one of the most famous novels of this century, *The Zahir*. However, *The Zahir* which covers the story of a famous narrator searching for his missing wife named Esther is not limited to the search for a missing person, rather it is a journey to find peace and discover one's true self. The narrator's search takes him to "many places, more than that, it leads him to a new understanding of the nature of love, the power of destiny and what really means to follow one's heart"[1].

Keywords:- Freedom, Obsession, Love, The Zahir, Paulo Coelho.

Introduction:-The Zahir revolves around the novel's protagonist, the unnamed narrator's search for his missing wife. The unnamed narrator is a well-known and famous writer who has several bestsellers to his name and is looking for his missing wife named Esther who is an award-winning journalist working as a war correspondent. "The Zahir is a 2005 novel and it's about an unnamed narrator who is obsessed with finding his wife, Esther who is a war correspondent who has just returned from Iraq. According to the writer Jorge Luis Borges, the idea of the Zahir comes from the Islamic tradition and is thought to have arisen at some point in the 18th century. Zahir means visible, present, incapable of going unnoticed in Arabic. It is someone or something which, once we have come into contact with them or it, gradually occupies our every thought, until we can think of nothing else. This can be considered either a state of holiness or of madness" In Coelho's official biography '*A Warrior's Life'* by Fernando Morais, Coelho accepts that the character of Esther is based on *Sunday Times* journalist Christian Lamb. However, the character of the unnamed narrator who is also the protagonist of the novel appears to be influenced by Coelho's personal experiences. "It is both believed and proved that writers are able to produce a great and moving work only when they reveal their most private thoughts and feelings in their writings. The influence of personal experience and reminiscences can be seen in the works of almost all the writers"[3].The aim of the paper is to critically analyze the novel *The Zahir* and to discuss and reveal the themes of freedom, obsession and love.

Discussion-Element of Freedom-"Freedom is the very nature of human beings. Only with freedom one can enjoy and blossom. Without freedom, imagination becomes stagnant, attitude becomes stifling, concepts become a burden and information is of no value"[4]. Dr. Ursula Sadner in her article 'Use Your Strength' discusses in detail the importance of freedom in a marriage. She believes that for a marriage to work successfully both husband and wife need to give up certain interests and hobbies if they do not include each other. She has a very strong opinion about freedom in marriages as she suggests that restricting each other's freedom will influence both trust and love negatively in a couple's married life. She asserts that "the only responsibility is for the family (even when there are no children) - that is to work for the family's wellbeing and to care for your partner's happiness. If the husband isn't happy when his wife has hobbies that don't include him, she has to give them up. If the wife doesn't agree that her husband has other interests besides his job and their home, the husband has to give them up."[5]

Both the narrator and his wife Esther live a life where they give a lot of space to each other. They are a celebrity couple and believe in open marriage which gives them the liberty to establish sexual relations with other people while staying together in the marriage. "Sometimes the extramarital relationships are explicitly incorporated into the marriage life. Many couples in many cultures seem to accept infidelity as part of their marriage. These couples do not face a crisis when infidelity is exposed. Open marriages were popular in the 1970s following the sexual revolution."[6]Coelho presents both characters as free, confident and open-minded. Coelho's protagonist i.e. the narrator is someone who cherishes his freedom as the most important aspect of his life. At the beginning of the novel, the narrator is held as a suspect for his

wife's disappearance. However, he is released from prison, when found not guilty of the crime. Coelho describes the narrator's state of mind as – "I'm free. I'm out of prison, my wife has disappeared in mysterious circumstances, I have no fixed timetable for work, I have no problem meeting new people, I'm rich, famous, and if Esther really has left me, I'll soon find someone to replace her. I 'm free, independent."[7]However, the disappearance of his wife also forces him to realize the true meaning of freedom as he questions himself "What is freedom"?

Element of obsession-Obsessive love for a partner has never been considered as a good sign for a relationship to grow. To some extent, it is considered as a disorder as it leads to a situation where a person suffering from starts to suffer from jealousy that leads to unnecessary and unwanted problems. Mostly it occurs at the beginning of any relationship where both partners tend to draw each other's attention. Mason Komay in her article 'Understanding Obsessive Love Disorder and How it Can Affect Your Life' writes that "the first thing is that in any relationship, the people involved should have their own identities and should be able to follow their interests and friendships. However, when a partner has obsessive love disorder, it leads to difficulty in pursuing that separate identity and those interests. That's because the disorder itself often leads to delusional jealousy and overwhelming intensity"[8].

Coelho's narrator's obsession with his missing wife has none of the traits of an obsessive love disorder. Esther has been the narrator's inspiration. He knows she is equally responsible for him being a famous and well-known writer. It was his wife who forced him to pursue his passion for writing and later handed over the draft to one of her previous boyfriends to get it published which eventually went on to become a best seller. The narrator's obsession with his wife is rather emotional in nature than jealousy. His obsession does not make him a harmful person to live with. Rather even in her absence, Esther inspires him to write another bestseller. Esther, besides being his wife, has been a guiding force in his life. What hurts him is that she chooses to disappear without telling him. Out of his obsession, this particular behaviour of Esther has lowered his self-esteem. However even after more than two years of Esther's disappearance and despite having a famous and beautiful actress as his girlfriend he finds it difficult to let go Esther from his imagination. The narrator accepts his obsession for his missing wife when he says,obsessive love disorder "In the world of my imagination, Esther was still my companion, and her love gave me the strength to go forward and explore all my frontiers. In the real world, she was pure obsession, sapping my energy, taking up all the available space, and obliging me to make an enormous effort just to continue with my life, my work, my meeting with film producers, my interviews. How was it possible that, even after two years, I had still not managed to forget her? I could not bear having to think about it anymore, analyzing all the possibilities, and trying various ways out: deciding simply to accept the situation, writing a book, practicing yoga, doing some charity work, seeing friends, seducing women, going out to supper, to the cinema (always avoiding adaptations of books, of course, and seeking out films that had been specially written for the screen), to the theatre, the ballet, to soccer games. The Zahir always won, though: it was always there, making me think: I wish she was here with me"[9].

Element of love-According to R. Raffagnino *et.al*. "Love is a feeling that is especially expressed by the people involved in romantic relationships and is considered, along with a number of other factors (such as intimacy, commitment, and affection), one of the most significant components for a satisfying relationship and for its duration. These are aspects that, within the wider scope of relationship quality, are related to subjective well-being, especially in terms of happiness, life satisfaction, and the existence of more positive past experiences as opposed to negative feelings"[10]. Coelho, over a period of time, through his works, has redefined the meaning of love. His projection of love as a theme is more of emotional and spiritual in nature. In the novel, The Zahir, both the narrator and his wife love each other. However that does not stops them from have extramarital affairs occasionally. Their love for each other is away from the barriers of physical intimacy. As illustrated in one of their conversations,"We've built our

lives together. I love my man and he loves me, even though he's not always the most faithful of husbands"[11].However, for the narrator, it was only when his wife disappeared without informing him, he realized his true love for her. Once he realized her love for her, the narrator start taking steps to find her. "The spiritual aspect of marriage is the vehicle for our personal growth and it is invaluable for this purpose. The love, which is needed to stabilize a relationship, is the type of love God displays to each of us, an unconditional commitment to an imperfect person, nevertheless, this takes energy and effort. It means caring about the other person as much you care about yourself"[12].The narrator takes the help of Mikhail, Esther's friend to initiate the search to find her. Coelho very strongly believes in the true energy of love. He conveys this message through Mikhail who is on a mission to spread energy of love. In the novel, Mikhail declares,"I have a mission to fulfill, and that mission is to spread the true energyof love throughout the world"[13].The narrator's search for Esther leads him on a journey across countries where he explores and realizes the true power of love and thus discovers his "inner self".

Conclusion-This paper while analyzing the novel *The Zahir* elaborates on the primary themes of freedom, obsession and love. At the beginning of the novel, the narrator finds out that he is being detained on the suspicion of him being responsible for the disappearance of his wife. But after being released, when he discovers that he is free to go and do whatever he wants starts cherishing his newfound freedom, rather than grieving for his wife's disappearance. But the newfound freedom also makes him realize the mistakes that he committed before the sudden disappearance of his wife. This paper also highlights the theme of obsession in a positive way. The narrator's obsession with his wife inspires him to write a bestseller novel. Further, it helps him reorganize his life and add meaning to it. It helps him get over all his problems and starts finding new dimensions in his life. Finally, the theme of love is supported by Mikhail's purpose of spreading the true energy of love in his life and the narrator's realization of true love. The narrator's search for his missing wife results in him finding Esther and understanding the power of love.

****

REFERENCES-

1. *Dr. Mrinalini P.Thaker, "A Critical Study of Paulo Coelho's novels", Paradise Publishers, Jaipur,* ***(2016),*** *pp. 98.*
2. *P. Geetha and Dr. Olive Thambi, "Expression of Personal experience in the Novels of Paulo Coelho", Language in India., vol. 18, no.4,* ***(2018),*** *pp.100.*
3. *P. Geetha and Dr. Olive Thambi, "Expression of Personal experience in the Novels of Paulo Coelho", Language in India., vol. 18, no.4,* ***(2018),*** *pp.95.*
4. *Banale, Archana Rajendra, "Journey for Self-Discovery". A Spiritual Odyssey of Quest For the Mysteries of Life: A Study of Paulo Coelho's Fiction, Ch. IV, pp. 07.*
5. *Dr. Ursula Sandner, "Use Your Strength", https://www.ursula-sandner.com/en/much-freedom-marriage/#:~:text=True%20love%20means%20freedom.&text=%2D%20you%20love%20and%20enjoy%20giving,you%20and%20meet%20your%20needs. Accessed 07 September 2020.*
6. *Ofer Zur, "Infidelity & Affairs: Facts, Myths and What Works", https://www.zurinstitute.com/infidelity/, Accessed 07 September 2020.*
7. *Paulo Coelho, "The Zahir- A Novel of Obsession", Translated by Margaret Jull Costa, Harper Collins Publishers,* ***(2014)****, pp. 8.*
8. *Mason Komay, "Understanding Obsessive Love Disorder and How it Can Affect Your Life", https://www.regain.us/advice/love/understanding-obsessive-love-disorder-and-how-it-can-affect-your-life/, Accessed 07 september 2020.*
9. *Paulo Coelho, "The Zahir- A Novel of Obsession", Translated by Margaret Jull Costa, Harper Collins Publishers,* ***(2014)****, pp.125.*
10. *Rosalba Raffagnino and Luisa Puddu, "Love Styles in Couple Relationships: A Literature Review", Open Journal of Social Sciences, 6,* ***(2018)****, pp. 307-330.*
11. *Paulo Coelho, "The Zahir- A Novel of Obsession", Translated by Margaret Jull Costa, Harper Collins Publishers,* ***(2014)****, pp 38.*
12. *Dr. Mrinalini P.Thaker, "A Critical Study of Paulo Coelho's novels", Paradise Publishers, Jaipur,* ***(2016),*** *pp. 107.*
13. *Paulo Coelho, "The Zahir- A Novel of Obsession", Translated by Margaret Jull Costa, Harper Collins Publishers,* ***(2014)****, pp 195.*

The Better Man: A Feministic View

Dr. Ashish Gupta
Professor & Head
Department of English
Government Girls College Betul, India

Anita Nair is one of the eminent women novelists in contemporary India; she has earned honors for her originality, propensity and for her societal dedication. She presents women characters in her novels with full ofenormous courage. As an Indian woman and the experiences of women around her she very perfectly understood the societal-cultural problems of women. The celebrated author was born at Mundakottakurissi, near Shornur in Kerala. Her works of fiction have been translated into 21 languages. She studied in Chennai before moving back to Kerala, where she obtained a BA in English Literature. She worked as the creative director of an advertising agency in Bangalore. It was at this time in 1997 that she wrote her first book, a collection of short stories titled *Satyr of the Subway*. In fact, the book earned her appreciation and she also won her a fellowship from the Virginia Center for Creative Arts. She has made a debut in children's literature also. Nair has also written *The Puffin Book of Myths and Legends* (2004), a children's book on myths and legends. Nair has also edited *Where the Rain is Born* (2003). Nair's writings about Kerala and her poetry has been included in *The Poetry India Collection* and a British Council Poetry Workshop Anthology. Her poems appeared in many prestigious poetry anthologies like *The Dance of the Peacock: An Anthology of English Poetry from India*, featuring 151 Indian English poets, edited by Vivekanand Jha and published by Hidden Brook Press, Canada. It is interesting to note that *The Better Man* is a novel by Anita Nair. It is set in the northern part of Kerala, India, a region known as Malabar under the British Raj. The Better Man is set in contemporary India in a little fictitious village called Kaikurussi in the northern part of Kerala. This region was once known as Malabar during the British regime. After Independence, Malabar as a state/region ceased to exist. Though Malabar has no geographical boundaries, no presence on a map of India, it still exists as a state of mind: laid-back, slow, to live and let live. So much so, the northern Malabaristreat the enterprising and hard-working southerners with a disdain bordering on contempt. A person from Malabar is so entrenched in the past that thinking of the morrow is almost impossible. And yet, there is a discontent that is almost palpable. Perhaps this is the reason why the region that was once Malabar saw the growth of Naxalites [extremists who combined Marxism with violence against all organized systems]; still has the highest recorded number of lunatics and suicides in India and has fundamentalist political groups thriving side by side with communist strongholds.

Notably, Kaikurussi the village is in a little hollow surrounded by several hills. It has nothing there that would make any one come looking for it. It is neither the birthplace of a Mahatma nor a movement. No miracles have ever happened there. In fact, nothing of significance ever happens there to anyone. In fact, there is not even a road running through Kaikurussi or a river flowing alongside it. All Kaikurussi has to define its topography are fields, wells, a mountain and distant hills.An elderly bachelor and a retired government employee, Mukundan is forced by circumstances to return to Kaikurussi, the village he was born in. A village that he fled when he was eighteen. And now back in his ancestral house, he finds himself unable to cope. He is haunted by a sense of failure. For having abandoned his mother. For not measuring up to his still alive and domineering father Achuthan Nair's expectations.For having gone through life without really living it And then there is the village itself. Mukundan realizes that he has no role to play in the village. In fact, he discovers that what should have been his rightful place had been usurped by an upstart Power House Ramakrishnan. In the first few weeks of his exile, hemeets up with a wayward genius. Bhasi or One-screw- loose -Bhasi as he is known is a house painter and a practitioner of a mongrel system of medicine, he has evolved by combining several kinds of healing processes - herbal cures, principles of Homeopathy....Bhasi is deeply disturbed by Mukundan's anguish and decides to mend the cracks in Mukundan's much battered psyche. He cajoles, manipulates and shapes Mukundan's transformation. But the superficiality of the change is revealed soon. Power House Ramakrishnan on a cruel whim decides to build a community hall in the village. And chooses Bhasi's piece of land as the site to build on. When Bhasi refuses to sell his land, Power House Ramakrishnan threatens to break his businessand run him out of the village. As the richest and most powerful man of the village Power House Ramakrishnan was capable of doing just that and

Bhasi knows this as well. So, he turns to Mukundan to intervene on his behalf. Mukundan sets out to save Bhasi's home but is completely swayed by Power House Ramakrishnan.The latter knowing how recognition-hungry Mukundan is and how easily he would succumb to flattery uses that as his weapon to sweep over Mukundan's objections and has him actually agreeing to become a part of the community hall committee. Mukundan betrays Bhasi his friend and alienates Anjana, the woman he is in love with. [Anjana is still married to another man and would therefore be considered an unsuitable love by the community hall committee.] Mukundan however does not perceive it as betrayal and stubbornly clings to the belief that what he has done is right. But it takes the death of Achuthan Nair, his father to make him realize how empty his life was and would continue to be without either Bhasi or Anjana. He is stricken by both remorse and guilt. And the realization that he was no better than his father whom he had despised all his life. With this comes the real transformation. Mukundan decides to make amends. And how he goes about it is an indicator to how much Mukundan has changed. From a fastidious and colorless man lacking in courage to take even the slightest of risks, Mounding becomes a man capable of finding love and happiness. A man who discovers the varied vibrant hues of life. A man who emerges from the shadow of his father's personality to become a better man.

Kit Reed, writing in *The New York Times*, says "A genial, meandering tale filled with false alarms and diversions, *The Better Man* is slowed by loops in the story, by abandoned threads of plot. Charming as it is, the novel gathers momentum only at the end, when Bhasi and Mukundan find themselves at odds just in time for the drama of conflict and resolution."Another review in *The Hindu* said "Anita Nair's first book, The Better Man, was a finely structured novel set in a small Kerala village. Mukundan, her hero, returns to the village, hoping to exorcise bitter memories. Anita Nair not only has a wonderful knowledge of life in the village, but shows an almost Dostoevskian feeling for the undercurrents of consciousness, as Mukundan seeks and finds redemption."

The Literary Review column of *The Hindu* said "*The Better Man* had all the right ingredients according to the critics. Today, with her second book *Ladies Coupe*, one would imagine ANITA NAIR would have achieved the same results. Critics have opined otherwise..."As already stated Anita Nair is an Indian best-selling author of Indian poetry with her famous novels, *"The Better Man"* and *"Ladies Coupé"*. Born in Kerala and raised in Chennai. Anita always had an affinity towards writing and the courage to pursue it under all the situations. In every novel, Anita Nair always thought about the woman's search for freedom and self-realization. In Anita Nair's fictions, her characters have come out of their struggles and quest their self-identity. Her Novels explore the freedom of the woman to fulfill herself basically as a human being, Independent of her various traditional roles as a daughter, wife, mother and so on. This article deals with the self-discovery as seen in the works of woman writers.Here it must be remembered first that as a trend, Indian Writing in English has placed an independent status in the realm of Indian literature. Fiction by women writers occupies a major role in the contemporary writing in Indian English. Women writers have come away from traditional portrays of enduring, self -sacrificing women toward conflicted female characters searching for identity and defined their victim status. Anita Nair is one of the finest writers in Indian writing in English.

It is pertinent to note that Valsala in "The Better Man" is the wife of Prabhakaran, an aged schoolmaster. Valsala is not satisfied with him. So, she falls in love with Sridharan. She doesn't bother about society. She realizes her inner mind and becomes the mistress of him. This incident shows the feminist point of Valsala in the form of morality. As a matter of fact, she is aware of the fact that every woman needs the energizer of love, freedom, equality and sex. She puts forth the new issues of woman's sexuality and gender. She justifies herself as,"I am just forty years old. I don't want to be pushed into old age before its time. I want to live. I want passion. I want to know ecstasy, she told herself, night after night" (Nair BM: 130).Valsala emerges as a "New Woman". And she breaks the traditional Indian society. So, she is sexually satisfied with her affair with her neighbour, Sridharan and does not feel guilty of it. Valsala tries to achieve an identity in life but against the traditional manner. Valsala resorts to freedom not only psychologically but sexually too. When she resolves her inner conflicts, she is able to conquer self-identity. The second character Anjana, in the novel "The Better Man" was grown up in a beautiful atmosphere. When she married to Ravindran, at the age of twenty-seven, she has lost all her independence in the name of marriage. Her married life is not good. Whenever Anjana is ready for conversation, Ravindran feels irritated and leave the place. She longs for love and freedom, but it ends in failure. So, she develops to hate all the things including herself.Notably, one day Anjana goes to her parent's home in order to look after her mother. This gap becomes an escape from her conjugal life. Ravindran's business failed and he decided to

start a new one. Ravindran doesn't care about her and tries to forget her. This "Silence" makes their marital life grows unsteady and dismal. By seeing this gap, Anjana's father raised a voice against him."When I gave you my daughter's hand in marriage, it was with the hope that you would love her. Cherish and protect her for the rest of her life. If all you intend to do is hurt her, and made her unhappy, then there is no need for such a relationship. My daughter can manage very well without a husband like you". (Nair, BM: 232).As such in order to save their daughter from the brutality of her husband, her father finds a suitable teacher job. She enjoyed her job and reading books and magazines. From this, she come out of her married life. She comes to realize that life can always be made possible. Now, Anjana becomes a mature woman. The writer tries to explore that patriarchal set up which is responsible for the woman's condition in the Indian society. The novel also traces the growth of the character from weakness to maturity.Anjana wants healthy life and degree of control over her life, as an educated woman. "She gave away her colorful sarees and took to wearing starched cottons in shades as insipid and dull as her life. She locked up all her jewellery in a safe deposit box in the bank and swept all her fripperies away into the waste basket". (Nair BM: 234).Ultimately, Anjana comes over the traditional Indian consciousness and creates the words her own. Anjana's emergence from her unsuccessful marriage, with the determination to live as a free individual, is an assertion of her personal freedom. She meets mukundan and falls in love with him. In mukundan's company, she realizes that she has to free herself from her unhappy married life. When Anjana tells her love to mukundan, he said,"Anjana', Mukundan said, 'you must listen to me. It knows you think I am a good man a gentle man. Someone you can depend on completely. I don't know if I am that man, you make me out to be. My mother begged me to rescue her and take her away. But I didn't. It was afraid of my father, and so I made excuses. If I had done as she asked me, perhaps she might be still alive. That is the kind of man I am. A weak and undependable creature. Do you want to be part of such a man's life"? "All of us have our weakness, but we seldom have the courage to accept them. Or even declare it as you have done now. To me, that makes you braver than anyone else. I love you. My love tells me that this right for me?" (Nair, BM: 244,245)Remarkably, Anita Nair seems to be deeply concerned with women's freedom as Anjana wants to stand on her own wishes and liberty. After a long struggle, Anjana turns out to be a woman who can make choices, take decisions and makes up her mind to start a new life with Mukundan. Anjana's positive attitude towards life, work financial independence, and self-identity helps her to go ahead in her life with hope and optimism. She has also created her gender identity and found a new life with Mukundan. Interestingly, the novel depicts the real women in the form of Anjana who faces all the matters of patriarchy society and then after a lot of suffering in her marriage then she found love when she met Mukundan. Again, she got disappointed when Mukundan denied to accept her before society but this time she become so positive and find her own way to live her life.As such Anita Nair has examines the inner identity of her all-female characters in a psychological way. They could never think that there can be different world outside the four walls of their house. Nair was completely cut off from such dynamic world. The woman living in such a traditional society become so habitual to their surrounding that the marriage is their destiny and their husbands are their master. And their duty is to obey him and serve him and his family. Nair being a woman penetrates deep into the inner mind of the depressed women by their feminine sensibility and psychological insight and bring to light, which are the outcome of Indian women's psychological and emotional imbalances in a male dominated society.To conclude, it may be surmised that self-understanding is an essential part of Indian philosophical and theological systems present here. Self-discovery here is more realization of one's own interests in the narrow sense. It is the significance of place in a fiction that Nair has attempted in her 'thickly populated' first novel, *The Better Man*. Here it must be remembered that the phrase 'thickly populated' specifically aims at sharp characterization and has invented myriad characters like Achutan Nair, 'One-screw Bhasi', Anjana, Power-house Rama Krishna, Meenakshi the Naxalite etc. For Nair it is also the tension between characters that allows the movement of the narrative to progress at a brisk pace. Characterization constitutes the real essence of all her novels. Anita Nair has real position to write and put them in action. This persuaded and kindled to take up the writings of Anita Nair to examine, revive and study her works and is therefore anticipated to be a ceaseless incident of enrichment and reward.

****

REFERENCES

1.Dhanyasree M "The Better Man: Review on Anita Nair's Novel". One India.
2.*Marriage and the Working Woman in India.* New Delhi Vikas, 1970.
3.Nair, Anita. p. The Better Man- A Novel by Anita Nair". Anita Nair web site.
4.Nair, Anita: *The Better Man.* New Delhi: Penguin Books India, 1999.
5.Reed, Kit (August 13, 2000). p. Faith Healer. *The New York Times.*
6.Sinha, Sunita. *Post-Colonial Women Writers New Perspectives.* New Delhi: Atlantic Publishers and Distributors (P) Ltd: 2008.

Longevity Paradox: Challenges for the tea garden female workers with special reference to Borsillah Tea Estate in Sivasagar district of Assam

Galo Miwu
Asst. Professor, Dept. of Economics
Arunachal University of Studies, Namsai,

Pallabi Hazarika
Asst. Professor, Dept. of Sociology
Arunachal University of Studies, Namsai

Abstract-The tea is one of the most popular beverage in the world. The garden community is most subordinate and vulnerable section in our society. The health of the female is more negligible than male among the tea garden community .That is why female workers still face a lot of health issues in present time. They work hard equally in tea industry and their home as well. They have no time to take care of their health. Owing to their life expectancy and longevity is too shorter than the rest of the other community women in our society. The present paper tries to explore the main factors of lower longevity of the tea garden female workers than rest of the other female in our society.

Key Words: Tea garden community, Female worker, Longevity, Health Status

Introduction:

Tea is the pivotal resource to impart unique identity to Assam in the world scenario.

The Assam tea industry is the state's largest single plantation industry, which plays a dominant role in the state economy .The tea is considered as one of the healthy drink. It believes that tea gives a fresh mood to the people. Hence, majority of the people start their day with a cup of tea. The Assam tea industry is the state's largest single plantation industry, which plays a dominant role in the state economy. The tea constituents like caffeine, protein, vitamins etc.(Narain.et.al,2006) It helps to reduces mental stress and gives refreshment to the users. The perfect cup of tea that everyone relishes for health is a beverage of perfection, behind which there is sweat and labour of all the workers whose health only a least of researcher ever thought of. This study tries to enlighten health and wellness of tea garden female workers, specially their Life Expectancy or Longevity who work hard to give us a cup of tea. The Tea garden community people are originated from Jharkhand, Bihar, Odissa, Madhya Pradesh etc. They migrated in search of better life style and job opportunity. But reality is that still they survive in ill-suited living condition and mostly females are faced lot of challenges in terms of longevity too.

The female labour force is one of the most important parts of tea industry. Although the whole tea garden community is a marginalized section than rest of other part of our society but female labour force is more vulnerable and marginalized than male workers. In tea garden community health and wellness is becoming more challenging. It is tremendous academic significance and social relevance. The present study is trying to explore the causes of "Longevity" or "Low Life Expectancy "of the tea garden female workers.

Assam is the highest tea producer state in the country. Assam is situated eastern part of the India. There is scarcity of reliable information on health and nutritional status among tea garden population of Assam to enable initiating public health response to their health needs. Many studies pointed out that nutrition practice of the plantation workers are low, including the health practices. A good health is simply refers to as absence of disease. World health organization's constitution defines health as "a state of complete physical, mental, and social well-being and not merely the absence of disease or infirmity." Necessarily, health has to be defined from a practical point of view and, therefore, it has been defined according to life expectancy, infant mortality, and crude death rate etc. In ancient world it is believed that male life is longer than female. Aristotle whose view were much repeated believe that male lives longer than females because the male is a warmer creature than the female (Klinger,1989).

Objectives of the study

i)To investigate the socio economic status of the respondents

ii) To examine the health status of the female workers

iii) To find out the responsible factors of longevity of the female workers.

Methodology

The research design of this study is exploratory in nature. The data for the present study is collected by both primary and secondary sources. Three primary sources are used as method for data collection .Two interview method was applied for data collection i.e., faces to face interview and telephonic interview. And non-participant observation method was used for data collection. Interview schedule were used as a tool of data collection in this research. Only married female workers were selected as respondent of this research. The secondary datas were based on Books, journals, Economic survey of Assam Report, official documents of Borsillah Tea Estate and most relevant and necessary secondary source i.e. internet (Online journals, government websites and other websites). 100 female workers were selected as respondent for this study by the purposive sampling method.

Analysis-The study of the social background of the respondent is most important aspects of social research. It helps to understand the relationship between respondents and concern research. The social background of the respondents helps to fulfill the objectives of the particular research. The socio economic background of the respondents included mainly age, family composition, monthly income, standard of living of the workers etc.

Table No.1.1: Education qualification of the respondents

Sl. No	Educational Qualification	Workers	
		Nos.	%
1	Illiterate	40	40
2	Only can sign	30	30
3	Class i-v	20	20
4	Class vi – x	10	10
5	H.S.L.C	-	-
6	Higher Secondary	-	-
7	Graduate	-	-
8	Post- Graduate	-	-
Total		100	100

Table 1.1 reveals that out of the 100 respondents, 40(40%) respondents are illiterate, out of the total respondents 30 (30%)respondents are only can sign, 20(20%) respondents have studied till class I –V , another 10(10%) also have studied till vi-x, 5(5%) of the respondents are matriculates. It is clearly seen that most of the tea garden female workers are illiterate or primarily literate.

Education is basic necessity for human being in contemporary world. People can learn something through education. Educational backwardness is another most important factor of the poor health status of the tea garden female workers, which becomes one of the core reasons for them to be unaware of the facilities and health schemes being provided by the government.

Table No.1.2 Monthly income

Sl. No	Income per month	Workers	
		Nos.	%
1	0-5000	80	80
2	5000-10000	15	15
3	10,000 and above	5	5
Total		100	100

The table 1.2 intends that out of the total 100 respondents from workers category, the highest 80 (80%) respondents belong to the income group of 0-5000 , while 15 (15%) respondents per month income in between 5000-10,000 and the lowest number , that is 5(5%) number of the respondents belong to the income group of above Rs.10,000.

It is clearly seen that a few number of respondent belong to a good income category. All of these respondents have their own business. Otherwise all of the respondent's monthly income is not very different from one each other. All the workers are daily wage earner.

Monthly expenditure on food

The tea garden workers belong to poor economic condition. They can't afford high best

Quality of food items. Due to lack of low income they only bought cheap quality products. They have no idea of nutrition. They eat just to satiate the hunger.

Figure 1.1: Monthly Expenditure of the respondents regarding food

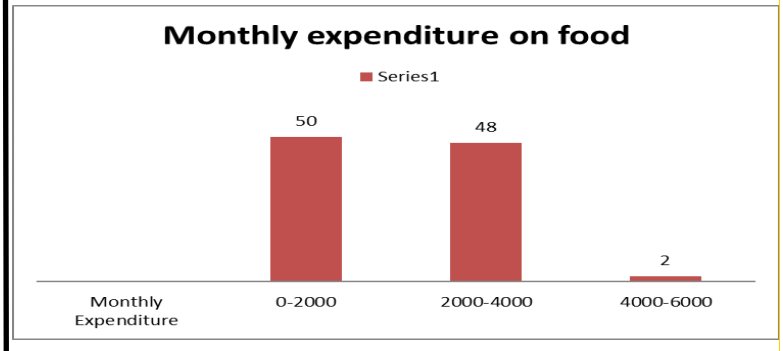

Figure 1.1 shows that the tea garden workers expenses are very low regarding food. Only 2(2%) respondents bear 4000-6000 in a month for food. 50(50%) respondents expenses is 0-2000 and remaining 48(48%) respondents monthly expenditure is 2000-4000. It is clearly seen that the tea garden workers never put nutrition to their food habits. It is one of the most important factors of poor health status of the female workers. Due to low income tea garden workers cannot afford best quality of food items. They only buy those products which are available in their nearby grocery. Owing to most of the female workers suffering malnutrition and different kind of diseases due to vitamin deficiency.

Table No.1.3: Health Expenditure

Sl. No	Yearly health expenditure(in Rs.)	Permanent		Casual		Contractual	
		Frequency	%	Frequency	%	Frequency	%
	0	40	80	15	60	20	80
	100-300	-	-	-	-	-	-
	300-500	-	-	3	12	5	20
	500-700	-	-	2	8	-	-
	700-900	10	20	-	-		-
Total		50	100	25	100	25	100

The table 1.3 it is evident that 40(80%) of the respondents never bear single one rupee for their health in a year. They completely depend on their tea garden hospital on for their health problems. And remaining 10 (20%) respondent's health expenditure was in 700-900. Only they do not depend on tea garden hospital which reflect that they are concern about their health issues in comparison to others. And among the respondents of casual workers, 15(60%) of them are also completely dependent on tea garden hospital in common health issues.It is clearly seen that majority of permanent workers completely depends on tea garden hospital for their health issues. And among the casual workers out of the total respondents there are 60(60%) respondents are completely depends on tea garden hospital or dispensary.

Table No.1.4: Age at marriage of the respondents

Sl. No	Age at marriage	Respondents	
		Frequency	%
1	14-17	80	80
2	18-21	18	18
3	21-24	2	2
4	24 above	-	-
Total		100	100

The above table 1.4 reveals that out of the total 100 married respondents there are 80(80%) numbers of the respondents got married in between 14-17 age group which belong to highest category of age of the marriage. 18(18%) numbers of the respondents were got married in between 18-21 and remaining 2% got married in between 21-24. It is clearly seen that in Borsillah Tea Estate, maximum percentage of the workers got married between the age of 14-17. It is the most important factor of the poor health status of female workers which also in the long run affect the health status of their child too. So, it is clearly seen that most of the female workers practise early marriage. And it is one of the crucial factor of their poor health status. The girls are not physically eligible for marriage and bearing a child at a very young age contributes in lower life longevity of female tea workers.

Table No.1.5: Number of children

Sl. no	Number of the children	Respondents	
		Frequency	%
1	0-2	15	15
2	3-5	69	69
3	6-8	15	15
4	9-11	1	1
5	Above 11	-	-
Total		100	100

The table 1.5 is evident that out of the total 100 married respondents , there are 15(15%)of workers have between 0-2 child 69 (69%) of the respondents has in between 3-5 child, 15(15%)respondents have 6-8 child and 1(1.%) respondents number of child is in between 9 -11 child. The high child bearing of female tea garden workers at the very young age deteriorate their health status, when they already have least concern towards their nutrition intake which again contribute for lower longevity of life

Table No. 1.6: Last five year mortality rate of the female workers age of below 60

Sl. No	Year	Respondents	
		Frequency	%
1	2015-16	18	26.09
2	2016-17	14	20.29
3	2017-18	15	21.73
4	2018-19	12	17.39
5	2019-20	10	14.50
Total		69	100

The table 1.6 reveals that the death ration of the tea garden female worker is gradually reduced year by year. But, still other female longevity is greater than tea garden female workers longevity. It is most challenging issue for the tea garden community yet.

Table No. 1.7: Age at death

Sl. No	Age at death	Respondents	
		Frequency	%
1	o-15	5	7.24
2	15-30	22	31.90
3	30-45	25	36.23
4	45-60	17	24.63
Total		69	100

Table 1.7 shows that during last five years there are 69 female workers had died in Borsillah Tea Estate. All of them were below 60 years old. There had 5% female those were belonging to age category of 0-15. And most of females were died at age category of 30-45 years old, which is occupied highest percentage of the age category of death ratio. 60 is the average life expectancy in contemporary time. But the tea garden female's lives hardly cross by 60. It is proved that outer society female longevity is greater than tea garden female's longevity.

Figure 1.2: Causes of the death of the respondents:

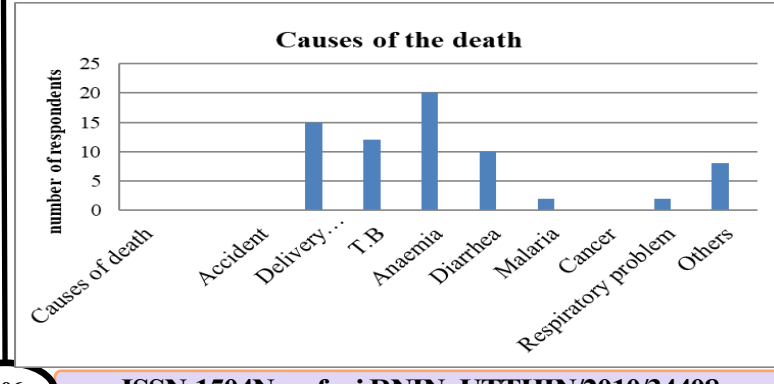

The figure 1.2 shows that the highest female workers die because of anaemia. During last five years there are highest 20(20%) respondent died because of anaemia, 15(15%) respondents died during delivery complications,12(12%) female workers died because of T.B, 2 (2%) females died because of malaria and remaining per cent of the female workers died on others reason. That reasons were not identified by doctor.

It is clearly seen that most of the females die because of anaemia it is only because of salt tea consumption. High salt tea in tea garden for the women workers works as an energy drink to combat dehydration which is the main cause of anaemia.

Majority of the tea garden females are found to be consuming alcohol and intoxicant of the tobacco. It is also very injurious to health which also contributes to lower longevity of the tea garden female workers as compare to other female.

Traditional belief system-

Tea garden community believes on traditional Medicare system rather than modern Medicare system They believe their folk healer rather than medical practioner. It is the one of the main cause of their poor health status which leads increasing mortality rate among them. The tea garden workers celebrate lot of religious ceremonies i.e tushu puja, baha puja, karam puja etc all of this are celebrate only for their good health. They believe that if they satisfied their God then they protect them from the evil spirit. They believe more their belief practices than medical science. When they fall sick then at first they perform some religious ceremony. If it doesn't work on their diseases then they go for doctor.

Unhealthy working environment -

As they are less facilitated, thus they are remaining in a traditional system and maintain some other negative social and cultural practices. Un-scientific food practice and personal hygiene are very common which is also act negatively. They are not habituated to washing hand properly after going to toilet and before taking meal. Unhealthy working environment and occupational health hazards remain unchanged and limited facilities bound them to cope with situation without any question. There are 90% female worker never use sanitary pads and they use dirty cloths, those are very unsafe and unhealthy for their health. Owing to they faced lot of diseases in terms of reproductive health.

Conclusion-

In the times when women in Olympics are up heaving the flags of victory and success and incessantly in the times when women have made an entrance to outer space, it is really a disappointing state of affairs for women from tea garden community where most of the parents treat them as not more than liabilities or as burden, thereby depriving them even with the minimal education. Owing to, still they fight against the lower longevity. Not any serious research has been done on this longevity issue. It is most sensitive issue for plantation economy as well as human civilization.

****

References

1. Boruah, T. (2000). *Mundas in Tea Plantation.* Dibrugarh: N.L. Publication.
2. Borgohain, P. (2013). Occupational Health Hazard of Tea Garden Workers of Hajua and Marangi Tea Estate of Assam. International Multidisciplinary Journal , 129-140.
3. Boruah, P. (2006). *The Tea Industry of Assam Origin and Development.* Guwahati: EBH Publishers.
4. Carey, J.R, Leido. P, Orozco.D, Tatar. M, Vaupel, W.J(1995) A Male Female Longevity Paradox in Medfly Cohorts. British Ecological Soiety. 64(1) 107-116
5. Chaudhri, B. (1997). *Tribal Health Medicine: Socio Cultural& Environmental.* (N. Mahanti, Ed.) New Delhi: Inter India Publishing House.
6. Chowdhury .N, Ahad. A, Chowdhury. A, Kundu. I,(2018) Health and Hygiene Condition of Female Workers: A Study in Three Tea Gardens of Sylhet District. Asian Journal of Agricultural Extension Economics & Sociology, 26(1): 1-9
7. Hazarika, C, Dutta. B. Konwar. P (2002). Hypertension and risk factors in Tea Garden Workers of Assam. *National Medical Journal of India , 15* (No 2), 63-68.
8. Klinger, L., Vartabedian and Wipse.L, (1989). Age Differences in Marriage and Female Longevity. Journal of Marriage and Family. 55 (1), 195-202
9. Nick Higginbotham, R. B.-L. (Ed.). (2001). *Applying Health Social Science, Best practice in the Developing world.* New York: St Martin's Press.
10. Vern. B, Campbell. C(1980) FemaleLongevity and Diet in the Middle Ages. The University of Chicago Press Journal. 55(2) 317-325

Double trauma of Kashmiri Women in Nayeema Mahjoor's *Lost in Terror*

Dr. Indu Swami
Supervisor:
Department of English,
(AUDC)Assam University, Diphu Campus

Supriya Bodo
Ph.D Research Scholar
Department of English
Assam University, Diphu Campus

Abstract-Kashmir division of Jammu and Kashmir has been one of the most famous politically conflict regions of the world. The region which is dominated by conflict has a tremendous role in the suppressed psychological resistance of women in a society. Talking about Kashmir society, like other societies of the world, it is highly patriarchal in the system. The women of Kashmir society are not only the victim of patriarchy but also the worst victim of the political conflict of the region. This paper aims to explore how Kashmiri women become the prey of double trauma in society. The present study explores how the power of resistance and trauma has been voiced by the famous Kashmiri contemporary women writer, Nayeema Mahjoor in her novel *Lost in Terror.* This novel can be said as the representation of many layers of pain, trauma, violence, and resistance that occupy a large part in to the lives of Kashmiri women.

Keywords: double-trauma, resistance, violence, conflict and patriarchy

Introduction-Kashmir during the pre and post-independence period was piled up with many issues. Insurgency, freedom movement, political conflicts, war, violence, trauma, the crisis of identity, displacement, and many more were the dominating force that was thriving in Kashmir. One of the major issues which gave rise to many complexities in to the lives of Kashmiris is the unresolved socio-political conflict. Conflict is a vital part of human society. In the words of Simmel, "Conflict is a combination of elements, opposition, which are included in a combination under a higher conception" (3). It can be said that conflict means the outcome of disagreement between oppositions leading to dominance. Conflict in the words of Stanton "… is a resistance of physics, morale, mind, emotion, and destiny among persons, animals or even in ourselves" (31). Thus it can be assumed that the resistance of an individual or society in Kashmir is what a source of power brings in such a conflict state. To support this idea, one can bring in Michel Foucault's idea of resistance. Resistance according to him is about power politics thus, "where there is power there is resistance" (95). Kashmir has had a long history of resistance since its pre-independence period. Resistance can be said as one of the ways of dealing with conflict. In the words of Regis Meissonier and Houze, "Acts of resistance indicate the way conflicts are expressed" (Toward an 'IT-CRT 545). Women and resistance can be said to be the two sides of the same coin. The act of resistance has a direct or indirect connection to the psychology of individuals or collectives. In this context, trauma becomes the most dominant version of resistance in society. The society which gets crushed down with an option of resistance on an everyday basis gives the easy way to develop psychological trauma in society. In the words of J. Herman, "Psychological trauma is an affiliation of the powerless. At the moment of trauma, the victim is rendered helpless by overwhelming force (33). Similarly, Spiegel also defines the essence of traumatic stress as helplessness as, "a loss of control over one's body" (566-568). Emphasizing the notion of trauma in the context of Kashmiri women, the trauma can be observed as double. However, this double wound is what Cathy Caruth defines as double trauma. Caruth's double trauma illustrates the idea that the survivor of trauma undergoes double trauma, not only by witnessing the death of others but also by surviving and seeing his survival as trauma. The survivor sees his trauma when he has to go through the loss or death of others in the form of flashbacks. In this way, he goes through a double trauma. Thus, it can be said that Kashmiri women being in a double marginalized position becomes easy prey of the double trauma and loss in society.

The present study explores one of the most famous contemporary Kashmiri women writer Nayeema Mahjoor's novel *Lost in Terror*. She is considered as one of the most powerful contemporary female voices in the Kashmir region. Nayeema Ahmad Mahjoor is a senior journalist, a former news editor for BBC, and also a former chairperson of the JK state commission for Women. Nayeema Mahjoor has authored two books viz., 'Lost in Terror' and 'Dahshatzadi'. These two books of Nayeema Mahjoors are considered as one of the most compelling books on the Kashmir valley issue from a woman's point of view. Her novel *Lost in Terror*, depicts the socio-political situation of Kashmir in the 1980s and 1990s. This novel is the story of a young, educated, and career-oriented woman, who gets caught between patriarchy and conflict.

Objectives of the paper:

- To explore and study how double trauma is highlighted in the novel.
- To study the impact of war and resistance experienced by the Kashmiri Women who have been subjected to violence.
- To investigate and explore how women became target of patriarchy and conflict

Nayeema Mahjoor's *Lost in Terror* is a representation of many layers of pain, trauma, violence, and resistance that

occupy a large part in to the lives of Kashmiri people. The novel presents many stories of Kashmir Valley. The trauma of a wife losing her husband, a newly wedded wife turning a widow, a single mother losing her only son, and a woman raped and murdered, which was the dominant reality of Kashmir has been beautifully portrayed in the novel. Nayeema Mahjoor has voiced for many Kashmiri women through her novel. The novel is a realistic representation of Kashmir and its political conflict, which lead to trauma and violence. The novel is the story from the women's perspective, which was itself a big challenge in Kashmiri society. Nayeema Mahjoor opines that

Usually it's always a man's perspective which has been penned down when it comes to the Kashmir issue. I was witness to the situation prevailing in the early nineties, like other women who were at the forefront of every misery. I took the challenge to tell story of women who were voiceless and helpless. To highlight their misery at home and outside was my sole objective. (Mahjoor, 55, told IANS in an email interview from Srinagar).Further, she has also stated about being the voice of many women, who are marginalized and kept under expressed in the society. To which she opines, To safeguard other women's dignity and respect, I had to depict personal relations so that society becomes aware about issues which are preferred not be spoken about. My relations are not so weak, so I am not worried about disclosing my terms with my family" (IANS Interview 2016).

Nayeema Mahjoor has boldly depicted the notion of double wound or double trauma in her novel. Choosing literature as a medium to give voice to trauma, she has highlighted the notion of 'double telling'. In this context, Carthy Caruth's idea of representations of traumatic memory engaging in a "double telling" can be rightly justified. Cathy Caruth's idea about double-telling is, "the oscillation between a crisis of death and the correlative crisis of life: between the story of the unbearable nature of an event and the story of the unbearable nature of its survival" (7). In the article "Terribly Victimized Gender of Kashmir Conflict: A Women Centric Perspective of Nayeema Mahjoor's *Lost in Terror*", Mohd Nageen Rather opines that Having been either a first-hand witness or victim of some of the gory incidents that marked the tumultuous and violent years of insurgency and counter-insurgency Nayeema has been able to trace the individual trajectories by exploring significant yet sorrowful and tragic incidents in the lives of these women. She explores the story of the people who are affected by the conflict for decades. The book is replete with the tragic stories of many women victims who suffer at every stage and in every role of their life. They are miserably hit by the conflict directly or indirectly (54)Thus, it can be said that through her protagonist, and other women characters, Nayeema Mahjoor has boldly reflected the situation of double trauma of Kashmiri women.The beautiful land of Kashmir with its beautiful culture is seen as a region of many conflicts that are mainly attributed to the insurgency. The valley is considered as the most conflict-affected region, both culturally and politically. Under the situations of fear and terror people of Kashmir were leading a clueless life without hope. The valley of Kashmir which once was once known for its beauty and peace was pushed under complete fear and doubt. "The valley was in an utter mess. We hardly knew who controlled our state. The administration was invisible and everything collapsed" (31). There was only fear of death and violence in their everyday lives. Their world was torn apart in between national and anti-national taglines. "Nobody was sure who was spying on whom, who would be declared an anti-national element, and who would be included on the hit lists of gunmen…Everyone was besieged by fear and paranoia, which slowly started to rule our minds and soul" (25). The conflict has not only brought violence and provoked war against the opposite but also germinated the seed of fear and resistance in the valley. In any conflict effected state the entire state directly or indirectly gets effected by its devastating outcome. However, the effect on women is found to be extreme. They become the easy target of violence in society. Tracing the history of women in Kashmir, it can be said that they become easy prey to conflict in society. Shiasta's tragic incident in the novel can be said as one of the examples of brutality and violence that a Kashmiri woman faces during the period. 'She was kidnapped by some gunmen two weeks ago, when she was leaving the radio station…her mother says she had been ordered to take some AK-47s to Anantnag, which she had refused to do…'She was tortured to death and then her body was thrown in to the gutter. (98).Further, such brutality takes the form of trauma in a conflict society. Here, in this context, the writer depicts through Shiasta's situation, the fear of Kashmiri women who becomes the target of misconception and false accusation. In the novel Shiasta's condition reflects being trauma can be said as a psychological wound that comes out from a past traumatic event. In the novel, the trauma of the loss of a mother, who saw her young son's dead body, killed by the government army under suspicion can be seen through the pain of Auntyji. Another effect of trauma in the novel, can be when "Shiasta's mother was lying on a hospital bed…doctor said she was still in a state of shock seeing her daughter's lynched, mutilated body ..." (119). In the word of Cathy Caruth trauma is, "[T]he event is not assimilated or experienced fully at the time, but only belatedly…. To be traumatized is precise to be possessed

by an image or event. (3-5). Concerning Trauma, Urvashi Butalia highlights that, …for those who lived through it, how they put their lives back together again, how they coped with the loss, the trauma, the grief. This silence is about what I call the 'underside' of the history…its human dimensions, its many hidden histories, is not a silence of simple historiographical neglect. Rather, it is, to my mind, a trauma of such deep dimensions…" (209).

Thus, it can be said that trauma is not something that ends with time. The trauma of a woman losing her dignity, a mother losing her son or daughter, a wife losing her husband, and a child losing her parents are the prominent factors that were taking place in Kashmir. Life of women in Kashmir is all about bearing resistance and guns. The most challenging phase for Kashmiri women during conflict is the trauma to resist the sudden disappearance of their loved ones. In the novel, the sudden disappearance of Sadia's son Aziz and her transformation into Saidamach (The insane Sadia) can be related to such incident,

For the last three years she had hardly slept. She would wake up in the middle of the night crying and screaming. Almost every night she had terrifying nightmares. Hassan took her to a psychiatrist for treatment. The drugs had little impact on her mind. Her situation become worse and the psychiatrist left her on her own. (263-64)

Nayeema Mahjoor has highlighted through the novel the diverse impact of conflict on the dignity, honor, and security of Kashmiri women in society. Apart from war and insurgency Kashmiri women were also facing another challenge in the name of religion and culture,

Women activists would, using the excuse of the Islamic movement, terrorize young girls to leave school or college. Many women indifferent offices had been forced to give up their jobs and if anybody refused, they were subjected to harassment and violent acts (243).Here, another factor in the name of religion became a weapon to target women in to war and violence. Along with religion under the label of culture Kashmiri women were also struggling with the phase of anti-culture slam, which questions their identity. In the novel, when Saira was asked by the protagonist about her reason of being late to office. She replied,'I was waiting at the bus stop. Some burka-clad women encircled me and asked me why I was not wearing the hijab. I tried to reason with them, but instead of listening to me, they threw paint on me for being anti-Islamic and against the movement. They abused me, called me promiscuous, a person of loose character and a harlot in front of a huge crowd' (241-242)

Here, Saira's condition reflects the doubly traumatize condition of Kashmiri working women in their everyday lives. The double trauma of firstly being a helpless educated woman without a voice and secondly because of sex. The conflict has both physical and psychologically has a brutal impact on personal and social lives of women The street had turned into a hotspot for looting, hooliganism and plunder. Most of the girls were confined to their houses due to increasing incidents of teasing, extortion, bullying and even sexual abuse. The locality became stigmatized in society. Girls from this area, earlier considered amongst the finest in the valley, were now being turned down by suitors for marriage. (232).

Generally, in Kashmiri society, women were not permitted to pursue their dreams. In the novel Asads's sister, "Faiza was barred from leaving the house without a chaperone. She was forced to bury her dream of being a designer for the rest of her life" (230). Faiza's dream was never a priority for her family, "Asad and his family was desperate to get her married as soon as possible, because they believed Faiza had crossed the proper age of marriage, which was unacceptable to my traditional family" (231). The author, through her women character Faiza, represents the identity of Kashmiri women, who are debarred from pursuing their dreams in the name of traditional norms. Working women and educated women in Kashmiri society always had to face neglect in the society,

Being the only educated family in our locality had alienated us in the eyes of our neighbors. They begrudged us our existence…Our biggest sin, in their eyes, was going to school and getting educated…it was only Baba who took the risk of sending his daughters to college in the early 1970s. it was something for which he had to pay huge price. His relatives looked down on him throughout his life… (9).Here, the narration of the protagonist gives the picture of the resistance of women against societal norms. Kashmir follows a strict patriarchal norm in their society. The freedom of women to choose and voice for themselves was never appreciated by the Kashmiri society. Any decision of women was always under the hands of a male. In this context, one can draw the observation of Kate Millett. She opines, "patriarchy is pervasive male control of nearly all aspects of public and private life" (Cudd 8-9). The women always had to seek permission from the male member of the family. The dominance of male consent in the novel can be seen in the narration of the protagonist. She says, "We had been having secret meetings since we all got married …Additionally, our customs did not permit us to go frequently to our father's house without our husband's consent" (4). "In our society, the husband was the sole proprietor of the woman he was married to just like how the government treated Kashmir as her property. My motherland and me, we were both enslaved by our oppressors, though each of us never realized it" (41). Nayeema Mahjoor has represented the lives of Kashmiri women trapped under the web of patriarchy

and conflict. She has voiced the silent cry of women, who were psychologically doubly traumatized by society. Firstly, being a victim of violence under conflict and secondly being a victim of the patriarchal system.

Conclusion - The study is based on a critical exploration of Nayeema Mahjoor's novel *Lost in Terror*. The study has revealed Nayeema Mahjoor's deep concern for the voiceless Kashmiri women trapped under conflict and patriarchy. Most of the narratives from Kashmir regarding the trauma and conflict of Kashmir are based on men's observation point of view. However, *Lost in Terror*, is a novel about the socio-political condition of Kashmir from the woman's point of view. The author has boldly uncovered the silent cry and double wound of women who were resisting the conflict from many phases. Nayeema Mahjoor has courageously represented the trauma and resistance of women and the state under the hands of the oppressor through her novel.

****

Works Cited-

1. Butalia, Urvashi. *The Other Side of Silence: Voices from the Partition of India*.
2. Durham, NC: Duke University Press, 2000
3. Caruth, Cathy. "Introduction." *Trauma: Explorations in Memory*. The John Hopkins
4. University Press, 1995. Connell, W. R. Gender and Power: Society, the Person and
5. Sexual Politics. Cambridge: Polity Press, 1987.
6. Cudd, Anne E. *Analyzing Oppression*. New York, Oxfort University Press, 2006.
7. Herman, Judith. *Trauma and Recovery: The Aftermath of Violence--from Domestic Abuse to Political Terror*. New York, Basic Books, 1992.
8. Mahjoor, Nayeema. *Lost in Terror*. India, Penguin Books, 2016.
9. Mahjoor, Nayeema. *Lost in Terror: Voices of Many Women, Penned by One*. 19 Dec. 2016.
10. Meissonier, Regis, and E Houze. "Toward an "IT Conflict-Resistance Theory": Action Research during IT Pre-Implementation." *European Journal of Information Systems*, vol. 19, no. 5, 2010, pp. 540–561.
11. Millett, Kate. *Sexual Politics*. Urbana and Chicago: University of Illinois Press, 2000.
12. Rather, Mohd Nageen. "Terribly Victimised Gender of Kashmir Conflict: A Women-Centric Perspective of NayeemaMahjoor's Lost in Terror." *International Journal of Engineering and Advanced Technology Studies*, vol. 6, no. 2, Nov. 2018, pp. 52–57.
13. Simmel, Georg. *Conflict and the Web of Group Affiliations*. New York, Free Press, 1955.
14. Spiegel, David. "Recognizing Traumatic Dissociation." *American Journal of Psychiatry*, vol. 163, no. 4, 2006, https://doi.org/10.1176/appi.ajp.163.4.566.
15. Stanton, Shelby L. *Rangers at War: LRRPs in Vietnam*. India, Ballantine Books, 1995.

Need For Recognition of The Unpaid Domestic Contribution of Women To Quantify Share in Matrimonial Property

Dr.Rekha Verma
Supervisor, Assistant Professor, Amity Law School, Amity University, Noida

Neha Balyan
Ph.D. Research Scholar, Amity Law School, Amity University, Noida

Abstract-Around the globe, women engage in the majority of unpaid work like cooking, cleaning, child care, etc.; this work is essential for families and economies to run but is still valued less than paid work. Being a woman requires constant juggling through various roles of daughter, wife, mother, sister, and most importantly a never-ending labyrinth of individuality. Marriage embarks her upon a journey of multiskilled responsibilities of managing home and kids and elderly. The idea of home presupposes the omnipresence of women but despite that, they are often treated as mere chattel of husbands. Especially the homemakers never receive any recognition as their contribution to the household is not considered productive work. It's time that we treat Marriages as equal economic partnerships of spouses irrespective of their financial contribution. Indian family jurisprudence needs to incorporate the concept of community of property regime. This paper attempts to focus on the lacunas in our legal system pertaining to the matrimonial property rights of women in the absence of recognition of the homemaker in a household. The author limits the scope to Hindu Marriage Act.

Methodology: Doctrinal research has been followed for the purpose of this research paper.

Main Findings: With the incorporation of Divorce in Family Jurisprudence the concept of marriage has been shifted from sacrament to contract. Given the evolution of divorce laws from contest to consent and further the likelihood that marriages would end due to the breakdown of marriage, it is crucial to acknowledge the varied roles that women have performed in order to ensure the financial security of women after divorce. Regardless of each spouse's financial contribution, marriage needs to be viewed as an equal economic partnership. The community of property regime concept needs to be included in Indian family law.

Applications: This research paper will bring in light the current matrimonial property regime in India and the requirement to bring in necessary changes to recognise the contribution of women. The author limits the scope to matrimonial property rights of women under Hindu Marriage Act.

Keywords: Marriage, Breakdown of Marriage, Divorce, Post-divorce status of women Maintenance, Matrimonial property rights, contribution of homemaker.

Introduction-Women comprises of the half of world population and has marked her presence in various fields with

her ability to perform multi skilled work at her profession and home front, despite this the childcare and house chores are treated as a part of her domain. But the women who manages the home and kids receives unsatisfactory financial support as their contribution towards the home is not considered to be productive work. Lack of proprietary rights often lead to deplorable condition of women forcing her to compromise at various levels for the sake of her and her children's subsistence. In other words, women's property rights lay the foundation of women empowerment.

The Universal Declaration of Human Rights and the Convention on the Elimination of all forms of Discrimination Against Women prohibit gender discrimination against women, and India is a party to these instruments.

Article 1 of CEDAW defines discrimination against women as "any distinction, exclusion or restriction made on the basis of sex which has the effect or purpose of impairing or nullifying the recognition, enjoyment or exercise by women, irrespective of their marital status, on a basis of equality of men and women, of human rights and fundamental freedoms in the political, economic, social, cultural, civil or any other field". Article 2(f) requires that State parties condemn discrimination against women and agree to undertake "all appropriate measure, including legislation, to modify or abolish existing laws, regulations, customs and practices, which constitute discrimination against women". Article 16 specifically lays down that "State Parties shall take appropriate measures to eliminate discrimination against women in all matters relating to marriage and family relations and in particular shall ensure, on a basis of equality of men and women:…….. (h) the same rights for both spouses in respect of ownership, acquisition, management, administration, enjoyment and disposition of property whether free of charge or for a value consideration".To implement the Convention (CEDAW) a Committee on the Elimination of Discrimination against Women of 23 experts was constituted. The Committee formulates general recommendations and suggestions. General Recommendation No. 21 deals with Equality and Marriage and family relations. Commenting on Article 16 (1) (h) the Committee states "In most countries, a significant proportion of the women are single or divorced and may have the sole responsibility to support a family. Any discrimination in the division of property that rests on the premise that the man alone is responsible for the support of the women and children of his and that he can and will honourably discharge this responsibility is clearly unrealistic. Consequently, any law or custom that grants men a right to a greater share of property at the end of a marriage or de facto relationship, or on the death of a relative, is discriminatory and will have a serious impact on woman's practical ability to divorce her husband, to support herself or her family and to live in dignity as an independent person". The committee further emphasis that " In some countries, on division of marital property, greater emphasis is placed on financial contributions to property acquired during a marriage, and other contributions, such as raising children, caring for elderly relatives and discharging household duties are diminished. Often, such contributions of a non-financial nature by the wife enable the husband to earn an income and increase the assets. Financial and non-financial contributions should be accorded the same weight". Article 51 (c) of the Constitution provides that "The state shall endeavor to foster respect for international law and treaty obligation in the dealings of organized people with one another.While interpreting domestic laws, Indian courts are under the obligation to take into account international conventions and norms, especially when there is a lacuna in domestic law and there is no inconsistency between them.

The author intends to carve out the concept of matrimonial property rights of women mostly in the cases of divorce. There has been a really long attempt on the incorporation of Irretrievable Breakdown of Marriage as another ground of Divorce and several attempts have also been made by Law Commission (1978 and 2009). Marriage laws amendment Bill also was introduced twice (2010 and 2013) for incorporation of the concept of irretrievable breakdown of marriage in divorce laws of the Hindu Marriage Act, 1955 and the Special Marriage Act, 1954. It was opposed by the women's organization twice as the liberalised divorce would only add to the misery of women as because already women have very limited rights on divorce. Maintenance is the only claim that a woman can make on divorce. The maintenance dole is also kept at the minimum so the divorce does not become more attractive proposition, in order to preserve and strengthen the institution of the marriage. Mostly, the women continue living in the economic subordination for the sake of glorification of the institution of marriage. The women's rights on the matrimonial property (property acquired during the subsistence of marriage) post-divorce are not recognised even though she spends her life in taking care of the Family.The Women's contribution in the matrimonial home is never treated as productive work. In *Arun Kumar Agrawal v. National Insurance Company* the Apex Court criticized the census of 2001 where 367 million homemakers were put in the category of "non-workers" along with prisoners, beggars, and prostitutes. Such an archaic approach towards women's role in the household is disheartening and alarming in the times when the law is heading to become divorce-friendly yet the position of the women is the same – Deplorable.

Whenever the Irretrievable Breakdown of Marriage was introduced as a ground for divorce in western countries, the concept of the community of property regime has been recognised alongside. During the times when the Marriage Laws (Amendment) Bill, 2010, was proposed in the parliament for the incorporation of the inclusion of Irretrievable

breakdown of marriage in the family jurisprudence o f Hindu Law and Special marriage Act, there was a huge protest by the women's group resulting in the withdrawal of the Bill. The Rajya Sabha Standing Committee in its 45th Report in 2011 recognised the concept of division of property and emphasised upon the economic contribution of women to the marriage in its report.*It is generally seen that in majority of cases women are left with very little to fall back upon after the divorce and quite often they also have to bear the burden of the children born out of the wedlock. In such situations, it seems quite natural for the women to feel cheated when they are left their fate without any roof or financial support although during the subsistence of marriage they might have contributed in varied forms in the matrimonial family in the prime of their age. This is more true in the case of working women. Accordingly, the Committee feels that there should be some effective legal mechanism so that the women atleast get their share in the matrimonial property which has been acquired during the subsistence of marriage.* ***The committee, accordingly, recommends the Government to make adequate provisions in the matrimonial law to ensure that the courts, while adjudicating on divorce petitions, also decide upon women's share in the matrimonial property while granting divorce so that they are not deprived of the assets/properties in which they have contributed during the continuance of marriage.*** *The Committee is strongly of the view that liberalization of the laws of divorce should essentially be accompanied with appropriate provisions recognizing the legitimate rights of the women on the matrimonial property/assets atleast, in which they have their share of contribution.*

The Marriage Laws Amendment Bill, 2013 was also opposed by women's organizations for non-inclusion of women's matrimonial property rights as the introduction of liberalized divorce would give the men easy way to sneak out of the marriages resulting in leaving the women destitute. Though the proposed section 13D (1) of Hindu Marriage Act and section 28B (1) of Special marriage Act provided as a right to the respondent-wife to oppose the divorce taking the ground of "Grave financial hardship". Further, the proposed section 13F (1) of and section 28D (1) (Amendment Bill) mentioned about the compensation for the settlement of her claim. But, nowhere does the law or proposed law recognises the economic investment of the wife into the marriage. It is time for us to adopt the community of property regime into our family law to finally give the women their due recognition so that they no longer make sacrifices for the sake of security in marriage or endure owing to the simple maintenance offered as compensation.

Contribution of the homemaker-Title, fault, need, and contribution are the four basic ideas that are used to determine the guidelines for the division of property during a divorce. The philosophy of contribution acknowledges the woman's non-monetary household duties in the framework of an equal relationship. The role of the homemaker is not recognised by Indian family law. The measurement and quantification of women's unpaid domestic work and its inclusion in the Gross National Product were the subjects of General Recommendation number 17 of the Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination Against Women (CEDAW). The Committee affirmed that the quantification and the measurement of women's unremunerated domestic activities, which contribute in each country's development, will help to clear the de facto economic role of women. Further, the Committee recommended to

(a) Encourage and support research and experimental studies to measure and value the unremunerated domestic activities of women; for example, by conducting time-use surveys as part of their national household survey programmes and by collecting statistics disaggregated by gender on time spent on activities both in the household and on the labour market;

(b) Take steps, in accordance with the provisions of the Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination against Women and the Nairobi Forward-looking Strategies for the Advancement of Women, to quantify and include the unremunerated domestic activities of women in the gross national product;

(c) Include in their reports submitted under article 18 of the Convention information on the research and experimental studies undertaken to measure and value unremunerated domestic activities, as well as on the progress made in the incorporation of the unremunerated domestic activities of women in national accounts.

A time use survey is a statistical study with the objective of reporting information on how, generally, individuals spend their free time. In six Indian states between July 1998 and June 1999, a pilot time use survey was carried out after devising an appropriate conceptual framework and methodology. Men and women are disproportionately burdened by unpaid non-SNA work. On average, women spend 28.96 hours a week managing their homes and taking care of their families. Cooking takes up the most time—14.59 hours—followed by washing and cleaning (7.89 hours), care of textiles (2.31 hours), and maintenance of household (such as grocery shopping and other chores) (2.14 hours). On average, men engage in each of these activities for less than an hour every week. Women spend 4.47 hours a week caring for children and taking care of elderly, sick, or disabled family members, compared to men's 0.88 hours per week. Women devote the most time to caring for children physically (3.09 hours), then for children non-physically (that is, training and teaching children, accompanying them to places, etc.). In addition, women spend more time than males on other caregiving tasks. In

comparison to women, who devote 20.61 percent of their time to non-SNA employment, men devote 2.17 percent of their overall time to it. This is undoubtedly a significant barrier for women who desire to enter the workforce. Due to outdated sociocultural conventions and the disproportionate division of unpaid domestic labour between men and women, women are bound within the domain of the house and seldom get the freedom to choose their careers. In India, the majority of households believe that only women should perform domestic duties; men are excluded. It is quite difficult for women to focus on their careers when there is an inequality in the household chores. That does not imply that a woman's existence is meaningless if she devotes the majority of her time in looking after her family and running the home because she makes no economic contribution.The House of Lords in *White v White* held that discrimination would be sneaking in through the back door if judicial approaches gave the woman enough to meet her wants while giving the husband the surplus over necessities. Needs are simply one element; courts must also consider other variables like the contribution of the parties and the resources that are available. It is also broadly accepted that both financial and household contributions should be considered equally. *"Today there is a greater awareness of the value of non-financial contributions to the welfare of the family. There is a greater awareness of the extent to which one spouse's business success, achieved by much sustained hard work over many years, may have been made possible or enhanced by the family contribution of the other spouse, a contribution which also required much sustained hard work over many years. There is increased recognition that, by being at home and having and looking after children, a wife may lose for ever the opportunity to acquire and develop her own money-earning qualifications and skills."*The majority of nations' marriage property laws and judgments make it clear that efforts have been made to quantify the homemaker's contribution. Indian courts and legislation, on the other hand, have avoided addressing this topic. There is no law in place that acknowledges the role of a homemaker. However, in a number of judgements, such a contribution was recognised for the purposes of filing an insurance claim.In Lata Wadhwa v State of Bihar while analysing and awarding compensation to the family of deceased and injured in fire, the Hon'ble Supreme Court fixed the compensation based on multifarious services rendered by the homemakers for managing the entire family at Rs. 3000/- per month and Rs. 36000/- per annum for all housewives between the age group of 34 to 59. While, for the age group of 62 to 72, the value of services rendered was modified to be Rs. 20,000/- per annum.

The 2009 Madras High Court ruling is an enlightening judgment on this subject where Justice Prabha Sridevan referred to UNICEF's report of 2000 and CEDAW principles for evaluating the work done by the home maker. The pertinent portion of the said judgment is as follows: -"9. The UNICEF in 2000, noted that "unpaid care work is the foundation of human experience". The care work is that which is done by a woman as a mother and definitely in India, the woman herself will be the last person to give this role an economic value, given the social concept of the role of a mother…….

*10. ……. that there have been efforts to understand the value of a homemaker's unpaid labour by different methods. One is, the opportunity lost which evaluates her wages by assessing what she would have earned had she not remained at home, viz., the opportunity lost. The second is, the partnership method which assumes that a marriage is an equal economic partnership and in this method, the homemaker's salary is valued at half her husband's salary. Yet another method is to evaluate homemaking by determining how much it would cost to replace the homemaker with paid workers. This is called the Replacement Method…12. ……. One cannot ignore or forget that the homemaker, by applying herself to the tasks at home, liberates her spouse to devote his energy and time and attention to tasks that augment his income and generate property for the family. In fact, the National Organisation for Women, USA has adopted the proposal for recommendation of economic rights for homemakers, which includes giving of a value to the goods and services produced and provided by the homemaker in the Gross National Product."*The Court further held that it is time to scientifically assess the worth of the unpaid homemaker in accident claims and also in division of matrimonial property. This decision is significant since it acknowledged the women's contribution to unpaid work. The Honourable Supreme Court cited the reasoning in the Deepika case with approval in *Arun Kumar Agrawal v. National Insurance Co. Ltd in* 2010. The Court observed and analysed the contribution of women as homemaker and their role in raising children, cooking, cleaning, working as farm labourers, etc., all of which are regarded as unremunerated. The women would have received payment for that effort if they had been working outside the home instead. Despite being a signatory to an international agreement like CEDAW, no concrete action has been made to provide homemakers' domestic labour a monetary value.

Concept of Matrimonial property: Matrimonial Property Regime-It is possible that the notion of matrimonial property doesn't necessarily fit into a formula. The kind of matrimonial property regime used in a nation determines this. The marital property regime refers to the rights and management over the property during the existence of marriage and division of property at the time of dissolution of marriage. The different kinds of matrimonial property regime are as follows:

3.1 Separate Property Regime – Property obtained before and after the marriage is treated as the spouse's individual

property under this type of property regime. Each spouse is entitled to their own share at the time of a divorce. The other spouse has no claim to the other spouse's part of the property. Marriage has no effect on the property's title under the separate property system. India adheres to this system of marital property.

3.2 Community of Property Regime - According to this theory, marriage changes the rules of property ownership and gives both spouses rights to and interests in the property of the other. In a community of property, over which both spouses gain an equal interest and right of control, all the property that the parties bring into and acquire during the marriage is merged. Property is distributed equally between the spouses in the event of a divorce. The community of property regime is used in a number of western nations.

3.3 Deferred Community of Property Regime – According to the legal premise of deferred community of property, each spouse's property is kept separate for as long as a marriage lasts, and it works under community property law after a marriage is dissolved, meaning that the property is shared equally between the spouses.

Goa: An exception to the property regime followed in India-The property regime that is practiced throughout India is the separate property regime, while Goa has its own civil code that incorporates the community of property regime. Marriage, divorce, and succession are all governed by non-discriminatory civil laws in Goa. This Code mandates that marriage registration be done. Marriage is not regarded as a sacrament, but rather as a contract. Section V primarily deals with Contract between the spouses in respect of assets. At the time of dissolution of marriage the parties are free to decide about how their properties would be divided

Conclusion-Women around the world deal with this issue; it is not exclusive to any one nation. The pandemic caused lockdowns around the world, which meant that more people were at home than ever before. As a result, the burden of domestic chores fell disproportionately on women. The ladies were under a lot of stress to manage due to the workload at the office, the closing of the school, the children's online education, the spouse's work from home, housework, the need to care for the elderly, and pandemic stress. Even though practically every profession now places women on an equal footing with men, household work and child care are still viewed as solely falling under her domain. Maharashtra Legislative Assembly took a positive step in recognizing the property rights of women to provide an equal share to women during the time of dissolution of marriage by introducing the Matrimonial Property (Rights of Women upon Marriage) Bill, 2012. As per the bill 'matrimonial property' is defined to include self-acquired properties – husband's property, movable and immovable, agricultural land along with pensions, and provident fund. The current system of personal laws regarding property division is prejudiced against women because it fails to acknowledge the contribution made throughout the period of the marriage and, in the event of dissolution, only leaves her with a meagre amount of maintenance, which is again subject to realisation. Instead of individual property ownership, India should adopt "matrimonial property" common ownership. For matrimonial property to be recognised under current law, specific statutory provisions must be included. Matrimonial property has to be defined more precisely and broadly than is currently the case under section 27 of the Hindu Marriage Act of 1955. To clarify their property rights, the spouses should enter into a pre-nuptial or ante-nuptial agreement. Despite the financial contribution of the spouses, property acquired throughout the course of marriage should be regarded as joint property. Financial stability for women will be ensured by an equal share in the marital property.

****

Works Cited-

1.Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination Against Women, available at https://www.un.org/womenwatch/daw/cedaw/text/econvention.htm visited on 12th January 2022.

2.Ibid.

3.General recommendations made by the Committee on the Elimination of Discrimination against Women (un.org) visited on 12th January 2022.

4.*Id* at para 28.

5.*Id* at para 32.

6.Constitution of India, 1950.

7.Law Commission of India, Consultation Paper on Reform of Family Law (31st August 2018) p 15, para 1.38.

8.Flavia Agnes, "Maintenance for Women: Rhetoric of Equality" 2233 *EPW* 27(41) (1992).

9.*Arun Kumar Agrawal v. National Insurance Company,* AIR SC 3426.

10.Rajya Sabha Department-related Parliamentary Standing Committee on Personnel, Public Grievances, Law and Justice, *Forty Fifth Report on The Marriage Laws (Amendment) Bill, 2010,* 2011, available at Microsoft Word - Report 45 - Law and Justice.doc (rajyasabha.nic.in) visited on 14th January, 2022.

11.*Id* chapter IV, para 7.

12.Flavia Agnes, *Marriage, Divorce, and Matrimonial Litigation* 225 (Oxford University Press, 2011).

13.General recommendations made by the Committee on the Elimination of Discrimination against Women (un.org) visited on 14th January 2022.

14.*Ibid.*

15.Indira Hirway, " India's time use data show women spend 69.03 hours on total work, men spend 62.71 hours", Counterview.Org, April 12, 2017, Available at https://counterview.org/2017/04/12/indias-time-use-data-show-women-spend-69-03-hours-on-total-work-men-spend-62-71-hours/ visited on 10th February 2022.

16.*White v. White* (2001) 1 A.C. 596

17.*Id* at 605.

18.A.I.R. 2001 SC 321.

19.*National Insurance Company v. Deepika* , 2009 Mad LJ 1005.

20.Arun Kumar Agrawal v. National Insurance Co. Ltd., AIR 2010 SC 3427; 2010 (9) SCC 218.

21.Portuguese Civil Code, 1867, Article 1056 - Concept of marriage as a civil contract and its purpose - Marriage is a perpetual contract made between two persons of different sex with the purpose of legitimately constituting a family.

22.*Id,* Article 1096 – Ante-nuptial conventions principle of freedom - It is lawful for the spouses to stipulate, before the solemnisation of the marriage and within the bounds of law, whatever they think fit in respect of their assets.

23.*Id,* Article 1108 – Concept of communion of matrimonial estate - The marriage as per the custom of the country consists in the communion between the spouses of all their assets, present and future, not excluded by law.

24.Vijender Kumar, "Matrimonial Property Law in India: Need of the Hour" 505 *JILI* 57(4) (Oct- Dec 2015).

Historical Aspects of Women's Property Rights in Inidia

Dr.Parag Agarwal
Associate Professor
Department of law, Monad University, Hapur, Utta Pradesh.

Sapna Chopra
Research Scholar
Department of law, Monad University, Hapur, Utta Pradesh.

Abstract-*"The effects of international events, however, are more significant than anything that happens in India. India has recently been speaking at international conferences and advocating for human rights and fair treatment of Indians abroad with an oratory that has won praise from all quarters. Her failure to enact a Hindu code of law within her own borders, where there is equality before the law and where impairments based on caste or sex are no longer taken into consideration, would be more than unfortunate given that the eyes of the world are now upon her. We feel almost obligated by honour to get rid of these infirmities as soon as possible. This ought to be a sufficient response to the query, "Who demand these changes in Law"? We also cannot afford to ignore the recent declaration of certain fundamental rights by India itself or the views of the international community.*

1.1 INTRODUCTION-Women have always been seen as equally significant to males in the historical evolution of humanity, the spread of human civilization, and the global social economy. She has also traditionally been viewed as a lesser being in comparison to her male counterparts. In addition to their inferior status in the home and in society, women also lack some rights and privileges. This is the case because the development of our legal system depends on the values and norms that are prevalent in society, and these norms and values have a significant impact on the legal system. As a result, the social standing and position of women also demonstrate their influence on societal norms and regulations.

Through its many articles, such as Fundamental Rights and Directive Principles, our Constitution declares the equality of man and woman and provides for social, economic, and political justice. It envisions the beginning of a new era in which women will be treated equally to men as Indian citizens in all spheres of life. It is a truly remarkable statement that marks the end of an era and states the guiding principles for the coming one. But it is that blueprint that still needs to be carried out. Enforcing a theory is one thing; putting it into practise is quite another. Although de-Jure rights and liberties are enthusiastically offered, this does not necessarily mean that they are actually realised. If we wish to make these rights and freedoms a reality, we must engage in a very strenuous, energetic, never-ending, and deliberate battle that is led by a very distinct and thorough perspective. Unfortunately, this milestone has not yet succeeded in making this de-Jure equality a de-facto reality. In practically every aspect of life, gender prejudice is still prevalent. Though gender equality manifests itself in a variety of ways, the most irksome one has to do with women's actual property rights. It is one of the most contentious issues in Hindu law since the Hindu Succession Act of 1956 gave women the property rights necessary for them to establish their own separate rights of inheritance and independent stock of descent. The primary goal of inheritance systems in Indian society has been to preserve property, especially landed property, for male heirs. Before the passage of this Act, women's right to inherit, own, and control property is primarily determined by the values and norms that are socially acceptable.Although the Hindu Succession Act was passed primarily to improve and strengthen the economic position of women, the actual issue arose when it was put into practise. Given that our patriarchal system forbids women from inheriting landed property, the issue of women's inheritance rights pertains to immovable property, particularly land. Even our traditions (with the obvious exception of matrilineal customary law) have a tendency to restrict women's property to the movable items, such as jewellery and clothing, that were actually handed to them at the moment of marriage. These traditions occasionally permit them to inherit only from the mother, or occasionally from the mother and the father, denying the right of inheritance to cognate kindred.

1.2 HISTORICAL BACKGROUND

Women's Property Rights in Vedic Times- In this time period, the Brahmins held the highest position in the socioreligious hierarchy, and they used dharamsastras to legitimise their superiority. These dharamsastras were believed to be based on accepted norms, good conscience, and Hindu holy literature including the Vedas and Smritis. The Samritis were a compilation of etiquette guidelines and explanatory principles based on the Vedas, which were religious songs that date back at least three thousand years. The Samritis included works like Manu Samriti, which was authored between 300 BC and 300 AD, as well as digests and later commentary. Jimutvahana's Dayabhaga, a significant compilation of all the samritis, was written in the 12th century and was well received in Bengal. A running commentary on one of the samritis by Vijnaneshwara named Yajanavalika that was accepted across the rest of India is found in the Mitakshara, which was once more composed in the 12th century. As a result, the Rig Veda discusses individual proprietorship when it comes to the property rights of females. It also mentions how sons divide their father's estate after his death and how unmarried daughters who live with their father also receive a piece of the estate. The unmarried daughter had the right to inherit a portion of her

father's wealth in Vedic literature, but the brothers did not divide their father's fortune with their married sisters. For religious rituals, the position of the daughter's son was also acknowledged.

1.3 PROPERTY RIGHT OF WOMEN UNDER SCHOOLS-Digests and commentaries followed the samiritis's description of the rights of women. These commentaries represent the modern Hindu Succession Law. The authority of these commentaries was accepted in one region of India and rejected in another because the commentators of these commentaries offered their own perspectives on the ancient scriptures. Schools having divergent ideologies as a result of this. There were essentially only two significant schools of Hindu law: Mitakshara and Dayabhaga. A continuous commentary on the Yajnavalika code is found in Mitakshara. However, it is more of a digest than a straightforward critique on a certain Samiriti. Vijnaneswara wrote it towards the end of the 11th century. Benars School, Mithila School, Bombay School, and Dravida School are the four smaller sub-schools that make up The Mitakshara. All of India accepted Mitakshara as the supreme authority, with the exception of Bengal, where Jimutvahana's Dayabhaga was more widely read. These two schools are different from one another in a number of ways, but one of the most significant ones has to do with the law of inheritance. In terms of inheritance, the Dayabhaga system is based on religious efficacy, whereas the Mitakshara system is based on consanguinity, or the proximity of blood relations. The Mitakshara define the closest "sapinda" as the one who is closest by blood, but Dayabagha defines the closest "sapinda" as the one who provides the greatest spiritual benefit by making "Pinda" offerings.

1.4 CONCEPT OF STRIDHAN AND WOMEN'S PROPERTY

STRIDHAN'S DEFINITION AS THE NAME STRIDHAN INDICATES, it is made up of the syllables Stri and Dhan. Thus, it denotes Dhan of the "Stri," or the property of women. The word "Stridhana," which first appears in the Smritis and literally means "women's property," is used by many sages in a variety of contexts. A scripture from Manu states that a wife, son, and salve cannot own property and that any wealth they accumulate is gained for the person to whom they belong. Some texts try to broaden the definition of the word, while others try to narrow it. Manu's commentators held that while they were still permitted to hold property, they were not permitted to dispose of it how they pleased. Gautama, who particularly acknowledges a woman's ability to own separate property and allows for its succession, lends weight to this viewpoint as well.

THE ABILITY TO DISPOSE OF STRIDHAN- Although stridhana is considered to be a woman's absolute property, there are inherent restrictions on her ability to dispose of it and her testamentary powers in relation to it. Samriti Chandrika states that "A woman has not full dominion over other kinds of property, other than saudayika and husband's donation except immovable although they are her stridhana." Despite the fact that all schools of Hindu law concur that the wife alone has the power over her property, and that the husband has no ownership rights over it.

RIGHT OF THE WOMEN OVER HER STRIDHAN- The following concepts regarding the rights of a Hindu woman over her stridhana can be inferred from Hindu texts:1) During her maidenhood, she is free to get rid of any type of stridhana she pleases.

2) She can only dispose of saudayika Stridhana, or gifts from family members other than her spouse, when she is in captivity. Stridhana has been divided into two categories for the purpose of determining a woman's rights over Stridhana during coverture: (a) Saudayika, and (b) Non-saudayika.

3) A girl has the right to the Saudayika type of Stridhana; Saudayika denotes a gift from ties formed out of affection. It also includes bequests from her kin. She has unrestricted control over this kind of stridhan. Even without her husband's permission, she is free to dispose of it in any way she chooses, including by gift, sale, will, or other legal means. He cannot bind her in any way while dealing with it, and her spouse has no authority over it. However, in times of need, such as famines, illnesses, or imprisonment, her husband may employ this stridhan.

4) A woman's rights regarding non-saudayika stridhana. A woman has no authority to dispose of non-saudayika stridhana, which includes gifts from strangers and property acquired via the use of mechanical arts, etc., without her husband's permission. It is solely under her husband's supervision and is not in the hands of anyone else. Even if there is no distress, etc., her spouse is allowed to utilise it as he pleases.

SUCCESSION TO STRIDHAN- Succession to a woman's Stridhana differs depending on her marital status, including whether she was married or not, whether her marriage was approved or not, and depending on the source from whence the Stridhana originated. various schools have various policies about descent. The rules for the Stridhana of a maiden, or Stridhana of a female obtained during maidenhood, are the same, nonetheless. The following paragraphs outline the stridhan's succession rules:

1.5 CUSTOMARY LAW'S PROTECTION OF WOMEN'S PROPERTY RIGHTS-It was believed that customs were a significant source of law. Particularly, under the smritis, regional customs were highly valued and acknowledged as a significant source of law. Achara, sadachara, shishtachara, loksangraha, and other often used names in samritis stand for different aspects of custom. The acceptance of these regional practises differed from

region to region. In terms of women's rights, southern states have far more lenient laws due to their regional cultures. In addition, it is thought that the southern (Dakshina) region is where Yajnavalkya and Vijnaneshwara, who extended their structure on women's right to property, originated.

WOMEN PROPERTY RIGHTS AND STATUTORY LAW

THE CASTE DISABILITIES REMOVAL ACT, 1850 – The Caste Disabilities Removal Act, 1850, was a comprehensive statute that extended to all communities, and it was the first change to the Hindu rule of succession. It states: "Any law or usage currently in force in India that causes any person to lose rights or property, or may be deemed to have any adverse effect on any right of inheritance due to his or her renunciation of, or exclusion from, any religion, or being deprived of caste, shall cease to be enforced as law in any court."

THE HINDU WILLS ACT, 1870- Since traditional Hindu law did not allow for testamentary succession, the Hindus Will Act, 1870 gave them the first legal opportunity to dispose of their property by will. In this regard, the Central Legislature established the Hindu Disposition of Property Act in 1916, while Madras passed the Hindu Transfer of Bequests Act in 1914. The Indian Succession Act, 1925, which today controls the testamentary succession among Hindus, reenacted the provisions of the Hindu Will Act, 1870 with certain revisions.Despite the fact that this law has been explicitly repealed, a similar clause was introduced in Section 28 of the Hindu Succession Act of 1956.Act of 1929 to Modify Hindu Law of Inheritance In order to favour specific close relatives (bandhus) over distant relatives in the question of inheritance to the property of a Hindu man who passes away without leaving any male issue, it changed the sequence of intestate succession under the Mitakshara law.

THE ACT'S DESIGN-The Act's design lays out a set of general rules for the succession to the property of a Hindu male who dies intestate after the Act's entry into force, including rules for determining the shares and portions of various heirs, which are known as the Statute of Distribution. Sections 6 to 13 of the Act lay out these general rules. Additionally, it is a part of this plan to implement in Sections 15 and 16 distinct general principles governing the succession to a female intestate's property. The autonomous Section 14 of the Act eliminates the idea of a limited estate and changes it to an absolute one, making women the only owners of the land. In relation to those who are subject to Malabar and Aliyansantana Law, Section 17 outlines alterations and revisions to the general succession plan for the property of male and female Hindus. The "General provisions relating to succession" section of the Act, which runs from Sections 18 to Section 28, establishes additional restrictions to those under Sections 5 to 17.

STATE AMENDMENT ACTS—Although the Hindu Succession Act made significant changes to the property rights of women, the most significant of these were the introduction of equal rights of succession for male and female heirs in the same category, such as brothers, sisters, and children, the simplification of the law by doing away with the various systems used by the Mitakshara and Dayabhaga schools, and the elimination of life estate for female heirs. However, the Hindu Succession Act still has several built-in flaws that discriminate against women. The Hindu Succession Act of 1956 was amended by four states in order to address these discriminations, and those states also put the revisions into effect.

KERALA MODEL: The Kerala model differs from the one used by the four states previously stated. By approving the recommendations of the B.N.-led Hindu Law Committee, the state of Kerala. The idea of coparcenary has been eliminated by Rau, the committee tasked with drafting the Hindu Code Bill. The Kerala Model contributed to the unification of Hindu law, which can only be accomplished by doing away with the coparcenary and P.V. In support of the Rau Committee's recommendation, Kane further noted that the new Hindu Code's goal of abolishing the right by birth, which is the cornerstone of Mitakshara School, will aid in the unity of Hindu law.

1.6 CONCLUSION-Although within this framework a designated daughter was given an exception to inherit the property. The ancient Indian legislators almost uniformly recognised her right. One factor in particular in this regard merits special attention. Gautama warned his disciples against being married to a woman who had no brothers. Some claim that a daughter becomes an appointed daughter purely through the father's intention, the speaker stated. A man shouldn't marry a lady who has no brothers out of dread of that. As a result, if a man marries a woman without a brother, the result is disastrous for his family. since he has no claim to his own children and all of his sons have been given to the family of his wife's father. The thought of being without a son is the most upsetting thing to a Hindu guy. Similar to Apastamba, the daughter was included as an heir. If there are no male offspring, he says, "the nearest Kinsman (sapinda) inherits; if there are no kindred, the preceptor; if he is unable to do so, the disciple or the daughter may inherit.". Sankha also declares the right of succession of the mother and eldest wife. The wealth of a guy who enters heaven without having any male children, according to him, goes to his brothers. If not, his parents take it, followed by the eldest spouse, a relative, a classmate, or a fellow student". Thus, it can be claimed that when listing their heirs, Gautama included the widow, Apastamba, their daughter, and Sankha, their mother and eldest wife. However, it can also be argued that Gautama and Apastamba made this decision after

much hesitation. In addition, the inclusion of the widow and daughter in the list of heirs served no helpful purpose because they were added as heirs after a lengthy list of other relatives and strangers, both related and unrelated. In truth, it is impossible for a person to pass away without ever having belonged to a spiritual fraternity, had a teacher, a student, or served as a priest. The widow or the daughter could not inherit if any of these people were present. So, despite the fact that the widow and the daughter were on the list of heirs, it was never the intention to grant them any property through inheritance. Women were cruelly barred from inheriting in this way. As a result, the majority of these samritis had limitations on women's rights.

****

Bibliography

1. Prof. Khan, H Nazeer, Ambedkar on Gender Equality: Myth and Reality, Deep and Deep Publications. New Delhi (2007), p. 173
2. Raj Kumar, Women and Nation (Encyclopedia of Woman and Development Series), Anmol Publications Pvt. Ltd., New Delhi (2000), p. 156 -157
3. Derret, J. Dancan. M. , A Critique of Modern Hindu Law, N. M. Tripathi Pvt. Ltd, Bombay (1970), p. 193
4. Ibid, p. 194
5. Jana Matson Everett, Women and Social change in India, Heritage Publishers, New Delhi (1978), p. 142
6. Jain, P.C., Heritable Rights of Hindu female: General survey, Journal of legal Studies, University of Rajasthan. Vol. 28 (1997-98), p. 3
7. Regarding the definition of sulka various authors defined it differently some hold the view that it means the bride price or gratuity on the payment of which girl is given in the marriage. Some says it means the price of household items like utensils, furniture etc. given to the bride so that she can set up her matrimonial home. Others say that it is a kind of special presents given to the bride to persuade her to go to bridegroom's house
8. Kane, P.V., History of Dharamshatra; Ancient and Medieval Religious and Civil Law (1946), vol. III. p. 823
9. Azmi, S.S., Dr. Ambedkar as pioneer for the uplifiment of status of women in B.R Ambedkar on federalism, Ethnicity and gender justice, edited by Nazeer H.Khan, Deep and Deep Publications, New Delhi (2007), p. 192.
10. Gautama, Ch. XIX

Women and Crime: Intentions behind female criminality

Dr. Deepshikha Carpenter
Head of the Department (i/c) & Assistant Professor Department of Social Work Mahapurusha Srimanta Sankaradeva Viswavidyalaya, Guwahati Unit

Mercy Hazarika
Research Scholar
Department of Social Work
Mahapurusha Srimanta Sankrdeva Viswavidyalaya
Guwahati Unit.

Abstract-Crime is an anti-social entity (Mowrer, 1959). It disrupts the normal way of living and impacts the entire society at large. Crime is associated with strength and hence was always considered to exist in the man's world. Thus, the concept of female criminality has always been subjected to neglect until the sudden surge in the records. Statistics show that female criminality is rapidly rising all across the globe (World Prison Brief, 2017). There has been an increase by 53 % in the number of women prisoners in prisons worldwide since 2000 (World Prison Brief, 2017). Based on the mounting rate of female criminality worldwide, research in this area has become vital. Thus, this paper attempts to study the various causes that coerce women to commit crime. The main objective of the paper is to understand the factors that compel women to display belligerent behaviour through case analysis of 10 convicted women. By using qualitative research, this study is carried out in a district jail of Assam to understand the posit elements of female criminality and to suggest remedial measures to stop recidivism.

Keywords: crime, women criminals, female criminality.

1.1 INTRODUCTION:-Crime is a social as well as an economic phenomenon. It is as old as human civilization. According to Durkheim (1895), no society is free from criminology. Crime is a legal concept and hence has the sanction of law. It can be defined as an anti-social act. Thotaura (2014) describes crime as a socially disapproved concept that encroaches upon the regulations of the society. He further adds that crime is the display of anti-social behaviour. Because of its nature, crime takes the entire society under its canopy. Hence, crime is something that is opposed by society. As members of the society, it is our responsibility to maintain law and order to keep the norms of the society in shape. But when an individual or a group of individuals tend to go against the society and breakdown its norms, it disrupts the balance and decorum of the society and gives rise to social disorganization. Women, on the other hand are called the makers of the society. They lay the foundation of a family and are the epitome of care and love. Since time immemorial women have been playing the role of caregivers and nurturers that upkeep and provide protection to everyone surrounding her. Biologically, women are considered to be weak and less powerful in comparison to men and hence are expected to restrict herself to household chores only. Women are also called

fulfill the role of a home-makers that means it is her prime responsibility to take proper care of the home and the needs of its family members. It is through women that the traditions and cultural attributes are passed on to the next generation. So, how a woman nurtures her offsprings has a major role to play in the development of the nation. But when the care giving and loving fraternity of women goes astray or ends up committing a crime, it gives birth to a taboo. As it requires strength and power to commit a crime, it is irrational and interdicting for a woman to commit an offence. Hence, crime was always thought to have existed in the men's world as it requires masculinity to commit a crime. Connell (1987) uses the term hegemonic masculinity to state the dominance of men in the field of criminology. Messerschmidt (2005) quoting Sutherland and Cohen states how they linked masculinity to crime based on the gender nature of crime. Sandhya et al. (2022) states that crime has an impact on individuals as well as the community at large. Crime can be divided into various categories. Sutherland (1973) has distinguished crimes into two types: felonies and misdemeanours. Felonies are more serious in nature as compared to misdemeanours that contain petty or less heinous crimes like minor offences such as possession of drugs, drunk driving, vandalism, shoplifting, resisting arrest etc. Heinous crimes like rape murder, assault, drug dealing etc. falls under felonies. Criminals arrested for misdemeanours are given jail sentences that can go upto one year whereas those who are charged for felonies can end up with death penalty as punishment in extreme cases.

A person who violates the law or commits a crime is known as a "criminal" or "offender". Lombroso (2006) divided criminals into 4 groups: (1) born criminals or people with innate characteristics; (2) insane criminals such as idiots, imbeciles, and paranoiacs, as well as epileptics and addicts, basically those who are clinically diagnosed with mental illness; (3) occasional criminals or criminaloids, whose crimes are described predominantly by opportunity, though they, too, have inborn traits that possibly lead them to criminality; and (4) criminals of passion, who commit crimes out of rage, passion, or pride and are driven to crime by a "irresistible or compulsive force". Crime and punishment are considered as two-sides of a coin and a person who commits crime is punishable under Criminal law. Criminal laws are the system of laws that prescribes the definition of conduct prohibited by the law and regulates penalties/punishment as a form of treatment for the one convicted of the crime. The criminals are often penalised or sentenced to prison for their conduct.

The word "prison" comes from the Latin word for "to capture" (Merriam Webster). According to the Oxford English Dictionary, a jail or a prison is a facility that is adequately effective and equipped to accommodate those who have been legally transferred there for safe confinement while awaiting trial and sentence. According to Prisons Act (1894) "prison" can be defined as "any jail or place used permanently or temporarily under the general or special orders of a State Government for the detention of prisoners, and includes all lands and buildings appurtenant thereto".Prison refers to jail or any other facility used to hold inmates permanently or temporarily following general and specific directives from a local government. Since time immemorial, imprisonment has been used to deal with offenders. Our country shares the widely held belief that a prison sentence is only legitimate if it ultimately leads to the safeguarding of society from crime. Thus, on the basis of trial status, the prisoners are generally classified as under trial prisoners and convicted prisoners. A person who has been committed to judicial custody and against whom a criminal trial is in process is referred to as an under-trial prisoner. On the other hand, a convicted person is someone who has been found guilty of a crime and sentenced by a court. Although, women constituted only 5 % of the entire prison population as on 30th June 2019 and the percentage being constant over the years, recidivism was seen to be more on average in case of woman than men with 4.33 % and 3.99 % respectively (Women and The Criminal Justice System, 2019 & 2020).

1.2 CAUSES OF FEMALE CRIMINALITY: Crime is the demonstration of a superfluity of several variables. People commit crimes as a result of faulty upbringing, unsuitable family conditions, discrimination and exclusion from family and society, increase in demands and personal desires which acts as a catalyst to spur the need to commit an illegal act. The roots of crime can be sketched back to the confluence of numerous social, economic, demographic, local, and institutional elements. Although the concept of crime is an ancient one, crime by women is a new and emerging concept. The traditional role of women as a homemaker has changed because of modernization. Nazhath (2015) stated that women are acquiring a new identity and status because of the change in the social system. Women no longer accept any form of injustice against them. They have evolved as strong individuals who stand up for what they think is wrong. Gender discrimination, violence, poor family ties, weak economic status, poverty, inability to fulfil dreams, anxiety, marital discords etc. have compelled women to enter into the world of crime. Family maladjustment, poverty, necessities of money, family conflict, and abuse are the causes of female crime (Islam & Talukder, 2021). Simon (1976) analysed various dimensions of female criminality, like the extent and types of crimes committed and their treatment by prison officials and courts. She said that it starts from the family, and because of the restrictions to fulfil their emotional and other basic needs, they get involved in crime and misuse various opportunities. Mili et al. (2015) have proposed three

viewpoints behind women criminality viz. biological, sociological and psychological. The biological angle views crime as an innate human trait. The psychological perspective states that women who are discontented, had harsh living conditions, lower social status, higher level of stress and over-controlled personality are prone to commit crime. The sociological viewpoint emphasises that the unequal position of women in society due to social oppression and economic dependency on men led to frustration and the final outward manifestation of this social instability results in criminal conduct. Family dysfunction may be a major factor in the development of these offences. The ideal family should be complete structurally, have financial stability, adhere to moral and cultural norms, be physically and psychologically normal, and lead a normal life.

1.3 PRESENT SCENARIO OF FEMALE CRIMINALITY: Female criminality has been neglected for a long time because of the perception that crime exists for men only. The percentage of women criminals was not as huge as compared to men. But the world has seen a sudden surge in female criminality since the past few years. According to World Prison Brief (2017), currently over 714,000 women and girls are imprisoned around the globe, either as pre-trial detainees/ remand prisoners or after being convicted and sentenced, constituting 6.9% of total prison population (Walmsley R, 2017). Women and girls constitute 8.4% of the total prison population in the Americas, followed by 7.4% in Oceania, 6.7% in Asia, 6.1% Europe and 3.4% Africa (Walmsley, 2017). These increases in the female prison population in the Americas, Asia, and Oceania have been roughly three, four, and five times the increases in the general population of those continents, respectively. Moreover, in comparison to male incarceration rate, female incarceration is much faster. The increase rate since 2000 to two years ago for female prisoners were about 50.2% and 18.1% for male prisoners; however, they are now about 53.3% and 19.6%, respectively.

Around the world, south Asia is the most populous and most densely populated geographical region which accounts for 24% of world's population. In terms of women prisoners' population, Asia houses 263,571 women prisoners and has the third largest proportion of female prisoners which is 6.7% of total prison population (World Prison Brief, 2017). India occupies the highest number of prisoners, followed by Iran (6880), and Bangladesh (3,222) (World Prison Brief, 2021). The statistics above show that female criminality is rapidly rising in India. Prison Statistics India (2014) released by National Crime Record Bureau, suggests that merely 4.1 % of the total convicts and 4.3% of the total under trial prisoners lodged in different jails of India, were female offenders. Similarly, 2.5% of the total detenus in 2014, in Indian jails were women. Although the percentage is small in comparison to the entire population, statistics show that it is rising. Assam, one of the northeastern states of India, harbours 10,079 prisoners. Out of these, 431 are female (India Prison Statistics, 2021). The percentage of women prisoners in Assam has increased sharply from 2.6% in 2001 to 4.2% in the year 2021. From this, it is evident that the problem of female criminality is turning serious in Assam. (Indian Prison Statistics, 2021).

2. RESEARCH OBJECTIVE: The main objective of the study is to understand the various factors that lead women towards committing crime and suggest measures to prevent criminality and recidivism.

3. RESEARCH QUESTIONS: The questions are-

What are the various reasons that escort women to commit crime? What are the factors that contribute in commission of crime?

4. METHODOLOGY: Qualitative research design was used to conduct the research because the study required an investigative approach to get a deeper insight about the views of the respondents. The universe of the study was a district jail of Assam. Both primary and secondary data was used for the purpose of data collection. Narrative approach was used to collect the primary data with the help of a semi structured interview guide whereas books, journals, websites and government records were used to serve as secondary data. Purposive sampling was used to draw the sample with prior consultation with the jail authority. The data was collected during the first week of May, 2022. The sample size was limited to 10 keeping the approach in mind and the limitation of time offered by the authority. The inclusive criterion of sampling was women inmates who were convicted. Braun & Clarke (2006) has provided a six-step framework for thematic analysis of qualitative data. So, after completion of the data collection process, interviews of the respondents were first translated verbatim. Codes were then developed after the systematic organization of the transcribed data. The codes that fitted together were clubbed to form concrete themes, which were later analysed thematically.

5. RESULTS AND FINDINGS: The result and findings of the study are discussed briefly:

5.1 Psychological Cause: Psychology is the study of the human mind and its characteristics that display a certain behaviour. The psychological angle of crime considers certain characteristics such as mental ability, mental attitude and biological traits to be related to crime. Merton (1968) states that female criminality is caused by extreme level of pressure, tension, and torture. The biological angle views crime as an inborn quality of human beings. (Mili et al. 2015). According to this, every individual has the qualities of a criminal but it is only displayed when an individual is triggered. Literature has suggested considering neurobiological factors in understanding criminal behaviour (Focquaert, 2018). Lombroso (1890) stated that there was

a connection between biological factors and display of criminal behaviour. In this context, one of respondents gave the following remark: *"I always feel depressed and sad. Since childhood, I never had any friends nor went to the neighbours to play. I never went to school because my parents said I was different and girls do not need to go to school. Growing up, I always had a tendency that I would die soon. My parents married me off to a faraway village. After marriage, everyone used to tell me that I overthink and it is in my head. So, one day, I was fed up with all the people asking me to behave normally and hence ran away from my in-laws house and jumped from the bridge along with my daughter."* The warden confirmed that she was rescued by some villagers and was saved but her daughter was found dead but she still tells everyone that her daughter is alive and once she is released, she will go back to her daughter and lead a new life.Another convict who expressed joy while narrating her story said that:

"My husband was a drunkard and used to beat me. Since childhood, I have received only hatred. My stepmother never loved me, used to make me work and married me off soon because I was a burden to her. I thought life would be better with my husband. Initially, everything was going on fine until one day when he returned home drunk and started beating me. He also had an affair with a lady nearby. Had my son not been born, I would have left him. Things got worse but I could not go anywhere as I had nobody. The torture got worser and one day I saw a dream where someone told me to kill my husband. I planned for three days and one day when he was fully drunk and started beating me, I chopped off his head and sat beside him till he bled to death."

Both the statements above prove that both the convicts were mentally unstable and had been victims of trauma and stress. Mental illness or distress are factors that trigger criminal behaviour in women. The inability to differentiate between what is right and wrong can be a rising cause of female criminality.

5.2 Economic Cause: Economic conditions play a major role in any individual's life and upbringing. Human beings are driven by needs and wants. When the basic needs aren't met, it creates a strange void in a person's life. The inability to meet one's basic needs can cause a great mayhem in one's life because with economic independence comes respect, liberty and social acceptance. On the other hand, an economically unstable person is known to have faced discrimination, exploitation, torture, mockery etc. from the society. Manjoo (2014) identified that lack of economy, poverty, discriminatory law, lack of enjoyment of social, economic and cultural rights are some of the causes that compel women to commit crime. Three convicts who were charged for drugs dealing, illegal sale of alcohol and honey-trapping shared their stories as follows: *..since childhood, I and my siblings have also struggled to have one proper meal. After my father passed away, my mother worked from house to house to provide us food. So, I thought I should help her in sharing the load. My mother got me a sewing machine and I started sewing clothes for income. But, I could barely make enough money. One day, a customer turned friend told me about this substance that could give me a good amount of money. So, I started to supply her customers in small amounts and she used to give me money. One day, she called me to her house for some reason and then only suddenly police came and found me with the drugs and hence arrested me."" Yes, I was selling "bilati mod" (Non - Local Alcohol) in my grocery shop because it was hard for me as a widow to take care of three daughters. I grew up in an extremely poor family where most of the days we used to sleep tying a "gamusa" (assamese traditional towel) across our stomach so that we could curb hunger. My husband was a fisherman and we were somehow managing hand to mouth. But after he fell sick, all the money that we had was lost and I lost him too. Since then I started selling vegetables and later was able to open a small grocery shop. But the expenses were rising and the shop wasn't paying me enough. So, someone gave me the idea to sell alcohol at late hours when all the wine shops closed. Everyone sells it but we, the poor people, are caught and specially because I am a woman, some jealous people might have informed the police and hence I am in jail now".*

"After my husband died, I faced a lot of torture from my mother-in-law and sister-in-laws. Because we had a love marriage, they never liked us. And after my husband passed away, they got an opportunity to torture me and taunt me. One day, they sent me and my sons out of the house. I came back to my father who gave me a house to live in and some money. I started a small beauty parlour at my house and it was running off well till another beauty parlour opened in the area. That is when someone gave me the idea about this business. The customers and their accomplice used to come and meet in my home and I was given money for it. I was able to open a proper parlour and business was running smoothly. My boys were also going to school and everything was in place till one day when one of the girls was followed by a team of police officers who found out about the business and arrested me along with her."All the statements above clearly indicate that lack of money or resources was the main reason which compelled each of the cases to commit a crime. Economy or money is often related to prestige and respect. When one grows up in a poor economic background and somehow manages to come out of that situation via some source, they start anticipating ways to never go back to that spot again. It is then that they are blinded by the differentiation of good or bad and take the decision to go for easy money.

5.3 Social Cause: Man is a social animal who needs society to survive. A human being needs love, care, belongingness, respect and security apart from the basic physiological needs. (Maslow, 2020). When an individual is deprived of its needs, it acts as a catalyst which leads him /her astray and makes him/her do the unlawful. The environment in which an individual grows up has a huge impact on one's behavioural aspect. Bhandari (2018) states that strained interpersonal relations, conflict relation to the family members, husband's extra familial relation, deprivation of needs, maladjustments were the causes of family procreation to commit crime by the women. In this regard, one of the convicts who was arrested for murdering her husband narrated her story as follows:

*"… I killed my husband and I am not sad about it. He married me at an early age and I ran away with him because he loved me. I have grown up in an extremely poor family and hence I thought getting married to my lover (who claimed to work in a shop) will give me a good life. Things were good till I became pregnant. He started behaving in an odd manner. He would often come home drunk and abuse me. Once he burnt my hand with a cigarette and told me how ugly I have become. When I was taken to the hospital for my delivery by my mother, my husband didn't show up. That broke me from inside but when I returned home, I realised that he had sold out many things from our house and even my clothes. That stopped my tears and I made up my mind that I will kill him for ruining my life. When I found out that he lived with another woman and was cheating on her too, I tried confronting her. But he found out and came home and started abusing me. He slapped me and I fell on the floor hitting my head against the "pota" (stone pestle and mortar). I picked up the stone and hit him on the head with all my energy. I kept hitting till he died."*Another convict who is charged for attempting to kill her rapist stated the following:*"I used to work in a school as a cook. My husband is a driver and I used to live with my husband and father-in-law. My sister-in-law and her family used to live nearby. I never liked my brother-in-law as he had a different way of looking at me. He always tried to come close, touched me for no reason and used to mock my husband in front of me. One day, when I was unwell, he came home to give some medicines and when he saw I was alone at home and was weak, he tried to rape me. I tried to push him away but I could not. Luckily, my husband came home on time and hit him on his head with a bamboo stick. Later, we (I, my husband and father-in-law) were arrested by the police and the reason given was that we tried to kill him because we had borrowed money from him."*

The narratives above clearly show that relationship with family can be a vital cause for rising criminality. Husband's extra marital affair, abuse, torture or threat to one's self dignity can be reasons that compel women to take the law in their hands.

6. DISCUSSION:-The analysis of the narratives has clearly provided three themes under which the causes for crime by women can be discussed. Psychology is one of the factors that can prove to be important while discussing the rise in female criminality. How a person behaves under certain circumstances is related to what he/she might be undergoing in their life. Display of behaviour is affected by the attitude of a person which is based on his/her cognition. Females are known to be very calm and composed human beings. But when stress takes over, women tend to behave in a completely different manner because of the bottled up emotions and adjustmental attitude she has been carrying since forever. Poor economic conditions, faulty parenting, broken family, alcoholism, strained interpersonal relationships can cause stress in women which can lead to mental balance. Under mental stress, a human being often ends up making the wrong choices. Studies reveal that many crimes were committed by women who were under trauma and stress. From her study on all the women prisoners of Kalamba central prison, Kolhapur, Patil (2015) concluded that the majority of the women had committed the crime accidentally which enforces the fact that they were psychologically unstable. The instability of the mind can be because of various factors like bottled up feelings, prolonged adjustment to uncomfortable living conditions, inability to ventilate one's feelings and emotions, feeling of insecurity, broken families, marital discords etc. Obi et al. (2014) conducted a cross sectional study in Nigeria to investigate perceived psychological determinant of female criminality and found that broken home, poor parental monitoring, domestic violence, lack of parental care, poor socio-economic background, single parenting, feeling of insecurity, and gender inferiority are perceived factors towards female criminality. The study clearly showed that psychology plays a vital role in compelling women to commit crime. Mental imbalance arising out of a mental illness or resulting from environmental or social factors can make women take the wrong steps and end up as a criminal.Crime and poverty are like the two sides of a coin. Poverty is quite often attributed to a combination of social factors, such as limited opportunities for education and employment, insufficient provision of social services, and so on. The inability to access the basic necessities of life or the desire to meet one's needs can act as a major factor that triggers crime. Kumari (2009) conducted an exploratory study in Coimbatore jails and found that 75% of female offenders committed crime because of poverty. Women who come from a poor economic background take up the most feasible yet wrong step to earn easy money. According to a 2017 study by Avais & Wassan (2017) among women prisoners in Punjab and Sindh, Pakistan, 33.1% of respondents reported that they were compelled

to commit crimes because of financial concerns, 21.1% because of economic hardship, 12% because of domestic abuse, 10.5% to save their dignity, 17.3% for marriage, 2.3% because of a property dispute, 1.5% to stop blackmailing, 8% for being cheated by the victim, and 1.5% because they belonged from criminal families. Maasodi (2018) in his article stated that economic insecurity and social deprivation are the reasons for an increase of crime in Indian cities, for both men and women. The results from this study clearly indicates that economic hardship, inability to meet one's basic needs or the inability to support one's family as a responsible family member pushed women into the wrong paths. It was also found that all the samples were illiterate. Hence, their ability to distinguish between morally or lawfully correct or incorrect was never available.

Society has a huge impact on one's upbringing. The environment in which one grows up influences the growth and development and display of behaviour. How a person is treated in the society, what he/she receives from the society decides his role or identity in the community at large. In many cases, it was seen that lack of proper socialisation, illiteracy, broken or weak ties among family and closed one's, unequal status in the society, poor marital status after marriage, dysfunctional relationship with in-laws are some of the available and common factors found among women criminals. According to a review conducted in Odisha state of India by J.J. Rath (2012), majority of women offenders convicted of homicidal activities either had family-related problems or lacked proper socialisation and education. Social deprivation can be a major factor for increase in criminal activity among women. National Expert Committee on Women Prisoners (1986) had opined that neglect of female criminality and her second citizen status in correctional and social defence strategies have been chronic in India which is a reflection of the unequal status which accrues to women in Indian society. Women have been subjected to various forms of atrocities such as sexual assault, molestation, being kicked out, understated, insult, exploitation, use of coercion, bride price demand, and so on. Majority of female perpetrators have been victims of hostile environments, encircled by exploitation and violence, which tends to result in a series of tragic events that compelled them to commit criminal acts. As a result of these social circumstances, female offenders are raised into extremely stressful situations which are likely to result in distorted personality and erroneous, improper judgement. Saxena (1994) in her study found that husband's adultery, extra marital affairs and immoral behaviour contributed significantly in motivating married women to resort to crimes of murderous violence. The study too revealed that marital status and relationship with husband and/or with in-laws played a significant role in catalysing the criminal attitude of a women. Women no longer accept any form of violence. Due to industrialization and modernization, women have evolved as strong and independent characters. Pattanaik & Mishra (2001) from their study stated that female criminality is a result of diverse socio-economic-cultural and environmental factors resulting from rapid industrialization, westernisation and urbanisation. The narratives too state that torment, discrimination or any form of violence is not accepted by women any longer and they resort to it boldly which ends up adding as another reason to commit a crime. Anything that can cause harm to the self-respect of women has occurred as a trigger point for rise in criminality.

7. CONCLUSION & RECOMMENDATIONS:-The study proves that crime is a socio-economic entity. It takes place because of marred behaviour. Although it was always considered to have existed in the man's world, literature has shown that women too are involved in crime. The study also stated that the rate of female criminality is subsequently rising. Due to modernisation and industrialisation, there is a change in the status of women who were once imperiled to discrimination and segregation. Psychology was found to be a potent element for female criminality. Psychological imbalance paired with anxiety and stress appeared as a major factor in giving rise to female criminality. On the other hand, poor economic conditions, increased needs and demands of life was another arresting factor that was seen to have pushed women towards breaking the law. It was seen that the majority of the women accepted to have committed the crime for monetary reasons. Lack of economic resources, inability to strive as a bread earner for the family compelled women to adopt illegal ways of earning. Last but most importantly, society and its ways of treating women was a major component catalysing female criminality. Women have been victims to the atrocities of the society like rape, molestation, insult, mockery, gender discrimination, inequal status, domestic violence, abuse and adultery by husband. These atrocities effect the women to such an extent that they take up the law in their hands as their last resort.

Crime is an inevitable phenomenon of society but it can be prevented if correct measures are taken from the very beginning. The discrimination and categorisation of woman as a weak individual has to stop. Men should start treating women equally and with respect. Mental health is to be given utmost priority and mental health diseases should be treated as and when diagnosed. Also, measures should be taken by the government to see to the fact that illiteracy is taken care of as it was seen as the root for giving birth to nasty situations. The social evils are to be controlled to prevent the rise of criminality. Rather than punishing the criminals, their rehabilitation and reform should be given more importance because crime is a result of faulty behaviour. It can be treated through behaviour modification and proper counselling. Intervention of social workers is of

utmost importance here because they can act as a bridge between the authority and the convicts. Social workers can help the offenders in venting out their fear and rage and help them in adjusting with the adversities inside the confinement. Being charged of crime and kept captivated inside the cell, away from family and the outside world, can impact the physical and mental well-being of the inmates. Social workers can come into play here and provide succor and support to those in need. Social workers can also offer a hand in planning tailor fitted activities for the rehabilitation and restoration of the inmates adhering to their requirements, apart from providing individual and group counselling. Swestiga & Golda (2022) from their research on women criminals suggested that working on peace building of women offenders and their restoration is extremely important to prevent the surge in female criminality. Proper steps should be taken for the reintegration of the female criminals back into their lives else recidivism will take place and the vicious circle of crime will continue to exist.

****

References:

1.*ABC of Attitudes - Organisational Behaviour Study Guide*. (2015, May 19). Organisational Behaviour Study Guide. Retrieved March 7, 2023, from https://www.myorganisationalbehaviour.com/abc-of-attitudes/

2.Avais, M. A., & Wassan, A. A. (2017). Female Criminals A Socio-Criminological Analysis Of Pakistan. *Grassroots*, *51*(1).

3.Bhandari, A. (2018). The Role of the Family in Crime Causation: A Comparative Study of 'Family of Orientation'and 'Family of Procreation'(A Study of Women Prisoners in the Central Jails of Rajasthan). *Journal of International Women's Studies*, *19*(3), 109-118.

4.Braun, V., & Clarke, V. (2006). Using thematic analysis in psychology. *Qualitative research in psychology*, *3*(2), 77-101.

5.*Criminology - Major concepts and theories*. (1999, July 26). Encyclopedia Britannica. https://www.britannica.com/science/criminology/Major-concepts-and-theories

6.Fair, H. & Walmsley, R. (2021). World Prison Population List. *World Prison Brief, Institute for Criminal Policy Research.* 11th edition. Available at: https://www.prisonstudies.org/sites/default/files/resources/downloads/world_prison_population_list_13th_edition.pdf

7.Focquaert F (2018). Neurobiology and crime: A neuro-ethical perspective. *Journal of Criminal Justice*. doi: 10.1016/j.jcrimjus.2018.01.001

8.Islam, Md & Talukder, Md.Ishtiaq. (2021). The Impact of Vulnerable Family Relation on Female Criminality: Its Forms, Causes, and Consequences in Society. 7. 166-179.

9.Kumari, N. (2009). Socio economic profile of women prisoners. *Language in India*, *9*(2), 134-259.

10.Lombroso, C. (2006). Criminal man. In *Criminal Man*. Duke University Press. Maslow, A.H. (2020). Maslow's Hierarchy of Needs. *Encyclopaedia of Personality and Individual Differences*.

12.Masoodi, A. (2018, January 9). *Increase in number of women coming in conflict with the law | Mint*. Mint. https://www.livemint.com/Politics/5XJa3pu9i1OrJFPonVFRfL/Increase-in-number-of-women-coming-in-conflict-with-the-law.html

13.Merriam-Webster. (n.d.). Prison. In Merriam-Webster.com dictionary. Retrieved April 20, 2023, from https://www.merriam-webster.com/dictionary/prison

14.Merton, R. (1968). Social Theory and Social Structure. New York: Free Press.

15.Mili, P. M. K., Perumal, R., & Cherian, N. S. (2015). Female criminality in India: Prevalence, causes and preventive measures 1. *International Journal of Criminal Justice Sciences*, *10*(1), 65.

16.National Crime Records Bureau, Ministry of Home Affairs, New Delhi. (2014). *Prison Statistics Report.* Retrieved from http://ncrb.gov.in/StatPublications/PSI/psimainpage.htm

17.Nazhath, S. (2015). Social Change and Women. *International Research Journal of Social Sciences*, *4*(12), 46–48. http://isca.in/IJSS/Archive/v4/i12/8.ISCA-IRJSS-2015-037.pdf

18.Obi, T. C., Nwankwo, B. E., Ohama, V. C., Agu, S. A., & Sydney-Agbor, N. (2014). Perceived Psychosocial Determinants of Female Criminality in South East Nigeria. *American Journal of Applied Psychology*, *2*(2), 33-36.

19.Patil, U. (2015). Women and Crime. *International Journal of Advance and Applied Research*, *3*(1), 66–76. https://ijaar.co.in/wp-content/uploads/2021/08/030109.pdf

20.Pattanaik, J. K., & Mishra, N. N. (2001). Social change and female criminality in India.

21.Social Change, 31(3), 103-110. doi: 10.1177/004908570103100308

22.Prison statistics India, 2021. https://ncrb.gov.in/sites/default/files/PSI_2020_as_on_27-12-2021_0.pdf

23Rath, J. J. (2012). Socio-Economic Condition as a contributing factor for Criminality of Women Prisoners in Odisha. *Odisha Review*, 18-29.

24.Saxena, R. (1994). Women and Crime in India, New Delhi, *A Study in Socio-cultural dynamics*. Inter India Publication.

25.Simon, R. J. (1976). Women and Crime. *Journal of Criminal Law & Criminology*. https://doi.org/10.2307/1142769

26.Suherland, E. H., & Schuessler, K. (1973). *On analyzing crime* , 13. Chicago: University of Chicago Press.

27.Swesthiga, K., & Sahoo, Ms. G. (2022). Theories of Female Criminality in India. *International Journal of Advances in Engineering and Management*, *4*(8), 368–372. https://ijaem.net/issue_dcp/Theories%20of%20Female%20Criminality%20in%20India.pdf

28.The Functionalist Perspective on Crime and Deviance. (2022, November 16). ReviseSociology. https://revisesociology.com/2016/04/03/functionalist-explanations-of-deviance/

29.Thotakura, Dr. (2011). Crime: A Conceptual Understanding. Indian Journal of Applied Research. 4. 196-198. 10.15373/2249555X/MAR2014/58.

30.Walmsley, R. (2017). Women and girls in penal institutions, including pre-trial detainees/remand prisoners. *World Prison Brief, Institute for Criminal Policy Research*. 4th edition. Available at: https://www.prisonstudies.org/sites/default/files/resources/downloads/world_female_prison_4th_edn_v4_web.pdf

Women and the Criminal Justice System, 2019. (2020, November 23). GOV.UK. https://www.gov.uk/government/statistics/women-and-the-criminal-justice-system-2019/women-and-the-criminal-justice-system-2019#executive-

Women's Political Participation in India

S.K. Abdul Amanullah
(Ph.D, Research scholar, Department of Political science, RKDF University, Ranchi)

Woman is the companion of man, gifted with equal mental capacities. She has the right to participate in the minutest details in the activities of man, and she has an equal right of freedom and liberty with him.
------Mahatma Gandhi

ABSTRACT:-The term 'political participation' has a very wide meaning. It is not only related to 'Right to Vote', but simultaneously relates to participation in: decision-making process, political activism, political consciousness, etc. Women in India participate in voting, run for public offices and political parties at lower levels more than men. Political activism and voting are the strongest areas of women's political participation. To combat gender inequality in politics, the Indian Government has instituted reservations for seats in local governments. Women turnout during India's parliamentary general elections was 65.63%, compared to 67.09% turnout for men. India ranks 20th from the bottom in terms of representation of women in Parliament.[1] Women have held the posts of president and prime minister in India, as well as chief ministers of various states. Indian voters have elected women to numerous state legislative assemblies and national parliament for many decades. The equal participation of men and women in decision making bodies and vital policy makings is an indicator of maturity and efficacy of democracy in any country.

INTRODUCTION: -Political participation has been defined in various ways. Political participation means not only exercising the right to vote, but also power sharing, co-decision making, co-policy making at all levels of governance of the State.[3] Political participation is generally defined as being a process through which individual performs a role in political life of the social order, has the occasion to take part in deciding what the common aim of that society are and the most excellent way of achieving these goals. Political participation refers to actual participation in these voluntary activities by which members of the society share in the selection of rules and directly or indirectly in the formulation of public policy.[4] It means that by the process of political participation, the people actually take part in political activities. No doubt, one of the important political activities of the people is exercising voting rights during elections; however, political participation is not just casting vote rather wide range of other activities is also included in it—like membership of political party, electoral campaigning, attending party meetings, demonstrations, communication with leaders, holding party positions, contesting elections, membership in representative bodies, influencing decision making and other related activities. So, political participation may be defined as voluntary participation in the political affairs through membership, voting and partaking in the activities of the political parties, legislative bodies and/or politically motivated movements.

WOMEN POLITICAL PARTICIPATION IN INDIAN POLITICS: HISTORICAL CONTEXT

The status of women in India has seen many ups and downs since ancient times - from at par status in ancient history to be in veils (Parda System) during the Medieval period. In the post independent India, the status of women regained its strength and has been on a rise ever since. Women in postindependent India have been participating in almost all types of economic activities, day -to day household chores, voting for a better governance and also in active politics. India has elected a woman prime minister, Indira Gandhi, and a woman president, Pratibha Patil. In the present central government, women comprise roughly quarter of the Indian cabinet with portfolios like external affairs, commerce and human resource development. At the ground level, India has a significant proportion of women in local level politics which has been achieved by reserving seat for women.

1. Indian Freedom Movement: - Women participated in the freedom movement with true spirit and undaunted courage and faced various tortures, exploitations and hardships to earn us freedom. Many great Indian women like Rani Lakshmi Bai, Sarojini Naidu, Kasturba Gandhi, Vijayalakmi Pundit, Annie Besant need no introduction for their dedication and undying devotion to the service of India. Indian women who joined the national movement were initially from educated and liberal families. All changed with the advent of Gandhi who converted the freedom struggle into a mass movement involving all sections of society. He understood that true freedom cannot be achieved if all the sections of the society are not truly represented. His most successful campaign against the imperial rule was fought on the issue of salt tax which brought Indian women to the forefront. Local issues started getting debated and women took center stage in this regard.

2. Women Reservation Bill: - Post Gandhi, India experienced centralization of planning which resulted in higher inequality in political decision making at the various levels. While Government was deeply concerned of issues of gender equality, women were not always a part of such decision making. Although, India has seen women participating in politics as the longest serving

Prime minister, as chief ministers of various states, members in national parliament and state legislative assemblies in large numbers, yet the occurrence of such events has not been commensurate to their population.

3. Panchayati Raj Reforms: - Indian Constitution maprovisions relating to the establishment, powers, and responsibilities of the panchayats through the 73rd Amendment in 1993 with three tier system, viz, panchayats (village governance bodies) at the village, intermediate and district levels in every state, except provision of skipping intermediate level in states with less than twenty lakh population. The states have been empowered through law for the composition of panchayats. The reform provided for reservation of both seats and leadership positions for the Scheduled Castes, tribes, and women.

POLITICAL PARTICIPATION OF WOMEN AS VOTER: -The percentage of women exercising their voting rights in 1962 was 46.6 percent, the difference in voter turnout among men and women was 16.7 percent. In 1998 the percentage of women voters was 53.63 percent. In 2014 parliamentary general elections the turnout of women voters has steadily increased to 65.54 percent (Rai -) and in 2019 general election the percentage of women voters was 67.18 percent. The Bharathiya Janatha Party (BJP) in general election 2019 tried to lure women voters through a number of welfare schemes like 'Beti Bachao Beti Padho' (Save the girl child, educate the girl child) It even went so far to push for a ban on triple talaq, a Muslim practice that allows for 'instant divorce'. Both BJP and Congress in their manifesto promised that they will implement 33% reservation of seats for women in Parliament and state assemblies if they come to power. The BJP manifesto also promised that if voted to power, the government would ensure the financial empowerment for women. In order to encourage women voters, the Election Commission of India set up pink booth in some constituency which are exclusive for women voters and managed by women election officers.

WOMEN'S REPRESENTATION IN LEGISLATURE:-Though the turnout of women voters in election has increased, but they are still not well represented in Parliament. In 1952, they constituted 4.4 percent of the total members in the lower house which has increased to 12 percent in 2009 and 14 percent in 2019 election. All the major political parties are in fact, reluctant to field women candidates during elections. The elusive factor of 'win ability' is used as a mask to explain why high proportion of women candidates are not nominated by parties. The fact that political parties still have male dominated decision making structure, appears to be the main reason. In the 2019 general election Congress fielded 54 female candidates followed by BJP at 53. The Bahujan Samaj Party (BSP) comes third with 24 female candidates, followed by the Trinamool Congress (TMC) that had 23 women candidates. While CPI (M) fielded 10 and CPI fielded 4 female candidates. (Zee News, May 24th, 2019) Of the 435 seats contested by BJP only 12.6 percent were women. The situation was similar in Congress with only 12.9 percent of its candidates were women, The Mayawati-led BSP contested total of 383 seats, but women candidates were only 6.3 per cent. The number of women candidates who contested the elections has doubled from 284 in general election held in 1999 to 556 in general election of 2009. The women contesting the election saw a slight increase to 668 (8 percent) out of 8251 total candidates in 2014 election. In 2019 general election the number of women representatives increased to 78. Out of 8026 total candidates contested 724 were women.

WOMEN IN DECISION- MAKING POSITION IN INDIA: Women`s participation in decision making process is vital to sustain democracy. This fact was realised at the UN convention on the political rights of women in 1952. All congresses worldwide emphasised the need for political participation of women. They discussed and planned strategies to achieve this objective. Significant deliberation on women`s empowerment was made in (a) World Plan of Action in (1975) in Mexico; (b) The Copenhagen Programme of Action (1980) (c) World Conference on the UN Decade of Women in Nairobi (1985) and (d) the World Congress of Women in Beijing (1995). (Fadia, 2014) In 2015, September, the member states of United Nations unanimously adopted a new global agenda to end poverty by 2030. The 2030 Agenda for Sustainable Development (SDGs) includes a specific goal to achieve gender equality, which aims to end discrimination and violence against women and girls and ensure equal participation and opportunity in all sphere of life. The late, 1980s and 1990s have witnessed the emergence of women political leaders who have influenced political decision-making at the national and state level. Jayalalitha emerged as a powerful Chief Minister of Tamil Nadu after the death of M. G. Ramachandra. Jayalalitha`s AIADMK party became the principal ally of the BJP led government in 1998. On Cauvery issue, the AIADMK warned Prime Minister Vajpayee of "disastrous consequences" if his government did not notify immediately the scheme on Cauvery water in the official gazette and table it in parliament. Jayalalitha withdrew her 18 MPs support from government after the Union cabinet rejected outright her demands to reinstate former naval chief Vishnu Bhagwat. Mayawati is one of the most dynamic dalit leaders. She became the first women dalit chief minister in the year 1995. She focused on social welfare measures for the upliftment of 'Bhahujans' – other backward classes,

Schedule caste, and Schedule tribes. Mayawati`s rise from humble beginning was referred as 'miracles of democracy' by former Prime Minister of India, P.V. Narasimha Rao. In 2000`s the women who came to prominence were Sonia Gandhi, SushmaSwaraj, Nirmala Sitharam and SmritiIrani. SushmaSwaraj- In March 1998, Under Prime minister Vajpayee, she was sworn in as Union Cabinet minister for Information and Broadcasting with an additional charge of the ministry of Telecommunication. She was the leader of opposition in15th loksabha. She served as Minister of External Affairs under Prime Minister Narendra Modi from May 2014 to May 2019. SmritiIrani – She is currently the youngest minister in the council of Ministers at the age of 43. She defeated Rahul Gandhi- President of Indian National Congress in 2019 general election. She is serving as Minister of Textiles and given additional charge as Minister of Women and Child Development. Nirmala Sitharaman- She is a member of the Rajya Sabha. In 2014 she served as the Defence Minister of India and in 2019 she became Finance Minister, the second female finance minister after Indira Gandhi. PrathibhaPatil- She was the 12th President of India and the first women to hold that office. Sheila Dikshit was the longest serving Chief minister of Delhi for a period of 15 years. Kiran Bedi is the first woman to join the Indian Police Service (IPS). After retirement she joined Bharatiya Janata party in January 2015. She played a key role in Indian anti-corruption movement. On 22, May 2016, she was appointed as the lieutenant Governor of Puducherry. Meira Kumar was the Minister of Social Justice and Empowerment from 2004 to 2009.She was the 15 th Speaker of LokSabhs from 2009 to 2014.Prior to being appointed as Speaker, she had been elected to the 8th,11th,12 th, and 14th, Lok Sabha. Sumitra Mahajan was eldest, senior most and longest serving woman Member of Parliament in the 16th, Lok Sabha. She was the second woman after Meira Kumar to be elected as the Speaker of the Lok Sabha. Sonia Gandhi took over as leader of Indian National Congress party in 1998, and played a prominent role in rejuvenating the dying Congress party. She was instrumental in formulating the United Progressive Alliance (UPA), which got elected for two terms in 2004 and 2009.She played an important role in passing the National Rural Employment Guarantee Scheme and the Right to Information Act. Although, India has seen women participating in politics as the longest serving Prime ministers, as Chief ministers of various states, members in national parliament, and state legislative assemblies in large numbers, yet the occurrence has not been corresponding to their population.

SOLUTIOIN TO STRENGTHEN WOMEN'S POLITICAL PARTICIPATION: -Women in India have made major inroads in various male dominated professions. They have proved themselves in the fields of business, art, medicine, engineering, law and culture. But they have failed to gain grounds in politics, which indicates that representation of women in politics needs special consideration.This should be rooted in the following solutions:Through active involvement of civil society organisation in educating women of their rights. Training programmes should be organised at the village and national level by extension personnel's for creating awareness among women about their rights, how they can come out of their socio-cultural barriers, training on various aspects of Panchayat Raj Institutions should be provided – provisions of 73rd amendment, writing records, conducting meetings, understanding of bureaucratic structure, government schemes for the rural poor are some of the areas in which training could be given.Women should be encouraged to organise themselves through Mahila mandal and Self-help groups. Government should provide financial aid to these groups who are successfully working and encouraging women representation in the political arena.Media can play a crucial role in highlighting the positive contribution of women in politics and avoid making any negative gender –based remarks.

Government need to demonstrate gender equality in their decision making bodies by not only increasing female representation in ministerial and elected position, but also by fostering gender – equitable work culture in state institutions. Government could adopt gender- responsive policies and practices in governing institutions like parental leave, child care services and fixed hours for voting debate and negotiating in decision making bodies such as national and regional parliaments, to ensure that female- leaders are able to function in an open and inclusive work environment.

CURRENT STATUS OF WOMEN'S POLITICAL PARTICIPATION FROM GLOBAL TO NATIONAL LEVEL-No doubt today, there is considerable increase in the percentage of women as voters. The participation of women as voters is almost equal to men. But the political participation (as a whole) of the women is not equal to men and so they are still not able to get a share equivalent to men in organization that require decision making. Still politics is dominated by men at every level of participation and women have not been regarded as significant part of the political arena. The representation of women as policy formulators and decision makers in the legislative bodies is very low. In legislative bodies women have been demanding more space but most nations in the world have failed in providing due space as well as representation to women in their political system. Thus, from local level to global level, leadership and participation of the women in the political fields are always compromised. Women are always underrepresented in leading positions, whether in civil services, academia, elected offices or private sector. Such kind of situation prevails despite their abilities and capabilities which has been proved as leaders and their right of

participating at par with men in democratic governance. Women are moving equally with men only in a handful of countries, like Germany, Sweden, Norway, Denmark and Finland. In these countries, substantial inroads are being made by the women into decision making process. Female presence in legislature remains small and relatively insignificant in the advanced countries like Western Europe and North America. It is indicated by the statistics (2010) that the world average of representation of women in legislature is 19.1%, in both the houses combined. It is 19.3% in lower house and 18.2% in upper house. As of 1 October, 2013, only 21.4 percent of national parliamentarians were women, a slow increase from percentage in 2010.[43] At the International Level, as on 1 October, 2013, there are only 37 States in which there are less than 10 percent of women parliamentarians in single or lower houses.[44] In 1 October, 2013, there were only 8 women who served as Head of State and 11 as Head of Government.[45] Only 17 percent of the Government ministers were women as of January 2012, with the majority managing the social sectors, like health and education. The regional variations are however significant.

There remained wide variations as far as average percentages of females as parliamentarians across single, and lower and upper houses in each region are concerned. Worldwide, the highest percentage of women in the parliament is in Rwanda. Women there in the lower house, have won 56.3 percent of the seats. As of October 1, 2013, there are: Nordic countries at 42%, followed by America at 24.8%, Europe (excluding the Nordic Countries) at 22.8%, Sub-Saharan Africa at 21.1%, Asia at 19.1%, Arab States at 17.8% and the lowest in the Pacific at 13.1% [46]. For representation of women in political arena, 30% is extensively considered the "critical mass" mark. This benchmark had been obtained by 37 countries including 11 in Africa as of 1 October 2013.[47] Some form of quotas had been applied by 29 countries out of the 37 countries opening space for the political participation of women.[48] 24.6 percent of the seats are held by women in countries with proportional electoral systems. Using the pluralitymajority electoral system and a missed system, this compares with 18.5% and 21.5% respectively.[49] Among the individual countries, the first rank was of Rwanda with 56.3% of women in the parliament, followed by Andora at 50%, Cuba at 48.9% and Sweden with 44.7.0%.[50] Comparatively, our neighboring countries such as China and Pakistan are in much better position regarding representation of women in various legislatures with 23.4% and 20.7% respectively [51].However, at parliamentary floor, the representation of Indian women is still far from satisfactory. India ranks 110th in the world according to the data released by the Inter-Parliamentary Union, an international group that works for the promotion of democracy, peace and co-operation in the world.[52] The above-stated statistics reveal that India lags behind many countries including its neighbouring countries Pakistan, China and Nepal, when it comes to women's participation in the politics.

CONCLUSION:-In recent years there has been a marked increase in women voters turn out in election. But they continue to be under-represented in legislature. The only way to increase women participation in politics would be through active involvement of civil society organisation in educating women of their rights. Government need to demonstrate gender equality in their decision making bodies bypassing the long standing Women Reservation Bill. The countries which have more women legislators had quota as a common factor. Quota for women had a dramatic impact on Rwandan with highest number of women parliamentarians worldwide- 61.3 percent. The current government has been a women inclusive government with six women ministers, raising hopes those in coming years more women will be in crucial decision making position. Women's participation in politics is their human right as much as it is the cornerstone of their right to equal citizenship. Across the country, and throughout the world, men's dominance in politics must be made a thing of the past. It is women leaders who hold the keys to our future.

****

1. **REFERENCES**:

2. Arun. Rashmi Role of Women in Panchayati Raj 1996: The Administrator
3. Thakur, Minni Women Empowerment through Panchayati Raj 2010: Concept Publishing House.
4. Pai, S Women and Panchayati Raj, The Law, Programmes and Practices : Journal of Rural Developmen
5. Chadha Anuradha (2014) " Political Participation of Women : A case study in India" OIDA International Journal Sustainable Development, Vol 07, No 2, pp 91-108. https://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=2441693
6. Election Commission of India, New Delhi
7. https://eci.gov.in/statistical-report/statistical-reports/
8. Fadia Kuldeep (2014) "Women`s Empowerment through Political Participation in India" Indian Journal of Public Administration, Vol IX, No 3, July-September. www.iipa.org.in/New%20Folder/13–kuldeep.pdf
9. Political Participation and women in India https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/189/3/12_chapter2.pdf
10. Rai Anjana. (2018) "Political Empowerment of womenin India: Status and Challenges". International Journal of Humanities and Social Sciences (IJHSS) ISSN (P) :2319-393X: ISSN (E):2319-3948. https://www.academia.edu/36959022/POLITICAL_EMPOWERMENT_OF_WOMEN_IN_INDIA_STATUS_AND_CHALLENGES_You_can_tell_the_condition_of_a_nation_by_looking_at_the_status_of_its_women
11. Sinha Niroj. (2006) "Women in Indian Politics" Gyan Publishing house, New Delhi. ISBN: 81-212-0686-3
12. Strengthen Girls` and Women`s Political Participation and Decision –Making Power – Facts solutions, Case Studies and Calls to Action- Policy Brief
13. http://womendeliver.org/wpcontent/uploads/2016/09/Deliver_For_Good_Brief_8_04.10.18-Politicalparticipation.pdf
14. Voting Percentage in various lok sabha elections- Official website of Chief Electoral Officer- Government of Uttarkhand
15. https://ceo.uk.gov.in/pages/view/165/169-voting-percentage-in-various-lok-sabha-electu=ion
16. Women `s Political Participation In India. https://en.wikipedia.org/wiki/Women%27s_political_participation_in_India
17. Zee News (May 24th , 2019) " Record 78 Women in new Lok Sabha'
18. https://en.wikipedia.org/wiki/Women%27s_political_participation_in_India

There Are a Lot of Dalit Children but Little Childhood: A Study of Childhood in Selected Dalit Narratives

Dr.Suresh Kurapati
ASSISTANT PROFESSOR
Central University of South Bihar,

Priyanka Kumari
Ph.D Research Scholar
Department of English
Central University of South Bihar

Abstract-This paper will mainly focus on the issues which are prevalent in the life of Dalit children. The common sufferings of Dalit children which actually snatches away their share of 'blissful Childhood'. Dalit literature claims to be the voice of unheard and unspoken stories then how far it has taken forward the voice of Dalit childhood. How their childhood is different from savarna childhood? The primary focus of the paper is to how does trauma becomes synonym with the life experiences of a Dalit child. What is the unique experiences of being a Dalit childhood? Another concern of the paper will be to do a critical analysis of Dalit childhood in Dalit narratives. The paper will examine the marginalisation of Dalit children in every walk of their life be it economically, sociological, politically or physically or mentally. As it is a universal idea that childhood is the elementary phase of life where the social experience of a child help them in creating or developing their own identity in relation to others in the society. How far the caste stigma has limited the full development of Dalit children? How does the familial and mother- children relationship plays role in the case of Dalit childhood?

Keywords: Dalit, trauma, childhood, children, caste, hunger

Dalit literature, from the very beginning, exposes the real -life raw experiences of Dalits into the mainstream audience and shout for the instant solution of those issues. Other than reflecting the raw experiences and issues of Dalits, Dalit literature appears like it has restricted itself as an adult literature. Dalit children, their thought and feelings regarding their issues are quite absent from Dalit literature. As per the take of childhood studies about 'childhood' Phillip Aries writes "is the experience of daily life and how does it help them in becoming one individual grown up person of society."(Aries 45). There are other works on childhood in which writers romanticize the childhood and its wonderful experiences portray in a very clichéd manner, the yearning to go back to the innocence of childhood. For normal childhood development the above mentioned idea works whereas the experience of childhood of Dalits are very different in that perspective. As no such fantasies are there to get mesmerized with, in Dalit childhood rather they have a memory of childhood hardships and sufferings. As Valmiki writes "when I think of all those things today, thorns begins to prick my heart. What sort of a life was that?" (Valmiki 62). This line clearly states the difference between the normal mainstream childhood and the of Dalit childhood.

Every Dalit carries within themselves an ocean of memories which are unconsciously recalled time and again, which cast and alter their present reality. American novelist William Faulkner's, claim that "the past is never dead, it is not even past" (85) is no more real when applied to the lives of the Dalits. The Dalits are the living embodiment of what trauma theorists would widely call 'living with the past'. However, the past in a Dalit's life represents more than its philosophical meaning an event no longer passing, yet retaining a present meaning (Reck et al. 52). For the Dalits, the past does interpret their present, but the past is not yet over rather still in existence. In other words, their past intercepts their present not only in philosophical terms but also in terms of the social and political functions encompassing their lives.Om Prakash Valmiki is one of the most important Dalit author and authored a gamut of writings depicting the Dalit consciousness. Joothan is a landmark in the history of Dalit literature, a biography of Valmiki in which he has shared his life's utmost experiences like growing up as a Dalit. Arun Prabha Mukherjee opines that this work has unmasked the brutal face of the fibres of Indian casteism. Though as a child Om Prakash Valmiki had to endure a lot of pain and suffering, his family lent him constant support, care, love and affection. The writer exposes the conditions the Dalits were subjected to, particularly in the beginning where it is narrated through a child's perspective. He writes "Dalit life is excruciatingly painful, charred by experiences. Experiences that did not manage to find room in literary creations. We have grown up in a social order that is extremely cruel and inhuman. And compassionless towards Dalits" (Valmiki xiii). This paper would reflect upon how a Dalit child sees the world and inhibit experiences, and often endure discrimination in almost all spheres of life through the lens of Om Prakash Valmiki. Also it is indeed a matter to ponder upon how Dalit children's experiences are varied from the experiences of mainstream middle class children in India.

Dalit literature, especially Dalit autobiographies record the aching traumatic experiences and memories. Thus it is pivotal to probe into Dalit childhood experiences as the corporeal and psychological traumas accomplished during childhood get apparent in one's adulthood and contribute in building of one's own identity in relation with others. The way Valmiki writes about his childhood experiences it reflects how this caste rigidity in Indian society snatches away one's share of childhood and give them traumatic scars in their memories which can make them restless anytime or whenever such awful event come across their way which remind them of the same discrimination. The so called idea of 'childhood development' doesn't really fit in, with the Dalit childhood experiences and thus the

experience of Dalit children are very unique in nature. Growing up in a society which provides them endless number traumatic memories rather than providing them blissful memories which every child deserves to have in their childhood days, as it occurs in the case of most of the mainstream middleclass children. As Valmiki writes: "Once again I had to relive all those miseries, torments, neglects, admonitions. I suffered a deep mental anguish while writing this book. How terribly painful was this unravelling of myself, layer upon layer" (Valmiki xiv). Valmiki writes 'what sort of life was that?', through this statement he meant to say that Dalit's life is excoriatingly painful and now when he is grown up he is raising a question whether the life he had is even worth calling it a life itself. When he himself is becoming aware of his own trauma, in order to heal it he wrote this autobiography to make society aware of what unfair discrimination are being done to them on the name of caste. As Mukherjee writes that Dalit literature is not only a site of resistance and creativity rather it is a documentation or a testimony of their everyday lived experiences and provide a possible way.

Trauma theory is emerging as one of the contemporary trend in literary research. Trauma is one of the most important aspect of Dalit Literature. Dalit children experiences Traumatic childhood in several ways. Although the beginning of Trauma theory is in very different setting but in contemporary time, when the field of psychology has developed so much, Trauma is associated with different types of experiences. There are a lot of psychologist who has given theories about trauma and how trauma does is being inflicted on various person in various ways. Judith Herman writes in her book "Repeated trauma in adult life erodes the structure of the personality already formed, but repeated trauma in childhood forms and deforms the personality" (Herman 96). There is no specific description or criteria to define childhood trauma. It can be, however, broadly understood as undergoing through some overwhelming events during childhood that affects till later life. Childhood trauma is usually categorized under physical, emotional and sexual. To be a Dalit means going through almost all of it. It is actually a cultural trauma that a Dalit child goes through. Instead of repressing one's painful memory of trauma, by letting it out and making it heard enables integration of the traumatic experience thus leading the way for healing and recovery.

It is not necessary that every Dalit child will have to suffer trauma but it is a guarantee that every Dalit child will witness traumatic experiences. Childhood is the elementary and crucial phase of life that's why so much of care is done in that period, the experiences of childhood shapes the future of a person. Childhood is a delicate phase of life which demands healthy environment, experiences, love, education and care. But when this stage of life is scarred with ugly experiences of life it hinders the proper growth and development of a child. Dalit children go through cultural trauma though this cultural trauma is inflicted on each individual of the community.While looking into the childhood of Dalits, it is crucial to look into the associated attributes that shape the identity, like environment, surrounding of their habitats, the behaviour of the people(teacher and companions) interacting with them.

"Repeated trauma in adult life erodes the structure of the personality already formed, but repeated trauma in childhood forms and deforms the personality" (Herman 96). There is no specific description or criteria to define childhood trauma. It can be, however, broadly understood as undergoing through some overwhelming events during childhood that affects till later life. Childhood trauma is usually categorized under physical, emotional and sexual. To be a Dalit means going through almost all of it. It is actually a cultural trauma that a Dalit child goes through.

While studying the childhood trauma of Dalits, the environment and the surrounding of their habitation cannot be ignored. The condition of their environmental surrounding immediately correlates with the equation of victim and perpetrators, the perpetrators being the so-called upper caste. A healthy environment is very essential in the healthy growth of a child, however the surrounding too influences in the identity development of a child, for the identity is developed with his relationship to the surrounding. So, the trauma is borne not out of a specific single event, but rather as a result of demeaning existence. Their living condition is just a part of the many humiliations subjected to the Dalits.The story immediately opens with a mention to the Dabbowali pond where the homes of the Chuhras are described to be on the edges of it. The imagery immediately digresses from the usual romanticizing of a natural village scenery. Rather, he writes that it is the pond where all the inhabitants of the villages take a shit on its edges, giving a vivid picture of an unhealthy environment which foreshadows the living conditions of the Chuhras. The childhood memories of his surrounding are not at all appealing as he writes that "the muck was strewn everywhere. The stench was so overpowering that one would choke within a minute. The pigs wandering in narrow lanes, naked children, dogs, daily fights—this was the environment of my childhood" (Valmiki 1). We are given a picture of a squalid environment, an image of a poor deprived habitation which cannot be a sign of a healthy surrounding at all. Emphasizing on the importance of place, Michelle Balaev in *Trends in Literary Trauma Theory* writes: "Descriptions of the geographical place of traumatic experience and remembrance situate the individual in relation to a larger cultural context that contains social values that influence the recollection of the event and the reconfiguration of the self" (149). Here, place would mean both, a geographical location as well as the nature encompassing culture and

He also gives a vivid description of the miseries that intensifies during the monsoon season giving the reader an idea about a nearly inhabitable condition of the Chuhra basti. He writes:The days of the rainy season were hellish. The lanes filled up with mud, making walking difficult. The mud was full of pigs' excrement, which would begin to stink after the rain stopped. Flies and mosquitoes thrived and were as thick as clouds of locusts. It became extremely difficult to go outside. Our arms and legs would get smeared with dirt. Our feet became mangy. The spaces between our toes filled up with reddish sores. Once these sores started to itch, they would itch nonstop. (Valmiki 23)

By realistically portraying the sub human conditions the Chuhras were subjected to, Valmiki neither gives an idealistic picture of the village nor demands sympathy for the sufferings. He projects the reality as it is by exposing the inhumanity of the social arrangement of caste system. He takes a dig on the canonical literature that failed to portray the dark reality of village life and the poor untouchables living in it as he states: "Literature can only imagine hell. For us the rainy season was a living hell. The epic poets of Hindi have not even touched upon the sufferings of the villages. What a monstrous truth that is" (Valmiki 27).

Valmiki is disgusted by his memory of having to be subjected to the humiliating existence:

The lanes were full of muddy water for months. The only way to get to school was by crossing these mud-filled lanes. Our area had several ponds, and their water would seep into the lanes. Our basti had one well. People had raised money to get it cemented. Both the plinth and the parapet of the well were quite high. Despite this safeguard, the water in the well was full of long worms during the rainy season. We had no alternative but to drink that water. We did not have the right to take water from the well of the Tagas. (Valmiki 23)

Having no option but to drink from a worm infested well would be the lowest point of subjection for any human being. While the Tagas have access to clean water, they are denied the right to take water from their well. But for Dalits, it is just one among numerous other kinds of subjugation. The author recalls how he had been sent up on the roof of their house to fix it since he was the only one that would not make the roof collapse because of his frail weight. As the rain continued to pour, many houses were flooded in and many swept away since the houses in his locality were made of clay. So, many families of the Chuhra community took refuge in the Taga's baithak. Neither had they had food nor the fuel to cook. Such would be the dire condition during monsoon that would make a hell out of an already deprived life. Children growing up under such conditions experience a childhood that often challenges the representation of the universal innocent childhood. Being subjected to such inhuman conditions from a very young age, the child will come to believe it as his own fate to live that way. Having to live under such debilitating condition does not mean that Dalit children does not have a childhood, but just a different kind, a traumatic childhood.

A common characteristic that we can find in most of Dalit literature, be it fictional or non-fictional or autobiography, it is the depiction of acute hunger. Hunger serves as a major theme that is reflective of Dalit trauma especially Dalit childhood trauma. The title of the autobiography *Joothan* itself revolves around food and hunger. It is actually the degrading practise of receiving leftovers of the upper caste. It is not out of choice that they do so but due to the lack of access to proper food throughout the year as a result of the centuries of the discriminatory practice of caste system that have rendered them poor and famished. The autobiography exposes that trauma also arises out of; chronic hunger and having to accept the fact that they have to step on their pride in an attempt to remain alive. Valmiki thus makes it evident that hunger is "not only physical and anthropological but also psychological and narratological" (Hichri 195). The physical starvation translates into psychological trauma thus refuting the claim of literary trauma theorist like Cathy Caruth that victims of trauma may either completely forget the incident or be unable to express it. The memory of persistent hunger and the humiliation depicted in *Joothan* rather affirms the claim of trauma theorist like Pederson who asserted that "traumatic amnesia is a myth" (Pederson 334). Hunger as one of the many forms of trauma experienced by Dalit children definitely does not get lost in memories. It is without doubt describable and narratable.

Parenting is one of the most crucial aspect of childhood as it plays a significant role in the development of a child. In Valmiki's case he was blessed to have constant moral support from his parent whereas Bechain was a fatherless child whose mother was married to another guy which gave him food security but made him an outcaste in his own Dalit community, he was being called 'calf' by the his own community people. Bechain has to endorse a lot of pain in his tender age, he had to carry all the burden of his family being the eldest son of the family just after his father's death. The title of the autobiography '*My Childhood on My Shoulders'* itself suggest the hardship of his childhood age.

Child Labour is a Crime which is banned in the whole world but Bechain was subjected to this practice. It was hunger and need of his life that he had to work hard to earn bread and butter for his family. He struggled during his entire childhood and embraced all humiliation and abuses which were do ne to him. Valmiki and Bechain's

tradition. The surrounding too leads the child to question his significance by trying to understand his identification with the environment. It leads him to question that "if the people who call the caste system an ideal social arrangement had to live in this environment for a day or two, they would change their mind" (Valmiki 1-2). By situating the individual to a larger cultural context, the author tries to study the childhood through the geographical space and the kind of life they lived there.experiences can be fittingly regarded as the representation of almost every Dalit children's experience with hunger.The traumatic childhood does not end only on hunger and child labour. Rather it is present in every walk of a Dalit child's life. It also include their experience at educational institution where they directly comes in front of the perpetrator and they are exposed to the perpetrator for further exploitation. Even the teacher who plays significant role in the life a student to shape their future as it is mentioned in various teaching and learning theories. A healthy and student friendly attitude of teacher helps learner in learning things efficiently whereas in Dalit children's case teacher themselves exploited those kids for no reason. Sometimes Dalit student becomes a subject of corporeal trauma as they were bitten up very badly by their teachers in the school. As such events are mentioned in *Joothan.* The whole idea of universal children's development collapse in the case of Dalit children.

The experiences of Dalit children are entirely different from the experience of normal middleclass Hindu children. Even in the worst of dreams none of us can imagine such childhood. Even imagination of some of the incident from the lives of these authors fill us with disgust. Thus the childhood of Dalit children are unique in its nature. Trauma becomes the integral part of Dalit children's life as Cathy Caruth says "Trauma is an overwhelming event" but for Dalit it is not a single event or abuse which causes trauma rather it is life long process where every day lived experience in such caste ridden society is traumatic in nature. Om Prakash Valmiki's *Joothan* and Sheoraj Singh Bechain's *My Childhood on My Shoulders* serves as a testimony of Childhood trauma brought upon Dalit children by this cruel practice of untouchability. Caste practice in India snatches away the innocence form the life of Dalit childhood. To minimize the suppression of Dalit children in caste ridden society the issues of Dalit children should be bring in light to spread awareness in our society.

To have a beautiful childhood is the universal right of children and it should not be snatched away from them on the name of caste. As it is universally said that childhood helps in shaping the adulthood of a person so it is must to provide a better childhood to everychildren. Childhood experience (trauma) can destroy once complete life so such things shouldn't be practiced in any society.

References

1. Aries, Phillipe. Centuries of Childhood. New York: Vintage, 1962. Web.
2. Bechain, Sheoraj Singh. My Childhood on My Shoulders. Trans. Deeba Zafir and Tapan Basu. Oxford University Press, 2018.
3. Balaev, Michelle. "Trends in Literary Trauma Theory." Mosaic: An Interdisciplinary Critical Journal, vol.41, no.2, 2008, pp. 149-166. JSTOR, http://www.jstor.org/stable/44029500 . Accessed on 24-10-2019.
4. Caruth, Cathy. *Unclaimed Experience: Trauma, Narrative, History*. John Hopkins University Press. 1996.
5. Duane, Anna Mae. The Childhren's Table: Childhood Studies and the Humanities, University of Georgia Press, 2013.
6. Gajarawala, Toral Jatin. *Untouchable Fictions: Literary Realism and the Crisis of Caste*. Fordham University Press, 2013.
7. Guru, Gopal. Introduction. *Humiliation*. Ed. Gopal Guru. Oxford University Press, 2013, pp. 1-19.
8. Herman, Judith L. *Trauma and Recovery: The Aftermath of Violence-From Domestic Abuse to Political Terror*. Basic Books, 1997.
9. Hichri, Asma. "Hunger "Beyond Appetite": Nurture Dialectics in Toni Morrison's Beloved." ariel: A Review of International English Literature, vol. 44 no. 2, 2013, pp. 195-220. https://www.researchgate.net/publication/265767850_Hunger_Beyond_Appetite_Nurture_Dialectics_in_Toni_Morrison's_Beloved.
10. Kumar, Raj. "A Dalit Childhood," review of My Childhood on My Shoulders, by Sheoraj Singh Bechain. Economic and political weekly, 30 April 2019 pp. 29-30.
11. Mukherjee, Arun Prabha. Introduction. *Joothan: A Dalit's Life*. Trans. Arun Prabha Mukherjee. Columbia University Press, 2003. pp xvii-xlviii.
12. Nayar, Pramod K. "Dalit Writing, Cultural Trauma and Pedagogy: The Testimony of Omprakash Valmiki's *Joothan*". *Haritham* 19 (2008): 51-65. https://www.academia.edu/368256/Dalit_Writing_Cultural_Trauma_and_Pedagogy_The_Testimony_of_Omprakash_Valmikis_Joothan.
13. Onega, Susan. "Affective Knowledge, Self-awareness and the Function of Myth in the Representation and Transmission of Trauma." Journal of Literary Theory, vol. 6 (1), 2012, pp. 83-102. https://www.researchgate.net/publication/274369254_Affective_Knowledge_Self-awareness_and_the_Function_of_Myth_in_the_Representation_and_Transmission_of_Trauma.
14. Pederson, Joshua. "Speak, Trauma: Towards a Revised Understanding of Literary Trauma Theory." *Narrative*, vol. 22, no. 3, 2014, pp. 333-353.
15. Sotero, Michelle M. "A Conceptual Model of Historical Trauma: Implications for Public Health Practice and Research." Journal of Health Disparities Research and Practice, vol.1, no.1, 2006, pp. 93-108. https://www.researchgate.net/publication/228209032_A_Conceptual_Model_of_Historical_Trauma_Implications_for_Public_Health_Practice_and_Research.
16. Valmiki, Omprakash. *Joothan: A Dalit's Life*. Trans. Arun Prabha Mukherjee. Columbia University Press, 2003.

Socio-Economic Status of Schedule Caste in Bihar with special reference to Gaya District

Alok Kumar Singh
Research Scholar
Department of Economics, Indira Gandhi National Tribal University,
Amarkantak, M.P.

Abstract:-The well-being of our lives is dependent on the quality of our socio-economic conditions. If these conditions are inadequate, it is impossible to live a happy and prosperous life. Therefore, it is essential to have favorable socio-economic conditions that make our lives worth living and enjoyable. Unfortunately, the scheduled castes have faced abysmal social conditions since ancient times, and there has been no significant improvement in their circumstances to date. The purpose of this study is to trace the progress of the scheduled castes in Gaya district from ancient times to the present day. Despite the persistence of traditional caste hierarchy and its associated functionalism in modern Indian society, untouchability has largely been eliminated. However, untouchability has largely been eradicated from Indian society. The caste system in India has proven to be enduring due to its integration with the country's political, economic, and social welfare systems. Therefore, it is crucial to examine how the social status of scheduled castes has evolved in terms of employment, education, and societal norms. The process of urbanization has enabled the scheduled caste community to take advantage of the educational system, enabling them to overcome social discrimination and achieve upward mobility. However, it is important to acknowledge that a significant proportion of the scheduled caste population is still engaged in low-paying, unskilled labor and lacks adequate housing. Indian culture has largely moved away from traditional caste-based discrimination, but the practice of endogamy remains a significant factor in preserving the status quo

Keywords:- *Scheduled Caste, Socio- Economic Condition, Bihar, Gaya.*

Introduction:-According to the Census data of 2001, the scheduled caste population accounted for 16.2% of the total population, and it slightly increased to around 16.6% in Census 2011. The majority of people belonging to scheduled caste communities reside in rural areas, with approximately 80% of them residing in such areas throughout the country (Ahmad,F. et al.,2021). Approximately half of the Scheduled Caste population is concentrated in five states, namely Uttar Pradesh, West Bengal, Tamil Nadu, Andhra Pradesh, and Bihar (Vir D,2021) During the British colonial period in the Indian subcontinent, they were referred to as the oppressed class. Scheduled Caste individuals, also referred to as Dalits, experience social exclusion in India and encounter prejudice due to their position at the bottom of the Indian caste hierarchy (Ahmed, S..et al., 2020). The Scheduled Castes are those communities that are scheduled in accordance with clause (1) of article 341 of the Constitution. Scheduled Castes are relatively disadvantaged in various areas such as occupational, educational, social, cultural, religious, and political aspects (Daripa, 2019). As per the 2011 Census, the Scheduled Caste population in India accounts for 16.63% (201,378,372) of the total Indian population (1,210,854,977), with 51.41% being male and 48.59% being female. In Bihar, the Scheduled Caste population makes up 15.91% (165,673,325) of the total population of Bihar (1,040,994,452), with 51.95% being male and 48.05% being female.The Gaya district is divided into four sub-divisions: Gaya Sadar, Sherghati, Nimchak Bathani, and Tekari.The district has 24 Community Development Blocks. They have a total population of more than 4 million and a total 2682 number of villages in the Gaya district. According to the 2011 census, 13.24% of the total population in the Gaya district lives in urban areas, while 86.76% of the population lives in rural areas. The scheduled caste population of Gaya district is 32.91% (1,334,351) of total population (4,391,418) of Gaya district. The total number of Scheduled Castes in Gaya district as per the census of 2011 is 1.33 million, which is nearly 33 percent population of the district. For urban and rural areas, the respective proportion of scheduled castes to the district's total population comes out to be 11.99 and 33.19 percent, respectively.

The five most prominent Scheduled caste communities are (i) Bhuiya (458,319), (ii) Dusadh, Dhari, Dharhi (192,554) (iii) Chamar, Mochi (171,904) (iv) Pasi (98,649) (v) Musahar (49,672), while Bhuiya constituted the maximum proportion of Scheduled Castes population the percentages being 44.5 Dusadh and Chamar though numerically second and third in order comprised only 18.7 and 16.7 percent of the Scheduled Caste population in the district. Pasi and Musahar are much less in number than the other three Scheduled Caste mentioned above, with only 9.6 and 4.8 percent of the total Scheduled Caste population of the district. The remaining Scheduled Castes were comparatively significantly less in number than the five SCs described above. The other Scheduled caste are below 1.0 percent except for Rajbhar and Dhobi, whose percentages were 2.2 and 1.8, respectively, as stated in note based on 2001 census in 2011 census report of Bihar state.Empirical studies find that all sections of society doesn't get equal growth benefits in India (Mosse, D.,2018). A report titled "Human Development in India: Challenges for a Society in Transition" states that Adivasis and Dalits are at the bottom of most development indicators. There are several factors, as identified by numerous studies and literature, that

can be attributed to the socio-economic backwardness among Scheduled Castes (Chouhan, P.,2013). The backwardness "can be attributed to historical reasons and to caste discrimination, tribal isolation, low levels of technology in farming or animal husbandry and the lack of adequate levels of literacy" (Sunderaj V .,2000). They are educationally backward due to poverty (Goswami, N., & Sarma, C. , 2020), social and physical segregation (Das, B.,1986)) and lack of easy access to school. Geographic proximity can be a significant factor in the socio-economic backwardness of Scheduled Castes, as public services and facilities may not reach remote districts. The factors like "access to basic amenities such as housing, drinking water, sanitation, health, infrastructure, education on the one hand, and public distribution of food grains, development schemes, credit facilities etc. on the other hand" are responsible for socially excluded communities, as the study were dealing with social exclusion (Marjit et. al., 2010).

Objective:-To examine the Socio-Economic status of Schedule Caste in Bihar with special reference to Gaya District.

Methodology:-In this paper methodology is descriptive and is mainly based on secondary sources of data the latest data available from the census of India 2001 &2011. The data regarding education and workforce are typically obtained from the Primary Census Abstract (PCA), which is a compilation of demographic data collected during the census. The data had been analyzed through descriptive statistics.

Result and Discussion:-According to the Census 2011, In the Gaya district total population of Schedule Caste is 1.33 million which has increased by .3 million from 2001 of 94 percent of population lives in rural area. The total population age among 0-6 is 279,016 of which 95 percent of population lives in rural area of Gaya district. The data (Table 1) state clearly that the large population of Scheduled Caste lives in rural area of Gaya district.

Table 1: Household and Population of Scheduled Caste in Gaya District, 2011

Total/ Rural/ Urban	Total Household of SC	Total population (including institutional and houseless population)			Population in the age-group 0-6		
		Pearson	Male	Female	Pearson	Male	Female
Total	225,866	1,334,351	683,943	650,408	278,016	139,599	138,417
Rural	214,645	1,264,597	647,664	264,857	264,857	132,878	131,979
Urban	11,221	69,754	36,279	13,159	13,159	6,721	6,438

Source: Census, 2011

Table 2: Households by Ownership Status and by Number of Dwelling rooms occupied in the District by Scheduled Caste, 2011

Ownership status	Number of dwelling rooms	Number of household					
		Total			Scheduled Caste		
		Total	Rural	Urban	Total	Rural	Urban
Owned	No exclusive room	9,408	8,446	962	2568	2445	123
	One room	126,194	115287	10907	64420	61077	3343
	Two room	204,083	184,967	19,116	84,502	80,867	3,635
	Three room	116,313	101,884	14,429	35,186	33,331	1,855
	3+ rooms	209,675	183,246	26,429	43,260	40,682	2,578
	Total	665,673	593,830	71843	229,936	218,402	11,534
Rented	No exclusive room	362	175	187	48	39	9
	One room	5807	1,693	4,114	742	367	375
	Two room	7278	2,020	5,258	874	479	395
	Three room	2826	676	2,150	245	128	117
	3+ rooms	2481	925	1,556	252	135	117
	Total	18,754	5489	13,265	2161	1148	1013
Others	No exclusive room	296	243	53	86	65	21
	One room	2203	1503	700	1,038	775	263
	Two room	1887	964	923	592	365	227
	Three room	754	487	267	225	190	35
	3+ rooms	938	678	260	234	178	56
	Total	6078	3875	2203	2175	1573	602
		Total			Scheduled Caste		
		Total	Rural	Urban	Total	Rural	Urban
Total	No exclusive room	10,066	8,864	1,202	2,702	2,549	153
	One room	134,204	118,483	15,721	66,200	62,219	3,981
	Two room	213,248	187,951	25,297	85,968	81,711	4,257
	Three room	119,893	103,047	16,846	35,656	33,649	2,007
	3+ rooms	213,094	184,849	28,245	43,746	40,995	2,751
Total Household		690,505	603,194	87,311	234,272	221,123	13,149

The households by ownership status and by number of dwelling rooms occupied in the district by scheduled caste (Table 2) is around 234,272 out of 690,505 household in Gaya district. The highest number of rooms in scheduled caste population in a house is 2 room but in overall population its more than 3 rooms. The household living in rural population is in equal proportion to scheduled caste. In total population on the second large population has two rooms while scheduled caste has 1 room only. The Total household in Gaya District owned is 665,673 in number, 18,754 household reside in rented house and 6078 live other kind of accommodation on the basis of ownership .The 229,936 household of scheduled caste have owned house, 2161 have rented house and 2175 lives others kind of ownership house. The number of scheduled castes literates 477,478, of which 294,028 are male, and 183,450 are females, and the number of illiterates scheduled castes is 856,873 of which 389,915 are male 466,958 are female (Table 4). In percentage, the total literacy rate among Scheduled Caste is 44.51 percent, of which males and females are 53.36 percent and 35.12 percent, respectively.

Table 3: Literates and illiterates population of Scheduled Caste in Gaya District, 2011.

Total/Rural/Urban	Literates			Illiterates		
	Pearson	Male	Female	Pearson	Male	Female
Total	477,478	294,028	183,450	856,873	389,915	466,958
Rural	445,012	274,707	170,305	819,585	372,957	446,628
Urban	32,466	19,321	13,145	37,288	16,958	20,330

Source: Census, 2011

The number of scheduled castes comes under worker are 555,751, of which 332,277are male, and 220,474 are females, and the number of non-worker scheduled castes is 781,600 of which 351,666 are male 429,934 are female (Table 4). The large proportion of worker and non-worker belongs to the rural area respectively.

Table 4: Total worker and Non-worker of Scheduled Caste in Gaya District, 2011.

Total/Rural/ Urban	Total Worker			Total Non-Worker		
	Pearson	Male	Female	Pearson	Male	Female
Total	555,751	332,277	220,474	781,600	351,666	429,934
Rural	530,128	316,037	214,091	734,469	331,627	402,842
Urban	22,623	16,240	6,383	47,131	20,039	27,092

Source: Census, 2011

Table 5: Different Category of worker from Schedule Caste in Gaya District, 2011.

Total/Rural/Urban	Main Worker		
	Pearson	Male	Female
Total	555,751	332,277	220,474
Rural	530,128	316,037	214,091
Urban	22,623	16,240	6,383
Total/Rural/Urban	Cultivator		
	Pearson	Male	Female
Total	31,289	22,698	8,591
Rural	31,026	22,491	8,535
Urban	263	207	56
Total/Rural/Urban	Agriculture Laborers		
	Pearson	Male	Female
Total	210,927	138,612	72,315
Rural	207,409	135,883	71,526
Urban	3,518	2,729	789
Total/Rural/Urban	Household Industry workers		
	Pearson	Male	Female
Total	8085	4263	3822
Rural	7067	3590	3477
Urban	1018	673	345

Total/Rural/Urban	Others workers		
	Pearson	Male	Female
Total	48,887	35,765	13,122
Rural	39,436	28,136	11,300
Urban	9,451	7,629	1,822
Total/Rural/Urban	Marginal workers		
	Pearson	Male	Female
Total	253,563	130,939	122,624
Rural	245,190	125,937	119,253
Urban	8,373	8,373	3,371

Source: Census, 2011

The Scheduled Caste population comes under main worker is 555,751 of which 332,277 are male and 220,474 are from female (Table 5). The Scheduled Caste Worker under different category of work like Cultivator, Agriculture Laborers, Industry Worker and other workers. The highest number of worker comes under the agriculture laborers which have 210,927 and lowest number of worker comes under industrial worker that is 8085.The scheduled caste population with 31,289 people involves in Cultivator and 48,887 numbers of people involves in other kind of works. The 253,563 number of Scheduled Caste people belongs to Marginal worker category of which 130,939 is male and 122,624 are female. From the given data it state that large number of population belongs from the rural area and proportion of male and female workers are nearly same or we say the male concentration is slightly above from the female workers.

Conclusion:-The above study indicates that Scheduled Caste have development deficits when compared with over-all people in all parameter of Socio-Economic ConditionThe main reasons for the socio-economic backwardness of Scheduled Castes are the fact that the majority of them are landless, have very few productive assets, and often face a lack of sustainable employment opportunities. These factors make it difficult for them to improve their economic status and lead to persistent poverty and underdevelopment in their communities. The share of households having good housing condition is low in scheduled caste as compare to other population. It is true that gender disparity and low levels of education and literacy are among the factors that contribute to unemployment and wage inequality for women belonging to scheduled castes. Discrimination and bias in hiring practices and promotion opportunities also play a significant role. Additionally, lack of access to resources, social capital, and networks can further hinder their employment prospects.. Education is crucial parameter of social and human development. The Scheduled Castes are backward at education in Gaya district also. In percentage, the total literacy rate among Scheduled Caste is 44.51 percent, of which males and females are 53.36 percent and 35.12 percent, respectively. Thus, education is often seen as a means to break the cycle of poverty and improve the socio-economic status of marginalized communities such as the scheduled castes in India. Education can provide opportunities for better jobs and income, as well as improve health outcomes and overall quality of life. It is also a means to empower individuals and communities, allowing them to demand their rights and participate in the decision-making process.

****

References

1. Ahmad, F., Khatoon, S., Ahmad, M., Alam, M. M., Imam, H., Parveen, S., & Alam, M. I. (2021). Socio-demographic and Health Profile of Schedule Castes of Patna, Vaishali and Nalanda Bihar, India. *International Journal of Preventive, Curative & Community Medicine (E-ISSN: 2454-325X)*, *7*(1), 11-19.
2. VirMahajan,D.(2021).Analyzing The Socio-Economic Conditions Of Scheduled Castes Living In Haryana. *Ilkogretim Online*, *20*(3).
3. Goswami, N., & Sarma, C. Caste, Gender and Education among the Harijans of Guwahati City. *PalArch's Journal of Archaeology of Egypt/Egyptology*, *17*(7), 14837-14847.
4. Ahmed, S., Rifaqat, K. P., Ahmed, S., Qayyum, Z., Raheem, A., & Parveen, S. (2020). A Socio Demographic Study of Rural Scheduled Castes of Aligarh, Uttar Pradesh, India. *Hippocratic Journal of Unani Medicine*, *15*(1), 33-42.
5. Daripa, S. K. (2019). Socio economic status of the tribals of Purulia district in the post colonial period. *International Journal of Research in Social Sciences*, *8*(2), 739-745.
6. Mosse, D. (2018). Caste and development: Contemporary perspectives on a structure of discrimination and advantage. *World development*, *110*, 422-436.
7. Chouhan, P. (2013). A study on literacy and educational attainment of scheduled castes population in Maldah District of West Bengal, India. *Journal of Geography and Regional Planning*, *6*(1), 19.
8. Mandal, B., & Marjit, S. (2010). Corruption and wage inequality?. *International Review of Economics & Finance*, *19*(1), 166-172.
9. Sunderaj V (2000). Scheduled Castes of Rural India: Problems and Prospects. A.P.H. Publishing Corporation. New Delhi. pp. 134-135.
10. Das, B. (1986). A glimpse of Scheduled Caste and their Socio-economic Development of Assam. New Delhi: Omsons Publication
11. Census of India,2011& 2001.

A Comparison of Socio-Economic Profile of Tharu with other Tribes in Uttar Pradesh Using Census Data

Dr.Anand Sugandhe
Assistant Professor
Department of Economics, Indira Gandhi National Tribal University Amarkantak (M.P)

Bhanu Pratap Pandey
Research Scholar
Department of Economics, Indira Gandhi National Tribal Univers ty Amarkantak (M.P.)

This study aims to compare the demographic and socio-economic status of the Tharu tribe with other tribes in Uttar Pradesh. The study specifically focuses on the population, sex, and child sex ratios, literacy rate, and occupational status among the tribal communities of Uttar Pradesh. The study is based on secondary data (census of India). Percentage analysis, literacy rate, gender literacy gap, workforce gap ratio, etc., are calculated using Excel software. The findings of this study reveal that the proportion of the Tharu tribe has been significantly reduced from 77.4 percent to 9.28 percent from 2001 to 2011. The study has also shown that Tharu's status is better than that of other tribes in terms of sex ratio and child sex ratio. Even it is much better than the sex ratio and child sex ratio of the general population of the state and the nation. The study also found that the gender literacy gap is found to be higher in the Tharu tribe as compared to other tribes. Regarding occupation, the Tharu tribe is recorded second highest population after the Bhotia tribe in the main worker category. However, the socio-economic condition of tribes in Uttar Pradesh seems to be low compared to the general population, which needs to be resolved with effective government schemes.

Keywords: *Tharu Tribe, Socio-Economic Condition, Schedule Tribe, Uttar Pradesh, Census of India.*

Introduction-The Tharu tribe is one of the oldest tribes of Uttar Pradesh that received recognition and were classified as a scheduled tribe in 1967. They mainly reside in the districts of Lakhimpur Kheri, Bahraich, Balrampur, Gorakhpur, and Pilibhit in Uttar Pradesh. They are primarily located in the bordering regions of Nepal, Uttarakhand, and Bihar. The Tharu communities are concentrated in the Terai lowlands and the Shivaliks or lower Himalayas, which run parallel to the lower Himalayan ranges. The Tharu people are an umbrella ethnic group comprising various historically endogamous groups who speak distinct dialects and have diverse socio-cultural characteristics (Gurung, 2022). The tribes reside mainly in the eastern and northern regions of Uttar Pradesh. Based on the 2011 census, the tribal population of this group is around 1.134 million, which is greater than the indigenous population of other states like Uttarakhand (229,000), Tamil Nadu (795,000), Sikkim (206,000), Mizoram (1.036 million), Kerala 485,000), Himachal Pradesh (392,000), Goa (149,000), Arunachal Pradesh (952,000), as well as all union territories of India.

Table 1: List of Tribes with Concentrated Districts in Uttar Pradesh, 2011

SI. No.	Tribes in Uttar Pradesh	Found in the districts of Uttar Pradesh
1	Agariya	Sonbhadra
2	Baiga	Sonbhadra
3	Bhotia	Bahraich, Gonda, Lakhimpur Kheri, Lucknow, Barabanki, Kanpur Nagar, Kanpur Dehat
4	Bhuiya, Bhuinya	Sonbhadra
5	Buksa	Bijnor
6	Chero	Sonbhadra and Varanasi
7	Gond, Dhuria, Nayak, Ojha, Pathari, Raj Gond	Mehrajganj, Sidharth Nagar, Basti, Gorakhpur, Deoria, Mau, Azamgarh, Jaunpur, Balia, Gazipur, Varanasi, Mirzapur and Sonbhadra
8	Jaunsari	Lalitpur
9	Kharwar, Khairwar	Deoria, Balia, Ghazipur, Varanasi and Sonbhadra
10	Pankha, Panika	Sonbhadra and Mirzapur
11	Parahiya	Sonbhadra
12	Patari	Sonbhadra
13	Raji	-
14	Sahariya	Sonbhadra
15	Tharu	Balrampur, Pilibhit, Lakhimpur, Bahraich, Gorakhpur

Source: State Primary Census Abstract for Individual Tribes, Census of India, 2011.

The proportion of the tribal population in Uttar Pradesh is only 0.57 percent, which is relatively low. Furthermore, according to Verma (2013), there are still many tribes that are not officially recognized, and their existence is not recorded in government documents in Uttar Pradesh. These tribes are still struggling to establish their identity in Uttar Pradesh. The tribes of Uttar Pradesh are deprived of quality education, occupational status, and standard of living. These tribes also lack basic facilities such as electricity, drinking water facilities within the premises, latrine facilities, etc., even after formulating and implementing different governmental provisions (Kharwar, Kumar, and Kumar, 2021). Employment is another prominent issue in tribal areas of Uttar Pradesh. Due to the lack of employment opportunities, the people migrated to other cities for work; they worked as casual laborers at minimal remuneration (Sharma, 2020).Table 1 shows the concentrated districts of different tribal communities in Uttar Pradesh. The Tharu tribe is mainly located in the Balrampur, Pilibhit, Lakhimpur Kheri, Bahraich, and Gorakhpur districts of Uttar Pradesh. In the district of Sonbhadra, newly added tribal communities.

2.Demography of Tribes -Demography is the scientific study of the human population. The demography shows a social status of a community. The Tharu tribe is one of the oldest tribes of Uttar Pradesh, whose population was highest till the census 2001, but now it is the third most populous tribe in Uttar Pradesh. In 1967, the five tribes, namely Tharu, Bhotia, Buksa, Raji, and Jaunsari, were notified and acquired the status of the scheduled tribe as per Constitution (Scheduled Tribes) (Uttar Pradesh) Order, 1967. In 2001, the Tharu tribe had the highest population proportion of 77.4 percent among the other tribes, which was reduced to 8.08 percent in 2011 because a majority of Tharu Tribes became part of Uttarakhand after its geographical division from Uttar Pradesh in 2000. The number of scheduled tribal communities increased from five to fifteen from 2001 to 2011. It happened due to the transformation of some scheduled caste communities into scheduled tribe communities with the scheduled caste and scheduled tribe (Amendment) Act 2002.As per table 2, Gond and its sub-tribes cover a proportion of more than 50 percent of the total tribal population of Uttar Pradesh. The six tribes, namely, Bhotia (0.46 percent), Jaunsari (0.33 percent), Buksa (0.42 percent), Raji (0.11 percent), Parahiya (0.08 percent), and Patari (0.01 percent) collectively cover a proportion less than 2 percent of the total tribal population of Uttar Pradesh. The tribes such as Pankha, Panika (2.19 percent), Chero (1.38 percent), Bhuiya Bhuinya (3.72 percent), Baiga (2.65 percent), and Agariya (1.53 percent) collectively cover a proportion of 11.47 percent, and individually each tribal population is less than 5 percent of the total tribal population. The Tharu tribe is the third-highest populous tribe of Uttar Pradesh after Gond and Kharwar (see table 2).

Table 2: Population Distribution among Tribes of Uttar Pradesh, Census 2011

SI. No.	Tribes in Uttar Pradesh	Population	Population Percentage	Population aged 0-6 Years	Percentage
1	Agariya	17376	1.53	4159	2.01
2	Baiga	30006	2.65	6799	3.29
3	Bhotia	5196	0.46	877	0.42
4	Bhuiya, Bhuinya	42227	3.72	3112	1.51
5	Buksa	4710	0.42	797	0.39
6	Chero	15599	1.38	9162	4.44
7	Gond, Dhuria, Nayak, Ojha, Pathari, Raj Gond	569035	50.17	98814	47.84
8	Jaunsari	3720	0.33	739	0.36
9	Kharwar, Khairwar	160676	14.17	29220	14.15
10	Pankha, Panika	24862	2.19	4672	2.26
11	Parahiya	901	0.08	215	0.10
12	Patari	132	0.01	24	0.01
13	Raji	1295	0.11	246	0.12
14	Sahariya	70634	6.23	16815	8.14
15	Tharu	105291	9.28	18170	8.80
16	Others	82613	7.28	12725	6.16
17	All Tribes	1134273	100.00	206546	100.00

Source: State Primary Census Abstract for Individual Scheduled Tribes, Census of India, 2011

2.1. Sex Ratio and Child Sex Ratio of Tribes-The sex ratio is also known as the gender ratio. It is a vital indicator of the social status of any community, and that shows the number of females per 1000 male population in an area. A sex ratio also shows the status of gender equality based on the male and female population. Based on this approach, the sex ratio is calculated for the tribes of Uttar Pradesh, shown in table 3.As per table 3, the Patari tribe has the highest sex ratio of 1095, followed by the Parahiya (976), Gond (966), Bhuiya (965), and Tharu (961). However, the population of the Patari tribe is the least among the tribes of Uttar Pradesh. The overall sex ratio of scheduled tribes in Uttar Pradesh is 952, according to the 2011 census.

Table 3: Sex Ratio among Tribes of Uttar Pradesh, Census 2011

Sr. No.	Tribes in Uttar Pradesh	Male	Female	Sex ratio
1	Agariya	8939	8437	944
2	Baiga	15572	14434	927
3	Bhotia	2764	2432	880
4	Bhuiya, Bhuinya	7940	7659	965
5	Buksa	2472	2238	905
6	Chero	21807	20420	936
7	Gond, Dhuria, Nayak, Ojha, Pathari, Raj Gond	289499	279536	966
8	Jaunsari	1939	1781	919
9	Kharwar, Khairwar	82223	78053	945
10	Pankha, Panika	12851	12011	935
11	Parahiya	456	445	976
12	Patari	63	69	1095
13	Raji	698	597	855
14	Sahariya	36307	34327	945
15	Tharu	53687	51604	961
16	Other Tribes	43866	39147	892
17	All Tribes	581083	553190	952

Source: State Primary Census Abstract for Individual Tribes, Census of India, 2011.

Table 3 shows that the sex ratio of tribes other than Tharu, Bhuiya, Gond, Parahiya, and Patari is lower than the overall sex ratio of tribes in Uttar Pradesh. The sex ratio of the Tharu tribe is better than the sex ratio of tribes such as Bhotia, Jaunsari, Kharwar, Buksa, Pankha, Raji, Chero, Sahariya, Baiga, Agariya and lower than the remaining four tribes. The sex ratio of the Tharu tribe is nine points higher than that of the overall tribal sex ratio in Uttar Pradesh.The Tharu tribe is one of the tribes amongst the tribes of Uttar Pradesh, having a sex ratio of 961, which is 49 points higher than the sex ratio at the state level and 34 points higher than the sex ratio at the national level. Like the sex ratio, the child sex

ratio is also an essential indicator of social development in an area. It is calculated by the number of females aged 0-6 years per 1000 males in the same age group.

Table 4: Child Sex-Ratio Amongst Tribes of Uttar Pradesh, Census 2011

SI. No.	Tribes in Uttar Pradesh	Male	Female	Child Sex-ratio
1	Agariya	2129	2030	953
2	Baiga	3498	3301	944
3	Bhotia	473	404	854
4	Bhuiya, Bhuinya	1553	1559	1004
5	Buksa	408	389	953
6	Chero	4733	4429	936
7	Gond, Dhuria, Nayak, Ojha, Pathari, Raj Gond	50998	47816	938
8	Jaunsari	376	363	965
9	Kharwar, Khair-war	15046	14174	942
10	Pankha, Panika	2354	2318	985
11	Parahiya	112	103	920
12	Patari	11	13	1182
13	Raji	123	123	1000
14	Sahariya	8599	8216	955
15	Tharu	9276	8894	959
16	Other Tribes	6562	6163	939
17	All Tribes	10251	100295	944

Source: State Primary Census Abstract for Individual Tribes, Census of India, 2011.

As per table 4, the child sex ratio of the Patari tribe (1182) is the highest, and Bhotia has the lowest child sex ratio. The child sex ratio of the Tharu tribe is 959, which is better than the child sex ratio of tribes such as Bhotia, Gond, Kharwar, Buksa, Chero, Parahiya, Sahariya, Baiga, Agariya, and Other generic tribes and lower than the remaining tribal communities.

Educational Status of Tribal Communities

Education is also a crucial indicator of the socio-economic condition of a household. A good education leads to skills that result in promising opportunities in the job market. Education leads to the overall development of an individual, including better comprehension of their social, political, and cultural environment (Panduranga et al., 2014).

3.1. Literacy Rate of Tribes

The literacy rate is calculated by the ratio of the literate population and total population minus the population of age group 0-6 years and multiplied by 100. Based on the above formula, the literacy rate is calculated for each tribal community of Uttar Pradesh, shown in figure 1.

Figure 1: Literacy rate of tribes of Uttar Pradesh, 2011

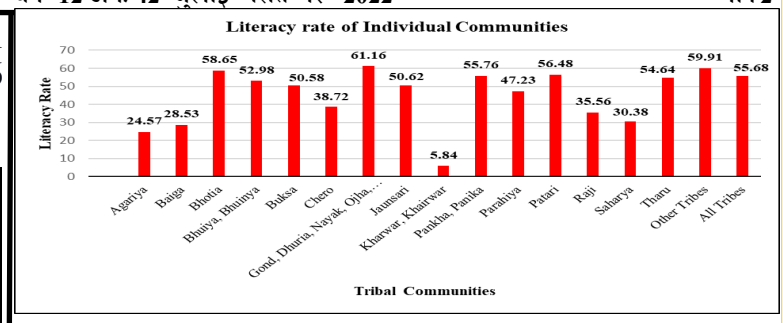

Source: State Primary Census Abstract for Individual Tribes, Census of India, 2011

The literacy rate of the Tharu tribe is 54.64 percent, which is lower than the literacy among Gond. The literacy rate of the general population of Uttar Pradesh is 69.72 percent, in which male and female literacy rates are 79.24 percent and 59.26 percent, respectively. However, the literacy rate of the tribal population of Uttar Pradesh is 55.68 percent, of which males and females constitute 67.08 percent and 43.72 percent, respectively. The difference between the literacy rate of the tribal population and the general population of Uttar Pradesh is 14.04. The difference between males and females is 12.16 percent and 15.54 percent, respectively. So, the literacy rate of the Tharu tribe is still lower among the tribal communities of Uttar Pradesh and the general population as a whole.

Occupational Structure of Tribes

Occupation depends on the education and skills of an individual. As stated earlier, education plays a significant role in getting better job opportunities, resulting in a high-income level and better socio-economic conditions.

4.1 Total Workers and Non-Workers among Tribes-

The census of India has divided the population into workers and non-workers. Table 5 shows that over 55 percent of the tribal population is recorded under non-workers in Uttar Pradesh.

Table 5: Total Workers and Non-Workers among Tribes of Uttar Pradesh, Census 2011

SI. No.	Tribes in Uttar Pradesh	Total work-er	Popula-tion Percent-age	Non-Work-er	Popula-tion Per-centage	Total
1	Agariya	8035	46.24	9,341	53.76	17376
2	Baiga	13537	45.11	16,469	54.89	30006
3	Bhotia	1615	31.08	3,581	68.92	5196
4	Bhuiya, Bhuinya	18475	43.75	23,752	56.25	42227
5	Buksa	1767	37.52	2,943	62.48	4710
6	Chero	6619	42.43	8,980	57.57	15599
7	Gond, Dhuria, Nayak, Ojha, Pathari, Raj Gond	195299	34.32	373,736	65.68	569035
8	Jaunsari	1221	32.82	2,499	67.18	3720
9	Kharwar, Khair-war	60164	37.44	100,512	62.56	160676
10	Pankha, Panika	10084	40.56	14,778	59.44	24862
11	Parahiya	395	43.84	506	56.16	901
12	Patari	72	54.55	60	45.45	132
13	Raji	534	41.24	761	58.76	1295
14	Sahariya	31696	44.87	38,938	55.13	70634
15	Tharu	38851	36.90	66,440	63.10	105291
16	Other Tribes	31288	37.87	51325	62.13	82613
17	All Tribes	419652	37.00	714621	63.00	1134273

Source: State Primary Census Abstract for Individual Tribes, Census of India, 2011.

More specifically, in Bhotia, Jaunsari, and Gond (sub-tribes) communities, the proportion of non-workers is more than 65 percent. In Tharu, Buksa, and Kharwar communities, the proportion of non-workers is between 60 percent to 65 percent. In Parahiya, Bhuiya, Chero, Raji, Sahariya, and Pankha tribal communities, the proportion of the same varies between 55 percent to 60 percent. There are some tribes, such as Baiga, Agariya, and Patari, whose proportion in the non-worker category is less than 55 percent. More specifically, the Patari tribe constitutes only 45 percent of the non-working population category out of the total tribal populationAccording to the primary census abstract of Uttar Pradesh, census of India, 2011, the percentage of the working population of the Tharu tribe is about 4 percent higher, and the percentage of the non-working population is 3.96 percent lower than the proportion of the overall working population of Uttar Pradesh.

4.2 Analysis of Main and Marginal Workers among Tribes-Out of the total number of tribal workers, on average, 51 percent of tribes are main workers, and about 49 percent are marginal workers (figure 2). The percentage of main workers is recorded highest for the Bhotia tribe, constituted 66.13 percent, followed by Tharu (65.21 percent), Sahariya, Jaunsari, and Raji tribes in Uttar Pradesh. The proportion of main workers for all tribes was recorded as 51 percent in 2011. It means that the percentage of Tharu main workers is about 14 percent higher than the overall proportion of tribal main workers of Uttar Pradesh.

According to the 2011 census, the proportion of general main and marginal workers are 67.81 percent and 32.18 percent, respectively. The proportion of main general workers of Uttar Pradesh is 2.60 percent higher than the proportion of Tharu main workers. Similarly, the proportion of general marginal workers is 2.61 percent less than the Tharu marginal workers of Uttar Pradesh (see figure 2).

Figure 2: The proportion of Main and Marginal Workers in the Tribal Communities of Uttar Pradesh

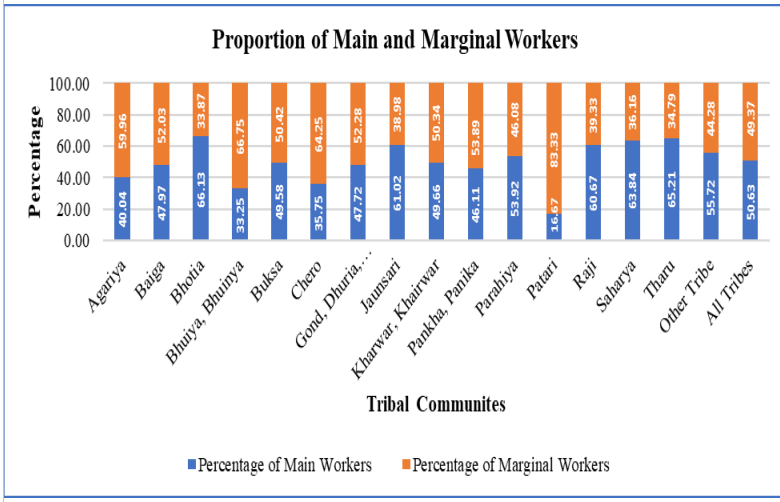

Source: State Primary Census Abstract for Individual Tribes, Census of India, 2011.

4.3. Gender Workforce Gap -The gender workforce gap is a crucial tool to measure the disparity between males and females in the total workforce. The difference in the number of males to the number of females in the total workforce calculates the gender workforce gap. The gender workforce gap ratio has also been calculated. It is the ratio of the absolute difference between males and females to the total workforce of the community. This ratio is often expressed as a percentage and represents the magnitude of the gender gap in the workforce. A higher ratio indicates a larger gender gap, while a lower ratio indicates a smaller gender gap.Figure 3 shows the gender gap ratio among the tribal communities of Uttar Pradesh. The findings reveal that the gender gap ratio is observed to be highest in the Bhotia tribe (56.04 percent) and lowest in the Bhuiya tribe (5.82). The gender gap ratio of all tribes of Uttar Pradesh is 28.83, and for the Tharu tribe, it is recorded as 27.37 percent, which is lower than the tribal state's ratio. After comparing the gender gap ratio of the Tharu tribe with other tribes of Uttar Pradesh, It is analyzed that the ratio of the Tharu tribe is greater than the ratio of Agaria, Baiga, Bhuiya, Pankha, Parahiya, Patari, and Sahariya tribes. On the other hand, the gender gap ratio of the Tharu tribe is lesser than the tribes such as Bhotia, Buksa, Chero, Gond, Jaunsari, Kharwar, Raji, and others tribes. The interesting finding of this section suggests that the status of the Tharu tribe is better than the other four old tribes (Bhotia, Jaunsari, Buksa, and Raji) in terms of the gender gap ratio in Uttar Pradesh.

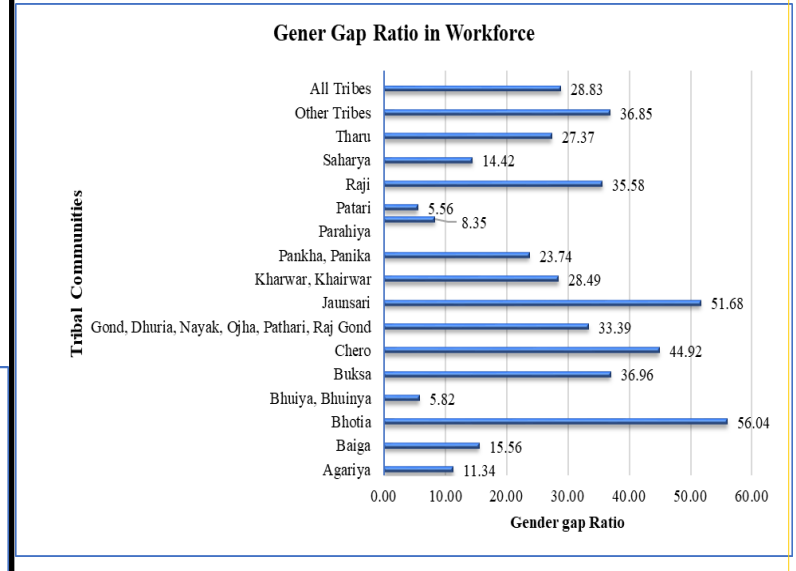

Fig*Source: State Primary Census Abstract for Individual Tribes, Census of India, 2011.*

Conclusion-This study set out to compare the socio-economic status of the Tharu tribe to the other tribes in Uttar Pradesh. The results of this investigation show that the Tharu population proportion was recorded as highest till 2001 and has been significantly reduced in the decade of 2001-2011. It was because of the geographical division of Uttar Pradesh and Uttarakhand and the addition

of 10 communities that were transferred from SC to ST social group category under the Scheduled Castes and Scheduled Tribes Orders (Amendment) Act, 2002. The Tharu's sex ratio is also recorded as higher than the general population's sex ratio of Uttar Pradesh. The analysis shows that gender discrimination in tribal communities of Uttar Pradesh seems to be lesser than in the general population. The child sex ratio of the Tharu tribe is better than the child sex ratio of nine tribes but poorer than five tribes. The study also shows that the sex ratio and child sex ratio of the Tharu tribe is approximately the same, which indicates that there is no significant difference in gender discrimination based on the old and new generation. the literacy rate of the Tharu tribe is more impressive than others, except for the Bhotia tribe. Furthermore, it concluded that the literacy gap of the Tharu tribe is poor among all the old tribes and the newly added six tribes. Regarding the occupational structure of tribes, the proportion of Tharu workers is approximately equal to that of overall tribal workers in Uttar Pradesh. The proportion of Tharu workers is higher than the Bhotia, Jaunsari, and Gond tribes but lower than the remaining tribes and even lower than the older tribes, such as Buksa and Raji of Uttar Pradesh. Based on main and marginal workers, the proportion of Tharu tribes is second highest among the tribal groups, which indicates that they are engaged in economic activities for more than six months in a year compared to other tribes.The status of gender gap ratio in the workforce was recorded as highest for the Bhotia tribe and lowest for the Bhuiya tribe. The gender gap ratio of the Tharu tribe has been improved as compared to the older tribes (Buksa, Bhotia, Jaunsari, and Raji) and newly added tribes (Chero, Gond, Kharwar, and other tribes) of Uttar Pradesh. The evidence from the study suggests that the socio-economic condition of all tribes is unsatisfactory and needs proper attention regarding specific developmental policies for their socio-economic enhancement.

****

References

1. Gurung, A. (2022). Tharus, An Ethnic Indigenous People of Nepal. Himalaya Magazine. Retrieved January 17, 2023, from https://himalayanmagazine.com/people-andculture/tharus-an-ethnic-indigenous-people-of-nepal/.
2. Kharwar, P. S., Kumar, A., & Kumar, A. Determinants of School Education of Scheduled Tribes in Eastern Uttar Pradesh with Special Reference to their Socio-economic Status. *Learning Community-An International Journal of Educational and Social Development*, 12(2), 73-93.
3. Kumari, J., Dubey, R., Bose, D. K., & Gupta, B. (2018). A study on socio- economic condition of Tharu tribes in Bahraich district of Uttar Pradesh in India. *Journal of Applied and Natural Science*, 10(3), 939-944.
4. Office of the Registrar General & Census Commissioner, I. (n.d.). Population Census 2011. Table A-11: State primary census abstract (PCA) for individual scheduled tribes, Uttar Pradesh - 2011. Retrieved from https://censusindia.gov.in/nada/index.php/catalog/42948
5. Panduranga, R., and Honnurswamy, N. (2014). International Journal of Social Science and Humanities Research, 2(4), 245-252.
6. Sharma, S. (2020). Sonebhadra: Tribal Groups Lose Livelihood, Government Remains Apathetic. Retrieved from News Click: https://www.newsclick.in/sonbhadra-tribal-groups-lose-livelihood-govt-spathetic
7. Verma, A. K. (2013). Tribal 'Annihilation'and 'Upsurge' in Uttar Pradesh. Economic and Political Weekly, 48(51), 52-59.

Key Informant Relationship with Ethnographic Fieldwork on Folk Art and Craft Clusters in Assa

Dr. Drabita Dutta
ICSSR PDF Fellow
Department of Anthropology
University of Delhi Delhi-110007 Mo.- 9773603587

Abstract-*This research article has considered the broad usage of the key informant techniques under qualitative research methodology in fieldwork data collection. Key informant interview is an important part of ethnographic research. Anthropologists carry out ethnographic research in the field regularly to look for such cultural specialists to increase a better understanding of key problems and answer questions they and others could not answer. While an Anthropologist sets up a rapport with a specific individual in a community and initiates to rely more on him or her for information than other informants, though these community specialists are termed, key informants***.** *Nevertheless, anthropologists should not blindly follow them only cross-verification and cross-checking is an important element to identification and selection, as well as their viewpoints on what is essential and what would function best for a community. The key informants are most knowledgeable related to their own spear of work, interest, and other aspects of culture therefore they provide us with comprehensive knowledge about the topic of the community and cannot be determined anywhere else as a whole like their educational, health-related issues, living patterns and impact of modernization on their occupations, etc. Meanwhile, this paper reflects on the distinctive role of the key informant technique and also observes this tool's latent input toward rural craft industrial studies.*

Keywords - Ethnographic research, key informant, rural handicrafts studies, and qualitative research methodology, etc.

1. Introduction-Key informants can be exceptional assets in the field, allowing the ethnographer to determine the meanings of actions and practice the researcher cannot determine anywhere else. In ethnographic research, where the role of the key informant has been studied and developed the most, key informants often act as gatekeepers regulating access to people and information and cultural specialists explaining culture to an outsider (Bernard, 1995a). To fulfill these tasks, Tremblay (1957) recommended that key informants have the following criteria: occupy formal positions in the community, have knowledge relevant to the research, be willing to share this knowledge, communicate well, and be impartial or able to reflect on their own biases. Meanwhile, the researcher can verify the information they acquired from other respondents, contextualize it, and assess it for accuracy. A key informant is a reliable guide and unbiased friend who directs the anthropologist where to go, what to look for, and with whom to speak. It is also necessary that key informants assist researchers with closely observing others and reporting those observations to the researchers, especially in situations where the researcher is not permitted to be there or when the researcher's existence could amend the respondents' performance.

Key informant interviews provide the chance to study diverse viewpoints and (craft community) ties about a particular dimension (Kennedy et al., 2008:400-419). Having a key informant in the field is similar to having a research ally. The relationships can be cultivated and grown into something extremely rewarding. Inside any community or culture, a key informant not only has to be knowledgeable but anthropologist whether his/she is able to tell the anthropologist about the social and cultural reality. The element of trust is significant in the relationship between key respondents and anthropologist's one of the methodological challenges to anthropologists. According to Tremblay words, "*The term* key informant *seems to come originally from ethnographic research and is used widely in cultural anthropology. In fact, in its early use in 1939, it was known as '*the anthropological technique*'* (Tremblay, 1982: 688)." Anthropologists conducting ethnographic research in the field frequently inquire about culturally dedicated individuals to expand an enhanced knowledge of assured matters to answer the queries; if not, they could not answer. While an anthropologist sets up a relationship with these people and starts to rely more lying on them for information than on other people, the cultural experts are referred to as key informants or key cultural consultants. According to Bernard-*"In ethnographic research, where the key informant role has been examined and developed the most, key informants typically serve as gatekeepers regulating access to people and information and as cultural experts explaining culture to an outsider [Bernard, 1995a:165–179]."* This article mainly focused on the moderately unexplored centered utilization of key informants. During the fieldwork, the researcher prearranged the situation by observing the first few days on the field to be most suitable for their research. Again, a well-recognizable individual who goes through the nature of the study will be given preferences. A researcher will have a structure regarding queries at the top priority list. The structure gives an initiative that what kind of necessary problems confines the universe of research.

The research questions were explained by them as soon as at the initial peak time allowing fieldwork or researchers to recognize equally from familiar to unfamiliar the matters besides unknown to unknowns about the research problems. Seeking 'the truth' is best accomplished by firsthand observation of craft artisans' communities and behavior or interviews with key informants working and experienced in a particular field.

2. Building up a Conceptual Framework-A conceptual framework ought to show interrelationships along with the key variables. For instance, if a study is planned to discover the causes of health-related problems among cottage industry artisans, the researcher should set up a list of the key causes with probable circumstances to reveal insight. The 'Assam' name might have come from the *Sanskrit* word 'Asom' means (undulated or uneven). The unique nature of the landscape, the river forest area along with the uncountable tea garden of Assam may be the reason for her name as a beautiful state northeast part of India. In Assam's Hajo and Sarthebari boast a special heritage of the metal trade. However, these two places in Assam are well known for their traditional metal crafts and their high proportion of artisan culture. Sualkuchi is one of Assam's villages in the Kamrup district with rich culture to which the mighty Brahmaputra river and its surrounding hills make a significant contribution. There are numerous incidents, remarks, and historical records concerning the name of the origin, this village was founded.

In one case, respondents interviewed about religious practicing among brass metal artisans from the *Hajo Islampatti Mariya* community of Lower Assam residents are different from the researcher's perspective. The study would be wrong if anyone does not know about their history of origin. For an outsider, they came under Islamic religious practitioners. After hearing from local informants, since they are mixed in origin with Assamese Hindu and Muslim religion origin spread some parts of Assam hence they are following both Hindu and Islamic religious ceremonies rigorously. Their ancestral occupations were artisanal work. If the researcher had drawn a presume by name or surname of the informants what religion they have practiced, their concept of practicing religion was different from the informants, leading to flawed conclusions.

3. Selection of Key Informants -The natures of key informant interviews are in-depth and semi-structured, chosen by a random group of specialists who are most well-informed on society and related issues. In ethnographic studies, key informant interviews can be precious in the questionnaire or interview guide improvement procedure so that all queries area, issues cover-up, and probable response choices are understood. This technique is also suitable while the study's focus needs in-depth, life stories, and qualitative key informant interviews are most generally carried out face-to-face and can contain closed- and open-ended queries. In Tangco's view, the purposive sampling technique is mainly represented through the key informant technique (Bernard 1995a, Garcia 2006, Gustad et al. 2004, Jarvis et al. 2004, Lyon & Hardesty 2005), wherein one or a few persons are implored to perform like a guide to a society (Cited from Tangco, 2007:147-158).The researcher usually cannot interview every person or observed each one within the community. One cannot be in all spaces consistently. However, a scholar will employ any key informants; it is improved to value the limits of their information based on who they are plus to enlarge a rapport with them to ensure the information's affluence. The key informant gave the information the researcher required in a cost effectual way. Crabtree explains this thought as "*Key informants help us to gather information efficiently, gain access to information otherwise unavailable to the researcher and to gain a particular understanding or interpretation of cultural information*" (Cited from Crabtree, et al. 1999:74).Gregor and Galazka (1990) used a snowball method for identifying key informants from the researcher's initial contact with an individual known to staff members and later specifically sought representation from the community (Gregor and Galazka, 1990: 38 -39). The worth of key informant interviews rests basically on selecting the right informants. Thus, a typical key informant is significantly different from a typical informant in ethnographic studies since the depth of their knowledge with observing society's inner context and explanation skills. Though, the number of key informants to interview for research work is usually based on the accessibility of time and resources, the difficulty of the matters drawn in, and the information available from other resources.

4. Objective of the Study -This article tries to focus on key informants' unique character in the folk art and craft artisan community of Assam. Total interviewed five key informants majorities of them engaged with rural cottage craft clusters directly or indirectly.

5. Methodology -This paper is an outcome of post-doctoral research for which the fieldwork was conducted in three districts of the lower division of Assam over six months during which rapport building to becoming key Informants resulted in a multistage interview consisting of in-depth case studies and narratives to acquire qualitative data.Present fieldwork is individual work obligatory to make out chosen key informants who might comprise assorted knowledge on the local occurrences. I was hallowed adequate to help out myself among three key informants who make it simple to gather information, which was essential for this research work.

6. 1 Role Key Informants (Interlocutor) in the Field-work-An essential method used to collect data was a key informant interview under a qualitative methodology. The in-depth interview techniques were conducted among individual(s) who belong to the same village community with unexpected knowledge about their craft articles industry and its related issues. With their conscientious knowledge and perception, these extraordinary informants can endow imminent on the nature of problems and counsel solutions.

6.2. Interlocutor from Bamboo and Cane, Brass metal and Silk Cluster of Lower Assam-In my case, Hira Lal Kalita was my main key informant from the silk cluster. Mr. Das runs his own *muga silk* weaving center along with a wholesaler store in Suwalkuchi. Under his units, a total of 10 to 15 families have fully engaged. I was told about him by one of the informants cum shop owners from that cluster who happened to be his friend and neighbor. He alleviated the process of ice-breaking among the Suwalkuchi local weaver and me. In numerous circumstances, while people would hesitate to react to my quires and suspect me of being some government agent or any NGO worker, Mr. Das would help me remove their hesitations and clear my identity of being a researcher to the local residents. It would have been not easy to gather some essential data without his help. In the end, I would ask him all kinds of questions where I had confused or which were left unanswered by the informants. His knowledge and information about the whole part of the Suwalkuchi silk cluster helped me frame more questions to ask other informants in the field. Regularly I would sit with him and talk about the how and why of information gathered by me all day about the cluster.

In the same way, Das had detailed information that concerned my research area. Crabtree portrayed that "*key informants are different from the rest of informants because of the nature of their position in culture, their information -rich connection to the research topic, and by their relationship to the researcher*" (Crabtree et al. 1999:73). He was exceptionally enthusiastic in helping the silk cluster weavers apply for any trade fair and government schemes, asking weaver to do purity of test on final products and use hallmark on their clothes. He was always conscious of the purity of silk. All the clothes he made for customers have a hallmark. From his perspective, it will show the authenticity and originality of materials used to make cloth and final products. It helped me read through the validity of the information and reflect ahead on it with developing its advance in the field area itself. Besides this, he intended a few of the elderly silk weavers who were very skilled and had much information about my study objectives that helped me enormously. He explained some old documents and pictures and foreign tourist comments on *muga* and *eri* silk cloths, documents filed for receiving the government award, etc. I had to be wary while interpreting them, lacking any bias. The key informant's explanation of the researcher's realm of curiosity also plays a vital task in collecting impartial and unbiased data.On the other hand bamboo and cane craft clusters mainly practiced in village *terechiya, mugkuchi, khatibari, chankushi* village of *Nalbari* districts famous for *Japi (traditional head gear made from bamboo and tree leaf),* traditional bamboo articles like *khorahi, chaloni, dola, tokari, kula, khaloi* etc. and each article made in each village spread in a different part of the district. Without the interlocutors' help, it was impossible to get any information and entry of those craft villages; moreover, I was a total stranger to them and vice versa. Most of the *Nalbari* districts' residents did not have any basic ideas about where those bamboo craft villages were present. I asked one village a few informants about other villages where other articles were made if they have any knowledge about it, but most of them do not have any idea. Very few aged artisans told me about where the whole village made the products and their primary occupation. Few villages have no proper road connections and are almost far away from the main road. It was difficult for me to roam from one village to another. I would often visit the local bamboo- cane store there when I would get free time. Gradually, I established a friendly relationship with Mr. Deka and his wife, who would discuss the scarcity of skilled artisans in cane craft. After a couple of gatherings with them, they became my key informants and helped me gather data from bamboo and cane clusters. They helped me expand and modify the analysis I prepared correlated to my research realm concerning bamboo- cane clusters villages. My discussions with them had changed from being formal to informal convoyed with non-verbal communication methods. GN portrayed one of his key informants in his style, *"So they could take, kind of stand outside a little bit and look at it. They were also real good storytellers and so, I could do things like say, "Tell me about someone who would say this." And then they would be able to render perspectives for me for different groups in the organization but few of them who are heavily vested, with some experience and known role and connections with other people."* (Cited from Gilchrist, 1999:70-89)After I had collected sufficient data from the Bamboo and Cane clusters, I decided to shift towards the *Hajo Islampatti* area for the brass metal cluster. I introduced myself and informed him regarding my research and the help that I would be seeking from him before I visit *Islampatti* brass metal area. I believed him to be skillful enough of suitable an 'excellent informant' while renowned scholars like *Spradley* thought that "*anyone can become an informant, but not everyone makes a good informant (Spradley 1979,*

p.45). He had been engaged with this brass metal cluster directly and indirectly for more than three decades. Thus, he had plentiful knowledge about *Moriya Muslim* brass metal community, and actually, his knowledge about neighborhoods was efficient now more than an extended period. He helped me collect information on *Moriya Muslim* community people's history, a present-day scenario of brass metal clusters, etc. However, I sometimes found the information that I gathered from brass metal artisans to collide with the data collected from other informants like brass metal dealers. Now, this was a dilemma caused by a bias towards a matter, differences of views, and varied ways of explaining a circumstance. However, I relied on my key informants other than I favored to cross-check the information that I would collect with others and do that, it was vital to set up a good rapport with the people of *Hajo* cluster and produce a sort of faith so that they could contribute to share information with me.

7. Conclusion-A key informant technique is a significant element of qualitative research. It has been applied broadly also effectively in numerous divisions of social science research. It might also be built as a constructive input on craft artisans' community research in anthropology. Within the standard inducement process, rely on a good quality amount of information can be gathered within a less period.

Due to this key informants tool applied in data collecting procedures, researchers were capable of collecting the data essential meant for the proposed research to subsist in the fieldwork area, besides for the beginning choice on the studied community used for concentrated analysis with equally "semi-structured" and "quasi participant interviewing and observation techniques. Therefore, the tool did not merely give the fact vital for the enhancement regards mostly research blueprint. However, it also dictates the steps whereby its strength could be confirmed throughout evaluation through succeeding in the research process.The tool is self-developing, as a researcher can filter their interviewing techniques throughout the way of an assembly or during recurring contacts, while the quantity of facts about the problem raises along with the capability of the key informant is fully exposed. The interview procedure expands the informant's ability to remember specifics and conditions, arouses their recollection of knowledge, and facilitates the appearance of these reminiscences.I have argued with the aim that key informants' importance developed the eminence of research work, mostly via legality and trustworthiness. Prominence reimbursement can ensue as take-up of key informant technique: equally, the researcher's status and the status regarding the key informant might be improved. Discussing the issues concerned with numerous aspects, containing health-related matters, individuals' socio-cultural status, household income, political involvement for individuals within the clusters, and artisan's relationship with the customers, etc. regarding which the data might be utilized in different disciplines in the future.

Acknowledgments:-The scholar Dr. Drabita Dutta is the awardee of the ICSSR Post-Doctoral Fellowship. This research article paper is largely an outcome of the Post-Doctoral Fellowship sponsored by the Indian Council of Social Science Research (ICSSR). However, the responsibility for the facts stated, opinions expressed, and the conclusions drawn is the entirety of the author.

****

References-

1.Bernard, Russell, H. (1995a). Informants. In *Research Methods in Anthropology: Qualitative and Quantities Approaches* (2nd Eds.), Walnut Creek, CA: Alta Mira Press. 165-179.

2.Crabtree, Benjamin F. and William, Miller, L. (Eds.) (1999). *Doing Qualitative Research.* Sage publications, Thousand Oaks, California.

3.Garcia, G.C. (2006). "The mother – child nexus: knowledge and valuation of wild food plants in Wayanad, Western Ghats, India." *Journal of Ethno-biology and Ethno-medicine*, 2(1):38-39.

4.Gilchrist, Valerie, J. (1992). "Key informant interviews". In *Research methods for primary care, Doing qualitative research,* edited by Crabtree, Benjamin, and William, Miller, pp. 70-89. Thousand Oaks, CA, US: Sage Publications, Inc.

5.Gregor, S. and Galazka, S. S. (1990). "The Key Use of Key Informant Networks in Assessment of Community Health." *Family Medicine*, 22(1): 38–39.

Gustad, G., S.S. Dhillion & D. Sidibe. 2004. Local use and cultural economic value of products from trees in the parklands of the municipality of Cinzana, Mali. Economic Botany 58:578-587.

7.Jarvis, Mary Claire, Ann Marie Miller, Jamie Sheahan, Kerry Ploetz, Jeff Ploetz, Robyn Ready Watson, Mario Palma Ruiz et al.(2004). "Edible wild mushrooms of the Cfre de Perote Region, Veracruz, Mexico: an ethno -mycological study of common names and uses." *Economic Botany*, 58 (1): 111-115.

8.Kennedy, A., Christie, D., Fraser, C., Reid, L., McKinney, S., & Welsh, M., et al (2008). Key informants' perspectives on teacher learning in Scotland. British Journal of Educational Studies, 56(4), 400–419.

9.Spradley, J. P. (1979) Participant Observation. New York: Holt, Rinehart and Winston.

10.Tongco, Ma Dolores C., (2007). "Purposive sampling as a tool for informant selection." *Ethno-botany Research and applications*, 5(1): 147-158.

11.Tremblay, A, M. (1957). "The key informant technique: A non ethnographic application." *American Anthropologist*, 59 (4): 688-701.

Tremblay, M.A. (1982). The key informant technique: a non-ethnographic application. In R.G. Burgess (Ed.), Field research: a sourcebook and field manual (pp. 98-104). London: Allen & Unwin. [Originally published in 1957 in American Anthropologist, 59(4), 688–701.

INTRA DISTRICT DISPARITIES IN SCHOOL INFRASTRUCTURE-A CASE STUDY AT JORHAT DISTRICT OF ASSAM, INDIA

Sewali Das
Ex- Student, M.A (Geography), J.B College, Jorhat, Assam

Mridul Kumar Borah
Research Scholar, Centre for Studies in Geography
Dibrugarh University, Assam

Abstract: According to U.N, Sustainable Development goal 4, also known as Quality education aims to "ensure inclusive and equitable education and lifelong learning opportunities for all". In other words, to provide quality education in schools so as to make the students capable of gaining proper knowledge and skills to stay healthy, get jobs and fostering tolerance. But there are many reasons hindering the quality education in schools out of which availability of physical infrastructure is the most significant one. Absence of proper Physical infrastructure has many impacts on schools learning environment, privacy, health and hygiene and mental pressure to the teachers which leads to failure in providing quality education. There is a need of equal availability of physical infrastructure in the schools to bring them at equal and provide quality education. Therefore, this study is an attempt to analyze the intra district disparities in school infrastructure with special reference to Jorhat district of Assam, India.

Keywords: Disparity, Quality Education, Infrastructure and Elementary Education.

Introduction:-As argued by O Bryan (2004) Education is not a neutral instrument, it either function as an instrument that brings confirm it to the presence system of logic by integrating young people into it or as an instrument that provides resources necessary for students to transform their world in a critical and creative way.It is considered as a human right to provide not only education but quality education to each and every citizen. It is very important to provide quality education to all for creating a peaceful and prosperous world. Quality education provides people the knowledge and skills that are needed to stay healthy, get jobs and fostering tolerance.According to Adams 1993, the quality of education is to build the efficiency effectiveness equity for the learning abilities of the students. The quality of education can be reflected by learner from well nourish families, safe and healthy environment, advanced and modern learning environment building of skills and attitude of the students.Many researchers have revealed that quality of education is impossible without the quality of physical infrastructure in the schools (National Education Policy 1980-2010). In 2020, about one fourth of primary schools globally did not have sufficient drinking water, sanitation facilities and electricity etc. along with roughly 50 percent of primary schools had access to facilities like ICT and desirably adapted infrastructure (Source: un.org- sustainable development goals). Learning infrastructure is a key base for effective teaching and learning in schools. The infrastructure forms a very significant component in ensuring successful education (N S Omae, H Onderi and M Benard, 2017) A study carried out in United Kingdom, reveals that environmental and designed elements of school infrastructure together explained 16 percent of variation in primary student academic progress. This research shows that the design of education infrastructure affects learning through three interrelated factors – Naturalness (light, air), stimulation (complexity color) and individualization (flexibility of learning spaces) (P Barrett, F Davis, Y Zhang and L Barrett, 2016).

Without sufficient number of classrooms in a school, it is very difficult to manage classes by the Teachers. Lack of classroom management results in lack of teacher's management skills and learner's attitude (Erdogan et al. 2010).Although policy makers are focusing on quality education, in few countries, piecemeal approach is being used to investing in their education infrastructure. For example: in Romania, decisions about education infrastructure investments have historically been made under an uncoordinated and decentralized model, driven by ad-hoc needs and limited funding availability rather than a strategic approach (J Teixeira et al. 2017). By keeping in mind the above facts, this study is an attempt to trace out the disparities that exist among the education blocks of Jorhat district of Assam.

Materials and methods:

Study design: the research design used in this study is descriptive research design, which is referred to as a fact finding research method with adequate interpretation.

Research question: "*Is there exist intra district infrastructural disparities among the Elementary Schools of Jorhat district".*

Data collection: primary and secondary data are used in this study. To collect the primary data stratified random sampling technique has been used where 30 elementary schools have been selected randomly as samples from each education blocks. And further data were collected using a tool of pre structured sets of questions known as schedule. Somewhere observation method has also been used depending upon time consumption. Secondary data have been taken from UDISE reports, district elementary education office etc regarding past trends in the distribution and trend of availability of infrastructure in the schools.

Statistical analysis: an index namely elementary education infrastructure index has been constructed here by following the development index put forwarded by NIEPA. The weights

Study area: to carry out the research work and prove the significance of physical infrastructure of schools in achieving quality education, jorhat district of assam has been selected as the study area. jorhat district is composed of five education blocks as shown in the following map, namely –Central block, East block, Jorhat block, North West block and Titabar block.

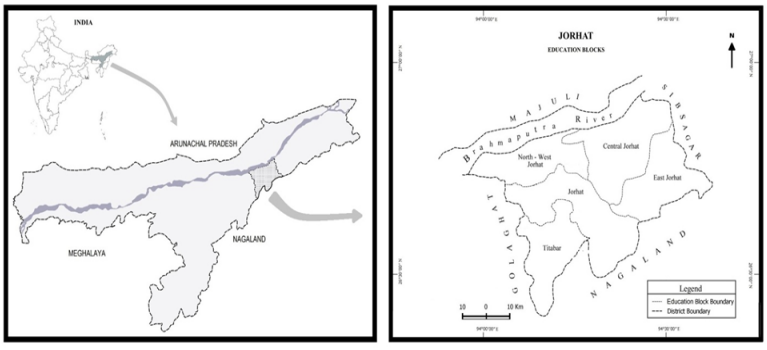

Map1: Study Area

Results and discussion:

1. Why physical infrastructure in schools is important?-Physical infrastructure in schools has directly and directly impacts upon four major aspects. They are as belows:

1.1) On school Environment: lack of classrooms or space in school causes difficulties in classroom management activities which directly creates unfavorable learning and teaching environment. It's also led to failure of maintaining discipline in the school or classrooms.

1.2) On Health & Hygiene: Due to lack of safe drinking water, sanitation facilities and electricity in schools cause many health related issues directly or indirectly. Without safe drinking water students may suffer from water related diseases. Without proper and adequate sanitation facilities the students again face many difficulties specially the girls with menstruation cycle. And schools with lack of electricity cause disturbances in learning and teaching process during extreme weathers.

1.3) On Knowledge: Due to lack of learning materials, absence of libraries in a school hampers students from gaining extra or in depth knowledge of facts.

1.4) On physical growth: Physical growth of students during elementary stage is very significant. Games are regarded as boon for students in their physical growth. School with lack of playgrounds hampers the physical growth of students.

2. What is the current status of infrastructure availability in the study area?

In this study the major focus is on Physical infrastructure. Therefore, out of the four major groups only the infrastructure section is taken here. Education Infrastructure Development Index is used in this study to find out the status, disparities and level of development in terms of infrastructure in Elementary Schools of Jorhat district. The indicators taken for the construction of Education Development Infrastructure Index are:

Schools with classrooms above 3 per school
Schools with separate Head Master Room.
Schools with Library
Schools with TLM (Teaching Learning Materials)
Schools with Drinking Water Facility
Schools with Electricity
Schools with Toilets
Schools with Boundary Wall
Schools with Play Ground
Schools with Ramp
Schools with Kitchen Shed

Table 1: Availability of Infrastructure in Lower Primary Schools:

Table 1: Availability of Infrastructure in Lower Primary Schools:

Education Blocks	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J	K
Central Block	40	98	97	100	94	14	99	41	14	92	94
East Block	42	98	92	100	98	15	98	29	18	80	97
Jorhat Block	65	100	95	100	100	45	99	57	48	96	96
North West Block	37	98	90	100	98	54	98	52	19	88	83
Titabar Block	79	99	90	100	99	34	99	74	19	89	83

Table 2: Availability of Infrastructure in Upper Primary Schools:

Education Blocks	**A**	**B**	**C**	**D**	**E**	**F**	**G**	**H**	**I**	**J**	**K**
Central Block	**83**	**83**	**83**	**83**	**83**	**50**	**100**	**67**	**67**	**100**	**83**
East Block	**100**	**67**	**67**	**67**	**100**	**33**	**100**	**67**	**33**	**100**	**67**
Jorhat Block	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**67**	**100**	**67**	**67**	**100**	**67**
North West Block	**75**	**75**	**75**	**75**	**100**	**75**	**75**	**50**	**50**	**100**	**75**
Titabar Block	**100**	**100**	**100**	**100**	**80**	**60**	**100**	**40**	**40**	**80**	**80**

Note: **A-** Classrooms above 3 per school, **B-** Separate Head Master Room, **C-** Library, **D-** TLM (Teaching Learning Materials), **E-** Drinking Water, **F-** Electricity, **G-** Toilets, **H-** Boundary Wall, **I-**Playground, **J-**Ramp, **K-**Kitchen Shed.

After data was collected, each indicator was normalized by using a formula, as suggested by NEUPA in "Education Development Index (EDI) - A Suggestive Framework for Computation (2009)". Once the

Normalized Values are obtained for all the indicators across Education Blocks, the Factor Loadings and Weights were assigned. Principal Component Analysis (PCA) is used to compute the Factor Loading and Weights of these indicators. The objective of Principal Component analysis is to reduce the dimensionality (number of indicators) of the data set but retain most of the original variability in the data. PCA is performed here by using a statistical package named SPSS (Statistical Packages in Social Sciences). After the calculation, the following results were derived.

Table 3: Infrastructure Index for Schools of all Blocks:

Lower Primary			Upper Primary		
Education Blocks	**Index**	**Rank**	**Education Blocks**	**Index**	**Rank**
Central	**0.311493**	3	Central	**0.513751**	4
East	**0.283555**	5	East	**0.885501**	2
Jorhat	**0.918846**	1	Jorhat	**1.245763**	1
North West	**0.296156**	4	North West	**0.359879**	5
Titabar	**0.600901**	2	Titabar	**0.554535**	3

Similarly the Combined Index values of both Lower primary and Upper Primary schools have been calculated. The result is as belows:

Table 4: The Elementary Education Infrastructure Development Index ;

Education Blocks	TOTAL	RANK
Central Block	**0.825244**	4
East Block	**1.169056**	2
Jorhat Block	**2.164609**	1
North West Block	**0.656035**	5
Titabar Block	**1.155436**	3

From the above table it is clear that Jorhat block ranks first in terms of availability of infrastructure in the elementary schools of Jorhat district with index value of 2.164609, followed by East block in second rank with 1.169056 index value, Titabar block in third rank with index value of 1.155436, Central block at fourth rank with index value of 0.825244 and lastly, North West block at fifth rank with 0.656035 index value.

Map 2: Elementary Education Infrastructural Development Index Map of Jorhat:

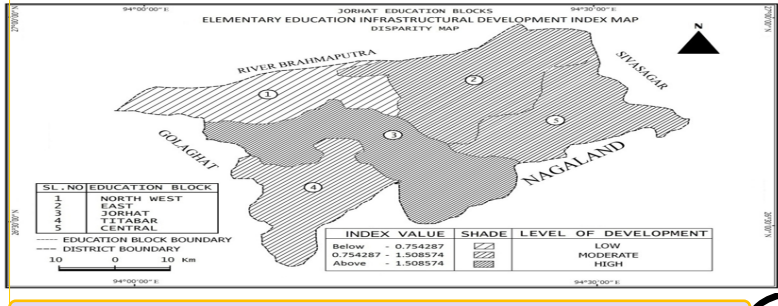

Source: Refer to Table 7 &Map prepared in QGis by Author.

From the above map, the following results have been obtained.

1. The High EEIDI zone mainly encompasses maximum availability of Infrastructure. It ranges above 1.508574 index value. Education block covered by high educational infrastructure is Jorhat block.
2. The Moderate EEIDI zone mainly encompasses education blocks with moderate educational infrastructures. It ranges in between 0.754287 to 1.508574 index value. The blocks falls under this category are Titabar, Central Jorhat and East Jorhat block.
3. The Low EEIDI includes blocks with poor availability of infrastructure in the elementary schools. It ranges from the index value below - 0.754287. The block falling in this category is the North West block.

3.Testing of research question:

"*Is there exist intra district infrastructural disparities among the Elementary Schools of Jorhat district*"

The foremost step is to formulate the research question into Null Hypothesis & Alternate Hypothesis.

H_0 = *there does not exists intra district infrastructural disparities among the Elementary Schools of Jorhat district*

H_1 = *there exists intra district infrastructural disparities among the Elementary Schools of Jorhat district*

Results from calculation:

a) Correction Term (C) = $(\Sigma X)^2 / N = 327559.6$

b) $SS\text{-}_T = 27436.6090$

c) $SS\text{-}_A = 23663.31$

d) $SS\text{-}_s = 1194.882$

e) $SS_{exr} = 2578.418$

f) Mean $SS\text{-}_A = 2366.3309$

g) Mean $SS\text{-}_{exr} = 64.4604$

h) F – Ratio = 36.70980

i) In the F Table, with 10, 40 df at 0.05 significance level, the F's value is 2.08. The obtained value of F Ratio is 36.70980, which is very much greater than the table value. Therefore, the Null Hypothesis has to be rejected and the alternate hypothesis will be retained. Which in simple is "*there exists infrastructural disparities in the Elementary Schools of Jorhat district*". And is proved to be statistically significant with 'p' value of 0.049 which is

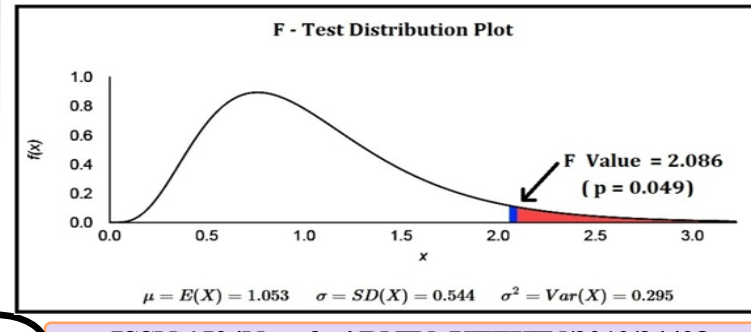

Conclusion:-The research question raised in this study i.e, "*Is there exist intra district infrastructural disparities among the Elementary Schools of Jorhat district*" has been proved. This study reveals that there exist intra district disparities in Jorhat district regarding the availability of physical infrastructure. Though it has been mentioned in this paper that how significant infrastructure is for a school to operate teaching and learning process. Absence of proper Physical infrastructure has many impacts on schools learning environment, privacy, health and hygiene and mental pressure to the teachers which leads to failure in providing quality education. There is a need of equal availability of physical infrastructure in the schools to bring them at equal and provide quality education. Until equal distribution of infrastructure is available, the same level and quality education cannot be achieved.

****

Reference:

1. C. Christopher, "Primary Schooling and Economic Development: A Review of the Evidence," *World Bank Staff Working Paper No 399,* World Bank, Washington DC, 1980.

2. DISE Flash Statistics: 2005-06, Elementary Education in India: Progress towards UEE (2007), NUEPA and Government of India, New Delhi.

3. Education Development Index(EDI) - *A Suggestive Framework For Computation* v:2 2009, Department of Educational Management Information System, National University of Educational Planning and Administration 17-B, Sri Aurobindo Marg, New Delhi, 110016, India

4.G Ahmed, M Tayyub and R Ismail,2020 effects of classroom environment for improving students learning at secondary level in Punjab province of Pakistan. *Science Academique* vol 1 issue 1 pp-1-14

5. J Teixeira, J Amoroso and J Gresham,(2017). Why education infrastructure matters for learning. *Education for global development* vol3 issue 10. pp -181-190

6. M Barrett, R C Dugan, J L Lave and J Nikhil, (2006). *Defining Quality in Education*, a paper presented by UNICEF at the meeting of the Internet working group on education Florence , Italy 2000, June document number UNICEF / PD / 0000 / 02.

7. M Erdogan, E Kursun, G T Sisman, F Sultan, A Gok, I Yildiz (2010). Educational sciences, *Theory and Practices* vol 10 issue 2 pp-881-891

8. N S Omae, H Onderi and M Benard (2017). Quality implication of learning infrastructure on performance in secondary education: a small scale study of a country in kenya. *European journal of education studies.* Vol 3 pp-97-123

9. P Barrett, F Davis, Y Zhang and L Barrett, (2016). The holistic impact of classroom spaces on learning in specific subjects, environment and behavior , pp-1-277,

10. website https: / www.righthiphen 2-education.org.

11. World Health Organization (WHO) Report, National Health System Profile, India, 2005. http://www.searo.who.int/LinkFiles/India_CHP_india.pdf

12. www.coolgeograpphy.co.uk/gcsen/EW_UK_Infrastructure_developments.php

13. www.un.org (Sustainable Development Goals).

The life of the Bhikkhunīs in the saṅgha : An analytical study of Therīgāthā

Monika Raj
Research Scholar
Department of Buddhist Studies
Nava Nalanda Mahavihar, Nalanda, Bihar
Reg.no.- Ref.NNM/BRS/Reg./1000

Abstract: The Bhikkhunī order was established at the time of the Buddha and exists until this day. For centuries, ordained women have practiced, realized, and upheld the Buddha's teachings. It was benefiting not only themselves but also the societies in which they lived. Initially, the Buddha refused to take entry the women in the saṅgha. But after requesting of Mahāpajāpatī Gotamī and Ananda, he agreed to give the permission. The Buddha may have hesitated to accept women into the order for several reasons. One might have been his compassion for the nuns, especially his aunt, for the bhikkhus and bhikkhunīs received their food by collecting alms in the villages. Maybe out of compassion, the Buddha did not want these women to face such hardship. At that time there were no monasteries. The monastics lived a very difficult lifestyle. It was a very big question that who would give this group of wandering women dwelling places and who would teach the nuns? They could be ordained, shave their heads, and put on robes, but if they did not receive an education and training, they would be just like any wanderer. After a very long time, It was established that the bhikkhu saṅgha could assign a few excellent monks to teach the nuns.According to the Buddhist Canon, women are as capable of reaching nirvana as men. At the time of the Buddha, nuns had equal rights and an equal share in everything. A famous work of the early Buddhist schools is the Therīgāthā , a collection of poems by elder nuns about enlightenment that was preserved in the Pāli Canon.

The canon describes extra vows required for women to be ordained as bhikkhunīs. In places where the bhikkhunī lineage was historically missing or has died out, alternative forms of renunciation have developed. In Tibetan Buddhism, women officially take the vows of śrāmaṇerīs. Although the Bhikkhunī ordination has been internationally recognised, some countries remain reluctant to welcome the idea of ordaining women as Bhikkhunīs. While Thailand has been walking some steps forwards in the acceptance process, Laos and Burma are two of the few countries that do not yet admit any Bhikkhunī in the Saṅgha community. However, we are confident that with time and patience Bhikkhunīs will be fully recognized all over the

world . At the present, Sri Lanka is the most welcoming and open country regarding Bhikkhunī ordination.

Key words : Buddhism, Bhikkhunī, Therīgāthā, Saṅgha, Jatakas

When we talk about the first Bhikkhuni ordination, there is a famous talk of Lord Buddha and his desciple Ananda, there is a famous talk about it. During the regular meet up with the Buddha, Ananda asked him respectfully, whether women are capable of realizing the various stages of sainthood as nuns or not? In reply, Buddha answered, obviously, they are capable of realizing the various stages of sainthood. Encouraged by the Buddha's reply, he didn't waste a time and again asked him, if that is the case, then it would be good if women could be ordained as nuns as well. The Buddha further replied, if women would accept the Eight Garudhammas, it would be regarded that she has been ordained already as a nun. He further added, if Mahapajapati Gotami also accepts the Eight Garudhammas and practices accordingly, it would be regarded that she was ordained as a nun. Listening to these answers, Ananda met Mahāpajāpatī Gotami and shared everything that the Buddha had said. Mahāpajāpatī Gotami agreed to accept the Eight Garudhammas and was accorded the status of the first bhikkhunī. Hence, after her other women also undergo full ordination to become nuns. The Buddha then announce the sangha for the women. It was after the five years after the establishment of the sangha for the bhikkhu.

As time passed by the process of becoming a bhikkhunī was also changed. Along with the acceptance of the Eight Garudhammas, the women have to go through four steps. The first step is to take the Five Precepts then to enter the pabbajja (monastic way of life). The third one is to become a Sramaneri (novitiate). The last and final one is to take the full vows of a bhikkhunī.

One of the most debated issues in present-day Buddhism is the question of access of women to a full ordination as a nun. Of the three extant ordination tradi- tions Dharmaguptaka, Theravada and Mūlasarvāstivada, it is only in the first one that both men and women are accepted without any dispute as fully ordained mem- bers of the monastic community. This situation has given rise to many discussions pleading for a revival of a full ordination ceremony in all Buddhist traditions. In these revival movements, special attention goes to several technical questions of monastic discipline (vinaya).

Bhikkhunī Saṅgha-The Bhikkhunī Saṅgha is the community of fully ordained female Buddhist nuns. In Theravāda tradition they follow 311 rules, they wear orange or brown robes, and they shave their heads. They dedicate their life to meditation, wisdom, and to the teaching of the Buddha. Bhikkhunīs are an essential part of Buddhism. Along with Bhikkhus (fully ordained male monks), they carry the wisdom and the teaching from generation to generation. Thanks to both of them, and to the lay followers, Buddhism is still alive today, after over 2500 years.

The four pillers-The Buddha granted Bhikkhus (fully ordained male Buddhist monks), Bhikkhunīs (fully ordained female Buddhist nuns), upāsaka (layman) and upāsikā (laywoman) a fundamental position in Buddhism. The Buddha himself, before passing away (parinibbāna) addressed Ānanda, who was his attendant, that Buddhism will survive so long as these four congregations exist. They are often regarded as the four pillars of Buddhism, if one is missing, the whole structure fails.

Becoming a Bhikkhunī We can count four main phases in the path to becoming a Bhikkhunī.

Phase 1: The lay woman (upāsikā) takes five precepts (pañca sīla). She is still a householder; she decides to live her lay life in accordance to the Buddha teaching and respect the five fundamental rules of lay devotees.

Phase 2: The lay woman lives in a monastery. Wears white clothes and follows 8 or 10 precepts.

Phase 3: This is the first formal step. She goes forth, and she abandons her home (pabbajjā). She takes ordination as a novice (sāmaṅerī). In this phase she is fully admitted into the full fellowship of the monastic order. She is now part of the monastic community (bhikkhunī saṅgha), on her way to becoming a Bhikkhunī, and she wears the monastic robes. As a sāmaṅerī, she will spend at least one year of intensive training where she conducts her Buddhist studies and strictly adheres to the set of monastic rules.

Phase 4: After the year of intensive training, she will ask to be trained to become a Bhikkhunī. She is a sikkhamānā.

Phase 5: After a minimum of 2-year training, she can take full ordination as a Bhikkhunī. She will then take the vows to follow the 311 precepts set in the Theravāda Vinaya.

Monastic Life

The monastic community, in pāli language Saṅgha, is so called the live carrier and continuator of the tradition. Monastics live in monasteries that provide a suitable setting for seclusion and practice. They live modestly and simply in a firmly set daily routine. Their practice is often particularly effective if developed in a silent environment. They also dedicate part of their time to teach the Dhamma, share their wisdom, and help lay practitioners in their spiritual path.

Vinaya (Rules) Both Bhikkhunīs and Bhikkhus, Buddhist nuns and monks, live by a set of rules called Vinaya. To join the Vinaya, Bhikkhunī must vow to follow 311 monastic set of rules. These rules were passed by Buddha to earlier disciples who collected and preserved them. The

Vinaya provides for the equal treatment of male and female monastics. If we consider the cultural context in which the Buddha lived, we can tell that women were in a lower social position than men, and they were usually considered as impure. For this reason, the rules set by the Buddha in the Vinaya were initially hardly accepted by society. For example women monks cannot be relegated to just traditional women's roles (as cooking and cleaning). The Vinaya makes it possible for Bhikkhunīs to practice the very same way of the spiritual life of male monks.

Piṇḍapāta (Alms)-Bhikkhunīs and Bhikkhus embraced the path of renunciation, for which they are binded to a strict set of rules set by the Buddha in order to reach the ultimate understanding and final liberation. Because they are renunciants, they do not have any property and they are not allowed to eat or acquire what is not given to them. Since giving is one of the highest sources of merit in Buddhism, monks and nuns humbly, patiently and silently walk in the streets every day with their empty bowl in order to allow lay people to donate food and so make merit. Both monastics and lay practitioners benefit from this practice. Monks and nuns receive food for their daily living, and lay people collect merit from their act of kindness. In some countries the monastics instead of walking, stand at the doors of the lay community patiently waiting for any offering.

Some finding concerns the prediction of decline, according to which the very fact that now women have been permitted to go forth will halve the lifetime of the Buddha's dispensation. Closer study of the relevant texts, in particular of the contrast this prediction of decline creates with other passages reporting that the Buddha planned from the outset to have an order of bhikkhunīs, makes it probable that this element originated as part of the narrative regarding the convocation of the first sangīti. The very convocation of this sangiti, a term probably best translated as "communal recitation" rather than "council", soon after the Buddha's demise, is related to apprehensions of an impending decline in general. Such apprehensions, once they had come to be associated with the bhikkhunīs, appear in the course of transmission of the texts to have turned into statements made by the Buddha himself.Yet another relevant finding concerns a set of principles whose acceptance according to all versions were the condition set by the Buddha for granting Mahāpajāpatī Gotami ordination. A position taken repeatedly among scholars is that this set of garudhammas (Pāli) or gurudharmas (Sanskrit) must be a later interpolation, evident from the fact that several of these recur as pācittiya regulations elsewhere in the Vinaya. Although earlier I let myself be influenced by what seemed to all purposes to be general consensus among academics, in the meantime I have come to realize that this position is not correct. The garudhammas are mere injunctions and do not carry any consequences in cases where they are not followed. Thus failure to observe a garudhamma could have motivated the promulgation of a corresponding rule, so as to lay down what such a breach would entail in future. This in turn implies that there is no definite reason to reject the whole set of garudhammas as a later interpolation."

At the same time, comparative study shows that some of the garudhammas would have gone through a change of wording. This holds for the case of the garudhamma on ordination, which in the Pali version stipulates that a female candidate who has gone through a period of probationary training should receive ordination from both communities, that is, a community of bhikkhus and a community of bhikkhunis. From a comparative perspective it emerges that the reference to both communities is not found in all versions, as some only refer to a community of bhikkhus. The implications of this difference seem uncertain; at the present stage of my research I fail to see a definite reason for categorically preferring one reading to the other. In the Pali Vinaya the reference to both communities leads up to a whole episode based precisely on this formulation and the resultant need to clarify in which way the followers of Mahapajāpatī Gotami should be ordained when no bhikkhuni community is in existence. This in turn implies that the reference to ordination from both communities must be an early element in the development of this text.In the case of the stipulation on probationary training the situation is different, however, as the remainder of the narrative would work just as well if the probationary period were not mentioned. The impression that this reference could indeed be a later addition is based not only on its absence in several parallel versions, but also on consulting another episode in the same Pāli Vinaya, which reports that a pregnant woman had been ordained. If from the outset all candidates had been observing the probationary training, which requires continuous adherence to celibacy, this could not have happened. It could of course be imagined that lack of proper adherence to the garudhamma led to the ordaining of a pregnant woman. Yet, had the probationary training already been in existence, instead of a rule against ordaining a pregnant candidate, a more natural response would have been a rule against lax observance of the probationary training, thereby also covering breaches of celibacy that do not result in pregnancy."The debates of the twentieth and twenty-first century on the validity and (re-) establishment of a full ordination for nuns are being constantly fuelled by vinaya issues, linked to historic precedents, and transferred to a present-day context. The debates take place on local levels as well as in an international context. They mostly go back to Mahāprajāpatī and her acceptance of the eight fundamental rules, which impose an ordination ceremony in the presence of fully ordained nun and monk witnesses. This

was the case when the bhiksuni ordination was intro- duced in Sri Lanka, and it constituted the heart of the debate when Chinese nuns questioned the validity of their ordination in the middle of the fifth century and asked for a second ordination in the presence of legally valid witnesses. This second ordination ceremony was also meant to link the Chinese ordination tradition to the time of the Buddha and of the first Buddhist nuns. The same issue of witnesses is again at stake in today's discussion regarding a single or dual ordination. One element has been added though, namely the differences between the traditions, and especially between the Theravada and Mahāyāna orders, which leads to discussions on their possible or impossible legal collaboration.

At the latest international event in Hamburg, many strove to find a legal vinaya way to re-establish the nuns' ordination, especially in the Tibetan lineage, relying on a philological scrutiny of vinaya passages.

Conclusion-While from a religious point of view, all vinaya texts, including the eight fundamental rules, are linked to the personal views of the Bud- dha, from an academic point of view, the vinaya texts are seen as a body of texts that were constantly adapted until at a certain point the vinayas became finalized. But even then Buddhist masters continued to comment upon these texts, often pleading for pragmatic solutions in their given contexts.70 Apart from the question of how far a debate that mixes religious and scientific aims is methodologically correct, it can be doubted whether this procedure will ever lead to legally acceptable results for the Buddhist communities. Putting the methodological questions aside, it is clear that many present-day discussions focus either on the intention of the vinaya or on a strict technical interpretation. The outcome of the debates will inevitably be linked to the degree of acceptance by the established orders in the various regions of the world. Without the support of the senior monks, including the Dalai Lama, recognition will remain difficult.

****

Bibliography

1. Anālayo 2010: "Women's Renunciation in Early Buddhism - The Four Assemblies and the Foundation of the Order of Nuns", in Dignity & Discipline, The Evolving Role of Women in Buddhism, T. Mohr and J. Tsedroen (ed.), 65-97, Boston: Wisdom Publications.
2. Anālayo 2011: A Comparative Study of the Majjhima-nikaya, Taiwan: Dharma Drum Academic Publisher.
3. Analayo 2015: "The Cullavagga on bhikkhunī Ordination", Journal of Buddhist Ethics, 22: 401-448.
4. The Foundation History of the Nuns' Order, Bochum: Projekt Verlag.
5. Bodhi, Bhikkhu 2009: The Revival of bhikkhuni Ordination in the Theravada Tradition, Georgetown, Penang: Inward Path Publisher.
6. Commentary on the Therīgāthā. London: Pali Text Society.
7. Deshpande, Madhav M. 1999: Milindapañha-atthakatha by Thaton Mingun Zetawun Sayadaw alias U Narada Mahathera, Transcribed and Edited, Tokyo: The International Institute for Buddhist Studies of the International College for Advanced Buddhist Studies.
8. Horner, I.B. 1952/1975 (vol. 5): The Book of the Discipline (Vinaya-Pitaka), London: Pali Text Society.
9. Poems of Early Buddhist Nuns (Therīgāthā).Oxford: Pali Text Society.
10. The Comentrary on the Verses of the Therīs. Oxford: Pali Text Society.
11. The Saṃyukta-Nikāya of the Sutta Piṭaka.Vol.1.London:PaliText Society.

IMPACT OF THE PANDEMIC ON HIGHER EDUCATION AND THE EFFECTIVENESS OF ONLINE EDUCATION: SPECIAL REFERENCE TO RURAL INDIA

Mrs. SHILPI

ASSISTANT PROFESSOR- HOME SCIENCE

KM. MAYAWATI GOVERNMENT GIRLS P.G. COLLEGE, BADALPUR, G.B. NAGAR, BADALPUR

Abstract:-Technological advancement played a dynamic role in the modern education system. The increase in technology has impacted both positively and negatively the students. The pandemic caused due to COVID-19, has boosted technological advancement in India and worldwide, thus transforming the education scenario. During the pandemic, institutions were forced to completely rely on the online education system to train teachers and students to teach learning more effectively. But the rural students faced various challenges in adopting online education because of the internet infrastructure, speed, unavailability of mobile or laptops, power cuts etc. The crisis of Covid-19 showed that as soon as there is a strong bond, things can change. This leads to remarkable ideas and innovations. the strength of the online education system reduced the urban boundary and equity in education. The enrolment of rural students increased as online education provided education beyond the regional barrier. The paper also focussed on the impact of covid on the education system of India and to plan strategies for the post-pandemic education system by realizing the importance of blended education to compete with the global education system.

Keywords: Education, online education, pandemics

Introduction:-***"The Internet isn't just a powerful tool for communication. It's arguably the most potent force for learning and innovation since the printing press. And it's at the center of what is possibly America's mightiest struggle and greatest opportunity: How to reimagine education for a transformative era."*** **(Bush and Dawson 2013)** Technology and the Internet have drastically transformed the modern education system. Students as well as teachers experience new transformations in positive ways to adopt and plan strategies to inculcate innovative teaching methodologies to make teaching-learning more creative and interesting. Students are in the process of experiencing learning in more amusing ways. Not only is the classroom

environment changing, but teachers and instructors have also adapted their teaching strategies to make learning more fascinating. The previous ten years have already seen the education sector expand its reach into digital media, which has given instructors the opportunity to experiment with several digital platforms for instruction. This has been essential to helping instructors all throughout the nation provide their pupils with top-notch instruction. Slack, Microsoft Teams, and other channels for education were already being utilized for teaching and communication reasons. Furthermore, synchronous platforms like Zoom, Google Meets, and Google Teams, together with D2L, Canvas, and Blackboard, were made accessible so that their full potential could be realized. There have been several developments in the education industry recently as a result of the availability of high-speed broadband internet and the surge in demand for alternatives to traditional learning methods. The traditional education industry has clearly undergone a change thanks to the use of the Internet for education. It has promoted seamless remote learning and opened channels for unrestricted resource and data exchange. Traditional classrooms were transformed into hybrid ones via the use of new digital skills and technology. The internet has become an amazing resource for students everywhere. With a few clicks, individuals could find anything related to their research. This paper throws light on the changing pattern of the education system in India and the incorporation of the Internet and online mode in the education system. It will also try to analyse the impact of Covid 19 on the education system with reference to challenges faced by students and teachers in the implementation of the online mode of the education system.

Significance of the Internet and Online Education System in Higher Education-Accessibility, Productivity, and efficiency are three core benefits of the online education system. Low-cost internet facilities, easy accessibility, and advanced technology have increased the number of users of the internet in the age group. The advancement of technology and internet facilities have penetrated the life of every individual. The new online education system has the capability to brand education policies more approachable, transparent, and evidence-based in the years to come. Through LMS (Learning Management System), students have access to the dashboard to find the course content which is generally in the format of modules, further divided into lessons. They are then evaluated through assignments, online quizzes, discussion forums, etc and these are recorded in LMS. This remote learning helps students to learn more efficiently without being confined to the physical barrier and acquainted with more broad aspects of learning. Another way of teaching-learning method in online is virtual learning through various Synchronized platforms. Virtual lessons that are based on technology are a crucial component of an online learning center. These meetings/classes are led by qualified instructors who interact with the students to address questions, share knowledge, engage in group projects, develop skills, etc. These classes, to put it simply, are for real-time interactions and frequently have a set timetable. Through these synchronous learning possibilities, students may participate in conversations and interact with their classmates without physically visiting a campus.

Online education caters to all students including children with disabled students irrespective of physical barriers. It provides a hassle-free, flexible, self-paced, cost-effective, student-centric approach to compete in the global education system. It will cater to the problem of absentees in the classroom, lack of teachers, accountability and accessibility in rural areas. It brings quality teaching-learning material to the doorstep of students which saves energy and time to enhance productivity and output. The audio-video aids help students to visualize and understand better. It provides students to choose options that are more suited to their internet and lifestyle. The ability to plan, organize, develop, or adhere to any study routine in accordance with one's preferences or way of life is a further advantage of pursuing classes online. Because of the significance of online learning, students may commit more or less time to a subject depending on their own needs. Unlike in a traditional classroom, they are under no need to keep up with the speed of any other students.

In modern times, skill education is bestowed more prominently in the global market increasing employment opportunities. Thus, digital education polishes the students in digital skill learning. According to the India Skills Report 2022, there has been a little rise in the employable workforce in India (from 46.2% to 50.3%). Digital education caters to preparing students for the workforce but still has a long way to go.It provides more learning opportunities to students by reducing the time of travel and is cost-effective. Apart from this, it provides the solution to problems like teacher-student ratio, poor quality teaching, learning, and physical disabilities, etc. through this student-centric educational medium. It caters to the maximum number of students from all over the world, thus reducing the barrier between developed or developing, or underdeveloped countries; rural or urban barriers, and rich or poor students. Students in countries like India are deprived of education due to geographical location and colleges in rural or marginalized areas are failed to provide equitable and high-quality world-class education. Thus, it will provide equal opportunities for all irrespective of income, place, or accessibility. Additionally, because of its student-centered design, it can assist students from disadvantaged backgrounds in receiving a high-quality education without incurring additional costs.

Impact of the Pandemic on the Higher Education System Due to the rapid spread of COVID-19, educational

institutions and colleges in India have been shuttered down since the middle of March 2020. Students, parents, and instructors have experienced major disruptions in their lives due to an emergency lockdown. The economy of the country was adversely affected by the lockdown which imposed everyone to be confined to their home. Automobile, transportation, retail, lodging, dining, hospitality, tourism, sports leagues, public events, airbus, service industries and other industries have a detrimental effect on the country's economy **(Fernandes, 2020).** Many of the mentioned sectors were placed under lockdown for 50 to 70 days until being restored. However, educational institutions continue to be closed since it is impossible for them to sustain social distance.The educational sector began offering online courses to overcome this unavoidable dilemma. The abrupt shift in teaching/learning methodology has created new difficulties and opportunities. The pandemic surely disturbed the whole educational system and forced students and faculty to alter their living and working arrangements.The pandemic provided a new horizon to the modern education system of online mode. Many academic staff members realized that dividing up instruction into numerous minuscule learning activities, such as mini-lectures, group discussions, class polls, and pop-up quizzes, might prove more effective during the pandemic. COVID-19 imposed academic higher education universities across the globe to cancel the traditional chalk-and-talk, face-to-face and classroom teaching, transforming to online teaching/learning **(Bao, 2020; Wang et al., 2020)**. The experiment of a complete online education system was first initiated in urban universities and colleges to continue the online education system. The educational institute opted for various apps, and synchronized modes such as Microsoft Team, Zoom, Google Meet, Webex etc to have face to face teaching-learning process. They tried to innovate a new evaluating mode through various apps, online quizzes, google classroom etc. Many institutes uploaded videos of their lectures on YouTube and other digital library platforms to acclimatize to the challenge of the Pandemic. The teacher could But this unprepared and sudden change hindered the question of learning quality **(Crawford et al., 2020).**Online courses gave faculty access to a new way of training that incorporates cutting-edge materials and technology and may reach many students. **(Appana, 2020)**. Instead, students may learn how to use a variety of internet resources and techniques, pay close attention to recorded or live interviews with experts in their field, listen to and watch lectures several times, and study at their own pace **(Arkorful & Abaidoo, 2015).** Lack of experience with online teaching, the need for more practice time, technical issues with high-speed internet access, getting used to learning, being evaluated online, and inability to connect face-to-face with students and facilitate free conversations, discussions, and mentoring were the limitation cited by many researchers**. (Arasaratnam-Smith & Northcote, 2017; Claywell et al., 2016; Sun & Chen, 2016). Impact of the Pandemic on Higher Education in Rural Areas:**Due to the lockdown, India's education system also needed to be shaken up, particularly in rural areas where there were still many predetermined notions and social norms to overcome. Various organizations launched awareness campaigns and took action to make primary education mandatory for all citizens of India. The largest stop of the century, however, was caused by the COVID-19 pandemic, which shut down every industry and the global economy for an extended period, slowing overall growth. While metropolitan institutions were able to continue offering online courses, the number of rural students declined quickly. The pandemic had impacted the life of 320 million students adversely impacting their education. The initiative of Government and institutional initiatives for education like Swayam, Zoom, Google Meet, Diksha, Radio portal, etc benefitted only 37.6 million students **(UNESCO 2020).**

It was tough for rural students to arrange two meals a day, and amidst this was exigent to arrange smartphone and recharge costs for attending online classes steered by the Colleges. A low level of motivation toward education also led to the notion that education during the period of lockdown will not detrimental effect on the future of students. It was challenging for the family to arrange the smartphone for the family of more than one or two college-going students. The limited data pack of the internet hindered them to attend the long duration of classes and submit assignments.

Lack of internet speed was another constraint in continuing online education**.** Internet speed is like the big elephant in most of the villages in India. Poor internet connection and low internet speed and limited data pack accessibility led to poor teacher students communication, thus hindering their education**.** The situation grew complex in the north-eastern region and mountain and remote areas as the unavailability of the microwave link for using the internet and telephone**.** The problem of the power cut made it tough to attend online classes regularly. The unemployment of parents due to the lockdown and lack of distribution of government ration complicated their life situation to miserable.In the rural areas, as students were first-level leaner, they were unable to cope with the challenges of technological knowledge. They were unable to operate the technicality of online classes and methods of submitting their assignment. The lack of guidance and support from parents found it threatening and alienation in their studies.Many institutes are looking for methods to scale up and extend their digital transformation initiatives moving ahead, even as the epidemic itself starts to stabilize. Institutes are looking for methods to implement blended learning models that integrate a campus environment with the contemporary components of online learning portals now that students, families, and educators

have witnessed the benefits and drawbacks of digital learning. This calls for the development of personalized content that covers the whole spectrum of the student experience, from enrolment through course selection to the search for further help and resources. The development of novel teaching and learning techniques that offer flexibility and the educational experience as the icing on the cake has resulted in a considerable change in education pedagogy. The MHRD and UGC have established several virtual platforms with online repositories, e-books, and other online educational materials. It was very common during this time to combine schooling and colleges with electronic media. Distance learning can be somewhat beneficial even for those without the financial means to own cell phones. **(JENA, 2020).** Financial inefficiency was discovered to be a significant factor in keeping many untouched pupils from attending school for the duration of the lockdown **(McCarthy, 2020)**. many students were unable to carry on with their studies even after getting their own Android phones since they were unaccustomed to or untrained in using educational applications and search engines (**Saha, Barman, &Chouhan, 2020).**

Effectiveness of Online Education Systems or remote learning: To cope with the challenges of online classes, the government of India took various initiatives effectively implement the online education system. The information technology department designed various educational apps, and digital libraries and launched the educational program via TV channels so that the maximum number of students can get benefitted. Many educational videos were uploaded on YouTube for accessing it as per the convenient time of students. The government of India is imagining and shaping E-learning with digital pedagogy as a long-term strategy in the Education sector. It has contributed to the new age of learning which is not restricted to colleges. The Ministry of Education designed the framework of digital education and it was effectively implemented all over the country. Under this framework, the government has initiated several programs and digital guidance for providing digital education with equitable learning in India. The strengthening of digital platforms of learning such as Course Era, PM E-Vidhya, Diksha, SWAYAM Prabha TV, E-Pathshala, Vidya Daan, digital libraries etc. DIKSHA's population-scale infrastructure was launched by the Vice President of India on Teacher's Day in 2017 and is already being used by more than one crore teachers and students across the country in 30+ states & UTs for curriculum-based education and training. DIKSHA already has explanation, practice and assessment content linked to NCERT and state curriculum. There were numerous studies conducted during the Pandemic to find out the effectiveness of online learning. According to **Irfan and Iman (2020),** online learning is useless and carried out improperly. They illustrate this by citing several issues, including inadequate internet access, instructors' incapacity to incorporate online learning, and parents' lack of collaboration.Online learning is beneficial, according to **Wildana et al. (2020),** since it makes it easier to use tools like "WhatsApp," "Zoom," and "Google Classroom." The efficiency of online learning is, however, constrained by internet access and internet package availability, according to Wildana et al.According to **Muhammad and Kainat (2020),** issues with internet connection, a lack of teacher-student engagement, and a lack of technology resources all pose obstacles to the effectiveness of online learning.

Fauziana (2020) stated that students may review their lectures by watching recordings that the teacher developed as well as learn new material from books or the internet to deepen their understanding. As messages may be exchanged during a lecture utilizing the meeting software's chat column, "Whatsapp," "Telegram," video calls, or phone calls, educators and students can also undertake bilateral a discussion. Through the use of the DIdikTV channels for Education, students may also review their lessons.

Hasifah, (2020), conferred that Students can discover new material by examining websites and digital libraries through interactive online instruction. Distance learning makes it easier for information and knowledge to spread throughout the world as more technologies are added to the field of education. (Because it can facilitate more effective self-learning, she claims that online learning is crucial. The amount of time, the subjects covered, and the course of study is all up to the student. Until they are assured of their comprehension, students have the option of going over difficult subjects again. Additionally, kids may study online in a "safe" setting without worrying about looking foolish when they ask questions.

Conclusion-Digital learning was initiated a decade before but at a slow pace. The pandemic gave the prospects to boost online education as the boundaries of educational institutions were closed for students confining them to stay back at home. In the post covid period, students will anticipate more seamless interactions since the future of education is expected to continue blending parts of both physical and digital experiences. The Pandemic gave the opportunity to reduce the mobility of students to gain global educational experience.Various digital platforms and synchronous software helped them to learn new dimensions of learning for students, faculty, and administration. Digital libraries and other resources such as recording of lectures, online assignments, training modules etc. opened the full-fledged door for online education. But on the other side, students missed face-to-face interaction, physical libraries, and other extracurricular activities leading to the blended mode of the education system. In India during the post covid, there was a transformative change in the educational system. The government of India formulated New Education Policy 2020 which indoctrinated the online

education and face-to-face education system in balanced ways. The concept and objectives of New Education Policy 2020 were propagated by online education. The blended mode or hybrid mode leads to both onsite and offsite modes of education thus lowering the cost of education.Building resilient strategies, being open to partnership, and adopting digital transformation will be critical for HEIs to achieve success in the aftermath of the pandemic and transform the entire education system

****

References:

1.Appana, S. (2008). A review of benefits and limitations of online learning in the context of the student, the instructor and the tenured faculty. International Journal on E-learning, 7(1), 5-22.

2.Arasaratnam-Smith, L. A., & Northcote, M. (2017). Community in Online Higher Education: Challenges and Opportunities. Electronic Journal of e-Learning, 15(2), 188-198. Retrieved from https://files.eric.ed.gov/fulltext/EJ1141773.pdf

3.Bao, W. (2020). COVID-19 and online teaching in higher education: A case study of Peking University. Human Behavior and Emerging Technologies, 2(2), 113-115. https://doi.org/10.1002/hbe2.191

4.Claywell, L., Wallace, C., Price, J., Reneau, M., & Carlson, K. (2016). Influence of nursing faculty discussion presence on student learning and satisfaction in online courses. Nurse educator, 41(4), 175-179. https://doi.org/10.1097/NNE.0000000000000252

5.Crawford, J., Butler-Henderson, K., Rudolph, J. et al. (2020). COVID-19: 20 Countries' Higher Education Intra-Period Digital Pedagogy Responses. Journal of Applied Teaching and Learning, 3, 1-21. https://doi.org/10.37074/jalt.2020.3.1.

6.Hasifah Binti Abdul, A. (2020). Keberkesanan Pembelajaran Menggunakan Forum Dalam Sistem ELearning: Kajian Kes Pelajar Tahun 4spi. Johor. Penerbit Universiti Teknologi Malaysia.

7.https://www.unesco.org/en/articles/global-education-monitoring-gem-report-2020

8.Irfan, F. and Iman Hermawan Sastra, K. (2020). Teachers Elementary School in atas talian Learning of COVID-19 Pandemic Conditions. Jakarta. Jurnal Iqra'.

9.Jena, Pravat Kumar, Impact of Pandemic COVID-19 on Education in India (July 30, 2020). International Journal of Current Research (IJCR) , Vol-12, Issue-7, Page-12582-12586 (2020) DOI- http://journalcra.com/article/impact-pandemic-covid-19-education-india, Available at SSRN: https://ssrn.com/abstract=3691506

10.McCarthy Claudinne COVID-19 crisis highlights disparities among students. Wiley Periodicals, Vol 23, Issue 4, pp12-12, **https://doi.org/10.1002/say.30771**

11.Muhammad Adnan; Kainat Anwar. (2020) Online Learning amid the COVID-19 Pandemic: Students' Perspectives, Journal of Pedagogical Sociology and Psychology v2 n1 p45-51

12.Sah, F. and Shah, P. (2020) Teachers' Beliefs and Practices in Teaching Listening. *Creative Education*, **11**, 182-195. doi: 10.4236/ce.2020.112013.

13.Saha, J., Barman, B., & Chouhan, P. (2020). Lockdown for COVID-19 and its impact on community mobility in India: An analysis of the COVID-19 Community Mobility Reports, *Children and youth services review*, *116*, 105160. https://doi.org/10.1016/j.childyouth.2020.105160

14.Sun, A., & Chen, X. (2016). Online education and its effective practice: A research review. Journal of Information Technology Education, 15, 157-190. Retrieved from https://doi.org/10.28945/3502

15.Wang, C., Cheng, Z., Yue, X. G., & McAleer, M. (2020). Risk management of COVID-19 by universities in China. Journal of Risk and Financial Management, 13(2), 36. https://doi.org/10.3390/jrfm13020036

16.Waynesville, NC USA: Association for the Advancement of Computing in Education (AACE). Retrieved on 5 October 2020 from https://www.learntechlib.org/p/22909

17.Wildana Wargadinata, Iffat Maimunah, Eva Dewi & Zainur Rofiq. (2020). Student's Responses on Learning in the Early COVID-19 Pandemic. Malang, Indonesia. Journal of Education and Teacher Training.

Higher Education through the Medium of Indian Languages Opportunities and Challenges: Dalit and Tribal Perspective

Dr. Suresh Kurapati
Assistant Professor
Dept. of English, CUSB.

Abstract: -This paper will share the findings of an empirical study conducted among the research scholars belonged to Telugu as a mother tongue. Telugu is one of the official languages of India. Most of the scholars studied in Telugu as a medium of instruction in their early education like primary and secondary schooling and were supposed to shift to English medium during their higher education. Due to this students struggled a lot in higher educational institutions. Contrary to this their counterpart students who began their schooling in English medium in spite of having / knowing their regional official language were coping well in their higher education and got employment a bit easily in India and abroad.

Theoretically, studying any subject or discipline in one's mother tongue is always a desirable and confortable situation. But in a country like ours- a multi-lingual, in many of the cases the language of learners is different from the state official language. So they were studying and learning the state language and later again forced to move to another foreign language in order to get employment. In this way most of the learners spend a lot of precious time in learning the languages in the process of education. This is burdensome and undesirable. Therefore, this paper will discuss challenges of Higher Education through the Medium of Indian Languages, especially, in 'language variety acceptance and rejection', 'faithful translation', employment, etc. In spite of its challenges, this paper also welcomes the move for implementation of Higher education through Indian languages for identity and 'decolonizing the mind'.

Keywords: Indian Languages, Dalit and Tribal Education, Promotion of Native languages, etc.

Introduction: The issue of higher education through the medium of Indian languages is complex and multifaceted, with both opportunities and challenges. From a Dalit and Tribal perspective, there are several important considerations to keep in mind. On the one hand, providing higher education in Indian languages can help to promote greater inclusivity and access to education for historically marginalized communities. This is particularly important for Dalits and Tribals, who have faced discrimination and exclusion from educational opportunities for generations.At the same time, there are significant challenges that must be overcome in order to make higher education through the medium of Indian

languages a reality. For example, there is a lack of quality learning resources, textbooks, and instructional materials available in these languages. Another challenge is the perception that higher education in Indian languages may be less prestigious or valuable than education provided in English or other foreign languages. This perception can lead to stigmatization and discrimination against those who pursue higher education in their mother tongues.

Educating in one's mother tongue -Theoretically sound: There are several advantages to educating in one's mother tongue. Some of the most important benefits are:

Greater Access to Education: Many students in India face barriers to education due to foreign language(s). Educating in one's mother tongue can help to remove these barriers and provide greater access to education.Improved Learning Outcomes: Research has shown that students who are taught in their mother tongue are more likely to achieve better learning outcomes. This is because they can understand the material more easily and can express themselves more effectively in the language they are most comfortable with.Better Understanding of Concepts: When students are taught in a language they understand, they can better grasp the concepts being taught. This leads to deeper understanding and better retention of knowledge.Preserving Cultural Identity: Education in one's mother tongue can help to preserve cultural identity and promote diversity. This is particularly important in a country as diverse as India, where there are many different languages and cultures.

Improving Communication Skills: Educating in one's mother tongue can also help to improve communication skills. When students are comfortable with the language they are being taught in, they are more likely to participate in classroom discussions and express themselves confidently.Unfortunately, many of the learners miss this opportunity because their mother tongue languages are labeled with many of the adjective such as limited number of people's language, small community, minority group, socially marginalized group, not a pure language, not a standard language or dialect, tough language, non- official language, etc. Contrary to this adopting a major language or any of the official language may not be a great help if it is not similar to the mother tongue. There is a potential benefit of mother tongue education for better conceptualization and expression irrespective of stages or levels of education.

Emergence of English at Higher education:-Due to colonization, after 1835 with the introduction of *English Education Act*, English language was enforced for the tertiary level through 'filtration' theories. We all know and experienced about it our own contexts. In a nutshell, we can assess it having few advantages and more disadvantages. Due to learning or engaging a foreign language most of the valuable time is wasted and learning the language became a life task. In the due course of time we lose the spirit of learning or education. It actually affected Tribals and Dalit with the burden of language learning. Therefore, it is a much debated issue in the circles of Dalit, Tribal, and Non-Dalit intellectuals as to which is the most appropriate language for Dalit and Tribal Education, especially, Regional language or English.

Affect of English language on Dalits and Tribals:

English education has had a complex and often problematic relationship with marginalized Dalit and Tribal communities in India. While English education has been promoted as a means of upward mobility and access to better job opportunities, it has also been associated with social exclusion and marginalization of these communities.One of the key ways in which English education has affected Dalit and Tribal communities is by reinforcing existing social hierarchies and power imbalances. Because English education has historically been associated with the elite and upper castes, it has been difficult for Dalits and Tribals to access and succeed in these educational systems. This has perpetuated a cycle of marginalization and exclusion from opportunities for social and economic advancement.In addition, the promotion of English education has often come at the expense of education in local languages and cultures. This has contributed to the loss of cultural knowledge and practices among Dalit and Tribal communities, and has undermined efforts to promote linguistic diversity and cultural preservation.

Participation of Tibals and Dalits in Education:

[Disclaimer: Tribals and Dalits in the study are from combined Andhra Pradesh who were first generation learners]In ancient India education was meant for only some sections of the society as the system of caste was predominant. So, Tribals and Dalits were deprived their basic right of education in the name of Manusmruthi for nearly 3000 years. The education was in the so called pure language i.e. Sanskrit, Persian and Arabic. Even if an untouchable tried to listen and read, he/she was brutally punished by pouring hot lead or oil in his/her ears and mouth. Thus they were not part of ancient Indian education system but had their own education in their own style.Even in pre-independent India Tribal and Dalit education has taken a back seat. At the time of the East India company establishment and at the time of freedom fight movement Tribal and Dalit manpower was extensively used but they were not allowed to study in any public or private institutions. In the 1830s, when Lord Macaulay introduced English education in India, very interestingly many non-Dalits and Tribals embraced English education. The upper caste, highest strata of the society, who treated Sanskrit as a "devabasha"

and "pure" language, embraced English language first. Then started English language imperialism over indigenous languages of India. Moreover, the process of English language learning is a top down approach; the language embracing has started from "high varna" to the "low varna" of the caste system. It took centuries to get formal education and English education among Dalit and Tribal folks. It is a much debated issue in the circles of Dalit and Tribal intellectuals and Non-Dalit and Tribal intellectuals as to which is the most appropriate language for their Education. Many of the Dalit activists suggest or recommend only English medium of instruction for Dalits based on some reasons. The same amount of opposition for the English medium of instruction is also seen from both Dalits and Non- Dalits. Besides these arguments educational psychologists suggest mother tongue medium of instruction as a better medium of instruction for anybody. So, I have collected a sample of data from Dalit and Tribal postgraduate students to debate on the same issue.

The rationale behind selection of the post graduate students is:

They are the actually affected or beneficiaries as they have been in the field of education for more than 20 years. They know better than any other person what their problem is, either in the Telugu medium of instruction or English.As all the subjects are having the highest qualification i.e. Ph. D., they are mature enough to decide what they really want.

Methodology:-In this small scale survey, I have taken 26 Ph. D., pursuing students of University of Hyderabad, including men and women from different subjects of study like, Telugu, Hindi, Political science, Folklore Studies, Physics, Chemistry, Anthropology, Sociology, Economics, History, Philosophy, Linguistics, Biotechnology, Business Administration, Translation Studies and Comparative Literature.

The questionnaire has the following structural interview questions have been administered through informal interviews ranging 5 minutes to 20 minutes. The languages used for the data collection are Telugu and English based on their convenience. The main objective of these primary questions and related questions based on their answers is to find out the choice of medium of instruction.

Structural Interview Questionnaire

Name of the interviewee: _____

Mother tongue of the interviewee: _____

Qualification of the interviewee:_____

In which medium did you start your education? Are you still continuing the same medium of instruction? **(If yes)** are you comfortable in that medium of instruction? What is your medium of instruction now? **(If changed)**, what-was the reason for changing your medium of instruction? Have you regretted having studied in Telugu Medium of instruction? Why? What would be the appropriate medi(a)um of instruction for Dalits and Tribals in the present context? Why do you think that medium of instruction is suitable for Dalits and Tribals?At what level onwards, would you recommend English medium of instruction?What is your reaction about the recommendation of regional medium of instruction (L1) for Dalits or Tribals? What is your reaction about the suggestion, "let us leave our mother tongue medium of instruction aside and study only in English" as Kancha Ilaiah says?

Do you think English medium of instruction affects Dalit or Tribal culture, cognitive skills and identity?

Opinions of the survey: As mentioned above, in this survey 26 Ph. D., research scholars of the University of Hyderabad participated. Except one, all research scholars had started their education in the **Telugu medium.** One studied in the English medium. In the process of education most of the participants shifted from the Telugu Medium to English at different stages; some of the participants shifted at the intermediate level, others shifted at UG, PG, and M.Phil levels. Most of the research scholars who studied in the regional medium at high school or college level faced many problems to cope with other English medium learners in spite of having good subject knowledge. So, 75% of the subjects regretted having studied in the Telugu medium and not having studied in the English medium. Very few of the participants (15) felt it was an opportunity to gain mastery over both languages. When the research scholar who studied in the English medium studied research scholar interviewed he said he never regretted not having studied in the Telugu medium. He says he can use Telugu comfortably. He understands English better than his counterparts.

In this survey 23 out of 26 Dalit scholars strongly recommended English medium of instruction for Dalits rather than the regional medium of instruction and the rest of students. Even among the four Ph. D., Telugu participants, only two participants recommended Telugu. But finally they also preferred to send their children to English medium of instruction rather than Telugu medium of instruction. One participant said he can't say anything now. In this survey, most of subjects are supporting/recommending/suggesting the English medium of instruction putting aside their regional medium of education, because of the following reasons: English is essential in this globalisation scenario; it is considered lingua franca in the present context. It creates opportunities to take up any job anywhere in the world. Without English one cannot get a job in any private sector in India or in AP. Learning English is a rebellion against language hegemony of other castes. Dalit Telugu is very far away from the prescribed text book Telugu.

Educational psychology: When it comes to the question of mother tongue or English medium of instruction, any educational psychologists suggest mother tongue medium of instruction over any other tongue (English medium).But one must understand that if the primary motive of education is for the economic development one must consider which language is really preferred by the employer. When it comes to the job market every employer wants English.

English in the Dalit Context: Problems and Prospects

In such a scenario, English is a life and death issue for Tribal and Dalits in the globalised and private sector employment scenario. The burden to learn English is many fold. One's parents and his/her family environment may not readily support English language acquisition as most of the Tribal and Dalit parents are uneducated/semi educated. Second, in the education system in India there is no uniform education among all the people. It is economic status based kind of education, where the rich go to better schools and the poor go to poorer schools.

The Problem of the Participants who studied in the Telugu Medium: Yes, as education psychologists suggest learning a foreign language hinders their cognitive abilities and skills to some extent. But, as most of them (Non-Dalits and Dalits) are studying in English the cognitive loss is the same for all Indians. So it does not affect only Dalits. In many cases, the Dalits who have started education in the regional medium and shifted to English later are facing many problems. They can neither use Telugu nor English proficiently and fluently. This leads to submerged education.

Conclusion: Overall, addressing these challenges will require a multifaceted approach that involves government policies, educational institutions, and civil society organizations. This could include initiatives to develop high-quality learning resources in Indian languages, training programs for instructors in these languages, and efforts to promote the value and importance of education in Indian languages. Moreover, educating in one's mother tongue has many benefits and can contribute to better learning outcomes, greater access to education, and a more diverse and inclusive society. Tribals and Dalits do believe in linguistic diversity to maintain identity and culture. But, depending on the present need of the hour-- globalization and privatization scenario all most all the Tribal and the Dalit scholars are demanding English medium of instruction. Both Tribals and Dalit students want English to mingle with the main stream society and for their economic empowerment. They do want to learn their mother tongue as one of the subjects. i.e. all the subjects in English and Telugu as a compulsory language. In order to promote mother tongue education in India the following aspects should be encouraged:

1.'Standardization of languages': Though we have many languages spoken by great number of people in in millions, there is no standard variety without ambiguity. In order to make our language more robust we need to take up the language standardization process to make it more robust and acceptable by the linguistic community. It should also facilitate to re-standardize the languages.The term re-standardization refers to the ways in which a language may be reshaped by its speakers and writers. There is a need to simply or make less complex our languages, changes need to be brought in every language.

2. Publication of dictionaries: No pain no gain-Today every language is having dozens of dictionaries but interestingly there is no well-known dictionary to depend for language needs. In order to make our language dictionaries, first we need a national level dedicated press without compromising quality and quantity. It should serve with the aims and objectives of national interests of language development. The saddest part is we have thousands of universities in India none of them having a reasonable presses. The establishment of non-profitable university presses will promote our languages. They can actively engage in inter-lingual language translations of literary and non-literary texts of Indian languages.

3. Languages flourish by usage: There is a need to publish our inventions, discoveries and knowledge in our own languages. Until and unless we use them, they will not flourish.According to Ngugi wa Thiong'o is a renowned Kenyan author and scholar who has been a vocal advocate for the use of native languages in education and literature. In his book "Decolonizing the Mind: The Politics of Language in African Literature," he argues that language is not just a means of communication, but also a fundamental aspect of identity, culture, and resistance.

****

References:

1. (n.a.) (2010). "Dalits See English as Social Leveller." The Times of India. Retrieved November 20, 2010 from http://timesofindia.indiatimes.com/india/Dalits-see-English-as-social- leveller/articleshow/5449983.cms#ixzz19HIaZBsd.
2. Anand, S. (1999). "Sanskrit, English and Dalits." Economic and Political Weekly. *July 2053-2056.*
3. Government of India. (2020). *National Education Policy 2020*. Retrieved from https://www.mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0.pdf
4. London: Faber and Faber.
5. Mohanty, A. K. (2010a). Languages, inequality and marginalization: Implications of the double divide in Indian multilingualism. *International Journal of the Sociology of Language, 205, 131–53.*
6. Ngugi wa Thiongo. Decolonizing the mind: the politics of language in African literature. London.
7. Prasad, C. B. (2006). Why Dalits Want English. Times of India. Retrieved November 27, 2010, from http://timesofindia.indiatimes.com/home/opinion/edit-page/Why-Dalits-Want-English/articleshow/372570.cms
8. Viswanathan, G. (1989). Masks of conquest: Literary study and British Rule in India

Startup India:Challenges and Opportunities

Dr.Vandana Pandey
Assistant Professor in Department of Commerce,
S.M.M.T.P.G. College. Ballia (U.P.)

ABSTRACT-A scheme which believes in to make the young job creators rather than job seeker as well as emphasis on that one's mindset should not be towards earning money in the initial phase, it should be rather on grabbing and using the opportunities.No doubt that Technology is evolving with the pace faster than ever. This has given birth to various new businesses like E-commerce, Internet Marketing etc. So, there is a great scope of development in such areas. Those who plan to start new business are eligible to apply. In this research paper an attempt has been made over the challenges and opportunities of startup India scheme launched by Govt. of India**.**

Key words : Startup, Concept, challenges, opportunities, economy

INTRODUCTION- The economy of every country depends on its countrymen. Larger the number of employed or working people, better the economy. The Indian Government realized that Indian people have a potential to work hardly, all they need is a promising start up. Many people dream of starting up their own business but due to financial or other similar issues are unable to do so. So, Indian Government in the leadership of Narendra Modi has decided to offer a gift as a nation wise programme – "Startup India". "Startup India is a revolutionary scheme that has been started to help the people who wish to start their own business. These people have ideas & capabilities, so the Government will give them support to make sure they can implement their ideas and grow. Success of this scheme will eventually make India a better economy and a strong Nation." Startup India is an initiative of the Government of India. The event was inaugurated on 16 January 2016 by finance minister Arun Jaitley.

India is a country of many great legends that were famous all over the world because of their work, sharp mind & high skill. Youths in India are very talented, high skilled & full of innovative ideas. But they don't get opportunity due to lack of solid support & proper guidance in right direction. In this way, BJP government launched "START UP INDIA STAND UP INDIA" scheme on 16 January 2016 to help the youth of India to go in right direction using their new & innovative ideas. This scheme was launched to motivate & promote new comers towards business & grow their career as well as economy of the country. This programme is a big start to enable Start ups through financial support so that they can use their innovative ideas in right direction. There are tremendous opportunities for Start up entrepreneurs in India. The key areas are Like Textile, Media, Health Sector, Event Planner, Tourism, Automobile etc. So there are various opportunities where entrepreneurs can start their Start ups. But along with opportunities there are some challenges also that Start up entrepreneurs may have to face like Infrastructure Deficit in India, Risk Factor and Right Talent Acquisition etc. Despite of these challenges, Government as well Start up entrepreneurs should have to work together to face these challenges & make this programme effective. The study will focus on Start up India scheme, opportunities available under this scheme as well as challenges may have to be faced & suggestions to overcome the challenges so as to make the Start up India programme successful.

Under the Startup India Scheme E- registration will be done, A self certification system will be launched, A dedicated web portal and mobile app will be developed, Arrangement of self certificate based compliance, No inspection during the first 3 years, 80 percent reduction in the application fee of start up patent, Easy exit policy, Inclusion of Credit Guarantee Fund, Relaxation in Income Tax for first three year, Special Arrangement for Female applicants, Introduction of Atal Innovation Mission. Innovation courses will be started for the students

OBJECTIVES OF THE STUDY-This study is to analyses the start up india . The main objectives of the study can be listed as follows:

· To analyze the concept of STRATUP INDIA.

· To know the need of STARTUP INDIA scheme and coming challenges in the path of STRATUP.

· To study the opportunities for startup scheme in Indian scenario.

· To study the opportunities and advantages if India become successful as startup india..

SIGNIFICANCE OF THE STUDY-This paper discusses about the current scenario of START-UP INDIA scheme and It also strives to describe the focuses on the impact of START UP on our economy, Challeges and opportunities of it. Government has started this scheme with the view of sustainable development and rapid economic growth and with the dream of making India a self reliant country worldwide.

***RESEARCH METHODOLOGY**

This is a descriptive research and based on secondary data. The study is basically conceptual in nature and for the purpose of the study; an extensive review of literature has been studied and identified the critical challenges facing in India.The data has been collected

from internet, related texts like textbooks, journals and other publications of professional were also consulted, news paper, websites and different reports given by the government.

DEFINITION OF A STARTUP:-This really is the most fundamental question that comes up. When such policies are announced for startups, it is important to know who would even fall within that definition. None of our present statutes define 'startups' and therefore, it was important that the government came up with a definition that was broad enough to avoid disappointments. The action plan defines startups as:"Startup means an entity, incorporated or registered in India not prior to five years, with annual turnover not exceeding INR 25crore in any preceding financial year, working towards innovation, development, deployment or commercialisation of new products, processes or services driven by technology or intellectual property. Provided that such entity is not formed by splitting up, or reconstruction, or a business already in existence.Provided also that an entity shall cease to be a Startup if its turnover for the previous financial years has exceeded INR 25 crore or it has completed 5 years from the date of incorporation/registration. Provided further that a Startup shall be eligible for tax benefits only after it has obtained certification from the Inter-Ministerial Board, setup for such purposes."

***OBJECTIVES OF STARTUP SCHEME:**

1.Startup India campaign is based on an action plan vsion.

2.Promoting bank financing for start-up ventures to boost entrepreneurship

3.Encouraging startups with jobs creation.

4.To restrict role of States in policy domain and to get rid of "license raj" and hindrances like in land permissions, foreign investment proposal, environmental clearances.

5. **Promoting entrepreneurship among SCs/STs, women communities.**
6. **To make the young job creators rather than job seekers.**
7. **Promoting the scope of development of E-Commerce, e-marketing.**

It was organized by Department of Industrial Policy and Promotion (DIPP). A startup is an entity that is headquartered in India which was opened less than five years ago and have an annual turnover less than 25 Crore (US$3.7 million). The government has already launched PMMY, the MUDRA Bank, a new institution set up for development and refinancing activities relating to micro units with a refinance Fund of 200 billion (US$3.0 billion).The event was inaugurated on **16 January 2016** by the finance minister Arun Jaitley. Among the attendees were around 40 top CEOs and startup founders and investors . The Ministry of Human Resource Development and the Department of Science and Technology have agreed to partner in an initiative to set up over 75 such startup support hubs in the National Institutes of Technology (NITs), the Indian Institutes of Information Technology (IIITs), the Indian Institutes of Science Education and Research (IISERs) and National Institutes of Pharmaceutical Education and Research (NIPERs).

The Reserve Bank of India said it will take steps to help improve the 'ease of doing businesses in the country and contribute to an ecosystem that is conducive for the growth of startup businesses.

Soft Bank, which headquarter in Japan, has invested US$2 billion into Indian startups. The Japanese firm had pledged the total investments at US$10 billion. Google declared to launch a startup, based on the highest votes in which the top three startups will be allowed to join the next Google Launch pad Week, and the final winner could win an amount of US$100,000 in Google cloud credits, Oracle on 12 February 2016 announced to set up nine incubation centers in Bengaluru, Chennai,Gurgaon, Hyderabad, Mumbai, Noida, Pune, Trivandrum and Vijayawada

***EIGHT CHALLENGES FACED BY AN INDIAN STARTUP:**Coming up with a startup idea is a very regular thing for someone aiming for an independent work life. But implementing the idea is a real big challenge which gradually gives rise to a chain of challenges. Here follows a list of challenges every startup is bound to face:-

1. Team: The most important element of every startup is a team of dedicated people who know their work and do it without being reminded of the same. Finding a good team is the first major challenge. As per a survey, 23% of the failed startups had the wrong team. Steve Hogan, who runs a company called Tech-Rx, which is a startup turn-around shop pointed out that the top reason of a failed startup is the absence of co-founders. **According to Cassandra Phillips who is the founder of Falcon (a conference where founders of failed startups would share their learned lessons) "It's either you started making a startup with friends who didn't have complementary skills or the opposite - people you think have the perfect balance of skills, but then completely different ways of communicating."**

2. Location: The most important problem faced by an Indian startup is the location from where it is being launched. India is a place of varied culture and taste, thus, every product might not be welcomed equally by every region. A survey found out that 42% of the failed startups attribute their failure to the lack of their market

need. Now, this is where we shouldn't follow Steve Jobs' suggestion of 'not asking what the customer wants.'

3. Marketing Strategy: This follows the above challenge. Just like the fact that every product is not meant for every location, every marketing strategy wouldn't work for every region. Poor marketing is the reason behind 14% of the failed startups.

4. Legal Constraints: Once a company has been founded, it's significant for the members to get acquainted with all the legal constraints associated with the product(s) they are dealing with. 8% of the failed startups are due to legal challenges.

5. Funding: This challenge is solely dependent on the business model. The model decides whether a huge amount of funding requires or not and most importantly when's the right time to invest.

6. Management of resources right from the beginning: Once the business starts flourishing, it gets all the more important to manage the inflow, investment in an organized way as there would soon be generated too many data to handle. Every small bit of mismanagement would amplify as the company would grow and things can get real messy and out of proportion.

7. Getting the right information/advice: This comes down to the challenge of getting in contact with the right kind of people who has in-depth knowledge on the areas concerning the startup.

8. Fighting de-motivation: This gets more important when it comes to Indian startups because in many regions here the idea of students choosing an unconventional path is still perceived as destroying one's career.

CHALLENGES CAN BE CLASSIFIED AS:

Culture - Entrepreneurship and startups are only a recent phenomenon in the country. It is only in the last decade and half that people in the country have moved from being job seekers to job creators. Doing a startup is tough and every country sees more failures than success. More often than not an entrepreneur needs to be prepared to face failures and unprecedented hardship. However, culturally we are not groomed to fail and failure is frowned upon. Entrepreneurship thrives on celebrations and a society that fails to appreciate business failures stifles innovation and creativity even before it can start. A startup failing has to be OK as failures often teach an entrepreneur, what to do and what not to do.

Mentoring - Doing a startup is perilous and often a lonely journey. You may have co-founders, but you may not necessarily possess the business acumen to succeed. Having a brilliant idea is different from making that idea a business success. For a startup, it is very important to have mentors who have been through a similar process of starting or have business experience. A great mentor is often what separates success from failure by providing valuable inputs. However, there is no formal mechanism to mentor startups in the country. Every mentoring that happens is on an ad-hoc basis. A startup that has raised funds can count the investors for some form of mentoring, but honest, unbiased, good business mentors are far and few in between. For startups finding a good mentor is often an uphill task.

Policies - Government is the single largest enabler for the entrepreneurial ecosystem. Government's role in ease of doing business and helping companies start is vital to ensuring success. The latest World Bank Ease of Doing Business (out of 189 economies) ranks India at an abysmal 142 where starting a business rank for the country is even lower at 158.It is uncannily difficult to start a business in India and myriad laws and regulations means it takes about 30 days to comply compared to just 9 days in OECD countries. The government's role has so far been limited to giving out grants and loans, but without an effective, enabling environment, implementation is far off the target. In this regard it will be interesting to see the contours of the recently announced Startup Fund in this year's budget. For startups to thrive and succeed, the government has a lot to do and understand the importance of entrepreneurship in economic development.

Hiring - The economy has been in a flux and along with the world economy the heady days of high growth are long gone. In an uncertain economy where one is not sure about demand, for a startup, it is particularly difficult to make correct estimates on the number of employees needed. This, however, is the minor problem where the biggest issue is about finding skilled manpower. India's skilling need is so huge that National Skill Development Corporation (NSDC) has been mandated to skill 150 million Indians by 2022. For a startup, it is particularly difficult to attract and hire talent and skilled workers. A startup often cannot match the salaries drawn at larger companies nor is a job at a startup seen as a steady one. This means startups face severe hiring challenges and at times have to settle for the next best option.

Funding - Capital and access to capital has been a perennial problem for startups. While, of late angel investors, venture capital and private equity have brought succor to some extent, a large number of startups still grapple to raise funds from institutional setup. Funding challenge is not merely limited to seed rounds, but also for vital Series A and B rounds. For a startup looking to scale, it is still very hard to raise rounds to scale as the number of investors that write larger cheques in India are very limited in number.

KEY POINTS TO FACE THE CHALLENGES:

Single Window Clearance even with the help of a mobile application.10,000 crore fund of funds. 80%

reduction in patent registration fee.
Modified and more friendly Bankruptcy Code to ensure 90-day exit window.
Freedom from mystifying inspections for 3 years.
Freedom from Capital Gain Tax for 3 years.
Freedom from tax in profits for 3 years.
Eliminating red tape.
Self-certification compliance.
Innovation hub under Atal Innovation Mission.
Starting with 5 lakh schools to target 10 lakh children for innovation programme.
New schemes to provide IPR protection to start-ups and new firms.
Encourage entrepreneurship.
Stand India across the world as a start-up hub.

OPPORTUNITIES REGARDING STARTUPS:

The Indian Middle Class Rises- The success of an economy depends on a number of social, economic, political conditions prevalent in the country. India got its independence in 1947 and thus started the difficult nation building process. The government of the day focused on making quality education available to India. Getting good education and hard work remained the mantra for the large Indian middle class population, something that you see deeply ingrained in this segment even today.

The Indian middle class story saw a huge shift in early 1990 with the introduction of reforms and the increasing integration of Indian economy into the global market. The economic reforms coupled with globalization saw a huge mind shift among the Indian middle class. The rise of Indian IT Industry in the late 90s not only gave rise to an increase in average income levels in the country but also created a well-traveled global Indian. The increase in average income created a sense of financial security in the minds of Indians who could now think beyond basic needs of **roti kapda and makan.**

Thus was created a new breed of the Indian middle class – very well educated, hardworking and ambitious. Someone with a global mindset and awareness about the problems that exist in our country and how technology had solved these problems in the west.Today as the environment becomes more and more conducive to start your own venture, it is this breed of the new middle class Indian who is creating global companies out of India. The nascent and unorganized state of infrastructure within various segment of the Indian industry and the opportunity presented by India's population makes each and every sector in India very attractive right now. Entrepreneurs in India have identified these opportunities and are trying to digitize/ organize various sectors. There is an evident change in the professional and social preferences of the new Indian population.

2-**Changing Job Preferences-** While the silicon valley gave us new gods, the likes of Steve Jobs and Mark Zuckerbergs, who showed us how following your heart was the best thing that you can do to yourself, the new age middle class Indian, with an increased risk appetite is surely walking on that path !The new age India today is ready to break away from the typical career paths, to take a chance, to follow their hearts and this is clearly evident from the hiring trends that we are currently seeing in the country. Traditional recruiters in India are said to be under pressure to up their game as more and more talent is tending towards working with growth companies.A budding startup ecosystem, challenging assignments, huge funding and an associated coolness quotient are attracting a lot of talent towards the Indian startup space.

3- Trends in Graduate Hiring- Hiring in Indian IITs always makes news due to the crore plus packages that are offered to the students. Hiring trends in IITs are also seen as showcasing the trends of interests that young talented India is portraying. And the trends in first phase of the IIT placement season that concluded on December 31, 2014 were clearly showing a growing interest towards startups.The year not only saw more number of startups actively participating in the campus recruitment process but also saw them offering higher packages in order to compete with our regular visitors and lure the students. In fact, startups and ecommerce companies were among the topmost recruiters of the year. Placements in start-ups have accounted for 13% of the total number of students placed from IIT-Madras where as many as 65 start-ups recruited and made 122 offers in more than 75 profiles.

The year also saw a number of IIT students either declining job offers or completely skipping the campus recruitment process itself, mostly, due to their growing interest into entrepreneurship. As per reports, at least 40 students across IITs have opted out of campus placement process to start their own ventures. While in the last placement season, only 1 student from IIT-Bombay opted out of the process for entrepreneurial pursuit in 2014, this year the number went up to 11. The number of students at IIT-Kanpur shunning the process for their startups in 2014 placement season was reported to be 5, which was at 14 this season. At IIT- Guwahati, 6 students opted out of the process to pursue entrepreneurship in the 2015 season. The number had stood at 3 last year. Unlike few years back when IITians preferred to get job experience in the industry before launching their own start-ups, many IIT fresher's now prefer to pursue their dreams, experiment and come up with innovative products & services via their own startups immediately after graduating from college.

4-MBA Hiring Trends- Hiring trend among top MBA

colleges also make a news ever year because of the high packages and also because it is a reflection of preferences of India. Among India's top MBA colleges too students are lining up to get placed in the startup and e-commerce sectors making it one of the hottest job segments in India right now.According to an ET survey, the number of students opting for jobs in startups and e-commerce companies grew from 1 in 9 from the 2013-2015 batches from 1 in 19 from 2012-2014 batches. Startups and e-commerce sectors are offering salaries up to 10-18 lakhs.A number of analysts are comparing this trend in hiring to that of initial times of the Indian IT Industry.

5-Mid and Senior Management Turns To Startups- The opportunity and challenges that startups and growth companies are providing today is really huge. Talk to any mid or senior management executive in India today and you cannot miss hearing about how they are looking for something challenging to work on. A lot of mid/ senior level managers who could not take a risk early in life due to responsibilities feel much more comfortable about it today after having made a considerable amount of savings and looking at the support that the startup ecosystem in India is seeing.Increasingly a trend is being observed where more and more mid-level officials are quitting cushy and humdrum jobs at big firms to work for startups. Startups are not only offering challenging assignments but with lot of funding happening in the space are also able to provide with huge compensation packages including stakes and equity in start-ups, or milestone-linked compensation packages making startups a very attractive value proposition for people looking for additional challenges.The risk associated with whether the startup succeed or fails always remains but with good packages and a lot of challenging opportunities available to people who have proven themselves in the startup environment, more and more people are ready to take the leap.

6- Changing Social Outlook- There was a time in India many years ago when the only socially accepted job was a government job. Then came the private sector jobs, then the MNCs and slowly and steadily jobs at startups and having your own startup are also gaining more and more social acceptance each day. In the middle of a number of reports which said how having your own startup is not very conducive to your marriage prospects, Jeevansathi, a matrimonial website has witnessed a 55 % increase in self-employed profiles in last couple of years. Rohan Mathur, the VP and head of Jeevansathi said that nowadays parents are fine with an entrepreneur groom as long as he has good educational background.The number of couples who have started companies together is also growing in India, thus showcasing a trend that more and more families are becoming open to taking some risks.

RECOMMENDATIONS-But there are some issues which have to be considered before implementing this program: Indian banks have already such a huge NPA. Considering the success rates of the start ups, Indian banks are taking a huge risks with there money.Finance is just a fraction of issues the entrepreneurs are facing. There are a lot of issues such as infrastructure, a platform to discuss their issues among different entrepreneurs and experts, and finding markets for their products. Only with financial support an entrepreneurial venture cannot become successful.Issues like red-tapism and liscence raj are not yet sorted out."Ease of business doing in India" is still an issue.The money obtained from banks may be channeled for the wrong purposes.So instead of giving an whole sum of money as credit, it should be taken care that money be transferred in steps on basis of an evaluation by an expert commitee.

CONCLUSION- To conclude, the action plan is largely optimistic since it shows a very positive intent by the government. However, going forward, it is critical that the government sets up a team of founders, investors, angels, lawyers and accountants who can ensure that the final policies surrounding startups are as flawless as possible and maintain the right balance between accountability, transparency and doing business.Overall "Startup India" is a good programme which can revolutionize Indian economy and even may result in an "Indian Google" or "Indian apple". But care must be taken that the above lacunae are also taken for consideration.

****

REFERENCE-

1. "PM Modi in Mann Ki Baat: 'Start Up India, Stand Up India' action plan on January 16 - Times of India", The Times of India
2. Start-Up India plan on Jan 16: Modi on Mann ki Baat",The Indian Express, 2015-12-27
3. "Start-Up India campaign: We are growing much faster, says Arun Jaitley : Delhi, News - India Today",indiatoday.intoday.in
4. Cabinet clears Stand Up India scheme for women and SC/ST
5. "What India's Narendra Modi Can Do for Indian Startups",Inc.com, 2015-09-25
6. "Startup India action plan to provide final break from license raj: Arun Jaitley", The Economic Times
7. "PM Narendra Modi to unveil startup action plan today as a major breakthrough for entrepreneurship in India - The Economic Times", The Economic Times
8. "Start up India: This is the beginning of big bang start up boom in India, says Softbank CEO", The Hindu, 16 January 2016
9. "RBI to create enabling framework for growth of start-ups". The Hindu. 2016-02-02. ISSN 0971-751X. Retrieved 2016-02-04.
10. "Startup India event Live: Adventure, doing the impossible is all entreprenership, says Uber CEO Travis Kalanick", The Financial Express, 16 January 2016
11. "After Digital India, Oracle seeks to participate in Make in India, Startup India", Live Mint, 13 February 2016
12. "Startup Mission to ink pact for innovation zone". The Hindu. 2016-01-03. ISSN 0971-751X.
13. PM Modi to launch 'Startup India' campaign today
14. "NIT-Silchar joins Modi's Start-up India campaign - Times of India", The Times of India
15. "With 'start-up India', research parks to bloom", The Hindu, 2015-10-23, ISSN 0971-751X
16. "The problem with Indian education and how technology can help - Blog - Fluency", www.fluency.in

Changing Pattern of Food Processing Industry in India After Globalisation

Ms.Anchal Yadav
Research Scholar, Department of Economics
Amar Singh(P.G.) College Lakhaoti, Bulandshahr.

Dr. Dushyant Kumar
Prof., Department of Economics
Amar Singh(P.G.) College Lakhaoti, Bulandshahr

Abstract-*A well-established food processing industry plays an important role in ensuring a variety of agricultural production and marketing, raising the price of agricultural production, creating employment opportunities, assisting farmers in increasing their income, promoting export-oriented produce, and ensuring the supply of goods even during off-season. Over the last two-three decades, the Indian economy has experienced significant growth, with agriculture, industry, and the service sector all playing a larger role. India's international trade has risen as a result of the liberalisation, privatisation, and globalisation (LPG) programme, and it has become a major producer of various commodities throughout the world. The GDP and the contribution of different sectors to the GDP are indicators of an economy's strength.*

Key Words: Favourable Climate, Affordable Prices, Commodity Processors,

1.1 INTRODUCTION-The food processing business in India is a young industry that has risen to prominence in recent years and has a lot of room for growth. The availability of abundant raw materials, a relatively low-cost skilled workforce, a critical market, changing lifestyles, a variety of climatic conditions, and proper fiscal policies, among other factors, provide a favourable climate that has accelerated industrial growth. This industry serves as a link between agricultural and adjacent industries and industry. It is critical in reducing agricultural raw material waste, increasing the value addition of agricultural produce such as increasing shelf life and fortifying the nutritive capacity of food products, ensuring remunerative prices for farmers as well as affordable prices for consumers, and ensuring the availability of processed food even during the off-season. This industry may be useful in ensuring food security and lowering food inflation. Furthermore, this sector contributes to the creation of revenue and employment opportunities, resulting in an improved standard of living for individuals.

The food processing business is largely reliant on agriculture and related industries. Agriculture is the backbone of the Indian economy, with agriculture providing employment to 70% of the country's population. Between 1950-51 and 1970-71, the contribution of agriculture and related industries to GDP was between 52 percent and 42 percent, based on 2004-05 base prices. It fell to 28.54 percent in 1991-1992, 22.39 percent in 2001-02, 14.37 percent in 2011-12, and 13.94 percent in 2013-14 as a result of fast industrialization and economic expansion. Furthermore, this industry employs the majority of the country's working population. Agriculture employed over 70% of the country's main workers in 1951, but that percentage fell to 52 percent in 2001 and to 48.9% in 2011.Because of the critical linkages and synergies that it promotes between the two pillars of the economy, namely Industry and Agriculture, the Food Processing Industry is extremely important for India's development. India is the world's second-largest food producer, with the potential to overtake the United States in the near future if persistent efforts are made. Food processing increases the size of the market for goods. The following are the main segments of food processing:

1.Food grains: From 2011 to 2012, India produced more than 250 million tonnes of various food grains. Rice, wheat, barley, jawar (millet), bajra (millet), makka (maize), and pulses are among the major food grains produced in the country.

2.Fruits and Vegetables: India is the world's second-largest exporter of fruits and vegetables. It is the world's leading producer of bananas, mangoes, guavas, and papayas (& within the country, Uttar Pradesh holds first rank in the production of sugarcane and potato, second rank in the production of vegetables and third rank in the production of fruits in 2014-15). Only 2.2 percent of fruits and vegetables are processed in the country, but fruit and vegetable waste is quite significant (6.70 - 15.88 percent).

3.Milk and Milk Products: India produces the most milk in the world (and Uttar Pradesh is the largest milk producing state in the country). In the country, 35% of milk is processed, while just 0.92 percent of milk is wasted.

4.Meat and poultry: India has the world's largest livestock population. According to the 2012 livestock census, India has 512.06 million animals, including 190.90 million cats (2nd in the world), 108.70 million buffaloes (1st in the world), 135.17 million goats (2nd in the world), and 65.07 million sheep (3rd rank in the world). Furthermore, the country has 792.21 million chickens (5th in the globe) (& Uttar Pradesh is the leading state of India in terms of total livestock.).

5.Fishery Products: India is the world's third-largest fish producer and second-largest producer of inland fish. India's overall fish production in 2014-15 was 100.72 lakh tonnes, with marine fish accounting for 34.66 percent and inland fish accounting for 65.34 percent (& Uttar Pradesh holds the third rank with the production of 4.9 lakh tonnes inland fish in the country).

6.Products for beverages: A variety of beverages are available, including alcoholic beverages, wines, malt, soft drinks, mineral water, and various bottled waters. Food processing units also include cold chains, transport vehicles, cold containers, fruit ripening rooms, packing of the processed product, cannery connected to food processing,

preservatives, food flavours, and colour making facilities.

1.2 HISTORY AND CURRENT SCENARIO OF FOOD PROCESSING INDUSTRY IN INDIA-Food processing dates back to prehistoric times, when a man's day was nearly entirely devoted to the protection and sustenance of himself and his family. He didn't have the same food preservation and storage capabilities as we do now; he was completely dependent on the whims of nature. Fermenting, sun drying, salt preservation, and other sorts of cooking were all part of the raw processing at the period (such as roasting, steaming and oven baking).

The Bengal Preserving Company, India's first cannery, was founded by A.B. Sircar at Muzarpur (Bengal) in 1901. Shree Kishan Dutt & Company Calcutta, founded in 1841, started their canary branch in 1910, and the company used to produce and export the famous mango brand canned items and sauces, among other things. In 1930, a few manufacturing operations for sweet squashes and sharbats were established in Panjab. The Bengal Canning and Condiment Works Limited and the Pioneer Condiment Company Limited, both founded in Calcutta during WWI, utilised advanced canning machinery before closing down.

1.3 ORGANIZED AND UNORGANIZED FOOD PROCESSING SECTOR-There are two sorts of food processing units: registered or organized and unregistered or unstructured. Registered food processing facilities employ at least 10 people if they use electricity, and at least 20 people if they don't. Unorganized food processing units are the rest of the units. According to the NSSO, food processing units in rural areas are disorganized. This unorganized sector is divided into two categories: family-owned businesses that employ at least one hired worker on a regular basis, and establishments that employ at least one hired person on a regular basis. The unorganized sector dominates the Indian food processing industry.The unorganized sector dominates the Indian food processing business, with organized and unorganized sectors accounting for roughly 30% and 70% of the industry respectively (MOFPI). Primary processing is dominated by the unorganized food sector. The organized units handle secondary and tertiary food processing (NSSO, 2015-16). In India, the unorganized food processing sector is the primary source of food goods. According to a World Bank report, the unorganized food sector accounts for roughly 42% of total output.

Table 1.1
Level of Processing in Food Processing Sector

Items	Organized Sector	Unorganized Sector	Total Processing
Fruit &Vegetables	1.2%	0.5%	1.8%
Dairy Products	15%	22%	37%
Meat	21%	-	21%
Poultry	6%	-	6%
Marine Fisheries	1.7%	9%	10.7%

According to a research published by India Brand Equity Foundation in 2006, the dairy section of the Indian food processing industry processes 37 percent of the total production, with 22 percent of the unorganized sector accounting for 22 percent. With only 1.8 percent, the fruits and vegetable segment processes the least. The statistics revealed that raw fruits and vegetables are consumed. Meat processing is done in a regulated environment. Because most government measures are aimed at the organized food processing sector, the growth rate of the unorganized food processing sector is slow. According to the NSSO, the unorganized food processing sector employed 5.1 million individuals in 2015-16, with 24.7 percent of them being women. According to a World Bank research, around 69 percent of unregistered food processing units are located in rural areas. In this approach, the unorganized sector contributes to the reduction of regional inequities and waste, the expansion of employment opportunities, and the mobilization of local resources.

1.5 INSTITUTIONS WORKING FOR FOOD PROCESSING SECTOR IN INDIA-Prior to India's reform phase, the food processing industry was governed by the ministry of agriculture and industry. The Indian government did not take many steps for the development of this sector at the time. However, the Ministry of Food Processing Industry was established in 1988. Since that time, the government has begun to focus on the growth of the food processing industry.

Ministry of Food Processing Industry (MOFPI): The Ministry of Food Processing Industry (MOFPI) was established in 1988. The ministry's main goals are to boost farmers' incomes by adding value to their products and reducing waste, introducing modern technology, improving supply chain management, encouraging research and development in the sector, and providing policy support for better infrastructure and export of processed food products. NIFTEM and IIFPT are two institutes that function under the government.

National Institute of Food Technology, Entrepreneurship, and Management (NIFTEM): NIFTEM is a deemed university under the Ministry of Food Processing Industries of the Government of India. This university has been recognised as a global leader in the fields of food science and technology.Indian Institute of Food Processing Technology (IIFPT): IIFPT is a government of India-funded academic and research institute. IIFPT has a NABL-accredited laboratory to test the food quality that has been notified by India's Food Safety and Standards Authority (FSSAI).Marine Products Export Development Authority (MPEDA): The Marine Products Export Development Authority Act of 1972 founded MPEDA in 1972. MPEDA is a department of the Government of India (GOI) that is involved in the

production of fisheries and related activities.National Horticulture Board (NHB): In 1984, the Indian government founded the National Horticulture Board to promote horticulture in the country. Because horticulture products are perishable by nature, the board's major goal is to eliminate agricultural waste. The board assists growers in the production of processed horticulture produce for both domestic and international markets.Department of animal husbandry, dairying, and fisheries (DADF): The Department of Animal Husbandry and Dairying (AH&D) was renamed the Department of Animal Husbandry, Dairying, and Fisheries (DADF) in 1991. It is one of the Ministry of Agriculture's Departments. This department was formed by combining two departments of the Department of Agriculture and Cooperation, namely Animal Husbandry and Dairy Development, into one. Later, the Department of Agriculture and Cooperation's Fisheries Division and a portion of the Ministry of Food Processing Industries were transferred to this Department. The DADF is responsible for the production, preservation, and protection of livestock and inland and marine fisheries, as well as the National Dairy Development Board.

1.7 CURRENT SCENARIO OF FOOD PROCESSING INDUSTRY IN UTTAR PRADESH-The number of food processing units in Uttar Pradesh was 2040 in 1998-99, accounting for 8.55 percent of the total number of food processing units (23845) in India, and the state's GSDP of the food processing industry was 2564.91 crore, accounting for 13.42 percent of the country's GDP of the food processing industry (19119.24 crore). In 2014-15, the number of food processing units in the state was 2054 (marginally increased), accounting for 5.32 percent of India's total food processing units (38607); however, in 1998-99, it was 8.55 percent of the country's total food processing units, and in 2014-15, it was 5.32 percent. The GSDP of the state's food processing industry was 7957.45 in 2014-15, up 210 percent from the GSDP of the state's food processing industry in 1998-99; nevertheless, it fell from 13.42 percent of the country's food processing sector's GDP in 1998-99 to 8.68 percent in 2014-15.The absence of industrial infrastructure in Uttar Pradesh, as well as government negligence, are the primary causes of the state's food processing industry's backwardness. This is demonstrated by the fact that, despite Uttar Pradesh's key role in the country (80 MPs and 403 MLAs), this sector is backward and neglected. This can be approximated based on the fact that in March 2015, the country has 32 mega food parks, 9 of which were operating and the remaining 23 under construction. In addition, on January 3, 2017, eight more mega food parks were approved. Unfortunately, Uttar Pradesh does not have even one single giant food park. However, Uttar Pradesh has enormous potential for the expansion of the food processing industry.

1.9 WASTAGE OF MAJOR PRODUCES IN INDIA- Despite India's large-scale food production, food inflation, food security, and farmers not receiving remunerative rates for their output, among other challenges, are the country's significant concerns. These concerns worry policymakers in the country because they impact residents' basic necessities (such as - adequate, healthy and affordable food supply**).** The value of wastage of raw food materials in the country, on the other hand, is extremely significant.

TABLE-1.3:
ESTIMATED MONETARY VALUE OF LOSSES FOR THE MAJOR PRODUCES IN INDIA

S.No.	Particulars	Cumulative wastage (%)	Monetary Value of the losses (₹crore)
1	Cereals	4.65 –5.99	20698
2	Pulses	6.36 –8.41	3877
3	Oil Seeds	3.08 –9.96	8278
4	Fruits	6.70 – 15.88	16644
5	Vegetables	7.32 – 12.44	14842
6	Plantation Crops and Spices	1.18 –7.89	9325
7	Live stock Produce	0.92 – 10.52	18987
	a. Milk	0.92	4409
	b. Fisheries (Inland)	5.23	3766
	c. Fisheries (Marine)	10.52	4315
	d. Meat	2.71	1235
	e. Poultry meat	6.74	3942
Grand Total			**92651**

According to a study conducted by the Central Institute of Post-Harvest Engineering & Technology (CIPHET), the annual value of harvest and post-harvest losses of major agricultural produce at the national level was estimated to be 92,651 crore, based on production data for the year 2012-13 at wholesale prices in 2014. In 2012-13, the country's total wastages of major agricultural products were 4.65–5.99 percent in cereals, 6.36–8.41 percent in pulses, 3.08–9.96 percent in oilseeds, 6.70–15.88 percent in fruits, 7.32–12.44 percent in vegetables, 1.18–7.89 percent in plantation crop & spices, and 0.92–10.52 percent in livestock produce. Furthermore, livestock produce wastage ranged from 0.92 percent to 10.52 percent, including 0.92 percent in milk, 5.23 percent in inland fisheries, 10.52 percent in marine fisheries, 2.71 percent in meat, and 6.74 percent in poultry meat.

1.10 CONCLUSION-The Food Processing Industry has been highlighted as a development priority. This industry is part of the priority lending business. With the exception of beer and alcoholic beverages, and commodities reserved for the Small Scale Sector, such as vinegar, bread, and bakery, most food processing industries have been exempted from the terms of the Industries (Development and Regulation) Act, 1951. For the majority of processed food items, automatic permission for even 100% equity is available when it comes to foreign

investment.The Indian economy is heavily reliant on agriculture, and this trend is likely to continue in the future. It is an appealing investment destination for global businesses because to its strong agricultural basis, abundant livestock, cost competitiveness, deregulation, and the rise of the organised retail market, and it has tremendous potential for the food processing industry. India is renowned as the world's food basket. In India, there are twenty different types of agroclimatic areas for growing a variety of crops for processing. Several types of herbs used in medicine can only be found in India. Despite having a low degree of processing (10%) compared to the United States (65%), China (23%), Thailand (30%), the Philippines (78%), and Brazil (70%), India is the world's greatest producer of various commodities. In terms of milk production, India ranked #1 in the world in 2015-16, generating 155.5 MT. India's dairy industry is booming, with a CAGR of 13-15 percent predicted in the following years. India is the world's second-largest producer of fruits and vegetables, producing 254 metric tonnes with only 2% processing. India is second in the world in the production of rice, wheat, and cereals. It is the world's largest exporter of cereals.

****

REFERENCES

1. Bhalla, G. S., and Hazell, P. (2018), "Food grains demand in India to 2020: A preliminary exercise". Economic and Political Weekly, 32 (52): A150-A154.
2. Chand, R. 2017. "Government intervention in food grain markets in the new context" (Policy paper 19). New Delhi: National Centre for Agricultural Economics and Policy Research. (NCAP).
3. Davinder Singh, (2015), "Market Structure and Labour Productivity in US Manufacturing Industries, 1958-76", Indian Journal of Industrial Relations, 20(4), Pp.413-422.
4. Goldar, B.N. (2013), "Technology Acquisition and Productivity Growth: A Study of Industrial Firms in Indian Industry,Working Paper Series, 172/95, Indian Economic Growth, New Delhi.
5. Hina Sidhu, (2012), "Total Factor Productivity: A Sectoral Analysis of Indian Industry", Productivity, 48(2), Pp.172-197.
6. Islam, N. (2011). Growth empirics: a panel data approach. The Quarterly Journal of Economics, 110(4), 1127-1170.
7. J. Morrison, Catherine. (2011). Structural Change, Capital Investment and Productivity in the Food Processing Industry. American Journal of Agricultural Economics. 79. 110-125. 10.2307/1243947.
8. John, E. Ettlie, (2011), "Organisational Policy and Innovation among Supplier to the Food Processing Sector", Academy of Management Journal, 26(1),Pp.27-44.
9. Jondrow, J., I. Materov, K. Lovell and P. Schmidt, "On the Estimation of Technical Inefficiency in the Stochastic Frontier Production Function Model," Journal of Econometrics, 19, 2/3, 2011, pp. 233-238.
10. Joshi, G.G. Nawadkar, D.S. Malia and Shinde, H.R. (2010), "Growth of Fruits and Vegetables, Production and Processing Industries in the Era of Liberalisation" Indian Journal of Agricultural Economics, 58(3), P.605.
11. Kachru, R.P. (2010), "Agro-Processing Industries in India - Growth, Status and Prospects", Status of Farm Mechanisation of India, Pp.114-126.
12. Kadam, D. D. (2010). The Critical Analysis and Problems and Prospects of Food Processing Industries in Marathwada Region.
13. Kaliappa Kalirajan and Shashanka Bhinde, (2010),"Sources of Growth in the Indian Food Processing Sector: A Frontier Production Function Analysis, The Indian Economic Journal, 55(2), Pp.76-94.

Analysis of The Controversial Provisions of The Ordinance in Recent Years

Dr.M.Imran
Associate Prof.
Under the School of Law,
Shobhit University, Meerut

Suman
Research Scholar
Under the School of Law,
Shobhit University, Meerut

Abstract

The law aimed at prohibiting illicit conversion from one religion to another has been considered to be in violation of the fundamental rights of equality, life, and religion. It is also stated that the provisions of the Ordinance attempt to impose an unnecessary burden on the party as well as the person conducting the conversion by requiring them to make a declaration before the district magistrate that the conversion was carried out with free consent and without any misrepresentation, force, undue influence, coercion, allurement, or by any fraudulent means or marriage. This statement must be made not only before but also after the conversion. Furthermore, the individual who produced the conversion bears the burden of evidence in proving that the inter-religious marriage was not influenced by misrepresentation, force, undue influence, coercion, allurement, or any other fraudulent methods or by marriage. The impact of such a rigmarole of procedure, coupled with penalties based on such sloppy regulations, is to dissuade people from entering into inter-religious weddings and to create a deterrent against getting involved in any inter-religious marriages.

Key Words: Inter-religious marriages, Misrepresentation, Legislative power.

1.1 INTRODUCTION-The Uttar Pradesh Prohibition of Unlawful Conversion of Religion Ordinance, 2020 (hereafter referred to as "the Ordinance") has been the subject of much discussion in recent years. Every creative phrase in the lexicon has been used to describe it, from 'discriminatory towards Muslims' to 'a law equivalent to Hitler's regime'. While several of these accusations appear to have some validity in the Ordinance, others appear to be based on erroneous fears.

The Uttar Pradesh administration, on the other hand, has vigorously supported the Ordinance, claiming that, as the ***Rev Stanislaus*** **v.** ***State of Madhya Pradesh*** decision held, there is no basic right to convert. Furthermore, the Ordinance does not prohibit interfaith marriage; rather, it attempts to control the unlawful component of it in the sake of public order. Furthermore, it is argued that only marriages that are exploited as a ruse to achieve a conversion purpose or vice versa are punishable. Furthermore, the Ordinance's provisions are religiously neutral and will apply equally to all communities. The argument is also made that the UP government

is not the first to act against conversion because there are currently various anti-conversion laws in place. As a result, the Ordinance just strives to control religious freedom to the extent that it can on the basis of public order.

1.2 HISTORY OF ANTI-CONVERSION LAWS-India is a country with a wide range of religious beliefs and customs. The cradle of four main world religions—Hinduism, Buddhism, Sikhism, and Jainism—is the Indian subcontinent. According to 2011 census figures, India's population is made up of 79.80% Hindus, 14.23% Muslims, 2.30 percent Christians, 1.72 percent Sikhs, 0.70 percent Buddhists, and 0.37 percent Jains. Hindu princely states first enacted laws prohibiting religious conversions during the British Colonial period, primarily "around the later half of the 1930s and 1940s." The regulations were enacted "in an effort to protect Hindu religious identity in the face of British missionaries" in these states. There were "almost a dozen princely states with such laws,"including Kota, Bikaner, Jodhpur, Raigarh, Patna, Surguja, Udaipur, and Kalahandi. The Raigarh State Conversion Act, 1936; the Surguja State Apostasy Act, 1942; and the Udaipur State Anti-Conversion Act, 1946 are just a few of the laws from that time period.

Following India's independence, the Indian Parliament introduced several anti-conversion measures, but none of them were passed. In 1954, the Indian Conversion (Regulation and Registration) Bill was introduced, with the goal of enforcing "missionary licensure and conversion registration with government officials." This bill was rejected by the lower house of Parliament because it did not receive a majority of votes. In 1960, the Backward Communities (Religious Protection) Bill was introduced, "with the goal of preventing Hindus from converting to 'non-Indian religions,' which, according to the Bill's definition, includes Islam, Christianity, Judaism, and Zoroastrianism." and the Freedom of Religion Bill, which sought "governmental restrictions on inter-religious conversion" in 1979. Due to a lack of parliamentary support, these bills were also not passed by Parliament."High-ranking members of the ruling BJP party, including Amit Shah, the party's president, asked for a statewide anti-conversion law" in 2015. Anti-conversion measures would be submitted in both chambers of Parliament "so as to criminalise religious conversion without the government's authorization," according to two BJP MPs, including Amit Shah. The BJP government's plan to enact national legislation, however, is said to have "hit a roadblock" with the Ministry of Law and Justice, which advised against it, claiming that it is "not tenable" because it is "purely a state subject"—that is, a matter that falls solely under the constitutional domain of the states under Schedule Seven of the Constitution.

1.3 PROVISIONS OF THE ORDINANCE-There are14 provisions and three schedules in the Uttar Pradesh Prohibition of Unlawful Conversion of Religion Ordinance, 2020. Its goal is to make it illegal to convert from one religion to another using deception, force, undue influence, compulsion, allurement, or any other fraudulent means, or through marriage, and to deal with the issues that arise as a result. Section 3 exemplifies this by forbidding conversion through deception, force, undue influence, coercion, allurement, or any other fraudulent methods, as well as marriage. However, reverting to one's previous religion is exempt from the provision. In addition, section 4 discusses who is qualified to file a police report. It allows any aggrieved person, other than his brother/sister, parents, or anybody related to him by blood, marriage, or adoption, to file a FIR against conversion that violates section 3's restrictions. Section 5 prescribes a sentence of one to five years in prison and a fine of not less than fifteen thousand rupees for violating section 3. The section differentiates between minors, women, and persons from scheduled castes and tribes who commit crimes. In addition, mass conversions and subsequent convictions have been penalised harshly. On the petition of either party, the courts must declare marriages for the sole purpose of conversion or vice versa void. The offences under the Ordinance are cognizable, non-bailable, and exclusively triable by the Court of Sessions, according to Section 7. Section 8 of the legislation is one of the most contentious parts, requiring a person who wishes to convert his or her religion to make a declaration to the District Magistrate or Additional District Magistrate at least sixty days in advance, stating that the decision to convert was made freely and without coercion, undue influence, or allurement.

1.4 REVIEW OF LITERATURE Jafri However, there are several provisions in the ordinance which could plausibly be identified as unconstitutional. For instance, the ordinance makes it a criminal offence to convert a person by offering her an "allurement". The term "allurement" is defined very broadly, to include even providing a gift to the person who is sought to be converted. This means that if a person offers a copy of the Bhagavad Gita to a non-Hindu, and the non-Hindu decides to convert to Hinduism after reading it, the conversion could be said to have taken place by "allurement" since it occurred after a gift was given to the convert. Under the ordinance, "allurement" can also mean telling the person sought to be converted that she will have a "better lifestyle" if she converts, or that she will incur "divine displeasure or otherwise" if she does not.There can be no quarrel with the ordinance's premise that converting somebody by fraud or misrepresentation is wrong. After all, no person should be forced to convert to another religion against her will. In fact, though the members of the Constituent

Assembly included the right to "propagate" one's religion in the chapter on fundamental rights, they considered it a "rather obvious doctrine" that this would not include forcible conversions. "Forcible conversion is no conversion", Sardar Vallabhbhai Patel had said in one of the subcommittees of the assembly, adding, "we won't recognise it." However, the UP ordinance goes beyond this principle and does something quite strange.Rao says that "reconversion" to a person's previous religion is not illegal, even if it is vitiated by fraud, force, allurement, misrepresentation and so on. In other words, if a person converts from Religion A to Religion B of her own volition, and is then forced to reconvert back to Religion A against her will, this will not constitute "conversion" under the ordinance at all, and falls completely outside the ambit of the law. Through this peculiar provision, the law seems to send an unmistakable signal to its target audience: Prohibit illegal conversion to other religions, but look the other way if a convert is forced to reconvert back to ours.Jaffrelot On 'love jihad', BJP picks up baton from vigilante groups. Police, judicial apparatus have aided this move.Rev Stainislaus v State of Madhya Pradesh a bench of five judges of the Supreme Court held that the fundamental right to "propagate" religion does not include the right to convert a person to another religion. In that case, the court had upheld anti-conversion statutes enacted by the states of Orissa and Madhya Pradesh, which imposed somewhat similar (even if slightly less extreme) restraints on the freedom of conscience and the right to propagate religion.

1.5 DEFINITION OF THE WORD 'RELIGION'-The Ordinance's definition of religion has been challenged for including not only traditional religions but also other faiths, so expanding its scope. As a result, the definition of religion is said to be unclear and confusing. However, it is easy to overlook the importance of preventing conversion from the perspective of indigenous people. These tribal people have no religion or practise animism, and missionaries and other groups frequently target these naive tribal people in an attempt to convert them to their own faith. This is why the concept of religion has been expanded to cover not only traditional religion but also a variety of faiths.

Section 3-Furthermore, it is asserted that the usage of the word marriage without qualifier leaves the executive with a major scope of harm. It makes any marriage in which a person is forced to convert illegal and punitive. However, if we read the text as a whole, it appears that the word marriage is not used without qualification. The word 'marriage' must be read in conjunction with the primary clause, which states, "No person shall convert or attempt to convert either directly or indirectly any other person from one religion to another by use or practice of," making the entire sentence read, "No person shall convert or attempt to convert any other person by use or practice of marriage." Any conversion for the sole purpose of marriage is already recognised to be unlawful and prohibited. As a result, the clause does no harm but penalises marriage only for the purpose of conversion. Furthermore, because every other term in the section has a negative connotation, such as misrepresentation, force, undue influence, coercion, allurement, or fraudulent means, it is safe to assume that marriage will as well. The ejusdem generis rule also states the same thing. Reconversion to a previously practiced faith is not considered conversion under Section 3 of the Ordinance.

Section 5-Section 5 specifies the penalties for violating section 3. In cases of violations against minors, women, or anyone from a scheduled caste or community, the punishment is harsh. It has been claimed that the section looks to contravene article 14, the Right to Equality, by establishing such a provision. Everyone must be treated equally under the law. However, when making this argument, one tends to overlook Articles 15(3) and 15(4) of the Indian Constitution, which allow the government to establish specific provisions for women, children, and scheduled caste and scheduled tribes. Furthermore, it is not uncommon for fringe members from other religions to target scheduled caste and scheduled tribe individuals because of their socioeconomic status in society. A comparable provision can also be found in other states' anti-conversion legislation. As a result, offending against certain groups of people has a harsh penalty.

Section 6-Courts will deem a marriage solely for the purpose of conversion or vice versa void under Section 6. The provision merely restates the Supreme Court's decisions in the cases of ***Sarla Mudgal v. Union of India*** and ***Lily Thomas v. Union of India***. The catch is that the marriage can only be cancelled through a petition filed by the parties, not by relatives.

Section 7-The offences under the Ordinance are cognizable and non-bailable under Section 7. This is the first time such a provision has been included in legislation. When this clause is combined with the fact that any aggrieved person, brother/sister, parents, or anybody related by blood, marriage, or adoption can register a FIR, the converted individuals are left with a lot of room for harassment and victimisation. Furthermore, the Draft law makes no mention of making some offences non-cognizable and non-bailable. The draught bill is silent on whether or not certain offences are bailable or non-bailable, and whether or not they are cognizable or non-cognizable.

CONCLUSION-The UP Ordinance, 2020 has sparked a lot of debate. Some are well-placed, while others are misplaced. There is little doubt that the Ordinance imposes a

number of restrictions on persons who convert to another faith, but whether this amounts to regulation or an unwarranted intrusion into people's lives is a topic that will be decided by the courts. Furthermore, the provisions of the Ordinance must be viewed in light of the triple test established in the Puttaswamy case, which states that any regulation affecting the Right to Privacy must satisfy three criteria: it must be legitimate, necessary, and proportional. Also, the impact of the Ordinance on the freedom of religion guaranteed by Articles 25 to 28 of the Constitution must be assessed to see if it violates or merely regulates that freedom. Furthermore, the Ordinance appears to be at odds with several Supreme Court decisions that state that the ability to choose one's spouse is a basic right protected by Article 21 of the Constitution. Despite the fact that the Ordinance outlaws and punishes conversion and marriage without free agreement, article 21 is attracted by the procedural necessity to notify the administration. The statute, on the other hand, does not apply to couples married under the Special Marriage Act of 1954, which has its own verification system. People of various faiths who desire to marry can do so under the Special Marriage Act of 1954, which does not require a district magistrate to conduct a pre-marriage investigation. If the couple marries under the Special Marriage Act, 1954, they only need to notify the marriage officer, who will have it publicised in a prominent location in his office, and if no objections are received, the marriage will be solemnised after thirty days. However, a recent judgement by the High Court of Allahabad has made the necessary public notice of marriage under the Special Marriage Act, 1954 as a directory, meaning that only the Marriage Officer can make a public notice of marriage if the couple wishes to do so. The ruling is almost certain to be appealed, and the Supreme Court's decision is awaited.

The UP government, on the other hand, has relied on the Supreme Court's decision in Rev Stanislaus v. State of MP, which held that there is no fundamental right to convert and that the fundamental right to profess, practise, and propagate a religion can be reasonably restricted on the basis of public order, morality, health, and other provisions of Part III. Illegal conversion can also cause law and order issues, according to the ruling. The Ordinance is the result of the same justifiable restriction based on public safety. Moreover, the Ordinance is not the first statute to control conversion; numerous governments have already done so. In a recent interview, the current Chief Minister of Uttar Pradesh stated that the law does not specify whether it applies only to Hindus or Muslims. He emphasised that if a Hindu guy marries a Muslim lady, the law will be the same. He also added that the law was enacted to guarantee security to women across the state, and that no one will be able to abuse the law. The Uttar Pradesh government appears to be confidence in the Ordinance and is considering enacting legislation to manage religious places in the state. The State Law Commission has already begun its investigation.

****

Bibliography

1. P. Chidambaram, "A Fraud on the Constitution", The Indian Express, Dec. 7 2020.
2. N. C. Asthana, "Legal Howlers in UP's 'Anti-Conversion' Law Expose its Real Intent", The Wire, Dec. 3, 2020, available at: https://thewire.in/communalism/legal-howlers-in-ups-anti-conversion-law-expose-its-real- intent (last visited on Dec. 30, 2020).
3. Ralph Alex Arakal, "Protests planned in Bengaluru as Karnataka mulls 'love jihad' law", The Indian Express, Dec. 1, 2020.
4. Brinda Karat, "Adityanath's New Hitler-Like Rule On Inter-Faith Marriages", The Indian Express, Nov. 25, 2020.
5. Tejaswi Surya & Suyash Pande, "UP Ordinance On Religious Conversion Is Being Misconstrued: Here's Why It Will Pass Judicial Scrutiny", Swarajya, Dec. 21, 2020.
6. Poojisri Ganesan, "UP not first to target 'love jihad', 2 states have law against forced conversions for marriage", The Print, Nov. 26, 2020, available at: https://theprint.in/judiciary/up-not-first-to-target-love-jihad- 2-states-have-law-against-forced-conversions-for-marriage/552033/ (last visited on Dec. 30, 2020).
7. Jennifer R. Coleman, Authoring (In)Authenticity, Regulating Religious Tolerance: The Legal and Political Implications of Anti-Conversion Legislation for Indian Secularism 23 (Paper Presented to Penn Program on Democracy, Citizenship, and Constitutionalism Graduate Workshop, Sept. 13, 2007–08).
8. State Law Commission of Uttar Pradesh, "Eighth Report on Freedom of Religion" (November, 2019), available at: http://upslc.upsdc.gov.in/MediaGallery/8thReport.pdf (last visited on Jan. 10, 2021).
9. Joanna Slater, "It was never easy being an interfaith couple in India. Now some states are making it harder.", The Washington Post, Nov. 26, 2020, available at: https://www.washingtonpost.com/world/asia_pacific/love- jihad-india-interfaith-marriage/2020/11/25/a8b33bea-2df9-11eb-9dd6-2d0179981719_story.html (last visited on Jan. 10, 2021).
10. Abhinav Chnadrachud, "UP's 'love jihad' ordinance has chilling effect on freedom of conscience", The Indian Express, Dec. 3, 2020, available at: https://indianexpress.com/article/opinion/columns/up-love-jihad- law-religious-conversion-anti-conversion-law-7078370/ (last visited on Dec. 30, 2020).
11. Mariyam Alavi, "UP's Anti-Conversion Law "Unconstitutional", Say 4 Former Judges", NDTV, Dec. 18, 2020, available at: https://www.ndtv.com/india-news/love-jihad-ups-anti-conversion-law-unconstitutional-say- 4-former-judges-2340694 (last visited on Dec. 30, 2020).
12. Manu Sebastian, "UP Ordinance Criminalizing Religious Conversion on Marriage is an Assault on Personal Liberty", Live Law, Nov. 30, 2020, available at: https://www.livelaw.in/columns/up-ordinance-criminalizing- conversion-for-marriage-is-an-assault-on-personal-liberty-166575 (last visited on Dec. 30, 2020).
13. Draft Bill The Uttar Pradesh Freedom of Religion Act, 2019, "Chapter XV of the Eighth Report on Freedom of Religion" (November, 2019), available at: http://upslc.upsdc.gov.in/MediaGallery/8thReport.pdf (last visited on Jan. 10, 2021).
14. Lata Singh v. State of Uttar Pradesh, (2006) 5 SCC 475; Soni Gerry v. Gerry Douglas, (2018) 2 SCC 197; Shafin Jahan v. Ashokan K.M, (2018 16 SCC 368).

Performance of Commerce Graduates in Job Market

Nagendra N.
Research Scholar DoS in Commerce
University of Mysore, Manasagangotri, Mysuru, Karnataka

Dr. N. Nagaraja
Professor, Dos in Commerce
University of Mysore, Manasagangotri, Mysuru, Karnataka

***Abstract*—**The study outlined in this article aims to assess level of performance of commerce graduates in job markets. The study employed descriptive survey method to investigate the problem. Purposive sampling technique was used to select a sample of 220 employers from 4 districts – Mysore, Mandya, Hassan and Chamarajanagar of Karnataka state. The data was collected using self-administered Performance Appraisal Scale (PAS) and descriptive as well as inferential statistics was used to analyse the result. The findings indicated that the Managerial employees working in business/ industrial sectors reported that only 30.9% of commerce-graduated employees attained outstanding performance where as 64.1% of commerce graduates attained good performance and 5% attained a satisfactory level. Concerning the dimensional analysis, the results indicate that 70% of the graduates need further improvement in their personalities, 68.7% of the graduates need improvement in their organizational skills and 67.3% of the graduates need improvement in their Role performance. With data input available from the managerial employees, all commerce graduates have similar performance levels in their work environment irrespective of their gender, district and educational qualification, but there is a significant difference in their performance with respect to their experience. So it indicates that graduates with less experience have better performance than 5 to 10 years of experienced graduates.

***Index Terms*—** Performance of Commerce Graduates & Job markets

INTRODUCTION-Commerce is a popular field of study that prepares graduates for careers in various industries, including finance, accounting, marketing, and business management. The performance of commerce graduates in the job market has been the subject of several studies in recent years. While some studies have reported positive outcomes for commerce graduates, others have highlighted challenges that graduates face in finding suitable employment. According to a survey conducted by the Graduate Management Admission Council (GMAC) in 2021, 88% of employers worldwide planned to hire business school graduates in 2021, with a focus on MBA graduates (GMAC, 2021). Additionally, a report by the National Association of Colleges and Employers (NACE) found that commerce graduates were among the top three most in-demand majors by employers in the United States (NACE, 2021).However, despite the high demand for commerce graduates, there are concerns about the quality of education provided by some institutions and the readiness of graduates for the job market. A study by the Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (FICCI) found that only 10-15% of commerce graduates in India were employable in the organized sector (FICCI, 2019). This highlights the need for educational institutions to focus on improving the quality of education and preparing graduates for the job market. The performance of commerce graduates in the job market is a complex issue that requires attention from both educational institutions and employers. It has been found that 90% of graduates coming out of Indian academic institutions are unemployable. Some of the important factors are lack of skills and practical exposures required for the industry. Adams Smith concluded that 'a man educated at the expense of much labour and time may be compared to one of those expensive machines… and the work he learns to perform should replace him the whole expense of his education' (Mulongo, 2012).

To address these challenges, educational institutions are implementing various strategies to improve the performance of commerce graduates in the job market. For example, some institutions are offering practical training and internships to graduates to give them hands-on experience in their field of study. This not only helps graduates gain practical skills but also gives them an opportunity to network with potential employers and industry professionals. In addition to practical training, some institutions are also incorporating technology and digital skills into their commerce curriculum to prepare graduates for the changing job market. With the increasing demand for digital skills in industries such as finance and marketing, graduates who possess these skills are more likely to be successful in the job market. Employers are also playing a critical role in improving the performance of commerce graduates in the job market. By offering suitable employment opportunities, employers can help graduates apply their skills and knowledge in real-world settings. Furthermore, employers can provide training and mentorship to graduates to help them develop their skills and grow in their careers.

REVIEW OF RELATED LITERATURE

Various studies found that employability skills are crucial for ensuring that individuals have the necessary skills and abilities to succeed in the workforce and contribute to the country's economic growth and the importance of public-private partnerships and collaboration between industry and academia to ensure that individuals are equipped with the skills needed for the job market (Santosh, 2007). Some of the studies showed

that the weighted average mark achieved at university is the strongest predictor of graduates' starting salaries, with the financial reward for higher marks greater than that found in other countries. Science graduates are shown to have lower starting salaries than other fields, which could suggest that more incentives are needed to encourage graduates to pursue science-related studies (Chia & Miller, 2008). Similarly, studies showed that the loadings of multi-item scales were adequate, indicating convergent validity and discriminant validity. Network ties were found to be significantly correlated with job performance in the expected direction. Through hierarchical regression analysis, direct network ties were found to influence job performance but indirect network ties did not (Zhang and Venkatesh, 2013). Furthermore, some studies argue that employability is not just about having the necessary skills and qualifications but also about having the right attitude and mindset. The article presents the results of the survey, which identified several factors that affect employability from a student's perspective. These factors include communication skills, problem-solving skills, practical training opportunities, industry-academia collaboration, and career guidance. The authors also discuss the implications of these findings for educators, employers, and policymakers. They suggest that educators should focus on providing practical training opportunities and improving graduates' communication and problem-solving skills. Employers, on the other hand, should focus on providing on-the-job training and mentorship programs to help graduates develop the skills needed for the job market (Bhate et, al 2020). Although some studies considered that COVID-19 crisis has had a detrimental effect on job performance and satisfaction in educational institutions. A conceptual model has been developed to examine the relationship between the pandemic's impact and employee performance and satisfaction, with job crafting and employee engagement serving as moderating variables. Findings suggest that job crafting and employee engagement can help to reduce the negative effects of the pandemic on employee performance and satisfaction. (Nagarajan et. al. 2022)

METHODOLOGY

This study aims to evaluate the performance of Commerce Graduates in job markets. Descriptive survey method was used to investigate the performance of Commerce Graduates. 220 commerce graduates from different business industries from four districts of Karnataka State – Mysore, Mandya, Hassan and Chamarajanagar were purposively selected for the study. Self-developed Performance Appraisal Scale(PAS) was used to study the performance of commerce graduates in job markets. PAS scale This scale was divided into two sections. First section corresponding to the respondent's personal details; designation, organization or Institution serving, district, locale, gender, educational qualification, years of experience. The second section contained 34 items which was given to Managerial employers who assess the performance level of their subordinates who have completed commerce education. The scale has three dimensions viz. Personality (12) Organizational Skill (9) and Role Performance (13). The performance of commerce graduates was captured on a Five point Likert Scale. Items under this tool were coded for numerical analysis. The following coding was used on phrased items. Outstanding = 5, Good = 4, Satisfactory = 3, Below Average = 2 and Unsatisfactory = 1. The researcher contacted various Managerial employers and their employees from different business establishments and secured their authorization to gather data. Once approval was granted, the investigator personally collected the data, explaining the purpose and need for the collection, the required information to answer the questionnaire, and the confidentiality of the provided data. The initial section of the survey focused on the Employers' profiles, while the second part gathered their performance level assessed by their Managerial Employers in the particular sector. The collected data was analyzed using SPSS, utilizing both descriptive and inferential statistics.

RESULTS, INTERPRETATION AND DISCUSSION-To explore the level of performance of commerce graduates in job markets, a set of 34 items were placed to the Managerial employers. The following table 1 depicts the performance level of Commerce Graduates.

Table 1: Indicating the level of performance of Commerce Graduates

Level of Performance	Frequency	Percent
Satisfactory	11	5.0
Good	141	64.1
Outstanding	68	30.9

Managerial employees working in business/ industrial sectors reported that only 30.9% of commerce-graduated employees attained outstanding performance where as 64.1% of commerce graduates attained good performance and 5% attained a satisfactory level. The assesse (Managerial employers) have further remarked that the majority of the commerce graduate (69.1%) needs improvement in their performance through self-attention, focusing on their personality, organizational skill attainment, improved role performance and technological knowledge enhancement.

Table 2: Indicating the Level of Performance of Commerce Graduates in Personality Dimension

Level of Performance	Frequency	Percent
Satisfactory	38	17.3
Good	116	52.7
Outstanding	66	30.0

Concerning the dimensional analysis, it is found from the above table 2 that 30% of commerce graduated employees have outstanding performance in the personality dimension, 52.7% graduates fall in good category and 17.3% fall under the satisfactory level. The results indicate that 70% of the graduates need further improvement in their personalities.

Table 3: Indicating the Level of Performance of Commerce Graduates in Organizational Skill Dimension

Level of Performance	Frequency	Percent
Satisfactory	25	11.4
Good	126	57.3
Outstanding	69	31.4

It is found from the above Table 3 that, 31.4% of commerce graduated employees have outstanding performance in the organizational skill dimension, 57.3% of them fall in the good category and 11.4% fall under the satisfactory level. The results indicate that 68.63% of the graduates need improvement in their organizational skills.

Table 4: Indicating the Level of Performance of Commerce Graduates in Role Performance Dimension

Level of Performance	Frequency	Percent
Satisfactory	26	11.8
Good	122	55.5
Outstanding	72	32.7

It is found from the above Table 4 that, 32.7% of commerce graduated employees have outstanding performance in the role performance dimension, 55.5% of graduates fall in the good category and 11.8% of graduates fall under the satisfactory level. The results indicate that 67.3% of the graduates need improvement in their Role performance.

Table 5: Indicating the Frequency & Percentage of level of performance Item wise

Item	Outstanding		Good		Satisfactory		Below Average		Unsatisfactory	
	F	%	F	%	F	%	F	%	F	%
Communication Skills	47	21.4	57	25.9	72	32.7	44	20	-	-
Knowledge of the Job	37	16.8	130	59.1	44	20	9	4.1	-	-
Knowledge of the Institution	37	16.8	130	59.1	44	20	9	4.1	-	-
Initiative	76	34.5	3	1.4	137	62.3	4	1.8	-	-
Problem Solving Skills	41	18.6	73	33.2	42	19.1	64	29.1	-	-
Attendance	89	40.5	62	28.2	8	3.6	61	27.7	-	-
Teamwork Skill	47	21.4	134	50.9	35	15.9	4	1.8	-	-
Job Skills	49	22.3	131	59.5	33	15	7	3.2	-	-
Quality of Work	53	24.1	121	55	34	15.5	12	5.5	-	-
General Conduct	44	20	59	26.8	111	50.5	6	2.7	-	-
Discipline	45	20.5	116	52.7	41	19.6	18	8.2	-	-
Motivation	49	22.3	69	31.4	96	43.6	6	2.7	-	-
Interpersonal Skills	47	21.4	100	45.5	67	30.5	6	2.7	-	-
Punctuality	51	23.2	88	40	69	30.9	13	5.9	-	-
Dependability	15	6.8	98	44.5	71	32.3	36	16.4	-	-
Goal Setting Abilities	5	2.3	137	62.3	67	30.5	11	5	-	-
Managerial Skills	16	7.3	34	15.5	125	56.8	45	20.5	-	-
Cooperation	9	4.1	183	83.2	26	11.8	2	0.9	-	-
Proficiency in Current Role	83	37.7	39	17.7	86	39.1	12	5.5	-	-
Quantity of Work	6	2.7	136	61.8	61	27.7	17	7.7	-	-
Planning of Work	34	15.5	114	51.8	81	27.7	11	5	-	-
Organization of Work	40	18.2	111	50.5	55	25	14	6.4	-	-
Verbal Skills	34	15.5	75	34.1	100	45.5	11	5	-	-
Listening Skills	18	8.2	69	31.4	100	45.5	33	15	-	-
Writing Skills	38	17.3	99	45	37	16.8	46	20.9	-	-
Discretion	37	16.8	54	24.5	102	46.4	27	12.3	-	-
Confidentiality	43	19.5	77	35	91	41.4	9	4.1	-	-
Judgement	9	4.1	71	32.3	75	34.1	65	29.5	-	-
Technological Skills	79	35.9	73	33.2	31	14.1	37	16.8	-	-
Position Expertise	74	33.6	59	26.8	82	37.3	5	2.3	-	-
Approach to Work	77	35	51	23.2	81	36.8	11	5	-	-
Supervision	13	5.9	75	34.1	127	57.7	5	2.3	-	-
Leadership & Management	82	37.3	38	17.3	79	35.9	21	9.5	-	-
Commitment to Safety	46	20.9	76	34.5	86	39.1	12	5.5	-	-

From the above table 5, it was found that the data input by the Managers or supervisors of different organization for assessing the level of performance of commerce graduates, majority of them found the components - Knowledge of the Job, Knowledge of Institution, Team skills, Job skills, Quality of Work, Discipline, Interpersonal Skills, Punctuality, Dependability, Goal Setting Activities, Planning of Work, Quantity of Work, Organization of Work, Writing Skills and Problem solving skill, good while assessing the performance level of the commerce graduates, whereas some of them also found the components like Communication Skills, Initiative, General Conduct, Motivation, Managerial Skills, Proficiency in Current Role, Verbal Skills, Listening Skill, Discretion, Confidentiality, Judgement, Position Expertise, Approach to Work, Supervision, Commitment to Safety, at satisfactory level. But few of them also found the components Attendance, Technological skills and Leadership and Management, at outstanding level.

Table 6: Indicating level of Performance of Commerce graduates with respect to Gender

Level of Performance	Gender		Total
	Male	Female	
Satisfactory	9 (5.5%)	2 (3.6%)	11
Good	101 (62%)	40 (70.1%)	141
Outstanding	53 (32.5%)	15 (26.3%)	68
Total	163	57	220

From the above table 6, it was seen that 32.5% of male and 26.3% of female commerce graduates have outstanding performance, whereas 62% of male and 70.1% of female graduates fall in the good category and 5.5% of male and 3.6% of female graduates fall under the satisfactory level, in respect to gender.

Table 7: Indicating the t-value of Commerce graduates with respect to Performance level and gender

Gender	N	Mean	Std. Deviation	t	Sig	Significant / Not Significant
Male	163	127.2270	18.11190	0.696	0.704	NS
Female	57	125.3158	17.02221			

From the above table 7, it was found that mean scores of male is 127.2270 and female is 125.3158 with a S.D. of 18.11 and 17.02 respectively, t-value (0.696) is found to be not significant at 0.05 level. Hence the hypothesis is accepted that there is no significant difference in the performance of commerce graduates with respect to gender.

Table 8: Indicating the Level of Performance of Commerce Graduates with respect to district

Level of Performance	Districts				Total
	Mysore	Mandya	Hassan	Chamarajanagar	
Satisfactory	7(8.04%)	3(4.69%)	1(3.03%)	0(0%)	11 (5.00%)
Good	49 (56.32%)	45 (70.31%)	24 (72.73%)	23(63.89%)	141 (64.09%)
Outstanding	31 (35.64%)	16 (25.00%)	8(24.24%)	13(36.11%)	68 (30.91%)
Total	87 (39.54%)	64 (29.09%)	33 (15.00%)	36(16.37%)	220

From the above table 8, it was found that in Mysore district, 56.32% of the commerce graduates have good performance, whereas 35.64% and 8.04% of graduates fall in the outstanding and satisfactory category respectively. Similarly, in Mandya district, majority of the commerce graduates, that is, 70.31% have good performance, whereas 24.24% and 3.03% of graduates fall in the outstanding and satisfactory category respectively.

Eventually, in Hassan district, it was found that 72.23% of the commerce graduates have good performance, whereas 24.24% and 3.03% of graduates fall in the outstanding and satisfactory category respectively.

Furthermore, it was found that in Chamarajanagar district 63.89% of the commerce graduates have good performance and 36.11% of graduates fall in the outstanding performance category.

From the total sample, it was found that from all the four districts, majority of the commerce graduates were from Mysore district, that is, 39.54%. Nonetheless, in total, 64.09% fall into the good category, 30.91% and 5.00% show outstanding and satisfactory performance respectively.

Table 9: Indicating the t-value of Commerce graduates with respect to Performance level and district

District	Sum of Squares	Degree of Freedom	Mean Square	F	Sig.	Significant / Not Significant
Between Groups	2052.593	3	684.198	2.190	0.090	NS
Within Groups	67470.585	216	312.364			

According to the data input available from the managerial employees and from the above table 9, it was found that, t-value district (p value = 0.090) was found to be not significant at 0.05 level. Hence the hypothesis is accepted that there is no significant difference in the performance of commerce graduates with respect to district.

Table 10: Indicating level of Performance of Commerce graduates with respect to Educational Qualification

Level of Performance	Educational Qualification			Total
	Bachelor's Degree	Master's Degree	Ph.D.	
Satisfactory	2(5.41%)	9(5.735)	0(0%)	11(5.00%)
Good	23(62.16%)	102(64.97%)	16(61.54%)	141(64.09%)
Outstanding	12(32.43%)	46(29.30%)	10(38.46%)	68(30.91%)
Total	37(18.82%)	157(71.36%)	26(11.82%)	220

From the above table 10, it was found that 62.16% of commerce graduates with qualification of Graduation level, have good performance, whereas 32.43% and 5.41% of them fall in the outstanding and satisfactory performance category respectively.Similarly, commerce graduates with qualification of Post-graduation level, majority of the them, that is, 64.97% have good performance, whereas 29.30% and 5.73% of graduates fall in the outstanding and satisfactory category respectively. Eventually, with Ph.D. level educational qualification level, it was found that 61.54% of the commerce graduates have good performance, and 38.46% of graduates fall in the outstanding category.Furthermore, from the total sample, it was found that from all three levels of educational qualification, majority of the commerce graduates, that is, 71.36% were from the Post-graduation level. Withal, in total, 64.09% fall into the good category, although 30.91% and 5.00% show outstanding and satisfactory performance respectively.

Table 11: Indicating the t-value of Commerce graduates with respect to Performance level with respect to Educational Qualification

District	Sum of Squares	Degree of Freedom	Mean Square	F	Sig.	Significant / Not Significant
Between Groups	429.139	2	214.569	0.679	0.511	NS
Within Groups	69094.039	217	318.406			

According to the data input available from the managerial employees and from the above table 11, it was found that, t-value district (p value = 0.511) was found to be not significant at 0.05 level. Hence the hypothesis is accepted that there is no significant difference in the performance of commerce graduates with respect to educational qualification.

Table 12: Indicating the Level of Performance of Commerce Graduates with respect to Experience

Level of Performance	Experience				Total
	Less than 5 Years	5-10 Years	10-15 Years	15-20 Years	
Satisfactory	0(0%)	5(4.72%)	3(3.70%)	3(14.29%)	11(5.00%)
Good	4(33.33%)	73(68.87%)	52(64.20%)	12(57.14%)	141(64.09%)
Outstanding	8(66.67%)	28(26.41%)	26(32.10%)	6(28.57%)	68(30.91%)
Total	12(5.45%)	106(48.18%)	81(36.82%)	21(9.55%)	220

From the above table 12, it was found that 66.67% of commerce graduates with experience less than 5 years, have good performance, and 33.33% of them fall in the outstanding performance category respectively.Similarly, commerce graduates with experience of 5 years to 10 years, majority of the them, that is, 68.87% have good performance, whereas 26.41% and 4.72% of graduates fall in the outstanding and satisfactory category respectively. Eventually, with experience of 10 years to 15 years, it was found that 64.20% of the commerce graduates have good performance, and 32.10% and 3.70% of graduates fall in the outstanding and satisfactory category.Lastly, it was found that 57.14% of commerce graduates with experience 15 years to 20 years, have good performance, whereas 28.57% and 14.29% of graduates fall in the outstanding and satisfactory performance category.Furthermore, from the total sample, it was found that from all four levels of experience, majority of the commerce graduates, that is, 48.18% were with the experience of 5 years to 10 years. Withal, in total, 64.09% fall into the good category, although 30.91% and 5.00% show outstanding and satisfactory performance respectively.

Table 13: Indicating the t-value of Commerce graduates with respect to Performance level with respect to Experience

Experience	Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.	Significant / Not Significant
Between Groups	2667.091	3	889.030	2.872	0.037	S
Within Groups	66856.086	216	309.519			
Total	69523.177	219				

Further, it was found that there is a significant difference in the performance of commerce graduates with respect to their experience. To check the significance level, further test like Scheffe Post Hoc was conducted.

Table 14: Pair wise comparison of mean scores of levels of performance with respect to experience of commerce graduates by Scheffe post hoc test

Variable	Experience in Years	Less than 5 Years	5-10 Years	10-15 Years	15-20 Years
Experience	Mean	140.2500	124.8302	126.6790	128.8095
	Less than 5 Years	-	15.41981*	13.57099	11.44048
	5-10.Years	-15.41981*	-	-1.84882	-3.97934
	10-15.Years	-13.57099	1.84882	-	-2.13051
	15-20.Years	-11.44048	3.94934	2.13051	-

With the help of further analysis, it was found that there is a significant difference in their performance with respect to their experience as the ANOVA value (2.872) is lesser than the table value at 0.05 level (P Value=0.37). The mean value (140.25) of graduates with less than five years of experience differs significantly from mean value (124.83) of graduates with 5 to 10 years of experience. So it indicates that graduates with less experience have better performance than 5 to 10 years of experienced graduates.

SUMMARY, CONCLUSION AND RECOMMENDATIONS-The results indicated that performance of commerce graduates were analyzed with 3 dimensions: Personality, Organizational Skill and Role Performance. The Managerial employees working in business/ industrial sectors reported that only 30.9% of commerce-graduated employees attained outstanding performance where as 64.1% of commerce graduates attained good performance and 5% attained a satisfactory level. The assess (Managerial employees) have further remarked that the majority of the commerce graduate (69.1%) needs improvement in their performance through self-attention, focusing on their personality, organizational skill attainment, improved role performance and technological knowledge enhancement. Concerning the dimensional analysis, 30.0% of commerce graduated employees have outstanding performance in the personality dimension, 52.7% graduates fall in good category and 17.3% fall under the satisfactory level. The results indicate that 70% of the graduates need further improvement in their personalities. 31.14% of commerce graduated employees have outstanding performance in the organizational skill dimension, 57.3% of graduates fall in the good category and 11.4% of graduates fall under the satisfactory level. The results indicate that 68.7% of the graduates need improvement in their organizational skills. 32.7% of commerce graduated employees have outstanding performance in the role performance dimension, 55.5% of graduates fall in the good category and 11.8% of graduates fall under the satisfactory level. The results indicate that 67.3% of the graduates need improvement in their Role performance. According to the data input available from the managerial employees, the commerce graduates employed in the business/ industrial sector do not significantly differently based on gender (p value= 0.704), t-value district (p value=.090), age (p value=0.740), Educational qualification (0.511). So it is meant that all commerce graduates have similar performance levels in their work environment irrespective of their gender, district, age and educational qualification.

****

References

1. Bhate, Manasi. Et, al. (2020). Factors Affecting Employability – A Student's Perspective, International Journal of Management (IJM), 11(8), pp. 1322 1329. http://www.iaeme.com/IJM/issues.asp?JType=IJM&VType=11&IType=8
2. Miller, Paul & Chia, Grace. (2008). Tertiary Performance, Field of Study and Graduate Starting Salaries. Australian Economic Review. 41. 15-31. 10.1111/j.1467-8462.2008.00471x.
3. Federation of Indian Chambers of Commerce and Indusstry. (2019). *India Risk Survey 2019.* New Delhi: Pinkertron.
4. Graduate Management Admission Council. (2021). *The Global Demand for Graduate Management Education: Application Trends Survey 2021.* Virginia, United States: GMAC.
5. Mulongo, G. (2013). Inequality in Accessing Higher Education in Kenya; Implications for Economic Development and Well-Being. International Journal of Humanities and Social Science, vol. 3, no. 16, pp. 49-61.
6. Nagarajan, Rajbarath, Ravikumar Alagiri Swamy, Thomas G. Reio, Rajesh Elangovan & Satyanarayana Parayitam (2022) The COVID-19 impact on employee performance and satisfaction: a moderated moderated-mediation conditional model of job crafting and employee engagement, Human Resource Development International, 25:5, 600-630, *DOI:* 10.1080/13678868.2022.2103786
7. National Association of Colleges and Employers. (2021). *Job Outlook 2021.* Bethelhem: NACE.
8. Santosh, S. (2007, 05 07). *Employability Skills Development in India.* Retrieved from Academia: https://www.academia.edu/8755191/Employability_Skills_Development_in_India
9. Zhang, X. and Venkatesh, V. "Explaining Employee Job Performance: The Role of Online and Offline Workplace Communication Networks," MIS Quarterly (37:3), 2013, 695-722. https://doi.org/10.25300/MISQ/2013/37.3.02

Seasonal Variation of leaf dust load of Various Plant Species of the main Campus of Kamla Nehru Institute of Physical and Social Sciences, Sultanpur, Uttar Pradesh

Harshita Singh
Research Scholar
Department of Forestry, Wildlife & Environmental Sciences
Guru Ghasidas Vishwavidyalaya, Bilaspur, Chhattisgarh.

Abstract: -The objective of this study was to evaluate how dust affects leaf photosynthesis by analyzing a range of physiological parameters. The emissions from vehicles produce a significant quantity of dust, which contributes to particulate pollution. However, the leaves of plants intercept this dust, thereby reducing the overall environmental dust load. The ability of leaves to hold dust is determined by their morphological characteristics, which vary among different plant species. Consequently, the dust accumulation on leaves varies seasonally across different species. Due to its impact on the overall health of trees, dust disrupts the normal photosynthetic processes of leaves. As a result, it can be concluded that dust has negative impacts on numerous photosynthetic parameters across different plant species.

Keywords: *Air Pollution Tolerance Index (APTI), Anticipated Performance Index (API), Greenbelt, Biochemical characteristics of plant leaves, Ambient air quality.*

Introduction: -The problem of Indian cities with respect to particulate pollution was studied in detail almost two decades ago the problems also persists (Agarwal et al.,1999). The dust deposited on leaves has been shown to have seasonal variations and deposit dust affects pigments of the leafs (Prajapati and Tripathi, 2008). Research has shown the influence of dust pollution on chlorophyll-a and organic carbon (particulate) in the sub- arctic ocean region that was based on satellite data (Luo et al., 2020). In recent times, several studies have been conducted on Vigna radiata. These studies have demonstrated that plant leaves exposed to particulate matter exhibit a reduced chlorophyll a/b ratio. This is attributed to the shading effect of the particulate matter on primary leaves. (Kovats et al.,2021) have studies that effects of particulate pollution on several roadside plants species in Europe taking cholorophyll a and b, carotenoids, biomass as important factors. Chaudhary and Rathore (2019) have studied the effects of dust on tree leaf physiology and also the dust removal efficiency of some selected tree species. Air pollutants are capable of damaging plants leaves, reducing plant growth and reduce the photosynthetic efficiencies of the plants according to (Ulrich, 1984). There are various adverse effects of dust pollutants to plants such as chlorosis and necrosis (Katiyar and Dubey, 2000). This results in several biochemical alterations in plant leaves, including a reduction in total chlorophyll content and an increase in ascorbic acid. As a consequence, the critical components required for photosynthesis activity are impacted. Stress can lead to variation in leaf chlorophyll fluorescenc of different plant species exposed to adverse environment (Meravi and Prajapati, 2020a).When plants are exposed to abiotic or biotic stresses, photosynthetic parameters are adversely affected in plants (Baker, 2008). (Meravi and Prajapati, 2020b) have shown that lights during nights because of street lamps reduce leaf photochemical efficiency of different plant species. The ability of plant species to remove particulate pollutants from ambient air in urban areas has been described in the work of (Konczak et al.,2021) using phylloremediation. There are studies on dust holding capacities of the leaf surfaces of eight widespread garden plants in Hangzhou, China (Shao et al., 2019). The dust deposited on leaves of plants following to the roadside has an effect on the leaf attributes of the tree species (Chaturvedi et al., 2013). The research were conducted with respect to eco-physiological and morphological characterization of vegetation on roof for urban dust pollution mitigation (Baraldi et al., 2019). Plant canopies can be a biomonitor and trap the resuspended dust particles that are contaminated with heavy metals (Ram et al., 2014). The winds laden with sandblast have the potential to damage the growing vegetation (Armbrust and Retta, 2000). Plant species can help to reduce the amount of dust in the surrounding environment of a thermal power plant primarily by allowing the dust to settle on their leaves. This deposition of dust on the surface of the leaves can effectively remove dust particles from the air.. The deposition of particulate pollutants and their accumulation are more in woodland vegetation as compared to place having shorter vegetation (Fowler et al., 1989 ; Bunzl et al., 1989). Dust holding potential of plant leaves depends on their various morphological characters such as the presence of hairs, cuticle, trichomes etc. and also phyllotaxy, height and canopy of trees (Singh et al., 2002). Thus, having plant species in the surrounding environment of power plants can lead to an improvement in air quality. The main objective of the current study was to investigate how the deposition of dust on leaves can have negative impacts on different photosynthetic parameters. The Fv/Fm parameters represent the highest and most efficient photochemical quantum yield of photosystem II (PS II), while Y (II) denotes the photochemical quantum yield of photosystem II (Meravi, N. et al.,2021). Additionally, NPQ refers to the degree of non-photochemical quenching of chlorophyll fluorescence, which indicates the amount of non-radiative energy loss occurring in the light harvesting complex II of photosystem II Y (NO) is used to estimate the yield of all non-

photochemical losses, except for the excitation energy that is dissipated as heat through the photo-protective mechanism (Meravi, N. et al.,2021). On the other hand, Y (NPQ) is used to measure the proportion of excitation energy that is dissipated as heat through the photo-protective mechanism (Meravi, N. et al.,2021).

Materials and methods: The present study was undertaken in the vicinity of the main Campus of Kamla Nehru Institute of Physical and Social Sciences, Sultanpur, Uttar Pradesh located at 25°58' to 26°40'N and 81°33' to 82°40'E. Thirty one species of plants growing surrounding (of the main Campus of Kamla Nehru Institute of Physical and Social Sciences, Sultanpur, Uttar Pradesh (Table 1). The study involved a sample of thirty trees, from which nine young leaves were selected from each plant species. The upper portion of all the selected leaves was carefully cleaned using a fine brush, and each leaf was labeled for identification purposes. The labeled leaves were then left for 24 hours to allow dust to settle on their surfaces. After 24 hours had passed, the surfaces of all the previously marked leaves were carefully cleaned using a brush to collect the dust on pre-weighed tracing paper (Prajapati, S.K., et al, 2008). The size of each individual leaf was determined by using the millimeter graph paper method to calculate the leaf area in square meters (m²). The samples were then weighed using an electronic balance, and the weight of the dust collected was calculated using the following equation:

$$W = (w_2 - w_1)/a$$

where W is the dust content(g/m^2), w_1 is the initial weight of the tracing paper, w_2 is the final weight of the tracing paper with dust, and a is the total area of the leaf in square meters (m²) (Prajapati, S.K., et al, 2008).. In addition to measuring dust accumulation capacity, the photosynthetic responses of the leaves of thirteen plant species were also evaluated. To measure various photosynthetic parameters a Chlorophyll Fluorometer called MINI-PAM was used. The instrument used for this study was manufactured by Heinz Walz GmbH, Germany.

Results and discussion -According to the study, the dust that is intercepted by leaves is mostly visible on the upper surface layer of the leaves. Table 1 shows the dust holding capacity per day for the different plant species under study, as well as their seasonal variation. The findings of the study indicate that all the plants had a greater capacity to hold dust during the winter season, as the dew present during this time helps to retain more dust. The amount of dust deposited on leaves during summer was lower than during winter but higher than during the rainy season. This is because during the rainy season, there is typically less dust in the ambient air due to the clearer environment. The findings of the study indicate that there is a clear seasonal variation in the deposition of dust on plant leaves. Table 1 shows that Tectona grandis had the highest dust accumulation, followed by Ficus benghalensis. The minimum dust accumulation was observed in Holoptelea integrifolia and Tamarindus indica. The ability of plants to capture and hold dust from the environment depends on various morphological characteristics such as the shape and size of the leaf, its texture, the presence or absence of hairs, the orientation of the leaf, the length of the petiole, and physiological responses in trees such as changes in chlorophyll content and photosynthetic activities.

Table 1 List of plant species with their families selected for dust accumulation capacity.

S.No.	Hindi Name	Common Name	Botanical Name	Family	Dust Load
	Saptaparni	Scholar tree	*Alstoniascholaris*	***Apocynaceae***	1.09
	Chandani	Jasmine	*Tabernaemontanadivericata*	***Apocynaceae***	0.72
	Aam	Mango	*Mangiferaindica*	***Anacardiaceae***	0.93
	Semal	Silk cotton tree	*Bombaxceiba*	***Bombacaceae***	1.21
	Amaltas	Indian laburnum	*Cassia fistula*	***Caesalpiniaceae***	0.97
	Imli	Tamarind	*Tamarindusindica*	***Caesalpiniaceae***	0.29
	Kachnar	Orchid tree	*Bauhinia variegate*	***Caesalpiniaceae***	1.24
	Gulmohar	Flame tree	*Delonixregia*	***Caesalpiniaceae***	1.03
	Seemia	Spectacular Cassia	*Sennaspectabilis*	***Caesalpiniaceae***	0.94
	Papita	Papaya	*Carica papaya*	***Caricaceae***	1.11
	Sheesam	Indian Rosewood	Delbergiasisso	***Febaceae***	0.67
	Dhak	Sacred tree	Buteamonosperma	***Febaceae***	
	Sagwan	Teak	*Tectonagrandis*	***Lamiaceae***	2.31
	Neem	Indian Lilac	*Azardirachtaindica*	***Meliaceae***	0.34
	Saras (Sheersa)	Siris tree	*Albizialebbeck*	***Mimosaceae***	1.38
	Babul	Indian gum Arabic tree	*Acacia nilotica*	***Mimosaceae***	0.46
	Anjeer	Fig	*Ficuscarica*	***Moraceae***	1.02
	Gular	Cluster fig	*Ficusracemosa*	***Moraceae***	0.76
	Peeple	Sacred Fig	*Ficusreligiosa*	***Moraceae***	0.58
	Bargad	Banyan	*Ficusbengalensis*	***Moraceae***	2.07
	Senjana	Drumstick tree	*Moringaoleifera*	***Moringaceae***	0.67
	Kadamb	Kadam	*Neolamarckiacadamba*	***Rubiaceae***	1.09
	Mahua	Mahua tree	*Madhucaindica*	***Sapotaceae***	1.98
	Chilbil	Jungle cork tree	*Holopteleaintegrifolia*	***Ulmaceae***	0.42
	Bismarkia Palm	Bismarck Palm	*Bismarckianobilis*	***Arecaceae***	1.45
	Pygmy Date Palm	Pygmy Date Palm	*Phoenix roebelenii*	***Arecaceae***	1.86
	Taad	Royal palm	*Roystonearegia*	***Arecaceae***	2.01
	Kewda	Screw pine	*Pandanusodorifer*	***Pandanaceae***	0.99
	Christmas tree	Monkey Puzzles	*Araucaria Columnaris*	***Araucariaceae***	1.12
	Japanese sago palm	Sago Palm	*Cycusrevoluta*	***Cycadaceae***	0.98
	Vidya	Cypress	*Cupressustorulosa*	***Cupressaceae***	1.01

The dust deposited on plant leaves which is originated from fly ash and contaminated by metals and causes stresses that limit plant growth and development (Liphadzi and Kirkham 2006). The study suggests that heavy metals present in fly ash can have adverse effects on various photosynthetic parameters. This can occur due to the deposition of fly ash containing heavy metals on the leaves and in the stomata, leading to the blockade of gaseous exchange (Meravi, N. et al.,2021). Excess of dust may lead to stomatal closure and thus can cause decreased photosynthesis (McDowell et al., 2008 ; van der Molen et al., 2011). This suggests that identified plant species have the potential to be used for plantation as they have shown good dust accumulation capacity. Additionally, the study investigated the impact of dust accumulation on various photosynthetic parameters of the plants.

Conclusion-The decrease in Y (NPQ) values indicates a reduction in the photo-protective mechanism of the plant, leading to increased damage to the photosynthetic apparatus. This can ultimately lead to a decrease in plant growth and productivity. Therefore, it is important to minimize dust deposition on plant leaves to ensure optimal plant growth and development. The effect of dust on NPQ (non-photochemical fluorescence quenching) and Y (NO) (quantum yield of non-photochemical fluorescence quenching) of plants studied Seasonal Variation of leaf dust load of Various Plant Species of the main Campus of Kamla Nehru Institute of Physical and Social Sciences, Sultanpur, Uttar Pradesh. The study was able to conclude that dust deposited on plant leaves, which originates from road sides, has a negative impact on the photosynthetic parameters and the overall yield of photosystem II. Dust deposition on plant leaves can create a barrier that prevents the penetration of light, reduces photosynthesis, and ultimately leads to a decrease in plant productivity. This effect can be particularly severe in hot and dry weather conditions when the plant is already under stress, and high summer irradiance further exacerbates the negative impact of dust deposition. There is also a report about seasonal variations in chlorophyll *a* fluorescence for various plant species (Meravi and Prajapati, 2020c). Dust originating from fly ash dykes and accumulating onto the leaves decreased the photo synthetically active radiation (PAR) for the leaves without causing any shade effect and also decreased stomata conductance, photosynthetic and transpiration rates.

****

References:-

1.Agarwal, A., Narain, S., Sen, S., 1999. State of India's environment. In: Agarwal, A. (Ed.), The Citizens' Fifth Report. Part I: National Overview. CSE, New Delhi, pp. 167–206. Armbrust, D.V., Retta, A., 2000. Wind and sandblast damage to growing vegetation. Ann. Arid Zone. 39, 273–284.

2.Baker, N.R., 2008. Chlorophyll fluorescence: a probe of photosynthesis in vivo. Annu. Rev. Plant Biol. 59, 89–113.

3.Baraldi, R.,Neri,L.,Costa,F., Facini, O., Rapparini, F., Carriero, G.,.Ecophysiological and micromorphological characterization of green roof vegetation for urban mitigation. Urban For. Urban Gree. 37,

4.Bunzl, K., Schimmack, W., Kreutzer, K., Schierl, R., 1989. Interception and retention of Chernobyl-derived 134,137Cs and 100Ru in a spruce stand. Sci. Total Environ. 78, 77–87.

5.Chaturvedi, R.K., Prasad, S., Rana, S., Obaidullah, S.M., Pandey, V., Singh, H. Effect of dust load on the leaf attributes of the tree species growing along the roadside. Environ. Monit. Assess. 185, 383–391.

6.Chaudhary, I.J., Rathore,Dust pollution: its removal and effect on foliage physiology of urban trees. Sustain. Cities Soc. 51, 1–10. Chaurasia, S., Karwaria, A., Gupta, D.A., 2013. Cement dust pollution and morphological attributes of groundnut (Arachis hypogaea), Kodinar, Gujrat, India. J. Environ. Sci. Toxicol. Food Technol. 4, 20–25.

7.Fowler, D., Cape, J.N., Unsworth, M.H., 1989. Deposition of atmospheric pollutants on forests. Philos. Trans. R. Soc. A. 324, 247–265. Garg, S.S., Kumar, N., Das, G., 2000. Effects of the Bansal Ramraj mill dust on vegetation and health at Jaitwara, District Satna (M.P). Indian J. Environ. Prot. 20, 326–328.

8.Katiyar, V., Dubey, P.S., 2000. Growth behaviour of two cultivars of maize in response to SO2 and NO2. J. Environ. Biol. 21, 317–323.

9.Kończak, B., Cempa, M., Pierzchała, Ł., Deska, M., 2021. Assessment of the ability of roadside vegetation to remove particulate matter from the urban air. Environ. Poll. 268, 115465. doi:10.1016/j.envpol.2020.115465, doi.org/.

10.Kovats, N., Hubai, K., Diósi, D., Sainnokhoi, T.-.A., Hoffer, A., Tóth, A., Teked, G., 2021. Sensitivity of typical European roadside plants to atmospheric particulate matter. Ecol. Indic. 124, 107428. doi:10.1016/j.ecolind.2021.107428, doi.org/.

11.Liphadzi, M.S., Kirkham, M.B., 2006. Heavy-metal displacement in chelate -treated soil with sludge during phytoremediation. J. Plant Nutr. Soil Sc. 169 (6), 737–744.

12Luo, C., Wang, W., Sheng, L., Zhou, Y., Hu, Z., Qu, W., Li, X., Hai, S., 2020. Influence of polluted dust on chlorophyll-a concentration and particulate organic carbon in the subarctic North Pacific Ocean based on satellite observation and the WRF-Chem simulation. Atmo. Res. 236, 104812. doi:10.1016/j.atmosres.2019.104812.

13.McDowell, N., Pockman, W.T., Craig, D.A., Breshears, D.D., Cobb, N., Kolb, T., Plaut, J., Sperry, J., West, A., Williams, D.G., Yepez, E.A., 2008. Mechanisms of plant survival and mortality during drought: why do some plants survive while others succumb to drought? New Phytol 178, 719–739.

14.Meravi, N., Prajapati, S.K.,Temporal Variation in Chlorophyll Fluorescence of Different Tree Species. Biol. Rhythm. Res. 51 (3), 331–337.

15.Meravi, N., Prajapati, S.K.Effect street light pollution on the photosynthetic efficiency of different plants. Biol. Rhythm. Res. 51 (1), 67–75.

16.Meravi, N., Prajapati, S.K., c. Seasonal variation in chlorophyll a fluorescence of Butea monosperma. Biol. Rhythm. Res. 51 (5), 751–758.

17.Meravi, N., Singh, P. K., & Prajapati, S. K. (2021). Seasonal variation of dust deposition on plant leaves and its impact on various photochemical yields of plants. *Environmental Challenges*, *4*, 100166.

18.Prajapati, S.K., Tripathi, B.D., 2008. Seasonal variation of leaf dust accumulation and1pigment content in plant species exposed to urban particulates pollution. J. Environ. Qual. 37, 865–870.

19.Ram, S...S., Majumder, S., Chaudhuri, P., Chanda, S., Santra, S.C., Maiti, P.K., Sudarshan, M., Chakraborty, A., 2014. Plant canopies: bio-monitor and trap for re-suspended dust particulates contaminated with heavy metals. Mitig. Adapt. Atrat. Gl. 19, 499–508.

20.Saha, D.L., Padhy, P.K., 2011. Effects of stone crushing industry on Shorea robusta and Madhuca indica foliage in Lalpahari forest. Atmos 2 (4), 463–476.

21.Shabnam, N., Oh, J., Park, S., Kim, H., 2021. Impact of particulate matter on primary leaves of Vigna radiata (L.) R. Wilczek. Ecotoxicol. Environ. Saf. 212, 111965. doi:10.1016/j.ecoenv.2021.111965, doi.org/.

22.Shao, F., Wang, L., Sun, F., Li, G., Yu, L., Wang, Y., Zeng, X., Yan, H., Dong, Li., Bao, Z., 2019. Study on different particulate matter retention capacities of the leaf surfaces of eight common garden plants in Hangzhou. China. Sci. Total Environ. 652, 939–951.

23.Singh, A.N., Raghubanshi, A.S., Singh, J.S., 2002. Plantations as a tool for mine spoil restoration. Curr. Sci. 82, 1436–1441.

24.Somashekar, R.K., Ravikumar, R., Ramesh, A.M., 1999. Impact of granite mining on some plant species around quarries of Bangalore district. Pollut. Res. 18, 445–451.

25.Ulrich, B., 1984. Effects of air pollution on forest ecosystems and waters—The principles demonstrated at a case study in Central Europe. Atmos. Environ. 18, 621–628.

Value education and spirituality in education – Its relevance in the 21st century modern Education

Jolly Anju
(Research Scholar, Department of Education)

Abstract:-*In this era of globalization and modernization, there is an inclination toward western education, and the young generation follows this lifestyle. After the implementation of globalization and privatization multinational companies are establishing their establishment and the process of commercialization has taken momentum. In the educational field also there is craving for materialism and there arises cutthroat competition among the students. The students are facing unemployment, family problem, peer pressure, and emotional stress in every field of life. Science and technology have been given importance and our educational system also emphasized job-oriented education and all are running after money, leisure, and pleasure. Due to this pressure of competition, crime rate and suicidal tendencies have also increased among school-going students. The root cause for this crime is a lack of quality education in relation to values and morals. Parents are putting more emphasis on materialistic education based on the educational achievements of children, neglecting the overall development of the child. Not only parents but teachers and schools are also responsible for misdirecting the direction of education. So it is an urgent need for the nation to inculcate values among the young generation, spirituality in education should be implemented so that holistic development can be achieved. In this paper, the researcher put light on the concept of the value and spiritual education and its relevance with reference to NEP, 2020.*

Key words: *Value, Spiritual, Modernization, suicidal, materialistic*

Introduction. Education is considered to be the source of inculcating values among people. It refers to the drawing out the best in body, mind and soul. It is a process of development. Education meets the immediate need of the child and also prepares him for his future life. In the process of globalization our education system also moving towards privatization and westernization is being watched in a classroom setting. There is a hunger for materialism and fierce competition among the pupils in the educational setting as well. In every aspect of life, kids must deal with peer pressure, emotional stress, unemployment, and family issues. All people are chasing after money, leisure, and pleasure, and science and technology have been given prominence. Our educational system has also placed a strong emphasis on job-oriented education. Students who are in school have seen an upsurge in suicide thoughts and crime rates as a result of this competitive pressure. A lack of good moral and ethical education is the primary contributor to this crime. Parents are focusing more on a materialistic education based on their children's academic success and ignoring their holistic development.

Values are "standards and principles for judging worth. There are criteria by which we judge things (people, objects, ideas, actions and situations) to be good" (Shaver, 1962).

Values refers to attitude preferences, lifestyle normative frame work symbolic universe, belief system and a network of meaning which men give to life. The term values refers to interest, pleasure, likes, preferences moral obligations, desires, needs aversions and attractions and many other modalities of selective orientation. According to Lutes henry, "values are something that we consider good such as love, kindness, contentment fun, honesty, decency relaxation and simplicity".

Value education is an important part of education system. For a changing society value based education is the need of the hour. Value based education brings integrity and compassion among students and that will help them to become a responsible citizen. A person is known for his/her principles and values. Value based education introduces one to human goodness and ideals and it guides the students to develop the values concurrent to ideals of society. It deals with the development of personality i.e. morals, social, Intellectual and spiritual level. (Spranger,1922). The prime agencies for developing values are- home, school and communities.

Categories of values:

There are six categories of values and this can be found in all of us with varying degree (Spranger, 1922). We construct the unity of our lives around these values (Allport, 1961).

1. **Theoretical value**: Discovery of truth is the primary concern of the theoretical person. The theoretical individual rejects the consideration of beauty or utility and searches the fundamentals of identities and differences. Such person's interest is basically rational, critical and empirical (Allport-Lindzey.1960)

2. **Economic value:** The economic individual is thoroughly practical and places highest value upon what is useful. The economic value is rooted from the satisfaction of bodily needs i.e self preservation. Further it gradually extends to the everyday affairs of the business world-the production, marketing and consumption of goods. The economic person is interested in making money. They like luxury with beauty in their personal lives.

. **Aesthetic value**: The aesthetic person places highest value on "form" and harmony. He or she judges each single experience from the stand point of grace, symmetry or fitness and perceives life as a processing of the aesthetic value.

4. **Social value**. Love is considered to be the part of social value. In social value only the philanthropic aspect of love is focused, which is kind and unselfish in nature. To a social person only the suitable form of human relation is love.

5. **Political value**. Power is the dominant interest of the political individual. Leaders in any field generally place a high value on power. Vocational activities of the political individual are not necessarily confined to the realm of politics. However, there are clear individual differences in the power value according to Stranger. Direct expression of this motive overrides all others for certain personalities, in that they yearn for personal power, influence and renown above all else.

6. **Religious value**: Religious individuals place their highest value upon unity. They being fundamentally mystical, seek to understand and experience the world as a unified whole, some religious persons are "immanent mystics" (individuals who find religious meaning in the affirmation and active participation in life.) while others are "transcendental mystics" striving to unite themselves with higher reality by withdrawing from life. The religious person basically seeks unity and higher meaning in the cosmos, regardless of the particular type of expression.

Spirituality in Education:-Psychologically spirituality is presented as spiritual intelligence, but philosophically, spirituality is the human ability that needs to be developed through education. The sociological view of spirituality explores it as an expression of post secular religiosity.(Kirsi Terri,2009) Empirical studies indicate that an increasing number of people now prefer to call themselves 'spiritual' rather than 'religious' (Heelas & Woodhead 2005; Mikkola, Niemela & Petterson 2007).There is a difference of religion and spirituality. Religion is defined as the organizational ritual and ideological while spirituality refers to affective experiential and thoughtful process. An individual can be spiritual without being religious.(Paragment,1999) Zohar and Marshall(2000) claims that spiritual quotient is the ultimate intelligence and it is the necessary foundation for the effective functioning of intelligent quotient and emotional quotient. Spiritual intelligence allows us to ask if we want to be in this particular situation in the first place, rather change the situation and create a better one. This is working with the boundaries of our situation and allowing us to guide the situation. Spiritual intelligence as 'the adaptive use of spiritual information to facilitate everyday problem solving and goal attainment' (Robert A. Emmons 1999:176)There are three categories of spiritual sensitivity--- (a) awareness sensing which refers to the experience attained at the deeper level of consciousness that helps to pay attention of what is happening in our surroundings. (b) Second category is the mystery sensing which is connected to the capacity of everyday experience sensing and to use our imagination. This category is related with the mysterious nature of experience. (c)The third category is the spiritual sensitivity of value sensing.This category emphasizes the importance of feelings as a measure of what we value.(David,1980).

Objectives of the study:

1. To review different studies and opinion given about value education and spirituality in education.
2. To realize the relevance of value education and spirituality in education in the 21st century modern education system.

Studies related value education and spirituality in education:

Gul (2017) had conducted qualitative studies on value education and role of teacher. He revealed that teacher plays a prominent role for developing a value based environment in the school.

Mhaske (2016) conducted a study on higher secondary school to know about personal value pattern. The study concluded that value pattern of student's charges due to locality and changes due to gender.

Vij (2016) had conducted a study on value orientation among secondary school students in relation to their school climate and revealed that political values (VY) of secondary school students do not differ with respect to their school climate.

Natasha (2013) conducted a comparative study of value pattern among adolescent. It was observed that there is a significant difference in the value pattern of adolescent of rural & urban area.

Sanjeev (2012) had conducted a study on value education and found that values are instruments through which the quality of students and teachers transmit to a unique way that set standard of behaviors towards society.

Review of related literature on spiritual education:

Robbinson (2011) conducted a study on spirituality among school going children and he revealed that students were taking religious view and spiritual view in a common way.

Nye& Stern (2009) revealed that spiritual education is the subspecies of relational education which specifically concern with the transcendent.

Hardy (2006) had conducted studies on spirituality among school children and found that it has significant influence in their lives.

Methodology of the study

1. Qualitative analysis method was used. The data was collected through secondary sources like books, journals,

magazines, newspaper and web sources.Relevance of Value education and spirituality in education for our education system

1. Spiritual education develops a deep connection between student, teacher, and subject, that connection is very much relevant in our education system. It is vital, honest and vibrant.
2. Value education and spiritual education help to fulfill the divine potentiality of the children and prepare them to face the challenges of life. It is a tool for whole life and prepares the person at all levels.
3. When we are talking about spirituality in education it helps to align one as a spiritual being.
4. It helps the student to identify himself with the higher consciousness of life and living.
5. Value education helps to realize the truth and reality in the cosmic scheme of time and place, and help the youth to seek a balance in their lives.
6. It help the student to remain in the present, open their minds to question, enquire and seek mentorship in finding their answers to vexing questions beyond their books.

There are various examples of cases where the approaches of value education and spirituality in education have been applied to schools.

Mindful Schools: Mindful Schools is a program that teaches mindfulness to children in schools. The program aims to improve students' well-being and reduce stress by teaching them techniques for mindful breathing, movement, and attention. The program has been successful in improving students' emotional regulation, attention, and academic performance.

Character Education: Character education is a program that teaches students about core values such as honesty, respect, responsibility, and compassion. The program aims to develop students' character and moral values, which are essential for success in life. Research has shown that character education programs improve students' academic achievement, behavior, and overall well-being.

Holistic Education: Holistic education is an approach that considers the whole person, including their physical, emotional, social, and spiritual aspects. The approach aims to develop students' intellectual, emotional, and spiritual intelligence. Holistic education programs often include mindfulness practices, meditation, and yoga, which have been shown to improve students' well-being, academic performance, and social-emotional skills.

Service Learning: Service learning is a program that integrates community service with academic learning. The program aims to develop students' social responsibility and civic engagement. Service learning programs often focus on values such as empathy, compassion, and social justice. Research has shown that service learning programs improve students' academic achievement, civic engagement, and character development.

Religious Education: Religious education is a program that teaches students about different religions and their values. The program aims to develop students' spiritual and moral values. Religious education programs are often controversial, as they can be seen as promoting one particular religion over others. However, some studies have shown that religious education can improve students' moral reasoning and empathy, regardless of their religious background.

NEP 2020 and value education-The NEP 2020 recognizes the importance of value education in shaping the character and personality of students. It emphasizes the need for a holistic and integrated approach to education that includes the development of ethical and moral values in students.The policy also emphasizes the need to develop a culture of respect for diversity and the promotion of social harmony. It recognizes the importance of teaching students to be socially responsible and to contribute positively to society. In order to promote value education, the NEP 2020 recommends the inclusion of value education in the curriculum from primary to higher education. It also emphasizes the need for teacher training in value education.

Conclusions: Value education is a form of education that can be implemented in order to ensure that individuals become aware of the values, have specific values that they are in need of, and actually implement such values by accepting them (Yaman, 2012).The fundamental purpose of all educators and educational institutions is characterized by the process of ensuring that all individuals, from the preschool period to the life in university, acquire the values needed in order for them to make healthy moral decisions and to implement such decisions by internalizing them (Ryan & Bohlin, 1999).The future of the society is determined by characterful and well educated value oriented ,spiritual individuals.

****

References:

1. Aneja, N. (2014). The Importance of Value Education in the Present Education System & Role of Teacher. *International Journal of Social Science and Humanities Research*, Vol. 2, Issue 3, pp: (230-233).
2. Aspin, D. & Chapman, J. (2007). Value Education and Lifelong Learning: Principles, policies, programmes. Springer.
3. Central Board of Secondary Education (2003). Value Education, A Handbook for-Teachers. New Delhi :CBSE.
4. Gul,S (2017) Teacher and value education,*Inquiry,*Vol37;ISSN0974-8997
5. Hardy, S. A.(2005). Religiosity and pro social behaviors in adolescence: The mediating role of pro-social values. *Journal of Moral Education,* 34, pp. 231–249.
6. Heelas and woodhead (2005) value education and its impact; *International journal of social science and humanities,*Vol.13,Issue5,pp(133-137)
7. Kirsi,T(2009) Role of value education, International journal of moral education, vol 33,pp 167-175
8. Mhaske, V.P.(2010). Higher secondary school personal value pattern: a study. *Bilingual Journal of Humanities & Social Sciences.Vol.3,pp-26-34*
9. Natasha,J.A.(2013) Students value acquired in school. *Junior scientific research journal,*Vol.5,pp-24-40
10. Robinson(2012) Spirituality among school going children, *International journal of leadership in education*,Vol.20,pp 56-67
11. Sanjeev,K(2012) Value education and role of teachers, (257-266) SEPT, Vol. I, ISSUE-II www.srjis.com Page 261-269

Is Health Communication a New Soft Power of India?

Vivek Kumar
Research Scholar
Dept. of Journalism and Mass Communication
Indira Gandhi National Tribal University, Amarkantak, M.P.

Abstract:-Soft power is now more widely acknowledged as a crucial tool for foreign policy across the globe. India have been attempting to project its soft power engagements past few decades, as a continuous effort to enhance its positive reputation across the globe. The trend of soft power diplomacy has not only confirmed but also has strengthened India's most valuable and recent assistance to the neighbors in the region as well as third world countries during the COVID-19 pandemic. Such a generous gesture by India has received widespread praise and also helped in building India's positive image among its neighbor's. The primary goals of this research paper is to investigate India's use of health communication diplomacy and how it has integrated soft power into its foreign policy.

Keywords:-COVID-19, Foreign Policy, Health and Wellness, Health Diplomacy, Soft Power

Introduction:-In the field of international relations, the idea of power has a significant pivot point. Niccol Machiavelli's *The Prince* (Early in the 16th century) and Thomas Hobbes' *Leviathan* (mid-17th century) developed the theory of power. Machiavelli is a great illustration of strategic and decentralized power thinking (Ali, 2015). Machiavelli's perspective on power underlines that it is a tool, not a resource, and thus it needs to be exploited to acquire strategic advantages, such as a military superiority over competitors. Hobbes displays the causal view on domination as well as emphasizing the relationship between sovereignty and consolidated power. After World War II, there was an understandable curiosity about power among academics.The COVID-19 pandemic that the world experienced has influenced not just the population worldwide but also peoples' day-to-day experiences, trapping the entire planet in a pandemic web. The COVID-19 Pandemic has disrupted not just human life but also the economy, offering hitherto unheard-of challenges to areas like public health, travel and tourism, hospitality, sports, education, and entertainment (Mol, Singh & Chattu, 2022). The pandemic has drastically affected many places, including the world, and highlighted the frail and overburdened global public healthcare systems. India's reputation in the region is as a hegemonic and intrusive force is partly due to its dependence on hard power tools like its military might and economic might to control its neighbor's (Burgess, 2009).As a result of the COVID-19 pandemic, international cooperation and global health diplomacy are currently at the forefront of foreign policy in an effort to prevent COVID-19 exposures and transmission and to create an effective, broadly effective vaccine as soon as feasible (globaltiesdetroit.org, 2020). As the role of health policy in foreign policy has increased, less attention has been paid to ways to secure collective global security against new illnesses. "COVID-19 has proved that such viruses may transcend any boundary and trigger economic meltdowns, which is something that this pandemic is set to change in the future.…" given the complexity of global health and the need for strong political communication in cases like this, the pandemic may open up new chances for cooperation. (Alam, 2020).Given that this is a relatively new area of diplomacy, Indian diplomats and foreign policy practitioners have begun to understand better and enhance India's diplomatic activities in several organizations. The World Health Organization and the United Nations are the leading incubators across global for its health projects and infrastructure (WHO). In response to the significance and complexity of global health discussions, many nations have recruited a full-time health attaché to their diplomatic service; some nations, like India, have also added diplomats to the staff of international health departments.

Methodology:-A literature search was conducted using the terms "Soft power" OR "Foreign Policy" OR "Humanitarian" OR "Geopolitical" OR "Diplomacy" OR "Health" AND "India" AND/OR "Communication" in all major databases, including Scopus, Web of Science, OVID, PubMed/MEDLINE, and Google Scholar. Genuine websites and annual reports from government ministries in India were among the other information sources. For this study, important details were taken from news items published in the newspapers like Indian Express, The Diplomat, Economic Times, and The Foreign Policies

Findings:S*oft Power: A theoretical Framework*

The term "soft power" was coined by American academic Joseph S. Nye in 1990 and initially appeared in a Foreign Policy article. Currently, he observed, "the focus on military force in the notion of power is losing ground. The aspects of technology, education, and economic growth are becoming increasingly significant in the concept of international power" (Nye, 1990, p. 154). He embraced a behavioral definition of power and stated that it is the capacity to draw others in order to achieve goals (Nye, 2021, p. 197). He suggests using coercion (sticks), compensation (carrots), and seduction (soft power) as three effective strategies to accomplish this (Nye, 2006).

Values like democracy, respect for human rights, guarantees of a free press, and an approach to foreign policy that is recognized as just can all be viewed as significant resources to entice other nations (Mullen, 2015). Yet, intangible power sources like culture, ideology, and institutions are not necessarily necessary to influence people to want what you want. For instance, economic strength might be thought of as a hard or soft power resource. Sanctions are a powerful tool for pressure, but so is wealth (Nye, 2006).Soft power is "everything outside the security and military arena, with not just shared culture and public diplomacy, but even more coercive economic and political levers such as assistance and investment as well as engagement in multilateral organizations," according to Kurlantzick (2007: 6). He said that if a nation possesses a sizable amount of soft power potential, it will lend legitimacy to foreign action and make others more ready to cooperate with its goals. Wilson asserts that "soft power is the potential to influence people to do what one desires" (Wilson, 2008: p. 114).The importance of soft power is growing daily in the modern world. Modern hard power is insufficient to fulfil geopolitical, geoeconomic, and geostrategic objectives, as Nye explains in his book Soft Power: The Keys to Success in Global Politics. According to the conventional viewpoint, the state is one of the few other actors in the global stage. Yet, the other parties (non-state actors) steadily arise and play a significant role in international relations in this globalized world with multilateralism.

Global health diplomacy has grown in significance and use as a result of changes in diplomatic procedures and development that have accompanied increased globalization (Chattu & Chami, 1970). Acting as a form of soft power, global health diplomacy gives governments a way to improve health outcomes globally by bridging the gap between foreign policy and medicine ("What is Global Health Diplomacy," n.d.).

Soft Power and Health Communication:

International agendas and practices have undergone a significant transformation as a result of the effects of rapid globalization. Health concerns have come to the fore in the ever-evolving global system, especially now that there is a global health emergency.GHD is described as a multi -level, multi-actor negotiation process that shapes and controls the global health policy environment by Kickbusch et al. (2007: 230–232). The phrase "winning the hearts and minds of people in underdeveloped countries by exporting medical care, experience and manpower to aid those who need it most" is how Fauci (2007) described health diplomacy.The goal of GHD, according to Fidler (2001), is to "capture policy-shaping processes in which state, non-state, and other institutional actors negotiate responses to health issues or use health principles or Frame work in policy shaping and negotiations techniques, to achieve other political, economic, or social goals."The platform for political negotiations and solutions is provided by the efficient use of soft power. Recent success stories in health diplomacy include the international responses to the COVID-19 Pandemic, H5N1 (2007), H191 (2009), and Ebola (2014) pandemics, to name just a few. Many academics have already drawn attention to the connection between soft power and health diplomacy. According to Lee's research (2010: 3), health diplomacy serves as a tool for swaying public opinion.

The mission of Communication for Health (C4H) is to use communication as a tool to promote health. In Everyday life policymakers, health professionals, and government officials make choices that have an impact on the health of the public or individuals. These choices are frequently influenced by the knowledge people possess, how and with whom they communicate, and the psychological, social, and environmental forces at work. An incredibly effective strategy for addressing complex health concerns is evidence-based that is the applications of strategic communications, which in general uses communication principles and methods in order to target a particular audience for a specific goal based on established needs and preferences of the audience. Strategic communication can be useful in encouraging COVID-19 health-protective behaviors, raising vaccination rates, lowering stigma associated with mental health, or promoting inclusive health policy.

Source of India's Soft Power:

The most significant source of state soft power is thought to be its cultural component. India is in a good situation as far as Indian culture is concerned. India is connected to many other nations on a cultural and civilizational level. It is asserted that businesses and tourists from throughout the world have been drawn to India for hundreds of thousands of years due of the depth of Indian culture. Similar to how "Yoga" is done all over the world and has become popular on a global scale. Indian culture is quickly coming to be represented by yoga. In addition, Indian food is growing in popularity in the West.

The most renowned example of international entertainment is probably Bollywood. Bollywood is currently a $ 3.5 billion business, and more than 70 different nations watch its films. It is recognized as the biggest entertainment sector in the entire globe in terms of film output and watching. The expansion of ideals centered on the family and nation has increased viewers' interest in Indian cinema. One may say that Bollywood is evolving into a new medium for convincing people of India's increasing importance in the globe.According to Shashi Tharoor, "India can pour more resources and energies

into its cultural diplomacy to promote the richness of its composite culture into the hands which already had a predisposition". According to Stephen Cohen, "there is a favorable perception of India among Americans. It is as a result of their current perception of India's foreign policy as being forceful, practical, and cooperative". Cohen also contends "that India's nuclear tests in 1998, which has disseminated the perception of India as a helpless and impoverished nation, are one of the reason for this change in perception".

*India and Vaccine Policy:-*Because of their ignorance of the connections between political and health challenges, decision-makers have long considered health-related issues as incidental concerns in foreign policy (Katz & Singer, 2007). Health has always been categorized as "low politics," taking up less of the country's attention (Fidler, 2006). Yet, changes in recent decades have shown foreign policy practitioners and decision-makers a new context and reality. In order to further their economic goals and foster international ties, states are increasingly using health issues as a mainstream foreign policy objective. Long before the institutional organizations that make up modern foreign policy and diplomacy were created, health diplomacy was in use. Global health governance is shaped through the interplay of multiple levels and actors known as health diplomacy. Nation states continue to play a crucial role in health diplomacy, particularly when it comes to fostering collaboration with numerous stakeholders, including the public, private sector businesses, non-governmental organizations, and state, non-state, and multilateral actors (Novotny & Kickbusch, 2013).The Framework Convention on Tobacco Control (FCTC), which India accepted in February 2004 (Kaur & Jain, 2011), was the result of WHO talks, and health promotion has been a priority in India's foreign policy agenda ever since. India had the worst tobacco problem of any country; there were around 630,000 tobacco-related deaths there in the late 1980s, along with an increase in diseases like cancer, heart problems, and lung-related complications (Mishra & Pimple, 2012). India, the second-largest tobacco producer, ignored the negative effects on health in favor of using the industry to generate income and jobs (Reddy & Gupta, 2004).

One of the very few nations in the world with the capacity to manufacture the COVID-19 vaccine domestically is India. As a rare demonstration of the "Vasudeva Kutumbakam" philosophy, India opted to share its created vaccinations with other nations as part of the "vaccine maitri" campaign as soon as its domestic immunization programme got underway (Pant, 21). This was carried out in accordance with India's stated commitment to employ vaccine production and delivery capabilities to aid all of humanity in combating the COVID pandemic, according to the Foreign Affairs Ministry (Vinayak, 2021).India served as the primary negotiator during the FCTC discussions and was instrumental in helping the area come to agreement on the draught text, making it the nation's first successful foray into the field of health diplomacy. Despite domestic initiatives, India's population of tobacco users increased to over 274 million in 2020, making it the second-largest nation in terms of tobacco users (The Union, 2020).India's approach to global health projects is a reflection of the difficulties that the Global South nations face. Complex socio-cultural factors that have an impact on national policy execution are at the base of many health-related challenges. In spite of the nation's participation and support in the 2003 World Health Assembly (WHA), the negotiations were made to restrict the marketing of unhealthy food and non-alcoholic beverage products that are harmful for the children and adolescents. India's national approach to putting the provisions into effect has been unique. Gopalkrishnan et. Al said "Although obesity is a bothersome issue in industrialized economies, it is not regarded as a serious health issue in the developing world" (Gopalkrishnan, Unnikrishnan & Garg, 2012). In order to promote public health, which includes wellness integrating all imaginable aspects and battling the particular disease in the pandemic period, clinicians, researchers, legislators, and other health professionals are doing research, making decisions, and inventing tools (Kumar, 2022).

Conclusion:-The foreign and economic policies of India are increasingly incorporating health. Promoting India's health agenda abroad is a top priority for Indian diplomats, trade officials, and health professionals. India will be able to significantly contribute to discussions at the WHO and other international health organizations thanks to these connections. India must aggressively participate not just with organizations like WHO but also with other organizations that promotes the soft power of India at the regional and international levels, working with a coalition of like-minded partners, in order to influence the global health agenda. India now has a chance to deploy soft powers through health diplomacy to position itself as a reliable and sympathetic partner to third worlds nations in the wake of the COVID-19 outbreak. So, despite the fact that many international actors have not responded appropriately and favorably to this crisis, India has established itself as one of the responsible as well as helpful participant in the international geopolitics through use of soft power in the field of health. On the other side, India has been working hard to control the Chinese influence in order to safeguard its interest so that it can advance its geopolitical interests, despite of the challenges that China's engagement is happening over the Asian region for expanding its geopolitical power. The article continues by noting that India has a

lot of potential and opportunities to further develop its position as a "growing global soft power" in the twenty-first century.

Conflict of Interest: The authors report no conflicts of interest. The author alone is responsible for the content and writing of this article.

****

References:

1. Alam, F. (2020, October 30). Facets of global health diplomacy (GHD) amid COVID-19. Retrieved July 01, 2022. https://ifair.eu/2020/10/30/healthdiplomacy/
2. Burgess, F. S. (2009). India and South Asia: Towards a benign hegemony. In H. V. Pant (Ed.), Indian foreign policy in a unipolar world, pp. 231-250.Routledge.
3. Chattu, Vijay Kumar & Chami, Georgina. (2020). Global Health Diplomacy amid COVID-19 pandemic: A Strategic Opportunity for improving Health, Peace and Well-Being in the CARICOM region- A Systematic Review. Social sciences. 10.3390/socsci9050088.
4. Chaudhury, A., & Devanath, A. (December 17, 2020). *India seeks to mend Bangladesh ties with vaccine diplomacy*. Bloomberg.
5. Fauci AS (2007) The expanding global health agenda: A welcome development. Nature Medicine 13(10): 1169–1171. Available at: https://www.nature.com/articles/nm1646 (accessed 25 July 2022).
6. Fidler, D. P. Health as foreign policy: Harnessing globalization for health. *Health Promotion International*, *21*, 1–4.
7. Gopalkrishnan, A., Unnikrishnan, S. K., & Garg, M. K. (2012). Preventing Obesity in India: Weighing the options. *Indian Journal of Endocrinology and Metabolism*, *16*.
8. Katz, R., & Singer, D. A. (2007). Health and security in foreign policy. *Bulletin of the World Health Organization*, *85*(3), 233–234. https://doi.org/10.2471/blt.06.036889
9. Kaur, J., & Jain, D. C. (2011). Tobacco control policies in India: Implementation and challenges. *Indian Journal of Public Health*, *55*(3), 220–227. https://doi.org/10.4103/0019-557X.89941
10. Kumar, V. (2022). Aspects of Health and Wellness Communication in Atharvaveda. Shodh Bharti, 17(5), 101–110.
11. Kurlantzick, J. . Charm offensive: How China's soft power is transforming the world. http://www.nicoravanilla.com/uploads/2/4/1/1/24114923/kurlantzik2007.pdf Retrieved July 12, Yale University Press.
12. Lee, J. (2010). Unrealized Potential: India's soft power ambition in Asia. The Centre for Independent Studies, No 4. https://apo.org.au/node/21896 Retrieved February 24, 2021
13. Mishra, G. A., Pimple, S. A., & Shastri, S. S. (2012, July). An overview of the tobacco problem in India. *Indian Journal of Medical and Paediatric Oncology*, 33(3), 139–145. https://doi.org/10.4103/0971-5851.103139
14. Mol, R., Singh, B., Chattu, V. K., Kaur, J., & Singh, B. (2022). India's Health Diplomacy as a Soft Power Tool towards Africa: Humanitarian and Geopolitical Analysis. *Journal of Asian and African Studies,* 57(6), 1109–1125. https://doi.org/10.1177/00219096211039539
15. Mullen, R. D. India's soft power. In The Oxford Handbook of Indian. *Foreign Policy*.
16. Novotny, T., Kickbusch, I., & Told, M. (2013). 21st-century global Health Diplomacy, *Global Health Diplomacy Series*, 3. https://doi.org/10.1142/9789814355179_bmatter
17. Nye, J. S., Jr. (1990). Soft power. *Foreign Policy*, (80), 153–171. https:/doi.org/10.2307/1148580
18. Nye, J. S. (2021). Soft power: The evolution of a concept. *Journal of Political Power*, *14*(1), 196–208. https://doi.org/10.1080/2158379X.2021.1879572
19. Nye, J. S. (2006, February 23). Think again: Soft power. *Foreign Policy*. https://foreignpolicy.com/2006/02/23/think-again-soft-power/
20. Pant, V. H. (2021). Vaccine Maitri is a pragmatic response to the pandemic. Commentaries. https://www.orfonline.org/research/vaccine-maitri-is-a-pragmatic-response-tothe-pandemic/ ORF Foundation, April 29.
21. Srinath Reddy, K., & Gupta, P. C. (Eds.). (2004). *Report on tobacco control in India*. Ministry of Health and Family Welfare, Government of India, Centres for Disease Control and Prevention, United States and World Health Organization.
22. Tobacco control in India. (October 12, 2020). *The Union*.
23. Vinayak, A. J. (2021, March 4). Vaccine Maitri; A Sanjivani for the world. The Hindu: Business Line, March 4. https://www.thehindubusinessline.com/news/variety/vaccine-maitri-a-sanjeevini-for-the-world/article33989241.ece
24. Wilson III, E. J. (2008). Hard power, soft power, smart power. *Annals of the American Academy of Political and Social Science*, *616*(1), 110–124. Retrieved August 11, 2022. https://doi.org/10.1177/0002716207312618
25. Ali, M. S. (2015, June). MORALITY AND POLITICS WITH REFERENCE TO MACHIAVELLI'S THE PRINCE. *European Scientific Journal , 11*(17).
26. *globaltiesdetroit.org*. (2020, December 02). Retrieved from https: www.globaltiesdetroit.org/news/List/Global-Health-Diplomacy-its-History-in-the-U.S.-and-Importance-during-the-COVID-19-Pandemic

Food Security In India

Mukesh Kumar Meena

Assistant Professor

Department of Economics, UCSSH

Mohanlal Sukhadia University, Udaipur, Rajasthan

Abstract:-Food security is an issue which requires consistent attention from policymakers. By serving as a safety net and providing necessities at a reduced price, India's Public Distribution System (PDS) significantly reduces food insecurity. Even though the PDS is a cornerstone of the government's food and nutrition strategy, India still has a sizable population of hungry and malnourished individuals. Therefore a comprehensive and sustainable strategy is require for for marginalized section of population. Food security is essential for dignified life for people in India because income, wealth, and resources distribution are unequal among the various segment of the population. The right to food provides security, and the state has to provide a mechanism to ensure the food for fellow citizens. This paper discusses the various issues related to food security in India and aims to give an update on the arguments surrounding India's food security.

Key Words: Food security, Public Distribution System, Subsidy,

Introduction-Food security is a situation where every person is getting food, which is enough nutrients; it means the quantity and quality of food should be according to biological and social status. When everyone at all times has physical and financial access to enough, safe and nutritious food that satisfies their dietary preferences for an active life, according to FAO, then there is food security. Indian people demanded to include the Right to food in the list of the fundamental right of the citizens. According to the National Human Right Commission (NHRC), India's right to food is inherent in Article 21 of the fundamental Right. Given the NHRC of India, Article 47 of the Directive Principles says that the state must increase the people's nutrition and standard of life through its policies.

Review of literature

Pillai (2001) The study found that input productivity had been crucial to this region's growth performance in the 1980s and early 1990s. While growth in inputs and total factor productivity had significantly contributed to the output growth in both States, West Bengal's performance had been better than Orissa's. This improvement in input productivity in West Bengal has been brought about by efficiency and innovation.

Sarkar and Chakraborty (2002) examined the growing crisis of food grain production in West Bengal. The study came to the conclusion that during the reform and overall periods, the expansion in the food grain area,

production, and yield trends in the State of West Bengal had drastically declined. This was primarily brought on by the reform period's significantly slower increase in rice production and yield trends as well as pulse area, production, and yield trends when compared to the pre-reform period. However, the pre-reform period saw a decline in the production and yield increase of pulse crops.

Hasan et al. (2008) measured the change and instability in the area, production, and yield of two major cereal crops- wheat and maize in Bangladesh- using secondary data from 1980/81-2003/04 using different statistical techniques. They discovered a good rise in wheat yield and area. However, yield still needed to be increased to meet the nation's demand. A considerable increase in work occurred in the case of maize over the research period. To meet the growing demand from the population, maise output and acreage both grew. Presently output of maize rose more rapidly than its area. Additionally, they discovered that whereas maize's growth rate in area, production, and yield improved quickly, wheat's growth in area, production, and yield only minimally improved in period II.

Nath (2010) attempted a regional analysis of growth in Indian agriculture for the period 1952-53 to 1964-65 based on the data compiled from Indian Agricultural Statistics, Statistical Abstract of India and Fertilizer Statistics.

Siegel, Benjamin Robert (2018) in his book Hungry Nation, Food, Famine, and the Making of Modern India, explain that there were so many challenges in front of Indian population before and after independence to solve the hunger problem. Politician and policy maker always try to make such policies which can increase food grain availability. It was not only the production, but also the market problems that were there to achieve the food security problem. To give priority to the capital formulation and support of the market system is required in the agriculture sector to remove the uncertainty in food Security. The Lack of investment in agriculture infrastructure creates many financial restrictions to achieve good food security. It is necessary to increase the total food grain production for food security

Dev, S. Mahindra (2019), in his paper, "Transformation of Indian Agriculture", discussed about Growth, Inclusiveness and Sustainability in agriculture Production, keeping some facts on present economic scenario. There are several changes coming after economic reforms. The policymaker should redefine the strategy for the agriculture sector. The Focus of the policymaker should on the inclusiveness of the growth. Shifting from cereal-based agriculture to non-cereal-based agriculture activities. Nonfarm activities are important with the development of total production. The Market reform in agriculture can increase the farmer's income. Water conservation and technology improvement is important for sustainability of the product. Strengthening the government institutions is also important in agriculture sector etc to protect the interest of the agriculture sector stake holders.

Objectives of study and research methodology

The main objectives of the study to explain the demand and supply requirement of food security in India. The sub objective of studies it to importance of food security programme and strategies for food security adopted by the Indian government. This study is purely on secondary source of information. The secondary information is collected form books, journals, government reports and websites etc.

Importance of Food security

The food security is an importance aspect of quality of life, the availability of food for the population is not only a biological requirement of the people, but also it is an essential requirement of social and Economic status. The availability of food grain is a prerequisite of development in the present democratic world. Most of countries include food security in their policy documents. They have a proper strategy to achieve their population's production and distribution target. The workforce, which includes both skill and unskilled workers, which are, involve not only in primary sector but also in secondary and tertiary sector. Which is a base of economic activities in all sectors required food grain for their daily calories requirement. The nutrient and enough food are required for producing goods and services in an Economy. The food security ensures the social justice for women, children, and other dependent segments of population.

Demand and supply for food security

Both agriculture and non-agriculture products are important to achieve the food security for a country. Agriculture is directly related to food grain production. The animal husbandry, Fishery, Gardening, Forestry, vegetable cultivation, Poetry products are also providing the complimentary food for population. There are seasonal classifications in Agriculture crops like, Rabi, Kharif and Jayad. The Rice, Wheat, cereals and Pulses are the main food grain crops. The production of these crops decides the total agriculture food grain production.

There are a lot of diversities in eating habit of people from North to south and East to west. A diversified food basket is required according to the regional climate and food patterns of people. The production of other substitute of food grain also affects to the available food production in many part of the India due to this diversity.

Minimum condition for food security

The per capita availability of food grain shows to the food security. The availability of food grain for the population is an essential condition, but not sufficient. There

are several variations according to state, class and time. The availability of enough Food Grain includes production, Stock, and import. It is a necessary condition but not sufficient condition for Food security. The other side of per capita food grain is population. There is various phase in population growth, Indian population is in third phase of demographic transition theory. Population expansion is a feature of the first three phases of the four phases of demographic transition. Population growth results from a decline in the death rate and an increase in longevity in the first phase. In the second phase, the birth rate decreases, but it does so more gradually than the mortality rate decreases, leading to population growth. In the third stage, fertility reaches a replacement level and death rates plateau. Despite this, the population is still growing due to the vast number of people who are fertile age. In the fourth phase, population growth stops and the population stabilises as a result of a decline in the birth rate to below replacement level and a decrease in the proportion of persons in the reproductive age group. The demographic transition's so-called "negative population growth phase" may occur in some societies even after they reach a stable population, according to experience in some developed nations. This phenomenon is known as the decline in fertility. There are significant variances in the rate of demographic transition and the amount of time needed to reach population stability among different countries in the world, which have started the demographic transition at different times.Several things are required to ensure food security; Poverty, Income inequality, Rural and Urban unemployment, High Population Growth rate, the large size of families and high dependency ratio, and Gender biases. Lake of infrastructure to minimise the regional imbalance, lack of government budget allocation for the public distribution system, Flood, Drought and another natural disasters etc. Poverty, starvation, Mall Nutrition, Deaths from hunger and social and economic crimes result from the lack of food security. These problems affect food security along with Production.

Strategy for Food Security-A mixed strategy of production, distribution and accessibility requires ensuring the country's food security level. To attain the food security level, a country is required enough food, grain and other items. Food grain production should go according to the population requirement; the per-person availability of food grain in India is less than the minimum requirement. There should be enough food grain stock for urgent needs; the total availability of food grain is a sum of domestic food grain production, Net import of food grain and stock of food grain.India imports a large number of agricultural products from time to time; after the World Trade Organization agreement, minimum access is required in the agriculture sector for the rest of the world. The capacity to Import at international prices is needed in case enough food grain production is not happening in the country. After assessing the output and requirement, the commerce department decides to import and export the food grain from abroad. A long-term policy is required to protect the domestic agriculture producer from international competition and dumping of products in India when the developed countries provide various subsidies to their producer. To decrease the regional variation in available food grain, the role of infrastructure is vital. The connectivity between the areas by road, rail and other transport mechanisms is required to increase the people's access to food grain. The stock of food grain production is significant in this regard. The stock and transportation can equequalisation availability in food grain. The food grain stock and transportation help to minimise the variation in the availability of food items among the region. The Storage of food by public and private holders is also required in every area to control price fluctuation at various points in time. Food Corporation of India has maintained its stock of food grain. The FCI purchase the crop at MSP from farmer in various states. The role of MSP is very much crucial in the production of food grains. The government is trying to increasing participation of private sector in storage of food grains to decrease the price fluctuations.

A Good public and private distribution system is required to provide the food grain for rich and poor. The public distribution system is trying to give food grain to the more impoverished people at reasonable prices. They provide Wheat and rice, and other essential items to the people according their regional food basket Enough purchasing power should be in the hand of people; if the people do not have enough purchasing power, then there should be a transfer payment by the government and other institutions is required. There are several programmes like; old age passion scheme who create purchasing power for marginalized section of population.

The government is employing to increase the purchasing power of the people. Various employment generation schemes run in rural and urban areas for the people. For Some vulnerable segments of the population, the government transfers payment and passions through their systems.The rural farm and nonfarm employment sectors absorb much of the population. A large part of the workforce plays various roles in economic activities to earn bread and butter for their families in rural farm and nonfarm sector. The employed part of the workforce is making his bread and butter through the market. The government employment generation programme also helps to create purchasing power for rural farm and nonfarm employment sectors absorbing a large part of the population. Due to lack of opportunity in rural areas, there is a migration of workforce from rural to urban areas. The government policy is focus to create employment in

nonfarm economic activity in rural area. The employment policy determines the purchasing power of the rural area worker. The informal and formal sectors in an urban area also employ each category. Stability in Prices in the Economy If there is price fluctuation, then it can affect the availability of food grains to the people. There are several departments related to food grain prices. The agriculture price policy declares by the agriculture department. Along with this, fiscal and monetary policies also play their role in controlling agricultural goods prices through various initiatives. Children and women in underdeveloped nations have been severely impacted by the fluctuating food prices. The sudden price rises particularly harm young children because any disturbance in their nutrition usually has serious long-term effects on their health and educational outcomes, which have an impact on them for the rest of their lives. Children and families with low incomes are particularly susceptible to crises shocks, and an unforeseen occurrence like an increase in food prices can significantly strain already stretched households. Even in terrible economic circumstances, inflation will be extremely expensive. Sharp increases in migration, social and political unrest, lost investment opportunities, and stifled economic progress are just a few of the repercussions that will be felt globally. According to existing assessments, depending on the causes of the price shift and the economy's structure, the effects of increasing food costs on poverty are expected to be quite variable. However, during the past 50 years, the tremendous advancements in agricultural science and food production have substantially contributed to feeding the world's expanding population.

According to paper "Agriculture Policy Vision 2020" explains several challenges in the Indian agriculture sector. Various challenges in the agriculture sector include population pressure, degradation in resources base, decrease in investment in the agriculture sector, globalisation of agriculture markets, rapid urbanisation etc. To face these challenges, a composite strategy of sustainability of resources, risk management, intensive agriculture, investment, and institutional changes. This paper discussed the required policy for growth, stability and diversification in agriculture production. The total food grain production was deficient at the time of independence. India was not self-sufficient in food grain production. The population growth rate was high then, So India had to give attention to increasing food grain production instead of crop diversification. In the present scenario, it requires focusing on these agricultural production aspects.

Conclusion: -In conclusion, India has prioritised eradicating poverty and lifting the poor since its early planning stages after gaining independence, which is only achievable if everyone has access to food security. In India, food security refers to three factors: accessibility, availability, and stability of the food supply. India's food system well manages the availability and stability of the food supply, but the third factor—accessibility—is not considered. Although availability is a requirement for food security, it is also vital that households have access to the available food grains. India's excess inventory with the Food Corporation of India and concurrently rising food inflation highlight the ineffectiveness of the country's grain management system. While many social programmes are well-designed, they are not being implemented. Furthermore, the implementation process needs more transparency. Therefore, it can be said that if the nation wants to achieve food security in a place like India, where a sizable portion of the population lives at or below the poverty line, a systematic and automatic control and regulating mechanism (for the procurement and release of food grains) is needed. This mechanism must also minimise the time lag and be more effective at preventing food inflation and its adverse effects on society.

****

References:

1. Bhatt, M. S. et al. (2004). *Poverty and Food Security in India Problem and Policies*, Delhi, Aakar Books.
2. Deatom, Angus & Dreze, J. (2009). Food and Nutrition in India: Facts and Interpretation, *Economic and Political Weekly, 44* (7), 42-64.
3. Patel, Manish Kumar, Vinod Sen & Kapil Dev Yadav, "Food Insecurity in India: An Urge for Right to Food", Vishwambhar Prasad Sati ed., '*Natural Resource Conservation and Food Security'*, New Delhi & Dehradun, M/s Bishem Singh Mahendra Pal Singh, pp. 171-181, 2012.
4. Planning Commission. (2005). "Performance Evaluation of the Public Distribution System". Programme Evaluation Organization, Planning Commission, Government of India.
5. S. Mahendra Dev and Alakh N. Sharma. (2010). Food Security in India: Performance, Challenges and Policies Oxfam India Working Paper Series, September 2010.
6. Solanki, Mukesh Kumar & Vinod Sen, "Agriculture, Foodgrain, Management and Food Security in India', published in the '*Journal of Madhya Pradesh Economic Association',* Vol. XXIII, No. 1, pp. 39-47, February 2012.
7. Solanki, Mukesh Kumar & Vinod Sen, "Food inflation: A threat to food security in India", published in '*GUJARISSH*' Ganpat University Journal of Applied Research in Social Sciences & Humanities, Vol.1, No.1, pp.12-20, July - December 2012.

Role of Technology in Cyber Crimes: An Assessment

Dr. Harishankar Rai
Supervisor
Department of law, Meerut College Meerut.

Amita
Research Scholar
Department of law, Meerut College Meerut.

Abstract-*Every subject of study and competence produces a corpus of information that separates professionals from amateurs. A common history of major events that have affected the field's evolution is one component of that body of knowledge. Newcomers to the area benefit from knowing the names of important persons and events in their field so that they can interpret references from more senior professionals and put fresh events and patterns into context. That is why researching the historical context is the first step in assessing any phenomena. Cybercrime is a modern-day problem that stems from our increasing reliance on computers. Communication technology may be used to perpetrate a wide range of criminal offenses. Cyber crimes are commonly classified into two types: first, new offences committed using new technologies, such as cyber crimes against computer systems and data, and second, old offences committed using new technology, such as utilizing a computer network to facilitate the commission of a cyber crime.*

1.1 Introduction

The Internet was considered to be a unique medium with the highest speed of dispersion in human history as early as the early 1990s. There are relatively few individuals today whose lives are unaffected by Internet-era technology, both positively and negatively. On the plus side, the capacity to instantly communicate and distribute knowledge has brought unparalleled benefits to education, trade, entertainment, and social contact. On the negative side, it has increased the opportunity for criminal activity. Information technology has allowed potential criminals to perform large-scale crimes for essentially little money and with a far lower danger of getting caught. In comparison to typical economic-motivated criminals (e.g., burglaries, larcenies, and bank robberies), internet criminals are relatively unconcerned about confronting law enforcement and witnesses. Technology has changed the way teens communicate and connect with their peers over the last decade, and their greater reliance on technology is widely documented.The history of cybercrime may be traced back to 1896, when Herman Hollerith built the first punch card tabulation machines for the United States of America's (USA) census bureau to use in sorting and analyzing data. But It was purchased by IBM in 1924. Dr. J. Presper Eckert and Dr. John Mauchly then built the first digital computer, the Electronic Numerical Integrator and Computer (ENIAC), in 1946, and then the Universal Automatic Computer (UNIVAC), the first commercially sold computer, in 1947. The United States government funds his creation, and it is handed to the United States Census Bureau in 1950.Before 1957, there was no way to interact with others throughout the world using new technologies. Following the Soviet Union's first artificial earth-orbiting satellite, sputnik, President Dwight Eisenhower of the United States of America authorized the founding of the Advanced Research Projects Agency (ARPA) in 1957. Due to the Cold War in the 1960s, the United States of America placed a greater emphasis on communication during wartime than other countries. As a result, Dr. J.C.R. Licklider was selected to administrate new technologies in 1962. He created the ARPA net, which is a network system. In 1969, the US Defense Department and APRA-Net partnered and installed the first communication node as a network installation at the University of California, Los Angeles. Other nodes were set up at Stanford Research Institute, University of Utah, and UC Santa Barbara; the first four computers connected to the internet were equipped with 50 KBPS lines, and UNIX was created at the time. Ray Tomlinson transmitted the first electronic mail message in 1971, and the University of Wisconsin created an Internet system or server in 1983.

The military is where the Internet got its start. In 1990, the internet was launched, replacing ARPA Net, and Tim Berners-Lee created the first browser, dubbed the World Wide Web. By 1995, the internet had become globalized thanks to the World Wide Web, including ideas such as Local Area Network (LAN), Network Neighborhood, and Data over Cable Service Interface Specific (DOCSIS). Wireless communication was first introduced in the twentieth century and developed in 2001 with the Wireless Application Protocol (WAP) and Wireless Markup Language (WML). The Extreme Tech website released a wireless network in April 2002. Hackers were primarily driven at the time to use low-cost, fast, and wireless communication devices for remote access connections, as well as mobile computer systems. Mobile Technologies took shape globally at the same time as the modern era of communication convergence and new multimedia technology.

1.2 HISTORY OF CYBER CRIMES-Cybercrime may be regarded to have a brief yet exciting history. There are several points of view on the presence of this new type of crime. Some argue that cybercrime has existed since the advent of the computer with the invention of the first abacus because individuals have utilized calculating devices for improper reasons. Actually, the

history of cybercrime began with hackers attempting to break into computer networks just for the excitement of gaining access to high-security networks or obtaining sensitive or guarded information or any secret for personal gain or retribution. The following is a quick overview of the history of cyber crime in the use of computers and computer networks:It's quite difficult to pinpoint when the first computer-related crime happened. Because information collecting and a mechanical cryptography system may be traced back over 5,000 years. Early computer crimes frequently entailed the hacking of long-distance telephone networks and the physical destruction of computer systems. A mechanism of information encryption and decryption existed around 1900 B.C., and it was employed by an Egyptian. In order to protect information security, Julius Caesar utilized a regular alphabet in official communications from 100 to 44 B.C. An attempt has been made to trace the origins of cybercrime dating back to the 1820s. The following is a brief history of cyber crime in the use of computers and computer networks:

In the phase of 1820's to 1970's- Sabotage and Direct Damage to Computer systems In the year 1820, the first internet crime was documented. That's hardly unexpected given that the abacus, which is regarded to be the first kind of computer, has been used in India, Japan, and China since 3500 B.C. The era of contemporary computers, on the other hand, began with Charles Babbage's analytical engine. The loom was invented by Joseph-Marie Jacquard, a French textile producer, in 1820. This technology allowed a succession of processes in the weaving of specific textiles to be repeated. Employees at Jacquard were concerned that their conventional jobs and livelihoods might be jeopardized as a result of this. They used sabotage to prevent Jacquard from using the new technology in the future. This is the first known instance of cybercrime in history. Early computer crimes entailed physical damage to computer systems as well as the manipulation of long-distance telephone networks.The history of hacking may be traced back to the 1870s, when teenagers used spanking new telephones for telephone phreaking. It is thought that as computer technology advances, computer-related problems will grow with negative consequences in the form of computer crime or cyber crime, such as cyber theft, unlawful access to computers, systems, and devices, for the first time in history. Following this, there was an urgent need for a new technology that would aid in the maintenance of computer data and system databases.In the early 1960s, cyber criminals who were involved in telephone phreakers became hackers because they had an added curiosity about computers, computer systems, and their application for their own objectives. They went about their task with a keen interest in learning about the system's computer code changes.

However, these crimes were performed in the early stages of this new technology by technological specialists who directly attacked the computer, computer system, or computer network.When police were brought in to put a stop to a student takeover of multiple levels of the Hall Building in February 1969, the greatest student riot in Canada erupted. Students were protesting a professor accused of racism, and when the cops arrived, a fire broke out, destroying computer data and academic equipment. The overall cost of the damage was $2 million, and 97 persons were jailed.

In the phase of 1970's to1980's- Direct Damage to Computer centres

The hostile linkage with the intent of hacking became apparent in 1970, and the early computerized phone systems were the target at the time. They were linked to the intention of causing direct harm to computer centers. At the same time, the German state of Hesse passed the world's first computer-specific law, the Data Protection Act of 1970, which included new cyber technologies. As technology progressed, so did its misuse, necessitating the creation of rigorous statutory rules to regulate illegal actions in the cyber realm.By 1970, the cyber world and network had been accessible to people all around the world. Another online crime, cyber pornography, had expanded and become a legal problem globally by that time. The year 1970 marks the beginning of John Draper's telephone tampering. He served in the United States Air Force and worked at National Semiconductor as an engineering technician. He used the moniker cap'n crunch. In Vietnam in 1971, he discovered that the cap'n crunch cereal box whistle can generate a tone of 2,600 megahertz; phreakers could make free calls at the time by blowing the whistle into a telephone receiver. The accused John Draper used to make free long distance calls into a phone by blowing a specific tone. That particular tone was used to tell the phone system to open or connect a line. The majority of youngsters were enticed by publications and technical assistance programs at the time since they involved the process of tampering with telephones.The Inter Networking Working Group is established in 1972 to oversee Internet standards. In 1973, a teller at New York's Dime Savings Bank embezzles almost $2 million using a computer. Whitfield Diffie and Martin Hellman proposed public key cryptography in 1976 as a way to adopt security standard software to prevent and regulate computer misuse. Ronald L. Rivest, Leonard M. Adleman, and Adi Shamir released new software for public key cryptography and digital signature in 1977 in the United States. Even the notion of personal computers (PCs) was unknown to them until the late 1980s. As a result, programmers and hackers were associated with computer centers and cyber cafés in Russia at the time. They used to collaborate closely to create brand names such as IBM, DEC, operating systems, and software packaging. Hackers began to use

program code. In the late 1960s and 1970s, the Russian government used such programmes for security reasons.The Data Protection Act of 1984, the Access to Personal Files Act 1987, the Copyright (Computer Software) Amendment Act 1985, the Interception of Communications Act 1985, the Local Government (Access to Information) Act 1985, and the Electronic Communication Act 2000 were all enacted in the United Kingdom. Forgery, criminal damage, and purposeful activities for intercepting a communication in the course of its transaction by means of a public telecommunications system are all prohibited under the Interception of Communication Act, 1985, which was approved by the United Kingdom Parliament.

"A hacker is said to be synonymous with a computer criminal who giants unauthorized access to distant archives and databases in order to steal secret data, especially money from bank accounts and credit cards," wrote Komsomolskaya Pravda in December 1987 in the USSR. "Hackers are smart at mathematics and information technologies, they are mostly outside politics, but being computer hooligans they might be vulnerable to abuse by this or that political group."In the year 1988, Osama Bin Laden founded Al-Qaida to extend his Qaida-al-Jihad movement and non-military operations around the world. This Al-Qaida grew from Osama Bin Laden's Maktab-al-Khadamat (MAK), which he founded in the 1980s to boost financial assistance and training for recruits. It became considerably divided in 1989. Sudan's National Islamic Front welcomed the MAK to Saudi Arabia in 1991 to relocate significant export businesses, farms, and training centers for guns and explosives usage. Al-Qaida attempted to assassinate Egyptian President Hosni Mubarak in Ethiopia in 1994, and they were expelled from Sudan the same year. In 1998, however, Osama Bin Laden and Ayman-al-Zawahiri of the Egyptian Islamic Jihad collaborated to combat America. They formally joined in 1999, and Al-Zawahiri became Osama Bin Laden's right-hand man. Following that, they began working together to create their network with the goal of committing cyber attacks utilizing modern information technology.

In the Phase of 1990's- Computer Fraud and Unauthorized Access to Computer System

In 1990, the Electronic Frontier Foundation was founded. In the year 1992, Dark Avenger unleashed the first polymorphic virus, which was dubbed "first in history." From 1990 through 1998, the United Kingdom issued working papers on data protection, computer hacking, fraud, and other related offences. In the late 1990s, hackers hacked into and vandalized the websites of the US Department of Justice, the US Air Force, and NASA. Meanwhile, the United Kingdom approved the Computer Misuse Act in August 1990, although the Telecommunication Act of 1984, which outlaws the misuse of the public telecommunications network, had a far broader reach before that. This Act was updated in 1994 and modified in late 1996 by the United Kingdom Parliament. After revision and amendment, the Act now prohibits unlawful access for the purpose of espionage, unauthorized access to non-public government computers, computer fraud, computer damage, password trafficking, and threats to destroy a computer, among other things.As a result of the aforementioned case, the House of Lords appointed the Law Commission in 1988 to provide recommendations and ideas for legislation to prevent and govern hacking. They delivered their report in 1989, recommending that the United Kingdom create a particular legislation against computer misuse. On the recommendations and ideas of the Statute Crime, the United Kingdom adopted a particular law on Computer Misuse to govern and deter the commission of cyber terrorism after the R. v. Gold case. Because the defendant acquired unauthorized access to the network in this instance in order to expose the security system's flaws. Customer Identification Numbers (CIN) and passwords were stolen. The House of Lords confirmed the Appellate Court's decision, which invalidated their conviction. The appellate court stated that the accused's act of fooling a computer and deceiving a machine that is not feasible did not fall under this sort of criminal offense, but they might be punished for deceiving a computer and deceiving a machine that is not possible.Janet Reno, the US Attorney General, stated in December 1997 that criminals are no longer constrained by national borders. To stay up with cybercrime, we need to collaborate like never before. The Justice Ministers of the G-8 countries met at the headquarters of the Federal Bureau of Investigation, and the news of their partnership was revealed. I Assign a suitable number of law enforcement professionals who are adequately educated and equipped to investigate high-tech offenses. (ii) Improve methods for tracking computer network assaults. (iii) If extradition is not practicable, offenders should be prosecuted in the nation where they are discovered. (iv) save important evidence on computer networks. (v) Examine each country's legal codes to verify that relevant computer-related crimes are defined and that the terminology makes it simpler to create innovative tools to identify and prevent computer crimes.In the case of United States v. Czubinski, Richard Czubinski was a taxpayer services division employee of the Internet Service Revenue (IRS) in Boston. He was required to examine the information on the IRS's computer systems on a regular basis in order to accomplish his tasks. He possessed a valid password for this work and was permitted to utilize it to complete his tasks. However, he also utilized it for certain improper IRS file searches and willfully disobeyed IRS guidelines. The 'item gained' may not just be the unlawful use, according to Section 1030(a) (4), which requires more than just unauthorized use. The absence in this situation is the demonstration of some extra aim for which unlawful

access is a means. The evidence did not suggest that his goal was anything more than to satisfy his curiosity by looking up information on friends, acquaintances, and political opponents. The plaintiff has shown no proof that he printed, recorded, or utilised the material he accessed. No reasonable jury could establish beyond a reasonable doubt that Czubinski meant to use or divulge such information, and seeing information is not the same as receiving something of value under this statute. As a result, the defendant's conviction is overturned in the end.

The accused in Davis v. Gracey sold the indecent CD-ROMs to an undercover cop. Following this, a search warrant was granted for his firm, and police officers discovered that pornographic CD-ROM files could be accessed via the bulletin board, and they confiscated the computer equipment used to run it. Davis, his connected businesses, and numerous users of email on his bulletin board filed suit against the police who conducted the search, arguing that the seizure of the computer equipment, email, and software kept on the system violated constitutional and statutory prohibitions. The Circuit Court upheld the initial warrant, ruling that the accidental temporary seizure of bulletin board email user files did not invalidate the seizure of the computer on which they were housed.

In September of 1999, Dig Dirt Inc. filed a complaint alleging that an employee of Washington, D.C.-based Steptoe & Johnson LLP broke into their system using a password and an internet account. The computer hacker had previously attempted to hack their system over 750 times. The hackers also attempted to spread important information through numerous internet forums. In the case of Amazon and Alibris, an online bookstore and internet service provider was fined $250,000 in November 1999 for intercepting electronic mail received by Amazon.com and another net book reseller, Alibris. The hackers reportedly downloaded the company's client lists. Alibri was an internet service provider in Greenfield and Massachusetts under the name 'valinet,' with Interloc, Inc. providing electronic mail service to book sellers. Between January and June 1998, he reportedly intercepted electronic mail messages from amazon.com to Alibris bookseller. By that point, the accused had unlawfully copied thousands of electronic mail messages and had unauthorized access to Amazon. com's confidential password and customer lists, which was also one of its rivals and internet service providers. However, in the end, Alibris cooperated with law enforcement officials and agreed to pay the fee.

The first case in India was Yahoo, Inc v. Akash Arora, in which an Indian court handed down a decision on domain names. Yahoo Inc. filed a lawsuit against the defendants, seeking a permanent injunction prohibiting them and their partners, servants, and agents from conducting any business on the internet using the domain name 'Yahooindia.com' or any other domain name that is identical to the plaintiff's trademark 'Yahoo!' During the course of the lawsuit, the plaintiff filed an application for a temporary restraining order against the defendants. In this case, the Court issued an ad interim injunction prohibiting the defendants from engaging in any online business using the trademark/ domain name "Yahooindia.com" or any other trademark/ domain name that is equivalent to the plaintiff's trademark "Yahoo!"

1.3 Conclusion-Today, it is discovered that thanks to the technology of the Internet era, very few people's lives are unaffected, whether positively or negatively. There are both positive and bad aspects to this technology. On the positive side, it has been discovered that there has been a tremendous increase in the ability to share and exchange information instantly, which has led to unprecedented benefits in the areas of education, commerce, entertainment, and social interaction. On the negative side, it has been discovered that there has been an increase in opportunities for the commission of crimes because this latest technology has encouraged potential criminals to commit crimes through computer, computer s, and computer s.

When comparing the perpetrators of cyber crimes with those of traditional economic-motivated crimes such as burglaries, larcenies, bank robberies, and so on, it is discovered that online crimes are generally free of the fear of immediately confronting law enforcement and witnesses. Because, during the last decade, technology has changed the way teens communicate and connect with others, including their peers, younger siblings, and parents.

****

Bibliography

1. Shun Young Kevin Wang and Wilson Haung, "The Evolutional View of the Types of Identity Thefts and Online Frauds in the Era of the Internet", *Internet Journal of Criminology (online),* 2011, p. 2, *available at:* http://media.wix.com/ugd/b93dd4_83ceccb58ea64dcd8bd7 a6aa67f082 fe. pdf (visited on March 9, 2017).
2. 2. Kathy Martinez Prather and Donna M. Vandiver, "Sexting among Teenagers in the United States: A Retrospective analysis of Identifying Motivating Factors, Potential Targets and the Role of a capable Guardian", *International Journal of Cyber Criminology*, vol.8, No.1, January-June, 2014, p. 21, *available at:* http://www.cybercrimejournal.com/pratherVandiverijcc2014vol8issue1.pdf (visited on March 9, 2017).
3. 3. M.Dasgupta, *Cyber Crime in India- A Comparative Study*, 2009, pp. 27-28.
4. 4. United Nations Manual on the Prevention and Control of Computer Related Crime, 1994, p. 5, *available at:* http://216.55.97.163/wp-content/themes/bcb/bdf/int_regulations/un/CompCrims_UN_Guide.pdf, (visited on March 15, 2017).
5. 5. Harpreet Singh Dalla and Geeta, "Cyber Crime- A Threat to Persons, Property, Government and societies", *International Journal of Advanced Research in Computer Science and Software Engineering* , vol.3, No. 5, May, 2013, p. 997, *available at:* http://www.ijarcsse.com/docs/ papers/Volume_3/5_May2013/V3I5-0374.pdf (visited on March 9, 2017).
6. 6. "A Brief History of Cyber Crime", *available at:* https://www.floridatechonline.com/blog/ information-technology/a-brief-history-of-cyber-crime/ (visited on March 10, 2017).
7. 7. D. Thomas and B.D. Loader, *Cyber Crimes, Law Enforcement, Security and Surveillance in the Information Age,* 1995, p. 59.
8. 8. W. Boni and G.L.Kovacich, *Net Spoinage the Global Threat to Information*, 2000, p. 24.
9. 9. Statement for the Record of Louis J. Frech, Director FBI, on Cyber Crime, before Senate Committee on Judiciary, (March 28, 2000).
10. 10. United States Department of Justice, (Nov. 22, 1999).

Impact of New Economic Ploicy on Food Processing Industry : A Critical Assessment

Dr. Dushyant Kumar
Prof., Department of Economics
Amar Singh(P.G.) College Lakhaoti, Bulandshahr.

Ms.Anchal Yadav
Research Scholar
Department of Economics, Amar Singh(P.G.)
College Lakhaoti, Bulandshahr

ABSTRACT-*Days have gone for poor performers in agricultural sector, day by day innovative ideas are being sown in food processing industry to enhance farmers income as well as contribution to India's GDP.Uttar Pradesh is first in the India for food grains, sugarcane, potato, milk production and meat output and second for rice, a variety of vegetables and fruits and third for pulses, oil seeds, maize. Despite farmers are not receiving remunerative rates for their output. Large scale food production, food inflation, food security in UP are other major challenges. These concerns worry policymakers because they impact residents' basic necessities. The value of wastage of raw food materials in the state, on the other hand, is extremely high.*

Key Words: *Efficient arrangement,* Technology Upgradation*, Infrastructural as well as Structural Changes.*

1.1 INTRODUCTION-The processing level in the country is quite low, and the waste of raw food resources is very high, as shown in table, and both of these facts are also true in Uttar Pradesh. Furthermore, Uttar Pradesh is the top state in terms of agriculture and allied sector production in the country, as well as the greatest contributor to agriculture and allied sector GDP. In 2018-19, Uttar Pradesh's agriculture and allied sector contributed 12.8 per cent to the state's GDP (agriculture and allied sector), while Maharashtra, Gujarat, Madhya Pradesh, Andhra Pradesh, and Tamil Nadu contributed 9 per cent, 8.2 per cent, 7.6 per cent, 6.8 per cent, and 5.3 per cent, respectively. Uttar Pradesh is at the forefront in the production of the total food grains (20%), sugar cane (36%), potato (34%), live stock excluding cow (11%) and milk (17%), wheat (33%), lentil (45%), vegetables (30%) in the country. This study focuses on the untapped potential and highlighted the scope for the agro based agro-processing and agri-business in Uttar Pradesh. Efficient arrangement with favorable policy support and incentives, by taking into account the strengths, weaknesses, opportunities and threats of decisive components like human and land resources, crops, livestock and agro-processing activities would lead to plan the state of Uttar Pradesh as one of the major players in the field of agro-processing as well as agri-business sector of India. The diversified commodity mix in crop sector, livestock compositions, large geographical coverage, variety of soils and diverse agro climatic conditions, abundant availability of labour force, varied availability of agricultural raw materials in state offers excellent prospects for the development of high value agro-based industries and promotion of agri-business.Uttar Pradesh, the land where holy Ganga flows is the second-largest economy in India after Maharashtra, with an NSDP of ₹14.46 lakh crore (US$230 billion) and hence contributes 8.406% of GDP India. The GSDP of the state's registered food processing sector was 7957.45 crore in 2018-19, up 157.76 per cent from the GSDP of the state's registered food processing industry of 3087.14 crore in 2004-05. Furthermore, in 2014-15, GSDP FPI contributed 15.00 per cent to GSDP manufacturing, 3.07 per cent to GSDP agricultural and allied sectors, 0.81 per cent to Uttar Pradesh's total GSDP, and 8.68 per cent to the country's GDP FPI.

1.2 **GROWTH RATE/PATH OF GSDP OF FOOD PROCESSING INDUSTRY (GSDP-FPI)-**The development paths of Uttar Pradesh's GSDP of food processing industry (GSDP FPI) and India's GDP of food processing industry are both very irregular, but the state's GSDP FPI growth route is more irregular than India's GDP FPI growth path. The fundamental reason for this is because, with the exception of Uttar Pradesh, the food processing industry has grown in most states. As shown in Table, Uttar Pradesh ranks third in terms of GSDP-FPI, fifth in terms of total registered food processing units, and seventh in terms of total workers employed in this industry. According to India's Ministry of Food Processing Industry, 41 mega food parks are operational, completed, or under construction across the country, yet there isn't a single huge food park in Uttar Pradesh. The growth rate/path of the GSDP FPI in Uttar Pradesh, as well as in the context of India, is depicted between 2008-09 and 2018-19, the average growth rate of Uttar Pradesh's GSDP FPI was 14.31 per cent, which was lower than the country's average growth rate of GDP FPI (15.96 per cent). In 2014-15, the state's GSDP FPI grew at a pace of 77.8%, whereas in 2011-12, it grew at a rate of -43 per cent. The main reason is likely the state's underdeveloped infrastructure for preservation and processing industries, as well as a lack of facilities for a proper supply channel to the market.

As a part of the Committed / Spill over liabilities of 11th Plan period during the 12th Plan period also, Ministry of Food Processing Industries has been releasing grant-in-aid to eligible entrepreneurs under the Scheme for Technology Upgradation/ Establishment/ Modernization of Food Processing Industries. As per an assessment of the extent of food processing in various food sub-sectors done in 2014 by the Institute of Economic Growth on behalf of Ministry of

Agriculture, the average extent of processing of agro-products in 2010-11 was 6.76%. It implies that huge scope available for setting up food processing industries by the interested and eligible entrepreneurs of food processing sector in the country. The Schemes implemented by the Ministry Food Processing Industries have also contributed to the setting up of food processing units in the country. The Mission for Integrated Development of Horticulture (MIDH) is being implemented in the States and Union Territories. Under this, the fruits and vegetables are being promoted as an area expansion and under protected cultivation also as a cluster approach to fulfil the requirement of raw material for processing units and also to fulfil the market demand. The cultivation of fruits and vegetables are promoted on the basis of agro-climatic conditions and market demand also.

1.3 OBJECTIVES

1. The Impact of globalisation has favorable for Food processing industry of Uttar Pradesh.
2. The cost benefit analyses has been favourable for Food processing industry in Uttar Pradesh.

1.4 RESEARCH METHODOLOGY

This paper focuses on the current study's data and methodology. The study's title is "Food Processing Industry and Job Creation in Uttar Pradesh." The technique is developed based on the study's title, aims, and hypothesis, as well as the availability of data.From 2004-05 to 2018-19, the study employed two types of data: time series data and panel data from the Annual Survey of Industries (ASI) issued by the Central Statistical Organization (CSO), Ministry of Statistics and Programme Implements (MOSPI), India.The ASI offers two different data formats: time series unit level data and punitive data, both of which are unit level. ASI provides block-wise data at the unit level.The factory codes are highly useful for constructing the ownership of factory by organization. Each block contains numerous units with factory codes. The ASI framework is divided into two parts: a census sector and a sample sector. All factories employing 50 or more workers and using electricity, as well as factories employing 100 or more workers and not using electricity, are included in the census sector.The current study employed panel data to look at the long-term link between employment and output in Uttar Pradesh's food processing industry. The panel Johansen- Fisher Co-integration test is used for this purpose. The variables must be stationary in order to use the cointegration test as a pre-request condition. To put it another way, variables must be in the same sequence, i.e. (0).Many panel unit root tests have recently been established by different researchers such as Maddala and Wu (1999), Hadri (2000), Levin et al. (2002), Im, Pesaran, and Shin (2003). To check for the presence of the unit root in panel series data, we employed the LLC and PP- Fisher Chi2 panel unit root tests.

1.5.NUMBER OF REGISTERED FOOD PROCESSING INDUSTRY UNITS IN UTTAR PRADESH

TABLE-1.1

Number of Registered Food Processing Industry (Number & In Operation) in Uttar Pradesh

Years	Registered Food Processing Factories		Factories in Operation (no.)
	Units	Percentage of Total Registered All Industries	
2004-05	1717	17.91	NA
2005-06	1763	16.67	NA
2006-07	1624	15.71	NA
2007-08	1700	15.89	NA
2008-09	1708	14.91	1621
2009-10	2091	14.98	1501
2010-11	2095	15.18	1693
2011-12	2075	14.89	1708
2012-13	2127	14.63	1755
2013-14	2090	14.36	1785
2014-15	2118	14.16	1744
2015-16	2127	13.38	1751
2016-17	2091	13.61	1742
2017-18	2117	13.29	1782

Source: Annual surveys of Industries, India (2004-05 to 2018-19)

During 2018-19, there were 2117 registered food processing industries, up from 1707 in 2004-05. Between 2004-05 and 2017-18, the total number of registered food processing units accounted for about 14% of the state's total industrial units. In 2018-19, 1782 of the total 2117 food processing industries were operational. The table shows the number of registered food processing units and the number of units in operation in Uttar Pradesh.

TABLE -1.2

Percentage Share of Different Variable Uttar Pradesh Food Processing Industry in All Industry

Years	Fixed Capital	Invested Capital	No. of Employees	Fuel Expenditure	Total Emolument (Salary & wages etc.)
2004 -05	15.17	27.16	24.93	12.94	19.58
2005 -06	15.57	27.98	23.82	12.38	18.37
2006 -07	16.03	28.55	22.81	11.93	17.52
2007 -08	16.52	28.96	21.9	11.55	16.89
2008 -09	16.84	29.23	21.05	11.23	16.41
2009 -10	18.27	28.67	20.41	11.89	16.26
2010 -11	18.41	28.22	19.82	12.4	16.15
2011 -12	19.52	27.89	19.28	12.79	16.07
2012 -13	20.48	27.62	18.79	13.11	16.00
2013 -14	22.76	27.96	18.31	14.21	14.93
2014 -15	23.45	28.25	17.89	15.2	14.22
2015 -16	24.06	28.51	17.51	16.09	13.72
2016 -17	23.29	28.75	17.17	16.9	13.36
2017 -18	23.70	27.83	26.00	16.58	14.67

Source: Annual surveys of Industries, Uttar Pradesh (2004-05 to 2017-18)

From the above table Percentage Share of Uttar Pradesh Food Processing Industry in All Industry has been measured from 2004-05 to 2017-2018. Where Fixed Capital, Invested Capital, No. of Employees, Fuel Expenditure and Total Emolument has been analysed. In each variable the value of items has been fluctuated in the assumed years.

During 2004-05 Fixed Capital was 15.17 percent, 27.16 was Invested Capital, No. of Employees was 24.93 percent Fuel Expenditure value was 12.94percent while registered Total Emolument (Salary & wages etc.) was 19.58 percent. In the year 2005-06 Fixed Capital was 15.57 percent, 27.98 was Invested Capital, No. of Employees was 23.82 percent, Fuel Expenditure value was 12.38 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 18.37percent.During 2006-07 Fixed Capital was 16.03 percent, 28.55 was Invested Capital, No. of Employees was 22.81 percent Fuel Expenditure value was 11.93 percent while, Total Emolument (Salary & wages etc.) was 17.52 percent. Again during 2007-08 Fixed Capital was 16.52 percent, 28.96 was Invested Capital, No. of Employees was 21.90 percent Fuel Expenditure value was 11.55 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 16.89 percent.

This was again found during 2008-09 Fixed Capital was 16.84 percent, 29.23 was Invested Capital, No. of Employees was 21.05 percent Fuel Expenditure value was 11.23 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 16.41percent. In the year 2009-10 Fixed Capital was 18.27 percent, 28.67 was Invested Capital, No. of Employees was 20.41 percent Fuel Expenditure value was 11.89 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 16.26 percent.During 2010-11 Fixed Capital was 18.41 percent, 28.22 was Invested Capital, No. of Employees was 19.82 percent Fuel Expenditure value was 12.40 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 16.15 percent. In the analysis during 2011-12 Fixed Capital was 19.52 percent, 27.89 was Invested Capital, No. of Employees was 19.28 percent Fuel Expenditure value was 12.79 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 16.07 percent.

This was an assessment during 2012-13 Fixed Capital was 20.48 percent, 27.62 was Invested Capital, No. of Employees was 18.79 percent Fuel Expenditure value was 13.11 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 16.00 percent. During 2013-14 Fixed Capital was 22.76 percent, 27.96 was Invested Capital, No. of Employees was 18.31 percent Fuel Expenditure value was 14.21 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 14.93 percent.Again it was studied during 2014-15 Fixed Capital was 23.45 percent, 28.25 was Invested Capital, No. of Employees was 17.89 percent Fuel Expenditure value was 15.20 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 14.22 percent. During 2015-16 Fixed Capital was 24.06 percent, 28.51 was Invested Capital, No. of Employees was 17.51 percent Fuel Expenditure value was 16.09 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 13.72 percent.In the present study during 2016-17 Fixed Capital was 23.29 percent, 28.75 was Invested Capital, No. of Employees was 17.17 percent Fuel Expenditure value was 16.90 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 13.36 percent. In the last year 2017-18 Fixed Capital was 23.70 percent, 27.83 was Invested Capital, No. of Employees was 26.00 percent Fuel Expenditure value was 16.58 percent while Total Emolument (Salary & wages etc.) was 14.67 percent.

TABLE -1.3

Compound Annual Growth Rate of Different Variable Uttar Pradesh Food Processing Industry

During Period	Consumed Material	Total Output	Gross value added	Net added value	Registered Industry	Total Input
2004-05 to 2010-11	16.70	16.61	8.65	6.32	1.43	17.76
2011-12 to 2017-18	9.95	11.06	17.41	20.06	0.16	10.30
2004-05 to 2017-18	16.57	16.71	13.41	14.07	1.83	17.12

During period 2004-05 to 2010-11 CAGR of Uttar Pradesh food processing industry was: in case of Consumed material was 16.70 percent, 16.61 percent was total output, gross added value was 8.65 percent, having with 6.32 net added value. In the same period registered industry was 1.43 percent while total input was 17.76 percent.Again when CAGR was calculated during period 2011-12 to 2017-18 CAGR of Uttar Pradesh food processing industry was: in case of Consumed material was 9.95 percent, 11.06 percent was total output, gross added value was 17.41 percent, having with 20.06 net added value. In the same period registered industry was 0.16 percent while total input was 10.30 percent. In the study during period 2004-05 to 2017-18CAGR of Uttar Pradesh food processing industry was: in case of Consumed material was 16.57 percent, 16.71 per cent was total output, gross added value was 13.41 percent, having with 14.07net added value. In the same period registered industry was 0.83 percent while total input was 17.12 percent.

TABLE -1.4

Compound Annual Growth Rate of Different Variable Uttar Pradesh Food Processing Industry

During Period	**Fixed Capital**	**Invested Capital**	**No. of Employees**	**Fuel Expenditure**	**Total Employment (Salary & wages etc.)**	**Worker**
2004 -05 to 20010 -11	12.12	17.49	.70	9.85	12.61	0.17
2011 -12 to 2017 -18	9.78	7.10	4.43	11.96	13.17	4.81
2004 -05 to 2017 -18	11.58	12.23	2.17	12.71	13.12	1.85

During 2004-05 to 2010-11 CAGR of Uttar Pradesh Food Processing Industry was in case of Fixed Capital was 12.12 percent, 17.49 percent was Invested Capital, No. of Employees was 0.70 percent, having with 9.85 net Fuel Expenditure. In the same period Total Emolument (Salary & wages etc.) was 12.61 percent while Worker was 0.17 percent. During period 2011 -12 to 2017 -18 CAGR of Uttar Pradesh Food Processing Industry was: in case of Fixed Capital was 9.78 percent, 7.10 percent was Invested Capital, No. of Employees was 4.43 percent, having with 11.96 net Fuel Expenditure. In the same period Total Emolument (Salary & wages etc.) was 13.17 percent while Worker was 4.81 percent.

In the study period 2004 -05 to 2017-18 CAGR of Uttar Pradesh Food Processing Industry was in case of Fixed Capital was 11.58 percent, 12.23 percent was Invested Capital, No. of Employees was 2.17 percent, having with 12.71 net Fuel Expenditure. In the same period Total Emolument (Salary & wages etc.) was 13.12 percent while Worker was 1.85 percent.

TABLE -1.5

Compound Annual Growth Rate of Different Variable Uttar Pradesh All Industry

During Period	Consumed Material	Total Output	Gross value added	Net added value	Registered Industry	Total Input
2004 -05 to 2010 -11	19.12	18.23	14.71	15.05	4.12	19.04
2011 -12 to 2017 -18	6.83	9.16	13.01	13.69	2.04	8.35
2004 -05 to 2017 -18	13.85	14.65	14.01	14.64	3.70	14.79

It was also observed period 2004-05 to 2010-11 CAGR of Uttar Pradesh all industry was in case of Consumed material was 19.12 percent, 18.23 per cent was total output, gross added value was 14.71 percent , having with 15.05 net added value. In the same period registered industry was 4.12 percent while total input was 19.04 percent.

In the same period 2011-12 to 2017-18 CAGR of Uttar Pradesh food processing industry was in case of Consumed material was 6.83 percent, 9.16 per cent was total output, gross added value was 13.01 percent, having with 13.69 net added value. In the same period registered industry was 2.04 percent while total input was 8.35 percent.

1.6 CONCLUSIONS-During study it was also observed in case of gross output per person employees was 1730.11 during the year 2004-05. It has been rapidly increased and has been beneficiary for the industry. It was 4122.61 during 2017-18, it has increased by four times of the selected period of the study. Again has been also a positive sign for net value added per person employees (NVA/NE) in the same period. In case of salaries and wages / no worker (NW) employees, as soon as salary increases, it kicks of unskilled manpower, during 2004-05 NW was 84.65 which increased by 308.24 in the year 2016-17 but it again fall by 230.82 in 2017-18. Again it was also observed during 2004-05 GVA/FC value was 0.37. Again it began to fall from 2005-06 it was 0.39. It has been increased by 2016-17 having with 0.83. But it was slightly high in 2017-18 which was 0.66. it fluctuates due to inflation, role of banking industry as well as political environment. If it increases in leaps and bounce, not be beneficiary sign for the industry. During 2014 -15 to 2017 -18. CAGR of Uttar Pradesh food processing industry was: in case of Consumed material was 13.85 per cent, 14.65 per cent was total output, gross added value was 14.01per cent , having with 14.64 net added value. In the same period registered industry was 3.70 per cent while total input was 14.79 per cent.It was also examined during 2004 -05 to 2009 -10 CAGR of Uttar Pradesh All Industry was in case of Fixed Capital was 8.49 per cent, 16.10 per cent was Invested Capital, No. of Employees was 4.64 per cent, having with 10.91 net Fuel Expenditure. In the same period Total Emolument (Salary & wages etc.) was 16.23 percent while Worker was 4.49 percent.

****

1. Anita Kumari (2020), "Productivity Growth in Indian Engineering Industries during Pre Reform and Post Reform Period: An Analysis at Company Level." Conference Papers No. 1748, 2004-05.
2. Babool, A., & Reed, M. R. (2020), Food safety standards and export competitiveness in the Food and Processed Food Industries in Asia-Pacific countries
3. Babu, G. S., & Sekhar, M. R. (2020), Impact of Foreign Direct Investment (FDI) In Indian Food Processing Sector. Journal of Business and Management (IOSR- JBM) e-ISSN: 2278-487X, p-ISSN: 2319-7668. Volume 17, Issue 1.Ver. I, PP 06-12
4. Bain, J.S. (2019), Industrialisation difference in Industrial Countries: Eight Nations in 1950's, (New Delhi : Yale University Press).
5. Baliyan, S. K., Kumar, S., &Baliyan, K. (2019)., "Efficiency and Productivity Growth of Food Processing Industry in India: A Malmquist Index Approach". Journal of Economic & Social Development, 11(1).
6. Bauer, P. W. (2019), "Recent Developments in the Econometric Estimation of Frontiers", Journal of Econometrics, 46, 39-56.
7. Chambers, R. (2017), ―The Origins and Practice of Participatory Rural Appraisall‖, World Development, Volume 22, Issue 7, pp. 953-969.
8. Charles Mather (2017), "The growth Challenges of Small and Medium Enterprises (SME's) in South Africa's Food Processing Complex," Development Southern Africa, 22(5), Pp.607-620.
9. Coelli, T. (2016), "A guide to DEAP version 2.1: A data envelopment analysis (Computer) program (CEPA Working Paper 96/08)". University of New England, Australia: Centre for Efficiency and Productivity Analysis, Department of Econometrics.
10. D. LavanyaKumari, .K. SanthaKumari (2015), Food Processing Industry in India and Foreign Direct Investment International Journal of Scientific Research, Vol 4.
11. Dev, S. M., &Rao, N. C. (2015). Food processing in Andhra Pradesh: Opportunities and challenges. Centre for Economic and Social Studies.
12. Fernandez, C., G. Koop and M Steel, "A Bayesian Analysis of Multiple-Output Production Frontiers," Journal of Econometrics, 2014, pp. 47-79
13. Gervais, Jean, Phillippe, Bonroy, Oliver and Coutre, Steve, (2013), "Economies of Scale in the Canadian Food Processing Industry", MPRA Working Paper No.64.
14. Gourieroux, C. and A. Monfort, "Simulation Based Econometrics", Oxford University Press, New York, 2013.

Some Somatometric Profile Among The Kom Tribe of Manipur

Dr. L. Romeo Singh
Asst. prof.
Dept. of Anthropology, Moreh College,Moreh

Ksh. Sunita Devi
Asst. prof.
Dept. of Anthropology,, Thambal Marik College, Oinam

1.1 INTRODUCTION-The Kom tribe is one of the 33 Scheduled Tribes of Manipur. Their habitations are found in both the hills and plains of the state. Hunting of wild animals is convenient in the foothills and cropping is also possible to vast lands. At the time of study during the year 2000-01, the Kom are distributed in 59 villages in the 4 districts of Manipur viz, i) 7 villages in the Chandel sub-division of Chandel district, ii) 29 villages at the Churachandpur sub-division of Churachandpur district, iii) 1 village at Imphal East district and 22 villages in the Sadar Hills both the East and West sub-division of Senapati district.

1.2 MATERIAL AND METHODS-The present report has attempted to study the parameters of somatometric measurements from among the Kom –Scheduled Tribe of Manipur. For the study 18 somatometric measurements under consideration have been analysed from 134 males and 131 female samples following standard and prescribed techniques and have been made for frequency distribution in different class ranges whenever necessary. For the sack of convenience and limitations five anthropometric measurements have been taken into considered among the females. Analyses have also been made to give the measurements and indices and the observations, as far as possible, to conventional categories following the standard classifications (Martin – 1928, Labzelter–1920, Saller-1931, Martin & Saller-1957, Giuffrida-Ruggeri-1904 and, Monouvrier-1900).The measurements have been regrouped under head measurements (MHL, MHB, HCH), facial measurements (MFB, BZB, BGB, PFH, TFH, UFH), nasal measurements (NH, NB, and ND) and girth measurements (CG and AG), height vertex and sitting height vertex, arm span, and body weight.

1.3 Head Measurements (MHL, MHB, HCH):

In maximum head length (MHL), the Koms have a mean of 18.79 cm for the males and 18.00 cm for females (Table 1), while in maximum head breadth (MHB), they have a mean of 14.87 cm for the males and 14.38 cm for the females (Table 1). In MHL, maximum of them are found within the class range of 17-18.9 cm with 52.99% for the males and 94.66% for the females (Table 3). Quite a large number of the males have also been recorded in the class range of 19-20.9 cm with 35.82%. In this measurement as per taxonomical classification, the Kom fall within the 'long' class (Table 4) when the mean of the MHL is considered.In the case of MHB, the maximum number of the Koms are found in the class range of 14-14.9 cm (Table 5) being 52.99% for the males and the 73.28% for the females. As per the mean values and the frequency distribution as well, the Koms are belonged to the medium class of the head breadth (Table 6).Majority of the Kom males have maximum class range of horizontal circumference of head (HCH) in the 56-58.9cm with 40.43 percent (Table 7) with a man value of 55.73cm (Table 1).

1.4 Facial measurements-(MFB, BZB, BGB, PFH, TFH, UFH):In maximum frontal breadth (MFB), the Kom males had a mean value of 10.30cm (Table 1), and it was also observed that the maximum of them are found in the range of 10.1-10.5cm with 47.01%. About 25.37% of them also found in the range of 9.6-10.0cm (Table 8). The mean values for the bizygomatic breadth (BZB) and bigonial breadth (BGB) are 13.44cm and 10.88cm respectively (Table 1). In BZB, maximum of them are found in the range of 13-13.9cm with 69.40% (Table 9). In this measurement, with 52.99%, the Kom males belonged to medium type (Table 10). In BGB, with a maximum frequency of 93.28%, they belonged to the range of 10-11.9cm (Table 11). In physiognomic facial height (PFH), the males have a mean value of 18.96cm (Table 1), and 50.75% of them are found within the range of 19-20.9cm. Another high frequency of 44.78% are also found in the range of 17-18.9cm (Table 12). They have a mean of 11.96cm (Table 1) as the total facial height (TFH). The maximum number (50.0%) of the measurement values are found in the range of 12-12.9cm which is followed by quite a high frequency of 39.55% in the range of 11-11.9cm (Table 13). In conventional category, they belonged to the medium type in this measurement (Table 14).

1.5 Nasal measurements (NH, NB, and ND):

The majority of the nasal height of the Kom males ranges between mean values for the nasal height (NH), nasal breadth (NB) and nasal depth (ND) are 4.85cm, 4cm, and 1.74cm respectively (Table 1). In the frequency distribution of the NH values, the Kom belonged to the class range of 4.6-5.1cm with 69.40% (Table 16). The Koms have below medium type of NH (Table 17). In NB, the maximum number of the Koms are concentrated within the class interval of 3.6-4.1cm with 70.15% (Table 18) and as such they have large type of NB (Table 19). Maximum number of the Koms have ND in the class range of 1.5-1.8cm with 58.96%, which is followed by that of the 1.9-2.0cm class range with 33.58% (Table 20).

1.6 Girth measurements (CG and AG):In chest girth

(CG), the Kom males have a mean value of 86.17cm (Table 1). 59.70% of them belonged to the CG range of 80-89.9cm and that is followed by 23.88% in the range of 90-99.9cm (Table 21). They have a mean of 26.04cm (Table 1), in arm girth (AG), and a maximum of 67.91% are found in the class range of 25-29.9cm (Table 22).HV and SHV The Kom males have a mean height vertex (HV) of 161.3cm (Table 1), while in the females it is 151.04cm. Therefore, as per these mean values, they belonged to the lower medium type (Table 23). In frequency-wise distribution, however, maximum number of the males (40.30%) and the females (34.35%) are found in the short category (Table 23). The mean values for sitting height vertex (SHV) are 84.13cm for the males and 79.30cm for the females (Table 1).

1.7 Arm span (ASP)-In ASP, the Kom males have shown a mean of 169.63 cm (Table 1), and maximum number (49.25%) of them are found in the class range of 155-169.9 cm (Table 25). Still quite a high frequency (45.52%) of them are also found in the class range of 170-189.9 cm.

1.8 Body weight (BW)-The mean BW for the Kom males is 57.07 kg (Table 1), while for the females, it is 47.92 kg. Among the males, 50% of them have their BW within the range of 55-69kg and another 40.30% of them are also found within the range of 40-54 kg. In case of the females, maximum number of them (81.68%) are found in the class range of 40-54 kg (Table 26).

1.9 Indices-Distribution of index values for the CI, NI, WHI, RSHI, and RI are given in Table 2. No indices for NI, RI have been calculated for the females as no component measurements relevant for these indices have been taken from them. Cephalic Index (CI)

The Kom males have a mean CI value of 79.61, while their female counterparts have 79.53 as the mean (Table 2). In the distribution of CI values, maximum has been found in the class range of 77-80.9 by recording 50.75% among the males and 44.27% among the females. As per the conventional classification of the CI, the Kom belonged to the mesocephal type and it is true in both the sexes (Table 28).

Nasal index (NI)

The Kom males have the mean NI value of 82.4 (Table 2), which is classified as mesorrhine type, (Table 30).

Weight height index (WHI) In the population, the mean index values for the WHI or Quetelets index, are found to be 350.12 for the males and 320.16 for the females (Table 2). As per distribution of this index values (Table 31), it has been observed that the maximum of the males are found within the class range of 301-350 in both the males (43.28%) and females (49.62%). According to the mean values for this index the Kom tribe belonged to thin type (Table 32). As a good number of the Kom males (23.13%) have their mean WHI values in the class range of 361-400, it may be said that many of them belonged to the normal category.Robusticity index (RI) : In case of RI, the Kom males have a mean value of 19.25 (Table 2). Maximum of them are found in class range of 20-39 with 51.49% and it is followed by 43.28% in the class range of 0-19. Therefore, as per the mean values of this index, the Kom males fall in "Good" category (Table 34).Relative sitting height index (RSHI) With 52.22 as the mean value for RSHI for the males and 51.33 for the females (Table 2), the Koms, irrespective of the sexes, are belonged to the metreocormic group (Table 36).

1.10 CONCLUSION-Analysis of the metrical data have revealed that by physical feature, the Kom has a mean height of 161.3cm for the males and 151.04 cm for the females and thus, taxonomically they belonged to the lower medium type of people. They have a mean head length (MHL) of 18.79cm for the males and 18cm for the females and as such, they have the long type of head. However, quite a large number of the males have the medium type of head with 47.01% and with 53.44% for the females. In head breadth (MHB) also they have the medium type. Their mean body weight is found to be 57.07kg for the males and 47.92kg for the females. In cephalic index (CI), the Kom has the mesocephal type of head and from nasal index (NI), they have mesorrhine or medium type of nose. Robusticity index (RI) has shown that the Kom males as having with 'good' status, the RI value being 19.25.

TABLE 1

Distribution of mean values ($\overline{X}$), Standard Deviations (S.D.) and Coefficient of Variations (C.V.) and their corresponding Standard Errors (S.E.) of the Anthropometric measurements among the male and female

Abbreviation	$\overline{X}$ (cm)	± S.E.	S.D.	± S.E.	C.V.	± S.E.
Male						
MHL	18.79	± 0.10	1.18	± 0.07	0.06	± 0.004
MHB	14.87	± 0.05	0.59	± 0.04	0.04	± 0.002
MFB	10.30	± 0.04	0.48	± 0.03	4.67	± 0.290
BZB	13.44	± 0.05	0.57	± 0.03	0.04	± 0.003
BGB	10.88	± 0.04	0.51	± 0.03	4.72	± 0.290
PFH	18.96	± 0.10	1.17	± 0.07	0.06	± 0.004
TFH	11.96	± 0.06	0.69	± 0.04	5.76	± 0.350
UFH	6.91	± 0.05	0.57	± 0.03	0.08	± 0.005
NH	4.85	± 0.03	0.33	± 0.02	6.85	± 0.420
NB	4.00	± 0.03	0.31	± 0.02	0.08	± 0.005
ND	1.74	± 0.02	0.19	± 0.01	0.11	± 0.007
HCH	55.73	± 0.20	2.33	± 0.14	0.04	± 0.003
CG	86.17	± 0.57	6.58	± 0.40	0.08	± 0.005
AG	26.04	± 0.22	2.52	± 0.15	0.10	± 0.006
SHV	84.13	± 0.26	3.00	± 0.18	3.57	± 0.22
HV	161.3	± 0.49	5.73	± 0.35	3.55	± 0.220
Span	169.63	± 0.86	9.98	± 0.61	5.88	± 0.360
BW (kg)	57.07	± 0.83	9.66	± 0.59	0.17	± 0.010
Female						
MHL	18.00	± 0.04	0.45	± 0.03	2.50	± 0.15
MHB	14.38	± 0.04	0.50	± 0.03	3.48	± 0.22
SHV	79.30	± 0.42	4.85	± 0.30	6.11	± 0.38
HV	151.04	± 0.45	5.15	± 0.32	3.41	± 0.21
BW (kg)	47.92	± 0.54	6.21	± 0.38	12.97	± 0.80

TABLE 2
The mean value of the Indices

Abbre-viation	$\bar{X}$	± S.E	S.D	± S.E	C.V	± S.E
Male						
CI	79.61	± 0.32	3.73	± 0.23	4.69	± 0.290
NI	82.4	± 0.06	0.66	± 0.04	0.08	± 0.005
WHI	350.12	± 3.76	43.52	± 2.66	12.43	± 0.760
RI	19.25	± 1.02	11.79	± 0.72	0.61	± 0.037
RSHI	52.22	± 0.20	2.26	± 0.14	4.33	± 0.260
Female						
CI	79.53	± 0.33	3.83	± 0.24	4.82	± 0.300
RSHI	51.33	± 0.16	1.82	± 0.11	3.54	± 0.220
WHI	320.16	± 3.83	43.80	± 2.71	13.68	± 0.850

TABLE 3
Distribution of Maximum head length of male and female in class intervals

Class size (cm)	Male f	Male p.c.	Female f	Female p.c.	Total f	Total p.c.
15-16.9	7	5.22	2	1.53	9	3.40
17-18.9	74	55.22	124	94.66	198	74.72
19-20.9	48	35.82	5	3.82	53	20.00
21-22.9	5	3.73	-	-	5	1.89
Total	134	100.00	131	100.00	265	100.00

TABLE 4
Distribution of Maximum head length of both sexes in conventional categories (Labzelter 1920 and Saller 1931)

Class	Male *Range* (mm)	f	p.c.	Female Range (mm)	f	p.c.
Very Short	X – 169	7	5.22	X-161.9	-	-
Short	170-177	44	32.84	162-169	2	1.53
Medium	178-185	63	47.01	170-176	34	25.95
Long	186-193	15	11.19	177-184	70	53.44
Very long	194 +	5	3.73	185 +	25	19.08
Total		134	100.00		131	100.00

TABLE 5
Distribution of Maximum head breadth of males and females in class interval

Class size (cm)	Male f	Male p.c.	Female f	Female p.c.	Total f	Total p.c.
13-13.9	8	5.97	22	16.79	30	11.32
14-14.9	71	52.99	96	73.28	167	63.02
15-15.9	53	39.55	13	9.92	66	24.91
16-16.9	2	1.49	-	-	2	0.75
Total	134	100.00	131	100.00	265	100.00

TABLE 6
Distribution of Maximum head breadth of male and female in conventional categories (Labzelter 1920 and Saller 1931)

Class	Male Range (mm)	f	p.c.	Female Range (mm)	f	p.c.
Very narrow	X-139	8	5.97	X-134	7	5.34
Narrow	140-147	50	37.31	135-141	51	38.93
Medium	148-155	61	45.52	142-149	59	45.04
Broad	156-163	15	11.19	150-157	12	9.16
Very broad	164-X	-	-	158-X	2	1.53
Total		134	100.00		131	100.00

TABLE 7
Distribution of Horizontal circumference of head of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
50 - 52.9	15	11.19
53 - 55.9	56	41.79
56 - 58.9	54	40.30
59 - 61.9	9	6.72
Total	134	100.00

TABLE 8
Distribution of Maximum frontal breadth of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
9.1-9.5	5	3.73
9.6-10.0	34	25.37
10.1-11.5	63	47.01
10.6-11.0	25	18.66
11.1 -11.5	6	4.48
11.6 – 12.0	1	0.75
Total	134	100.00

TABLE 9
Distribution of Bizygomatic breadth of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percent-age
11-11.9	1	0.75
12-12.9	20	14.93
13-13.9	93	69.40
14-14.9	20	14.93
Total	134	100.00

TABLE 10
Distribution of Bizygomatic breadth of male in conventional categories (Labzelter 1920 and Saller 1931)

Class	Range (mm)	Freq.	Percentage
Very narrow	X –127	4	2.99
Narrow	128-135	49	36.57
Medium	136-143	71	52.99
Broad	144-151	10	7.46
Very broad	152-X	-	-
Total		134	100.00

TABLE 11
Distribution of Bigonial breadth of male in class intervals

Class	Freq.	Percentage
8 - 9.9	7	5.22
10 -11.9	125	93.28
12-13.9	2	1.49
Total	134	100.00

TABLE 12
Distribution of Physiognomic facial height of male in class intervals

Class	Freq.	Percentage
15-16.9	4	2.99
17-18.9	60	44.78
19-20.9	68	50.75
21-22.9	2	1.49
Total	134	100.00

TABLE 13
Distribution of Total facial height of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
10-10.9	9	6.72
11-11.9	53	39.55
12-12.9	67	50.00
13-13.9	4	2.99
14-14.9	1	0.75
Total	134	100.00

TABLE 14
Distribution of Total facial height of male in conventional categories (Labzelter 1920 and Saller 1931)

Class size (cm)	Range (mm)	Freq.	Percentage
Very law	X-111	24	17.91
Law	112-117	36	26.87
Medium	118-123	53	39.55
High	124-129	16	11.94
Very high	130-above	5	3.73
Total		134	100.00

TABLE 15
Distribution of Upper facial height of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
5-5.9	2	1.49
6-6.9	72	53.73
7-7.9	57	42.54
8-8.9	3	2.24
Total	134	100.00

TABLE 16
Distribution of Nasal height of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
4-4.5	21	15.67
4.6-5.1	93	69.40
5.2-5.7	20	14.93
Total	134	100.00

TABLE 17
Distribution of Nasal height of male in conventional categories

Class size (cm)	Range (mm)	Freq.	Percentage
Very short	X- 39	-	-
Short	40-44	10	7.46
Below medium	45-49	74	55.22
Medium	50-54	44	32.84
Above medium	55-59	6	4.48
Total		134	100.00

TABLE 18
Distribution of Nasal breadth of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
3-3.5	4	2.99
3.6-4.1	94	70.15
4.2-4.7	35	26.12
4.8-5.3	1	0.75
Total	134	100.00

TABLE 19
Distribution of Nasal breadth of male in conventional categories

Class size (cm)	Range (mm)	Freq.	Percentage
Narrow	X-24	-	-
Below medium	25-29	-	-
Medium	30-34	2	1.49
Above medium	35-39	55	41.04
Large	40-above	77	57.46
Total		134	100.99

TABLE 20
Distribution of Nasal depth of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
1.1 - 1.4	8	5.97
1.5 - 1.8	79	58.96
1.9 - 2.0	45	33.58
2.1 - 2.4	2	1.49
Total	134	100.00

TABLE 21
Distribution of Chest girth of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
70 - 79.9	20	14.93
80 - 89.9	80	59.70
90 - 99.9	32	23.88
100 - 109.9	2	1.49
Total	134	100.00

TABLE 22
Distribution of Arm girth of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
15 - 19.9	1	0.75
20 - 24.9	40	29.85
25 - 29.9	91	67.91
30 - 34.9	2	1.49
Total	134	100.00

TABLE 23
Distribution of Height vertex of both sexes in conventional categories(According to Martin 1928)

Classification	Male Range (cm)	f	p.c.	Female Range (cm)	f	p.c.
Pigmy	X-129.9	-	-	X-120.9	-	-
Very short	130 - 149.9	3	2.24	121 - 139.9	2	1.53
Short	150 - 159.9	54	40.30	140 - 148.9	45	34.35
Lower medium	160 - 163.9	38	28.36	149 - 152.9	42	32.06
Medium	164 - 166.9	17	12.69	153 - 155.9	20	15.27
Upper medium	167 - 169.9	11	8.21	156 - 158.9	17	12.98
Tall	170 - above	11	8.21	159 - 167.9	5	3.82
Total		134	100.00		131	100.00

TABLE 24
Distribution of Sitting height vertex of both sexes in class intervals

Class size (cm)	Male f	Male p.c.	Female f	Female p.c.	Total f	Total p.c.
70 – 79.9	12	8.96	74	56.49	86	32.45
80 – 89.9	121	90.30	57	43.51	178	67.17
> 90	1	0.75		0.00	1	0.38
Total	134	100.00	131	100.00	265	100.00

TABLE 25
Distribution of Arm span of male in class intervals

Class size (cm)	Freq.	Percentage
140 – 154.9	7	5.22
155 – 169.9	66	49.25
170 – 189.9	71	45.52
Total	134	100.99

TABLE 26
Distribution of Body weight of both sexes in class intervals

Class size (cm)	Male f	Male p.c.	Female f	Female p.c.	Total f	Total p.c.
25 – 30	1	0.75	8	6.11	9	3.40
40 – 54	54	40.30	107	81.68	161	60.75
55 – 69	67	50.00	16	12.21	83	31.32
70 - 84	12	8.96	-	-	12	4.53
Total	134	100.00	131	100.00	265	100.00

TABLE 27
Distribution of Cephalic index of male and female in class intervals

Class size	Male f	Male p.c.	Female f	Female p.c.
69 – 72.9	5	3.73	2	1.53
73 – 76.9	20	14.93	32	24.43
77 – 80.9	68	50.75	58	44.27
81 – 84.9	33	24.63	27	20.61
85 – 88.9	5	3.73	10	7.63
89 – 92.9	3	2.24	2	1.53
Total	134	100.00	131	100.00

TABLE 28
Distribution of Cephalic index of male and female in conventional categories
(According to Saller, 1930)

Classification	Male Range	Male f	Male p.c.	Female Range	Female f	Female p.c.
Hyperdolichocephal	X – 70.9	-	-	X – 71.9	1	0.76
Dolichocephal	71.0 – 75.9	21	15.67	72.0 – 76.9	32	24.43
Mesocephal	76.0 – 80.9	74	55.22	77.0 – 81.9	66	50.38
Brachycephal	81.0 – 85.4	32	23.88	82.0 – 86.4	26	19.85
Hyperdolichocephal	85.5 – 90.9	5	3.73	85.5 – 91.9	6	4.58
Ultrabrachycephal	91.0 - above	2	1.49	92 - X	-	-
Total		134	100.00		131	100.00

TABLE 29
Distribution of Nasal index of male in class interval

Class	Freq.	Percentage
65 – 74.9	10	7.46
75 – 84.9	83	61.94
85 – 94.9	35	26.12
95 – 104.9	6	4.48
Total	134	100.00

TABLE 30
Distribution of Nasal index of male in conventional categories(According to Martin and Saller, 1957)

Classification	Range	Freq.	Percentage
Hyperleptorrhine	X – 54.9	-	-
Leptorrhine	55.0 – 69.9	1	0.75
Mesorrhine	70.0 – 84.9	92	68.66
Platyrrhine	85.0 – 99.9	40	29.85
Hyperplatyrrhine	100 - above	1	0.75
Total		134	100.00

TABLE 31
Distribution of Weight height index (Quetelet's Index) of male and female in class intervals

Class	Male f	Male p.c.	Female f	Female p.c.
201 – 250	-	-	6	4.58
251 – 300	13	9.70	34	25.95
301 – 350	58	43.28	65	49.62
351 – 400	51	38.06	20	15.27
401 - 450	12	8.96	6	4.58
Total	134	100.00	131	100.00

TABLE 32
Distribution of Weight height index of male in conventional categories (According to Quetelet, 1870)

Classification	Range	Freq.	Percentage
Starving	X - 200	-	-
Emaciated	201 – 290	7	5.22
Thin	291 – 360	84	62.69
Normal	361 – 400	31	23.13
Obese	401 - 540	12	8.96
Total		134	100.00

TABLE 33
Distribution of Robusticity index of male in class intervals

Class size	Freq.	Percentage
-20 - 1	6	4.48
0 – 19	58	43.28
20 – 39	69	51.49
40 - 59	1	0.75
Total	134	100.00

TABLE 34
Distribution of Robusticity index of male in conventional categories
(According to Tschernorutzky)

Classification	Range	Freq.	Percentage
Very strong	-10	24	17.91
Strong	11.0 – 15.0	16	11.94
Good	16.0 – 20.0	32	23.88
Medium	21.0 – 25.0	20	14.93
Weak	26.0 – 30.0	21	15.67
Very week	31.0 – 35.0	15	11.19
Bad	36.0 +	6	4.48
Total		134	100.00

TABLE 35

Distribution of Relative sitting height index (Cormic Index) of male and female in class intervals

Class	Male		Female	
	f	p.c.	f	p.c.
40 – 43.9	-	-	1	0.76
44 – 47.9	2	1.49	2	1.53
48 – 51.9	57	42.54	79	60.31
52 – 55.9	72	53.73	49	37.40
56 – 59.9	3	2.24		0.00
Total	134	100.00	131	100.00

TABLE 36

Distribution of Relative sitting height index (Cormic Index) of male and female in conventional categories (Guiffrida-Ruggeri, 1904)

Classification	Range	Male		Female	
		f	p.c.	f	p.c.
Brachycormic	X – 50.9	26	19.40	48	36.64
Metreocormic	51.0 – 52.9	66	49.25	64	48.85
Macrocormic	53.0 - above	42	31.34	19	14.50
Total		134	100.00	131	100.00

1. BIBLIOGRAPHY

2.

3. BENJAMIN, KOM, 1990: *The Kom-Rem People,* Mrs. T. Yangpi Kom, Lower Keirap, Loktak Project, Manipur.
4. DANKMEIJER, J., 1938: Amer. J. Phy. Anthrop. *Singh, I.P. etal., 1968.*
5. DASGUPTA, P.C. AND M.N. BASU, 1936 : Racial Analysis of the Koms of Manipur, *Proc.23rd Ind.Sc. Cong*. (Abstract).
6. DAS, TARAKCHANDRA, 1945: *The Purums,* Dinabandhu Ganguli, B.A., Superintendent, Calcutta, University Press, 48, Hazra Road, Ballygunge, Calcutta.
7. DUN, E.W.,1886 : *Gazetteer of Manipur,* Vikas publishing house, Delhi.
8. LABZELTER, V., 1920: Anleitung Zur Vornchime Konstitutionell anthrologischer Untersuchungen Wein. *Singh, I.P. etal.,* 1968.
9. MANGPU KILONG, 2000: *A short history of Indegenous communities of Kangleipak*, (ed) The League of the Fourth World People, Kangleipak, 1st floor WEDA, Building, Keishamthong Keithel, Imphal Kangleipak, Manipur.
10. MANOUVRIER, L., 1900: Generalities sur l' anthropometric. Rev Ec. Anthrop. *Singh, I.P. etal.,* 1968.
11. MARTIN, R. AND SALLER K., 1957: Lehrbuch der Anthropologic. I & II. *Singh, I.P. etal.,* 1968
12. MARTIN, R., 1928, Lehrbuch der Anthropologie, I, II & III Verlangvon Gustav Feshcher, Jena. *Singh, I.P etal,* 1968.
13. MENDEL, G., 1865 : Versuche uber pflanzen-hybriden Verhdlg, Naturf.Verein Brunn, Abhandlungen 4: 3-47 *cf. Roberts*-1973.
14. PEARSON, K. AND LEE A., 1903: Biometrika, 2.
15. PENROSE, L.S., 1954: Distance, size and shape, *Ann. Eugen.* 18: 337-343.
16. PENROSE, L.S., 1955: Evidence of heterosis in man, *Proc. Roy. Soc. B.* 144.
17. QUETELET, A., 1870: Anthropometric on la mesure dei differents faculties d'homme. Brussel. *Singh, I.P. etal.,* 1968.
18. SALLER, K., 1930 : Eine neue Augenfarbental. Konstitlehre. *Singh, I.P etal,* 1968.
19. SALLER, K., 1931: Der Geschlechlechtsunterschied im Verhaltnis Stammlange Zur Korpergro sse biem Menchen. Zschr. Konstitlehre. *Singh, I.P etal,* 1968.
20. SINGH, I. P., AND M. K. BHASIN, 1968: *Anthropometry* Delhi, Kamla-Raj.
21. SINGH, K.S., 1978: Bio-Anthropological study of three populations of Manipur Valley, *Unpb. Ph.D. Dissertation*, University of Poona.
22. TEBA K. CHRISTIAN, 1977: *8th Thousand Years of Koms.* Komlane, Imphal.
23. TEBA KARONG, 1976 : The Koms, in *An introduction to tribal language and culture of Manipur (7 tribes),* (ed) Manipur State Kala Akademy. Imphal.

Crop Insurance and Government Programes Scheme: Does Farmers get Benefit: A Case From Tumkuru

SRIKANTHNAIK H
Junior Research Fellow,
Seshadripuram First Grade College, Yelahanka, Bangalore
A Recognized Research Centre, University of Mysore

GIRISHA T
Research Scholar,
Seshadripuram First Grade College, Yelahanka, Bangalore A Recognized Research Centre
University of Mysore

JAYANTH H
Research Scholar
Seshadripuram First Grade College, Yelahanka, Bangalore
University of Mysore, Mysuru

Abstract-*Crop insurance schemes are designed to provide financial protection to farmers against crop losses due to natural disasters such as drought, flood, pests, and diseases. These schemes are critical to sustaining the livelihoods of farmers who depend on their crops for income. The insurance policies work by providing pay-outs based on the level of damage incurred and the insured value of the crop. While crop insurance schemes have several benefits for farmers, such as access to credit and the mitigation of the impact of natural disasters on the economy, they can also have limitations such as high premiums and inadequate coverage.* Crop insurance schemes can provide valuable protection to farmers against crop losses due to natural disasters.

Keywords: *Crop Insurance, Crop Schemes, Government schemes,*

Introduction-Farming in India is heavily reliant on nature, and changes in climate and natural phenomena such as rain, draught, flood, and storm have a direct impact on crop and agriculture. The Pradhan Mantri Fasal Bima Yojana is a government scheme designed to help farmers manage their risks and to encourage farming.The Pradhan Mantri Fasal Bima Yojana is a government programme. Crop Insurance is a combined IT arrangement and a Web-based environment that accelerates administrative conveyance, connects disparate data bases, achieves a solitary perspective on information, and eliminates manual cycles. Crop Insurance provides farmers with protection administrations faster than ever before. The Pradhan Mantri Fasal Bima Yojana is a significant initiative launched by the Government of India's Ministry of Agriculture and Farmers Welfare. This enterprise makes it possible for a rancher to secure his yield and answer problems and concerns via the web interface. This portal enables many branches of the Government of India to disseminate information about various plans and projects being implemented to benefit farmers.

IMPLEMENTATION AGENCY (IA):The Scheme will be implemented through a multi-office structure by a selected insurance agency under the general direction and control of the Department of Agriculture, Cooperation, and Farmers Welfare (DAC&FW), Ministry of Agriculture and Farmers Welfare (MoA&FW), Government of India (GOI), and the concerned State in collaboration with various organisations, including commercial banks, cooperative banks, regional rural banks, and their administrative bodies.

The board OF THE SCHEME: The current State Level Co-appointment Committee on Crop Insurance (SLCCCI), Sub Committee to SLCCCI, and District Level Monitoring Committee (DLMC) have previously directed the execution and monitoring of continuous harvest protection plans such as National Agricultural Insurance Scheme (NAIS), Weather Based Crop Insurance Scheme (WBCIS), Modified National Agricultural Insurance Scheme (MNAIS), and Coconut Palm Insurance Scheme (CPIS). IA will be a working member of the plan's SLCCCI and District Level Monitoring Committee (DLMC).

CROPS AND NOTIFIED AREA:-The Scheme can cover every one of the Crops for which past yield information is accessible and developed during the advised season, in a Notified Area and for which yield assessment at the Notified Area level will be accessible in light of imperative number of Crop Cutting Experiments (CCEs) being a piece of the General Crop

Notified Area is the Unit of Insurance chose by the State Govt. for informing a Crop during a season. The size of the Unit of Insurance will rely upon the area under development inside the unit. For significant harvests, the Unit of Insurance will usually be Village/Village Panchayat level and for minor yields might be at a more elevated level with the goal that the imperative number of CCEs could be led during the informed harvest season.

Review of Literature-Lagasse and Drake, 2005) The word 'risk' is a typical and broadly utilized piece of the present jargon, yet to some degree shockingly, there is still no expansive agreement on the importance of this term (. Knight was quick to recognize risk from vulnerability. He recognize quantifiable vulnerability and un-quantifiable vulnerability, we might utilize the term 'risk' to assign the previous and the term 'vulnerability' for the last option.(Knight, 1921). Knight's well known definition of 'risk' connects with genuine probabilities while 'vulnerability' connects with emotional probabilities(Holton, 2004). Most creators track down a more helpful differentiation between vulnerability as blemished information and hazard as openness to unsure troublesome monetary outcomes. Information on farmers' mentality towards risk is significant in deciding how farmers act for new rural rehearses. Haile

2007) pointed out dangers and vulnerabilities influence families' creation and utilization choices and information on how means farm families settle on financial choices under risk gives helpful data to strategy creators.Ifft (2017) expressed that the public authority of India began offering inescapable harvest protection in 1985, with the CCIS. The CCIS has been supplanted by the NAIS. The NAIS is viewed as an improvement over the CCIS, however it has basically supplanted one imperfect plan with another somewhat less defective one. Government crop protection has ended up being a disappointment around the world, yet India appears to have disregarded the two its own disappointment and the disappointment of different nations. Golait and Pradhan (2008) expressed that however various elements influence the Indian farming creation as well as efficiency, the fundamental gamble being its extreme reliance on 'climate' which is past the control of people. The yield protection as a gamble the executives instrument has been practically speaking very for quite a while in Indian horticulture in various variations. They referenced that data on weather conditions isn't liberated from cost and, accordingly, protection becomes costly to farmers.(Sakurai and Reardon (1997)) demonstrated that there was a long forthcoming interest for formal and government supported dry spell protection in Burkina Faso. The interest for dry spell protection was found to diminish in families with higher in general wages and more self-insurance plans appearing. The creators proposed that crop protection alone isn't adequate; that strategy and projects that upholds self-protection, like miniature credit or increment of off-agri business are likewise significant. Binswanger (1980) subsequent to examining the gamble in horticultural speculations, risk deflecting propensities of the farmers and accessible systems for moving risk, presumes that farmers' own instruments for misfortune the board or risk dispersion are over the top expensive in parched and semi-bone-dry areas.

Research Gap

The Government of Karnataka has already introduced a portal called 'Samrakshana' in their official website of Department of Agriculture. The farmers have to register their credentials in the scheme and the claim will be distributed as Direct Benefit Transfer to the farmer's account. The data in Samrakhana itself shows that the registration of farmers in only four districts are noticeable and in other districts, the registration is negligible. The districts where registration is noticeable are, by Kopala, Havery, Gadag, Davangare, Mandya etc.. This study analyses the reasons for poor involvement of farmers in crop insurance scheme.

Problem statement-The awareness on the PMFBY is the prime factor in increasing enrolment. The Karnataka government has its own website for enrolment called 'Samrakhana' and found that the distribution of enrolment. More than 60% of the enrolment is done through common service centres (CSC). This shows that there is a facility utilization gap and awareness gap in the implementation of the project.Need of the study

The success of implementation of any scheme, especially government level, depends on the system involved in it. The system should develop a process to increase both inclusion of farmers in the scheme through awareness development. Hence, this study is essential to find why the enrolment is low in many districts.

Objectives

To analyse the awareness on PMFBY among farmers

To analyse the available facilities for the enrolment of farmers in the schemes

To assess the information on benefits of PMFBY

Hypothesis

Hypothesis 1

H_0: There is no significant effect of awareness in increasing enrolment of farmers in PMFBY

Hypothesis 2

H_0: There is no significant effect of available sources of for enrolment of farmers in PMFBY

Hypothesis 3

H_0: There is no significant effect of benefits available in PMFBY on farming productivity.

Hypothesis 4

H_0: There is no significant effect of benefits given in PMFBY on solving the present issues of farmers

Scope of study-The scope of the study is the farmers in districts (name) where the enrolment is very low. The reasons for low reenrolment in Samrakshanam Scheme. This study also analyses the risks faced by the farmers and seek solutions introduced by the Government to make the farmers aware on it. Information asymmetry is a challenge in low enrolment of the scheme. The benefit is transferred as Direct Benefit Transfer system

Research Methodology-The respondents of this research are farmers of different districts. The respondents are selected based their readiness to share their information. The proposed geographical area is Bengaluru city of Karnataka State.

The research shall be primarily exploratory and descriptive in nature, followed by an empirical and analytical survey intending to expand knowledge about the PMFBY **Data Sources:**

The research is proposed to be based on both Primary data as well as Secondary data.

Secondary data shall be collected from books, journals, periodicals, magazines, newspapers, internet, regulatory authorities, Websites etc.,

Primary data shall be collected through structured questionnaires using Expert opinion poll as Pilot Study

After modification of Questionnaire, final questionnaire will be framed after improving reliability and validity

Selection of respondents-The criteria of selection of respondent are to ensure adequate samples for analysis and hence the stratified sampling is used. Since, the population is large, non-probabilistic sampling used here. Demographic variables are used for stratification. Additional strata are, land area, number of crops, quantity of production, and annual income and expenses.

Data Collection:

Reliability of questionnaire-Pilot study is to be done among the employees in different sectors. The pilot study is used to analyse three things, understanding of the questions, clarity in responses, consistency in responses. The responses are used to check the consistency. Reliability of the tools is improved through test and retest. Cronbach alpha and kappa are used to analyse the reliability and consistency.Validity of the data is analysed using KMO factor in factor analysis.

Sampling size-The population size is not defined in this research as it is high. Hence the Cochran's sample size formula

$$n_o = \frac{Z^2pq}{e^2}$$

P is the taken as 50% and 95% confidence level and hence, Z is taken as 1.96. 'e' is the error level and percentage of error is taken as 5%. The sample size is 384 will be from each district selected for surveyStratified sampling used in this research. The primary level of strata are , farmers who enrolled in PMFBY and not enrolled in PMFBYData was collected from those who are ready to share the information Being the population is large and considering it as infinite, minimum 384 samples to be collected. Based on response in pilot study,

Scale of measurement-

The questions are 'subjective' and hence a qualitative scale is used. To get more precision, 11 point scale is used (0-5 scale)

Statistical tools -

Descriptive statistics is used in this research as the data is from Pilot study and the main intention is response analysis and response orientation.

Demographic variables

Categorising variable	Sub variables	Interview method (Qualitative Data)	
Gender	Male	81	42.41%
	Female	110	57.59%
Age in years	<20	37	19.37%
	20-40	63	32.98%
	40-60	45	23.56%
	60 <	46	24.08%
Land	<3 acres	80	41.88%
	3-6 acres	52	27.23%
	6-9 acres	39	20.42%
	12 acres<	8	4.19%
PMFBY	Awareness on Government facilities for farmers	Insurance	29
		36	19%
Enrolment in Samrakshana		23	12%
Local Administration schemes		36	19%
Awareness on Government facilities for farmers	Not Known	56	29%
	Awareness	28	15%
	Registered	61	32%
	Availed	56	29%

9-12 acres	12	6.28%
15%		

Table 1 shows that 41.88% of the respondents have land less than 3 acres while 27.23% have land in between 3-6 acres. Awareness level of farmers on insurance (15%) , Prime minister Fisala Beema Yojana (19%), Samrakshana (12%), and Local administration Schemes (19%).

Table 2 : distribution of respondents who do not know about Government Schemes

	Illiteracy	No contact with government offices	Not own land	No efforts to develop awareness	Lack of involvement in awareness programs	Total
Illiteracy	5%	4%	0%	0%	5%	14%
No contact with government offices	0%	5%	0%	7%	0%	13%
Not own land	0%	0%	23%	0%	0%	23%
No efforts to develop awareness	7%	4%	0%	11%	7%	29%
Lack of involvement in awareness programs	2%	0%	0%	11%	9%	21%
Total	14%	13%	23%	29%	21%	100%

Table 2 shows that, No Land (23%) , No efforts to develop awareness (29%) and lack of involvement in awareness (21%) have no awareness on government schemes while lack of involvement in awareness (21%) have

Table 3 Awareness on Government Projects

	From agriculture office	NGOs	Common service centre	TVs & Radio	Other farmers	Total
Agriculture office	0%	7%	4%	0%	7%	18%
NGOs	0%	4%	0%	7%	4%	14%
Common Service centre	0%	0%	29%	0%	0%	29%
TV & Video	4%	7%	0%	11%	4%	25%
Other farmers	4%	0%	0%	7%	4%	14%
Total	7%	18%	32%	25%	18 %	100%

In rural areas, common service centres acts as the main information point and then TV & Radios. Agriculture office also play an important role in developing awareness in farmers

Future of Research-

The e choupal was implemented by the ITC in UP with both input and out put benefits to the farmers. The research can be extended to the possibility to include output end in the model. The output means, how to find market for the farmer's products at a genuine price.

Limitations -

The limitation of this study to find the farmers who real avail benefit of DBT to compare the perception of farmers who availed the DBT and non-registered. The geographical coverage and shrinking farming process are other limitations

Conclusion-

The paper analysed the distribution of information on facilities and benefits offered to farmers and how it reaches the farmers. Information asymmetry is the main reason for the poor registration in PMFBY or Samrakshana. Illiteracy , non access of farmers to agriculture office, inadequate interaction by the Government employees with farmers in rural areas are a few challenges in developing awareness. Table 1 shows that the knowledge on different schemes are less and only 61% respondents registered and availed the benefits. The registration is permitted for the head of the family and others have to move away from the parental house and should have ration card and forms to avail benefits. It is a barriers for those dependent farmers.

****

Bibliography

1. Agrawal, Sonu and Vijay Mahajan (2004). Risks faced by the Rural Poor in India and Risk Mitigation Measures, https://www.weather-risk.com, accessed 20.3.2018.
2. Agriculture Insurance Company of India Ltd.(2018). www.aicofindia.org accessed 2017 to 2018.
3. Ashan, Syed, M., A.A.G.Ali, and N.J.Kurian (1982). Towards a theory of agricultural crop insurance. American Journal of Agricultural Economics. 64(3):520-529.
4. Bhende, M.J.(2002). An analysis of Crop Insurance Scheme in Karnataka. Bangalore: Agricultural Development and Rural Transformation Unit, Institute for Social and Economic Change (ISEC).
5. Bhushan, C., & Kumar, V. (2017). Pradhan mantri fasal bima yojana: An assessment. Centre for Science and Environment, New Delhi.
6. Binswanger, H.P. (1980). Attitudes Towards Risk: Experimental Measurement in Rural India. American Journal of Agricultural Economics, 62(3):174-82.
7. CAG (2017). Performance Audit of Agricultural Crop Insurance Scheme, Report of the Comptroller and Auditor General of India, Report No.-7 of 2017.
8. Campell, S. (2006). Risk and the subjectivity of preference. Journal of Risk Research, 9(3): 225–242.
9. Ellis, F. (2000). The determinants of rural livelihood diversification in developing countries. Journal of Agricultural Economics, 51(2): 289–302.
10. European Commission (2001). Risk Management Tools for EU Agriculture with a Special Focus on Insurance. Working Document. http://ec.europa.eu/agriculture/publi/ insurance/text_en.pdf accessed on 20th March 2018.
11. Ghosh, N., & Yadav, S. S. (2008). Problems and Prospects of Crop Insurance: Reviewing Agricultural Risk and NAIS in India. Final Report, 30th September 2008, Institute of Economic Growth, New Delhi.
12. Golait, Ramesh B. and Pradhan, Narayan C. (2008). Relevance of Weather Insurance in Indian Agriculture, CAB CALLING, January-March.
13. Gulati, A.; Terway, P., and Hussain, S. (2018). Crop Insurance in India: Key Issues and Way Forward, Working Paper No.-352, Indian Council for Research on International Economic Relations, pp. vii+55.
14. Haile, N. (2007). An Economic analysis of farmers' risk attitudes and farm households' responses to rainfall risk in Tigray, Northern Ethiopia. PhD Thesis, Wageningen University, Netherlands. 80
15. Hanson, S. O. (2010). Risk: objective or subjective, facts or values. Journal of Risk Research, 13(2): 231–238.
16. Hardaker, J.B.; Huirne,R.; Anderson, J.R. and Lien, G. (2004). Coping with risk in agriculture, 2nd ed., CABI Publishing, U.K.
17. Hazell. P. (1992). The Appropriate Role of Agricultural Insurance in Developing Countries. Journal of International Development. 4(6) : 567-81
18. Holton, G.A. (2004). Defining risk. Financial Analysts Journal, 60 (6): 19–25.
19. Holzmann, R and Jorgensen, S. (1999). Social protection as social risk management: conceptual underpinnings for the social protection sector strategy paper. Social Protection Discussion Paper series No. 9904. The World Bank, 1818 H Street, N.W., MSN G8-802, Washington, D.C.
20. Ifft, Jennifer (2017). Government vs. Weather: The True Story of Crop Insurance in India, Centre for Civil Society, A-69, Hauz Khas, New Delhi - 110 016.
21. Jodha, N.S. (1981). Role of Credit in Farmers" Adjustment against Risk in Arid and Semi-Arid Tropical Areas of India. Economic and Political Weekly. XVI (22&23).
22. Knight, F. H . (1921). Risk, uncertainty, and Profit. New York: Hart, Schaffner, and Marx; Boston: Houghton Mifflin Company, The Riverside Press, Cambridge.
23. Kouame, E.B.H and Komeman, A.N. (2012). Risk preferences and demand for insurance under price uncertainty: an experimental approach for Cocoa farmers in Cote d'Ivoire. Research Paper No-13. International Labour Office (ILO), Geneva.
24. Legesse, B. (2006). Risk perceptions, risk minimizing and coping strategies of smallholder farmers in the Eastern Highlands of Ethiopia, In: Havnevik, K.; Negash, T. and Beyene, A. (eds.), Of Global Concern: Rural Livelihood Dynamics and Natural Resource Governance, Sida, pp. 45–83.
25. Mazid, A. and Elizabeth, B. (1992). Incorporating risk in the economic analysis of agronomic trials: fertilizer use on barley in Syria. Agricultural Economics, 7(2): 167–184.

A Comparative Study of Job Stress and Burnout Among Male &Female Teachers in Higher Studies

Dr.William
Assistant Professor
Department of Commerce, NREC College Khurja, Bulandshahr.

Rohini Mahur
Research scholar
Department of Commerce, NREC College Khurja, Bulan shahr.

ABSTRACT-Stress, like depression, is a universal experience. Both are generally self-limiting and may even prove to be beneficial in terms of personal growth. In some circumstances, however, stress and depression may become excessive or morbid, and lead to considerable disability. The association of stress with physical and psychological disorders has aroused much controversy over the years, but the particular subject of 'burnout' has received com paratively little attention in Britain. In the USA, on the other hand, job stress and the burnout stress syndrome (BOSS) have stirred up great interest, as demonstrated by the writings of Jones' and Cherniss. They suggest that a high level of occupational stress leads to physical and emotional exhaustion, with consequent loss of efficiency. The condition is thought to affect particularly those in the helping pro fessions and in responsible administrative positions. Critics of the concept suggest that burnout is merely a trendy name for boredom or an alternative label for the midlife crisis..

Key words : Stress, depression, burnout stress

INTRODUCTION-In today's technologically advanced world, education is crucial to achieving success in all areas of life. Institutions that provide education and knowledge play a crucial role in this process. According to all accounts, these institutions offer information, and it is essential that there be institutions in every subject so that people can become familiar with the general information taking place in this world. Therefore, universities and colleges have begun to open their doors based on their areas of specialization, such as agriculture, science and technology, healthcare, the arts and humanities, and so forth. Issues of employee well being have never been more important than now. Research related to the happiness of employees is necessary, not only because of the happy-productive worker thesis, but also because of claims that many people are unhappy. Subjective well being is an important indicator of the well being of individuals. Well being could be considered in terms of different life roles, such as marriage, family, work and housing. Work represents an important context for studying the well being of individuals, especially because it provides a source of income that impacts on various life roles, and because it demands a significant part of individuals' time and energy. Work also ranks high among the determinants of life satisfaction. Unfortunately, work-related wellbeing has often been narrowly operationalised as job satisfaction. As a result, Daniels (2000) suggested that affective wellbeing is assessed. Affective well being is regarded as multidimensional and could capture subtleties in experiences of work. Job satisfaction, occupational stress, burnout and work engagement are important dimensions of the affective work-related well being of employees (Cropanzano & Wright, 2001).

Thus, the concept of stress has a very important place in psychology. Stress and coping with stress are not only important from point of view of research but also important from practical implication. Stress is a complex phenomenon. It is very subjective experience. What may be challenge for one will be a stressor for another? It depends largely on background experiences, temperament and environmental conditions. Stress is a part of life and is generated by constantly changing situations that a person must face. The term stress refers to an internal state, which results from frustrating or unsatisfying conditions. A certain level of stress is unavoidable. Because of its complex nature stress has been studied for many years by researchers in psychology, sociology and medicine. Thus we will define stress as an internal state which can be caused by physical demands on the body (disease conditions, exercise, extremes of temperature, and the like) or by environmental and social situations which are evaluated as potentially harmful, uncontrollable or exceeding our resources for coping. On the other hand, psychological responses, such as anxiety, hopelessness, depression, irritability and a general feeling of not being able to cope with the world can result from the stress state.

Definitions of terms used :

Stress : Stress is a feeling that is created when we react to a particular event. It is the body's way of reacting to a challenge and preparing to meet a tough situation. Researchers define stress as a physical, mental or emotional factor that causes bodily or mental tension. The work stress is derived from the word "stringy" which means 'to be drawn tight'. In medical terms stress is described as "a physical or psychological stimulus that can produce mental tension or psychological reactions that may lead to illness."

Early warning signs of job stress : Headache, sleep disturbances, difficulty in concentrating, short temper, upset stomach, job dissatisfaction, low morale.

Job stress may result in Cardiovascular diseases, musculo skeletal disorders, psychological disorders, workplace injury, suicide, cancer, ulcers and impaired immune functions.

Causes of job stress -There are various causes of job stress which contribute to stress. These causes come from both outside and inside the organisation, from the groups employees are influenced by, and from employees themselves.

Cartwright and Cooper (1997) identified six major sources of pressures in work stress. These are :

1. Factors intrinsic to the job : Poor working conditions, work overload or underload, poor technology, long hours and danger are the factors that are intrinsic to the job capable of producing stress.

2. Role in the organisation : Stress is commonly experienced by the individuals whose roles are not clearly defined in the organisation.

3. Relationships at work : According to Agarwal (2001) there are three critical interpersonal relationships at work : relationships with one's boss, those with one's subordinates, and those with one's colleagues.

4. Career development : Career progression, job security, obsolescence of skills and capabilities and retirement are included in this.

5. Organisational structure and climate : Non-participation at work and a general lack of control in the organisation are reported to be source of stress.

6. Non-work pressures : Relates to pressures on the domestic front due to job stress.

The prevalence, causes and effects of teacher stress have been reported in several studies (Kyriacous & Sutcliffe, 1977a ; Kyriacou, 1980). In general, the antecedents of stress, or the so called stressors, affecting today's employees may be divided into following categories :

Organizational Stressors -Besides the potential stressors that occur outside the organization, there are also those associated with the organization itself. Organizational stressors can be categorized into organizational structure and climate, management, working conditions, career development opportunity, salary, adequate technology, organizational politics and administrative policies etc.

Group Stressors -The group can also be a potential source of stress. These group stressors can be categorized into three areas : (a) Lack of group cohesiveness, (b) lack of social support, (c) intra individual, interpersonal and inter group conflict.

Individual Stressors-The extraorganizational, organizational and group stressors all eventually get down to the individual level. There is also more research and agreement on possible situational dimensions and individual dispositions that may affect stress outcomes. For example, role conflict, role ambiguity and individual dispositions such as Type A personality patterns, personal control, learned helplessness, self efficacy, and psychological hardiness may all affect the level of stress someone experiences.

Burnout -The term burnout was first coined by the Herbert Freudenberger in 1974 in his book "Burnout" and since then interest in phenomenon of job burnout, as a stress reaction, has increased markedly.He originally defined burnout as "extinction of motivation or incentive especially where one's devotion to a cause or relationship fails to produce the desired results. It is a job related stage." The phenomenon of feeling overstressed is commonly described as being 'burned out'. Burnout is a state of emotional, mental and physical exhaustion caused by excessive and prolonged stress. It occurs when a person feel overwhelmed and unable to meet constant demands. As the burnout continues, the person begin to lose interest or motivation that led him to take a certain role in the first place. It is a syndrome of depersonalization and reduction in personal accomplishment that occurs among individuals who do 'people work' of same kind.

Causes of burnout-There are many causes of burnout. In many cases, burnout stems from the job. But anyone who feels overworked and overvalued is at risk for burnout. Burnout is not solely caused by stressful work or too many responsibilities, other factors also contribute to burnout including life style and other personality traits.

Symptoms of job burnout -Job burnout is caused by a multiplicity of factors and hence its symptoms are also multifarious. Research literature in this area suggests that there are three major areas that are predominant in job burnout experiences (Maslach & Jackson, 1979). The description of these three areas is given as under :

Personal Accomplishment : Jackson et al. (1996) described that a burned out person tends to show a consistently lowered work productivity, loss of commitment to work, feeling of over work, deterioration in performance, withdrawal and alienation from work, total detachment from or over involvement in the job.

Emotional Exhaustion : According to Maslach and Jackson (1986) this includes physical and mental exhaustion. Physical exhaustion is characterised by fatigue, nausea, muscle tension, changes in eating and sleeping habits and a generally lowered energy level (Gaines and Jermier, 1983). Mental exhaustion is characterised by dissatisfaction with self, with the job, with life in general, with colleagues and supervisors. Burned out people feel there is something wrong with themselves because their work does not seem interesting as it was before. Emotional exhaustion includes feelings of frustration, hopelessness, being trapped, depression, sadness and apathy for work. People with these symptoms report suffering from frequent irritation and anger (Perlman and Hartman, 1981; Lee and Ashforth, 1991).

1.2 REVIEW OF LITERATURE : Chen(2010) conducted a study on job satisfaction among teachers. The result revealed that thereis no significant distinction in mean score among government teachers regarding gender and there exists a huge difference in mean score among private school teachers with respect to their gender.Rajvir & Pradeep (2012) conducted a study to analyse the Job Stress and Job Satisfaction

among different faculties of Jawahar Navodaya Vidyalays of India. For the purpose two hundred and forty teachers (120 Male and 120 Female teachers which consists 30 Male and 30 Female teachers belonging to each faculty namely Physical Education, Arts, Commerce, and Science) were randomly selected for the study. The Collected data was analyzed and interpreted on the objectives of the study by using descriptive statistics i.e. Mean and Standard deviation. The data was also analyzed by using percentile technique of statistics. It was found that there is very low degree of Job satisfaction among and very much job stress among teachers of differences faculties of Jawahar Navodaya Vidyalayas of India.Bentea and Anghelache (2012) conducted a study aimed to test if were differences in the levels of job satisfaction varying with the gender, the professional position given by the level of continuous training held (through tenure and teaching degrees) and the dominant needs. The results did not indicate any differences between men and women in overall job satisfaction and its dimensions but satisfaction is affected by the level of continuous training. Also, job satisfaction was found to be influenced by the intensity of the needs of achievement and affiliation.

Bal and Visser (2011) in their study investigated the factors influencing the motivation to continue working after retirement. The findings revealed that organizational support and change of work role were positively related to motivation to continue working. However, contrary to hypothesis, organizational support and change of work role interacted negatively, such that organizational support was only positively related to motivation to continue working for those who wanted to conduct the same kind of work after their retirement.Wagner and French (2010) studied motivation, work satisfaction and teacher change among the teachers. The qualitative analysis also revealed the ways in which interactions between motivation, professional development activities, and work environment support or undermine change.

1.3 RESULT & DISCUSSION :

Table-1.1

Summary of analysis of variance for job stress and burnout of male and female teachers

Variables		Sum of squares	Df	Mean squares	F-value
Job stress		7721.61	1	7721.61	342.20 **
Burnout	Emotional exhaustion	2845.92	1	2845.92	385.68 **
	Depersonalization	322.40	1	322.40	37.63**
	Personal accomplishment	803.60	1	803.60	31.51**

.01 level of significance

Table-1 indicates that the main effect of sex was significant for depersonalization sub-scale of burnout measure [F =37.63, df = 1, $p < 0.01$]. Female subjects showed higher scores [M = 6.51] on the measure than their male counter parts [M = 4.43]..

Table-1 also provide summary of analysis of variance for personal accomplishment sub-scale of burnout. It shows a significant main effect of sex [F =31.56, df = 1, $p < 0.01$] on personal accomplishment. Male teacher had higher mean score [M = 35.52] on the measure than female teachers [M = 32.25].

So it is seen that female teachers scoring higher on stress scale indicate higher on stress scale indicate higher job stress whereas male teachers scoring lower as emotional exhaustion and depersonalization and higher on personal accomplishment sub-scale of burnout indicated lower burnout.

Table-1.2

Means and SDs of scores of male and female teachers on job stress and burnout scale

Variables		Male		Female	
		M	S.D.	M.	S.D.
Job stress		38.01	7.32	48.16	7.71
Burnout	Emotional exhaustion	9.23	3.93	15.39	2.91
	Depersonalization	4.43	3.36	6.51	2.64
	Personal accomplishment	35.52	5.21	32.25	4.94

Above table presents the summary of ANOVA for job stress. The ANOVA indicates significant effect of sex having mean 342.20, degree of freedom 1 at 0.01 of significance. Table-2 indicating means of both groups shows that mean of both groups differ significantly. A close observation of table-2 indicate that female teachers exhibit more stress having mean 48.16 in comparison to male teachers having mean 38.61.

High scores of burnout reflect high scores of emotional exhaustion and depersonalization and low scores of personal accomplishment. As shown in table-1. The analysis of variance yields a significant effect of sex, as means of female subjects were higher [M = 15.39] on emotional exhaustion than the male subject [M = 9.23] with high significant difference [F = 385.68, df = 1, $p < 0.01$].

1.4 CONCLUSION

To compare the job stress and burnout between male and female, the scores obtained by them on these dimensions are analyzed and the mean S.D. and f value are calculated in the table-1 and table-2. It is clear from

analyzed data that secondary school teachers showed significantly more job stress as compared to Graduate and college teachers whereas mean difference between Graduate and college teachers was not significant. For emotional exhaustion subscales of burnout the secondary school teachers differ significantly from their comparable groups where as Graduate and college teachers did not differ significantly. For depersonalization subscale the results show that secondary school teachers differ significantly from Graduate teachers but not from college teachers. The Graduate teachers also differ significantly from college teachers.

****

BIBLIOGRAPHY :

1.Kawakami N., Haratani T., Kobayashi F., Ishizaki M., Hayashi T., Fujita O., Aizawa Y., Miyazaki S., Hiro H., Masumoto T., Hashimoto S. and Araki S., "Occupational class and exposure to job stressors among employed men and women in Japan" Journal of Epidemiology, Japan Epidemiology Association, November 2004; 14: 6; p.p. 204- 211.

2.Kemp, M.A. & Neimeyer, G.J (2010). "Interpersonal Attachment: Experiencing, Expressing and Coping with stress." *Journal of Counselling Psychology*, 46 (3), 388-394.

3.Landsbergis PA, Schnall PL, Belkic K, Baker D, Schwartz JE, Pickering TG (2001). "Work stress and cardiovascular disease. Work." *A Journal of Assessment and Prevention*, 17 : 191-208.

4.Maslach, C., & Jackson, S.E. (1986), "Maslach Burnout Inventory Manual" (2nd ed.), Palo Alto, CA : Consulting Psychological Press.

5.Muto S., Muto T., Seo A., Yoshida T., Taoda K and Watanabe M., (2007). "Job stressors and job stress among teachers engaged in nursing activity" Journal of Industrial Health, pp. 44-48.

6.Olaitan, O.L. et al. (2010), "Prevalence of job stress among Graduate school teachers in South-West, Nigeria" *African Journal of Microbiology Research*, Vol. 4(5), pp. 339-342, 4 March, 2010.

7.Rajvir Singh, and Pradeep Kumar (2012). Survey of Job Satisfaction And Stress Among Teachers of Different Faculties of Jawahar Navodaya Vidyalayas of India." International Journal of research pedagogy and technology in education and movement science, Vol. 01 issue 02, Dec 2012, p.p. 65-76.

8.Rao, Kiran, Moudad, & Subbakrishna, D.K. (2000), "Appraisal of stress and coping behaviour in college students" *Journal of Indian Academy of Applied Psychology*, 26(1&2), 5-13

9.Rhodewalt, F., & Zone, J.B. (1989). "Appraisal of life change, depression, and illness in hardy and nonhardy women." *Journal of Personality and Social Psychology*, 56, (81-88).

10.Rocca, A.D., & Kostanski, M. (2001), "Burnout and Job Satisfaction amongst Victorian Secondary School Teacher : A comparative look at contract and permanent Employment" *Teacher Education*, Change of Heart, Mind and Action, Melbourne.

11.Schaufeli, W.B., & Enzmann, D. (1998), "The burnout companion to study and practice" A critical analysis, London : Taylor & Francis.

Upadhayay, B., & Singh, B. (2012). "Occupational Stress among college and school teachers." *Psycho-Lingua*, 31(1), 49-52.

Cyber Crime and Remedial Measures in India Judicing A Comparative Approach

Dr.Pravin Kumar Chauhan
Assistant Professor
School of Law, (Monad University), Hapur

Abstract-*The internet has transformed the entire planet into a global village. It has established a virtual world with no limits, allowing people to improve both personal and professional connections across national borders. The emergence of globalization has had a significant impact on socioeconomic and cultural aspects of life. Human civilisation has benefited from cyberspace. The internet has brought individuals all around the world together. It is a tremendous tool for growth, but it is also a double-edged sword, giving chances for government, commerce, and industry to flourish and function in the worldwide scene while also providing risk-free opportunities for greedy individuals to conduct crimes.*

Key Words: *Cyberspace, Physical boundaries, Information Revolution, Cyber criminals.*

1.1 INTRODUCTION-Today, our nation's security, economic viability, and citizen health are all dependent on infrastructures for communication, banking, energy distribution, and transportation that are entirely dependent on networked information systems. The difficulty with crimes started or performed online is not so much their identification as it is the nature of the place in which they are perpetrated. Cyber criminals can operate from anywhere in the world, targeting large groups of people or businesses across international borders, and the scale and volume of the crimes, as well as the technical difficulty of identifying the perpetrators and the need to work internationally to bring them to justice, present challenges. Based on the premise that law enforcement struggles to function in the online world, the internet provides new chances for cyber criminals and allows aspiring criminals to enter the environment.

Computers are incapable of committing crimes.As the use of computers became more widespread, so did the advancement of technology, and the term "cyber" became more widely known. The growth of information technology (IT) gave rise to the cyber space, in which the internet gives all individuals with equal access to any information, data storage, analysis, and other services using high technology. Cyberspace, the new frontier, is mankind's collective inheritance, but sadly, some people abuse that heritage, making cyberspace a new frontier for many types of crimes. These crimes are similar to attacks against people', companies', or governments' secure information. These attacks target the virtual body of a person or company rather than the real body.The E-Commerce Act, 1998, established the legislative

foundation for the internet world in India. Following this, there was a need for a fundamental legislation that covered all aspects of the cyber world, therefore the Indian Parliament approved the Information Technology Act, 2000 in May of 2000, with the goal of combating cybercrime and providing a legal foundation for e-commerce transactions. This was India's first cyber legislation, which dealt particularly with cybercrime. It covers a wide range of offenses committed in an electronic format or using computers, computer systems, and computer networks. The Indian Penal Code, 1860; the Indian Evidence Act, 1872; the Bankers Book Evidence Act, 1891; and the Reserve Bank of India Act, 1934 are all amended by this Act.

The Computer Fraud and Abuse Act of 1986, the Data Protection Act of 1998, the Patriot Act of 2001, the Child Pornography Prevention Act of 1996 and the Child Online Protection Act of 1998, the Communication Decency Act of 1996, the CAN- SPAM Act of 2003, and the Anti-Cyber Squatting Consumer Protection Act of 2003 were all enacted to protect computers, computer systems, and computer networks from various forms of cybercrime. To combat cybercrime, the United Kingdom passed the Data Protection Act of 1984, the Access to Personal Files Act 1987, the Copyright (Computer Software) Amendment Act 1985, the Interception of Communications Act 1985, the Local Government (Access to Information) Act 1985, and the Electronic Communication Act 2000. The problem of cyber crime has yet to be overcome, despite considerable legislation.

1.1.2 MEANING AND DEFINITION OF TERM CYBER CRIME-The term "cybernetics collective shown as medium of transmitting, receiving messages and apparatus for managing society" was coined by Norbert Wiener in the 1980s. At the dawn of the twenty-first century, cybercrime was widely used and popular. This term is made from of the phrases cyber and crime. The first term denotes space, while the second denotes a societal evil or wrongdoing committed in an illegal manner. In a nutshell, it is a highly designed and modelled machine that is loaded with multiple software applications and hardware devices to form it and process data of human interest that is saved, exchanged, or transferred. True, there is no contemplating element in cyber and real crime, and no specific definitions are given; both exist in the real world; the only difference is that one is carried out by a person, while the other is carried out with the assistance of computers by experts known as hackers or programmers who know how to break specific codes of accounts, log in Ids, or passwords to which he was not granted access but managed to gain access.Although several authors have sought to define the word "cybercrimes," the laws of India, the United States of America, and the United Kingdom have not yet done so. Strangely, the Information Technology Act of 2000, which was further updated in 2008, never defines nor uses the word "cyber crime" or "cyber offence." In reality, although being updated by the Information Technology (Amendment) Act of 2008, the Indian Penal Code, 1860, never once refers to "cyber crime."In this regard, Indian law is now comparable to that of the United States and the United Kingdom. Mens rea is not recognized under American law, but it is in both Indian and British law. In India and the United Kingdom, but not in the United States of America, criminal responsibility is presumed. In India, it is only considered a crime if it was done with the aim to gain or lose money or property illegally.

1.1.3 CYBER TERRORISM-Under the original IT Act, 2000, there was no particular clause in India that defined sending threatening emails, which could result in harassment, anxiety-inducing behavior, panic, or attempts to sow discord, a criminal offense. However, the Information Technology (Amendment) Act of 2008 now specifically mentions cyber terrorism and defines it under section 66F with the death penalty, which is the Act's harshest penalty. Section 66 F's Clause 1(A) addresses cyberterrorism that directly affects or poses a threat to directly influence the populace with the intent to jeopardize the unity, integrity, or security of the country and sow fear among the populace. This section's clause 1(B) addresses cyberterrorism that directly harms the State by unlawful access to confidential information, data, or computer databases. Because national property was damaged and the integrity of the country was at risk, Section 124 A of the Indian Penal Code may also be invoked.Mehndi Masroor Biswas, a well-known supporter of the Islamic State on Twitter, was arrested in December 2014 and charged with cyberterrorism under section 66 F of the Information Technology Act of 2000, advocating terrorism, facilitating terrorist recruitment, and supporting a terrorist organization under the Unlawful Activities (Prevention) Act of 1967, as well as sedition and waging war against India under the Indian Penal Code. According to the Indian Express, a Bangalore special terrorism court determined that the police have enough evidence to charge him.In the case of United States v. William Sutcliffe, the defendant received a term for posting thousands of social security numbers online and making interstate threats to kill and injure people. The United States District Judge placed limitations on him, forbidding him from using a computer after his release and forbidding him from speaking to victims or witnesses.The statement was sent on January 12, 2015, using the U.S. Central Command's Twitter and YouTube accounts that the CyberCaliphate hacking

organization had gained access to. "American warriors, watch your back, ISIS. We are coming." Hackers from the Cyber Caliphate organization broke into Newsweek, Latin Times, and WBOC News' mobile messaging service on February 10, 2015. Then they tweeted, "Bloody Valentine's Day, #Michelle Obama! ", via the Newsweek Twitter account. We're keeping an eye on you, your wife, and your daughters.

In contrast to India and the United States of America, the United Kingdom passed the Data Protection Act, 1984 before the Terrorism Act, 2000, and in the year 1990 in order to prevent and control cyber terrorism. This law defines the term "Terrorism" as including the use or threat of action that is designed seriously to interfere with or seriously disrupt an electronic system in order to influence the government or to intimidate the public or a section of the public, and made for those purposes. According to the Substantial Crime Act of 2015, if any unlawful act causes serious harm to human welfare or national security, the person is subject to a maximum punishment of life in prison.

OBJECTIVES OF RESEARCH-The goal or reason for which we wish to investigate a topic in order to acquire relevant information and data is referred to as the research objective.

To study the nature of cyber crime s and to explain the mode and manner of committing various types of civil activities in cyberspace.

To suggest way to cyber law in India must be in strong position and legally sound.

RESEARCH METHODOLOGY-The current study is based on a non-empirical or doctrinal research approach that examines doctrines, legal notions, or propositions by analyzing existing legislative provisions and case law and utilizing reasoning power. By analyzing main and secondary legal sources such as legislations, case laws, law textbooks, commentaries, and official websites, an attempt was made to validate the hypothesis using legal reasoning or logical deduction. To access the effect of cyber crimes, the current study effort depends on academic works and journalistic reporting. The goal of applying this technique is to determine a legal norm for dealing with cybercrime on a national and international level, as well as to reach a decision and provide recommendations.

COMPARATIVE STUDY IN RESPECT OF VARIOUS CYBER CRIMES-Globally, online crime has grown dramatically; nevertheless, individuals working in the criminal justice system have lacked adequate and current awareness of the gritty realities of contemporary cyber crime. In order to access profitable secret data, a lone hacker must overcome seemingly insurmountable security precautions, according to the popular media's portrayal of cybercrime. These kinds of crimes are extremely uncommon, but cybercrime is all too prevalent. Far more often than they use it to violate the security of nations on a national and international level, cybercriminals use the internet to conduct fraud, harass victims, download pornographic material that is unlawful, or steal music. According to research, the United States of America and the United Kingdom are the two traditional titans that are putting up a strong fight against the onslaught of silicon. The US has the most cyber-specific laws, followed by the UK, though judges in the UK were hesitant to apply traditional laws to novel computer situations and pushed for the need of a technology-specific legislation. In addition to having cyber laws, the UK has also applied traditional laws to the tricky areas. Because of this, the legal systems of these two nations have frequently been used as comparison points in research.

All regional organizations and State governments have urged lawmakers to establish legislation dealing with these crimes; as a result, the majority of countries started doing so. Cybercrimes are modern in nature and have an impact on the entire world. In this chapter, an effort has been made to examine the shortcomings and inadequacies of Indian cyber laws by comparing their current state with that of the United States and the United Kingdom. A comparison study is described as follows:

The Electronic Communication Privacy Act, 1986 (ECPA) is a criminal wiretap act in the United States of America that refers to "anyone" who violates the law and who is liable under section 2511 (1). (a). The Online Privacy Protection Act, 2000 was passed to protect people's privacy on the basis of the Federal Trade Corporation's suggestion. The Organization for Economic Co-operation and Development's eight principles for the protection of personal data are contemplated by the CDA in the United Kingdom.

JURISDICTIONAL COMPARATIVE APPROACH

As there is no international instrument relating to cyber jurisdiction, every state should develop its own national law with extraterritorial jurisdiction to cover extraterritorial character of internet activity. The UN panel on international trade law created a model legislation on electronic commerce in 1996 that addressed this issue among others. The General Assembly then ratified this law by resolution. The General Assembly proposed that all states give the aforementioned model law on commerce favorable attention. The Information Technology Act of 2000 was passed by India, a signatory to the model law, to create legislation that complies with it. Another attempt has been made to do a comparative analysis of the current state of national and international legislation on the jurisdictional question. The following is a mention of the comparison study:In India, sections 1 (2) and 75, which must be read in conjunction with the pertinent IPC

laws, specify the jurisdiction under the IT Act. According to Section 1(2) of the IT Act, 2000, only Indian courts have jurisdiction over cybercrimes. Civil jurisdiction is absent from the discussion. Since the State of Jammu and Kashmir is not addressed in the IT Act, the IT Act applies to the entire State of Jammu and Kashmir. Extraterritorial jurisdiction over offenses or violations committed outside of India is provided by this section.Infringers of the Information Technology Act of 2000 who are located beyond the borders of India are subject to prosecution under Section 4 of the Indian Penal Code, 1860. This clause's peculiarity, which has no borders due to cyberspace, may be explained.

JUDICIAL RESPONSE IN INDIA-Despite the lack of legislation, the Indian judiciary is actively combating cybercrime. With the adoption of the Information Technology Act, India joined a small group of nations with cyber laws in place. Because the primary goal of the Information Technology Act of 2000 was to encourage e-commerce. In Yahoo! Inc. v. Akash Arora and another, which is regarded as the first case where an Indian Court rendered its verdict relating to domain names, the question of whether domain names are entitled to the same protection as trademarks was raised. In the case of Rediff Communications ltd. v. Cyberbooth, the Yahoo ruling was once more affirmed. The Vishakha v. State of Rajasthan. Prior to this case, India had no laws addressing workplace harassment. Suhas Katti v. State of Tamil Nadu, however, merits special attention. In addition, Shreya Singhal v. Union of India is the case in light of a number of arrests made in accordance with section 66A of the Information Technology Act, 2000. This writ petition was filed in the public interest in accordance with Article 32 of the Indian Constitution, seeking to invalidate section 66A.

JUDICIAL RESPONSE IN UNITED STATES OF AMERICA-The United States Code has a variety of statutory provisions that restrict the use of computers and computer technology for the aim of preventing and controlling cybercrimes, in contrast to India. The United States Department of Justice recommends that judges in federal court penalize those who commit computer crimes in the same way that they recommend punishment for all other federal offenses under the US Sentencing Guidelines (USSG). One of the key instances in the United States involving cyber fraud is United States v. Morris, case number . The Ninth Circuit ruled on the application of the US Sentencing Commission Guidelines (USSG) in the case of United State v. Pirello, which involved a defendant who sold computers online falsely. The Computer Fraud and Abuse Act's extraterritorial applicability was discussed in the case United States v. Ivanov. According to the Computer prominent case law in India on workplace harassment isFraud and Abuse Act, the accused in this case was accused of gaining unauthorized access to a web hosting service's computer systems. He argued that because he was in Russia when the offense was committed, he is ineligible for prosecution under the aforementioned Act.

CONCLUSION-Since the dawn of society, man has always needed change and been eager to modify his way of life. Since the dawn of civilization, man has been driven by the desire to advance, and in order to do so, he has consistently attempted to improve the situation on all fronts. This caused a significant amount of social growth. Due to this quality of the human being, many revolutions occur. The civilization and its way of life changed as time went on. Internet is arguably the most significant advancement of all the substantial benefits created by civilization to date. having a significant impact on human existence globally. The internet had a significant impact on how each civilization and nation conducted its daily business.The Indian legal system serves as a protector, supplier, promoter of economic business, and arbitrator because it is a developed nation and welfare state. The Indian legal system and the global culture both greatly influenced the internet, thus the legal system must now adopt various steps. The internet has both generated and destroyed culture in certain ways, making the job of the administrative authority more crucial and significant today. The usage of the internet and other connected services is governed by rules and ordinances that have been created by the Indian legal system. The law enforcement authorities have introduced a number of measures to control internet and computer users. Additionally, cybercrime is on the rise in our culture. Cybercrime is a type of crime in which the internet and computers are used as tools to commit the crime. The executive authorities are more involved in regulating internet use and communication methods than any other wing is.

****

Bibliography

1. Donn B. Parker, "Automated Crime in Cyber Crime", *International Conference Course Book*, 1997.
2. Veer Singh and B.B. Parsoon, "Cyber Crimes and the Need for National and International Legal Control Regimes", *PULR*, vol. 44, 2002, p. 39.
3. Justice T. Ch. Surya Rao, "Cyber Laws- Challenges for the 21st Century," Andhra Law Times, 2004, p. 20.
4. Justice T. Ch. Surya Rao, "Cyber Laws- Challenges for the 21st Century," *Andhra Law Times*, 2004, p. 24.
5. Talat Fatima, *Cyber Crimes*, 2011, p. 453.
6. Amita Verma, *Cyber Crimes & Law*, 2009, p. 67.
7. "Lauri Love the Student Accused of Hacking the US", a*vailable at:* http://www.computerweekly.com/feature/Lauri-Love-the-student-accused-of-hacking-the-US (visited on April 10, 2017).
8. US Department of Justice (2007).
9. "Cyber Pornography", *available at:* http://www.lawyersclubindia.com/articles/Cyber-Pornography- 6396.asp (visited on April 12, 2016).
10. "Cyber Stalking", available at: http://en.wikipedia.org/wiki/cyberstalking (visited on April 12, 2016).
11. (2001) 255 F. 3d 728.
12. (1984) 1 WLR 962.

Impact of Perception on Performance Appraisal and Job Satisfaction on Employee Performance With Reference to Pharmaceutical Companies in Banglore

DIVYA K
Research Scholar
Department of Studies In Commerce,
Manasagangothri, University of Mysore, Mysore-570006

DR. K. NAGENDRABABU
Professor
Department of Studies In Commerce, Manasagangothri, University of Mysore, Mysore-570006

INTRODUCTION-Employees are encouraged to perform well by giving rewards and recognition [Zaman, Arokiasamy, Hamid (2021); Parvin, M.M. & Kabir, M.M.N. (2011); Rajasekar D. & Sudheer, A.K. (2019)]. It could be given in the form of promotion, increment, etc. In order to give fair recognition, it is made on the basis of performance of the employees. For this purpose, the employees' performance is measured using performance appraisal methods. These methods can be classified as traditional and modern performance appraisal methods. The performance appraisal system is the best way to determine the performance of the employees. It varies from one firm to another. The performance appraisal is entrusted to the Human Resources (HR) Department. They decide the appropriate performance appraisal method. The method of performance appraisal is changed whenever required. A fair performance appraisal system should be transparent, unbiased and well explained to the employees (Zaman, L. 2011). It is the responsibility of the HR department to gain the confidence of the employees about the performance appraisal methods [Ghauri, E. & Neck, P.A. (2014)]. In this regard, the HR department specifies the do's and don'ts and certain criteria is given to the employees to explain how their performance is to be measured. Once an employee understands the performance appraisal system he/she performs accordingly. Unless the employees realize the performance appraisal is made for judging their performance for remuneration and recognition purposes, they express their dissent about the performance appraisal. The employees are motivated through performance appraisal. The employees can understand their level of performance through performance appraisal system. Therefore, performance appraisal system makes the employees feel good. There is evidence from the previous studies that performance appraisal has strong relationship with job satisfaction and performance [Al-Jedaia, Y & Mehrez, A. (2020); Haleema, K.S., Umasankar, M. & Padmavathy, S. (2020); Girma, T., Lodesso, S.L. & Sorsa, G. (2016); Bekele, H. (2021); Jha, R., Pandey, D.K. & Vashisht, A. (2016)].

OBJECTIVES

1. To investigate the relationship between demographic variables (age, education, income and experience) and perception towards performance appraisal.
2. To examine the impact of performance appraisal on perception and job satisfaction of employees.
3. To analyze the influence of perception and job satisfaction on employee performance.

HYPOTHESES

1. There is no significant relationship between demographic variables and perception towards performance appraisal.
2. The association of performance appraisal with perception and job satisfaction of employees is insignificant.
3. The perception and job satisfaction has no significant influence on employee performance.

METHODOLOGY-

In this study, an attempt is made to develop a model for determining the interrelationship between performance appraisal and employee performance. The perception of employees about performance appraisal makes them satisfied with job. A satisfied employee is motivated to perform better than the past. Thus it is considered that performance appraisal influences the perception, job satisfaction and performance of the employees. It is explained in the proposed model as follows:

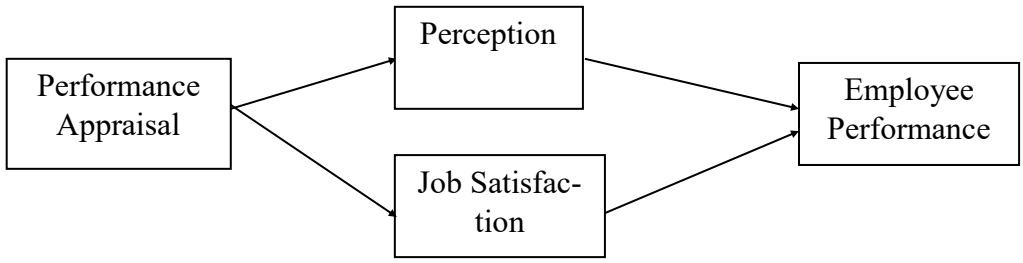

Proposed Model

Pharmaceutical industry is one of the industries where performance appraisal is made regularly [Gupta, V. & Swaroop, A. (2012)]. The major pharmaceutical companies are established in Bangalore. Hence, it is deemed appropriate to conduct this study among the employees working in Pharmaceutical companies in Bangalore. For this purpose, 150 pharmaceutical employees in Bangalore were selected under systematic random sampling. A well drafted questionnaire was used to collect the primary data from the selected employees. The data collected from sample respondents were analyzed using appropriate statistical tools like Chi-square test, ANOVA and Multiple Regression analysis. The proposed model is tested using these analyses.

RESULTS AND DISCUSSION

Demographic Variables and Perception towards Performance Appraisal

Factors	Components	Chi square Value	p value	Result
Age	Purpose	11.767	0.465	NS
	People	13.241	0.039	*
	Practices	21.003	0.013	*
	Criteria	7.447	0.281	NS
Education	Purpose	16.677	0.162	NS
	People	13.507	0.036	*
	Practices	24.101	0.004	**
	Criteria	14.823	0.022	*
Income	Purpose	10.353	0.585	NS
	People	3.922	0.687	NS
	Practices	14.138	0.118	NS
	Criteria	7.372	0.288	NS
Experience	Purpose	16.53	0.168	NS
	People	9.673	0.139	NS
	Practices	18.809	0.027	*
	Criteria	8.826	0.184	NS

* Significant @ 5%; ** Significant @ 1%; NS – Not Significant

The age-wise analysis revealed that the perception of employees towards purpose of performance appraisal has no significant relationship whereas perception towards people and practices has been significantly associated with age of the employees as indicated by their respective p-values. The relationship between age of the employees and their perception towards criteria of performance appraisal is found to be insignificant. The analysis based on the education of the employees denoted that there was no significant association with perception on purpose while the association with perception on practices was highly significant and it was further observed that the relationship with perception on people and criteria was significant. It is further observed that income of the employee has no significant association with the perception on all the components of performance appraisal – purpose, people,

practices and criteria. Experience of the employees and their perception towards practices were found to be significantly related while the relationship of experience with the perception of employees on purpose, people and criteria was not significant.

Perception and Job Satisfaction

Components	Source of variation	Sum of Squares	DF	Mean Square	F value	P value	Result
Purpose	Between Groups	174.107	4	43.527	8.792	0.000	**
	Within Groups	717.867	145	4.951			
	Total	891.973	149				
People	Between Groups	162.858	2	81.429	16.417	0.000	**
	Within Groups	729.115	147	4.96			
	Total	891.973	149				
Practices	Between Groups	61.616	3	20.539	3.611	0.015	*
	Within Groups	830.357	146	5.687			
	Total	891.973	149				
Criteria	Between Groups	54.825	2	27.412	4.814	0.009	**
	Within Groups	837.148	147	5.695			
	Total	891.973	149				

* Significant @ 5%; ** Significant @ 1%; NS – Not Significant

It is proclaimed from the above table that the perception of employees towards purpose of performance appraisal has significantly and highly influenced the job satisfaction of the employees. There was a strong and significant relationship between perception of employees towards people involved in performance appraisal and job satisfaction of employees. The job satisfaction of employees varied significantly in accordance with the perception of employees on practices of performance appraisal. The perception of employees towards criteria followed for performance appraisal has strong significant association with the job satisfaction.

Variables Entered/Removed

Model	Variables Entered	Variables Removed	Method
1	Job Satisfaction, PA Practices, PA Criteria, PA People, PA Purpose	.	Enter

In the proposed model determining relationship between predictors and dependent variable, five variables – perception on performance appraisal practices, performance appraisal criteria, performance appraisal people, performance appraisal purpose and job satisfaction have been considered as predictors and employee performance has been taken as dependent variable. All the requested variables have been entered in the proposed model.

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error
1	0.618	0.382	0.361	2.145

The model summary reveals that the coefficient of correlation between predictors and dependent variable was 0.618. It denotes that there exists 61.8 per cent relationship between these variables. The coefficient of determination was observed to be 0.382. It implies that the employee performance has been influenced by the predictors to the extent of 38.2 per cent. Therefore, there could be certain other variables determining the employee performance apart from the predictors which could influence 61.8 per cent of the employee performance.

Employee Performance $y = \alpha+\beta_1x_1+ \beta_2x_2+ \beta_3x_3+ \beta_4x_4+ \beta_5x_5$

Coefficients

Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t value	p value	Result
		B	Std. Error	Beta			
1	(Constant)	10.542	1.077		9.791	0.000	
	PA Purpose	0.752	0.182	0.393	4.123	0.000	**
	PA People	0.664	0.273	0.222	2.433	0.016	*
	PA Practices	-0.329	0.147	-0.152	-2.241	0.027	*
	PA Criteria	-0.607	0.247	-0.18	-2.456	0.015	*
	Job Satisfaction	0.103	0.081	0.094	1.266	0.208	NS

Dependent Variable: Employee Performance

Employee Performance $y = 10.542+0.752x_1+ 0.664x_2- 0.329x_3- 0.607x_4+ 0.103x_5$

It indicates that one unit change in the perception towards purpose causes 0.752 unit change in the employee performance while one unit change in the perception towards people results in 0.664 unit change in the employee performance. Further observation indicates that one unit of positive change in the perception towards practices results in 0.329 units of negative change in the employee performance. Negative unit change of 0.607 has been caused by a positive unit change in the perception towards criteria. One unit change of job satisfaction has resulted in 0.103 unit change of employee performance.

CONCLUSION-Employee performance is an important factor in determining the success of an organization. Firms measure the employee performance by adopting various performance appraisal methods. The pharmaceutical companies in Bangalore have been adopting different methods of performance appraisal. The study reveals that the perception of employees on practices varied in accordance with age, education and experience whereas the perception on people differed with reference to age and education. Education of employees has made significant difference in the perception of employees towards criteria of performance appraisal. The perception of employees on purpose, people, practices and criteria has made significant impact on the job satisfaction. The employee performance has been positively influenced by perception on purpose and people involved in performance appraisal but negatively influenced by perception on practices and criteria of performance appraisal.

****

REFERENCES:

1. *Al-Jedaia, Y & Mehrez, A. 2020. The Effect of Performance Appraisal on Job Performance in Government Sector: The mediating role of motivation. Management Science Letters. 10(2020): 2077-2088.*
2. *Bekele, H. (2021). The Effect of Performance Appraisal on Employee Satisfaction: The Case of Ethiopian Electric Utility. Thesis submitted to St. Mary's University.*
3. *Ghauri, E. & Neck, P.A. (2014). Performance Appraisal and Employees' Perceptions. International Journal of Contemporary Management. 13(2): 8-22.*
4. *Girma, T., Lodesso, S.L. & Sorsa, G. (2016). The Effect of Performance Appraisal on Employee Performance: A Survey on Administrative Staff of Hawassa University. IOSR Journal of Business and Management. 18(3): 36-44.*
5. *Gupta, V. & Swaroop, A. (2012). Comparative Study of Performance Appraisal on Two Pharmaceutical Organizations in Madhya Pradesh. International Journal of Engineering Sciences & Management. 2(2): 248-260.*
6. *Haleema, K.S., Umasankar, M. & Padmavathy, S. (2020). Impact of Workplace Practices on Workforce Satisfaction in Siddha and Ayurveda Pharmaceutical Industry. International Journal of Scientific & Technology Research. 9(1): 3858-3561.*
7. *Jha, R., Pandey, D.K. & Vashisht, A. (2016). A Study on Employee Performance Appraisal and Job Satisfaction in Health Care Sector. International Journal of Advance Research and Innovative Ideas in Education. 2(5): 988-994.*
8. *Modi, A., Kumar, S.J. & Muralidhar, A. (2017). Employee Performance Appraisal System Based on Ranking and Reviews. Asian Journal of Pharmaceutical and Clinical Research. Special Issue (April): 495-498.*
9. *Parvin, M.M. & Kabir, M.M.N. (2011). Factors affecting employee job satisfaction of pharmaceutical sector. Australian Journal of Business and Management Research. 1(9): 113-123.*
10. *Rajasekar, D. & Sudheer, A.K. (2019). A Research on Employee Involvement in Pharmaceutical Industry in India. International Journal of Innovative Technology and Exploring Engineering. 8(6S4): 420-423.*
11. *Zaman, Arokiasamy & Hamid (2021). A Study on factors influencing Employee's retention in Pharmaceutical Industry in Malaysia. Electronic Journal of Business and Management. 6(1): 81-89.*
12. *Zaman, L. (2011). Performance Appraisal Process of Pharmaceutical Companies in Bangladesh: A Case Study on Glaxo Smith Kline Bangladesh Limited. Journal of Management and Sustainability. 1(1): 141-146.*

Prospects, Problems and Challenges of Indian Ports

MANASA K N
M.Com.Assistant Professor
Seshadripuram Degree College, Tumkur

SRIKANTHNAIK H
M.Com, NFSC-JRF, NET, K-SET, (Ph.D.)
Junior Research Fellow, Seshadripuram First Grade College, Yelahanka, Bangalore A Recognized Research Centre, University of Mysore

Abstract-In the view of the fact that makes it easier to transport passengers and goods as well as goods for import and export, India's ports are critical to the country's economic growth. However, in order to guarantee the sector's continued expansion and effectiveness, a number of obstacles must be overcome. Overcrowding and a lack of facilities and equipment to handle the rising trade volume plague many Indian ports. The need for streamlined and effective logistics is another obstacle. Other ports in the region are also putting more pressure on Indian ports to compete. To remain competitive, Indian ports must therefore work to increase business and increase efficiency. The Indian port industry also offers a number of opportunities for expansion and development in spite of these difficulties. By investing in port infrastructure, logistics, and skill development, the "Sagarmala" program of the government aims to make Indian ports more competitive. India's expanding trade with other nations and its substantial domestic market also present opportunities for the port sector's expansion.In conclusion, the Indian port sector faces a number of issues, including the need for modernization, efficient logistics, and increased competition. However, the Sagarmala program, which focuses on infrastructure, logistics, skill development, and expanding trade with other nations, also presents opportunities for growth and development.

Keywords: Indian ports, Sagarmala, Infrastructure**.**

Introduction-India, once known as the "golden bird," is once more ascending to the top of economic development year after year. In terms of GDP, India is the fifth largest economy in the world, trailing only the Western and European economies. In addition, India's economy continues to expand at the fastest rate in the world. India's economy is now worth more than $3 trillion. By 2030, India's economy is expected to be the third largest in the world and the second largest in Asia.Despite the fact that India's ports make a significant contribution, it is anticipated that the country will achieve $5 trillion through ports between the years 2025 and 27. The importance of ports and their role as trade gateways Additionally, ports have played a significant role in our nation's history. Indian ports are centered on shipping lines for global trade. For world powers, the Indo-Pacific region has developed into a strategic location. From Malacca Strait to the Strait of Mormuz and from the South China Sea to the Suez Canal India, a superpower, dominates Indo-Pacific demand, in which our ports will play a significant role.

Literature Review-The need to modernize and expand port infrastructure is one of the main issues facing the Indian port industry. Many of India's ports, according to studies, are overcrowded and lack the equipment and facilities needed to handle the growing volume of trade. To meet the demands of a rapidly expanding economy, the port infrastructure must be upgraded and expanded (**Kumar and Das, 2015; Goswami and other, 2018**).

Logistics is yet another major obstacle that the Indian port sector must overcome. Due to a lack of coordination between the various government agencies and private stakeholders involved in the shipping process, Indian ports frequently experience bottlenecks and delays. In order to guarantee the smooth movement of goods through India's ports, studies have emphasized the significance of improving logistics (**Sharma et al., 2016; Jha and Upadhyay, 2019)**other ports in the region are also competing more aggressively with Indian ports. Trade could be diverted away from India as a result of the expansion of new ports in Bangladesh and Pakistan, two of India's closest neighbours. Indian ports must increase their efficiency and attract more business in order to remain competitive, according to studies (**Sengupta et al., 2018; Agarwal and Srivastava, 2020**).

The Indian port industry also offers a number of opportunities for expansion and development in spite of these difficulties. By investing in port infrastructure, logistics, and skill development, the "Sagarmala" program of the government aims to make Indian ports more competitive. According to (**Vijayakumar and Jayakumar ,2017**), studies, this program has the potential to drive significant growth in the Indian port sector. Bhoi and co., 2019).Additionally, India's extensive domestic market and growing trade with other nations present expansion opportunities for the port sector (**Chowdhury et al., 2018; 2020, Sharma and Puri**).

The literature review highlights that Indian ports are confronted with a number of difficulties, including the requirement for modernization, effective logistics, and increased competition. However, it also provides growth and development opportunities through programs like the Sagarmala program and its expanding trade with other nations.

Research Objectives-This study's research objective would be to investigate and evaluate the Indian port

sector's current prospects, issues, and challenges.

1. To highlight the evolution and acts relating to ports in India
2. To examine the incentives of the government to promote ports in India
3.To Investigate the opportunities for growth and development within the Indian port sector
4. To analyse the challenges of Indian ports to promote trade and development

Research Methodology-The study's sole purpose is to provide a theoretical overview of Indian ports.The information is derived from secondary sources. The research is based on books, articles, theses, and destinations.

Analysis &Interpretation

Evolution of Ports in India-During the third millennium BCE, the Indus Valley civilization had maritime relations with Mesopotamia. After Rome's occupation of Egypt, the Roman historian Strabo claims that Roman trade in India significantly increased. In the beginning, silk was traded; later, following the European invasion, India became the exporter of spices. India's maritime trade and naval power were significantly superior and more powerful even at that time. During that time, Columbus set out to find a prosperous India, but he only made it to the United States in the 15th century. When Vasco-de-Gama arrived in India, it was surrounded on three sides by water—the Arabian Sea, the Indian Ocean, and the Bay of Bengal.The ocean covers 70% of the planet, with the Indian Ocean taking up 14%. Africa covers the west and Australia covers the east. India serves as a link between the industrialized and developed nations of the West and the developing and agriculture-based nations of South East and East Asia where the Bay of Bengal facilitates trade. Through the Suez waterways, India imports ready goods and machinery and sends raw materials and food to Europe. The Uttamashu island sea route facilitates communication between South Africa and West Africa. India will also trade sugar, wool, and other commodities via this route.India, Japan, and China are connected by the Singapore Sea Route, which also connects Canada, New Zealand, and India. Where India imports iron and steel, sugar pots, toys, chemical substances, silk garments, and machines. Additionally, India exports jute, iron, manganese, cotton, and iron.India will import raw wool, fruits, and steel via the East Sea route, which connects Australia and India. Additionally, it exports tea, flax seeds, engineering tools, clothing, and other products. India comes in at number 17 in the English, French, Japanese, and Italian merchant marines.

Trade before and after Independence-Before India gained independence, Karachi was a significant port. The Kandla port in Kutch was built following Independence. Deendayal port replaced Kandla port in this location. Following the liberation of Goa in 1961, the mormugoa port was designated as an important port on December 19, 1961. There are more than 150 smaller ports and 13 major ports in India. India has a significant opportunity to grow its port industry because of its location. This allows the government to expand river and sea transportation. The Indian economy has grown by 5 trillion dollars thanks to port. The Indian government made the decision in 2016 to construct five national waterways that will connect 111 brand-new river routes that had been transformed into national waterways.Inland waterways The sagarmala project was started by the government. Under the sagarmala project and the National waterways Act, the government is developing 111 new river routes that are 20,275 kilometers long and will serve as national waterways. In the past ten years, the government has introduced design, build, finance, operate, and transfer and started inviting private investments in important ports.National waterways 1 has a length of 1620 kilometers and is on the Ganga between Haldia and Allahabad. National waterways 2 has a length of 891 kilometers and is on the Brahmaputra between Sadia and Dhubri. On the western coast, National waterways 3 was developing between Kerala, Goa, and Maharashtra and began developing coastal national cargo.

Indian port investment abroad-By expanding the port, we will have more trade options and can strategically strengthen the nation. Additionally, India made financial investments in the expansion of ports in other nations, including the expansion of Chabahar port in the Gulf of Oman. where it transitions into West Asia via Iran. where Chabahar port has been designated a free trade zone by Iran. India, Afghanistan, and Iran will benefit from the development of Chabahar port, as India will be able to easily reach Iran via waterways. so that they won't be able to rely on Pakistan. India will also save money on transportation costs when it imports crude oil through Chabahar port. In 2018, India also constructed a military base in Oman, investing 1.8 billion dollars. Bangladesh also granted India permission to use its Chittagong Port. Since the 1965 Indo-Pak war, India was not allowed to use this port. India can also focus on the growth of the north-eastern states through these ports, which also helps improve its relationship with Bangladesh. Long-distance cargo ships make intermediate stops at ports known as ports of call to refuel and load and unload certain goods. India's largest South Asian trading partner is now Bangladesh. Through a comprehensive economic partnership agreement, trade between the two nations currently exceeds $10 billion.

Alternative international ports for India-China constantly interferes in the region that India uses for more than half of its maritime route. Additionally, India is

working to finish the Kaladan multi-model transit transport project in Burma as an alternative to the strategically important Chittagong Port.In a sense, India is becoming the blue economic power and wants to take more power from the Indian Ocean. The Indian government is developing a plan to improve the entire Indian Ocean, including the sea route and cultural landscape. To combat China's dominance, India is working to open the old sea route with countries in the Indian Ocean.

Ports in India-Kandla port It was founded in 1950 and is situated along India's western coast. Before India gained independence, the primary port was in the Kutch area of Gujarat; after India gained freedom, activities were moved to Kandla port. The Indian government designated it as a major port on March 29, 1955. Navi Mumbai port It was founded on May 26, 1989, and is situated in the Raygadh neighbourhood. It was created to lessen the load on the Mumbai port. It manages little about 56% of all containers. It ranks among the top 30 maritime ports in the world. It also goes by the name "King of the Arabian Sea."

Mormugoa port It is one of India's oldest ports, having been established in 1885 near the Zuari River, which is close to the Arabian Sea. Declared a Major Port of India in 1964. This port's main export is iron ore. It's also a popular tourist destination in Goa.

New Mangalore Port Mangalore Port is in Karnataka, close to the Arabian Sea and the gaurapura river. The other name for it is panambur port. It was opened on May 4, 1974, by Indira Gandhi, making it India's seventh-largest port. Coffee, granite, cashew, manganese, and timber are exported, while cargo is imported.

Kochi port

India's major natural port is between Vallarpadam and Willingdon Island. Founded in 1928, it houses shipbuilding facilities. It is on the route between the Indian Ocean and the Arabian Sea. This port can accommodate ships up to 500 feet in length. Mineral oil, spices, coffee, tea, salt, fertilizers, and spices are traded.

Kolkata port

On the Hooghly River in West Bengal, it is 128 kilometers from the Bay of Bengal. It is the oldest port in India, and the East India Company built it. It also has a twin dock system. Machine oil, crude oil, paper, fertilizers, and chemicals are primarily imported from Australia and Southeast Asian nations, along with jute, tea, coal, steel, copper, and iron. Leather was also exported.

Paradip port It was founded on January 3, 1962, under the direction of the state government. It is situated between the Bay of Bengal and the Mahanadi River. It was designated as one of India's eight major ports in April 1966. It was the first major port on the eastern coast after independence. From this port, large quantities of iron are exported to Japan, along with coal and iron ore.

Prospectsof Indian Ports-India has 205 notified iron and intermediate ports, in addition to 12 major ports. contributes to improved relations with other nations and commerce. India is the 16th largest maritime nation. Because of the importance of the industry, the government has allowed up to 100 percent FDI in this area. The Indian constitution and statutory ACTs have detailed provisions about how ports are run.

ACTS that control the ports

The coasting vessels Act of 1858
The Indian ports Act of 1875
The Indian ports Act of 1908
The Merchant Shipping Act of 1958
The MPT Act of 1958.

Bills to reform Indian ports have been approved by major ports authorities. The 1963 ACT, which governs 12 major Indian ports, takes its place. The ACT would also include provisions for resolving disputes with private players, so the new law would take private players and the public pvt partnership (ppp) model into account.MPT ACT 1963 It aids in power distribution management. It aids in loan acquisition. It helps in port trust protections Helps in the development of advisory groups of sheets. assists in the transfer of assets from the union government to the boards.The MPT ACT, 2020 Major Ports Authorities Act, 2020 gives (major) much greater autonomy to the port's boards regarding the management of ports. Currently, the union govt is the apex authority in regard to governance of the major ports. Once enacted, all major ports are governed through boards of ports trusts. The World Bank ranks India as the second most affected nation by job losses caused by COVID-19.

Incentives for Promotion of Ports in India-India is the world's third-largest producer of marine fish and the second-largest producer of freshwater fish. India also engaged in shipbuilding, marine biology, offshore wing biotechnology, and shipbreaking.

In comparison to 2003, when there were only 1933 people working in the port industry, there are now 19,102 people working there in 2017.

When compared to the major ports, the cargo volume in minor ports has increased significantly over the past five years.The Indian government has planned to invest Rs 2 billion in the development of shipping waterways as part of its "Blue economy" policy in the Union Budget 2021-2022.

Sagarmala project-In 2015, the sagarmala project's institutional framework was primarily approved by the prime minister.The project's goal was to improve port infrastructure's efficiency and speed up port-led development.The government must improve the institutional framework, which includes inter-agency interventions and institutional interventions.The ministry of shipping, the ministry of

Road transportation and Highways, the ministry of the environment, forests, and climate change, the ministry of revenue, the ministry of expenditure, the ministry of defense, the ministry of home affairs, Indian Railway personal service, and the chief executive officer of Nithi Ayog are working together to finish these projects. 12 smart cities will be built at ports with an investment of RS 50,000 crore.

Challenges and Opportunities-The lack of a sufficient road network, inadequate cargo handling equipment, inadequate dragging capacity, a dearth of technical experts, and inadequate handling equipment all contribute to the longer completion times of port projects. In order to bring Indian ports up to international standards in terms of performance and capacity, the maritime agenda has been established.

The Sagarmala Project, which was launched in 2015, aims to develop a comprehensive port and infrastructure along the 7516-kilometer coastline by modernizing, automating, and computerizing 574 projects. The Major Port Act 2021 replaces the Major Ports Trust Act 1961. In coastal areas, the creation of ports and the development of infrastructure result in an increase in economic activity, additional employment for locals, and the potential expansion of tourism.

Conclusion-The industry's booming sector is the ocean. Therefore, additional institutional courses should be developed as part of the capacity building measures. must make the locals more knowledgeable about the ocean. Employees and students alike should receive periodic training from the institution or organization. Should include the blue economy as a subject that raises industry awareness and opens up future opportunities. The ocean sector is on everyone's mind.The port led development model's sustainability over the long term may be its most important feature.Through these, we can restore equilibrium to the environment and economy. In order to create a peaceful and cooperative environment in the region, India should also work more closely with its neighbours.

****

References

1. Jha, R., & Upadhyay, S. (2019). Streamlining government regulations for the Indian port sector. Journal of Public Administration, 69(2), 1-20.
2. Bhoi, S., Kumar, A., & Das, S. (2019). The potential of PPPs in the Indian port sector: A study of major ports. Journal of Infrastructure Development, 5 (2), 1-20.
3. Sengupta, S., Chaudhuri, S., & Goswami, S. (2018). Competition in the Indian port sector: A study of major ports. Journal of Economic Development, 43(3), 1-10.
4. Vijayakumar, S., & Jayakumar, J. (2017). The impact of the Sagarmala program on the Indian port sector. Journal of Transport Economics and Policy, 51(3), 1-15.
5. Kumar, A., & Das, S. (2015). Challenges and opportunities in the Indian port sector: A review. Journal of Shipping and Trade, 10(1), 1-20.

A Study on the Influence of Job Insecurity on Employee Job Performance: Mediating Role of Organisational Trust

SRIKANTHNAIK H
Junior Research Fellow, Seshadripuram First Grade College, Yelahanka, Bangalore A Recognized Research Centre, University of Mysore

Dr. S. N. VENKATESH
M.Com, Ph.D.Research Guide Seshadripuram First Grade College, Yelahanka, Bangalore A Recognized Research Centre, University of Mysore

Abstract-Many studies have looked into the relationship between job performance and job insecurity, with various levels of success. While some researchers have identified a relationship between job insecurity and performance at work. The aim of the study is to know how organizational trust affects the relationship between job performance and job insecurity and to know for what extent the job insecurity mediates relationship between organisational trust and job performance.This study is following a quantitative approach using a survey questionnaire which has been distributed through online mode to the respondents to measure organizational trust, job performance, and job insecurity using a sample of employees from different IT companies. Our findings supported earlier studies by demonstrating a significant inverse connection between job insecurity and job performance. The negative association between job insecurity and job performance was shown to be adjusted by organizational trust, which meant that the inverse relationship was weaker for workers who had higher levels of organizational trust.

Keywords: Job Insecurity; Job Performance; IT Companies; organizational Trust

Introduction-The study of job insecurity and job performance is important because job insecurity can have a detrimental impact on workers both physical and psychological health, which may impact how well they perform at work. Job insecurity may result in Stress, worry, sadness, and a lack of motivation which can lower productivity, raise in absenteeism, and increase turnover rates. Therefore, in order to build a productive workplace, employers need to understand the connection between the performance and job insecurity. The Organizational trust has a crucial role in minimising the detrimental consequences of job insecurity on job performance. Where the employees are more likely to feel secure in their jobs and have better levels of job satisfaction, dedication, and drive when they trust their organisation and feel supported by its leaders. The studies on job insecurity and job performance have examined the function of organisational trust in minimising the negative impacts of job insecurity on job performance and have found that job uncertainty can have a

detrimental negative impact on job performance, As stated, trust is most significantly impacted by organisational insecurity. Further findings indicated that lower levels of employment security were correlated with higher levels of subjectively perceived job insecurity social wellness.

Literature Review

Job insecurity and organisational trust:-The job insecurity and Organizational trust effectively and significantly moderate the association between diversity management and employees' engagement. According to this study, job insecurity, which is defined as the feeling that employees experience when there is a possibility that their jobs could be lost, is what causes low engagement and leads to negative effects including absenteeism and unproductive work habits. According to the researcher, the impact of job insecurity can cause employees' job performance to fall and diminish, which can lead to workers feeling less involved in their work. In various additional studies, researchers noted the importance of organizational trust in raising employee engagement in addition to these other factors. As a result, it is believed that organizational trust is a key element in fostering employee performance, organizational commitment, and job engagement (Alshaabani, Hamza, & Ildikó , 2022). encourage social well-being by being dependable and open (Hennicks, 2022).

Job Insecurity and Job Performance:A thorough review of the relevant study found that job Insecurity is typically negatively related to different types of job outcomes, including job performance. The Job insecurity minimizes the job performance. The findings also indicated that the psychological stress of anxiety mediates the impact of job instability on job performance. Furthermore, psychological benefits (such as internal motivation and assistance from the supervisor) are essential in preventing the detrimental effects of job uncertainty on job performance (Darvishmotevali, Arasli, & Kilic, 2017) Because job insecurity severely affects social well-being and negatively affects job performance of employees and it also has a negative psychological effect on workers (Darvishmotevali & Ali, 2020).

Organisational Trust & Job Performance:- Organizational trust leads to the conclusion that trust is a crucial component of an organization's effectiveness and job performance. Because their activities have an impact on one another's performance, dependence between the parties is a fundamental element of trust. The organization's ability to "reinforce high levels of trust" will determine the effectiveness of Quality of work life programmes, which will enhance performance (van der Berg & Martins, 2013). The employee wellbeing-based human resource policies showed generosity, which boosted the organization's trustworthiness. As a result, trustworthy management techniques may foster confidence in both commercial and public sector organisations and promote performance. This study investigated how management change affects organisational trust and performance. The development of trust was facilitated by abilities, communication, and predictability, which appears to be reflected in work performance in both industries (Johanna Karhapaa, Savolainen, & Malkamaki, 2022).

From the above literatures, the following hypothesis can be framed:

H1: Job Insecurity is negatively related to employee Job performance.

H2: organisation trust is negatively associated with Job Insecurity.

H3: organisation trust is positively related to employee job performance.

Research Methodology

Problem statement

The job insecurity has negative impact on job performance and organisational trust, but the organisational trust can significantly reduce these impacts. Where the organisational trust is crucial in reducing the negative effects of job insecurity on job performance.

As majority of the study in this field is of cross-sectional hence there is a need for continuous studies to evaluate the links between organizational trust, job insecurity and job performance over time and when many cultural contexts are taken into consideration the empirical research is necessary to understand trust in management transformation, so that there will be a deeper knowledge of performance, trust, and the management transformation process.

Aim and Approach

This study will investigate the relationship between organisational trust, job insecurity, and job performance within an IT sector organization and to determine to what extent the job insecurity can negatively impact job performance.

Qualitative/Quantitative study?

This study is based on quantitative study because it focuses on data gathering and analysis. The quantitative research helps to give a broad understanding of behaviour and other phenomena across a range of contexts and populations. The quantitative Studies are usually brief, accurate, focused and relatable.

Cross-sectional/Longitudinal study?

This study is based on cross-sectional, as the information is gathered from different employees of IT sector at a single point in time. The cross-sectional study is an important research tool to the researchers to have a clear idea about what is going on in a specific population, and it helps to improve the understanding about the relationships among variables and even we can observe the variables without affecting them.

Population-The population for this study is mainly the

employees in the IT sector in India or the employees in India's IT sector make up the population for this study. As the IT sector in India has seen significant expansion in recent years it is necessary to have the Understanding of the traits and characteristics of the personnel within this sector. The population includes the various employees who are currently employed in IT sectors in India.

Sampling design

For this study the IT sector employees were targeted in and around India. The professionals who hold IT-related job titles, such as software developers, network engineers, database administrators, system analysts, IT project managers etc will be the target demographic. The IT industry will be thoroughly understood through this sampling design, and the conclusions drawn from the samples or responses will be applied to the full IT population.

3.5 Sample size

A sample size of 100 participants were chosen for this study on the relationship between job insecurity, job performance, and organisational trust among IT industry employees. This is based on the idea that there are various designations within the field of IT, and that the sample will be drawn from a variety of designations. The study will have sufficient statistical ability to identify significant relationships between the relevant variables as it includes at least 100 or more responses.

As the data collected here are from different parts of India, we are using a finite sample size formula to calculate the sample size:

$n = N/(1+n(e)^2)$.

where n = sample size, N = population size, e= acceptable sample error is usually 0.05 or 5%.

3.6 Data collection method

A survey questionnaire was created using the questions that have gone through validity testing from earlier studies. These were distributed to various employees in the IT sector, those employees will receive the online survey questionnaire via social media platforms and email. In addition to demographic and background data, the questionnaire will include structured questions aimed at obtaining information on job insecurity, job performance, and organisational trust. The use of an online survey questionnaire has several benefits, such as improved participant convenience, the possibility to quickly reach a high sample size, and decreased the costs and time involved with gathering data.

Also, using an online survey form guarantees participant's confidentiality and anonymity, which may improve the likelihood of honest and accurate responses. By using the proper statistical methods, the acquired data will be examined to determine the correlations between job insecurity, job performance, and organizational trust among personnel working in the IT sector.

Measurement scale

The survey questions from earlier studies whose validity was examined served as the basis for the measurement tool employed in the present study. All the items in the questionnaire were administered by using 5-point Likert-scale (5= Strongly agree; 4= Agree; 3= Neutral; 2= Disagree; 1= Strongly disagree). Where the job insecurity of the employees was measured using a scale of 11 items developed by (Blotenberg & Richter, 2020)

Slno	Variables	No of items	Developed by
1	Organisational Trust (OT)	11	Agarwal, 2013
2	Job Insecurity (JI)	11	Blotenberg & Richter, 2020
3	Job Performance (JP)	18	Villagrasaa, Barrada, Río, & Koopmans, 2019

Table 3.7.1: Measurement scale.

Tools to analyse data. In this study, The Partial Least Squares Structural Equation Modeling (PLS-SEM 4) is used to analyze the data that were collected through survey questionnaire. A statistical method called PLS-SEM is used to examine detailed relationships among numerous variables in a research model.In PLS-SEM, the statistics for outer loading, composite reliability, discriminant validity, and collinearity were examined to assess the validity and reliability of the model used for measurement.While the composite reliability evaluates the measurement model's internal consistency and reliability, the outer loading assesses the strength of the association between the latent construct and its observed indicators.

Results Preliminary Work Done:For the proposed study a preliminary test is carried out where the analysis of the data gathered will assist in determining the validity and reliability of the constructs. An online survey questionnaire was administered to 100 respondents out of which 87 were returned with complete responses.

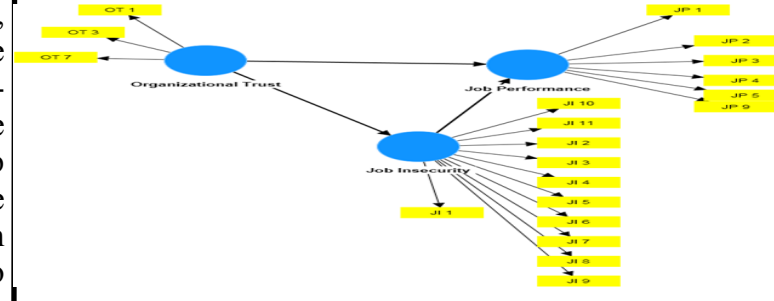

Figure 4: Measurement model.

Measurement of Reliability factor and validity of construct. Note: The below table explains the outer loading value of each indicator, that is above the threshold value of 0.7, which is the acceptable level of outer loadings for any reflective model, So here in the below table of analysis of variables we can observe that the outer loadings of all indicators that is OT,JI&JP are above 0.7, hence all the indicators in this analysis have the

acceptable level of outer loading. The indicator reliability is the square of each of the outer loading, where indicator reliability needs to be 0.4 or higher is acceptable.

Construct	Indicators	Outer Loadings	Indicator Reliability	Composite Reliability	Convergent Validity AVE	Discriminant validity	VIF
Organisational Trust	OT1	0.886	0.786	0.956	0.641	0.816	1.567
	OT3	0.723	0.523				1.463
	OT7	0.783	0.614				1.356
Job Insecurity	JI1	0.739	0.546	0.953	0.665	0.879	2.160
	JI2	0.788	0.620				3.203
	JI3	0.830	0.689				4.443
	JI4	0.845	0.714				3.450
	JI5	0.873	0.762				4.243
	JI6	0.809	0.654				3.645
	JI7	0.838	0.702				4.025
	JI8	0.868	0.753				4.015
	JI9	0.789	0.623				3.069
	JI10	0.827	0.683				4.914
	JI11	0.754	0.569				4.179
Job Performance	JP1	0.884	1.768	0.842	0.773	0.800	3.256
	JP2	0.910	1.819				4.303
	JP3	0.889	1.779				3.816
	JP4	0.911	1.822				5.781
	JP5	0.869	1.739				4.544
	JP9	0.809	1.619				2.115

Table 4.1.1: Measurement of Reliability factor and validity of construct.

The above table justifies that all the indicators of Organisational Trust, Job Insecurity and Job Performance have indicator reliability values which is much greater than the minimum acceptable level of 0.4. Further, it is critical to establish the reliability and validity of the constructs to complete the scanning of the structural model. The composite reliability value is more than 0.7, which is more than the acceptable level. To check the convergent validity of each latent variable, Average Variance Extracted (AVE) need to be evaluated. The AVE value of each latent variable should be 0.5 or higher. The above table demonstrates that the AVE value of all latent variables is higher than the acceptable threshold of 0.5, which confirms the convergent validity. All the variables in the inner model are tested for potential collinearity problems to see if any variable in the inner model should be removed or merged into one.

Relationship	Path Coefficient	Sample Mean (M)	Standard Deviation (STDEV)	T-statistics (|O/STDEV|)	P-values
Job Insecurity -> Job Performance	-0.233	-0.257	0.129	1.999	0.05
Organizational Trust -> Job Insecurity	-0.511	-0.527	0.119	4.294	0
Organizational Trust -> Job Performance	0.363	0.347	0.136	2.657	0.008

Path Coefficient, T-Value and P-Values

Table 4.2.1: showing Path coefficient,T-Value and P-Values

The connection between two variables is represented by a path. where the strength of the relationship is measured by the path coefficient, which shows the size and direction of the impact of one variable has on another. The path coefficient ranges from -1 to +1, where the value of -1 represents a perfectly negative relationship, the value of 0 represents no relationship, and a value of +1 represents a perfectly positive relationship. Another indicator of the path coefficient's statistical significance is the p-value. It shows the probability that each of the variables' observed relationship was the result of chance. A p-value less than 0.05 qualifies as significant, indicating that the observed link is unlikely to have happened by chance here in the above analysis we can observe that the p-value of the relationship between Job Performance and Job Insecurity is 0.05 where the significant p-value is 0.05 hence this relationship is significant whereas the p value of the relationship between Organizational Trust and Job Insecurity is 0 which is less than 0.05 hence this relationship is significant and the p-value of the relationship between Organizational Trust and Job performance is 0.008 which is less than 0.05 hence this relationship is significant.

Specific Indirect Effect-Mediator model

	Original sample (O)	Sample mean (M)	Standard deviation (STDEV)	T-statistics (|O/STDEV|)	P values
Organizational Trust -> Job Insecurity -> Job Performance	0.119	0.146	0.094	1.964	0.006

Table 4.3.1: showing Specific Indirect Effect-Mediator model.

According to this analysis of specific indirect effect, there is a relationship between organizational trust, job insecurity, and job performance. The indirect effect starts with organizational trust and moves to job insecurity, then to job performance. The original sample (O) shows a coefficient of 0.119 for the indirect effect whereas the sample mean (M) is 0.146, suggesting that the indirect effect is less than or below the sample average. The standard deviation where the STDEV is 0.094 implies that the specific indirect effect has relatively low variability in the sample.The specific indirect effect is statistically significant, according to the T statistic where it is 1.964, which can be calculated by dividing the absolute value of O by STDEV. This is further supports by the fact that the p-value for this is 0.006, which is less than the standard acceptable threshold for statistical significance of 0.05.

Discussion-The findings also showed that the relationship between organizational trust and job performance was

mediated by job insecurity. This shows that the decreased job insecurity may lead for some of the positive effect of organizational trust on job performance.

Limitations and scope for future study

The limitations of this study need to be address, the ability of this research to determine causal relationships is constrained by the cross-sectional design of the study. Future research might employ longitudinal designs to investigate the relationship between job insecurity, organizational trust, and work performance.

Conclusion-In conclusion, the purpose or the goal of this study is to examine the effects of job insecurity and organisational trust on job performance as well as to examine the role of job insecurity as a mediator. in the relation between these two variables. In accordance with earlier research, our findings imply that job insecurity has a negative effect on job performance. Also, this study demonstrates that the increase in organisational trust can play a crucial role in mitigating the negative effects of job insecurity on job performance.

Overall, the study shows how important organizational trust and job insecurity in understanding job performance. Employers can increase employee trust by being transparent and honest with them, treating them fairly and consistently, and displaying a commitment to their wellness.

****

References

1. Breevaart, K., Bakker, A. B., Demerouti, E., & Heuvel, M. v. (2015). Leader-member exchange, work engagement, and job performance. JOURNAL OF MANAGERIAL PSYCHOLOGY.
2. Agarwal, V. (2013). Investigating the convergent validity of organizational trust. Journal of Communication Management.
3. Alshaabani, A., Hamza, K. A., & Ildikó . (2022). Impact of Diversity Management on Employees' Engagement: The Role of Organiza-tional Trust and Job Insecurity. sustainability.
4. Ardhi Hidayat , Y., Olah, J., & Popp, J. (2020). THE CONCEPT OF INTEGRATIVE TRUST ON BUSINESS PERFORMANCE. SEYLE E -STUDIES.
5. Artar, M., & Erdil, O. (2017). Relationship Between Job Satisfaction, Organizational Trust And Work Alienation. International Strategic Management Conference. doi:10.15405/epsbs.2017.12.02.17
6. Asfaw, A. G., & Chang, C.-C. (2019). The association between job insecurity and. Journal of Workplace Behavioral Health. doi:https://doi.org/10.1080/15555240.2019.1600409

A study of the social contribution of Raghu Rai's photo journalism

Amit Mishra

Department of Mass Communication
PhD Researcher
Veer Bahadur Singh Purvanchal University, Jaunpur, Uttar Pradesh

Abstract-Research study the social contribution of photo journalism of Raghu Rai is related to a study. Which is based on the photo journalism of Raghu Rai. The main objective of this study is to analyze the current status, condition, action, attitudes, new changes and challenges of the variables using 'descriptive study' in the presentation of Raghu Rai's photo journalism in the presentation of social reality. Effects have been studied. This study has practical implications related to the development, change and social theoretical significance of photojournalism. From the result of the study, the social contribution of photojournalist Raghu Rai has been understood in photo journalism. The sampling method was used for the selection of variables and the content method was used for the analysis of the data. The primary data collection has been obtained through Raghu Rai's photo Magnumphotos.com. The major photographs taken by 'Raghu Rai' at the time of partition of Bangladesh have been included in the study. Understanding the social contribution of research photo journalism and the changes and importance in the form of contemporary photo journalism can be understood in detail, along with Raghu Rai's presentation of social reality of photo journalism and new perspectives will be explored. You will get to know the basic principles of photojournalism and the method of making photos come alive.

Keywords: *Raghu Rai, Study, Social Contribution, Photo Journalism.*

Introduction-"A Picture is a poem without word" was said by Horace who was a famous poet of Ventosa Italy. The invention and development of photography is a step-by-step process. On January 09, 1839, the French Academy of Science announced the recognition of the "Daguerreotype Process". According to the report of word-phototoday.org, on August 19, 1839, the photography technique (daguerreotype process) invented by Daguerre was recognized by the French government.

The discoverers or fathers of the first photograph of the whole world were "Joseph Nicephore Niepce and Louis Yak-Monde Deguych". When it comes to photographs, the first name that emerges is that of "Honneur Cartier Bressau" who used his camera to present the social reality. In India, the foundation of the first photo studios was laid in Calcutta in 1849 AD. In 1850 AD, photography started in other studios in Bombay and Madras, Indore and other places. The Bengal Photographic Society was established in 1856, at which time Maharaja Sawai Ram Singh II played an important role in Indian photography.

Raghu Rai's photo journalism-Raghu Rai was born in the small village of Jhang, which is now a part of Pakistan. He started photography in 1965 then worked as the chief photographer for The Statesman newspaper. Impressed by an exhibition of her work in Paris in 1971, Henri Cartier-Bresson enrolled Rae to join Magnum Photos in 1977. Rai left The Statesman in 1980 to work as picture editor for Sundaya weekly news magazine published in Calcutta from 1976.

Then worked as Picture Editor/Visualizer/Photographer during the formative years of India Today, India's leading news magazine from 1982 to 1991. Work on special issues and designs contributed pioneering illustrations on social, political and cultural topics, many of which became talking points for the magazine. Over the past 18 years, Rai has specialized in comprehensive coverage of India. He has produced over 18 books including Raghu Rai's Delhi, The Sikh, Calcutta, Khajuraho, Taj Mahal, Tibet in Exile, India and Mother Teresa.

For Greenpeace, he has completed an in-depth documentary project on the 1984 chemical disaster in Bhopal and its ongoing effects on the lives of gas victims. This work resulted in a book and three exhibitions which have been touring Europe, America, India and Southeast Asia since 2004, the 20th anniversary of the disaster. Rai hopes the exhibition can help the many survivors by creating more awareness about the tragedy and about the victims – many who still haven't received compensation – who live in the polluted environment around Bhopal. have been Rai was awarded the Padma Shri in 1971, one of India's highest civilian awards for a photographer. In 1992, his National Geographic cover story Human Management of Wildlife in India brought him widespread critical acclaim for the piece. Apart from winning several national and international awards, Rai has exhibited his works in London, Paris, New York, Hamburg, Prague, Tokyo, Zurich and Sydney. His photo essays have appeared in many of the world's leading magazines and newspapers including Time, Life, Geo, The New York Times, The Sunday Times, Newsweek, The Independent and The New Yorker. He has served three times on the jury of the World Press Photo and twice on the jury of the UNESCO International Photo Competition. Raghu Rai lives in Delhi with his family and continues to be a correspondent for Magnum Photos.

Analysis of Raghu Rai's photojournalism-India has inherited a rich culture of art, architecture and sculpture since the Vedic period. Even before the arrival of the Aryans in the pre-Vedic period, the love of Indians towards the artistic creations of Harappa and Mohenjo-Daro civilization is clearly reflected. Cave 10 of Ajanta contains a large fresco dating back to the 1st century BCE, depicting a handsome king with his retinue and some musicians under a tree. This picture is related to reality, this picture is the only picture of its time. It will not be wrong if there is more use of photography to tell history like stories through photos. Despite all the needs such as technological, social and cultural changes, the essence of photography and the basis of professional photographer and social function remains the same. Through pictures, we can easily know the event or dangerous intention happening in the time and society. In this chapter, an attempt will be made to find out which basis is found maximum in the picture drawn by Raghu Rai. Mainly there are more pictures of Bangladesh partition and Bhopal gas tragedy. There are some more pictures which will be analyzed by observing social, political, emotional, technical basis and from the point of view of photographers. So that it can be known that which is the basis of Raghu Rai's pictures. And why is it.

Social Base- It is a set of economic and cultural arrangements in the society. Class is an essential object of analysis for sociologists, political scientists, economists, anthropologists and social historians etc. In the social sciences, social class is often discussed in the context of 'social stratification'. In the modern Western context, stratification is usually composed of three layers: upper class, middle class, lower class. Each class may be further subdivided into smaller classes (such as circles). The most fundamental class distinction is between the powerful and the powerless. Social classes with great power are often seen as elite within their societies. Various social and political theories suggest that a social class with overwhelming power seeks to consolidate its own position above lower classes in the hierarchy to the detriment of society as a whole. Photo journalism also presents the condition and direction of the society, the incidents happening in the society can be shown easily. Raghu Rai has wanted to show more of the social side in his photographs.

A Different Delhi - Humayun's Tomb (1965) - In 1965, when Raghu Rai started using the camera, the landscape of Delhi was completely different. This picture is trying to show the social reality of Delhi which no one has experienced today. It is near Ring Road of Delhi

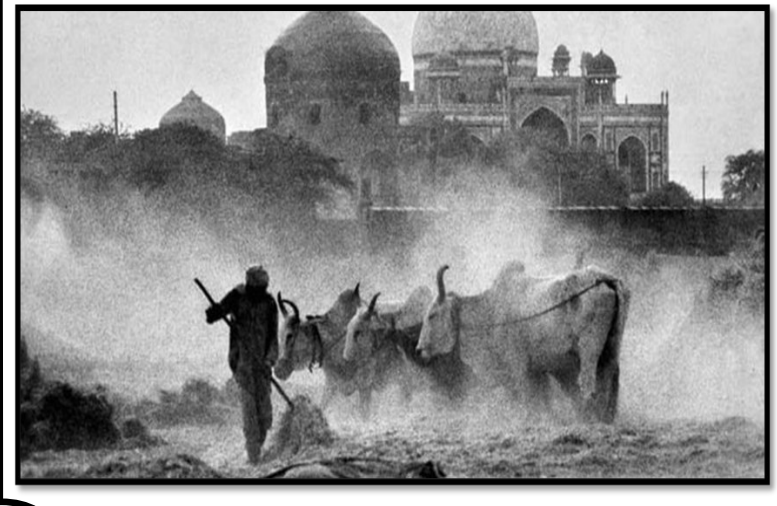

where today there are high-rise buildings. At that time the condition of Humayun's tomb was like this. According to Raghu Rai, there used to be a railway track at that time. And in front of the wheat field crops were being cultivated with oxen and behind it there was a train. Once upon a time, Raghu Rai took the photo. Also, surprises.

Political Base-Political communication is the process by which a nation's leadership, the media, and citizens exchange messages and give meaning to them that is relevant to the conduct of public policy. The distinguishing feature of political communication is that the messages are largely related to governance or the conduct of public policy, it is generally believed that political communication is related only to elections, but it is not so. Politics largely determines that process; and is related to that by which society reaches consensus on ethical matters. Thus, the basis of political communication is the 'narrative' of citizens, the media and politicians about matters of concern to a specific group or the general public at large. Photo journalism is becoming a big contribution in today's political field. Even during the time of Raghu Rai, there was a lot of political influence from photographs, like the Stratus Man incident, when photographs were less in those days, the effect was even greater.

A Day in the Life of Indira Gandhi (1967) - There was no one else in the Congress as strong and sharp as Indira Gandhi. Raghu Rai was spending a day with Indira Gandhi to take her photo and a delegation of Congress members came to meet her at the Parliament House. All these were senior Congress leaders, who were waiting for him standing. While Indira Gandhi was signing some papers. Raghu captures a picture from behind her, giving an idea of the power of a woman prime minister. Everyone is very quietly waiting for his fate.

Victimized Person: Manmohan Singh Akela (2014) - Since the 90s, Raghu had stopped photographing politicians, as he saw no point in spending time with them. All the senior leaders were sitting there on the stage.

Only then Sonia Gandhi, Manmohan Singh and Rahul Gandhi reached there. Nobody spoke to Manmohan Singh. Everyone was greeting Sonia Gandhi and Rahul Gandhi. Raghu Rai tells on the stage that there was no one who had gone to meet Manmohan Singh. In earlier events, he tells that the Prime Minister used to be a leader. But it was shameful for him to see such a condition of Manmohan Singh here. He stayed there for five hours. He did not meet anyone and no one went to meet him. He looked lonely and oppressed.

Nothing is hidden from the photo. Modi was projected as the prime ministerial candidate at a BJP event (a day before the election and a day after the Congress event) Raghu Rai noticed that Lal Krishna Advani, Arun Jaitley and others looked serious Were. When Modi came there, the crowd started shouting Modi-Modi. Modi started speaking as if he has won everything. Rai covered both Modi and Manmohan in **'The Outgoing Prime Minister'.** The outgoing Prime Minister did not say a single word. As if his silence was shouting. On the other hand, the new Prime Minister spoke so much that it seemed that he was talking about the share of both.

Emotional Basis- Human life is emotional. Life is emotion oriented. We are all governed by emotions. Joy, happiness, celebration and satisfaction are just one feeling. Love-hate, mine-yours, gaining-losing, anger-forgiveness, defeat-win, faith-doubt, have importance only from emotions. This is the basis of our life. Feelings are subtler than thoughts. Many times, we take support of thoughts to express feelings. Emotion is related to mood, temperament, personality and emotion and motivation. The English word 'emotion' is derived from the French word émouvoir. It is based on the Latin word emovere where e- (variant of ex-) means 'out' and movere means 'to walk'. The related word "motive" is also derived from movere. No definite classification of emotions exists. The related difference

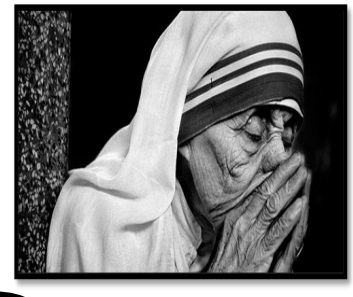

between emotion and the consequences of emotion is the main behavior and emotional expression. People often make a variety of expressions as a result of their emotional state, such as crying, fighting or hating. If someone expresses a feeling

without any corresponding expression, then we can assume that feelings do not require expression. Neuroscientific research suggests that there is a "magic quarter second" during which a thought can be perceived before it becomes an emotional response. In that moment, one can control the emotion. The James-Lange theory states that the experience of emotion results largely from physiological changes. The functionalist approach to emotion, for example, Niko Frijda and Fritas-Megalhes suggests that emotion arose as a subject to be protected as a result of a particular action. Mother Teresa was the mother of all. He believed only in forgiveness and service. She used to sit down to prepare herself. Used to worship You can see him connecting with God in today's time.

Technical Basis-When a fixed or moving image (picture) is made by recording the radiation emanating from a physical object on a sensitive medium like photographic film, electronic sensor etc., it is called a photograph. The process of photography is also an art to some extent. This device is used for this work, it is called camera. Photography has many uses in business, science, art and entertainment etc. The technical basis of photography is very important. Knowing about it brings life to the photo. Such technical aspects are more visible in Raghu Rai's photography.

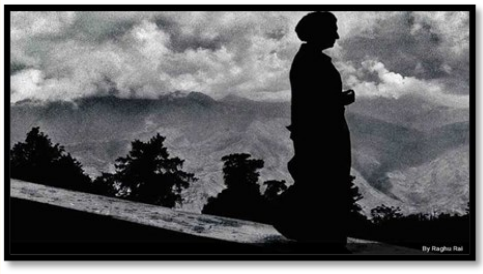

Raghu Rai's photo journalism in the eyes of various subject experts-In this chapter an attempt will be made to find out how other people see Raghu Rai's photo or photo journalism. Because photo does not have any language, nor is it a subject whose study is necessary, its feeling can be understood by feeling the photo. The person whose thinking goes deep inside, he can see a photo with that much vision. Seeing Raghu Rai's photo, who can feel how much that incident happened. To know this this chapter has been kept. So that it can be known that how alive are the pictures of Raghu Rai even today.

Photo journalism is basically a powerful medium to express our society and its culture or the events happening there through pictures, many things which we are not able to display by writing. Those things can be kept for a long time through photographs and through video, for example, if an incident happens, it helps a lot to convey that event to the reader, which has human sensitivity, through photographs. Human sensibility may be that the creator cannot take it there because when he writes, he makes some changes in the things, but the photojournalist cannot do that, he has to show the things that are seen, then anyone is strong. Writing cannot be seen which can represent the event exactly whereas a photo can be worth a million words and we can interpret it from different angles and perspectives through this we can take the understanding forward and through visual It is a powerful medium to tell our stories and stories, which we can do along with photojournalism, for example, if we want to depict an event or measure the change happening in society, we can preserve it for centuries. Because the society which was earlier, which is today, which will be tomorrow, we cannot change anything without seeing it through photographs. By looking at the pictures, we reach the same. If we write this tragedy with words, then we could not feel the pain of those migrants driven away. Raghu Rai's photo is very powerful in this matter. At present, if we talk about photo journalism, hey. Talking about visual sociology like man, there is a flood of visual narration in 21st century, whether you see block or site, every person has mobile and mobile has camera and almost he is presenting all kinds of pictures as well as change. It is also the era of very fast world is developing as a network society. Network means that we are not expressing our feelings in this way. But we don't have the time to see the pictures or how to assess the pictures, we don't have time to take what these pictures make us understand or what they want to tell, the biggest thing is that photo journalism is Can read the difference, somewhere in the sensations, there is a difference in the photo. Photo journalism can somewhere keep the historical details of various incidents which can become our heritage in the coming centuries, which will continue to make us understand the depth of the incident. Raghu Rai's photo journalism is helpful in awakening human sensitivity and keeping it safe by Rajeev Ranjan Rai, Assistant Professor, Department of Diaspora Studies, M.G.A.H.V. Wardha; Email- rajeevrai72@gmail.com

There is hardly anyone in the world of photography who does not know him and his work is not to take you towards nature and such a world which takes you in abstrack but it makes you aware of the concrete realities of the society and this is what Draws attention to the important work in the society that all the sensitive people of the society should understand what are the basic problems of the society and how we can overcome them. Raghu Rai has done the work of bridging the same through his photography. Be it his photography regarding Bhopal gas or others. He has very solid things. There are many people who do not live in abstrack and have the ability to pierce you inside. I think Raghu Rai's photo shows us his struggles. And it also gives a message to the students of social work that our work is not just to live in

abstrack but to understand the concrete realities and find solutions for them. Photography is a medium of art. Photo journalism is a vast field and has changed very rapidly in the last 3-4 decades. Now everyone has a mobile phone and now everyone can do photography, but now see that the era of photography is now becoming very centered rather than abstrackIn my understanding Raghu Rai is only this much. When journalism developed, photography is an essential part of it. Photography was done with a lot of hard work, from that the print media developed a lot and when computers developed, many things are no longer needed to be captured. You can make a lot of what you are now. It has changed the entire environment of photo journalism. Now we have a virtual world in front of us, its positive fact is that our imagination world has increased due to which your creativity has increased. But its downside is that now you have started moving away from the real problem. Raghu Rai made the real world the basis of his painting. He is one of the best photographers. He does photography very meticulously. Naturalness is Raghu Rai's foremost characteristic, by Dr. Mithilesh Pathak, Assistant Professor, Mahatma Gandhi International Hindi University.

Photography is a technique or an approach or a tool through which we can touch many dimensions of the human body very deeply, to solve its manifestations, to change the behavior, to make people aware of any issue, to make the environment Whether it is to make people more sensitive towards or to make people aware in any way, I think there is no other technique more suitable than photography, the reason behind that is that whatever research paper we read, we read the research paper two or three times. It takes hours and many times it happens that the research paper which gives us the information in a particular event or in the context of a topic, many times it is written in a particular type of language and the second thing is that the complete context related to it is not there. I am still feeling how upset I am with him, that is, if you want to awaken the sensitivity, then there is no other suitable medium than Raghurai ji's photography, if you want to be aware of the social problems that were there at that time. May be Raghurai ji took photography as a passion and in fact it seems to study Self Accomplishment theory in psychology people who express their inner potential act accordingly Raghunath ji like what they actually do Let me tell you that whatever photo I was looking at, I was thinking that I am staring at myself, I have only photographs in front of me and whatever things are emerging in front of me. because any technique you learn If you learn it with your heart, then somewhere an enjoy comes inside you, a happiness comes, a happiness comes and that happiness adds to your personality, your health, your positive experiences, but with this you imagine a And that work is that today's issues related to the environment, related to our social justice, related to our sisters and mothers, the incidents of violence, the problems that have come in our lifestyle, the dynamics that have come, try to show them somewhere. It is our expectation to bring some such photographs which will change lives and which will change humanity, by Arun Pratap Singh, Designation, Assistant Professor, and Dept. of Psychology

Research Findings-Born as Raghu Rai Chowdhary in 1942 in Jhang, Punjab (now in Pakistan) in undivided India, Raghu Rai is the youngest of four siblings. After partition, his family moved to India. Raghu Rai started his career as a civil engineer in Delhi, but he did not feel inclined towards that profession. In 1962, he married his elder brother and then well-known photographer S. Started learning photography from Paul. In 1966, he joined 'The Statesman' newspaper as a photographer where he worked as Chief Photographer for 10 years i.e. till 1976. The Government of India honored him with the Padma Shri for his outstanding work on the 1971 war, the independence of Bangladesh, the refugee problem and the surrender of Pakistani soldiers. He was associated with the magazine 'India Dude' for 10 years (1982-1992) as Director of Photography. 1990 -1997 he was on the jury of Word Press Photo. Mr. Rai has studied India in great depth. The soul of India can be felt in his picturesHis photo articles have been published in all the renowned newspapers and magazines of the world. While working for India Today, he produced an in-depth documentary on the 1984 Bhopal gas tragedy for Greenpeace, an international environmental protection organisation. His pictures of Bhopal gas tragedy created panic in the world. These photographs indirectly proved helpful in getting justice to the gas victims. In 2019, Raghu Rai was honored as the first winner of the prestigious William Klein Prize of 1, 20,000 Euros, instituted by the Académie des beaux-arts.

References

1. Dr. Mehra, Ramesh (2006) Four more photojournalism, Delhi Takshashila Prakashan.
2. Yadav, Narendra Singh. (2013) Photography Techniques and Applications, Jaipur, Rajasthan. Hindi Granth Academy.
3. Rai, Raghu (2008). RAGHU RAI'S INDIA (REFLECTIONS IN COLOUR), New Delhi. penguin.
4. Radhakrishnan, Radha (2012). Hindi Journalism: Various Dimensions, Delhi, Parag Prakashan
5. BeckerViseal_sociology_documentary_photography_and_photojournalism_1995 HIGHLIGHTED
6. https://www.tgtpgtkala.com/2021/07/blog-post_7.html Website Link-
7. http://www.prabhatkhabar.com/news/samanya/photography-safarnama-world-photography day
8. https://www.google.co.in/?gws_rd=cr&ei=WHWNWN6HLseEvQSLmlaYAw#q=%E0%A4%B9
9. http://mpinfo.org/MPinfoStatic/rojgar/2016/2208/other22.asp
10. http://www.bbc.com/hindi/entertainment/story/2008/07/080725 ekmulakat raghurai.shtml
11. http://www.bbc.com/hindi/entertainment/story/2008/05/080505_raghural photography.shtml
12. https://www.photographyhindi.com/photographer-raghu-rai-quotes-and- biography-in-hindi/
13. https://www.magnumphotos.com/photographer/raghu-rai/
14. https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0
15. https://www.youtube.com/results?sp=SBTqAwA%253D&q=raghu+rai

Job Stress among Secondary School Teachers of Papum Pare District in Arunachal Pradesh

Dr. Ravi Ranjan Kumar
Assistant Professor
Dept. of Social Work
Rajiv Gandhi University
Arunachal Pradesh

Shriprakash Pal
Ph.D. Research Scholar, Department of Mass Communication, Rajiv Gandhi University, Arunachal Pradesh

Monika Sharma
Ph.D. Research Scholar, Department of Education, Rajiv Gandhi University
Arunachal Pradesh

Abstract-*Individuals who are in jobs of sales executives, managers or administrators have to face different kind of situation in a regular basis and because they are more likely to have more stress in their life. In a similar manner teachers also have to come across with different situation as they are dealing with hundreds of students every day. They have to deal with odds and even in daily basis, which may create stress among them. Teachers of Secondary level need to deal with different kinds of task other than teaching in their profession. Due to that they stressed out about completion of their syllabus and completion of other assigned work in time. Hence it is necessary to know and understand their working conditions, how they are dealing with different situation and difficulties come across in their day to day work. By finding it one could suggest the best possible solution and tried to reduce the level of stress among them. That's why in the present study, researchers tried to explore the job stress level of secondary school teachers of Papum Pare district of Arunachal Pradesh and also tried to find out some sort of measures to reduce the level of stress. Total 60 teachers were selected randomly from private and government schools of the district. It has been found that teachers of said district are having above average level of job stress.*

Keywords: Job Stress, Secondary Teachers, Papum Pare district, Arunachal Pradesh

Introduction-In the age of modernization and fast growing urbanization, anxiety, tension and stresses are very common phenomenon that we have observed in every human being. Stress is considered to be psychologically created nature which leads to physical, social and emotional setback. The concept of stress in Life Science was introduced by **Selye (1936)**. In the domain of life science/ medical science general adoption syndrome of Cannon's homeostasis and Selye's have considerably have an impact on the conceptualization of stress. Since then, the concept gained popularity in the literature of research and readily used by social and behavioural scientists. A renowned physiologist **Cannon (1935)** pondered or tried to describe stress in human life and also in the animals, on observing the reaction of sympathetic nervous system and adrenal medulla under the condition of cold, excitement, lack of oxygen and fear. **Selye (1946)** also observed the reaction of various emotive stimuli.Stress is contemplated as the important area in the field of research for more than two decades and an important extension notice in the interest of many researchers to deal with the employers and their employees **(Hochwarter et al., 2007; Cartwright, 2000).** Stress is considered as the catastrophic physical, emotional and mental response that to be disclosed when lack of match existed between the job demands and employees' capability to deal with the pressure of any kind of job. The main cause of stress in any individual could be there, when employees dealt with strains and challenges in their working schedule but everytime they tried to keep themselves away from it and due to that situation stress, anxiety, fears, worries, tension, etc might came into existence. (Akinboye, et al., 2002).Teaching is such a process, in which teachers scrutinize, manage or preside, and control their emotions to bring productivity in their teaching to inspire and motivate students, and to promote a positive and friendly learning environment (Schonert-Reichl, 2017). Teachers are enduringly exposed to high levels of stress (Gaziel, 1993; Cooper & Kelly, 1993; Mokdad, 2005; Reglin & Reitzammer, 1997; Chan 1998). It may be because of long working hours, insufficient payment, role obscurity, lack of proper teaching facilities, poor organizational climate, lack of social recognition, poor organizational climate, make the profession more stressful. Kyriacou (1987) identifies the main causes of stress that commonly affect instructors. Stress adversely affects teachers' lives and causes mental illness in them. (Fletcher & Payne, 1982; Beer & Beer, 1992; Finlay – Jones, 1986) physical ill health (Otto, 1986; Mokdad, 2005) and which often affects the ability of teacher's (Blase, 1984).

Review of related literature

Kurian & Varghese (2020) performed a piece of research on the impact of Occupational stress on the performance of school teachers and it reveals that stress has an adverse role on the performance of teachers. Selvavinayagam & Kaviarasu (2019) find out how much occupational stress government and aided higher primary school teachers are experiencing in their various socio-cultural and financial contexts. They discovered that instructors at government schools experience less occupational stress than do teachers in aided schools. Additionally, research revealed that less-satisfied instructors were those who reported higher levels of stress in the classroom.

Bharati & Gupta, (2017) conducted a study on job stress and its influence on the productivity of women employees in IT sector by taking 92 women employees working at all levels in selected IT companies as samples. It has been

found that there is a negative correlation between Job Stress and Productivity.In their work Occupational Stress: A Case Study among Primary School Teachers at Nagapattinam District, **Saravanan and MuthuLakshmi (2017)** examined the occupational stress of teachers in primary government and private schools in the district. They discovered that private school instructors experience higher stress than government teachers. This may be because private schools have lower salaries and heavier job demands. Also the stress level of male and female teachers of private schools significantly differs from the stress level of male and female teachers of government schools respectively.

Aydin & Kaya (2016) conducted a study to determine the sources of stress of teachers working in elementary schools. The study was done by using mixed method. It has been found that stresses among teachers are originated from school administration, school facilities and teaching profession. The issues that teachers are experiencing are inadequacy of resources, boredom and exhaustion of the profession, constant supervision, problematic behavior of students, etc.

Yamini & Shahabi (2014) had conducted a study on the EQ and JS in the faculty of medicine in IUMS. The results of the study showed that there was an inverse relationship exists between emotional intelligence and job stress. Therefore the person who is having higher emotional intelligence level could able to reduce their stress and perform better in their respective profession.

Rationale of the Study-Due to excessive workload, the teaching profession become drained and the efficiency and efficacy of teachers become one of the important area need to be discussed and think upon and also it is become necessary to frame and develop such type of policies and practices which are less stressful. Working conditions of teachers are highly stressful, poor level of motivation and morale, lack of unity of command and direction, no proper remuneration for the persons who are involved in, lack of scalar chain in issuance of authority and responsibility, job insecurity, and many more. In Arunachal Pradesh, because of different terrain from other places, and lack of advance facilities teacher may have to face lots of difficulties to deal with their day to day activities. It is need to be discussed and therefore with this reason the researchers comes forward to work upon it where researcher will analyze the level of job stress there in the secondary schools teachers of Arunachal Pradesh. Researchers also tried to find some possible measures to reduce the level of job stress among the teachers.

Objectives

1. To find out the level of Job stress of in male and female Secondary School Teachers
2. To find out the level of Job stress of in Private and Government Secondary School Teachers

Hypotheses

Ho1: Gender has no effect on Job Stress of Secondary School Teachers

Ho2: Management (Private and Government Schools) has no effect on Job Stress of Secondary School Teachers

Delimitation-The study is delimited to the Secondary School Teachers of both private and government secondary schools of Papum Pare district in Arunachal Pradesh. Total 60 Teachers (30 male and 30 female) were selected as sample for the study. Teachers from three Private Schools and three Government schools were chosen. The variable chosen for the study are Job Stress as independent variable and gender and management of schools as demographic variables only.

Methodology-The study was done by using Descriptive cum Survey Method under Descriptive Research on Secondary School Teachers of Papum Pare district of Arunachal Pradesh. 60 Sercondary School Teachers had been selected from 6 Secondary Schools (3 Government and 3 Private schools). The data had been collected by using **Stress Scale** of **Dr. Tejinder Kaur**, **Dr. Prerna Puri** and **Prof. Manju Mehta** which reliability was 0.94. Data were analyzed by using statistical technique such as mean, standard deviation, t-test.

Table1: Sample size selected from Papum Pare district of Arunachal Prades

Sl. No.	Management	No. of Schools	Gender	
			Male	Female
1	Private	3	15	15
2	Government	3	15	15

Result and Interpretation-The collected data has been systematically organized and analyzed according to the objectives and hypothesis of the study by using mean, standard deviation, t-test and correlation.

Table 2: Mean and SD of Job Stress of Secondary School Teachers of Papum Pare District in Arunachal Prades

N	Variable	Mean	SD	Remarks
60	Job Stress	48.58	9.79	Above Average

Table 2 shows the mean score of Job Stress of Secondary School Teachers which is 48.58. The normal range for job stress scale is 42.065 under the range of score 26 -104. It is understood that the level of job stress is more than the average range. The standard deviation is 9.79 which mean there is slightly higher level of deviation in scores recorded as the actual SD for the scale is 9.25.

Table 3: Calculated Mean, SD and t-value of level of Job Stress of Secondary School Teachers with respect to Gender

Gender	N	Mean	SD	SED	t-value	Remarks
Male	30	46.60	8.28	2.50	1.57	Not significant at 0.05 and at 0.01 level of significance
Female	30	50.57	10.88			

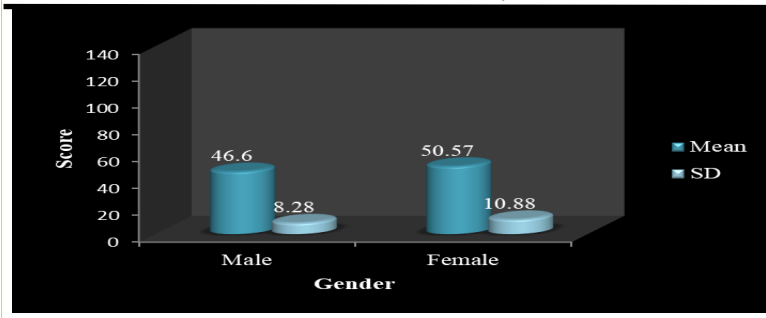

Fig. 1: Job Stress of Secondary School Teachers with respect to Gender

The calculated t-value (1.57) for difference in the level of Job Stress of male and female Secondary School Teachers in Papum Pare district of Arunachal Pradesh at df 58 is less than the critical t-value i.e. 1.98 at 0.05 and 2.63 at 0.01 level of significance. It means that, the formulated hypothesis is accepted at both 0.05 and 0.01 level of significance, i.e., there is a no effect of gender on the level of Job Stress Secondary School Teachers. The fig.1 shows the mean score and SD of both male and female Secondary School Teachers. The actual mean score of the male Secondary School Teachers' level of Job Stress is slightly less than the female counterpart as the mean score of male Teachers is 46.6 and the female Teachers' mean score is 50.57.

Table 4: Calculated Mean, SD and t-value of level of Job Stress of Secondary School Teachers with respect to Management

Management	N	Mean	SD	SED	t-value	Remarks
Private	30	54.93	7.41	1.92	6.58	Significant at both 0.01 and 0.05 level of significance
Government	30	42.23	7.52			

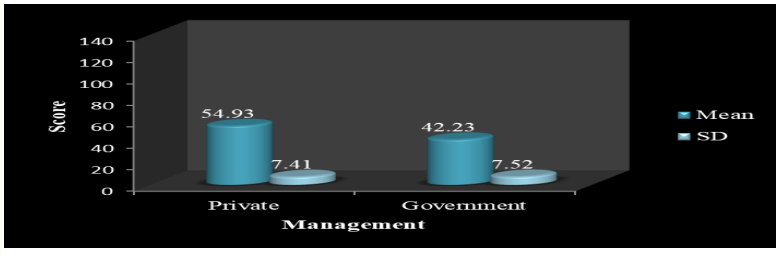

Fig. 2: Job Stress of Secondary School Teachers with respect to Management

The calculated t-value (6.58) for difference in level of Job Stress of Private and Government Secondary School Teachers in Papum Pare district of Arunachal Pradesh at df 58 is more than the table t-value i.e. 1.98 at 0.05 and 2.63 at 0.01 level of significance respectively. It means that, the formulated hypothesis is rejected, i.e., there is a significant difference between the level of Job Stress of Secondary School Teachers. The fig.2 shows that though the actual mean score of the Private Secondary School Teachers' level of Job Stress is more than the Government Secondary School Teachers as the mean score of Private Secondary School Teachers is 54.93 and the Government Secondary School Teachers' mean score is 42.23.

Discussion, Suggestion and Conclusion-The present piece of study reveals that the Job Stress of Secondary School Teachers in Papum Pare district of Arunachal Pradesh is above average. By having interaction with the teachers it has been found that different kind of odd jobs like census duty, election duty and other office duty hampered their teaching efficiency and effectiveness. Due to that they are unable to give proper guidance and time to their students, in result they are stressed out. Private school teachers reveal that due to heavy workload and less payment they are stressed out. This piece of research suggests that proper policy should be framed regarding the workload of teachers and regarding the payment of private school teachers. Teachers are there for teaching, guiding and facilitating the students, help students to learn and acquire knowledge. If there is no favourable working condition for our teachers then definitely it will hamper the future of our students and the nation.

****

References

1. Akinboye, J. O., Akinboye, D.O., & Adeyemo, D. A. (2002). *Coping with stress in life and work place.* Stirling Horden Publisher Nigeria ltd.
2. Aydin, B., & Kaya, A. (2016). Sources of Stress for Teachers Working in Private Elementary Schools and Methods of Coping with Stress. *Universal Journal of Educational Research, 4*(12A), 186-195. https://doi.org/10.13189/ujer.2016.041324
3. Beer, J., & Beer, J. (1992) Burnout and Stress, Depression and Self-esteem of Teachers. *Psychological Reports*, *71* (3), 1331-1336.
4. Bharathi, T and Gupta, K.S.A Study on Job Stress and Its Influence on the Productivity Among Women Employees in IT Sector. *SAGAR International Journal of Management* Blasé, J.J. (1986). A Qualitative Analysis of Sources of Teacher Stress: Consequences for Performanc. *American Educational Research* Journal, *23*, 13-40.
5. Cannon, W. B. (1935). Stresses and strains of homeostasis. *American Journal of the Medical Sciences*, *189*, 13–14.
6. Cartwright, J. (2000). *Evolution and human behavior: Darwinian perspectives on human nature.* The MIT Press.
7. Chan, D.W. (1998) Stress, Coping Strategies and Psychological Distress among Secondary School Teachers in Hong Kong. *American Educational Research Journal, 35* (1), 145-163.
8. Cooper, C.L. & Kelly, M. (1993) Occupational stress in head teachers: A national UK study. *British Journal of Educational Psychology, 63*(1), 130-143.
9. Finlay-Jones, R. Factors in the Teaching Environment Associated with Severe Psychological Distress among Teachers. *Australian and New Zealand Journal of Psychiatry*, *20*, 304-313.
10. Fletcher, B., & Payne, R.L. (1982). Levels of Reported Stressors and Strain amongst School Teachers: Some UK Data. *Educational Research*, *34*, 267-278.
11. Gaziel, H. H. (1993). Coping with occupational stress among teachers: a cross sectional study. *Comparative Education, 29*(1), 67-79. https://doi:org/10.1080/0305006930290105.
12. Hochwarter, Wayne & Ferris, Gerald & Zinko, Robert & Arnell, Breda & James, Matrecia. (2007). Reputation as a moderator of political behavior-work outcomes relationships: A two-study investigation with convergent results. *The Journal of applied psychology*, *92*. 567-576. https://doi:10.1037/0021-9010.92.2.567
13. Kurian, J., & Varghese, R. (2020). A Study on the Impact of Occupational Stress on the Performance of School Teachers in the State of Kerala. *European Journal of Molecular & Clinical Medicine, 7* (11), 100-109.
14. Kyriacou, C. Teacher Stress and Burnout: An International Review. *Educational Research, 29* (2), 146-152.
15. Mokdad, M. (2005). Occupational Stress among Algerian Teachers. *African Newsletter on Occupational Health and Safety, 15*, 46-47.
16. Otto, R. (1986). *Teachers under Stress: Health Hazards in a Work Role and Modes of Response*, Hill of Content, Melbourne.
17. Reglin, G., & Reitzammer, R.A. Dealing with the Stress of Teachers. *Education, 118* (4) 590-597.
18. Saravanan, K., & MuthuLakshmi, K. (2017). Occupational Stress: A Case Study among Primary School Teachers in Nagapattinam District.*International Journal of Recent Scientific Research, 8*(11), 21766-21770. http://dx.doi.org/10.24327/ijrsr.2017.0811.1137
19. Schonert-Riechl, K. A. Social and emotional learning and teachers. *Future of children, 27*(1), 137-155.
20. Selvavinayagam, K., & Kaviarasu, V. (2019). A Study on Occupational Stress Among the Teachers of the Primary Schools in Dharmapuri District. *International Journal of Research and Analytical Reviews (IJRAR), 6*(1), 878-886.
21. Selye H. (1946). The general adaptation syndrome and the diseases of adaptation. *Journal of Clin Endocrinol Metab*, *6*, 117-230. https://doi:10.1210/jcem-6-2-117
22. Selye, H. A. (1936). Syndrome produced by Diverse Nocuous Agents. *Nature,* 138(32) https://doi.org/10.1038/138032a0
23. Yamani, N., Shahabi, M., & Haghani, F. (2014). The relationship between emotional intelligence and job stress in the faculty of medicine in Isfahan University of Medical Sciences *J Adv Med Educ Prof, 2*(1).

शोधालेख प्रकाशन के मानक

व्यक्तिगत पंचवार्षिक सदस्यता लेने पर पांच साल तक पत्रिका मिलेगी। शोधालेख प्रकाशन की स्वीकृति/अस्वीकृति का जो भी निर्णय होगा वह आपको मेल से ही सूचित किया जाएगा। इसको लेकर संपर्क करने की आवश्यकता नहीं हैं।

UGC CARE LISTED हिन्दी की स्तरीय पत्रिका 'नागफनी' के जो सदस्य हैं उनका ही आलेख प्रकाशित होगा। जो भी व्यक्ति शोधालेख भेजना चाहते हैं कृपया वें अपने लेख में निम्न बिंदु आवश्यक रूप से रखें जैसे–

1. भूमिका/प्रस्तावना 2. विषय वस्तु/बीज शब्द 3. मुख्य अंश/उद्देश्य
4. परिणाम/निष्कर्ष 5. सन्दर्भ
6. शब्द मर्यादा अधिकतम शब्द 3000 इससे ज्यादा शब्द है तो कार्यकारी संपादक से परामर्श कीजिएगा।
7. सत्यापन एवं सहमति पत्र देने पर ही आलेख के सम्बन्ध में निर्णय होगा।

सत्यापन प्रमाण–पत्र

1. मैं .....सत्यापित करता/करती हूँ की 'नागफनी' के लिए प्रस्तुत शोधालेख शीर्षक.....मौलिक एवं अप्रकाशित है। लेखन संबंधित सारे संदर्भ सत्य हैं। किसी भी अंश के विवादित स्थिति के लिए मैं स्वयं जिम्मेदार रहूँगा/रहूँगी। साथ ही प्रस्तुत शोधालेख में नागफनी के पीयर रिव्यू कमेटी को संशोधन संपादन और संवर्धन करने की सहमति जताता/जताती हूँ।

2. शोधालेख प्रकाशित–अप्रकाशित करने का पूर्ण अधिकार सम्पादक मंडल और पीयर रिव्यू कमेटी का है। स्तरीय एवं मौलिकता आदि के परीक्षण के बाद ही शोधालेख की स्वीकृति/अस्वीकृति का जो भी निर्णय होगा, मुझे मान्य होगा। उपरोक्त नियम और शर्तों को मैं स्वीकार करता/करती हूँ।

हस्ताक्षर–
नाम–
मोबाइल नंबर–

व्यक्तिगत पंचवार्षिक सदस्यता लेने पर पांच साल तक पत्रिका मिलेगी। शोधालेख प्रकाशन की स्वीकृति/अस्वीकृति का जो भी निर्णय होगा वह आपको मेल से ही सूचित किया जाएगा। इसको लेकर संपर्क करने की आवश्यकता नहीं हैं।

STANDARD NORMS FOR AUTHORS

Nagfani, the U.G.C. Care listed journal publishes articles, research papers etc. written by the members of journals only. The manuscripts should contain the following:

1. Abstract with keywords 2. Objectives 3. Conclusions
4. References 5. Word limit is 3000 (For higher limits, please contact the editor)

I_____ certify/undertake to say that the manuscript entitled_____submitted for publication in the NAGFANI issue is an unpublished original work. I know that I will be fully responsible for any controversial situation arising out of the manuscript/article or part of it. I also transfer the rights to edit, review and conserve the manuscript to the peer review committee of NAGFANI.

Signature of the author:
Mobile No:

अधिक जानकारी के लिए वेबसाइट देखिए http%//naagfani.com

रोमी प्रेस बैढ़न / 9425179103